Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

by Arya Samaj Foundation Chennai and eG

BHARTI

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, H

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

113537

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

COMPILED

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

COMPILED

प० 66
भा 2

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

१२ जनवरी १९६५

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूल्य : ३० पै.

भारती

[भवन की पत्रिका]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तक प्रेमियों के लिए प्रमुख आकर्षण !

ये पुस्तकें प्रेरणात्मक, शिक्षाप्रद एवं मनोरंजक हैं

		मूल्य
• भारतीय संस्कृति और इतिहास ...	डा० बैजनाथपुरी ...	५–००
• भारतीय संविधान के सिद्धान्त ...	चन्द्रभान अग्रवाल ...	१०–००
• कालिदास और उनका युग ...	भगवतशरण उपाध्याय ...	३–००
• प्राचीन भारतीय मनोरंजन ...	मन्मथराय ...	५–२५
• रवीन्द्र रत्नाकर–अनुवादक ...	रघुवंशलाल गुप्त ...	५–००
• साहित्य शास्त्र	डा० रामकुमार वर्मा ...	४–००
• विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ...	इलाचन्द्र जोशी ...	४–००

कृपया अपना आर्डर आज ही भेजें ।

सेल्स मैनेजर,

पुस्तक–विक्री–विभाग

भारतीय विद्या भवन

चौपाटी, बम्बई–७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

113532

रत्नकी तरह

चमकदार

आँखोके

लिये

जाई काजल

आँखों को ठंडक पहुँचाकर सौंदर्य बढ़ाता है।

वेस्टर्न इन्डिया केमिकल कंपनी.
बोरिवली, बम्बई-६६

श्रुते ज्ञानाल मुक्तिः
पुस्तक सं०.....
भाग सं०.....
तिथि०.....
गुरुकुल कांगड़ी

SAS

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष ९ : अंक १०] भारती [१० जनवरी १९६५

संस्थापक :
कन्हैयालाल मुन्शी

प्रबन्ध सम्पादक :
जयन्तकृष्ण ह. दवे

प्रकाशक :
सु. रामकृष्णन्

सम्पादक :
वीरेन्द्रकुमार जैन

सहयोगी :
श्रीराम मिश्र
ओंकारनाथ शर्मा
रामलाल शुक्ल

कार्यालय :
भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड,
बम्बई ७

प्रति अंक : ३० पै.
वार्षिक : ६.५० पै.
अर्धवार्षिक: ३.५० पै.

ऋग्वेद	: प्रार्थना	३
कन्हैयालाल मुन्शी	: कुलपति का पत्र	४
श्री अरविन्द	: हृदय की शुद्धि	१०
मेरी कॉरेली	: एक रातः एक अनुभव	१४
महर्षि टॉल्स्टाय	: आज भगवान की सम्पदा पर शैतान ने अधिकार कर लिया है	१८
रमेशचन्द्र शाह	: ज्योति की पग-चाप	२२
कुँवर नारायण	: सम्पदा	२३
डॉ. शिवसहाय पाठक	: मातृ-पूजा और सृष्टि-विज्ञान	२६
वीरेन्द्र कुमार जैन	: अन्तर-कक्ष की दो कविताएं	३०
सहाना देवी	: पाण्डिचेरी के पथ पर	३३
आचार्य शंकर	: सौन्दर्य-लहरी	३८
अनवर आगेवान	: रसराज की सनातन प्रिया, आण्डाल	४२
तात्सुझो इशीकावा	: अन्धकार की परछांइयाँ	४६
कौशल मिश्र	: रातः दो कविताएं	५०
विजेन्द्र	: उदास हल्की कोर	५१
प्रा. राजीव	: ईश्वर का अस्तित्व	५२
----	: पाँच जर्मन कविताएं	५४

आवरण-चित्र : शिशिरा
चित्रकार : कमलाक्ष शेनॉय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः।

[प्रत्येक दिशा से शुभ एवं सुन्दर विचार हमें प्राप्त हों]

भारती

[भवन की पत्रिका]

आगामी विश्व विकास का सूचक :

जीवन, साहित्य और संस्कृति का पाक्षिक

प्रार्थना

यो अग्निं तन्वो दमे,
देवं मर्त्तः सपर्यति ।
तस्मा इद्दीदयत् वसु ॥

जो मनुष्य शरीर के गृह में या दमन में देव अग्नि को सेवन करता है, यजन करता है, उसके लिए ही वह ऐश्वर्य को प्रदीप्त करता है ।

ऋग्वेद : ८-४४-१५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुलपति का पत्र

जीवन साहित्य तथा संस्कृति से संबंधित

• राजेन्द्र बाबू और पंडितजी

भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड, बम्बई
१० जनवरी १९६५.

मेरे युवा मित्र,

३ दिसम्बर को डॉ राजेन्द्रप्रसाद की जन्मतिथि पड़ी। यदि वे आज जीवित रहते तो अस्सी वर्ष के होते। मेरे मन में, सहसा, उनके साथ तीस वर्षों के अपने मधुर सम्बन्धों की याद आ गयी।

१९३० में मेरे नमक सत्याग्रह में भाग लेने के बाद, गांधीजी का विश्वास ही मुझे नहीं मिला, बल्कि उनके उस बृहद् परिवार का अंग भी मैं बन गया जिसके सदस्यों के बीच राजनीतिक के अलावा व्यक्तिगत और भावनात्मक सम्बंध भी स्थापित हो जाते थे। राजेन्द्र बाबू इसी बृहद् परिवार के एक अंग थे और उनके तथा मेरे परिवारों के बीच स्नेह का नाता जुड़ जाना स्वाभाविक ही था।

राजेन्द्र बाबू के बारे में जो सबसे अधिक आकर्षक बात मुझे लगी वह थी उनकी अत्यधिक निश्छलता तथा दूसरों में सदा अच्छाई देखने की उनकी प्रवृत्ति। द्वेष या घृणा उन्हें नहीं छू नहीं गयी थी। बौद्धिक होते हुए भी वे स्वयं को 'ऊंचे' किस्म का आदमी नहीं मानते थे; सभी के साथ उनका व्यवहार औचित्यपूर्ण और सरस होता था। वे अजातशत्रु थे।

गांधीजी के अनुयायियों में से राजेन्द्र-बाबू का समर्पण उनके प्रति अनन्य था। देश की राजनीति में कई वर्षों तक छाये रहने पर भी उन्होंने अपने लिए कभी कुछ चाहा नहीं, न किसी के विरुद्ध कभी खड़े हुए। फिर भी, विषम परिस्थितियों में जब भी किसी संतुलित और समझदार व्यक्ति की आवश्यकता राष्ट्र को होती तो राजेन्द्र बाबू का नाम ही सर्वप्रथम सबकी ज़बान पर आता।

१९४६ में संविधान सभा के उद्घाटन से पहले, कई व्यक्तियों का नाम, उसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभापति के लिए लिया गया; लेकिन जब चुनाव का दिन आया तो सभी ने एक मत हो राजेन्द्र बाबू को ही चुना। इस उच्च पद के लिए योग्य व्यक्ति वे ही सबको लग। सर्वसम्मति से वे संविधान सभा के सभापति चुन लिये गये। इस पद पर उनका कार्य भी अनुपम रहा। वे सहिष्णु और न्यायशील थे और जब कभी सदस्यों में तनाव होने की नौबत आती तो अपनी सरस मुस्कान से सभी को नियन्त्रण में कर लेते। यदि विधान सभा का कार्य इतने सुचारु रूप से सम्पन्न हुआ तो इसका मुख्य श्रेय राजेन्द्र बाबू की परिपक्व बुद्धि और समझदारी ही थी।

राजेन्द्र बाबू

जब यह सवाल सामने आया कि भारतीय गणतंत्र का प्रथम राष्ट्रपति कौन हो, तो कुछ लोगों ने एक अन्य प्रसिद्ध व्यक्ति का नाम लिया, जो उनकी निगाह में इस सर्वोच्च पद के लिए अधिक उपयुक्त थे। इस बात को ले कर खूब गरमागरम बहस हुई, पर आखिर में राजन्द्र बाबू का पलड़ा ही भारी रहा। स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद, राजेन्द्र बाबू बिना किसी प्रयास के, सहज ही, हमारे समझदार, सहिष्णु और उदार नेता माने जाने लगे। राजेन्द्र बाबू का रुख कभी आक्रमक नहीं रहा, परन्तु ज़रूरी बातों में वे सदा अडिग रहते थे। मुझे याद है कि कई विषम परिस्थितियों में वे हमारे बहुत काम आये थे।

धर्म में उनकी आस्था गहन थी और गांधीजी की तरह, उनकी देशभक्ति भी अध्यात्म से प्रेरित थी। यह बात वे अच्छी तरह जानते थे कि धर्म-निरपेक्षिता शब्दशः हमारे देश पर लागू नहीं हो सकती— हां, राष्ट्र के रूप में हम किसी सम्प्रदाय विशेष से ताल्लुक नहीं रखते, न हमारा कोई अधिकारी तौर पर स्वीकृत धर्म है। हम अन्य धर्मों की अवहेलना नहीं करते। हमारे लिए राष्ट्र के जीवन में सभी धर्मों का समान महत्व है। राजेन्द्र बाबू ने कई अवसरों पर इस मत की पुष्टि की। १९५१ में जब सोमनाथ मन्दिर की पुनर्स्थापना हुई तब ऐसा ही एक अवसर सामने आया। भारत सरकार ने इस ऐतिहासिक मन्दिर के पुनर्निमाण का निश्चय किया था। गांधीजी ने, फिर भी, इस में यह शर्त लगा दी थी कि जो भी पैसा उस में लगे वह लोगों से चन्दे द्वारा प्राप्त किया जाय, क्योंकि सरकार द्वारा मन्दिर निर्माण करवाने का उनका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विचार बिल्कुल नहीं था।

भारत सरकार ने नवानगर के जाम साहब के आधिपत्य में एक ट्रस्ट की स्थापना इसी हेतु की। परन्तु मन्दिर पूरा होने से पहले ही सरदार चल बसे और हमारे सामने यह समस्या खड़ी हो गयी कि मन्दिर में मूर्ति की स्थापना कौन करे। मैं राजेन्द्र-बाबू के पास पहुँचा और बोला, 'भारतीय संस्कृति के सर्वोत्तम प्रतिनिधि के रूप में आप ही इस देव मूर्ति की स्थापना करें, यही हम सब की इच्छा है।' उन्होंने तुरंत स्वीकार कर लिया। मन्दिर के ऐतिहासिक पुनर्निर्माण के कार्य को वे राजनीति से भी कुछ अधिक महत्व देते थे। अपने साथ बात करने की जो पूरी छूट उन्होंने मुझे दे रखी थी उसका लाभ उठाते हुए मैंने कहा, 'देवमूर्ति की स्थापना हम आपसे करवाना चाहते हैं; परन्तु हमारा आमंत्रण स्वीकार करने से पहले यह भी ध्यान में रखिए कि ऐसा नहीं करने के लिए आप पर बहुत ज़ोर लगाया जायगा। परन्तु, एक बार आपका नाम घोषित किये जाने पर, फिर यदि आपने आने से इनकार किया तो बहुत बड़ी आफत खड़ी हो जायगी!' उन्होंने उत्तर दिया, 'कोई भी शक्ति मुझे देवप्रतिमा की स्थापना करने से नहीं रोक सकती। मुझ पर आप भरोसा रखें। जो भी दबाव मुझ पर डाला जायेगा, उसका प्रतिकार मैं करूंगा।' बाद में उन पर दबाव डाला भी गया, किन्तु राजेन्द्र बाबू ने अपने वचन का पालन किया और मध्यकालीन भारत में जो सबसे बड़ा मन्दिर था उस सोमनाथ की प्रतिमा की स्थापना उन्हीं के कर-कमलों द्वारा हुई।

राजेन्द्र बाबू भारतीय विद्या भवन के संस्थापक-सदस्यों में से थे। मार्च १९५२ में उन्होंने भवन के दिल्ली केन्द्र की आधार-शिला रखी; दिसम्बर १९५७ में उन्होंने भवन का दीक्षान्त भाषण दिया; १९६२ में वे भवन की रजतजयन्ती उत्सव समिति के अध्यक्ष थे। हमारी राष्ट्रीय प्रगति में उन्होंने संस्कृत को प्रमुख स्थान दिया। संस्कृत आयोग की स्थापना में उनका प्रमुख हाथ था। जब भवन ने संस्कृत विश्व परिषद की स्थापना की तब वे उसके प्रेरक, नेता और मार्गदर्शक बने। परिषद के आजीवन प्रमुख के नाते वे प्रत्येक अधिवेशन में उपस्थित होते और अपनी ओरसे उसे प्रोत्साहन और आशीर्वाद देते। शास्त्रीय रीति से संस्कृत पढ़नेवालों पर उनकी श्रद्धा थी। वाराणसी में जब परिषद का अधिवेशन हुआ तब उन्होंने पंडितों का स्वागत इस विनम्रता से किया कि एक आलोचक ने कहा, 'आज हमें ऐसा लगता है कि हम वास्तविक रूप में भारतीय हैं।'

विद्या के प्रति सम्मान के बारे में वे हमारे देश की सर्वोच्च परम्परा के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतिनिधि थे। भारत के करोड़ों नर-नारी जो सोचते– अनुभव करते हैं, उसके वे सच्चे प्रतीक थे। नये प्रभावों से वे बचते नहीं थे, परन्तु प्राचीन नैतिक, धार्मिक और आध्यात्मिक मूल्यों का त्याग भी वे कभी नहीं करते थे। भारतीय संस्कृति के वे हृदय-स्पंद थे।

●●●

दिल्ली में आज भी नेहरू के निधन को महसूस किया जा रहा है। पर, अंतरराष्ट्रीय परिस्थितियों में अब इतना परिवर्तन आ गया है कि कुछ लोगों के यह ज़ोर देने के बावजूद कि नेहरू की नीतियों का ही पालन किया जाय, हमारी विदेश नीति में आवश्यक रूप से कुछ नवीनीकरण अवश्यंभावी हो गया है। यह स्थिति इतनी जल्दी आयगी, इसकी आशा किसी को नहीं थी।

पंडितजी की मृत्यु से जो एक रिक्तता आयी, उसने मुझे उन की व्यक्तिगत विशेषताओं और देश के निर्माण में उनके महानतम योगदान पर विचार करने को प्रेरित किया। हम सब पंडितजी को अच्छी तरह जानते थे। हम उनकी छाया तले रहे हैं। स्वातंत्र्य-संग्राम में जो कार्य उन्होंने किया, उसके हम प्रशंसक भी रहे हैं और यह भी मानते हैं कि प्रधान मंत्री के नाते उन्होंने भारत को संसार में एक प्रतिष्ठित और गौरवशाली स्थान दिलाया।

जवाहरलाल नेहरू

उनका व्यक्तित्व बहुमुखी था, और स्वभाव तानाशाही किस्म का; परन्तु सभी के साथ न्यायोचित व्यवहार करने को वे सदा आतुर रहते थे। सर्वसत्ताधीश होने पर भी जनतंत्र में उनका विश्वास अडिग था। अपने अंतरंग मित्रों के साथ वे अवश्य पर्याप्त पक्षापात किया करते थे, परन्तु जो इस घेरे में नहीं थे उनके साथ, यहाँ तक की अपने आलोचकों और शत्रुओं के साथ भी, वे निष्पक्ष रूप से न्यायोचित व्यवहार करते थे। यद्यपि वे भावुक थे, फिर भी यदि उन्हें लगता कि किसी के प्रति उनसे अन्याय हो गया है, तो अपनी गलती को दुरुस्त करने का काम सबसे पहले वही करते थे।

लुई १४वें ने कहा था, 'समय का पालन बादशाहों की विनम्रता है।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंडितजी कभी एक मिनिट भी देरी नहीं करते थे। मेरे प्रत्येक पत्र का उत्तर उन्होंने ४८ घण्टों के भीतर-भीतर दिया, हालांकि वे दूसरे ज़रूरी कामों में बहुत व्यस्त रहते थे। हम में से वे लोग जो सदा उनकी दुहाई दिया करते हैं, उन्हें चाहिए कि वे उनकी आदतों का अनुसरण करें। साहस में तो वे अद्वितीय थे। खतरे उठाना उनका स्वभाव सा बन गया था। बड़ी जोखिम उठा कर और अपनी जान को खतरे में डाल कर भी वे क्रुद्ध भीड़ में घुस जाते थे और बिगड़े हुए लोगों को अपने साहस से शांत कर देते थे। कामें करने की उनकी गति अद्भुत थी। उनके मित्रों और साथियों को उस गति से चल-पाना मुश्किल हो जाता था।

विधान सभा में, और बाद में भी कई बार मैंने उनका विरोध किया, क्योंकि उनकी नीति और दृष्टि से सहमत होना मेरे लिए मुश्किल हो गया था। इन मतभेदों के बावजूद, जिन्हें छिपाने की कला मुझे नहीं आती, मेरे उनसे अंत तक अच्छे सम्बंध रहे। राजनीतिक मतभेदों को वे अपने व्यक्तिगत सम्बंधों में व्यवधान नहीं डालने देते थे।

१९५९ में स्वतंत्र पार्टी के शुरू होने के बाद वे कभी-कभी उसके नेताओं की खूब खबर लेते थे। हम भी उसी ढंग से उनका जवाब देते। परन्तु यह आलोचनात्मक रुख पुरानी मैत्री के बीच में कभी नहीं रोड़ा बना। स्वतंत्र पार्टी के कार्य के सिलसिले में जब राजाजी पहले पहल दिल्ली आये तब पंडितजी उनसे मिलने गये और बोले, "मैं यह देखने आया हूँ कि आप कितने युवा हैं।'

राष्ट्रीय संगठन की समस्याओं और भारतीय विद्या भवन के कार्यों के सिलसिले में मैं उनसे कई बार मिला, और जब कभी मैंने उनकी मदद चाही उन्होंने तत्काल दी। १९६२ में सरदार पटेल इन्जिनियरिंग कालेज का उद्घाटन करने के लिए मेरे आमंत्रण को जिस सरलता से उन्होंने सहर्ष स्वीकार किया, उसे मैं कभी नहीं भुला सकता। हालांकि उन दिनों वे बहुत बीमार थे, फिर भी केवल इसी कार्य के लिए वे बम्बई पधारे।

पंडितजी के व्यक्तित्व का सबसे अधिक आकर्षक पहलू उनकी सौन्दर्यप्रियता थी। उनकी मोहक मुस्कान, कोट में लगा फूल, सांस्कृतिक लोगों से घिरे रहने का उनका स्वभाव, ये सभी बातें उनकी सौन्दर्य पिपासा को प्रकट करती थीं– परम सौन्दर्य की, जिसका वर्णन प्लेटो ने किया है। अपने तेजस्वी व्यक्तित्व और सशक्त सिद्धान्तों के साथ गांधीजी ने एक अत्यंत सादगी और सदाचार का युग आरम्भ किया था, जिसमें सौन्दर्य से अधिक महत्व उपयोगिता को दिया जाता था। पंडितजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन थोड़े से व्यक्तियों में थे जो गांधीजी के अत्यंत निकट सम्पर्क में आ कर भी उनके जीवनदर्शन से पूर्णतः प्रभावित नहीं हुए। अपने नेता के निर्देशन में उन्होंने महत् प्रयास किये, परन्तु सौन्दर्य की कल्पना का वे कभी त्याग नहीं कर सके। इसकी अभिव्यक्ति उन्होंने सुरुचिपूर्ण वातावरण, संवादिता और सौन्दर्य के भाव, रूप तथा रंग में की। वास्तविक कला और साहित्य के प्रति उनका प्रेम कभी कम नहीं हुआ। अपने युवाकाल से ही देश की आज़ादी के लिए प्रबल संघर्ष करते हुए भी वे साहित्यिक कार्य कर सके। उनकी पुस्तकों से उनका सच्चा साहित्यिक रूप झाँकता है, और कला पर जब भी वे कुछ बोले हैं उससे कलात्मक परिपूर्णता के प्रति उनका गहन प्रेम प्रकट होता है।

एक विराट पुरुष की भाँति पंडितजी सरकार और राजनीति पर ही नहीं, देश के जनजीवन पर कई दिशाओं में छाये रहे। जब इतिहासकार हमारे समय के नेताओं का लेखा-जोखा लेंगे, तब मुझे विश्वास है कि वे मेरे साथ इस बात पर सहमत होंगे कि स्वाधीन भारत के निर्माण में पंडितजी का सबसे बड़ा योगदान भारतीय मन और मस्तिष्क को संसार की हवाओं के लिए उन्मुक्त कर देना रहा है। पंडितजी की कल्पना का क्षेत्र संपूर्ण विश्व था और समस्त भूमंडल पर मनुष्य के जीवन में जो विविध शक्तियाँ कार्यरत हैं, उन सब पर वे विचार करते थे। उनके सभी भाषणों, लेखों और कार्यों में यह अन्तर्धारा सदा प्रवाहित रहती थी कि भारत कभी एकाकी नहीं रह सकता और यदि भ्रमवश वह ऐसा समझ बैठा कि दुनिया में चाहे कुछ भी हो वह अपना जीवन अलग से जियेगा, तो उसका भविष्य उज्जवल नहीं रहेगा। उनकी इच्छा भारत के दृष्टिकोण को अंतरराष्ट्रीय बनाने की थी; इसीलिए उनकी देशभक्ति कभी कट्टर और कलह-प्रिय नहीं बनी।

देश के लिए उन्होंने सुनियोजित अर्थव्यवस्था का सूत्रपात किया। तटस्थ-वादिता के सिद्धान्त का विकास उन्होंने ही किया। युगोस्लाविया, यू.ए.आर. और भारत की त्रिपुटि की उन्होंने इस उद्देश्य से रचना की कि सभी तटस्थवादी देश उसके इर्दगिर्द जमा हों। नये राष्ट्रमंडल के पुनर्निर्माण में वे सहायक रहे। विश्व शांति के लिए संयुक्त राष्ट्र में उनकी अपार श्रद्धा थी। इन सबके पीछे उन की यही इच्छा कार्यरत थी कि भारत नये संसार का एक अभिन्न अंग बने, जिससे एक ऐसी विश्व व्यवस्था का सूत्रपात्र हो जिसमें प्रत्येक राष्ट्र मुक्त रूप से शांति और मानव के उत्थान के लिए प्रयास कर सके। यह सच है कि कई बातों में वे सफल नहीं हुए; परन्तु व्यक्ति अपनी उपलब्धियों से अधिक महान होता है। उपलब्धि उसके व्यक्तित्व की छाया मात्र है जो बाह्य प्रभावों से विकृत हो जाती है। महत्वपूर्ण तो व्यक्ति स्वयं ही है।

आपका

कन्हैयालाल मुन्शी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री अरविन्द

हृदय की शुद्धि

हृदय की शुद्धि के लिए अत्यन्त आवश्यक चीज है पूर्ण सच्चाई। स्वयं अपने साथ कोई छल-कपट नहीं करना चाहिए, भगवान से या स्वयं अपने से या गुरु से कोई लुकाव-छिपाव नहीं रखना चाहिए, अपनी गतिविधियों पर एक सीधी नजर डालनी चाहिए और उन्हें सीधी करने के लिए एक सीधा संकल्प करना चाहिए।

हृदय की शुद्धि के प्रसंग में 'असम्भव' नाम की कोई चीज नहीं है—तुम इसी चीज़ की कोशिश कर रहे थे। जब हृदय शुद्ध हो जाता है, तब अन्य बातें, जो पहले असम्भव प्रतीत होती थीं, आसान हो जाती हैं—यहाँ तक कि आन्तरिक समर्पण भी जो तुम्हें इस समय दुष्कर मालूम होता है।

यह सार्वजनीन अनुभव है कि यदि विनम्रता और आत्मदान का भाव हृदय में दृढ़ता पूर्वक स्थापित हो जाय, तो विश्वास आदि जैसी अन्य चीज़ें पीछे सहज भाव से आ जाती हैं। यदि एक बार चैत्य ज्योति और आनन्द, जो कि विनम्रता और आत्मदान की देन है, स्थापित हो जायं, तो फिर इस स्थिति को आच्छादित करना अन्य शक्तियों के लिए आसान नहीं होता और न उसे नष्ट करना ही उनके लिए सम्भव होता है। यही सामान्य अनुभव है।

शुद्धि और आत्मोत्सर्ग—बस साधना की ये दो महान आवश्यक बातें हैं। जिन लोगों को शुद्धि से पहले अनुभव होने लगते हैं, वे एक बहुत बड़ा ख़तरा मोल लेते हैं: यह कहीं अधिक अच्छा है कि पहले हृदय को शुद्ध किया जाय, क्योंकि उस अवस्था में मार्ग निरापद बन जाता है। यही कारण है कि मैं पहले प्रकृति के चैत्य परिवर्तन की सलाह देता हूँ—क्योंकि उसका मतलब है: हृदय का पवित्रकरण, उसका पूर्णतः भगवान की ओर मुड़जाना, मन और प्राण का अन्तर, सत्ता, अन्तरात्मा की अधीनता स्वीकार कर लेना। सर्वदा, जब अन्तरात्मा सामने होता है, मनुष्य को भीतर से इस विषय में समुचित पथ प्रदर्शन मिलता है कि क्या करना चाहिए, किस चीज़ से बचना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिए, विचार, अनुभव और कर्म में कौन सी चीज़ ग़लत है, या कौन सी चीज ठीक है। परन्तु यह आन्तरिक सुझाव उसी मात्रा में प्रकट होता है, जितनी मात्रा में कि चेतना अधिकाधिक शुद्ध होती जाती है।

'अ' को लुढ़कानेवाली चीज थी महत्वाकांक्षा, गर्व, मिथ्याभिमान—गुह्य शक्तियों को प्राप्त कर एक बड़ा योगी होने की कामना। अपवित्र मन, हृदय और शरीर में गुह्य शक्तियों को उतार लाने की चेष्टा रना—हाँ, तुम इसे कर सकते हो, यदि तुम पहाड़ी की कगार पर नाचना पसन्द करो। अथवा तुम इसे तब कर सकते हो, जब तुम्हारा उद्देश्य आध्यात्मिक बनना न हो, बल्कि एक गुह्यविद् (तंत्र-मंत्र का जानकार तांत्रिक) होना हो, क्योंकि, तब तुम किन्हीं आवश्यक प्रक्रियाओं का अनुसरण कर सकते हो और गुह्य शक्तियों की सहायता पा सकते हो। दूसरी ओर सच्ची गुह्य आध्यात्मिक शक्तियों और रहस्यपूर्ण आध्यात्मिक शक्तियों का आवाहान किया जा सकता है या वे बिना आवाहन किये आ सकती हैं, परन्तु एक मात्र सच्ची वस्तु, भगवान की खोज के मुकाबले इसे एक गौण वस्तु बनना होगा, तथा इसे तभी करना, या इसे होने देना होगा, जब कि यह तुम्हारे अन्दर भागवत योजना का ही एक अंग हो। आध्यात्मिक पुरुष के लिए गुह्य शक्तियाँ केवल उस भागवत शक्ति का ही एक यंत्र हो सकती है, जो कि उस (पुरुष) का उपयोग करती है। वे उसकी साधना का मुख्य उदेश्य या कोई एक उद्देश्य नहीं हो सकतीं। बहुत से लोगों में स्वयं अपने विचारों के अनुसार योग करने की आदत होती है और वे गुरु के पथ प्रदर्शन की कोई परवा नहीं करते, परन्तु, साथ ही गुरु से वे पूर्ण संरक्षण पाने की तथा जब कि यथा सम्भव अत्यन्त ग़लत रास्तों पर उछलते कूदते और किल्लोल करते हैं, तब भी साधना में सफलता पाने की आशा करते हैं।

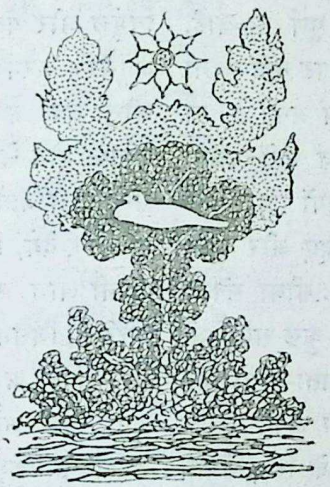

सूक्ष्म पद्धतियों से मेरा मतलब है, मनोवैज्ञानिक, अयांत्रिक पद्धतियाँ, उदाहरणार्थ, हृदय में एकाग्रता, आत्मसमर्पण, आत्मशुद्धि, आन्तरिक साधनों के द्वारा चेतना को परिवर्तित करना आदि। इसका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थ यह नहीं है कि बाहरी परिवर्तन का कोई स्थान नहीं है; बाहरी परिवर्तन आवश्यक है, पर आन्तरिक परिवर्तन के एक अंग के रूप में। यदि अन्दर में अपवित्रता और असहृदयता हो, तो बाहरी परिवर्तन फलप्रसू नहीं होगा, परन्तु भीतर में यदि सच्ची क्रिया हो, तो बाहरी परिवर्तन उसमें सहायक होगा और प्रक्रिया को अधिक तेज बना देगा। हृदय की शुद्धि के लिए अत्यन्त आवश्यक चीज है, पूर्ण सच्चाई, स्वयं अपने साथ कोई छल कपट नहीं करना चाहिए, भगवान से या स्वयं अपने से, या गुरु से कोई लुकाव–छिपाव नहीं रखना चाहिए, अपनी गतिविधियों पर एक सीधी नजर डालनी चाहिए और उन्हें ठीक करने के लिए एक सीधा संकल्प करना चाहिए। यदि इसमें कुछ समय भी लगे, तो इससे विशेष कुछ आता-जाता नहीं: हमें भगवान की खोज को अपने समूचे जीवन का कार्य बना देने के लिए तैयार होना चाहिए। हृदय की शुद्धि का अर्थ है, एक तरह की बहुत ऊँची सिद्धि और उदास, निराश आदि होने का कोई लाभ नहीं है, क्योंकि मनुष्य अपने अन्दर उन चीज़ों को देखता है, जिन्हें अभी परिवर्तित करने की आवश्यकता है। यदि कोई अपने सच्चे संकल्प और यथार्थ मनोभाव को बना के रखे तो, भीतर से अन्तःप्रेरणाओं और संकेतों का आना बढ़ने लगेगा, वे सुस्पष्ट, निर्मूल और यथार्थ बन जायेंगे तथा उन्हें अनुसरण करने की शक्ति भी बढ़ जायगी। और, तब स्वयं अपने आप से तुम्हारे सन्तुष्ट होने से भी पहले भगवान तुमसे सन्तुष्ट हो जायेगें और उस पर्दे को हटाना शुरू कर देगे, जिससे वह स्वयं अपनी तथा अपनी खोज करनेवाले साधकों की रक्षा करते हैं, जिसमें कि मनुष्य जिन सब महान वस्तुओं की अभीप्सा करता है, उन्हें कोई अपरिपक्व अवस्था में तथा ख़तरनाक तरीके से पकड़ न ले।

लेखकों से आवश्यक निवेदन :

- इधर कविताएँ 'भारती' कार्यालय म इतनी अधिक जमा हो गयी हैं, कि विरल ही कोई नयी कविता स्वीकारना सम्भव होगा। अच्छी होने पर भी कविताएँ अस्वीकृत हो सकती हैं; कवि-मित्र इसे हमारी विवशता जान, क्षमा करेंगे।
- भविष्य में 'भारती' में आनवाले लेख 'भारती' के अधिक से अधिक ५–६ पृष्ठों से ज़्यादा विस्तृत नहीं होने चाहिए। अधिक लम्बे लेख, स्वीकारने में हम असमर्थ होंगे।

—सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाम संकीर्तन

काहे न रसना रामहिं गावहि
निस दिन पर अपवाद वृथा कृत
रटि रटि राग बढ़ावहि।
नर मुख सुन्दर मन्दिर पावन
बसि जनि ताहि लजावहि
ससि समीप रहि त्यागि सुधा कत,
रविकर-जल कहँ धावहि।
काम कथा कलि कैरव चन्दिनि
सुनत स्रवन दै भावहि
तिन्हहिं हटकि भजि हरि कल कीरति,
करन कलंक नसावहि।
जातरूप मति, युक्ति रुचिर मनि
रचि रचि हार बनावहि
सरन सुखद रघुकुल—सरोज रबि,
राम नृपहिं पहिरावहि।
बाद-विबाद स्वाद तजि, भजि हरि,
सरस चरित चित लावहि।
तुलसिदास भव तरहि, तिहुँ पुर,
तू पुनीत जस पावहि।

—संत तुलसीदास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरी कॉरेली

एक रात : एक अनुभव

मेरी कॉरेली, निरी उपन्यास-लेखिका नहीं थी। अपने विजन-अनुभव के सुवर्ण-महलों में उसने अतीन्द्रिय सत्य और सौन्दर्य का ऐन्द्रिक साक्षात्कार किया था। वह आनेवाले युगों की द्रष्टा-सर्जक थी, इसीसे आज का साहित्य-जगत उसे पहचानता नहीं है। गहन-आत्मानुभव पर आधारित उसके महान उपन्यास 'Life Ever Lasting' का एक अंश यहाँ प्रस्तुत है।

यह एक स्मरणीय रात थी। किसी तरह का कोई बाहरी अथवा प्रत्यक्ष लाभ घटित नहीं हुआ, और मैं बिलकुल अकेली थी, फिर भी मैं देह और मन दोनों के ऐसे एकान्त उल्लास के प्रति सचेतन थी, जो मुझे ऐसा लग रहा था, मानो मैं प्रकाश और आनन्द के तरंगायित वातावरण से घेर ली गयी हूँ। यह एक ऐसा प्रभाव था, जो मुझ पर अनायास छा गया था, और जिसका मेरी अपनी व्यक्तिमत्ता से कोई लेना-देना नहीं था, फिर भी, साथ ही जो इतना व्यक्तिगत और अपना था कि सुख के इस विपुल अन्तर्प्रवाह के लिए मैं भगवान की स्तुति करने के लिए उत्सुक हो उठी। मुझे मालूम था कि यह प्रभाव विशुद्ध रूप से आत्मिक था, किन्तु यह सहस्रों भौतिक उपहारों से अधिक मूल्यवान था। कुछ भी दुखी नहीं लगता था,——सम्पूर्ण विश्व में कुछ भी कठिन नहीं लगता था——मुसीबत की हर छाया शान्ति के प्रकाशमान आकाश से पुंछ गयी लगती थी। मैंने अपने अध्ययन-कक्ष की जालीदार खिड़की खोल दी और बगीचे के ऊपर झूलती बाल्कनी में बाहर निकल आयी। मैं वहाँ स्वप्निल भाव से रात को देखती रही। चाँद नहीं था; केवल धुंधले नीले आकाश में सघन तारों से फूटते करोड़ों काँपते प्रकाश-बिन्दु झिलमिला रहे थे। हवा गर्म थी और फूलों तथा सूर्य-कमलों की मधुर सुगन्ध से सुरभित थी,——इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय महाशान्ति छायी हुई थी; आधी रात का समय था और यहाँ तक कि किसी चिड़िया के निद्रालस शब्द ने भी यह गहरा मौन नहीं तोड़ा। संसार निद्रामग्न था—या ऐसा दिखायी पड़ता था—क्योंकि प्रकृति में यदि पचास ऐसे जीवधारी हैं, जो सोते हैं तो सैंकड़ों ऐसे हैं, जो जागते रहते हैं और जिनके लिए रात काम के दिन जैसी है। मैंने सुना—और अनुमान किया कि मैं वृक्षों के पीछे और पत्तियों के बीच में छुपी आवाजों का कोमल मरमर सुन सकती हूँ और मधुर संगीत की थरथराहट को भी सुन सकती हूँ, जो हवा की ध्वनि-तरंगों पर मेरी ओर बह रहा था। यह उन परमतम क्षणों में एक क्षण था, जब मैंने यह सोचा है कि मैंने अपने उच्चतम उद्देश्यों की प्राप्ति की दिशा में एक विशिष्ट प्रगति की है,—जब मैंने यह महसूस किया कि देखने और सुनने की जिन भीतरी शक्तियों का अभ्यास करने और संचयन करने में मैंने अपना समय व्यतीत किया था और धैर्य से काम लिया था, अब मेरी श्रमग्रस्त चेतना के प्रति, जो द्वार अभी तक अधखुले थे, उन्हें पूरा खोल कर मुझे पुरस्कृत किये जाने का समय आ गया है।

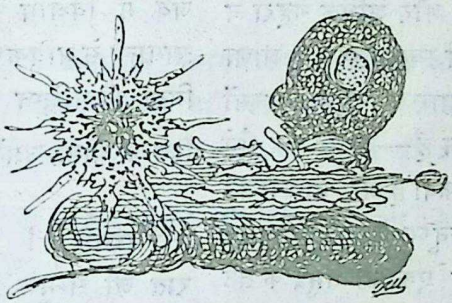

मैं जानती थी—क्योंकि मैंने अध्ययन किया था और सत्य को प्रमाणित किया था,—कि हर दैहिक इन्द्रिय आत्मा में अपनी मौलिक और आन्तरिक शक्ति का एक अपूर्ण प्रकटीकरण है,—कि हमारे दैहिक कान उस माध्यत्मिक श्रवण शक्ति की केवल भौतिक अभिव्यक्ति मात्र हैं, जो सूक्ष्मतम देवदूतों की बुदबुदाहट तक को पकड़ने में समर्थ हैं,—कि हमारी आँखें उन प्रकाशमान आन्तरिक दर्शन-स्रोतों का बाहरी आकार भर हैं, जो स्वर्ग के परमतम ऐश्वर्यों को निर्भीक भाव से देखने के लिए सिरजे गये हैं,—कि आत्मा की व्यक्तिगत सत्ता का स्वयं से सम्बन्धी दिव्य सार-सत्त्वों से जो सुनिश्चित और मधुर सम्पर्क है, उसकी तुलना में हमारी स्पर्शेन्द्रिय केवल क्षणभंगुर वस्तुओं का अनिश्चित और खुरदरा स्पर्श है। मेरी उत्सुक आशा के बावजूद उस समय मुझे पवित्र आनन्द के विशिष्ट अनुभव के सिवा और कुछ नहीं दिया गया था, जिसने प्रकाश की वर्षा के सदृश मेरी सत्ता के अणु-अणु को नहला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिया था। यह पर्याप्त है, मैंने स्वयं से कहा था—निश्चय ही पर्याप्त।—और तो भी ऐसा लगता था कि अभी और कुछ भी होना चाहिए। यह परिपूर्णता का वचन था, लेकिन अनुद्घोषित,—मानो एक हिम-श्वेत बादल के पीछे का सूर्य। लेकिन मेरे चारों के इस आनन्दपूर्ण रहस्य का कोई भी उत्तर मुझे नहीं दिया गया था, —और—मेरी आत्मा को एक सम्पूर्ण मुक्ति देकर यह रहस्य तारों की अनन्तता से और अधिक गहन-विशद उन अनन्तताओं में डूबने की अपेक्षा और अधिक गहरा न जा सका, जिनका हमें स्वप्न देखना है, आशा करनी है और इन्तजार करना है। बरसों तक मैंने ऐसा किया है—बरसों तक मैंने इस दिशा में काम किया है और प्रार्थना की है,-देखती रही हूँ मनुष्य के तुच्छ अहंकार और आस्फालन को एक मृत समुद्र के तट पर छायाओं की तरह अपने सामने से गुजरते हुए। इस तरह धीरे-धीरे जीवन के जटिलतम चक्र-पथों में से अपना रास्ता बनाते हुए जीने के लिए सुन्दर प्रयोजन का आविष्कार मैंने किया है। और आज रात की तरह, प्रायः ही मैंने अपने को उस उद्घाटन के बहुत निकट पाया है, जो अपनी दिव्य ऋजुता में सारी समस्याओं को स्पष्ट कर देगा, सारी कठिनाइयों को आसान कर देगा और ऐसे क्षणों में सदा एक अगोचर मृदु फिर भी सुदृढ़ शक्ति ने मुझे थाम कर रखा है और चेतावनी दी है, 'यहाँ तक, और इससे आगे नहीं!' इस शक्ति का विरोध करना या इसके प्रति विद्रोह करने का वैयक्तिक प्रयास करना, मेरी आस्था का अंग नहीं है,—इसी से ऐसे क्षणों में सदा ही मैंने अपने को तत्काल आज्ञाकारिता के भाव से समर्पित कर दिया है, जैसाकि अभी ही मैंने अपने को समर्पित किया है। अपने सुख के गुह्य-स्रोत की थाह लेने की अनुज्ञा मुझे नहीं थी, लेकिन वह बना रहा,—और जब मैं विश्राम लेने को उद्यत हुई, तो सामान्य से अधिक कृतज्ञता के साथ अपनी नित्य की संक्षिप्त प्रार्थना निवेदन की :

दिन जो बीता, उसके लिए तुझे धन्यवाद है,
ओ भगवान
मेरे परमपिता!
रात जो सम्मुख है, उसके लिए तुझे
धन्यवाद है।
तेरे साथ और प्रकृति के साथ एकात्म
होकर मैं
कृतज्ञतापूर्वक लेती हूँ विश्राम, जिसका तूने
प्रेम से विधान किया है,
चाहे मैं सोऊँ या जागती रहूँ, मेरे शरीर और
आत्मा तेरे हैं, इनके साथ तू जो चाहे कर
क्योंकि तेरी आज्ञा ही मेरा आनन्द है।

—आमीन.

['द लाइफ एवरलास्टिंग' से]

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी साहित्य सम्मेलन का मासिक

"माध्यम"

सम्पादक : बालकृष्ण राव

- "माध्यम" हर अंक में "सहवर्ती साहित्य" के स्तम्भ में किसी एक हिंदीतर भारतीय भाषा की चुनी हुई समसामयिक रचनाएँ प्रस्तुत करता है।
- "विवेचना" में प्रकाशित "चारुचंद्रलेख", "समय और हम" शमशेर का काव्य "यह पथ बंधु था" की समवीत विवेचना और अन्य स्तरीय समीक्षाओं की चर्चा आप तक पहुँची ही होगी।
- "माध्यम" के विचार-प्रधान और विचारोत्तेजक लेखों को आपने पढ़ा ही होगा।
- कविताओं, कहानियों, टिप्पणियों के चयन में "माध्यम" की रुचि और स्तर से आपका परिचय हो ही चुका है।
- "माध्यम" का आग्रह है, न केवल आप इसे अवश्य पढ़ें, इस पर अपनी राय भी अवश्य भेजें।

मूल्य : एक प्रति : १) रु., वार्षिक : १०) रु.।

संपादकीय कार्यालय : पो०बा०सं० ६०, इलाहाबाद।

व्यवस्थापकीय कार्यालय : हिंदी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज भगवान की सम्पदा पर शैतान ने अधिकार कर लिया है

'जो प्रभु का है, वह प्रभु को दे दो।' आज हमारे लिए प्रभु को देने की वे चीजें हैं मोमबत्तियाँ और प्रार्थनाएँ, और हर चीज जिसकी किसी को भी ज़रूरत नहीं है—और प्रभु को तो जिसकी सबसे कम ज़रूरत है। और बाकी जो रह जाता है, हमारा समूचा जीवन, जो हमारी आत्मा का मंदिर, और जो प्रभु की सम्पत्ति है, वह सब हमने सीज़र को दे दिया है। क्या यह सब भयानक नहीं है? मनुष्यों, जरा अपनी स्थिति पर विचार करो।

उसने एक पच्चानवें बरस के बूढ़े सिपाही के घर में रात बितायी। अलेक्जेण्डर प्रथम और निकोलस के यहाँ वह नौकरी में रह चुका था।

"क्यों बाबा क्या तुम मरना चाहते हो?'

'मरना? कितना अच्छा हो, अगर मर सकूँ? कभी मैं मौत से डरा करता था, पर अब तो भगवान से मेरी एक ही विनती है कि वह मुझे अपने दोषों को क़बूल करने का मौक़ा दे दे और मुझे अपना सन्देश सुनाने दे। मैंने बहुत पाप किये हैं।'

'भला वे पाप कौन-से रहे होंगे?'

'यह भी कोई पूछने की बात है? क्या तुम्हें मालूम नहीं है, जब मैं निकोलस के ज़माने में नौकरी पर था? तब जो कुछ हुआ, वह और था ही क्या? उस बात को सोचता हूँ, तो थर्रा उठता हूँ। और अलेक्जेण्डर के ज़माने को भी भूला नहीं हूँ। सिपाही लोग अलेक्जेण्डर की तारीफ़ किया करते थे। लोग कहा करते थे कि वह दयालु था।'

मुझे अलेक्जेण्डर के आख़िरी दिनों का ख़याल आया, जब बीस फी-सदी आदमी कोड़ों की मार से ही मार डाले जाते थे। जब अलेक्जेण्डर को निकोलस के मुकाबले दयालु कहा जाता था, तो निकोलस भी ज़रूर दयालु रहा होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'और फिर मैंने निकोलस के वक्तों में भी नौकरी की' उस बूढ़े आदमी ने कहा। उसने अपने अन्दर कुछ स्फूर्ति महसूस की और बात को आगे बढ़ाया।

'भला वे भी क्या दिन थे? उन दिनों पचास कोड़ों से पिंड नहीं छूट पाता था। डेढ़ सौ, दो–सौ, तीन–सौ कोड़े मारे जाते थे––यहाँ तक कि कोड़ों की मार से आदमी की जान ले ली जाती थी।'

बेशक एक दहशत और नफ़रत के साथ वह इन बातों का ज़िक्र कर रहा था, मगर अपने उस भूतकाल के कारनामों पर उसे अभिमान भी था। कभी–कभी वे लोग लकड़ी का इस्तेमाल भी करते थे। रिसाले के एक-दो आदमियों की जान लिये बिना, मुश्किल से ही उनका एकाध हफ़्ता गुज़रता था। आज कोई जानता भी नहीं है कि लकड़ी कहते किसे हैं!—

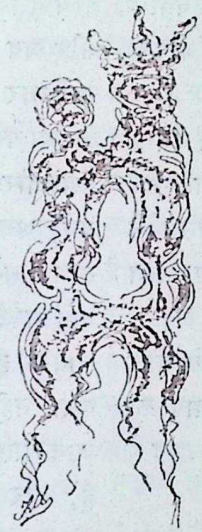

'हम सिपाहियों ने तो निकोलस को 'लट्ठ' का खिताब ही दे दिया था। उसका नाम भले ही निकोलस पावलोविच रहा हो–मगर लोग तो उसे 'निकोलस लट्ठ' ही कह कर पुकारते थे। वही उसका उपनाम हो गया था। उन दिनों की बात सोचता हूँ—जब एक आदमी कई-कई तरह के पाप अपनी आत्मा पर झेलता था। हवलदार लोग अपने मातहत सिपाहियों को पीट-पीट कर ख़त्म ही कर देते थे। बन्दूक के कुन्दे से या फिर अपनी मुक्की से, छाती या सिर के एक खास मुकाम पर वह लगातार चोटें मारता और इस तरह आदमी मर जाया करता। और उसकी पूछताछ करनेवाला भी कोई नहीं था। आदमी चोटों की मार से मरता था और अफसर लिख देता 'ईश्वर की मर्ज़ी से मर गया' और बात ख़त्म हो जाती। पर क्या तब ये बातें मेरी समझ में आतीं थीं? हर आदमी अपनी ही बात सोचता है। और अब मैं तवे पर पड़ा हुआ जैसे छटपटाया करता हूँ; रात-रात भर नींद नहीं आती! ख्याल का तांता जैसे टूटता ही नहीं है। वे सारी बातें बहुत साफ होकर सामने आती हैं। वह आदमी बहुत भाग्यवान है, जिसे प्रभु ईसा के हुक्मनामे के मुताबिक, अपने दोषों को कुबूल करके, माफ़ी माँगने का मौका मिलता है। नहीं तो फिर दिल की दहशत खाये ही जाती है। जब सोचता हूँ कि मैंने खुद कैसे-कैसे जुल्म झेले हैं और दूसरों पर मैंने कैसे-कैसे जुल्म ढाये हैं, तो लगता है कि अब किसी नरक की ज़रूरत नहीं रह गयी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। वह सब तो नरक और शैतान से भी बदतर था।'

उस मरते हुए बूढ़े ने विस्तारपूर्वक उन सारी भयानक प्रथाओं का जिक्र किया। उसने यह भी बताया कि कैसे एक आदमी को बन्दूकों से बांधकर, सिपाहियों की दो कतारों से बनी गली के बीच से गुज़रना पड़ता था। वे सिपाही उस आदमी पर बिजली के कोड़ों की वर्षा करते थे और उन सिपाहियों के पीछे चलनेवाले अफ़सर जोर-जोर से गरजते जाते थे 'जोर से मारो? और ज़ोर से मारो।'

ज़रा भी अफ़सोस ज़ाहिर किये बिना वह बूढ़ा सारी बातें तफ़सीलवार सुना गया, गोया कि वह समझ रहा हो कि कैसे भैंसे को हलाल करके उसका गोश्त पका लिया जाता है।

लेकिन जब इन सारी स्मृतियों के बीच मैंने किंचित् उसके भीतर पश्चाताप का भाव जगाना चाहा, तो वह बड़ी उलझन में पड़ गया और भयभीत हो रहा।

'ऐसी तो कोई बात नहीं है' उसने कहा, भला ऐसा कैसे कहा जा सकता है? जो कुछ हो रहा था बदस्तूर हो रहा था। उसमें क्या कुछ मेरा क़सूर था? वह तो सब क़ानूनी अमल था।'

फिर लड़ाई की भयानकताओं का ज़िक्र आया। उसने भी कई लड़ाइयाँ लड़ीं थीं। खाखकर टर्की और पोलेण्ड के बीच की उन हज़ारों लड़ाइयों को उसने देखा था। पर इन सारी बातों का जिक्र करते समय वह बहुत ही शान्त था और किंचित् मात्र भी पश्चाताप का भाव उसमें नहीं था।

इस बूढ़े को कैसा लगेगा अगर मौत की देहली पर इसे यह बात स्पष्ट समझ में आ-जाये कि इस अन्तिम क्षण में, मौत की इस सन्ध्या में उसकी अन्तरात्मा और प्रभु के बीच दूसरा कोई दख़ल देनेवाला नहीं है, और जब उसे लोगों पर जुल्म ढाने और उन्हें मार डालने का हुक्म मिला करता था, तब भी उसके और प्रभु के बीच कोई तीसरा दखलगीर नहीं था? इस आदमी को कैसा लगे, अगर यह समझ जाये कि मनुष्यों के साथ उसने जो पापाचार किये हैं, वे मिट नहीं सकते, भले ही यह बात आज उसके काबू की है कि अपने न चाहने पर आज वह ऐसा नहीं भी कर सकता है। काश वह जान पाता कि एक सनातन शासन भी है, और अवश्य ही वह उसे जानता होगा—उसे जांनने को वह बाध्य है; और जिसे वह क़ानून का नाम दे रहा था, वह तो एक निर्लज्ज और शैतानी धोखा भर था, जिसके कि आगे उसे हर्गिज़ नहीं झुकना चाहिए था। और सचमुच यह ही बड़ा भयानक लगता कि तवे पर पड़े हुए आदमी की तरह छटपटाता हुआ जब वह अपने एकान्त की उन निद्राहीन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
113532

रातों में उन पुरानी बातों की तस्वीरें दिमाग में लाता होगा, उस पर क्या गुजरती होगी। और अगर वह यह समझ पाये कि भला और बुरा करना, दोनों ही मनुष्य के अपने काबू की बात है, और तब भी उसके हाथों बुरा ही हुआ है, तो उसकी निराशा की सीमा नहीं होगी। और आज जब वह अच्छे और बुरे का भेद समझने की स्थिति में है, तब पश्चाताप की पीड़ा झेलने के सिवाय और कुछ उसके बस का नहीं है। सचमुच उसकी आत्म-यातना बड़ी भयानक होगी।

लेकिन क्यों हम उसे सन्ताप देने की सोचें? एक मरते हुए बूढ़े की अन्तरात्मा को क्यों ऐसे निपीड़न में डालें? इससे क्या यही भली बात नहीं, कि हम उसे तसल्ली दें? मुद्दतों पहले जो बातें गुज़र चुकी थीं, उनकी याद दिलाकर क्यों लोगों को क्षुब्ध किया जाये।

गुजर चुकी? क्या गुज़र चुका? क्या कोई भी चीज़ तब तक हमारे भीतर से दूर हो सकती है, जब तक कि हमने उसे ख़त्म करने कोई चेष्टा न की हो, और जब तक कि हम उस चीज़ को उसके सही नाम से पुकारने में भी हिचकिचाते हों।

नास्तिकों का जलाया जाना और वैधानिक तहक़ीकात के नाम पर उन पर होनेवाले अत्याचारों की बर्बरता और नादानी हमारे सामने खूब साफ़ है। मगर उस ज़माने के लोगों का ध्यान इस बात पर नहीं था। उस युग के विद्वानों और बुद्धिमानों तक की यह मान्यता थी कि पीड़न और दण्ड मानव-समाज का एक आवश्यक अंग है, वह एक अनिवार्य बुराई है। गुलामी और मारपीट के बारे में भी उन लोगों का यही ख्याल था। वह वक्त गुजर चुका है, और उन लोगों के दिमागों की कल्पना करना भी आज हमारे लिए एक मुश्किल काम है, जिनमें ऐसी भयानक भूलें भी सम्भावित हो सकतीं थीं। अगर हम यह समझ लेंगे कि मनुष्य का सर उतर-कर या उसकी शरीर-सन्धियाँ तुड़वाकर उससे सत्य निकलवाने की कोशिश महज एक नादानी और बर्बरता थी, तो हमारी समझ में यह भी आजायेगा कि एकान्त-निर्वासन और मौत की सजायें देकर या फिर पेशेवर वकीलों और सरकारी पैरोकारों के मार्फ़त मनुष्य की सचाई की जाँच करने का तरीका भी, उससे अगर ज़्यादा नहीं है, तो कुछ कम नादानी और बर्बरता की बात नहीं है।

अगर हम यह समझ लेते हैं कि ग़लत राह पर भटक जानेवाले एक आदमी को मार डालना महज हमारा अज्ञान और क्रूरता है; तो हमारी समझ में यह भी आजायेगा कि किसी एकान्त-निर्वासन के कैदखाने में सम्पूर्ण नाश करने के लिए उसे छोड़ देना उससे भी ज़्यादा नादानी की बात

[शेष पृष्ठ २४ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

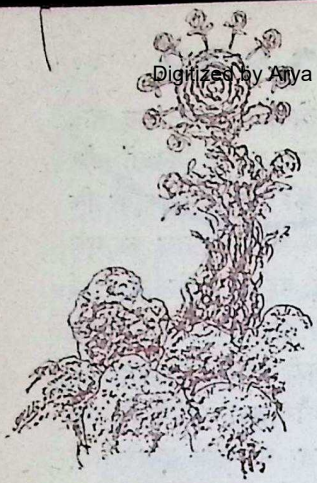

फिर अँधेरे की पँखुरियाँ थरथरायीं.....
फिर सुनायी दी अचानक
ज्योति की पगचाप....!
दूर तक सोये जलों में
जग रहा अन्तःस्फुरित सा
एक अस्फुट जाप....।
आह! यह विगलित तमिस्रा
हो गयी ऊषा
पुनः चुपचाप।
फेनफूलों से मचलते
फूटते जलसीकरों से
ये प्रभा के पुञ्ज....!!!
हर दिशा में उग रहे ये
नवल रूपाकार अनुपल
और नव-अभिनव स्वरों में
गूंजते ये कुञ्ज...!!!
आह! .....यह झरना
अभी कुछ देर में
बह जायगा
बनकर नदी....।
एकरस कोलाहलों की भीड़ में
फिर छूट जाएँगे कहीं
यह खिलखिलाता व्योम
रोमांचित धरा यह
पार्वती....।

दूर होती जायगी यह
ज्योति की पगचाप...
आततायी एक कोई क्षण धमकता
याद उसकी जायगा फिर
रौंद अपने आप।

रमेशचन्द्र शाह

●

ज्योति की पग-चाप

●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुँवर नारायण

●

सम्पदा

यदि मेरे दाँतों पर सोना मढ़ा होता,
उँगलियों में फँसी होतीं
कलम की जगह हीरे की अंगूठियाँ,
गले में मणि–मालाएँ,
पाँवों के नीचे हमेशा संगमरमर या क़ालीन
या ऐसी ही कोई क़ीमत
कि मिट्टी तरस जाती मेरे पाँवों के परस को;
लोगों को मेरी झलकियाँ मिलती कभी कभी
हवा में उड़ती
मोटरों में भागती
अख़बारों में छपती....
कि चकराती रह जाती हज़ारों की आँखें
एक के दरस को....
तो बुद्धि अनावश्यक होती मेरे लिए,
मैं जो चाहता उसे पैसा सिद्ध कर देता।
मैं हर तरक़ीब से धन कमाता
और धन मुझे प्रसिद्ध कर देता।
मैं एक क़ीमती चीज होता लाखों की दृष्टि से––
मेरी बात अलग होती ईश्वर की सृष्टि से।

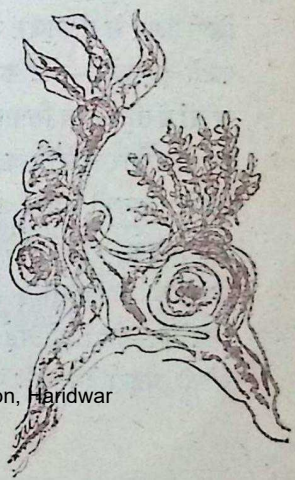

●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[आज भगवान की सम्पदा पर...पृष्ठ २१ का शेष]

है। अगर हम यह समझ लेंगे कि किसानों को ज़बर्दस्ती फ़ौजी नौकरियों में घेर लेना और चौपायों के झुण्ड की तरह उन्हें जला देना एक क्रूर और अज्ञानपूर्ण कर्म है, तो हमारी समझ में यह भी आजायेगा कि हर इक्कीस वर्ष की उम्र के आदमी को फौज़ में भरती होने के लिए बाध्य करना भी उतना ही अज्ञानपूर्ण काम है।

जब हम अपने भूतकाल की ओर से आँखें मींचना बन्द करके यह कहने से बाज आ जायेंगे—कि 'पुराने दिनों का ख्याल करने से क्या फ़ायदा है ?' तो हम देखेंगे कि हमारे अपने युग की भी अपनी विभीषिकाएँ हैं—अन्तर सिर्फ इतना है कि उन्होंने रूप बदल लिया है।

हम कहते हैं, वह सब अब ख़त्म हो गया है, अब वैसे सितम नहीं गुजारे जाते, गुलामी नहीं रही, और न मौत के घाट उतार देने वाली पिटाई ही रही। मगर यह सब हमें सिर्फ ऊपर से ही नजर आता है। बदबू से फटते हुए छोटे–छोटे कमरों में और जेलखानों में तीन लाख सिपाही और कैदी एक ठंडी शारीरिक और आत्मिक मौत से मर रहे हैं। उनकी स्त्रियाँ और बच्चे भूखों मरते छोड़ दिये गये हैं और ये सारे आदमी भयानक तहखानों, जेलखानों और निर्वासन–द्वीपों में पड़े हुए हैं। उन पर चौकी, पहरा देने वाले गार्ड ही इन गुलामों के सर्व–सत्ताधीश मालिक हैं, और वे ही उन लोगों की उस नृशंस परवशता से मन चाहा लाभ उठाते हैं।

यह देखने–समझने के लिए किसी खास गहरी नजर की जरूरत नहीं है कि हमारा आज का दिन भी ठीक उसी भूतकाल की तरह है। हमारा युग भी वैसी ही उत्पीड़नाओं और दुष्टताओं से भरपूर है, और एक दिन हमारी भावी पीढ़ी को हमारे इन सारे कारनामों की नादानी और हैवानियत ठीक इसी तरह हैरात में डालेगी। बीमारी वही पुरानी है, सिर्फ वह उन लोगों के लिए बीमारी नहीं है, जो इससे लाभ उठाते हैं।

इस सारे भयानक रोग की जड़ इस मिथ्या आडम्बर में है कि अपने पड़ौसी को प्यार करने के सनातन नियम से भी बड़ा और पवित्र कोई कानून इस धरती पर हो सकता है। इस पाप की जड़ उस धोखे में है, जो मनुष्य से इस बात को पोशीदा रखता है, कि एक मनुष्य दूसरे मनुष्यों की मांगों को पूरा करने के लिए कुछ भी कर सकता है। पर मनुष्य होकर जो एक चीज़ उसे हर्गिज़ दूसरे के कहने से नहीं करनी चाहिए, वह यह है: उसे प्रभु की आज्ञा भंग नहीं करनी चाहिए—और अपने दूसरे मानव-बन्धुओं को सताना और मारना नहीं चाहिए।

आज से अठारह सौ वर्ष पहले फरीसियों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने सवाल उठाया था—क्या उन्हें सीजर को टैक्स देना चाहिए? और उन्हें इन शब्दों में उत्तर मिला था—'जो सीजर का है वह सीजर को दे दो, और जो प्रभु का है वह प्रभु को दे दो।'

यदि मनुष्यों में किंचित् मात्र भी धर्म शेष है, यदि प्रभु के प्रति वे अपना रंचमात्र भी कोई कर्त्तव्य समझते हैं, तो सबसे पहले वे अपना कर्त्तव्य प्रभु की उस वाणी के प्रति पालन करें, जो उसने शब्दों में नहीं कहा है, बल्कि जिसे उसने मनुष्य के हृदय पर अमिट अक्षरों में लिख दिया है। उसने कहा है 'किसी को भी जान से न मारो; औरों से तुम अपने प्रति जिस व्यवहार की इच्छा रखते हो, वही व्यवहार तुम औरों के प्रति भी करो। अपने पड़ौसी को अपनी ही तरह प्यार करो।'

यदि मनुष्य को प्रभु में विश्वास है, तो उसके प्रति अपने प्रथम कर्त्तव्य को वह नहीं भूल सकता है—कि वह किसी को पीड़ित नहीं करेगा, किसी की जान नहीं लेगा। ये शब्द कि 'सीजर का सीजर को दे दो, और प्रभु का प्रभु को दे दो' उसे बहुत स्पष्ट और निश्चित रूप से समझ में आजायेंगे। 'फिर चाहे सामने सीजर हो या और कोई हो—उसके प्रति तुम्हें कुछ भी करने की छुट्टी है'। एक श्रद्धालु जन कहेगा, 'सिर्फ वही तुम्हें नहीं करना है, जो प्रभु की आज्ञा के विरुद्ध है।'

यदि सम्राट को मेरे पैसे की ज़रूरत है वे ले लें; मेरा मकान, मेरा काम वे ले लें; मेरी पत्नी, मेरे बच्चे, मेरा प्राण भी चाहें तो वे ले लें, यह सब कुछ प्रभु का नहीं है। पर अगर सम्राट चाहें कि मुझे अपना डण्डा उठाकर अपने पड़ौसी की पीठ पर मार देना चाहिए, तो वह प्रभु की चीज है। जीवन में जो आचरण मैं करता हूँ, उसके लिए मुझे प्रभु के सामने हिसाब देना होगा, और प्रभु ने जो कुछ करने का निषेध कर दिया है, वह मैं सम्राट के लिए भी नहीं करूँगा। मैं एक आदमी को जेलखाने में नहीं डाल सकता, उसकी जान नहीं ले सकता; वही मेरा सच्चा जीवन है, और मेरा जीवन प्रभु का धन है, और वह मैं प्रभु को छोड़कर और किसी को नहीं दे सकता।

—अनु. विमल के गुप्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डॉ. शिवसहाय पाठक

मातृ-पूजा और सृष्टि-विज्ञान

भारतीय साधना में माँ भगवती आद्या महाशक्ति के रूप में प्रतिष्ठित हैं। उन्हीं के स्फुरण से विश्व प्रकटा है, उन्हीं की दिव्य ज्योति से निखिल ब्रह्माण्ड ज्योतित है। उन्हीं की लीला में सूर्य, चन्द्र और असंख्य ज्योतिष्कपिण्ड नाच रहे हैं। संवित् के बिन्दु चक्र से विश्व का आविर्भाव माना जाता है।

स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने लिखा है कि 'मां अपने भक्तों के सम्मुख नाना रूपों में प्रकट होती है। प्रभु स्वयं महामाया हैं। संसार की रचना महामाया का खेल है। हमें उन्हीं की शरण लेनी चाहिए: वे ही वैश्विक शक्ति हैं।'

जब-जब इस विश्व-वैचित्र्य के तात्विक उलझनों में मन उलझता है, प्रायः तब-तब विश्व-रूपा मां का ध्यान हो आता है और मेरा मन भारतीय धर्म-साधना के सहस्रों वर्षों के तात्विक चिन्तन की मनो-भूमि में पहुँच जाता है।

भारतीय धर्म-साधना में मां, भगवति अथवा जगदम्बा को परम रूप, अखण्ड एवं स्वयंप्रकाश चैतन्य माना गया है। उसे ही संवित् अथवा प्रतिभा रूप में भी प्रतिष्ठित माना गया है। सचमुच भगवती 'मा' स्वरूपा है, पूर्ण है। उसे ही परमेश्वरी, परम चैतन्य, प्रकाश अथवा महाशक्ति भी कहा गया है। वह सभी विकल्पों से विहीन है। आत्मा या परासंवित् को भी महाशक्ति या 'मां' कहा जाता है। अतः हम 'मां' को तभी जान सकते हैं, जब अपनी शुद्ध आत्मा का ज्ञान प्राप्त कर लें।

'ज्ञातस्वात्म स्वरूपोवै ततो ज्ञास्यसि मातरम्।'

'मां' भगवती को निराकार भी कहा जाता है, साकार भी। उसका परम रूप अखण्ड एक रस और चैतन्य है। यह परम रूप निराकार है। उसका एक दूसरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साकार रूप भी है। मां का मूल रूप एक है, पर भक्तों और योगियों के समक्ष उसके साकार अनन्त रूप हैं।

भारतीय शाक्त, तांत्रिक, प्रत्यभिज्ञा आदि के मनीषियों ने 'मां' के निवास स्थान, शिवा– अर्धनारीश्वर रूप, सृष्टि, प्रलय आदि के संबंध में बड़ी ही मनोमय बातें कही हैं। हमारे इस ब्रह्माण्ड में कुल १४ भुवन हैं। सात धरती के नीचे हैं, पांताल, नरक, अतल, नितल, वितल, तल आदि और सात धरती के ऊपर माने गये हैं– भुवः, स्वः, महः, तप-लोक, सत्य लोक-स्वर्ग आदि। इस प्रकार हमारे इसी ब्रह्माण्ड में तीनों लोक चौदहो भुवन, लोकोत्तर, लोकोत्तरेतर ज्योति-वृत्त आदि सब स्तर-स्तर पर अनुस्यूत हैं। इस ब्रह्माण्ड में और इसके बाहर अनन्तव्यापी ज्योति-राशि है। इस ज्योति के ऊपर योगियों ने चिदाकाश की कल्पना की है। इसके मध्यभाग में दिगन्त-व्यापी अमृत-सिन्धु है, इसे महासमुद्र और सुधा सिन्धु भी कहा जाता है। इस सागर के मध्य में नौ-रत्नों से अलंकृत एक नौखण्डा-मणिद्वीप – है, मणिद्वीप में कदम्ब वन है। कदम्ब वन में चिन्तामणि-मन्दिर है। इसमें पाँच विशिष्ट आसन हैं। ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र और ईश्वर के चार पाद हैं। इस आसन के ऊपरवाले मुख्य आसन पर सदाशिव हैं। सदाशिव मूलतः अर्द्धनारीश्वर हैं। इसे यों कहा जाता है कि इस मन्दिर के विशेष आसन पर अनादि मिथुन परम चैतन्य, परमेश्वर-परमेश्वरी अभिन्न रूप में विराजमान हैं।

मेक्सिकन आदिवासियों में मातृ-पूजा

संतों के अनुसार इन्हें ही परमपुरुष और परमा प्रकृति कहा जाता है। जैसे एक कलाकार एक ही फलक पर वृषभ और सिंह का चित्र बनाता है। एक ओर से मात्र वृषभ दिखायी देता है, दूसरी ओर से केवल सिंह दिखायी देता है। इस चित्र की तरह होने के बावजूद ये शिव-शिवा जल-तरंग और शब्द-अर्थ की तरह एक-दूसरे से अविच्छिन्न हैं।

सृष्टि के आदि में आद्या मां ही स्वयं को नित्य युगल रूप में प्रकट करती है। ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, गणेश, स्कन्द, लक्ष्मी, कुमारी आदि सब 'मां' की ही शक्ति के रूप हैं। इहीं के माध्यम से 'मां' का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुग्रह-कार्य (अर्थात् कृपाः उद्भव, पालन, संहारादि) सम्पादित होता है। अनुग्रह-रूपा 'मां' अपने भक्तों को उनकी भावना के अनुरूप फल देती है।

शास्त्रों के अनुसार 'मां' के बारह रूप हैं:– काञ्ची में कामाक्षी, केरल में कुमारी, गुजरात में अम्बा, मलय में भ्रमरी, करवीर में महालक्ष्मी, प्रयाग में ललिता, वाराणसी में विशालाक्षी, गया में मंगलावती, बंगाल में सुन्दरी, नेपाल में गुह्येश्वरी और मालव में कालिका के बाहर रूपों में 'मां' ही सुशोभित हैं। इन रूपों के धारण करने से संवद्ध अनेक पौराणिक कथाएँ प्रख्यात हैं। कहा जाता है कि श्रीकृष्णावतार के समय जब कंस ने रोहिणी, यशोदा '(तथा कथित देवकी) की लड़की को पत्थर पर पटकना चाहा, तो वह आकाश में उड़ गयी। उसने विन्ध्य पर्वत पर अपने को उतारा। इसी प्रकार कालिका, कामाक्षी आदि अवतारों की भी कथाएँ हैं, जिनमें इतिहास-संगत बातें भी हैं। जो कुछ दृश्यमान है, जो कुछ संभव-असंभव है—वह सब 'मां' का ऐश्वर्य है। 'मां' ही जगत के रूप में स्फुरित होती हैं। मूलतः वे अदृश्य हैं, चिन्मय हैं, अतः स्वानुभूति के द्वारा ही जानी जा सकती हैं। वे ही जागतिक आकारों में स्फुरित हुई हैं। वे निराकार हैं और जगत उनका प्रतिबिम्ब है। 'मां' अपनी योग-माया के द्वारा स्वयं को अज्ञानावृत करती हैं और इस प्रकार वे जन्म-मृत्यु के प्रवाह में आती हैं, लीला करती हैं, संसारी का स्वांग रचती हैं— निखिल विश्व का उद्भव, विलास और लय उन्हीं की लीला है— उन्हीं का नयनोन्मीलन है।

आद्या 'मां' ही सर्व तत्वमयी प्रपंच रूपा शक्ति है। वह नित्य परमानन्द स्वरूप एवं चराचर की बीज रूप है। वस्तुतः शिव और शक्ति दोनों एक तत्व हैं—

'शिवशक्तिरिति ह्येकं तत्वमाहुर्मनीषिणः।'

अहं-ज्ञान ही शिव-ज्ञान है। परा शक्ति का स्फुरण या विश्व-रूप धारण करना ही सृष्टि है। यह योग की एक अवस्था है कि शिव शक्ति को अपने अंक में धारण किये हैं। इस स्थित में प्रसाद, महा प्रासाद, परा प्रासाद और और प्रासादपरा नामक चार आसनों के अनन्तर शिव शववत सुप्तावस्था में स्थित हो जाते हैं। शक्ति नाभि द्वार से निकल कर प्रकाशमान होती है। शिव स्थाणु, ठूंठ या जड़ रहता है। शक्ति इस दशा में मुक्त रहती है। वही शिव की अधिष्ठातृ बन जाती है। काली रूप में शिव शव-रूप में लेटे हुए हैं और शक्ति उसकी रक्षा कर रही है, वह मुक्त है, उसका स्फुरण जागतिक सृष्टि है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसे ही 'विन्दु' वाद की संज्ञा भी दी जाती है। श्री चक्र अर्थात् समग्र संसार चक्र-रूप है। इस विश्व का विन्दु से ही आविर्भाव हुआ है और बिन्दु में ही इसका लय भी है। बिन्दु का तात्विक अर्थ है शिवशक्ति का सामरस्य। इस विन्दु को ही रवि या काम भी कहते हैं। शिव का अंश संहारक अग्नि है। शक्ति का अंश सृष्टि-मूलक सोम है। बिन्दु इन दोनों का साम-रस्य है—यही स्थिति-रूप है।

इस प्रकार 'मां'— महामाया ही लीला-वश शिव को—अथवा अपने आपको खण्ड करके जीव की सृष्टि करती है। लीला की समाप्ति पर मां जीव को अपने शिवमय रूप में लौटा ले आती है। इस प्रक्रिया में महाशक्ति के ४ रूप मिलते हैं—खेचरी, गोचरी, दिक्चरी और भूचरी। शैव और शाक्त सृष्टि-विज्ञान में काफी समानता है। यह कुछ इस प्रकार है :—

मूलतः महाशक्ति— आद्याशक्ति एक है। जब तक शिव और शक्ति अविभक्त रूप में स्थित रहते हैं, तब तक वे परम दशा में अभिन्न रहते हैं। शिव शक्ति की ओर उन्मुख होते हैं, शक्ति भी शिव की ओर उन्मुख होती है—इस स्थिति को 'यामल दशा' भी कहते हैं। इस दशा में न शिव शक्ति-हीन होते हैं और न शक्ति शिव-हीन। यही मिलन है, संद्यह है, आनन्द, शक्ति स्पन्दन है। यही महा आलिंगन भी कहलाता है। विश्व सृष्टि को इसी अवस्था की देन माना जाता है।

वस्तुतः शिव और शक्ति में अभेद है। कालिदास ने इसे ही ('वागर्था विव संपृक्तौवागर्थः प्रतिपत्तये। जगतः पित-रौवन्दे पार्वती परमेश्वरौ ॥')

रघुवंश के प्रारम्भ में प्रणाम किया है। तुलसी ने भी 'गिराअरथ जल-बीच- सम कहियत भिन्न न भिन्न,' कहकर उस शक्ति को प्रणाम किया है। दुर्गा सप्त-शती में भी इन दोनों के अभेद का उल्लेख है :—

'ॐ उत्तप्त हेम रुचिरां रवि चन्द्र वह्नि ।
नेत्रां धनुश्शरयुतांकुशपाशशूलम् ।
रम्यैभुजैश्च दधतीं शिवशक्तिरूपां
कामेश्वरीं हृदि भजामि धृतेन्दुलेखाम ॥'

अभेद होते हुए भी जागतिक दृष्टि कोण से शिव अंश निष्क्रिय किंवा साक्षी है और शक्ति का अंश पंचकृत्यकारी है। शिव प्रमाता है, वह स्वयं प्रकाश मात्र है (द्रष्टव्य (१) प्रत्यभिज्ञादर्शन; कामायनीः कौन तुम संसृति जलनिधितीर तरंगों से फेंकी मणि एक।') ज्ञानी अद्वैत शिव को परम शिव कहता है। भक्त और उपासक इसे महाशक्ति कहते हैं। शिव शक्ति है, शक्ति भी शिव है— दोनों का वास्तविक रूप ऐक्य स्वभाव है।

[शेष पृष्ठ ६८ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

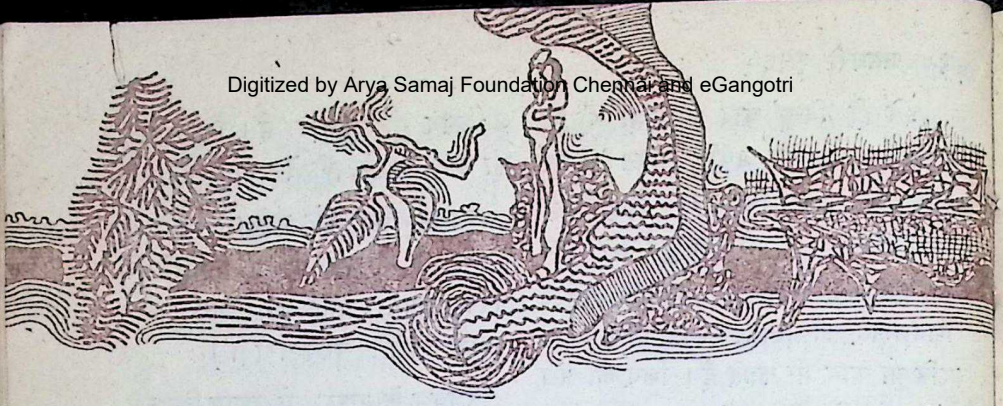

चित्र : ज्योतीन्द्र जैन

वीरेन्द्रकुमार जैन

•

अन्तर-कक्ष की दो कविताएँ

संसरण

जब मैं तुम्हारी रक्त–वाहिनियों में
उन्मुक्त बहता हूँ...
तो पल–पल
जाने कितनी मौतें मरता हूँ,
जाने कितने नव–जन्म लेता हूँ :
आगत, विगत, अनागत के
जाने कितने प्यारों और जीवनों को
निर्निमेष जी लेता हूँ :
मेरे रक्ताणुओं की दीवारों में शिल्पित
अनन्तकालीन सृष्टियाँ
मुझमें होती हैं संसरित :
और नाम-रूप परिचय से अतीत
उन सबमें मैं असंख्य होकर विचरण करता हूँ :
जाने कितने नव–नूतन शरीर धारण करता हूँ।

कालातीत, परसातीत
रमण की परम लवलीनता में
अनुपल,
मेरी देह आत्मान्तरित होती है
मेरी आत्मा देहान्तरित होती है :
अन्तिम निजत्व की उस ऊष्मा में
सकल चराचर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक अव्याबाध चैतन्य की
निःसीम तरंगमाला हो जाता है–
हमारी कसकती छातियों के
आरपारगामी आलिंगन–सागरों में....!
एक अनन्त प्रवाही
पारदर्शी नीलिमा बहती है
पल–पल नव–नवीन छबियों में
रूपायमान होती हुई,
हमारी निबिड़ गुम्फित नसों की
गहन वनानियों में.....!

★

महा चुम्बन

चुम्बन : चुम्बनों की
एक अन्तहीन परम्परा.....
शैया से दीवारों में,
दीवारों से बन्द दरवाज़ों में,
बन्द दरवाज़ों से फ़र्श में,
फ़र्श से सोफ़ा में
सोफ़ा से उन गहरे पन्नई-हरे
मख़मली पर्दों के
घनीभूत सुरभित शलों में
से गुज़रते हुए
अटूट गुम्फित हम-तुम
अनन्त चुम्बन–समन्दर में
निःशेष, निर्विशेष, एकलीन होते चले गये...
अनाहत ऊर्जा की
एक निःसीम तरंग.....
एक सीमोत्तीर्ण निगूढ़, मधुर,
अव्याबाध आलोड़न.....
अनादि अनाविल जल
अपनी ही नग्नता में आविल...!

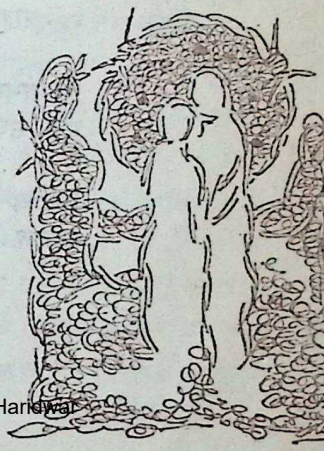

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

....एकाएक सम्मुख था दर्पण :
निःसीम के सागर–सागरान्तों का
अप्रत्याशित तट–देश :
हमने परस्पर एक-दूसरे में
एक–दूसरे को देखा :
हाय रे, अपने युगल–स्वरूप की
ऐसी पारदर्शी प्रवाही आभा
हमने पहले कभी नहीं देखी थी :
हमारे भीतर आकाश पिघल रहे थे
अनन्त के रहस्य
खुल कर उजल रहे थे :
फिर चुम्बन.....
चुम्बनों की अन्तहीन परम्परा :
दर्पण में
असंख्य तरंगायित विचुम्बित
अधर–युगल
कपोल–पालियाँ
चिबुकावलियाँ.....
अथाह मार्दव का, माधुर्य का
एक घन–नील वॉयलेट प्रसार
एक अस्पृश्य अगमगामी गहराव....
जो उत्तरोत्तर
बन्द कक्ष की दीवारों से, सीमाओं से
उत्तीर्ण, संक्रमित होता चला गया...
...बाहर के लोक में
जब चला मैं
तो समस्त आकाश–वातास में
एक सघन विचुम्बित
पेशलता प्रवाहित थी :
एक घनीभूत परस–माधुरी घुल रही थी :
समस्त लोकाकाश
एक महाचुम्बन–सागर में
तरंगायित था....

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सहाना देवी

पाण्डिचेरी के पथ पर

[लेखांक : ३ :]

श्री अरविन्दाश्रम की साधिका हैं, श्रीमती सहाना देवी। बँगला की प्रसिद्ध पत्रिका 'देश' में उन्होंने उपरोक्त शीर्षक से एक लेखमाला लिखी थी, जो अन्तहीन यातना से गुज़र कर– परम प्रकाश, प्रेम और सुरक्षा की खोज में भटकती एक आत्मा की संघर्ष-कथा कहती है। पाण्डिचेरी में पायी उसने परम शरण की वह अमरावती। सुप्रसिद्ध लेखिका श्रीमती लावण्यप्रभा राय ने 'भारती' के पाठकों के लिए उपरोक्त लेखमाला को हिन्दी में प्रस्तुत किया है।

यहां पर दो महीने रहने के बाद मैंने यह निश्चय किया कि उटकमंड जाकर कुछ दिन रहूंगी, क्योंकि डाक्टरों की यही राय थी कि मुझे और कुछ दिन हवा बदलने के लिए बाहर रहना चाहिए। मैं 'उटी' जाने की तैयारी करने लगी। इधर-उधर खोज-तलाश भी शुरू कर दी। 'उटी' में एक मकान का आधा हिस्सा मुझे किराये पर मिल गया। मकान के पते पर पत्र लिखकर मुझे मालूम हुआ कि किराया, खाना-पीना व नौकर-चाकर आदि सब मिलाकर मुझे एक दिन का ख़र्चा छः रुपये लगेगा। मैंने वहां जाने का निश्चय कर पत्र लिख दिया। मकान की मालकिन थी एक विधवा अंग्रेज महिला। उनके पिता व पति दोनों अंग्रेज थे। उनकी माँ जो कि तब तक जीवित थीं, एक फ्रांसीसी महिला थीं। एक लड़का, एक लड़की व वृद्धा माँ को लेकर वह पास के मकान में रहती थीं। मेरी तरफ थे दो सोने के कमरे, दो 'बाथरूम', एक 'ड्रेसिंग रूम' व एक बड़ा हॉल जिसका डाइनिंग व ड्रायिंगरूम बनाया गया था। सभी कमरों में काफी असबाब थे। सब प्रकार के आराम व सुविधा का प्रबंध था। मेरा खाना, नहाने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का गर्म पानी सभी मकान मालिक के यहाँ से आता था। मुझे कुछ करना नहीं था इसीलिए कोई झंझट भी नहीं था। नौकर आकर झाड़ू लगाकर कपड़े धो देता था। ठीक वक़्त पर नहाने का गर्म पानी मिल जाता था। पौ फटने से पहले नौकर 'बेड टी' देता था, फिर साढ़े आठ बजे 'ब्रेक फास्ट' : दोपहर एक बजे 'लंच', तीसरे पहर चाय व रात आठ बजे 'डिनर'। बिलायती खाना था और हर बार इतना ज़्यादा भेजा जाता था कि मैं खा नहीं सकती थी। मकान की मालकिन महिला मेरे साथ इतना अच्छा बर्ताव करती थीं, मानो मैं उनकी कोई आत्मीया हूँ। आज भी मैं उनकी बात भूल न सकी। अक्सर आकर खोज-खबर लेती थीं, पूछती थीं मैं ठीक से खा पी रही हूँ या नहीं, क्योंकि ठीक से न खाने से मेरी तबीयत सुधरेगी नहीं। खाने के लिए ज़बर्दस्ती भी करती थीं। मुझे यह महिला बड़ी अच्छी लगने लगी। मैं अक्सर उनके यहाँ जाती थी। उनकी बुढ़िया माँ इतना बढ़िया कॉफी बनाती थीं कि जब-जब मैं उनके यहाँ जाती थी, मुझे कॉफ़ी पिलाती थीं।

विजगापट्टम से 'उटी' आते समय मैंने अपने नौकर व उसकी स्त्री को कलकत्ता भेज दिया था। मैं सीधी 'उटी' चली आयी थी। दक्खिन के नीलगिरी पर्वत पर प्रसिद्ध 'हिलस्टेशन' है 'उटी'। इसकी ऊंचाई करीब ७४०० फीट होगी। सुन्दरता के लिए 'उटी' प्रसिद्ध है। इसे सुना है "सौन्दर्य की रानी" कहा जाता है।

विजगापट्टम से दोपहर को रवाना होकर मैं दूसरे दिन सबेरे मद्रास सेन्ट्रल स्टेशन पर आकर उतरी। यह पहली बार मैं मद्रास आयी थी। दिन भर मुझे ठहरना पड़ा, क्योंकि 'उटी' की गाड़ी रात को चलने वाली थी। इसीलिए दिन में मैं शहर देखने निकल पड़ी थी। सन्ध्या के समय मैं समुद्र देखने गयी। यहाँ के समुद्र की वेलाभूमि बहुत ही चौड़ी और बहुत ही सुन्दर है। जल का रंग बहुत ही गहरा नीला है। रेतों पर बैठकर चाय पीने के लिए रेस्तराँ भी है। बहुत लोग अपने-अपने दोस्त व साथिओं के साथ चाय या काफी पी रहे थे—साथ खाने पीने की और भी चीजे थीं। रेती पर इधर-उधर छोटी-छोटी मेज रखी हुई थीं, जिस पर लोग बैठे हुए थे। मैं भी जाकर एक छोटी मेज़पर बैठ गयी। खुले आसमान के नीचे, नील समुद्र के सामने बैठकर 'केक' व 'आइसक्रीम' खाने में मज़ा आ रहा था। चारों ओर अन्धेरा हो आया—मैं भी स्टेशन लौट आयी। रात के साढ़े नौ बजे गाड़ी चलने लगी। दूसरे दिन सबेरे उस स्टेशन पर पहुंची, जहाँ से 'उटी' जानेवाली छोटी लाइन की गाड़ी जाती है। स्टेशन का नाम अब मैं भूल गयी, तभी बता न सकी। सबेरे स्टेशन पर ही चाय पीकर 'उटी' की गाड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में जाकर बैठ गयी। साढ़े आठ बजे गाड़ी चलने लगी। मैंने सोचा था कि रास्ते में कितने सुन्दर-सुन्दर दृश्य पाऊँगी, पर मुझे निराश होना पड़ा। विशेष कोई भी सुन्दर दृश्य दिखायी नहीं दिया। देखने को जो मिले वे थे केले के पौधे। पहाड़ी इलाक़े में केले के इतने पौधे मैंने शायद ही पहले कहीं देखे हों। उटकमंड पहुंचते-पहुंचते दोपहर हो गया। स्टेशन पर कोई दिखायी नहीं दिया। एक रिक्शेवाले को मकान का पता बताया: उसने मुझे पहुंचा दिया। सामान रिक्शे से उतार कर चुपचाप खड़ी थी—इतने में मकान की मालकिन चाभी लेकर आ गयीं। दरवाज़ा खोलकर उन्होंने मुझे सब कुछ दिखा समझा दिया। मकान के दूसरे हिस्से में श्रीमती कमलादेवी चट्टोपाध्याय की कोई निकट आत्मीया अपने परिवार के साथ रहती थीं। उनका हिस्सा मेरे हिस्से से दुगना बड़ा था। हमारा यह मकान बहुत ही सुन्दर स्थान पर बसा हुआ था। पास ही ज़रा नीचे की ओर 'उटी' का सब से सुंन्दर पार्क था। वहाँ के रंगबिरंगे फूलों की क्यारिओं की बहार देखकर आँखें खुश हो जाती थीं। हमारे यहाँ से पार्क की ओर नज़र डालने से मालूम होता था मानो फूलों का नक़शेदार कोई कालीन बिछा हुआ है। जब मन होता था मैं पार्क में चली जाती थी। सुबह हो चाहे दोपहर: सन्ध्या हो या चाँदनी—तारों भरी रात—मैं अकेली वहाँ बैठी रहती थी। इस पार्क में से रास्ता 'राजभवन' की ओर चला गया है। और उसके नीचे है एक बहुत बड़ा मैदान, जो शायद खेलकूद के लिए घेरा हुआ था। मुझे ऐसा जान पड़ता था मानो यह समतल स्थान ही है पर्वत की पादभूमि और यहीं से पर्वत ऊपर की ओर उठ गया है।

परिवार

सद्वैद्यशाला आयुर्वेदिक फैक्टरी नांजनगुड

जिंचीप अपचन दूर करते

ज्वरेचा तापांचर

आलमनटाईन टॉनिक

सहायक

प्रत्येक शहर के लिए हम एकही व्यापारी को अपना स्टाकिस्ट नियुक्त करते हैं।

सद्वैद्यशाला आयुर्वेदिक फैक्टरी नांजनगुड

नांजनगुड

दुधपावडर

सोल एजेन्ट्स:
दी युनायटेड कन्सर्न
५४, बन्दर स्ट्रीट,
मद्रास—१

बम्बई—शाखा—२७७ विश्वास भवन, घेवदार रोड़, माटुंगा, बम्बई १९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'उटी' के रास्ते हैं बहुत ही सुन्दर। मोटर में घूमने के बहुत सुन्दर-सुन्दर रास्ते दूर–दूर तक चले गये हैं। इन रास्तों पर से चारों ओर के लहराते हुए पर्वत बहुत सुन्दर दिखते हैं। चारों ओर हरियाली की बहार। फिर भी यहाँ का चढ़ाव-उतराव दार्जिलिंग की तरह नहीं हैं।

नीलगिरि की प्रसिद्ध 'रूप की रानी' 'उटी' का रूप-ऐश्वर्य कम नहीं है और हो सकता है कि वह रूप स्वप्नकल्पना से बना हुआ है फिर भी उस रूप में, उस स्वप्नकल्पना में विस्मय का कोई स्थान नहीं है। उसकी रूपसज्जा में चटक-मटक है, मौलिकता भी है, परन्तु कोई स्वर्गीय अभिजात्य या दिव्यमहिमा उसमें नहीं है। 'उटी' के सौन्दर्य से हमारा मन परितृप्त अवश्य होता है, परन्तु इसके पीछे विस्मित होने का कोई साधन नहीं है, जिसकी तरफ स्तंभित निर्वाक विस्मय से मनुष्य देखता रह उठे और देख-देख कर उसका मन अपूर्व पुलक से रोमांचित हो जाय।

हिमालय में जो दिव्यगरिमा है, वह नीलगिरि पर भी दृष्टिगोचर होगी, ऐसी कोई बात नहीं है। मुझे तो पर्वत देखते, ही हिमालय याद आता है और हिमालय की ही बात कहने की इच्छा होती है। संसार भर में हिमालय पर्वत अतुलनीय है। और भारत के लोग हिमालय को केवल इस अतुलनीयता की दृष्टि से ही नहीं देखते, बल्कि उनके लिए हिमालय है देवतात्मा, देवता। उसके भीतर वे देखते हैं एक विराट्, महान आत्मा को और उस दिव्य भूमि को, जो देवाधिदेव महादेव का लीलाक्षेत्र है। आध्यात्मिक साधना की प्रेरणा का मूल है हिमालय। हिमालय की कंदरा में तपस्वियों की तपोवह्नि की शिखा जलती रहती है। हिमालय की विराट् सत्ता में सम्मिलित है दीप्त आत्मा की अनिर्वाण वाणी, आत्मोपलब्धि का शाश्वत आह्वान, अनादिकाल की अनन्त व्यंजना हिमालय देखने से मन में जो भावनाएँ आती हैं, उनका स्वरूप ही भिन्न है। जिसने एकबार हिमालय देखा हो, दूसरा कोई भी पर्वत उसके मन को तृप्त नहीं कर सकेगा।

हिमालय से मुझे मिली है अक्षय संपद। हिमालय ने बारबार मेरे जीवन को अन्तः करण के अनन्त व नित्य ऐश्वर्य की ओर घुमा दिया है। मेरे जीवन में लाया है चेतना का उन्मेष, खोल दिया है आध्यात्मिक जीवन का द्वार—मेरे कदमों को चालित किया है उसी के रहस्यमय राज्य की सीढ़ियों की ओर और दी हैं नवीन दृष्टिभंगिमा। इसी हिमालय पर मैं श्री अरविंद को अपने इष्ट गुरु के रूप में पाया है और उनको आत्मा के भीतर साक्षात प्राप्त करने की प्रेरणा भी मुझे यहीं पर मिली है। इसीलिए ऐसा लगता है मानो हिमालय के साथ मेरे अन्तःकरण का कहीं एक घनिष्ठ सम्बन्ध है। मेरे अनजान में ही मेरे लिए जो द्वार वहां एक दिन खुल गया था, जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के भिन्न-भिन्न घटना चक्र में पड़कर वारवार बंद होने को होता था, वह केवल उन्हीं की असीम कृपा से बंद नहीं हो पाया, जिनके इशारे से खुला था वह द्वार। नीलगिरी में मुझे जो कुछ भी मिला हो—वह मुझे मिला अन्तःकरण की एकान्त व्यग्रता व चाह के कारण। परन्तु हिमालय से मुझे जो मिला है, वह बिना माँगे ही मिला। मानो अपना हाथ फैलाकर हिमालय ने मुझे पथ दिखाया। नीलगीरि ने उस पथ पर चलने के लिए पथ बना दिया। एक ने दिया पथ का पता, दूसरे ने पथ बना दिया।

इसी प्रकार मैं उसी पथ पर चलती गयी, जहां जाने के लिए सब कुछ छोड़कर इतनी दूर बढ़कर आयी। बाहर से देखने पर भी स्पष्ट मालूम होता है कि मेरी यात्रा की दिशा दक्खिन की ओर ही रही। न जाने कब मैं अपने लक्ष्य पर—पाण्डिचेरी के उपकूल पर पहुँचूंगी। मुझे लग रहा था कि मेरे जीवन का जाल चारों ओर से अपने को धीरे-धीरे समेट रहा है—अब बाकी रहा केवल पहुंचना।

*

अपनी आवश्यकता के लिए खरीदिए

Hind FLOORING TILES

हाइड्रालिक इटालियन मशीनों से

निर्मित : प्रीफ़ब (पूर्वनिर्मित) आर. सी. सी. गृह, सीमेण्ट पाइप, टैंक, रंगाई की नाँदें व बाग़ीचों के सामान का निर्माण करते हैं। सरकार, रेलवे, म्युनिसिपैलिटी, पी. डब्ल्यू. डी. के कंट्राक्टर हैं और सामान मुहैया करते हैं।

हिन्दुस्तान सीमेन्ट पाइप्स एण्ड कंक्रीट कन्स्ट्रक्शन कं०

मुख्य कार्यालय : ओछवलाल गोरधनदास शाह

टाइल, पाइप्स एण्ड सेनीटरी मरचेण्ट्स

खाडीआ, चार रस्ता, अहमदाबाद

फैक्टरी : सुएज फार्म रोड, अहमदाबाद

कार्यालय तथा निवास फोन : ५२२९२ फैक्टरी फोन : ५१६३६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आचार्य शंकर

सौन्दर्य-लहरी

[गतांक से आगे]

निर्गुण निराकार अद्वैत ब्रह्म के आराधक आचार्य शंकर ने, 'सौन्दर्य-लहरी' में भगवती महाशक्ति और भगवान शंकर की सगुण रागात्मक लीला का अत्यंत भाव-विभोर हो गान किया है। 'सौन्दर्य-लहरी' संस्कृत के स्तोत्र-साहित्य की अनुपम काव्योपलब्धि है। अत्याधुनिक काव्य-शैली में उसका धारावाहिक अनुवाद भारती के पाठकों की सेवा में प्रस्तुत करते हमें आनन्द होता है।

[अड़सठ]

भुजाश्लेषान्नित्यं पुरदमयितुः कण्टकवती
तव ग्रीवा धत्ते मुखकमलनालश्रियमियम्।
स्वतः श्वेता कालागरुबहुलजम्बालमलिना
मृणालीलालित्यं वहति यदधो हारलतिका ॥ ६८ ॥

पुरो को दमन करने वाले शिव के आलिंगन से
निरन्तर रोमांचित तुम्हारी ग्रीवा
तुम्हारे मुख-कमल के लिए
मृणाल की शोभा को धारण करती है
यों स्वतः श्वेत, फिर भी (अब) कालागरु के
मिट्टी सदृश लेपन से श्याम
तुम्हारी ग्रीवा पर धारित मुक्तामाला
मृणाल पर कोमल-तन्तु की शोभा को
प्राप्त होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[उनहत्तर]

गले रेखास्तिस्रो गतिगमकगीतैकनिपुणे
विवाहव्यानद्धत्रिगुणगुणसंख्याप्रतिभुवः।
विराजन्ते नानाविधमधुररागाकरभुवां
त्रयाणां ग्रामाणां स्थितिनियमसीमान इव ते ॥ ६९ ॥

●

गति, गमक और गीत में एकमात्र निपुण हे देवि,
तुम्हारी ग्रीवा की तीन रेखाएँ,
जो विवाह–वेला में बद्ध
तीन धागों की गुण-संख्या के सदृश हैं,
नानाविधि के मधुर रागों का सृजन करने वालों के लिए
तीन ग्रामों के रूप में प्रकाशित होती हैं,
मानो वे स्थिति को निर्धारित करने वाली
सीमाएं हैं उनके लिए।

[सत्तर]

मृणालीमृद्वीनां तव भुजलतानां चतसृणां
चतुर्भिः सौन्दर्यं सरसिजभवः स्तौति वदनैः।
नखेभ्यः संत्रस्यन्प्रथममथनादन्धकरिपोश्-
चतुर्णां शीर्षाणां समभयहस्तार्पणधिया ॥७०॥

●

पद्मासन (ब्रह्मा) अपने चारो मुखों से
मृणालिनी के सदृश कोमल तुम्हारी
चार भुजलताओं के सौन्दर्य की स्तुति करता है।
क्योंकि अन्धकरिपु (सदाशिव) ने नष्ट कर दिया था
नखों से उसका पहला मुख, इस भय से संत्रस्त
वह तुम्हारे चारों हाथों से एक साथ,
अपने चारों सिरों के लिए
अभय-दान की आशा करता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[इकहत्तर]

नखानामुद्यौतैर्नवनलिनरागं विहसतां
कराणां ते कान्तिं कथय कथयामः कथमुमे।
कयाचिद्वा साम्यं भजतु कलया हन्त कमलं
यदि क्रीडल्लक्ष्मीचरणतललाक्षारुणदलम् ॥ ७१ ॥

●

जिन अपने नखों की कान्ति से तुम
नव विकसित कमल के राग को पराजित कर देती हो,
हे उमा, हमसे कहो, हम कैसे
तुम्हारे हाथों की कान्ति का वर्णन करें।
या कमलवरे एक अंश तक तुम्हारे हाथों के साम्य को,
यदि उसने पायी है अपने दलों में अतिरिक्त अरुणाई
क्रीड़ा करती लक्ष्मी के चरण-तल के लाक्षा से।

[बहत्तर]

समं देवि स्कन्दद्विपवदनपीतं स्तनयुगं
तवेदं नः खेदं हरतु सततं प्रस्नुतमुखम्।
यदालोक्याशङ्काकुलितहृदयो हासजनकः
स्वकुम्भौ हेरम्बः परिमृशति हस्तेन झटिति ॥ ७२ ॥

●

हे देवि, तुम्हारे स्तन-युगल, जिनके मुखाग्र
निरन्तर प्रस्रवणशील हैं, तथा जिन स्तनो को
स्कन्द और हेरम्ब ने एकसाथ पिया है,
वे हमारे खेद का हरण कर लें।
जिन्हें देखकर आशंका से विकल हृदय,
हँसी उत्पन्न करने वाले गणेश ने
हठात् ही सूँड से
अपने दोनों कुम्भस्थलों को छू लिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[तिहत्तर]

अमू ते वक्षोजावमृतरसमाणिक्यकुतुपौ
न सन्देहस्पन्दो नगपतिपताके मनसि नः।
पिबन्तौ तौ यस्मादविदितवधूसंगमरसौ
कुमारावद्यापि द्विरदवदनक्रौञ्चदलनौ ॥७३॥

●

तुम्हारे वे वक्षोज मानिक-घट हैं अमृत के,
ओ नगपतिपताका, हमारे मन में
इस बात का रंच भी सन्देह नहीं है;
जिस कारण से नारी के संगम से अनजान, उन्हें पीते हुए
तुम्हारे दोनों कुमार—गणेश (द्विरदवदन)
और कार्तिकेय (क्रौञ्चपर्वत का विदारक)
आज भी बालक हैं। [क्रमशः]

★

अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के भारत के सर्वोच्च तांत्रिक, हस्तरेखाविद् तथा ज्योतिष सम्राट

पं. श्री रमेशचन्द्र भट्टाचार्य, ज्योतिषार्णव, एम. आर. ए. एस. (लन्दन)

पंडित रमेशचन्द्रजी कठिन समस्याओं को सुलझाने के लिए भविष्य देखने, हस्तरेखा और जन्म-कुण्डली पढ़ने तथा तांत्रिक अनुष्ठानों के लिए भारत में अप्रतिम हैं। विदेशों में भी आपकी प्रखर प्रख्याति है। निराश व्यक्तियों को पंडितजी की शक्तियों का अवश्य लाभ उठाना चाहिए।

विश्व में लाखों व्यक्तियों द्वारा परीक्षित चमत्कारपूर्ण यन्त्र।

धनदा यन्त्र (सम्पदा के लिए) पूजाखर्च–साधारण ७. ६२ रु., विशेष २९.६९रु., अतिविशेष १२९.६९ रु.

[ज्योतिष-सम्राट]

बगलमुखी यन्त्र (शत्रु-विजय व मुकदमा के लिए) पूजाखर्च–साधारण ९.१२ रु., विशेष ३४.१२ रु., अति विशेष १८४.२५ रु.

मोहिनी यन्त्र (मित्रता के लिए) पूजाखर्च–साधारण ११.५० रु. विशेष ३४.१२ रु. और अतिविशेष ३८७.८७ रु.

सरस्वती यन्त्र (परीक्षा में पास होने के लिए) पूजाखर्च–साधारण ९.५६ रु., विशेष ३८.५६ रु.

प्रमाण-पत्रोंसहित विस्तृत सूचि-पत्र मुफ्त [पत्र-व्यवहार सदैव अंग्रेजी में ही करें]

प्रधान कार्यालय :–50/2, (BH) धरमतल्ला स्ट्रीट (८८-२ वेलेस्ली स्ट्रीट द्वारा प्रवेश) ज्योतिष सम्राट भवन कलकत्ता १३, फोन २४-४०६५, समय-सायं ५ से ७ बजे।

शाखा–१०५ ग्रे स्ट्रीट, वसन्त निवास, कलकत्ता ५। समय–सुबह ९ से ११ बजे। फोन५५-३६८५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनवर आगेवान

रसराज की सनातन प्रिया, आण्डाल

...ओ मेरे प्राणाधार ! सीता की सुधि लेने के लिए तुमने समुद्र में पुल बँधवाया, शिशुपाल का वध करके रुक्मिणी को अपनी शरण में ले लिया, द्रौपदी, गज, गणिका और गोपियों की टेर सुन ली; किन्तु मेरी ही वार इतना विलम्ब क्यों ? तुम्हीं मेरे प्राण वल्लभ, हृदयेश्वर, जीवन सर्वस्व और अवलम्ब हो, तुम्हें छोड़ कर किसकी शरण में जाऊँ ?

अपने प्रियतमा को देवता के रूप में वरण कर उन्हें जीवन की वनमाला अर्पित करनेवाली भारतीय स्त्रियाँ तो अनेक हैं, किंतु स्वयं देवता को अपना प्रियतम वना कर उसे वहुमूल्य शब्द-पुष्पों के इस प्रेमगीतिहार से सजानेवाली तो केवल दो ही माधुर्य-मूर्ति एक उत्तर भारत की मतवाली मीरा, दूसरी दक्षिण भारत की रंगनायिका आण्डाल।

आण्डाल रामनाथ जिले के प्रख्यात विल्लिप्पुत्तूर में ही विष्णुचित (पेरियाळ-वार) के रूप में प्रकट हुई थीं। कथानुसार, पेरिळियावार पूजन के लिए उपवन में नित्य फूल चुनने जाते थे। एक दिन वन में अदभुत् सुगंध फैली हुई थी। खोजने पर, पुष्पशैया के बीच में एक सुंदर बच्ची दिख पड़ी। जिसकी सुगंध से सारा उपवन महक रहा था। उसके केश पर भ्रमर का समूह मंडरा रहा था। जन्म से ही भ्रमरों को आकृष्ट करनेवाली ऐसी मदिर, मधुर सुगंध उसके अलकों में कैसे आयी! ऐसी सुंदर वच्ची को श्री विष्णुचित अपने घर ले आये और उस वच्ची का नाम शुरुवार कुष कौदे (सुमनों की माला की तरह कमनीय केशवाली) रखा गया। यह वच्ची कौदे ने जब बोलना आरम्भ किया, तो सर्वप्रथम तुतलाहट भरे स्वर में वोली– ॐ नमो नारायण, नारायण,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नारायण।

बचपन से ही कौदे का मन भगवान के प्रति आकृष्ट हुआ। और वह अपने पिता के साथ, भगवान की पूजा में लगी रहती थी। पेरियाळवार फूलों की मालाएँ अपने हाथ से गूंथ कर भगवान की मूर्ति को पहिनाया करते थे। एक दिन भावुक इस शिशु ने यह देखना चाहा कि, प्रियतम की माला तनिक मैं भी तो गले में डाल कर देखूं, कितनी सुंदर लगती हूँ मैं! और वह दर्पण के सामने खड़ी होकर मुस्कारा उठी। इस प्रकार कौदे प्रतिदिन भगवान के लिए बनायी माला स्वयं पहनकर दर्पण में देखती। मानो, वह मनो-मन कहती—'मैं' कितनी सुंदर हूँ! क्या मेरा सौंदर्य कृष्ण को मुग्ध-मोहित नहीं कर सकता?

फिर रंगनाथ की मूर्ति के सामने जाकर खड़ी रहती और खिलखिला कर कहती—'अरे, ओ निर्मोही! तुझे तो उस कुब्जा का ही रूप पसंद है, क्यों?'

किन्तु, एक दिन पेरियाळवार ने संयोगवश पुत्री के इस कार्य को देख लिया। देखते ही क्रोधावेश में आकर कौदे को डांटा—क्या तुम प्रतिदिन यह माला अपने गले में डालती हो? पुजारी भी आज कह रहा था कि, तुम्हारी लायी हुई माला में से केश निकला है। अतः यह माला अपवित्र होने से भगवान को नहीं चढ़ सकती...

किंतु, उस दिन रात को स्वयं भक्त वत्सल भगवान ने पेरियाळवार को स्वप्न में दर्शन दिये और कहा—कौदे की पहनी हुई माला ही मुझे प्रिय है।' कहते हैं कि, इसके पश्चात् पेरियाळवार उन्हीं मालाओ

को ही भगवान को पहनाते थे, जिन्हें कौदे पहन चुकी हो।'

इस प्रकार कौदे को ऐसी ही चीजें पसन्द आतीं, जो प्रिय से समानता रखती हों। अतः वह अपने वस्त्राभूषण को उतार कर नीलाम्बर पहन लेती। और उस नीलिमा से श्यामसुंदर को देखने का प्रयत्न करती। पुष्पों से अपने को अलंकृत कर के अपने प्रतिबिंब में अपना सौंदर्य देख पाती,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिसको नंदनंदनपर न्यौच्छावर करने के लिए तत्पर रहती।

मीरा की भांति कौदे के हृदय में भी बचपन से ही भक्ति का बीज अंकुरित हो गया था। तभी से प्रियवर कृष्ण-चन्द्र की चकोरी बन गयी थी। यौवनावस्था में पदार्पण करते ही उसकी शैशवकाल की भावनाएँ कुमुदिनी सी विकसित और विकलित हो गयी। और वह अपने को रसिक प्रिया राधिका मानती, माधुर्य भाव में अपने को भूल कर नृत्य तथा गान में लीन रहती और इसी तन्मयता में उनकी अनुभूतियाँ संगीत और नृत्य में पायल की झंकार-सी वायुमण्डल में बिखर जाती।

और रूपनिधि श्रीकृष्ण के प्रति यह आकर्षण दिन दुगना, रात चौगुना बढ़ता ही जाता है, और आकर्षण आसक्ति में। इस प्रकार उनकी भाव-दशा बदल जाती है। तन से वह विष्णुचित पेरियाळवार के उपवनमें रहती है, किन्तु मन से नित्य वृन्दावन की कुंज गलियों में विचरती है। वह गोपियों के साथ रेत में घरौंदा बना कर खेल रही है। इतने में ही कन्हैया आकर उसके घरौंदो को ढहा देते और हंसने लगते। तब झुंझला कर आण्डाल कहती है:

'अपने कंगनधारी हाथों से बड़े यत्नपूर्वक रेत इकट्ठी कर हमने घरौंदे बनाये। आंखों से हमें भेदते ही हो, इन्हे भी क्यों कुचलते-ढहाते हो, ओ क्षीर-सागर-शयन!'

कभी वह गोपियों के साथ यमुना में स्नान करने लगती और प्रियतम कृष्ण आकर उनके वस्त्रों को उठा कर ले जाते और कुछ वस्त्र पगे पगड़ी सा सर पर बांधे, कुछ को बगल में दबाये कदम वृक्ष पर बैठ जाते। तब गोपियों की ओर से आण्डल अपनी मधुर बानी में बोल उठती है:

'अच्छी सीख मिली कन्हैया! यमुना तट पर अब कभी नहीं आयेंगी। सखी समेत मिन्नत करती है—हमारे चीर लौटा दो!'

और कभी वह वृन्दावन की गलियन में बावरी सी विचरती। राही से पूछती: 'क्या तुमने मेरे प्राणधन को इधर कहीं देखा है। क्या किसी को मेरे कमलनयन का पता है?'

और अपने आप ही प्रश्नों का उत्तर देती—'अजी, देखा क्यों नहीं? वह वृन्दा-वन में बाँसुरी बजा कर गोपियों के साथ विहार कर रहा है!'

फिर, सहसा भावावेश बदल जाता है। तब न यमुना तट है, न रेत के घरौंदें, गोपियां, न कन्हैया ही! आण्डाल का हृदय चीत्कार कर उठता है। वह बिलख-बिलख कर रो उठती है। भाव-लोक से हृदयेश्वर कहां गायब हो गये?

मुट्टूडु पुट्टुन्दु निन् मुहम्
काहि पुन्मुरुवल शेम्दु
शिट्रिलोडु एङ्गळ शिन्दैयुम्
शिदैक कड़वैयो गोविन्दा?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

–हमारे आँगन में मुखड़ा दिखा कर मुस्काते हो, इस रेत के घर के साथ हमारे चित को भी आकुल-व्याकुल कर जाने का इरादा है, गोविन्द ?

और दरद दिवानी आण्डल की प्रेम-विह्वल पिपासा की तड़पन इन मार्मिक पंक्तियों में सजीव हो उठी है :

'प्रियतम ! स्वप्न में आकर तुमने मिलनेका उपक्रम किया है, उससे तो मेरे भीतर की विरहाग्नि और भी धधक उठी है। यों तड़पाने में तुम्हें कौन-सा आनंद मिलता है ? हाय, एक क्षण भी तुम्हारे बिना रहा नहीं जाता, देव ! मेरे जीवन धन ! यदि मेरे प्राणों की इस आकुल तड़प से तुम्हारा कठोर हृदय तनिक भी पसीजे, तो अभी आकर मुझे अपने चरणों में स्वीकार कर लो, प्रभो !

'ओ मेरे प्राणाधार ! सीता की सुधि लेने के लिए तुमने समुद्र में पुल बँधवाया और रावण को मार कर उसे अयोध्या लौटा लाये। शिशुपाल का वध कर के रुक्मिणी को अपनी शरण में ले लिया। द्रौपदी, गज, गणिका और गोपियों की टेर सुन ली, परन्तु मेरी ही बार इतना विलम्ब क्यों कर रहे हो ? मैं जानती हूँ, मैं अपराधिनी, परन्तु जैसी भी हूँ, तुम्हारी हूँ –तुम्हीं मेरे प्राणवल्लभ, हृदयेश्वर, जीवन सर्वस्व और अवलम्ब हो ! तुम्हें छोड़ कर किसकी शरण में जाऊँ ? जिस प्रकार चकोर चन्द्रमा को और चातक श्यामघन को चाहता है, वैसे ही मेरा हृदय तुम्हें देखने के लिए व्याकुल है।'

इस प्रेम-पिपासा, आकुलता का एक ही मार्ग, एक ही समाधान है–और वह है मिलन ! –

'आय्प्पाडिक्के एन्ने उयत्तिडुमनि– मुझे गोकुल पहुँचा दीजिए। मेरा रहस्य मुझ तक सीमित नहीं रह गया है। वह लोक विदित है। पर मैं लोक-मर्यादा, कुल-कानि छोड़ दूं, इसके पहले उपाय कर दीजिए। मेरा माधव मुझे अपनी ओर खींच रहा है। मुझे बुला रहा है। मुझसे अब रहा नहीं जाता। यौवन और सौन्दर्य भरे पूरे अंग-प्रत्यंग गोविन्द के संयोग के लिए छटपटा रहे हैं।.....अब मुझे द्वारकेश के पास पहुँचा दीजिए !'

और उसे स्वप्न आया कि, उसका विवाह प्रियतम कृष्ण से हो गया है। उसने इस अद्भुत स्वप्न को श्रेणिक गान में लिखा है। उसे श्रीरंगम के भगवान श्रीरंगनाथ ने बुलाया और वह श्रीरंगम चली गयी। वहां–जैसे कावेरी सागर से जा मिलती है,उसी प्रकार आण्डाल की दिव्य आत्मा भी सशरीर, उस परम पुरुष में विलीन हो गयी। अतः उसे श्रीकृष्ण की 'सनातन प्रेयसी' के नाम से ही स्मरण किया जाता है और वह आज भी अलौकिक प्रेम के प्रतीक सी आण्डाल भगवान रंगनाथ के पास ही खड़ी है।

इन सोलह वर्षों में आण्डाल ने मधुर–रस से ओतप्रोत अमर कविताएँ रची है; वह 'नाच्चियार तिरुमोळि' के नाम से सुप्रसिद्ध है।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तात्सुझो इशिकावा

अन्धकार की परछाइयां

[जापानी कहानी]

...अंधेपन का अभी वह आदी नहीं हुआ था और इसीलिए स्वयं अपने हाथ से भोजन करना उसके लिए संकट का कारण बना हुआ था। उसकी पत्नी उससे बहुत दूर-दूर चली गयी है, ऐसा उसे अक्सर अनुभव होता। इसी कारण उसका अपना अकेलापन उसे असह्य हो उठा। ज्यों-ज्यों वह अधिकाधिक लाचार होता गया, त्यों-त्यों उसकी पत्नी और भी उसके निकट आये, यह इच्छा बलवती होती चली गयी।...

'तुम सचमुच ही अंधे हो जाओगे, तो तुम्हें हाथ से टटोलते हुए और लाचार देखना मुझसे, नहीं सहा जायेगा। भावी कोई बहुत उज्वल नहीं लगता है न...? इससे मर जांय यही अच्छा'। कभी-कभी उसकी पत्नी यों कहती और वह मज़ाक में भी कहती होगी, यह बात भी वह नहीं मान सकता था, क्योंकि वह अभिनिवेशपूर्वक यों बोलती थी।

'सच कहूँ', कभी वो कहती :' चलो न आत्महत्या कर लें, यूं ही जीते चले जाना और दिनोदिन और भी अधिक दुःखी होते जाना तो बहुत भयंकर लगता है।'

और कभी-कभी वह गंभीरता पूर्वक अपनी पत्नी के साथ सहमत हो लेता, या फिर प्रायः वह यह जवाब दे देता कि;

'कल रात बिस्तर पर लेटे-लेटे मैं सोचने लगा कि यदि मैं सचमुच ही अंधा हो जाऊँ, तो मैं क्या काम कर पाऊँगा? ज्यादा तो कुछ नहीं हो पायेगा, संगीत को भी छोड़ ही देना होगा; 'कोटा' (बुलबुल तरंग) किसी और को सिखा सकूं, इतने कौशल से बजाने, सीखने का भी अब वक्त नहीं रहा। पर यदि रहस्य भरी जासूसी कहानियाँ लिखूं —तो मैं मनमें कहानी गढ़ता हूँ, और एकाध लिखने का प्रयत्न तो करना ही है। मैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बोलता जाऊँ और तुम लिखती चली जाओ, यह तो हो ही सकता है—रहस्यभरी कहानी, यह तो मैं भी लिख सकता हूँ'।

आँखों पर सफ़ेद पट्टी बंधी हुई थी, कुरसी पर पीठ टिकाये वह अपनी पत्नी के सामने बैठा हुआ था और वसंत ऋतु की धूप खिड़की से आकर उसके कंधे पर पड़ रही थी। कैसी दयाजनक स्थिति! उसकी पत्नी उसे रहस्यभरी जासूसी कहानियाँ लिखनेवाले अंधे लेखक के रूप में, अपने मनः-चक्षु के सामने देखने लगी; आवश्यक शारीरिक श्रम के अभाव में उसका शरीर मुटा गया है, जरूरी सूर्य-प्रकाश के अभाव में चमड़ी फीकी हो गयी है, और उसकी बंद आँखें अंधकार में—अनंत अंधकार में दृष्टि बिछाये हैं। उस अंधकार में वह अपनी जासूसी कहानियों के दृश्य देखेगा; हत्या, खून, छुरा, डिडेक्टिव के साथ हत्यारे की मुठभेड़। बस इसी तरह के जुगुप्साजनक और भय से शरीर के रोंगट खड़े कर देनेवाले दृश्य ही उसे दिखेंगे। अपने अंधकार से भी अधिक काली दुनिया का वह निर्माण करेगा। काँप कर उसने सिर हिलाया।

"नहीं ऐसा कुछ भी मुझे नहीं रुचता। इससे तो मर जांय यही अच्छा"। पट्टी के पीछे ढँपी हुई उसकी आँखें हलके से मुस्करायीं।

वह अंधा हो ही जायगा, यह कोई निश्चित नहीं था। उसकी नजर एकाएक कुछ मद्धिम हो चली थी और आंखों में खराबी बढ़ती जा रही थी। यह खतरनाक तो था ही, क्योंकि उसका असर पुतलियों पर भी पड़ने लगा था। यह खराबी दूर हो जाने पर भी जख्म रह जाने की संभावना थी, और यदि यह जख्म नहीं भरता तो वह फिर कभी नहीं देख सकेगा यह तो निश्चित था।

अपनी पत्नी के सूचनानुसार उसने दो-एक बार आत्महत्या करने का विचार भी किया। कुछ समय तक तो जासूसी कहानियाँ लिखने का विचार भी वह गंभीरतापूर्वक करता रहा। पहले तो वह भय से काँप उठा था और रोजी प्राप्त करने के लिए मन में अनेकानेक योजनाएँ गढ़ता रहता था। पर समय बीतते-बीतते उसके विचार स्थिर होते गये। समझदारी की गहराइयों में उसने घिरी हुई शांति को भी पाया। अब उसने भावी योजनाएँ गढ़ना भी छोड़ दिया था।

अगर सचमुच ही अंधे होने का मौका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आया, तो उस समय ही कोई रास्ता निकल आयेगा। उसके बारे में सोचना कोई आसान नहीं था। भविष्य में क्या होगा, यह सोचना ही भ्रांतिवश होने का साहस करने जैसा था।

वह बिलकुल बालक की तरह खा रहा था। कटोरे की किनारी से नीचे बिखरते चावल के दानों को उसकी पत्नी देख रही थी। उसने नीचे झुककर दानें बटोर लिये और फेंक दिये। वह खीझ उठी:

"अब भी तुम्हें कैसे खाना चाहिए, यह भी नहीं आता"।

उसने कोई जवाब नहीं दिया। अंधेपन का अभी वह आदी नहीं हुआ था और इसी वजह से स्वयं अपने हाथ से खाना आफतरूप ही था। उसकी पत्नी उससे बहुत दूर दूर चली गयी है, ऐसा उसे अक्सर लगता था। इसी कारण से उसका अपना अकेलापन उसके लिए असह्य हो उठा था। ज्यों-ज्यों वह अधिकाधिक लाचार होता गया, त्यों-त्यों उसकी पत्नी और भी उसके निकट आये, यह इच्छा बलवती होती चली गयी। यही कारण था कि वह अपनी पत्नी की खीझ भरी दूरी के प्रति अधिकाधिक जागृत होता चला गया। अब उनके बीच एक खाई पड़ गयी थी। जब वह तंदुरुस्त था, तब इन सब चीजों से वह कितना अपरिचित था। तब तो जो जी चाहता, वह सब कर सकने को वह समर्थ था। तंदुरुस्ती ने मानो संवेदना की धार को कुंठित कर दिया था।

मछली के सभी कांटे साफ करके उसकी पत्नी ने उसकी थाली में रखा। चार साल के बच्चे को खिलाने जैसा यह काम था। यंत्रवत् चेहरे पर बिना कोई भाव या आनंद लाये वह खाता चला गया। सिर्फ उसके जबड़े एक से हिलते रहे। उसने सारी मछलियाँ समाप्त कर लीं। फिर भी चिमटे से वह थाली में टटोलता रहा। वह थाली में सफेद रंग के धब्बे को चिमटे से पकड़ने की कोशिश करता रहा। सफेद रंग का हलका सा आभास उसे होता था, बस और कुछ भी उसे नहीं दिख रहा था।

उसकी पत्नीने उसके चिमटे एक ओर रख दिये और वह उसके प्रयत्नों को देखती रही। उसकी आँखें छलछला आयीं।

"यह तो थाली में की रंगीन डिझाइन है।"

'मछलियाँ खत्म हो गयीं?'

'तुमने सब खा लीं, खा लीं न?'

'उसने कोई जवाब नहीं दिया। कटोरे में बचे चावल उसने गले उतार लिये और चिमटा थाली में फेंक दिया। वह क्रोध से खीझ उठा।

हर दिन वह उसका हाथ पकड़ कर गली तक लाती और गाड़ी में बिठा कर डॉक्टर के यहाँ ले जाती। डॉक्टर भी दिन ब दिन विश्वास खोते गये।

'शल्यक्रिया कभी-कभी सफल भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होती है। पर यह कर देखने के बाद भी क्या होगा, यह कह सकना मुश्किल है, इसलिए'.....

उसकी पत्नी को लगने लगा, जैसे वह बिलकुल ही अकेली हो गयी है। जिसकी ऊष्मा पाकर वह अपना दुःख हलका कर सके, ऐसा कोई भी व्यक्ति उसे नज़र नहीं आता था।

हर दिन डॉक्टर के यहाँ जाते समय वह सोचती कि उसे प्रसाधन करना चाहिए या नहीं, उसका पति तो देख ही नहीं पाता था और उस पर भी शृंगार करना उसे मूर्खतापूर्ण लगता था, फिर भी वह प्रसाधन करती ही थी। किसके लिए? दूसरे लोगों के लिए? यों करना ग़लत था, यह तो वह ठीक से जानती थी, फिर भी अपने पति की दयाजनक लाचारी देखकर वह क्रोधित हो उठती थी।

वह पति के पास बैठती, उसके घुटने पति के घुटनों को छूते और वह अपना दायां हाथ उससे तीनेक फिट की दूरी पर रख कर पूछती: 'तुम्हें दिखाता हैं?'

'कुछ तो भी है, इतना तो कह सकता हूँ।'

'ये कितनी उँगलियाँ हैं?' उसने तीन उँगलियाँ ऊपर उठायीं। वह कुछ नहीं बोला। 'कल से भी आज इनकी हालत अधिक खराब है!' वह मन ही मन खीझती हुई बोली।

'मुझे कुछ समझ नहीं पड़ता।'

'अब प्रयत्न करके देखो।' उसकी आवाज़ में कठोरता थी, उसने अपना हाथ और भी आगे बढ़ाया, फिर भी वह कुछ नहीं देख सका।

'दो उँगलियाँ हैं?'

उस दिन बिलकुल नाक के सामने ही जब तक उँगलियाँ नहीं रखी गयीं, तब तक वह सही उत्तर नहीं दे सका। उसे हार माननी पड़ी। पत्नी के रोष और सख्ती के सामने वह टिक न सका। वह थक कर ढुलक गया।

'जरा मेरा बिस्तर लगा दे तो।'

'क्यों नींद आ रही है क्या?'

'जगते बैठे रहने से भी क्या?'

उसके माँसल गालों को और ठुड्डी को वह देखती रही। उसकी दाढ़ी भी काफी बढ़ गयी थी। उसने पानी गर्म किया, उसके पीछे जाकर खड़ी हो गयी और उसके कड़े बालों को बड़ी मुश्कील से उसने साफ किया।

'जरा यहाँ आना तो,' उसने अपनी पत्नी को बुलाया। वह आकर सामने खड़ी हो गयी। वह हाथ से उसके पाँवों को सहलाने लगा।

'क्यों क्या करना है?'

वह हँस दिया और बोला, 'तू जो चल रही थी न तो मैं सुन रहा था, उसकी आवाज

[शेष पृष्ठ ६७ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

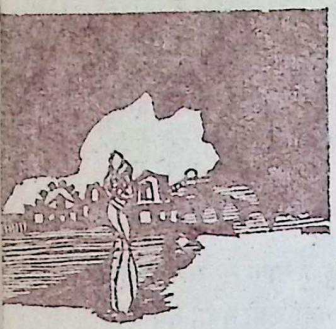

कौशल मिश्र

रात : दो कविताएँ

एक :

एक मजदूरनी
कोयलां–खान से निकल कर
शरीर में कालौंच लगाये
दरवाजे पर खड़ी है।
अथक-श्रम से चलती हुई
तेज-तेज सांसें
माथे पर चू–चूआता पसीना,
उसके चेहरे की कालिख को
साफ करने का प्रयत्न करता है–
किन्तु,
रेंघाटों से झाँकता हुआ
उसका सौंदर्य !
अंधेरे को खटखटाता है
जगाता है.....!

दो :

मैं किसी सूर्य को
जगाने के लिए अपलक जागती रही
आँखों में खुमारी,
खुश्की–भरे गल से
मन्द-मन्द स्वर में प्रभाती गाकर
उसे जगाने के लिए चेष्टारत हूँ
उसके जागते ही
अपना अस्तित्व समेट कर
सो जाऊँगी
खो जाऊँगी।
रात हूँ,
किसी सूर्य को जगाने के लिए
चेष्टारत हूँ.....।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विजेन्द्र

•

उदास हल्की-कोर

संध्या : केश विन्यास करते समय
दिखा होगा तुम्हें–
दूर
दूर–तक इकेला
उज्ज्वल शुक्र-तारा
पथोन्मुख–गवाक्षों में छटपटाता
साँझ का संविग्न सस्य–गंधी–क्षण
आंगन पपीते का
थरथराता पात बे-चारा
नीर–घर्षी गहरे–झुट–पुटे में
उसी स्कन्ध-शाखा पर बसेरा ले चुके
कपोती–मिथुन के नेत्र गीले
तिर्यक्–ग्रीवा की
अन्तिम नदी–जल सम्
उदास हल्की–कोर
दरों पर पुरा रतवारा।

•

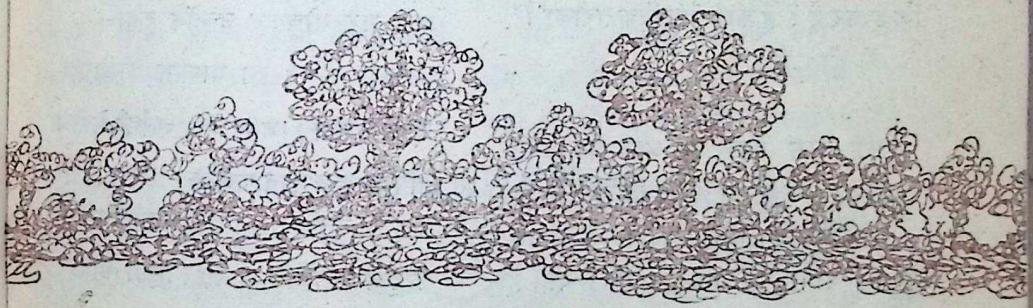

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रो. राजीव

ईश्वर का अस्तित्व

यदि वस्तु है तो नाम भी है और यदि नाम है तो वस्तु भी है। लेकिन कुछ वस्तुएँ ऐसी भी हैं, कि जिनका आकार-स्वरूप देखा नहीं जा सकता, मात्र अनुभव किया जा सकता है।

"ईश्वर है कि नहीं? है तो कैसा है? कहाँ है?" अनेक बार ये प्रश्न जिज्ञासुओं ने उठाये हैं, और कई तरह से ज्ञानियों ने उनके समाधान प्रस्तुत किये हैं। लेकिन आज का भौतिकवादी और विज्ञान के चमत्कारों से अभिभूत आदमी केवल विज्ञान-सिद्ध, विज्ञान-सम्मत बात ही मान सकता है। "दो और दो चार" के तरीके से समझना चाहता है। पुरानी स्थापनाएँ और मान्यताएँ तेजी से बदलती जा रही हैं।

"फिर आप कैसे सिद्ध कर सकते हैं कि ईश्वर है? है कोई वैज्ञानिक तरीका?"

जी हाँ है!

कई बरस पहले इस प्रश्न का जवाब दिया था। आज तो केवल दुहरा रहा हूँ।

एक दिन ट्रेन में एक व्यक्ति से परिचय हुआ। घोर नास्तिक थे वे। यों ही बातचीत के सिलसिले में कहीं मेरे मुंह से निकल गया कि 'आगे ईश्वरेच्छा!' बस, भड़क उठे और 'ईश्वर नहीं है' पर अपने अनेकों तर्क उन्होंने रखे। मैं सुनता रहा और हरबार यही दुहराता रहा कि ईश्वर है। आख़िर उन्होंने मांग की– "ईश्वर का अस्तित्व आप सिद्ध कर सकते हैं?"

"जी हाँ। आप कहिए, किस तरह सिद्ध करूँ। गणित, इतिहास, भूगोल, तर्क, अध्यात्म्य; आप जिस माध्यम से चाहें।"

क्षण भर सोचकर उन्होंने कहा–

'अच्छा, गणित का माध्यम लीजिए।'

'जैसी इच्छा। मगर एक शर्त है मेरी। मैं आप से कुछ प्रश्न करूँगा। बिना किसी पूर्वाग्रह के उनके उत्तर देते जाइए आप।'

उन्होंने स्वीकृति में सिर हिला दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"देखिए !" मैंने कहा– 'जगत में जितनी वस्तुएँ हैं, सबका एक न एक नाम है। मानते हैं ?'

"हाँ !"

"तो बताइए, वस्तु पहले उत्पन्न हुई, नाम बाद में दिया गया अथवा नाम पहले दिया गया और वस्तु बाद में उत्पन्न हुई।"

"वस्तु पहले उत्पन्न हुई, नाम बाद में दिया गया।"

"ठीक ! तो पहला समीकरण यह है कि 'यदि वस्तु है तो उसका नाम अवश्य है। दूसरा समीकरण इसका विलोभ है, अर्थात् यदि नाम है तो वस्तु का आकार स्वरूप भी है। जैसे– 'गाय' एक नाम है। गाय कहते ही हमारे सामने गाय का स्वरूप आ जाता है। 'कलम' एक नाम है, सोचते ही कलम का आकार स्पष्ट हो जाता है। मानते हैं आप ?"

"हाँ !"

"यह तो अब सिद्ध ही है कि यदि वस्तु है तो नाम भी है और यदि नाम है तो वस्तु भी है। लेकिन कुछ वस्तुएँ ऐसी भी हैं कि जिनका आकार स्वरूप देखा नहीं जा सकता, मात्र अनुभव किया जा सकता है। जैसे 'हवा।' उसका स्पर्श हम महसूस करते हैं। 'मिठास' –जिह्वा पर उसके स्वाद का पता चलता है। मानते हैं ?"

"हाँ !"

'तो फिर', अब गणित के एक सरल से नियम-त्रैराशिक के नियम के अनुसार (By the rule of three.) ईश्वर का आस्तित्व इस तरह सिद्ध किया जा सकता है।

जबकि 'वस्तु' है तो नाम भी है।

और यदि नाम है, तो वस्तु का आकार स्वरूप भी है।

इसलिए, 'ईश्वर' चूंकि एक नाम है, उसका आकार स्वरूप भी है। अब यह और बात है कि आप ने उसे न देखा हो, न अनुभव किया हो लेकिन बहुतों ने देखा और अनुभव किया है। एक और महत्व-पूर्ण तथा ध्यान देने योग्य बात यह भी है कि ईश्वर के अनगिनती नाम हैं, जिससे सिद्ध होता है कि अनेकों ने उसे देखा है और अनुभव किया है।"

इस बार उन्होंने कुछ नहीं कहा तो भी मैंने देखा कि उनके चेहरे का तनाव मिट गया था और वे मन्द-मन्द मुस्करा रहे थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविताओं की परिपूर्ण यात्रा

बच्चों ने अपने नन्हें चेहरों को
मलबेरी के रस से छांट लिया है।
वे फल चुराने वाले हैं, मिठास के आस्वादक हैं।
वे अपने नानारंगी कपड़ों में नाच रहे हैं,
और पछांही हवा उनके साथ नाच रही है;
मानों कि अद्भुद् जीवन की सांस
मनुष्य के खाली छिलकों को भर रही है।
भूत, पारलौकिक आत्माएँ, सपने।
ढोल बज उठता है, मध्यान्ह में चमकते गाँवों में;
किसी जंगली कबूतर की आर्त पुकार .....
काले कांटों की झाड़ी में बाज पक्षी की चीत्कार।
यह सब बहुत सीधी-सादी बात है।
तुम लौट आये हो वहां, वहां जहां से तुम चले थे।
तुम्हें प्रतीति होती है कि
पलना और मृतक मंजूषा समान ही दिखायी पड़ते हैं।
कि वृत्त की परिक्रमा पूरी हो गयी है,
कि केन्द्र पा लिया गया है।
मैं उससे नीचे नहीं जाता हूँ—
जहाँ कुंएँ का उत्स फूटता है,
जहाँ आग प्रज्वलित होती है,
उससे ज्यादा गहरे में नहीं जाता।
मूल से चूल तक होता है गीतों का उत्थान,
और फिर गान का होता है अवसान।
जो कुछ है अंधियारा, जो कुछ है उजियाला,
उस सबको छू लेना
यही है कविताओं की यात्रा परिपूरन।

—फ्रेड्रिक जॉर्ज युंगर

पाँच जर्मन कविताएँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नरक : स्वर्ग

चूंकि मृतकों का साम्राज्य भी कांप उठता था
तुम्हारे गीतों की स्वर-लहरी से,

इसी से यह संभव हो सका,
कि तुम्हारी प्रियतमा फिर से उजियाली हवा में लौट आयी।

यदि तुमने संदेह भरी आँखों से पीछे की ओर न देखा होता,
तो तुम्हारे गीत की शक्ति से,
तुम्हारी प्रिया को नया जीवन प्राप्त हो जाता।
हर कवि को नरक के अंधियारे आलजालों
में यात्रा करने का खतरा उठाना चाहिये,
ऑर्फियस की तरह, यूरीडाइस को प्रकाश में लाने के लिए।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि--
मेरे अंगूरों के उपवन में
जो हेय सिन्थ-फूल कस्तूरी की
गन्ध उच्छ्वसित करते हैं,
उनकी जड़ें नरकों तक जा पहुँचती हैं।
यह सुगन्ध एक कुंजी की तरह है,
उन दूरातिदूर के अवकाशों की,
जहाँ सारे ही फूलों की आत्माएँ--
अपने प्यार के सपने देखती हैं।

केरॉन की काली नाव
नहीं पहुँच सकती है परपार के समुद्रतट पर,
जब तक उज्जवल घड़ियाँ
नहीं बांध देती हैं गुलाबों की माला इस तट पर।

—फ्रेड्रिक जॉर्ज युंगर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुरातन फव्वारा

गुल कर दो अपनी रौशनी, और सो जाओ।
सिर्फ़ एक आवाज़ ध्वनित है,
सदा-जागृत पुरातन फव्वारे की फुंहारों की।
लेकिन मेरे घर की छत-तले मेहमान होनेवाला
हर कोई हमेशा, जल्दी ही हो जाता है अभ्यस्त इस आवाज़ का।

फिर भी, हो सकता है, कि जब तुम अपने सपने के
बीचों बीच से गुजर रहे हो,
तभी एक बचैनी उठकर मकान के आसपास घूम जायेगी :
भारी पद-चापों तले फव्वारे के आसपास
के कंकड़-पत्थर खड़ाखड़ा उठेंगे :
और फुहारों की हलकी आवाज शायद रुक जायेगी।.....
...और तुम जाग उठोगे--तुम्हें चौंकना नहीं चाहिए।
सारे के सारे तारे, पृथ्वी के ऊपर अभी भी खड़े हैं :
और वह सिर्फ एक आवारा बटोही है
जो फव्वारे के संगमर्मरी हौज़ के पास आ गया है,
और अपनी ओक में पानी ले रहा है।

जल्दी ही वह फिर चला जायेगा,
और फुहारों की वह आवाज़ फिर वैसी ही
बरक़रार हो जायेगी।
तुम्हें खुश होना चाहिए, कि तुम यहाँ अकेले नहीं हो।
तारों की रौशनी में, दूर-दूरान्तों में
कई आवारा बटोही चल रहे हैं,
और उनमें से और भी कई तुम्हारे पास आने को हैं।

—हेन्स केरोसर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे दोनों

वह लायी प्याला अपने हाथ में,
उसकी चिबुक और मुख थे उस प्याले के किनारे से :
उसकी भँगिमा इतनी हलकी और निश्चित थी,
कि एक बूंद भी ढलकी नहीं प्याले से।

उस पुरुष का हाथ भी उतना ही हलका और सुदृढ़ था;
वह एक युवा घोड़े पर आरूढ़ था,
और एक लापरवाह झटके से उसने,
अपने घोड़े को स्थिर खड़ा कर दिया;
घोड़ा काँपता रह गया।
पर जब वह हलका प्याला, वह लेने लगा उसके हाथ से,

वह बहुत भारी हो गया, उन दोनों के लिए :
क्योंकि दोनों ही इस क़दर काँप आये
कि परस्पर एक-दूसरे का हांथ चीन्ह नहीं पाये :
और वह काली मदिरा धरती पर ढ़लक पड़ी।

—ह्यूगो वॉन हॉफमान्स्थल

क्या हम क्षण भंगुर हैं ?

मैं अब भी महसूस सकता हूँ उनके श्वासों को अपने गालों पर;
कैसे मैं मानलूं, कि हाल ही में गुजरे वे दिन
जा चुके हैं, जा चुके हैं सदा-सर्वदा के लिए,
कि हो चुके हैं वे नितान्त अन्तर्धान ?

यह एक चीज है, जिसे कोई भी समूची पकड़ नहीं पाता है:
इतनी भयानक है यह चीज कि उस पर कैसे
कोई करे शोक-सन्ताप :
कि हर चीज हमारे हाथ से फिसल बह जाती है ;

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और मेरा अपना ही आत्म, निर्बाध,
मेरे आरपार हो, मुझमें फिसल आया
किसी एक बच्चे में से,
जो था मुझे अजनबी और मूक किसी कुत्ते सा।

और तब मैं अनुभव करता हूँ----
कि सौ वर्ष पूर्व भी मैं था,
और मेरे पूर्वज, जो अपने मृतक वसनों में आवेष्ठित हैं,
मुझसे उतने ही सम्बद्ध हैं, जैसे मेरे अपने बाल,
वे उतने ही मेरे अंश हैं, जैसे मेरे अपने ही बाल।

अनु. अ. भा. —ट्यूगो वॉन हॉफमान्स्थल

★

भा र ती

[भवन की पत्रिका]

ऑर्डर फ़ॉर्म

श्री व्यवस्थापक 'भारती', भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड, बम्बई–७,

प्रिय महाशय,

मैं 'भारती' का वार्षिक सदस्यता शुल्क ६.५० न.पै. / अर्द्धवार्षिक ३.५० न.पै. मनीऑर्डर / पोस्टल ऑर्डर द्वारा भेज रहा हूँ / रही हूँ। कृपया निम्नांकित पते पर दि०———से प्रति भेजने का कष्ट करें :—

नाम _____

पूरा पता _____

_____

_____

तिथि..... भवदीय/भवदीया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

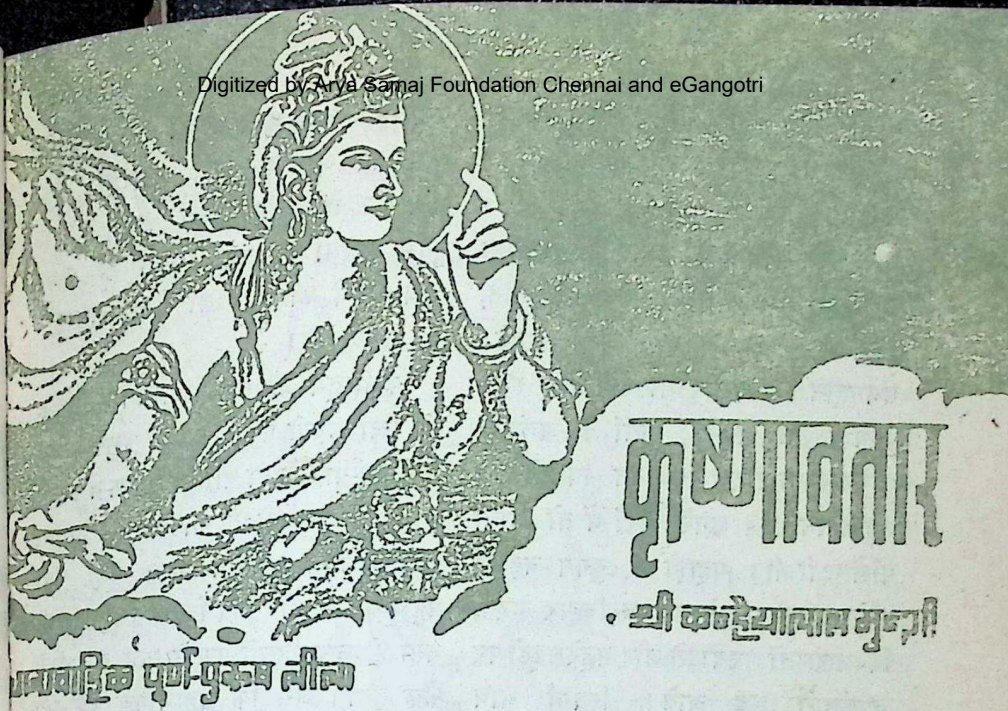

[१७]

गोमांतक पहाड़ी

परशुराम ने गोमांतक से विदा ली। बलराम यहाँ एक अपूर्व स्फूर्ति का अनुभव कर रहे थे। स्वभाव से ही वे मुक्त, सज्जन और जीवन का उपभोग करने में विश्वास करनेवाले थे। उनका बस चलता तो वे संसार की सभी उपाधियोंका त्याग कर निजानंद में ही जीवन बिता देते। परन्तु बचपन से ही कृष्ण ने दोनों भाइयो के आसपास आदर के वातावरण की रचना कर दी थी और बलराम उससे कभी मुक्त नहीं हो सकते थे। बलराम कृष्ण को बेहद प्यार करते थे और यह भी जानते थे कि कृष्ण के वे स्वयं अपार स्नेहभाजन हैं। कृष्ण की समझदारी, वीरता और सहज सूझ में उन्हें संपूर्ण श्रद्धा थी। कृष्ण की शक्ति पर भी उन्हें विश्वास था। परन्तु कोई उन्हें देवतुल्य माने और उस रूप को चरितार्थ करने के लिए उन्हें अथक पुरुषार्थ करना पड़े, यह उन्हें पसंद न था। मथुरा में उनके पराक्रमों की कथा आदर से कही जाती, और पिता, माता, गुरु सांदीपनि तथा मथुरा के तमाम लोग उन्हें अतिमानवही मानते। कृष्ण में तो इस देवरूप बनने के लायक शक्ति थी, परन्तु बलराम को लोगों के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आशानुकूल बनने में प्रयास करना पड़ता।

गोमांतक पहाड़ी पर आकर बलराम फिर से अपने मनमौजी स्वभाव में रहने लगे। गरुड़ भी जीवन के आनंद में विश्वास करनेवाले लोग थे। वे सभी खाते, पीते, गाते, नाचते और सदा हँसते रहते। संयमहीन स्वेच्छाचार भी वहाँ था। स्त्री-पुरुष वल्कल पहनते, पुष्पों के अलंकार धारण करते और मुक्त जीवन बिताते। वे स्फूर्तिवान थे। उनके पैरों में तो मानों पाँखें लगी थीं। पहाड़ी पर दुर्गम चढ़ावों और उतारों पर वे यथेच्छ विहार करते, विकट रास्तों पर दौड़ते और गहरे गढ्ढों पर चपलतासे कूद जाते। स्त्रियाँ मात्र चलती नहीं, नाचती थीं। गरुड़ लोगों की कई विशिष्टताएँ बलराम के मौजी स्वभाव को भातीं। वे स्वयं को सुवर्ण की पखोंवाले विहगराज के वंशज बतलाते और उत्सवों पर गरुड़ के चेहरे लगाकर उड़ने की मुद्रा से चपलता के साथ कूदते फिरते।

गरुड़ लोग कभी-कदाच ही काम करते। नारियल का पेड़ उनका कल्पवृक्ष था; उससे उनको खाना, पीना, वस्त्र, खंभे, छपरे, इंधन इत्यादि जरूरत की सभी वस्तुएँ मिलतीं। पहाड़ी पर प्रचुर उगवनेवाले फलफूलों का वे आहार करते और धनुष-बाण से पक्षियों का शिकार भी करते। बलराम उनसे काफी हिल-मिल गये। उन्हीं की तरह पुष्प धारण कर वे उनके नृत्य का आनन्द लेते, दोपहर तक सोये रहते और जब कृष्ण उन्हें दुर्गम रास्तों का पता लगाने के लिए साथ चलने को कहते तो वे यह बात हँस कर टाल देते।

'कभी हमें जरासंध के सामने गोमांतक की रक्षा करनी पड़ेगी। हमें इसके लिए अभी से तैयार रहना चाहिए,' कृष्ण ने कहा।

'कृष्ण तुम जीवन का आनन्द उठाना नहीं जानते। जरासंध कभी यहाँ नहीं पहुँच सकता और यदि किसी तरह आ भी गया हो उसे पहाड़ी पर से उठा कर नीचे फेंक दूँगा। जैसे कि महाभार्गव कह गये थे, हमें जीवन जीना सीखना चाहिए,' बलराम ने कहा।

'हां, जीवन जरूर जीना चाहिए, परन्तु किसी ध्येय के लिए!' कृष्ण ने उत्तर दिया।

'मैंने तो जीवन को पूर्णतः जीने का निश्चय किया है,' बलराम ने एक वृक्ष के नीचे लंबी तान कर कहा।

कृष्ण ने बलराम को अपने रास्ते चलने दिया, परन्तु स्वयं भी गरुड़ों के जीवन में रस लेने से चूके नहीं। वैनतेय अब बिल्कुल चंगा हो गया था। कृष्ण के प्रति वह अपार श्रद्धा और भक्तिभाव रखता तथा छाया की तरह उसके पीछे पीछे रहता। वैनतेय को जब से कृष्ण ने शापमुक्त किया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तबसे नायक और सभी गरुड़ उनको पूज्य-भाव से देखते। वैनतेय की सहायता से कृष्ण ने गोमांतक की पूरी पहाड़ी को छान डाला। प्रत्येक घाटी, चढ़ाव, दुर्गम मार्ग और जरासंध के अवरोधक के रूप में काम आनेवाले प्रत्येक खड्ड का निरीक्षण उन्होंने किया। अनाज और जल की दृष्टि से पहाड़ी कितनी समृद्ध है और शस्त्र बनाने के लिए वहाँ कितने खनिज उपलब्ध हैं, इसका पता भी लगाया। विश्रान्ति के पलों में कृष्ण जीवन और संयोग के विषय में विचार करते; मनुष्य को किस प्रकार धर्म के प्रति आकर्षित किया जाय, अथवा जीवन को भय, रोष या क्षुद्र आत्मसंतोष की ग्रंथियों से संकुचित किये बिना किस प्रकार जिया जाय, ये विचार भी उनके मन में उठते रहते।

कभी-कभी वे नंद और यशोदा, राधा और उनकी सखियाँ, वसुदेव और देवकी अथवा पांच पांडवों के विचारों में खो जाते। आशिका का क्या हुआ होगा, उसकी माता ने उसे क्या सजा दी होगी, यह खयाल भी आये बिना उन्हें नहीं रहता। कभी-कभी उनके हृदय में विदर्भ की रूपवती राजकन्या का खयाल भी आ बसता। कई बार जरासंध का विचार उन पर हावी हो जाता। इस महत्वाकांक्षी सम्राट ने बल और छल से राजाओं तथा प्रजाओं का भविष्य अन्धकार में डाल दिया था। उन्हें लगा कि अब एक के बाद एक कदम उन्हें जरासंध का सामना करने की दिशा में ले जा रहा है। उनके हृदय में प्रिय, सुहृद उद्धव की की याद भी बनी रहती। यह अल्पभाषी मित्र होठों से शब्द निकलते ही उन्हें कार्यरूप में परिणत कर देता था। शायद अब भी वह जरासंध द्वारा कृष्ण के आसपास फैलाये जाल को काटने में लगा होगा।

अन्य प्रवृत्तियों के अतिरिक्त कृष्ण गरुड़ों के उत्सवों और नृत्यों में भाग लेते। युवकों को बंसी बजाना और युवतियों को वे रास सिखाते। कभी कोई झगड़ा होता या विकट समस्या आ जाती हो सब लोग सुझाव के लिए कृष्ण के पास जाते। गोमांतक के ये सरल निवासी कृष्ण के प्रति अपार भक्तिभाव रखने लगे।

कृष्ण की सब से बड़ी समस्या शस्त्र-सज्जित होने की थी। उस युग के युद्ध-कुशल योद्धाओं के बीच द्वंद के रूप में लड़े जाते थे। प्रत्येक योद्धा के पास अपने-अपने विशिष्ट शस्त्र रहते। कृष्ण विशिष्ट शस्त्रों के निर्माण की कला सांदीपनि के आश्रम में सीखे थे। एक विराट धनुष, निशाना साध सके ऐसी गदा और सब से अधिक स्वयं को अजेय बना सके ऐसे शस्त्र के निर्माण की आकांक्षा वे रखते थे।

गरुड़ों के नायक का नाम था आर्तेय। आपनी माता आर्ता से उसे यह नाम मिला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था। ऐसा माना जाता था कि उसके पास चमत्कारी शक्तियाँ हैं। अग्निदेव की उस पर कृपा थी, और कहा जाता था कि जब भी वह अग्निदेव की विधिवत् पूजा करता तब अग्निदेव, पत्थरों को गहरे लाल रंग की धातु में पलट देते। इसी धातु से वह अपने और राजकुटुंब के बाणों के फल बनाया करता। अन्य गरुड़ पत्थरों के फलवाले बाण बनाते और युद्ध में पत्थरों की ही गदा का उपयोग करते।

कृष्ण ने आर्तेय के साथ घनिष्ठता बढ़ायी। अग्नि का वह मंत्र जिससे पत्थर धातु में परिणत हो जाता था, उन्हें भी आता था। नायक की अनुमति से वे गरुड़ किशोरों को बाणों को किस प्रकार बनाया जाय और निशाना अचूक कैसे हो, इनकी तालीम देने लगे। थोड़े ही समय में वैनतेय के नेतृत्व में युवक कूदने, दौड़ने और विषम आरोहण में प्रवीण हो गये। कृष्ण ने नायक से प्रार्थना की कि वैनतेय और उसके साथियों को अग्नि से तांबा प्राप्त करने की रीति सिखाने की अनुमति दीजाय और नायक उससे सहमत हो गये। परन्तु कृष्ण को इन शस्त्रों से संतोष नहीं था, इसलिए वैनतेय की मदद से उन्होंने एक निर्जन स्थल में विशाल वेदी की रचना की। योग्य वेदमंत्रों द्वारा उन्होंने पत्थर की आहुतियाँ अग्नि को दीं। अग्निदेव ने प्रसन्न होकर उन्हें धातु में परिवर्तित कर दिया।

इस धातु से कृष्ण ने तलवार, बाण के फल, चक्र, गदा इत्यादि बनाये। परन्तु अनेक प्रयत्न करने पर भी जो कुछ उन्होंने गुरु सांदीपनि के आश्रम में सीखा था, उससे कुछ अधिक नहीं बना सके। कृष्ण इस प्रश्न पर गंभीर रूप से विचार कर रहे थे। यदि धर्म-संस्थापना ही मेरे जीवन का आदर्श है तो फिर अधर्म के प्रति मुझे सतत संघर्ष करना होगा। यह तभी संभव था जब वे असंभव को संभव कर बतायें—जहाँ हो सके वहाँ प्रेम से और जहाँ न हो सके वहाँ बल से हिंसा पर अंकुश रख सकें। दिन-रात वे इन्द्र और अग्नि के मंत्र उच्चार कर इन देवताओं से अधिक शक्तिशाली शस्त्र देने की प्रार्थना करते रहते।

एक रात कृष्ण बैठे-बैठे यज्ञवेदी में प्रज्वलित अग्नि को एकटक देख रहे थे। अग्निदेव ने ताम्बे की धातु के तप्त टुकड़े की रचना की। कृष्ण ने उस टुकड़े को पानी में डुबाया। उन्हें इस धातु से संतोष नहीं हुआ। दीर्घ काल से वे मानवातीत शस्त्र पाने के लिए प्रभु से प्रार्थना कर रहे थे। अग्नि में घृत और तेल की आहुतियाँ देते रहते। अचानक एक चमत्कार हुआ। एक शिला अन्य शिलाओं की भांति पिघली नहीं। उसमें मध्याह्न जैसा तेज और उषा जैसी सुनहरी आभा चमक रही थी। वह अनन्य दृश्य था। कृष्ण को लगा कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह प्रभु का संकेत है। वह शिला सूर्य की तरह चमक रही थी।

कृष्ण ने मंत्रोच्चार के साथ अग्नि को आहुति दी। वेदी पर ज्वालाएँ भभक उठीं। अंत में उससे रस पिघला-इस रस को जब कृष्ण ने नाली में बहाया तब 'स न न न' करती आवाज आयी और भाप हवा में फैल गयी। जब प्रवाही ठंडा पड़ा तब कृष्ण ने उसे उठा कर देखा। प्रभु ने मेरी प्रार्थना सुन ली है, यह जान कर कृष्ण का हृदय हर्ष से छलक उठा। उन्होंने तलवार की धार से उसे छेदने का प्रयास किया, किन्तु तलवार के दो टुकड़े हो गये। उन्होंने ताम्बे के फलवाले तीर उस पर छोड़े, परन्तु तीर की नोक टूट गयी। इन्द्र ने कृष्ण की प्रार्थना सुनी, और अपने वज्र का अंश ही मानो भेज दिया।

कृष्ण को एक नये रहस्य का पता चला। जो छोटे लाल पत्थर नायक आर्तेय निरुपयोगी समझ कर फेंक देता था, वही अग्निदेव की प्रिय आहुति थी। जब ये पत्थर अग्नि को समर्पित किये जाते, तो वज्र का रस तैयार होता। कृष्ण तथा गरुड़ ने समूची पहाड़ी पर से ऐसे लाल पत्थर खोजने शुरु किये। ये वहाँ काफी प्रमाण में पाये गये। इन शिलाओं को यज्ञवेदी में रखा गया। अग्निदेव को संतुष्ट करना आसान नहीं था; तेल और चंदन काष्ट की अपार आहुतियाँ देनी पड़ीं। अंत में अग्निशिखाएं खूब ऊंची उठीं, और शिलाएँ तप कर जब लाल हो गयीं तब उनमें से रस झरा। वह जब ठंडा हुआ तो उससे जो शस्त्र तैयार हुए, वे ताम्बे और पत्थर के शस्त्रों को सरलता से तोड़ सकने लायक थे। यह प्रभु की भेट थी।

●●●

दोपहर की नींद पूरी होने पर बलराम ने आँखें खोलीं। हवा में मधुर गंध फैल रही थी। एक दीर्घ श्वास लेकर वे खड़े हुए। आज किसी अनोखी प्रसन्नता का अनुभव उन्हें हो रहा था। सुगंध भी ऐसी अपूर्व फैल रही थी वातावरण में, कि बलराम उसी ओर चल पड़े जिस ओर से वह सुगंध आ रही थी। वहाँ उन्होंने एक चमत्कारिक दृश्य देखा। एक वृक्ष के तने से कुछ दूध सा रस झर रहा था। वह अनुपम सौरभ इसी रस में से प्रकट हो रही थी। बलराम ने हथेली में थोड़ा रस लेकर उसे चखा। वह अत्यंत मधुर था। इतना उत्तम स्वाद उन्होंने पहले कभी नहीं चखा था। उन्होंने अधिकाधिक रस पिया जिससे उनका मन अत्यंत हल्का हो गया। आकाश अत्यंत सुंदर दीखने लगा और आसपास की दृश्यावली और वृक्ष भी एक नवीन सौन्दर्य से युक्त दिखायी पड़े। उनका मन नाच उठने को हुआ, धरती पर नहीं, आकाश में। उन्होंने फिर थोड़ा रस चखा, और जब-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तक तृप्ति नहीं हुई तब तक पीते ही रहे। उन्हें लगा कि धरती भी नाच रही है। सभी को अपने आलिंगन में ले लेने का उनका मन आ–गरुड़ कन्याओं को भी। छोटे आकार भी अब उन्हें अच्छे लगने लगे।

वे वहाँ पहुँचे जहाँ कृष्ण गदा बना रहे थे। मन में सोच रहे थे, 'बेचारा कितनी मेहनत करता है। जीवन का आनन्द उठाना तो यह जानता ही नहीं। इसे उस वृक्ष से झरनेवाले रस का पान करना चाहिए। कल ही मैं उसे ले आऊंगा।' फिर कृष्ण से बोले, 'कृष्ण, तू....तू....क्यों...इस–स तरह समय गँवाता.... है।'

'भाई, आप कहाँ थे? क्या कर रहे थे?' बलराम की स्थिति देख कर कृष्ण ने विस्मय प्रकट किया।

'मैं....अरे मैं....ने तो अमृत खो....ज लिया है। गोमांतक के पे..डों से वह झ....रता है। चल...तू भी थो....ड़ा पी....ले!' बलराम ने कहा।

कृष्ण बलराम की स्थिति समझ गये। परन्तु बलराम के अहं पर चोट करना उन्होंने उस समय उचित नहीं समझा।

'मैं अपने लिए गदा बनाता हूं––तुम अपने लिए शस्त्र कब बनाओगे?'

'शस्त्र? मुझे शस्त्र की क्या आवश्यकता है?' बलराम ने कहा।

'शस्त्रों के बिना जरासंध के विरुद्ध कैसे लड़ोगे?'

'कैसे लड़ूंगा? उंहं!' बलराम ने उपहास से हँसते हुए कहा, 'मुझे गदा––वदा की क्या जरुरत है!'

बलराम ने इधर उधर देखा। नजदीक ही एक खेत जोता जा रहा था। बलराम अस्थिर कदमों से वहाँ गये और खेत जोतने वाले गरुड़ को आश्चर्यचकित करते हुए चार आदमियों से भी न उठ सके ऐसे हल को उठाकर कृष्ण के पास ले आये।

'कृष्ण, मुझे गदा की जरूरत नहीं। मैं इस हल से जरासंध के साथ लड़ूंगा। यदि उसमें हिम्मत है तो आये मेरे सामने!' बलराम ने कहा और हल खेत में फेंक दिया। फिर जोर जोर से हँसने लगे और वहीं जमीन पर निढ़ाल हो पड़ गये तथा गाढ़ निद्रावश हो गये।

●●●

एक दिन कृष्ण वैनतेय को लेकर पहाड़ी की उस ओर गये जहाँ सागर चट्टानों से टकराता था। कृष्ण को लगा कि मौका पड़ने पर गोमांतक को अब भी दुर्ग बनाया जा सकता है। युगों पूर्व गोमांतक सागर के मध्य में स्थित एक पहाड़ी थी, परन्तु गरुड़ों के पूर्वजों को ज्वार के समय मुख्य भूमि पर जाते हुए तकलीफ होती थी, इसलिए उन्होंने दोनों ओर सागर के जल को रोक रखने के लिए पत्थर का बड़ा बांध बनाया था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसीके फलस्वरूप पहाड़ी मुख्य भूमि से जुड़ गयी थी। अब भी ऐसे निशान वहाँ मौजूद थे जिससे मालूम होता था कि कभी वह भाग सागर के नीचे था।

कृष्ण और वैनतेय पहाड़ी पर आये तब उन्होंने बलराम को एक लतामंडप में तीन गरुड़ कन्याओं से घिरे बैठे देखा। बलराम वृक्ष का सहारा ले कर सोये थे। एक स्त्री 'अमृत रस' का घड़ा रख रही थी, दूसरी उनके लिए माला गूंथ रही थी और तीसरी उनके चरण सहला रही थी। बलराम ने कृष्ण और गरुड़ को देखा और उन्हें अपने पास बुलाते हुए कहा, 'कृष्ण, देख तो, ये तीनों अप्सराएं मेरा कितना खयाल रखती हैं। ये जो मुझे अमृत रस पिला रही हैं—इसका नाम वारुणी है और ये माला गूंथनेवाली कांति है, तीसरी श्री है। भाई, तू क्यों युद्ध की तैयारी में अपना समय गँवाता है? जरासंध यहाँ क्या आयेगा!'

कृष्ण हँस पड़े। 'जरासंध यहाँ अवश्य आयेगा और तुम यदि ऐसे ही रहोगे तो उसके साथ लड़ने की स्फूर्ति भी तुममें नहीं रहेगी।'

'जब वह आयेगा तब देख लिया जायेगा!' बलराम ने कहा और गरुड़ कन्याओं की ओर मुड़े। तीनों युवतियाँ हँस पड़ी।

वैनतेय कई बार करवीरपुर जाता। अपना गरुड़-मुख पहन कर वह चील की तरह झपटता और दो दिनों में ही वहाँ जा कर वापस लौट आता। एक दिन जब वह करवीरपुर से लौटा तो सीधा घर न जा कर कृष्ण के पास आया।

'भगवान, आपके लिए मैं समाचार लाया हूं?' उसने कहा।

'क्या बात है, गरुड़?' कृष्ण ने पूछा अब वे गरुड़ भाषा भी बोलने लगे थे और वैनतेय को भी आर्य भाषा बोलने का अभ्यास हो गया था।

'करवीरपुर के राजा शृंगलव के यहाँ कुछ दिनों में मेहमान आने वाले हैं, किसी बड़े देश के राजा। उनके स्वागत के लिए भारी तैयारियाँ हो रही हैं।'

'उस राजा का नाम क्या है?'

'मुझे ठीक से याद नहीं।'

'उसका नाम जरासंध तो नहीं है?' कृष्ण ने पूछा।

'हां, हाँ, वही! उनके साथ और भी कई राजा आ रहे हैं। शृंगलवने उन्हें निमंत्रण दिया है!' गरुड़ ने बताया।

'तो अब हमें तय्यार हो जाना चाहिए!'

●●●

बलराम अपने 'अमृतरस' में चूर थे। जब उन्हें यह समाचार मिला तब उन्होंने अपने नाजुक साथियों को दूर किया और अपने कुटीर में चले गये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'कृष्ण, तुमने कौनसे शस्त्र बनाये हैं? सुनो, जरासंध आ रहा है!' बलराम ने कहा।

कृष्ण बलराम को तीसरी कुटिया में ले गये और वहाँ पर रखे धनुष बाणों का भंडार दिखाया। वहाँ गदाएँ भी थीं। 'ये मेरे शस्त्र हैं,' कृष्ण ने कहा।

'हमें इन शस्त्रों की पूजा करनी चाहिए-इनके नाम रखने चाहिए,' बलराम ने कहा।

'मैं तो तैयार हूं—पर, तुम्हारे शस्त्र कहाँ हैं?' कृष्ण ने पूछा।

'परसों हम शस्त्र-पूजा करेंगें—तब तक मेरे शस्त्र भी तैयार हो जायेंगें,' बलराम ने कहा। वे वापस जब लौटे तब तीनों युवतियाँ उनकी प्रतीक्षा कर रही थीं। बलराम ने गर्जन कर उन्हें भगा दिया। फिर कुल्हाड़ी ले कर एक विशाल वृक्ष को काटने बैठे और उसके तने से एक बड़ा हल बनाया। दो दिन और दो रात काम कर उन्होंने वह विशाल हल तैयार किया।

शस्त्र पूजा का दिन आ पहुँचा। समस्त गरुड़ जनों को भी इस उत्सव पर आमंत्रित किया गया।

'कृष्ण, अपने शस्त्रों की पूजा आरंभ करो!' बलराम ने कहा।

'पर, तुम्हारे शस्त्र कहाँ हैं, भाई?'

'तुम पूजा करो— मैं अपना शस्त्र अभी ले आता हूँ।'

थोड़ी देर में जब बलराम लौटे तब उनके एक कंधे पर एक विशाल हल था और दूसरे कंधे पर पांच फुट का बड़ा मूसल।

'ये रहे मेरे शस्त्र! अपने शस्त्र तैयार करने के लिए मुझे कई दिन गँवाने नहीं पड़ते! चलो, अब पूजन आरंभ करो।'

कृष्ण ने मुस्करा कर कहा, 'बड़े अच्छे हैं आपके शस्त्र! पर ज़रा मेरा यह शस्त्र भी देखो!' फिर पत्तों के आवरण को हटा कर उन्होंनें मध्याह्न के सूर्य की भाँति चमकते हुए चक्र को उठाया। फिर और पत्ते हटा कर उन्होंने दूसरे शस्त्र दिखाये। उनमें मुकुट, कवच इत्यादि थे; रत्नजड़ित एक स्वर्ण मुकुट भी था।

'मैंने प्रभु के लिए यह तैयार किया है!' वैनतेय ने गर्व से कहा।

बलराम विस्मय से यह सब देख रहे थे। उन्होंने कहा, 'चमत्कार! चलो, अब शस्त्रों का नामकरण करें!'

बलराम ने हल को 'समवर्तक' और मूसल को 'सौनंद' नाम दिया। कृष्ण के धनुष को 'सारंग', गदा को 'कौमोदकी' और चक्र को 'सुदर्शन' की संज्ञा दी।

शस्त्रों की पूजा कर उन्होंने देवताओं को उनमें शक्ति देने की प्रार्थना की।

'गरुड़ मेरे शस्त्रों का रक्षक रहेगा। वह नहीं हो, तब भी गरुड़ का प्रतीक मेरे शस्त्रों पर रहेगा, क्योंकि उसने मेरे शस्त्रों के निर्माण में सहायता की है!' कृष्ण ने कहा।

'अब जरासंध भले ही आये—उसे देख लेंगे!' बलराम ने कहा।

गरुड़मुख मानव इन दोनों भाइयों के आसपास नृत्य कर रहे थे। उन्होंने दोनों पर पुष्पवर्षा की और शत्रुओं के प्रतिकार की लालसा से युद्ध दुंदुभी बजायी।

[क्रमशः]

अनु. ओंकारनाथ शर्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[अन्धकार की परछाइयाँ : पृष्ठ ४९ का शेष]

बहुत ही भिन्न लगती है। जैसे भिन्न-भिन्न आवाजोंकी पंक्ति, मैं सच ही कह रहा हूँ। मुझे लगा कि निश्चित ही तेरे पाँव के तलुये बिलकुल सीधे होने चाहिए, और है भी ऐसा ही।' जब उसकी आँखें जाने लगीं तो पहली ही बार अपनी पत्नी के तलुओं के आकार की ओर उसका ध्यान गया।

उसने अपने सामने पंक्तिबद्ध चीनी मिट्टी के कटोरे जमाये और फिर सलाई से उनको बजाया। 'अगर व्यवस्थित ढंग से जमाकर बजाया जाय तो पियानो ही बज रहा हो, ऐसा लगे।' उसने कहा।

उसकी सी स्थिति में रखे गये आदमी को भी तंदुरुस्त आदमी की तरह ही इच्छाएँ और वासनाएँ होतीं हैं यह जरा विचित्र लगता था।

एक सुबह उसने स्नेह से अपनी पत्नी को अंक में लेते हुए कहा: 'अब मुझे बिलकुल नहीं दिखता'।

वह पलभर तो काष्ट की सी होकर अपने पतिके चेहरे की ओर देखती रह गयी।

'अब अंधेरे और उजाले में कोई भी फर्क नहीं रह गया है'।

'तुम ज़रा आँखें खोलो तो'।

उसकी दोनों आँखें धुंधली और सफेद थीं। अंधे मालिश करनेवाले की आँखें सी दिखतीं थीं। वह भय से सिहर उठी, इससे पहले कभी भी उसके पति ने उसे इतना अधिक भयभीत नहीं किया था।

उसे अपने प्रगाढ़ आलिंगन में बांधते हुए संपूर्ण स्वस्थता से उसने कहा; 'चलो कुछ नहीं। अब हमें इस बारे में कुछ तो भी निश्चित कर ही लेना होगा। अंधा आदमी कर सके, ऐसे किसी रोज़गार के बारे में सोचना होगा। हमारी स्थिति कोई उतनी खराब नहीं है। अभी तो हमारी किस्मत में बहुत बहुत सुख भोगना बाकी है।'

उसकी पत्नी नें उसके कंधे के नीचे अपना मुँह छिपा लिया और उसकी आँखों से चुपचाप आंसू बह गये। पर उसे मरने का विचार नहीं आया। यह अंधापन, उसकी जैसी कल्पना थी वैसा बड़ा अनिष्ट हो, ऐसा उसे नहीं लगा; और इस घटना से पूर्व वह जिस तरह हमेशा करती थी, उसी तरह अपनी दोनों बांहों की माला गूंथ कर उसने अपने पति के कंठ में पिन्हा दी।

अनु० ज्योत्सना मिलन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[मातृ–पूजा और सृष्टि-विज्ञान...पृष्ठ २९ का शेष]

"त्वं यथा शिवमयी तथा शिवस्त्वन्मनो
हि शिवयोरभेदिनो ।'

शाक्तों और शैवों की लीला बड़ी ही मनोहारिणी है। उनके अनुसार 'मां' परमा शक्ति नित्य लीलामयी है। शक्ति तो शिव है, अतः वह लीलातीत भी है। वही इस जगत नाटक का सूत्रधार है। नट-नटी वही है, प्रेक्षक-दर्शन वही है। इस नाटक का सर्जक भी वही है। भिन्न-भिन्न पात्रों का रूप धारण करके वही अभिनय भी कर रहा है। इस अभिनय को देख कर वह मुग्ध भी होता है। वह रस रूप (रसो वै सः) है, पर इस अभिनय का पूरा रस भी ले रहा है। वह वाक्, इन्द्रिय, मन के अगोचर है, मनोमात्र गम्य भाव रूप है, तो भी गूंगे के 'अमृत रस या गुड' की तरह अनिर्वचनीय है, सर्वेन्द्रिय वेध है। उसकी इस लीला में भाग लेना भक्त की सब से बड़ी कामना है।

शैवों के अनुसार सामरस्य ही सृष्टि का मूल है। इस दर्शन की विश्व-सुन्दरी साधना भी 'मां' की ही साधना है। मनुष्य देह में कुंडलिनी शक्ति सुप्त रूप में रहती है। मेरुदंड के नीचे इला-पिंगला की मध्यवर्तिनी सुषुम्ना के मार्ग से कुंडलिनी को ऊर्ध्वगामी किया जाता है। अनेक चक्रों को वेधने के अनन्तर साधक मानसरोवर ब्रह्मरन्ध्र, शून्य या दशम द्वार में प्रवेश पाता है और नित्य आनन्द-स्वरूप की लीला का ज्ञाता और दर्शक बन जाता है। त्रिपुर–सुन्दरी की साधना में विश्व-सृष्टि के आदि रस श्रृंगार को ही प्राधान्य दिया गया है। इसी कारण इस साधना के उपासकों के पास सुन्दरी सदा षोडश वर्षीया रहती है—'षोडशी तु कला ज्ञेया सच्चिदानन्द रूपिणी।' प्रत्यभिज्ञा दर्शन में जो ३५ या ३६ तत्व या शिव-शक्ति हैं, त्रिपुर सुन्दरी की साधना में वही कामेश्वर-कामेश्वरी हैं। गौड़ीय वैष्णव भक्ति में वही कृष्ण-राधा हैं।

पाश्चात्य विद्वान गेटे क्रेमर. डोज़ी

धड़ाधड़ मांगें आरही हैं

१. जैन धर्मसार पृ. ६४० हिन्दी १०]
२. अनेकांत स्याद्वाद पृ. ४२६ हि. ५]
३. अनेक रंगों में बड़े ५१ चित्रों सहित हिन्दी महावीर चरित्र ५]
४. तीन रंगों में २० चित्र सहित हिन्दी बालपोथी ००.५० पै. तृतीय संस्करण। ५ कापी से कम नहीं भेजी जाती।

(अजैनों के लिये किताब १-२-४ के आधे दाम।)

जैन मार्ग, आराधक समिति

Adoni आदोनी [आंध्र]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदि ने इस बात को स्वीकार किया है कि इस त्रिपुर सुन्दरी-साधना और भारतीय वेदान्त का सूफ़ियों की साधना पर भी प्रभाव पड़ा है। सूफी साधक अल्लाह को स्त्री रूप में मानते हैं और यह कहते हैं कि उसी की ज्योति से यह विश्व ज्योतित है। सर्वत्र उसी का 'नूर' छाया हुआ है। शंकराचार्य की 'सौन्दर्य लहरी' में भी त्रिपुर सुन्दरी के रूप का वर्णन है। इस ग्रन्थ के पाँचवें, बारहवें एवं अन्य श्लोकों में भी उसी की ज्योति का गान है—अप्सराओं का रूप उसके समक्ष कुछ नहीं है। समग्र विश्व उसके दर्शन को व्याकुल है। इसी सौन्दर्य के कणमात्र को प्राप्त करके विष्णु ने मोहिनी रूप धारण करके साक्षात् भगवान् शंकर को मोहित कर लिया। चंद्रमा की सोलहवीं कला को 'अमृता चन्द्रकला' कहते हैं। दर्शन में इसे ही आत्मा, मन्त्रों में देवता और व्याकरण में पश्यन्ती वाणी कहते हैं, इसे ही महा त्रिपुर-सुन्दरी, ललिता, रूप-आनन्द का परमधाम भी कहा जाता है। यही श्री विद्या है, परा कला है। सूफी, त्रिपुरा सुन्दरी मत और गौड़ीय मत में अनेक बातों का साम्य है।

वैदिक, मिस्र की आइसिस, फोनेशिया की अश्तार्त, यूनानी देमेसर आदि संस्कृतियों में भी मातृ-शक्ति की पूजा की प्रतिष्ठा रही है। अदिति से संबद्ध वैदिक ऋचाओं (शु. यजुर्वेद २–६१; ऋ. १–१३६–३ आदि) से भी यह स्पष्ट है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भारतीय साधना में 'मां' भगवती आद्या महाशक्ति के रूप में प्रतिष्ठित हैं। उन्हीं के स्फुरण से विश्व प्रकटा है, उन्हीं की दिव्य-ज्योति से निखिल ब्रह्माण्ड ज्योतित है। उन्हीं की लीला में सूर्य, चन्द्र और असंख्य ज्योतिष्कपिंड नाच रहे हैं—आरती उतार रहे हैं। भारत के प्राचीन महामनीषी, ऋषि-मुनि उन्हीं के माहात्म्य का गान गाते-गाते अघाते नहीं। पूज्य स्वामी रामकृष्ण परमहंस को उन्हीं मां के प्रायः दर्शन हुआ करते थे। उस परम महाशक्तिमयी मां की लीला का ध्यान महात्मा अरविन्द भी किया करते थे। उनके महाकाव्य 'सावित्री' में भी उनकी लीला और इस मातृ-सृष्टि-विज्ञान की स्पष्ट अभिव्यक्ति बड़ी ही मनोमय बन पड़ी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भवन समाचार

२७वां स्थापना दिवस समारोह मनाने के संदर्भ में भारतीय विद्या भवन के लिए गत सप्ताह का उत्तरार्द्ध बड़ी व्यस्तता की अवधि था। २४ दिसम्बर को महाराष्ट्र के राज्यपाल डॉ. पी. वी. चेरियन ने भवन का १८वाँ दीक्षान्त भाषण दिया। उन्होंने भारतीय विद्या भवन के कार्यों की सराहना करते हुए श्री मुन्शीजी को बधाई दी। भवन–मद्रास केन्द्र की स्थापना पर उन्होंने प्रसन्नता व्यक्त की। राज्यपाल महोदय का स्वागत करते हुए कुलपति श्री मुन्शीजी ने भवन की गतिविधियों पर विस्तृत रूप से प्रकाश डाला।

२६ दिसम्बर को 'भारत तथा नयी विश्व व्यवस्था' विषय पर एक परिसंवाद गोष्ठी का आयोजन किया गया था। इस समारोह की अध्यक्षता कुलपति श्री. मुन्शींजी ने की और वक्ता के रूप में भाग लेनेवाले लोग थे:–डॉ. सी. पी. रामस्वामी अय्यर, अन्नामलाई विश्व विद्यालय के उपकुलपति, श्री नित्यानन्द कानून गो केन्द्रिय मन्त्री नागरिक उड्डयन), श्री जयसुखला हाथी, केन्द्रिय मन्त्री (गृह-मामले) तथा भवन के दिल्ली केन्द्र के चेयरमैन, डॉ. ए. एल. मुदालियर, मद्रास विश्व विद्यालय के उपकुलपति तथा मद्रास भवन केन्द्र के चेयरमैन, श्री शिव शास्त्री, श्री. ए. जी. नूरानी तथा श्री. आर. एस. भट्ट।

विश्व व्यवस्था में सुमेल-शक्ति और सहयोग की आवश्यकता पर बल देते हुए श्री रामस्वामी अय्यर ने कहा कि विश्व-व्यवस्था के लिए आध्यात्मिक शिक्षा नितान्त आवश्यक है। श्री नित्यानन्द कानूनगो ने कहा कि जब तक सामान्य सुखमय वातावरण की उपस्थिति नहीं हो जाती तब तक सुमेलमय विश्व व्यवस्था की स्थापना सम्भव नहीं। श्री जयसुखलाल हाथी ने वर्तमान विश्व व्यवस्था में क्या क्षति है, और वह किस प्रकार दूर की जा सकती है, बताते हुए कहा कि विज्ञान की चतुर्मुखी प्रगति के बावजूद आज मानव जाति सुखी नहीं है और विज्ञान ने युद्ध के भय को और भी बढ़ा दिया है। श्री. ए. एल. मुदालियर ने कहा कि न्यायी विश्व व्यवस्था की रचना के लिए पक्षहीन प्रयास किया जाना चाहिए और भौतिक सुख-साधनों की भूख मिटनी चाहिए। युनिवर्सिटी ट्रस्ट के चेयरमैन श्री. आर. एस. भट्ट ने आर्थिक प्रगति की आवश्यकता बतायी ; जब कि श्री. ए. जी. नूरानी ने सैनिक शक्ति की सुदृढता पर बल दिया।

अध्यक्ष पदसे कुलपति श्री मुन्शी जी ने कहा कि भारत को अपने सच्चे मित्रों का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वास प्राप्त करना चाहिए और महा-शक्तियों के बीच पार-स्परिक अविश्वास की भावना के कारण शीत-युद्ध का जिक्र करते हुए उन्होंने कहा कि सैनिक शक्ति को सुदृढ़ करने के अलावा चीन से बचने के लिए दूसरा कोई चारा नहीं है।

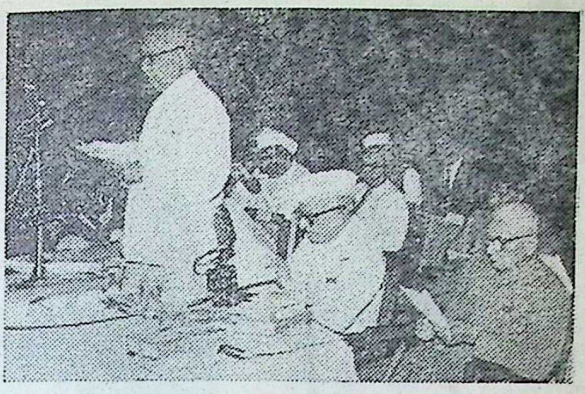

१८वाँ दीक्षान्त भाषण देते हुए
महाराष्ट्र के राज्यपाल डॉ. पी. वी. चेरियन

२७ दिसम्बर को भवन के पत्रकारिता, विज्ञापन, एवं मुद्रण महा विद्यालय का द्वितीय पत्रोपाधि वितरण समारोह मनाया गया। श्री. ए. एल. मुदालियार प्रमुख अतिथि के रूप में उपस्थित थे। उसी दिन शाम को भवन-कला केन्द्र के सुगम संगीत युनिट द्वारा सुगम संगीत का कार्यक्रम उपस्थित किया गया। श्री जयसुखलाल हाथी प्रमुख अतिथि थे। २८ दिसम्बर को अभिभावक दिवस मनाया गया। २५ दिसम्बर को कार्यकर्ता एवं कर्मचारी-गणों की सभा हुई और शाम को स्टाफ की ओर से प्रीति भोज को आयोजन किया गया। ३० दिसम्बर का भवन के कला-केन्द्र के शिशु-मंच की ओर से चाक्लेटपुर के चक्रमादित्य नाटय नाटक प्रस्तुत किया गया और शाम को ८ बजे सदस्यों एवं अतिथियों का एक प्रीति-भोज समारोह भी मनाया गया। महाराष्ट्र के राज्य पाल डॉ. पी. वी. चेरियन तथा उनकी धर्मपत्नी श्रीमती तारा चेरियन भी उपस्थित थीं। ३१ दिसम्बर को मद्रास के नृत्योदय आर्ट सेन्टर की. कु. पद्मा ने नृत्य के सम्बन्ध में अपना भाषण दिया और १ जनवरी १९६५ को भवन के प्रमुख सभागृह में अपनी पार्टी के साथ 'पारिजात अपहरणम्' नामक नृत्य-नाटिका का कार्यक्रम प्रस्तुत किया।

● ● ●

दिवंगत अपने पति श्री वी. एन. मोतीवाला की पुण्य स्मृति में श्रीमती वी. एन. मोतीवाला ने भारतीय विद्या भवन पुस्तकालय को ७०० बहुमूल्य पुस्तकों का दान किया है। श्री मोतीवाला बम्बई के एक उत्कृष्ट समाज सेवी थे।

● ● ●

अनेक केन्द्राध्यक्षों और पाठशालाध्यक्षों के निवेदन पर अप्रैल, १९६५ में होनेवाली शास्त्रीय परीक्षाओं के विलम्ब-शुल्क के साथ आवेदनपत्र स्वीकार करने की अंतिम तिथि बढ़ा कर १५ जनवरी, १९६५ कर दी गयी है। विशेष जानकारी के लिए परीक्षा संपादक, शास्त्रीय परीक्षा विभाग, भारतीय विद्या भवन, बम्बई-७. से सम्बन्ध स्थापित करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

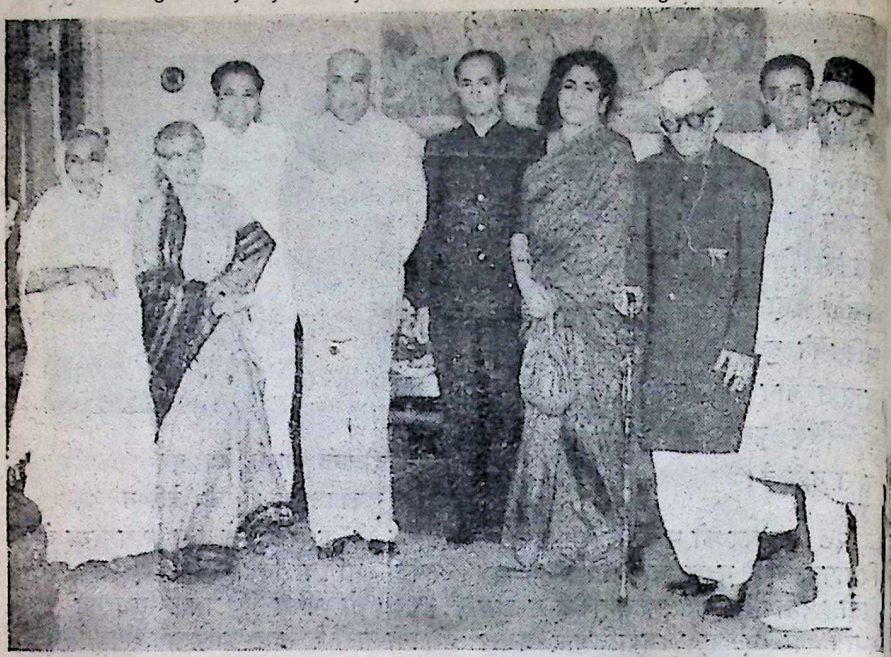

प्रस्तुत चित्र में बायें से दायें श्रीमती रामप्रसाद, श्रीमती लीलावती मुन्शी, श्री नवीन टी. खाण्डवाला, राज्यपाल डॉ. चेरियन, श्री प्रदीप खाण्डवाला, श्रीमती तारा चेरियन, कुलपति श्री मुन्शीजी, श्री गिरीश मुन्शी तथा श्री रामप्रसाद खण्डेलवाल दृष्टिगोचर हो रहे हैं।

अप्रतिम ढंगसे अपने छात्र जीवन में सफलता प्राप्त करने के बाद श्री प्रदीप एन. खांडवाला, बी.काम. ए.सी.ए. (चार्टर्ड एकाउण्टेण्ट्स) ने औद्योगिक मैनेजमेन्ट में नवीनतम टेकनिक का उच्च स्तरीय अध्ययन करने के निमित्त पेनसील्वानिया विश्वविद्यालय के लिए प्रस्थान किया। श्री प्रदीप भारतीय युथ फॉरम के संस्थापक सदस्यों में से हैं। यह फॉरम स्पीकर्स-क्लब, विवेकानन्द सर्कल, फिल्म क्लब, रचना आदि कार्यक्रमों का संचालन करता है। फॉरम ने नगर के युवकों में पर्याप्त लोकप्रियता प्राप्त करली है। श्री प्रदीप कुलपति श्री मुन्शीजी तथा श्रीमती लीलावती मुन्शी के दौहित्र तथा श्री नवीन टी. खांडवाला के पुत्र हैं। ●

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन के लिए बम्बई से प्रकाशित व मुद्रित तथा एसोसिएटेड एडवर्टाइजर्स एण्ड प्रिन्टर्स, तारदेव, बम्बई ३४ में मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द साहित्य

सचित्र, आकर्षक गेट-अप

विवेकानन्द चरित—
सत्येन्द्रनाथ मजुमदारकृत ६.००

स्वामी विवेकानन्द कृत :—

विवेकानन्द संचयन— विवेकानन्दजी की बृहत् साहित्य सामग्री से चुने हुए व्याख्यान, सम्भाषण, लेख, पत्र, कविताओं इ० का प्रतिनिधिक संचयन ७.५०

भारत में विवेकानन्द (भारतीय व्याख्यान) ... ५.००

विवेकानन्दजी के संग में (वार्तालाप) ... ५.२५

पत्रावली (स्फूर्तिदायक पत्र)
प्रथम भाग ५.२५ द्वितीय भाग ४.२५

ज्ञानयोग	... ...	३.५०
राजयोग	... ...	३.००
भक्तियोग	... ...	१.५०
कर्मयोग	... ...	१.७५
प्रेमयोग	... ...	२.००
सरल राजयोग	...	०.६०
व्यावहारिक जीवन में वेदान्त		१.१५
आत्मानुभूति तथा उसके मार्ग		१.६०
हिन्दू धर्म	... ...	१.५०
धर्मविज्ञान	... ...	२.००
धर्मरहस्य	... ...	१.२५
शिकागो वक्तृता	... ...	०.६५
कवितावली	... ...	१.६५
स्वाधीन भारत ! जय हो !	...	१.५०
जाति, संस्कृति और समाजवाद		१.२५

सचित्र, आकर्षक जैकेट सहित

श्रीरामकृष्णलीला प्रसंग—स्वामी सारदानन्दकृत सुविस्तृत मूल बँगला जीवनी से अनुवादित। प्रथम खण्ड ९.००
द्वितीय खण्ड १०.००
तृतीय खण्ड ७.००

श्रीरामकृष्णलीलामृत— विस्तृत जीवनी, महात्मा गांधी द्वारा भूमिका सहित
प्रथम भाग ५.००
द्वितीय भाग ५.००

श्रीरामकृष्णवचनामृत— श्रीरामकृष्णदेव के अमृतमय उपदेशों का अपूर्व संग्रह
प्रथम भाग ६.५०
द्वितीय भाग ६.५०
तृतीय भाग ७.००

श्रीरामकृष्ण उपदेश— स्वामी ब्रह्मानन्द द्वारा संकलित, पाकेट साइज, ०.७५

माँ सारदा— श्रीरामकृष्णदेव की लीला-सहधर्मिणी की विस्तृत जीवनी, स्वामी अपूर्वानन्दकृत, मूल्य ४.५०

रामकृष्ण-संघ—आदर्श और इतिहास—
स्वामी तेजसानन्दकृत ०.७५

धर्म-प्रसंग में स्वामी शिवानन्द—श्रीरामकृष्णदेव के अन्तरंग शिष्य द्वारा धर्म के गूढ़ तत्वों पर वार्तालाप ५.००

साधु नागमहाशय— श्रीरामकृष्णदेव के अन्तरंग गृही शिष्य का जीवनचरित १.५०

श्रीरामकृष्ण और श्री माँ—
स्वामी अपूर्वानन्दकृत ३.४०

सम्पूर्ण विस्तृत सूचीपत्र के लिए लिखिए :—

श्रीरामकृष्ण आश्रम [भा.], धन्तोली नागपुर–१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतुल

• रंग

• रसायन

• और औषधि

अतुल प्रॉडक्ट्स लि.

अतुल, (वाया वलसार)

पश्चिम रेलवे.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

7428

२१ मार्च
१९६५

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारती

[भवन की पत्रिका]

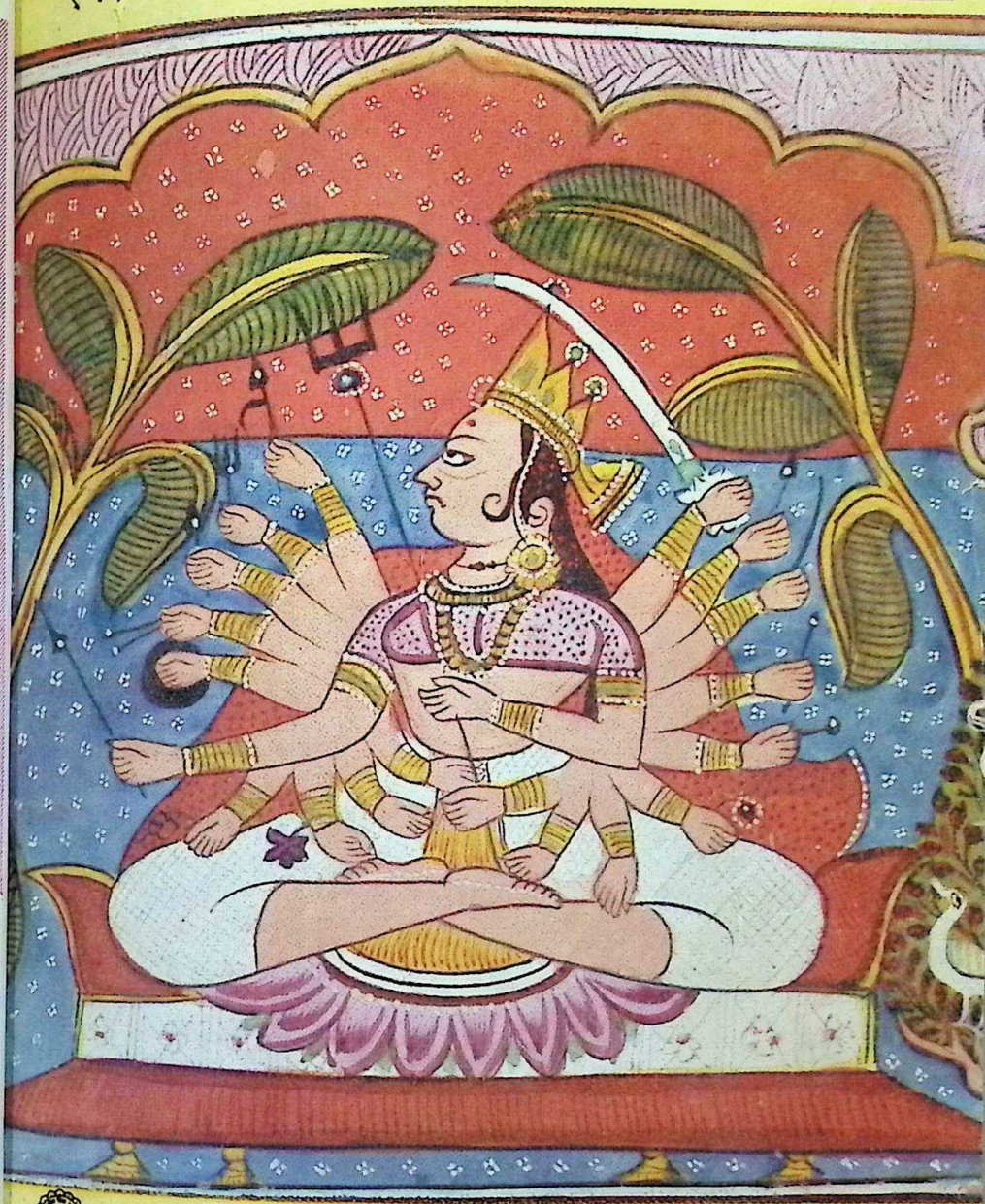

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

मूल्य : ३० पैसे

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतमें सब जगह प्रसिध्द

चँपियन

(रजिस्टर्ड)

सबकी पसंदगी

गुजरात इंडस्ट्रीज प्रायव्हेट लि., बंबई २

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष ९ : अंक १५] भारती [२१ मार्च १९६५

संस्थापक :
कन्हैयालाल मुन्शी

प्रबन्ध सम्पादक :
जयन्तकृष्ण ह. दवे

प्रकाशक :
सु. रामकृष्णन्

सम्पादक :
वीरेन्द्रकुमार जैन

सहयोगी :
श्रीराम मिश्र
ओंकारनाथ शर्मा
रामलाल शुक्ल

कार्यालय :
भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड,
बम्बई ७

प्रति अंक : ३० पै.
वार्षिक : ६.५० पै.
अर्धवार्षिक: ३.५० पै.

यजुर्वेद	: प्रार्थना	३
कन्हैयालाल मुन्शी	: कुलपति का पत्र	४
संत कबीर	: नाम संकीर्तन	७
वेद–वाणी	: अग्नि की ऋचा	१०
उपनिषद् प्रवचन	: वह परात्पर पुरुष	११
बोध–कथा	: दूसरों के दोष मत देखो	१३
स्वामी मुक्तानंद परमहंस	: श्री गुरु के प्रेम का अमोघ अमृत	१४
धूमिल	: आईनों के बिम्ब	१७
श्री भारती कृष्णतीर्थ स्वामी	: आत्मा की अमरता : विज्ञान के प्रकाश में	१८
पुराण–कथा	: जब भगवान शंकर की कृपा से पापी कुबेर बन गया	२२
नरेशचन्द्र मिश्र	: नील माधव का वह अमर उपासक	२७
वी. शिवराम कृष्ण	: वह मर्त्य नारी, जो अमर देवी बन गयी	३०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगामी ४ अप्रैल के अंक में

●

- सन्त ज्ञानेश्वर यों बोले:
- वेद-वाणी
- उपनिषद्-प्रवचन
- अगोचर में आस्था : आज के मनुष्य की आवश्यकता
- युग-युगान्तर के नायक श्री राम : श्री हरि
- श्रीराम द्वारा मरे हुए ब्राह्मण-बालक-को जीवन-दान : पद्मपुराण
- चीन की पाँच अंगुलियाँ जॉर्ज पेटरसन
- टिकिट (बंगला कहानी) : नरेन्द्रनाथ मित्र.
- अरब भूगोल वेत्ताओं की दृष्टि में सोमनाथ :
- पाइन के झाड़ में हवा : ग्रेस जेम्स् (जापानी परी-कथा)

●

एर्नाल्ड टॉयनबी	: इतिहास की आवाज़
संत तुलसीदास	: राम-चरित
स्वामी रामदास	: रामदास ग्रह-नक्षत्रों से फुटबाल खेलता है
अनामिका	: मुट्ठियाँ खोल दो
सुरेश जोशी	: दुर्लभा
डॉ. सी. कुन्हन् राजा	: परम अग्नि-पुरुष जरथुस्त्र
कन्हैयालाल मुन्शी	: कृष्णावतार
नीति-कथा	: आख्यान तरुणचन्द्र वैद्य और राजा अजर का
आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री	: भारत की एकता के शिल्पी सरदार पटेल

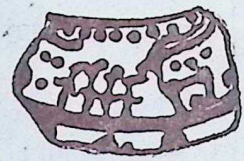

आवरण-चित्र : भगवती महाशक्ति
भारतीय विद्या भवन संग्रहालय से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः ।

[प्रत्येक दिशा से शुभ एवं सुन्दर विचार हमें प्राप्त हों]

भारती

[भवन की पत्रिका]

आगामी विश्व विकास का सूचक :

जीवन, साहित्य और संस्कृति का पाक्षिक

प्रार्थना

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि ।
परासुव। यद्भद्रं तन्न आसुव।।

हे सर्व प्रकाशक! सर्वोत्पादक परमेश्वर! सब प्रकार के दुष्ट आचरणों, दुखद एवं बुरे व्यसनों को दूर करो। जो सुखदायक तथा कल्याणकारी है, उसे हमें प्राप्त कराओ।

—यजुर्वेद ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुलपति का पत्र

जीवन साहित्य तथा संस्कृति से संबंधित

● उपन्यास—ऐतिहासिक, मनोवैज्ञानिक तथा अश्लील

भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड, बम्बई ७
२१ मार्च १९६५

मेरे युवा मित्र,

अपने ७ फ़रवरी के पत्र में मैंने अच्छे, बुरे और साधारण उपन्यासों के बारे में कुछ चर्चा की थी। इस पत्र में मैं ऐतिहासिक, मनोवैज्ञानिक तथा अश्लील उपन्यासों के विषय में कुछ कहूँगा।

ऐतिहासिक उपन्यास मुझे प्रिय हैं। ऐसे उपन्यासों के प्रति निर्णय देते समय हमें ऐतिहासिकता की सीमा का खयाल रखना चाहिए। सुयोग्य से सुयोग्य इतिहासकार भी अतीत के किसी युग का बिलकुल सही चित्रण नहीं कर सकता। इसके लिए आवश्यक सामग्री समय पर मिलती नहीं, और मिल भी जाय, तो लेखक की कल्पना में उसे और ही रंग मिल जाता है।

यह भी याद रखना आवश्यक है कि ऐतिहासिक उपन्यास इतिहास नहीं है। उसके रचयिता के सामने दो विकल्प होते हैं: एक तो यह है कि वह मृत जगत का सविस्तार वर्णन कर अपनी कल्पना के स्त्री-पुरुषों का चरित्र-चित्रण करे, जो एक असंभव कार्य है; दूसरा विकल्प है, ऐतिहासिक घटनाओं और वातावरण के ढांचे में, प्रत्येक युग में मानव-जाति के लिए समान, कुछ विशेष स्थितियों में जीवित स्त्री-पुरुष जिस प्रकार वर्तन करें, उसी के आधार पर पात्रों की रचना।

सच्चे उपन्यास का रहस्य, जैसा कि मैंने कहा, कथा के अतिरिक्त, उसके सजीव चरित्र-चित्रण में है। उपन्यासकार स्वभावतः केवल अपने ही संसार और समय के स्त्री-पुरुषों से सुपरिचित होता है। यदि उसके पात्रों को सजीव होना है, तो उनकी रचना में केवल इतना ही परिवर्तन होना चाहिए कि वे उपन्यास कालीन दिखाई पड़ें। इसी में सृजनात्मक कलाकार की कला प्रकट होती है। स्कॉट, ड्यूमा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ह्यूगो और टॉल्स्टॉय जैसे महान लेखकों की कला इसी प्रकार की थी।

डेनिस व्हीटले द्वारा लिखित 'रॉज़र बुक इन द फ्रेंच रिवोल्यूशन' की श्रेणी में एक नये ही प्रकार का ऐतिहासिक उपन्यास आता है। इसमें नायक के कार्यों द्वारा लेखक उस समय का सविस्तार इतिहास प्रस्तुत करता है। परन्तु ऐसे उपन्यास, कथा की कुछ घटनाओं के बावजूद, सफल नहीं कहे जा सकते। सामान्यतः ये कथाएँ रोचक नहीं बन पातीं, क्योंकि उस समय के इतिहास का अत्यधिक वर्णन उनमें रस पैदा नहीं होने देता।

डिकंस का 'द' टेल ऑफ टू सिटीज़' फ्रेंच क्रान्ति का ऐसा उपन्यास है, जिसमें मानवीय भावना भरपूर पायी जाती है। डेनिस व्हीटले का 'राइज़िंग स्टार' जबकि बिना आँसू बहाये फ्रेंच क्रान्ति का पतन' है। ऐसे उपन्यास पाठकों को उबाते ही हैं। मैं फिर कहना चाहता हूँ कि एक उपन्यास का यह आवश्यक गुण होना चाहिए कि वह पाठकों को रोचक लगे।

एक बार अलेक्ज़ेंडर डयूमा का एक नाटक खेला जा रहा था। डयूमा स्वयं दर्शकों के बीच बैठा था। जब उसने दर्शकों में से दो आदमियों को नाटक के दरमियान बात करते देखा, तो उसने घर जाकर वह सीन ही बदल दिया। उसका सिद्धान्त था कि जब नाटक या कथा का कोई भाग लोगों को उबा देने-वाला सिद्ध हो तो उसका न लिखा जाना ही बेहतर है।

आजकल मनोवैज्ञानिक कहे जानेवाले उपन्यासों को लिखने का चाव दृष्टिगोचर होता है। शायद फ्रयड के शिष्यों ने यह फैशन चलाया। उपन्यास नायक या नायिका की उस समय की मानसिक स्थिति का चित्रण करना चाहते हैं, जबकि वे अनन्त रहस्य, शंका, वहम या दिवास्वप्न में उलझे हों। पाठक को मुख्य भाव जानने के लिए पृष्ठ-पर-पृष्ठ पढ़ते ही चला जाना पड़ता है। ये रचनाएँ किसी रोगी या नाजुक मन की उपज होती हैं अथवा ऐसे ही लोगों के लिए लिखी जाती हैं। आधुनिक समाज में अकर्मण्य धनिक अथवा मौज-शौक में समय बितानेवाली महिलाओं का बहुधा ऐसा मन पाया जाता है। मैं इन रचनाओं को वस्तुतः उपन्यास मानने को तैयार नहीं।

अधिक बिक्री की दृष्टि से कई उपन्यास तथाकथित यौन-समस्याओं को लेकर लिखे जाते हैं। वास्तव में निम्नस्तर का निरंकुश विलास ही इनमें झलकता है। वह भोग, और विशेषकर परस्त्री-भोग की झांकी देखने को ही प्रोत्साहित करता है। यह सही है कि मानव जीवन में यौन-भावना का महत्व है; प्रेम एक शक्तिशाली प्रेरक तत्व है, कभी-कभी तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

> ब्रह्म-शक्ति के बिना क्षत्र-शक्ति नहीं बढ़ती और क्षत्र-शक्ति के बिना ब्रह्म-शक्ति नहीं बढ़ती। परस्पर मिली हुई ब्रह्म-शक्ति और क्षत्र-शक्ति ही इस लोक और परलोक में वृद्धि को प्राप्त होती है।
>
> —मनुस्मृति

सर्वाधिक शक्तिमान तत्व। इसलिए जीवन के सही चित्रण में उसका उचित स्थान है। परन्तु कामुकता को उत्तेजित करनेवाले साहित्यिक कौशल्य से लिखे गये वर्णन उपन्यास नहीं बन सकते, चाहे उनके पढ़नेवालों की संख्या कितनी ही हो!

इस प्रकार की यौन प्रधान कथाएँ लिखनेवाले पश्चिम के अधिकांश लेखकों का एक संप्रदाय सा बन गया है, और अन्य विषयों की भांति, हमारे लेखक भी पश्चिम की नकल करते हैं। पाठकों में ऐसी रचनाएँ लोकप्रिय इसलिए की जाती हैं कि उनसे एक प्रकार के मानसिक विलास की तृप्ति होती है। उनमें कुछ भी सुन्दर, मानवीय या उदात्त नहीं होता, हाँ, यौन-भावना का उद्दीपन ही सृजनात्मक-कला का सर्वोच्च लक्ष्य हो तो बात अलग है।

मेरी तो समझ में ही नहीं आता कि 'लेडी चेटरलीज़ लवर' या 'लोलिता' पर आलोचक इतने मुग्ध कैसे हो गये। उनकी लेखन शैली निसन्देह सुन्दर है, परन्तु उनमें एक रुग्ण और कामुक मन की कामना ही झलकती है। बहुत से स्वतंत्र देशों में अनैतिक बौद्धिकवादी सांस्कृतिक आज़ादी के लिए अपने अधिकारों की मांग करते हैं, जिसका अर्थ है यौन-विवरणों से विकृत आनन्द प्राप्त करने की छूट!' 'लेडी चेटरलीज़ लवर' उनके विद्रोह का झंडा है।

ऐसी पुस्तकों पर प्रतिबंध लगाने के लिए न्यायालयों की मज़ाक उड़ायी जाती है या उन्हें धमकाया या समझाया जाता है। शब्दों की जादूगरी द्वारा यह सिद्ध करने की कोशिश की जाती है कि सभी यौनप्रधान साहित्य अश्लील नहीं। सौभाग्य से भारत के सर्वोच्च न्यायालय और दूसरी अदालतें तथा अन्य देशों की सरकारों ने इस दलील को मानने से स्पष्ट इनकार कर दिया है। कई देशों में पायी जानेवाली कामुकता की इस अराजकता से तो प्रतीत होता है कि प्राचीन स्पार्टा की तरह खुले आम यौनाचार ही शायद सभ्यता का चिह्न एक दिन माना जाने लगे।

मेरे मन में इस बात के लिए कोई संदेह नहीं कि किसी प्रकार का निरंकुश यौवनाचार, चाहे वह समानलिंगी हो या पर लिंगी, परिवार को भंग करता है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विवाह की पवित्रता को नष्ट करता है। इसलिए वह एक सामाजिक और नैतिक खतरा है। मानव के आध्यात्मिक विकास के लिए भी वह खतरनाक और वैवाहिक जीवन की सुरक्षित आत्मीयता को भी वह नष्ट करता है। जो भी इस अनिष्ठ को आकर्षक बनाता है, वह अंततः सामाजिक सुरक्षा और व्यक्ति की प्रतिष्ठा को नष्ट करता है। निर्बाध यौनाचार से भरे कामुक विवरणों को चित्रित करनेवाली कोई कृति चाहे कितनी ही कलात्मक हो, वह समाज और नैतिकता की शत्रु है, आध्यात्मिक विकास को रोकती है और इसलिए अश्लील ह।

जैसाकि मैंने कहा, उपन्यास में यौन-भावना के निरूपण का मैं विरोधी नहीं हूँ। परन्तु कसौटी यह है कि क्या रचना सुन्दर है? क्या उससे संवादिता का प्रभाव उत्पन्न होता है? क्या उससे परिपूर्णता की भावना मुझमें आती है? उसे पढ़ने के बाद क्या मैं अपने को बेहतर अनुभव करता हूँ? यदि मुझे जीवन के तथ्यों के बारे में ही पढ़ना हो तो मैं जूल्स रोमें का 'द बोड़ीज़ रैप्चर' पढ़ना पसन्द करूँगा, जिसमें यौन जीवन का स्पष्ट आलेखन अपूर्व सौन्दर्य के साथ हुआ है।

आधुनिक जीवन जनमाध्यम और विज्ञापन की कला से अत्यन्त प्रभावित है। अधिकांश लेखकप्रचार के मोह में पड़ जाते हैं। कई बार अधिकृत योजनाओं अथवा पूर्वनिश्चित हेतुओं के प्रचार का साधन उपन्यासों को बनाया जाता है। परन्तु किसी सुरुचिपूर्ण व्यक्ति के लिए ऐसा प्रचारात्मक साहित्य अपच्य और सुन्दर ही होगा, जैसा कि रूस में हुआ है।

> जब मैं प्रथम बार कोई उत्तम पुस्तक पढ़ता हूँ तो किसी नये मित्र से भेंट हो गयी है, ऐसा अनुभव करने लगता हूँ और पहले पढ़ी हुई पुस्तक जब दुबारा पढ़ता हूँ तो पुराने मित्र से पुनः भेंट हो गयी है, ऐसा लगने लगता है।
>
> —ऑलिवर गोल्डस्मिथ

रूस में सरकार इसके लिए सचेष्ट है कि साम्यवाद का गुण गानेवाले उपन्यास ही लिखे जायँ और लेखक उसके प्रचार का माध्यम बने। राज्यभय में अधिकांश लेखकों को अपना कौशल राज्य को बेच देना पड़ता है। फिर भी उनमें से कई यह भी अनुभव किये बिना नहीं रहते कि ऐसा करने से वे अपने जीवन के ध्येय से परे हट गये हैं। इसलिए कई प्रभावशाली लेखक जो प्रकट तो साम्यवाद का गुणगान करते हैं, छुपे-छुपे अपनी कलात्मक चेतना की संतुष्टि भी करते पाये जाते हैं। सैकड़ों पांडुलिपियाँ हाथों-हाथ वितरित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होती हैं और गुप्त बैठकों में पढ़ी जाती हैं।

इस अंधकारपूर्ण पृष्ठभूमि में पैस्तरनक का 'डा. ज़िवागो' एक उज्ज्वल अपवाद है। यह प्रचारात्मक नहीं है, न यह साम्यवाद पर प्रहार करने के लिए लिखा गया है। समसामयिक जीवन को उसमें संपूर्ण उदात्तता, करुणा और निराशा के साथ प्रस्तुत किया गया है। खाली जीवन पद्धति एक प्रतिभाशाली लेखक की सृजनात्मक कला से निन्दनीय प्रकट होती है।

वास्तविक सौन्दर्य जीवन से पलायन नहीं है। साथ ही वास्तविक सौन्दर्य कीचड़ में लोटना भी नहीं है। यदि एक उपन्यास को सुन्दर कृति होना है, तो उसे जीवन का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करने जितना वास्तविक तो होना ही होगा। साथ ही उसे लेखक के मन की आंतरिक समृद्धि के रंगों में चित्रित भी होना चाहिए।

चालीस साल पहले जो मैंने कहा था, वह आज भी मेरे लिए सत्य है। एक सच्ची कलाकृति की रचना युग के प्रचलित प्रवाह अथवा समकालीन आचरण को संतुष्ट करने के लिए नहीं होना चाहिए। आज जब राज्य अथवा सस्ती सनसनी की भूखी विशाल जनता यह निर्णय करती है कि क्या लिखा जाना चाहिए, तब यह चेतावनी उचित जान पड़ती है।

किसी कलाकृति का सुन्दर होना अत्यन्त आवश्यक है, अर्थात् उसे जीवन की कुरूपता से हमें उबारना चाहिए, हमारी भावनाओं को पवित्र कर हमें जीवन में एक परिपूर्णता की भावना का अनुभव कराना चाहिए। एक सच्चे उपन्यास के लिए आवश्यक है कि वह पाठकों को जीवन के सौन्दर्य से प्रभावित करे। उच्च सृजनात्मक शक्ति जिनके पास नहीं है, ऐसे कलाकार इस आदर्श को भले ही न पहुँचे, परन्तु कोई भी कलाकृति जो इस आदर्श की ओर उन्मुख नहीं है, असफल ही कही जायेगी।

आपका

कन्हैयालाल मुन्शी

★

आदर्शवाद आने वाले कल का यथार्थवाद है। आदर्शवाद वह योग्यता है, जिसके ज़रिए यह जाना जा सके कि आने वाले दिन के बाद या वर्ष के बाद जो दिन आएगा उसके लिए क्या अच्छा है और उसके मुताबिक़ अपने को कैसे बदला जा सकता है।

—— जवाहरलाल नेहरू

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाम संकीर्तन

प्रीति लगी तुव नाम की,
पल बिसरै नाई
नजर करौ मेहर की,
मोहि मिलौ गुसाँई।

बिरह सतावै हाय अब,
जिव तड़पै मेरा,
तुम देखन को चाव है,
प्रभु मिलौ सबेरा।

नैना तरसे दरस को,
पल पलक न लागै,
दर बन्द दीदार का,
निसि-बासर जागै।

जो अब के प्रीतम मिले,
करूँ निमिष न न्यारा,
अब कबीर गुरु पाइया,
मिला प्रान पियारा।

— संत कबीर

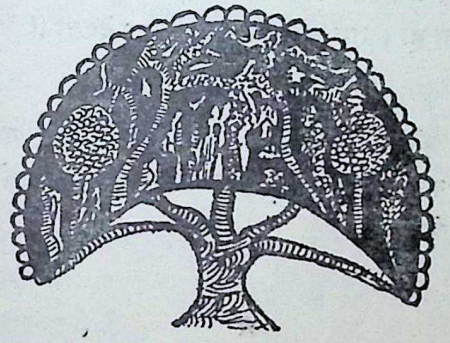

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

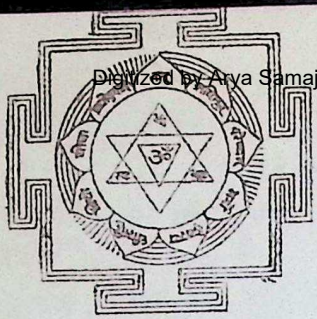

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ वेद वाणी ॥

अग्नि की ऋचा

ओ ज्वाला, ओ परम पावनकारी, अपनी उल्लास की जिह्वा से हमारे पास देवताओं को लाओ, ओ देवता, और उनके प्रति यज्ञ करो।

तुम उज्ज्वलता का वर्षण करते हो, वैभवशाली और अनेकरूपा है तुम्हारी दीप्ति। हम तुम्हारी कामना करते हैं, क्योंकि हमारे सत्य के जगत का दर्शन तुम्हारे भीतर विद्यमान है। देवताओं को अपने अवतरण के लिए हमारे पास लाओ।

ओ दृष्टा, हमारे यज्ञों के अभियान में हम तुम्हारे प्रकाश और तुम्हारी विराटता को प्रज्ज्वलित करते हैं। वह तुम्हीं हो, जो यज्ञों का वहन करते हो, उनकी यात्राओं में।

जो याजक अपने आनन्द की सुरा नितारता है, उसके लिए, ओ ज्वाला, पूर्ण ऊर्जा लाओ। देवताओं के संग आत्मा की परिपूर्णता के आसन पर बिराजो।

ओ अग्नि, तुम जलते हो ऊँचाइयों में और वर्धन करते हो दिव्य विधान का। सहस्रधा सम्पदाओं के तुम विजेता हो। तुम सन्देशवाहक हो उन देवताओं के, जो दिव्य शब्द के स्वामी हैं।

आज अपनी यज्ञ-यात्रा को अविराम आगे बढ़ने दो। तुम्हारा यज्ञ सारे ही ईश्वरीय विग्रहों को अवतरित करेगा। अपनी आत्मा का आसन बिछाओ, ताकि वे देवता उस पर आसीन हो सकें।

प्रस्तुति : ऐन्द्रिला

—ऋग्वेद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

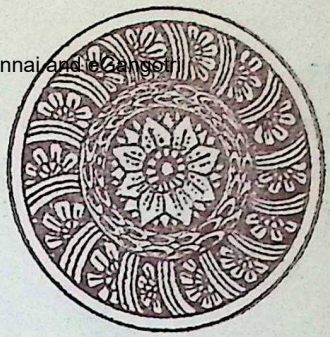

॥ उपनिषद् प्रवचन ॥

वह परात्पर पुरुष

ऐसा है सत्य का स्वरूप : जैसे प्रज्ज्वलित अग्नि से समान रूप वाली हज़ारों चिनगारियाँ उत्पन्न होती हैं, उसी प्रकार, मेरे मित्र, उस एक अविनाशी के भीतर से अनेक प्राणी जन्म लेते हैं, और फिर वहीं लौट जाते हैं।

दिव्य और अमूर्त है वह पुरुष। वह बाहर है और भीतर है, वह अजन्मा है और उज्ज्वल है। वह प्राण और मन से भी परे है। वह परम अविनाशी से भी परात्पर है।

उसी में से प्राण, मन और इन्द्रियाँ जन्म लेते हैं। उसी में से अवकाश, प्रकाश, वायु और जल प्रकट होते हैं। उसी में से वह पृथिवी उत्पन्न होती है, जो सबको प्रश्रय देती है।

अग्नि उसका मस्तक है, चन्द्र और सूर्य उसकी आँखें हैं, दिशाएँ उसके कान हैं, प्रकाशित वेद उसकी वाणी हैं, वायु उसका श्वास है, विश्व उसका हृदय है, और उसके चरणों में से पृथ्वी प्रकट हुई है। वही सारे भूतों का अन्तर-आत्मा है।

उसी में से अनेक देवता जन्म लेते हैं, उसी में से मनुष्य और पशु-पक्षी आते हैं। उसी में से जीवन का श्वांस अन्न-धान्य, तप और श्रद्धा, सत्य, ब्रह्मचर्य और धर्म विधान प्रकट होते हैं।

उसी में से सारे समुद्र और पर्वत प्रकट होते हैं। उसी में से सारी नदियाँ बहती हैं। उसी में से सारी वनस्पतियाँ और उनके रस उत्पन्न होते हैं, जिनके द्वारा अन्य तत्त्वों के साथ यह अन्तर–आत्मा पोषण पाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केवल वह पुरुष ही यह सारा विश्व-ब्रह्माण्ड है। सारे यज्ञ और तप वही है यह सब कुछ ब्रह्माड है, परमतम और अमृतस्वरूप। हृदय की गुहा में जो छुपा है, उसे जो जानता है, मेरे मित्र, वह इस पृथ्वी पर ही अज्ञान की ग्रन्थि को विच्छिन्न कर देता है।

प्रस्तुति : ऐन्द्रिला — मुण्डकोपानिषद्

कैसा भय !

एक सैनिक अधिकारी अपनी नव विवाहिता पत्नी के साथ समुद्री यात्रा कर रहा था। अकस्मात् एक भयानक तूफ़ान आ गया। सागर की लहरें आसमान छूने लगीं। ऐसा प्रतीत होने लगा, मानो सामने साक्षात् मौत खड़ी हो। सभी भय से कांपने लगे। किन्तु सैनिक के चेहरे पर भय का लेशमात्र भी चिह्न नहीं था, वह सम्पूर्ण स्वस्थता के साथ खड़ा रहा।

उसकी पत्नी ने साश्चर्य पूछा, 'इस भयानक तूफ़ान में भी तुम्हें जरा भी डर नहीं लग रहा है !'

सैनकि ने एक क्षण अपनी पत्नी के सामने देखा और झटके के साथ अपनी रिवाल्वर उसके सामने तानते हुए बोला, 'क्या तुम्हें मुझसे भय लग रहा है ?'

'नहीं तो !'

'क्यों ?'

'क्या आप मेरे दुश्मन हैं, जो आपके हाथ में रिवाल्वर देख कर डर जाऊँ !'

रिवाल्वर नीचे करते हुए सैनिक ने कहा, 'जिस प्रकार मेरे हाथ में रिवाल्वर थी, उसी प्रकार भगवान के हाथ में तूफ़ान है। तुम जिस प्रकार मुझे अपना समझ कर मेरे रिवाल्वर से नहीं डरीं, उसी प्रकार मैं भगवान को अपना समझता हूँ। इसलिए भगवान से कैसा भय ! वह जो करेगा, वह हमारे शुभ के लिए करेगा।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बोध कथा

दूसरों के दोष मत देखो

एक वक्त ख्वाजा हसन नदी के किनारे टहल रहे थे। तभी एक एकांत स्थल पर उन्होंने स्त्री-पुरुष का एक जोड़ा देखा, जिनके पास एक बोतल भी रखी थी। राजा ने मन में सोचा कि ये लोग दुराचारी हैं, इनसे मेरा चरित्र बहुत ऊँचा है। ख्वाजा के चेहरे पर से वह आदमी उनके मनोभाव समझ गया, परन्तु चुप रहा। इतने में नदी में जाती हुई एक नौका तेज़ आँधी से उलट गयी और उसमें बैठे हुए सात आदमी जल में डूबने लगे। वह आदमी तुरन्त ही नदी में कूद पड़ा, और एक के बाद एक छः आदमियों को उसने बाहर निकाला। जब सातवें को निकालने लगा, तो ख्वाजा से उसने कहा 'ख्वाजा साहब, यदि आप परोपकारी हैं, तो कम से कम इस सातवें की तो सहायता करें। आप समझते हैं कि दुनिया में सभी लोग बदमाश हैं, केवल मैं ही अच्छा हूँ। यही अभिमान आप को डुबायेगा। आपने जो मेरे प्रति शंका की, वह निराधार थी। यह स्त्री मेरी बहन है, और उस बोतल में शराब नहीं, पानी भरा है। उसकी जरूरत इसलिए है कि हमें रेगिस्तान में से होकर गुज़रना है और पानी सदा पास में चाहिए।' ख्वाजा लज्जा से गड़ गये। तब से किसी के दोष देखना उन्होंने छोड़ दिया और उनको अपना मिथ्या अभिमान भी न रहा।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

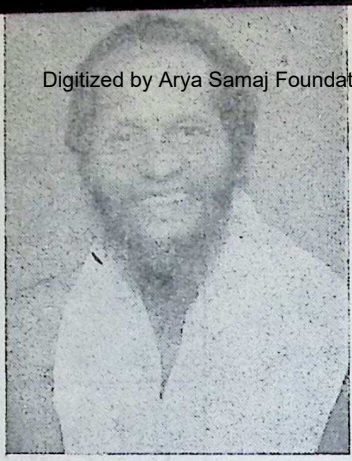

परमहंस स्वामी श्री मुक्तानन्द

बम्बई के समीप गणेशपुरी में दक्षिणावर्त अनन्य लोक-वल्लभ योगीश्वर, चितिल भगवान् श्री नित्यानन्द के सिद्धपीठ पर समय विराजमान हैं, परमहंस स्वामी मुक्तानन्द। रक्त-मांस में चिति-शक्ति साक्षात् अवतार हैं परम प्रेम-योगी स्वा मुक्तानन्द। भूतल पर ऐसे विरल ही यो होंगे, जो प्रथम मिलन में ही आपकी आत्म चिति को जगा कर, आपके रोम-रोम अमृत और शक्ति के शतधा स्रोत बहा दे परमात्मवल्लभ गुरुदेव श्री मुक्तानन्द ली की एक चितवन् मात्र में आपको नव-ज दे देते हैं। उन्हीं की अमृत वाणी य प्रस्तुत है।

स्वामी श्री मुक्तानन्द परमहंस

श्रीगुरु के प्रेम का अमोघ अमृत

प्रेम भक्ति है, और भक्ति ही प्रेम है। अपने परम प्रीतम गुरु के लिए हृदय में गहरे और निःसीम प्रेम का जागृत होना ही आत्म-प्रेम या भक्ति है। इस प्रकार की भक्ति ही उच्चतम कोटि का प्रेम है। और ऐसे प्रेम के लिए योगिक अभ्यास, पूजा, कर्म-काण्ड, स्वाध्याय आदि कि भी बाह्य उपचार की आवश्यकता न होती। जब भक्त का मन कामना रहि हो जाता है, जब सांसारिक पदार्थ आकर्षित नहीं करते, जब स्वर्गिक सु और मोक्ष तक की कामना उसके मन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तिरोहित हो जाती है, तब संपूर्ण प्रेम से उसका हृदय श्री गुरुदेव के चरण-कमलों में स्थिर हो जाता है। उच्चतम, आत्यन्तिक प्रेम की इस स्थिति को ही भक्ति कहते हैं।

इस प्रकार की भक्ति, ऐसा परम प्रेम अपने मूल रूप में ही अमृतमय होता है। हृदय की समस्त तीव्रता के साथ, श्री गुरुदेव के अतिरिक्त और किसी को प्यार न करना ही सच्चा अमृत है। श्री गुरुदेव के प्रेम से उत्पन्न होनेवाला अमृत मधुरतम होता है। जो इस दिव्य अमृत को पीता और इसका रसास्वाद पाता है, वह अमर हो जाता है।

एकनिष्ठ भक्त सदा ही श्रीगुरु के नित-नवीन और विशुद्ध प्रेम के लिए व्याकुल रहता है। उसके हृदय में और कोई कामना शेष नहीं रह जाती है। वह केवल मात्र श्री भगवान नित्यानन्द के लिए उत्कंठित रहता है। ऐसा भक्त नित्यानन्द के ही दिव्य स्वरूप का दर्शन करेगा, नित्यानन्द के ही मधुर नाम को सुनेगा, मृदु वाणी में भगवान नित्यानन्द का ही नाम उच्चारित करेगा। लेन-देन का उसका सांसारिक जीवन भी नित्यानन्द ही है। सारांश यह कि, उसकी एक मात्र कामना सद्-गुरु श्री नित्यानन्द के श्रीचरण कमलों के लिए होती है।

जब श्री गुरुदेव की कृपा से ऐसी दुर्लभ

भगवान श्री नित्यानन्द

उत्कण्ठा हृदय में जागती है, तब भक्त आनन्द की इस अवस्था का पूरा लाभ उठा कर, जिसके लिए ऋषि-मुनि तक तरसते हैं, जन्म-मरण के चक्र से मुक्त हो जाता है। ऐसे भक्त का हृदय, तब गुरुदेव का मन्दिर हो जाता है। लवलीन भक्त और परम प्रेमिक गुरु का मिलन ही अपने आप में अमरता है। यह परम प्राप्ति गुरु-भक्ति की पराकाष्ठा है।

जो भक्त गुरु के प्रेमामृत का पान कर लेता है, वही सच्चे पूर्णत्व का लाभ करता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। इस परिपूर्ण अवस्था की शक्ति अतुलनीय है: वह चमत्कारिक अष्ट-सिद्धियों से परे है। भगवान का सच्चा भक्त इन सिद्धियों की कामना नहीं करता है। वह मोक्ष तक की कामना नहीं करता है। जब सत्य, सम्पूर्ण, निखिल का मूल स्रोत प्राप्त हो जाता है, तब मन उन निम्न और अपूर्ण सिद्धियों के पीछे नहीं दौड़ता है। क्योंकि सम्पूर्ण आनन्द के प्रदेश में पहुँच कर वह पूर्ण रूप से परितृप्त हो जाता है। अपने गुरुदेव के प्रति भक्ति के बल पर भक्त, ऐसी ही परिपूर्णत्व की, परम आनन्द की अवस्था का उपयोग करता है, जिसे देवता और सिद्ध लोग भी आसानी से प्राप्त नहीं कर सकते। इस परिपूर्ति से उसकी सांसारिक कामनाएँ शान्त हो जाती हैं। वह प्रतीति पा लेता है कि सांसारिक समृद्धि, सौन्दर्य, माधुर्य, प्रेम, शक्ति, सौन्दर्य, कीर्ति और ज्ञान तथा संन्यास तक जिनके लिए अपनी-अपनी विचित्र वृत्तियों के अनुसार लोग विकल रहते हैं; आनन्द-लवलीन आत्मा के दुर्लभ प्रेम की तुलना में निरर्थक हैं। यदि कोई तीनों लोकों के सारे पदार्थों को भी एकत्रित कर ले तब भी उनसे मिलने वाला सुख भगवान नित्यानन्द के परमानन्द-सागर की एक बिन्दु की भी समता नहीं कर सकता।

लाभ में और हानि में, स्तुति में और निन्दा में, ऐसा भक्त सदा ही समान रूप से प्रसन्न रहता है। जो भक्त, अपने गुरु की सेवा में सर्वस्व चढ़ा देता है, वह अपने श्रीगुरु का प्रेम और अनुग्रह प्राप्त करने के लिए ऐसी लौ लगाये रखता है कि उसके मोक्ष की राह में कोई बाधा भी आये, तो वह उसके लिए खेद नहीं करता। उसकी एकमात्र हार्दिक उत्कण्ठा यही रहती है कि उसके गुरु के लिए उसका प्रेम सदा बढ़ता ही जाये। इस प्रकार के प्रेम और भक्ति से प्रसन्न और आकर्षित होकर स्वयम् श्री भगवान, उस भक्त के हृदय में आनन्द–वर्षी अमृत बरसाते हैं। ऐसे प्रेम से अधिक मूल्यवान और क्या हो सकता है। ऐसा भक्त फिर निरन्तर आनन्दोन्माद की अवस्था में रहता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आईनों के बिम्ब

ओ सुकुमार !
बाहों की गोलाई में
रंध्र ढूढ़ता हुआ
भटका मैं सदियों तक
मन की असंख्य वासनाओं के द्वार—
तप्त प्राण.....।

मुकुरों जलाशयों में
अपलक निहारता—
अपनी परछाईं को अर्पित हुआ बार बार।
किंतु मैं चुका नहीं;
मेरा समर्पण तपाया नहीं गया
शपथों की आंच में :
काल के गुनाहों की साखियां
निरुत्तर ही रह गयीं

केवल छायायें कुछ गूंजी—आईनों की;
फिर सहसा, पानी में—
पीपल के पत्तों-सी
दह गयीं।

—धूमिल

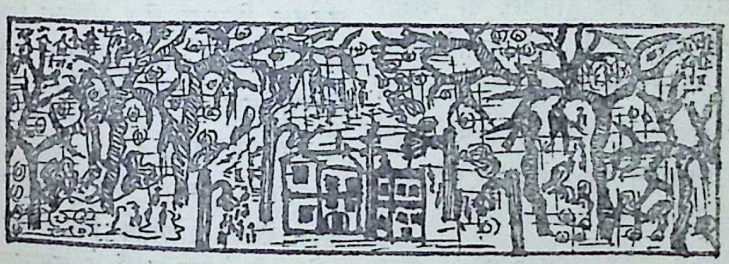

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आत्मा की अमरता : विज्ञान के प्रकाश में

● श्री भारती कृष्ण तीर्थस्वामी

जब हम कहते हैं कि आत्मा अमर है, तब उसका अर्थ यह होता है कि वह एक निश्चित और सीमित समय तक ही नहीं रहता, बल्कि उसका अस्तित्व सदैव रहता है। आइए, आत्मा की अमरता को सिद्ध करनेवाले आनुषंगिक प्रमाणों की खोज करें। गीता से ही आरम्भ करें। भगवद्गीता के द्वितीय अध्याय में, इससे सम्बन्धित कथन है—

न हन्यते हन्यमाने शरीरे।
वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयायति नवानि देही॥

"शरीर के नष्ट होने पर भी आत्मा नष्ट नहीं होता। जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रों को उतार कर फेंक देता है और नये वस्त्र धारण करता है, वैसे ही आत्मा जीर्ण शरीर को त्याग कर नये शरीर में प्रवेश करता है।"

मनुष्य का जीवन एक ही दिन का नहीं है—वह ऐसा प्राणी नहीं कि आज रहा और कल समाप्त हो गया, बल्कि वह एक अजन्मा अमर अस्तित्व है, जो अपनी निरन्तर विकसित प्रकृति और शक्तियों की वास्तविकता के ज्ञान के पथपर अग्रसर हो रहा है। उसी में सब कुछ है दिव्य ज्ञान और शक्ति की पूर्णता भी उसी म समाहित है। किन्तु मानव की इस क्षमता का उद्घाटन होना चाहिए जीवन और मरण से सम्बन्धित यही एक विषय है। मनुष्य की प्रकृति का अध्ययन इस दृष्ट से किया जाय तो, जीवन गौरवमय सबल और पवित्र बनता है।

आत्मा की अमरता को प्रमाणित करने वाले तर्कों को वैज्ञानिक प्रयोगों-द्वारा भी समर्थन मिलता है। भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में किये गये कतिपय प्रयोगों से आध्यात्मिक चिन्तन और विचार-विमर्श में मदद मिलती है।

भौतिक विज्ञान और अध्यात्म-विद्या के न केवल प्राकृतिक नियम एक से हैं बल्कि दोनों कई बातों में समानान्तर भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो कुछ इस सृष्टि में है, वह अनश्वर है और जो अनश्वर है, उसे मिटा कौन सकता है? क्या यह अनश्वरता का वही सिद्धान्त नहीं है, जो भौतिक विज्ञान ने पदार्थ के सम्बन्ध में प्रतिपादित किया है?

चलते हैं। भौतिक विज्ञान प्रकृति के दो महान् सत्यों का परिचय देता है– पदार्थ की अनश्वरता और ऊर्जा का परिरक्षण। इसे स्पष्ट करने के लिए हम एक उदाहरण लें।

आप सभी जानते हैं कि बढ़ई क्या करता है। आप सबको मालूम है कि परमात्मा ने लकड़ी की सृष्टि की। लकड़ी काटने के प्रायः सभी औज़ार लोहे से बनते हैं। औज़ारों का लोहा भी उसी परमेश्वर की रचना है, जिसने अन्य धातुएँ बनायीं। धातुएँ काटने के नियम व सिद्धान्त भी उसी के द्वारा निर्मित हैं।

लकड़ी से सभी कुछ बनता है– कुर्सियाँ, मेज़ें, तिपाइयाँ, बैन्चें, आलमारियाँ, दरवाज़े, खिड़कियाँ तथा चौखटे आदि। यदि लकड़ी की बनी चीज़ों की नामावली तैयार की जाय तो बहुत लम्बी होगी। ये सभी चीज़ें ऊपर-ऊपर कितनी भिन्न दिखायी देती हैं, लेकिन वास्तव में, वे तत्वतः एक हैं। केवल उनकी आकृति, स्थान, एवं नाम अलग-अलग हैं।

कुछ भी बदला नहीं है। परमात्मा की रची सभी वस्तुएँ ऐसी ही बनी रहती हैं।– वे नष्ट नहीं होतीं, केवल एक क्षणिक परिवर्तन हो जाया करता है। शक्ति के परिरक्षण के सिद्धान्त से भी यही स्पष्ट है। शक्ति अथवा ऊर्जा के दो प्रकार हैं– गतिक और स्थितिक। वैज्ञानिकों ने प्रयोगों-द्वारा सिद्ध कर दिया है कि किसी पदार्थ में ये दोनों शक्तियाँ गतिक और स्थितिक, परिमाण में समान होती हैं। इसे और स्पष्ट रूप से समझने के लिए एक सामान्य उदाहरण लें।

मान लीजिए, मैं एक गेंद उठाता हूँ, और मेज़पर रखता हूँ। अब बताइये कि वह शक्ति जो गेंद को मेज़ पर रखने में क्षीण हुई कहाँ है? क्या वह नष्ट हो गयी? क्या वह सदा के लिए समाप्त हो गयी? विज्ञान कहता है– नहीं, गेंद को उठाकर मेज़पर रखने में जो शक्ति व्यय हुई वह गतिक ऊर्जा थी। लेकिन, यह नष्ट न होकर मेज़ पर गेंद को नयी स्थिति देने में लगी और वास्तव में, वह इसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूप में संचित है। गेंद ने उसे स्थितिक शक्ति के रूप में प्राप्त कर लिया है और यही स्थितिक ऊर्जा, गतिमूलक ऊर्जा के रूप में उस समय परिणत हो जायगी, जब गेंद किसी प्रकार मेज़ से गिरेगी। गिरने की प्रक्रिया में भी एक प्रकार की सक्रियता है। इसी प्रकार, वे तमाम मशीनें, हम चलते और इतने वेग और शक्ति से वस्तुओं का निर्माण करते देखते हैं, उन वस्तुओं और पदार्थों से गति मूलक ऊर्जा प्राप्त करती हैं, जो अपने में स्थिति ऊर्जा लिए हुए होती हैं।

आप मिट्टी का तेल जलाइए और देखिए कि मशीन चलने लगती है। मिट्टी के तेल अथवा पेट्रोल में जो स्थितिक ऊर्जा थी वही परिवर्तित हो गयी गतिक ऊर्जा के रूप में, जिसकी सहायता से मशीनें चलने लग गयीं।

परमेश्वर ने ही विश्व में ऊर्जा की सृष्टि की है। इसका कभी कोई रूप होता है, कभी कोई। आप इसका रूप बदलते हैं और इसे अलग-अलग नाम देते हैं। आप इसे भाप, बिजली, अथवा चुम्बकशक्ति कहते हैं। किन्तु, ऊर्जा तो वही—है, रूप बदल गये हैं।

परमात्मा ने जल की रचना की—महा समुद्रों का जल। यह बादल बन कर उठता और वर्षा बनकर गिरता है, नदियों तालाबों और झीलों में भी वही होता है और यह वही जल है, जिसकी रचना प्रभु ने की। इसी तरह वैज्ञानिक स्पष्ट करता है कि ऊर्जा का नाश नहीं होता, उसकी शकलें बनतीं और बदलती हैं। एक जगह अभी उसे मिलती और फिर दूसरी जगह वही होती है। इसके रूप और नाम भिन्न होते हैं, किन्तु वह होती एक ही है। यह नष्ट नहीं हुई, केवल उसने शकलें बदल लीं। यही ऊर्जा के परिरक्षण का सिद्धान्त है।

रासायनिक सारूप्य के अभिव्यंजक समीकरण से भी स्पष्ट हो जाता है कि किस प्रकार एक ओर होनेवाली रासायनिक प्रतिक्रिया, समान रूप से दूसरी ओर भी होने लगती है और किस प्रकार दोनों ओर रासायनिक पदार्थ समान होते हैं। उदाहरण के लिए यह समीकरण लें—

$$Z_nO + H_2SO_4 = ZNSO_4 + H_2O$$

जब सल्फ़रिक एसिड, ज़िन्क आक्साइड पर पड़ता है, तब जो रासायनिक पदार्थ बनते हैं वे हैं— ज़िन्क सल्फ़ेट और पानी। दोनों ओर, पदार्थों का सम्पूर्ण आणविक भार एक ही होगा। केवल दाहिने और बाएँ कुछ पदार्थों के आकार, रूप और स्थान मात्र बदल जायँगे। अतः उनके भिन्न नाम भी होंगे। वह पदार्थ, जिसने इन वस्तुओं को रूप और नाम प्रदान किया अक्षुण्ण रहेगा।

आधुनिक विज्ञान हमें बतलाता है कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न तो पदार्थ की रचना की जा सकती है, न इसका विनाश ही संभव है। हज़ारों वर्ष पूर्व, भगवान कृष्ण के वचन से, हमें यह ज्ञान प्राप्त हो चुका था—

नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः।

"जिसका अस्तित्व नहीं है, वह संभव भी नहीं है। जो है, उसका अस्तित्व मिटाया भी नहीं जा सकता।"

जो कुछ इस सृष्टि में है वह अनश्वर है और जो अनश्वर है, उसे मिटा कौन सकता है? क्या यह अनश्वरता का वही सिद्धान्त नहीं है, जो भौतिक विज्ञान ने पदार्थ के सम्बन्ध में प्रतिपादित किया है?

हमारा प्रश्न है—जन्म के पहले हम थे या नहीं? और मरण के पश्चात् हम होंगे या नहीं? इस प्रश्न का उत्तर स्वतः एक दूसरे प्रश्न—द्वारा मिल जायगा— क्या अभी हमारा अस्तित्व है, या नहीं?

इस प्रश्न पर कई रीतियों से विचार किया जा सकता है। संस्कृत में जन्म का अर्थ है— 'जनि प्रादुर्भावे', अर्थात् जन्म में, जो पीछे है, वही प्रादुर्भूत हो जाता है— सामने आ जाता है। इसका अर्थ हुआ कि एकाएक कोई वस्तु अस्तित्व में नहीं आ गयी। वह पहले भी थी, इसीलिए जन्म लेकर सामने है—ऐसा नहीं कि वह नहीं थी। अवश्य ही इसका अस्तित्व था। किन्तु, यह पीछे थी, परोक्ष में थी, इसलिए देखी नहीं जा सकी और अब जबकि वह सामने आ गयी है आप इसे देखते हैं।

क्या इससे बड़ा कोई दूसरा दर्शन भी है, जो आप को इस सत्य के निकट ले जाता है?

—अनु. श्रीहरि

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

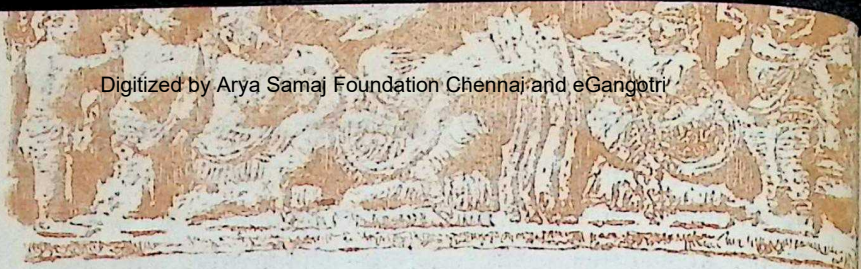

जब भगवान शंकर की कृपा से पापी कुबेर बन गया

नारद ने विनयपूर्वक ब्रह्मा को प्रणाम किया और कहा, "भगवन्! भक्तवत्सल भगवान शंकर कैलास पर कब गये और महात्मा कुबेर के साथ उनकी मैत्री कब हुई? महादेव ने वहाँ क्या किया, इसे जानने को मेरे मन में बड़ा कौतूहल है?"

ब्रह्मा ने कहा, "नारद, सुनो! मैं तुम्हारे सामने चन्द्रमौलि के चरित्र का वर्णन करता हूँ। काम्पिल्य नगर में यज्ञदत्त नाम से प्रसिद्ध एक ब्राह्मण रहते थे, जो बड़े सदाचारी थे। उनके एक पुत्र हुआ, जिसका नाम गुणनिधि था। वह बड़ा ही दुराचारी और जुआरी हो गया था। यज्ञदत्त ने अपने पुत्र का परित्याग कर दिया। वह घर से निकल कर कई दिनों तक भूखा भटकता रहा। एक दिन वह नैवेद्य चुराने के लिए एक शिव-मन्दिर में गया। वहाँ उसने अपने वस्त्र को जलाकर उजाला किया। वह मानो भगवान शिव के लिए दीप-दान हुआ।

इसके बाद वह चोरी में पकड़ा गया और उसे प्राण-दण्ड मिला। अपने कुकर्मों के कारण उसे यमदूतों ने बाँध लिया। इतने ही में भगवान शंकर के गण वहाँ आ पहुँचे और उन्होंने उसे छुड़ा लिया। शिवगणों की संगति से उसका हृदय पवित्र हो गया और वह शिव लोक में चला गया। वहाँ सारे भोगों का उपभोग तथा उमा-महेश्वर की सेवा करके कालान्तर में वह कलिङ्गराज अरिंदम का पुत्र हुआ। वहाँ उसे दम नाम से जाना गया। वह निरन्तर भगवान शिव की सेवा में लगा रहता था। वह बालकों के साथ शिव-भजन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुराण कथा

• शिवपुराण

करता। क्रमशः वह युवक हुआ और अपने पिता के परलोक-गमन के पश्चात् राजसिंहासन पर बैठा।

राजा दम चहुँओर शिव-धर्म का प्रचार करने लगे। उनका दमन करना दूसरों के लिए सर्वथा कठिन था। समस्त शिवालयों में दीपदान करने के अतिरिक्त वे दूसरे किसी धर्म को नहीं जानते थे। उन्होंने अपने राज्य में रहनेवाले समस्त ग्रामाध्यक्षों को यह आज्ञा दे रखी थी कि 'शिवमन्दिर में दीपदान करना सबके लिए अनिवार्य है। जिसके गाँव के पास जितने शिवालय हों वहाँ बिना किसी विचार के सदा दीप जलना चाहिए।, जीवन भर इसी धर्म का पालन करने के कारण राजा दम ने बहुत अधिक धर्म का संचय कर लिया। फिर वे काल-धर्म के अधीन हो गये।

दीपदान की वासना से युक्त होने के कारण उन्होंने शिवालयों में बहुत से दीप जलवाये, उसके फलस्वरूप उन्हें रत्नमय दीपों की आश्रयभूत अलका नगरी का स्वामित्व मिला। इस प्रकार भगवान शिव का आराधन समयानुसार उत्तम फल देता है, ऐसा जानकर उत्तम सुख की इच्छा रखनेवाले लोगों को शिव का भजन अवश्य करना चाहिए। वह यज्ञदत्त का पुत्र, जो पूरा अधर्मी था, दैवयोग से शिवालय में धन चुराने के लिए गया और उसने स्वार्थवश अपने ही वस्त्र को जलाकर उसके प्रकाश से शिवलिङ्ग के ऊपर का अंधेरा दूर कर दिया; इस सत्कर्म के फलस्वरूप वह कलिङ्ग देश का राजा हुआ और धर्म में उसका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुराग हो गया। फिर दीप की वासना का उदय होने से शिवालयों में दीप जलवाकर उसने यह दिक्पाल का पद पा लिया। ऐसी है शिव की महिमा।"

इसके बाद ब्रह्मा ने कहा– "अब मैं तुमसे, हे मुनीश्वर, भगवान शिव के साथ उसकी मित्रता का वृत्तान्त कहता हूँ।

"पाद्मकल्प की बात है, मुझ ब्रह्मा के मानस-पुत्र पुलस्त्य से विश्रवा का जन्म हुआ और विश्रवा के पुत्र वैश्रवण हुए। उन्होंने पूर्वकाल में अत्यन्त उग्र तपस्या के द्वारा महादेव की आराधना करके विश्वकर्मा की बनायी हुई इस अलकापुरी का उपभोग किया। जब वह कल्प व्यतीत हो गया और मेघवाहन कल्प आरम्भ हुआ, उस समय वह यज्ञदत्त का पुत्र, जो प्रकाश का दान करने वाला था, कुबेर के रूप में अत्यन्त दुस्सह तपस्या करने लगा। दीपदान मात्र से मिलने वाली शिवभक्ति के प्रभाव को जानकर वह शिव की चित्प्रकाशिका काशी नगरी में गया और अपने चित्तरूपी रत्नमय प्रदीपों से ग्यारह रुद्रों को उद्बोधित करके अनन्यभक्ति एवं स्नेह से सम्पन्न हो वह तन्मयतापूर्वक शिव के ध्यान में मग्न हो निश्चय भाव से बैठ गया। जो शिव की एकता का महान अश्रय है, तपस्या रूपी अग्नि से वर्धित है, काम-क्रोधादि से शून्य है, प्राणनिरोध रूपी वायुशून्य स्थान में निश्चल भाव से प्रकाशित है, निर्मल दृष्टि के कारण स्वरूप से भी पवित्र है, ऐसे शिवलिङ्ग की प्रतिष्ठा करके वह तब तक तपस्या में लगा रहा, जब तक कि उसकी देह अस्थि-पंजर मात्र रह गयी। इस प्रकार उसने दस हज़ार बरसों तक तपस्या की। उसी बीच विशाल नयना पार्वती के साथ भगवान शंकर कुबेर के पास आये। उन्होंने प्रसन्न मन से अलकापति की ओर देखा। वे शिवलिङ्ग में मन को एकाग्र करके ठूंठे काठ की भाँति स्थिर बैठे थे। भगवान शिव ने कहा– "अलकापते। मैं वर देने के लिए उद्यत हूँ। तुम अपना मनोरथ बताओ।"

यह वाणी सुनकर तपस्या के धनी कुबेर ने ज्यों ही आँख खोलकर देखा, त्यों ही उमावल्लभ भगवान नीलकण्ठ सामने खड़े दिखायी दिये। वे उदयकाल के सहस्रों सूर्यों से भी अधिक तेजस्वी थे और उनके मस्तक पर चन्द्रमा अपनी चाँदनी बिखेर रहा था। भगवान शंकर के तेज से कुबेर का तेज प्रतिहत हो गया और वे नेत्र बन्द करके मनोरथ से भी परे विराजमान देवदेवेश्वर शिव से बोले– "नाथ! मेरे नेत्रों को वह दृष्टि-शक्ति दीजिए जिससे आप के चरणारविन्दों का दर्शन हो सके। स्वामिन्! आपका प्रत्यक्ष दर्शन हो यही मेरे लिए सबसे बड़ा वर है। दूसरे किसी वर से मेरा क्या प्रयोजन है। चन्द्रशेखर! आपको नमस्कार है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुबेर की यह बात सुनकर देवाधिदेव उमापति ने अपनी हथेली से उनका स्पर्श करके उन्हें देखने की शक्ति प्रदान की। दृष्टिशक्ति मिल जाने पर यज्ञदत्त के उस पुत्र ने आँखें फाड़फाड़ कर पहले पार्वती की ओर ही देखना आरम्भ किया। वह मन ही मन सोचने लगा, 'भगवान शंकर के समीप यह सर्वाङ्ग सुन्दरी कौन है? इसने ऐसा कौन-सा तप किया है, जो मेरी तपस्या से भी बढ़ गया है। यह रूप, यह प्रेम, यह सौभाग्य और यह असीम शोभा– सभी अद्भुत हैं।' वह ब्राह्मण-कुमार बार-बार यही कहने लगा। जब बारम्बार यही कहता हुआ वह क्रूर दृष्टि से उनकी ओर देखने लगा, तब वामा के अवलोकन से उसकी बाँयी आँख फूट गयी। तब देवी ने भगवान से कहा– 'प्रभो! यह दुष्ट तपस्वी निरन्तर मेरी ओर देख कर क्या बक रहा है? आप मेरी तपस्या के तेज को प्रकट कीजिए।' देवी की यह बात सुनकर भगवान शिव ने हँसते हुए उनसे कहा– 'उमे! यह तुम्हारा पुत्र है। यह तुम्हें क्रूर दृष्टि से नहीं देखता, यह तो तुम्हारी तपःसम्पत्ति का गान कर रहा है।'

देवी से ऐसा कहकर भगवान शिव पुनः उस ब्राह्मण–कुमार से बोले– 'वत्स! मैं तुम्हारी तपस्या से प्रसन्न होकर तुम्हें वर देता हूँ। तुम निधियों के स्वामी और गुह्यकों के राजा हो जाओ। सुव्रत! यक्षों, किन्नरों और राजाओं के भी राजा होकर पुण्यजनों के पालक और सबके लिए धन के दाता बनो। मेरे साथ तुम्हारी मित्रता सदा बनी रहेगी और मैं नित्य तुम्हारे निकट निवास करूँगा। मित्र! तुम्हारी प्रीति बढ़ाने के लिए मैं अलका के पास ही रहूँगा। आओ इन उमा देवी के चरणों में साष्टांग प्रणाम करो, ये तुम्हारी माता हैं। महाभक्त यज्ञदत्त कुमार! तुम अत्यन्त प्रसन्नचित्त हो इनके चरणों में गिर जाओ।'

वर देकर भगवान शंकर ने पार्वती से कहा– 'देवेश्वरी! इस पर कृपा करो। तपस्विनी! यह तुम्हारा पुत्र है।' भगवान शंकर की बात सुनकर जगदम्बा प्रसन्न हो उठीं और उन्होंने यज्ञदत्त कुमार से कहा– 'पुत्र! भगवान शिव में तुम्हारी भक्ति सदा बनी रहे। तुम्हारा बाँया नेत्र तो नहीं रहा, इसलिए तुम एक ही पिंगलनेत्र से युक्त रहो। मेरे रूप के प्रति ईर्ष्या करने के कारण तुम कुबेर नाम से प्रसिद्ध होओगे।'

ब्रह्मा ने कहा–"नारद! इस प्रकार कुबेर को वर देकर भगवान महेश्वर पार्वती देवी के साथ अपने विश्वेश्वरधाम में चले गये। इस प्रकार कुबेर ने भगवान शंकर की मैत्री प्राप्त की और अलकापुरी के पास कैलास-पर्वत पर भगवान शंकर का वास हो गया।"

प्रस्तुति : विमल के. गुप्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

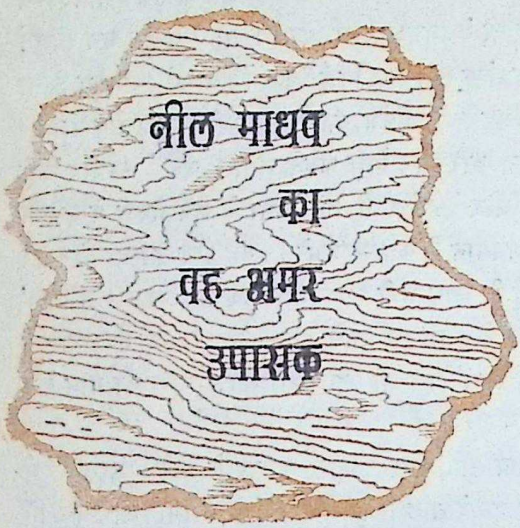

नील माधव का वह अमर उपासक

● नरेशचन्द्र मिश्र

शबर विश्वबसु के चेहरे पर पीड़ा छलक आयी, धनुष की प्रत्यंचा खिंची की खिंची रह गयी, डोर को ताने हुए तीर अब भी छूटने को उमग रहा था, किन्तु लक्ष्य का कहीं पता न था।

सामने एक अंध गुफा थीं। पुष्ट शरीर वह कालामृग वन्य झाड़ियों को कुचलता, लताओं से उलझता उसी में समा गया था। शिकारी विश्वबसु के लिए आखेट यों निकल जाने के अनेक अर्थ थे। सारे दिन की भागदौड़ अकारथ हुई, थकित शरीर कुटिया पर लौटते समय कंधे पर शिकार न देख कर उसकी लाड़ली ललिता की भोली आँखों में निराशा भर जायगी, चूल्हा नहीं चेतेगा और परिवार को भूखे पेट तारों की ओर मिचौनी देखनी पड़ेगी।

विश्वबसु ने साहस न छोड़ा और सधे पग रखता गुफा में पैठ गया। कुछ दूर जाने पर अंधेरे की आँख में चौंध भरती नीली ज्योति दिखी। विश्वबसु की आँखें झंप गयीं। वह स्तब्ध, मंत्रमुग्ध हो निहारता रह गया। अमा के कजरारे आकाश पर तीन नील नक्षत्र शोभित थे। शुभ स्फटिक की शिला पर भगवान नील माधव की मनोहारी प्रतिमा थी— सुभग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और बलराम उनके पास ही विराजमान थे।

शिकारी विश्वबसु पुष्ट शरीर काले मृग को भूल गया। वह शरीर की थकन, भूख की ज्वाला और परिवार की विभीषिका से निस्संग हो– भावविह्वल स्वर में फुसफुसाया, "माधव, आप!"

"हाँ आओ शबर, मेरे निकट आओ।" नटनागर की मन्द मुस्कान से अंधेरा और भी आलोकित हो उठा।

और मंत्र विद्ध सर्प-सा विश्वबसु एक ही छलांग में स्फटिक वेदी पर पहुँचा। अगले ही क्षण वह नील माधव के चरणों में समर्पित था। घंटों बाद चेत आने पर आखेट लोलुप विश्वबसु का कहीं पता न था। उसके स्थान पर शांत, सौम्य मुखमंडल वाला विश्वबसु जन्म ले चुका था। वह वन में एकांत उगी लताओं के पुष्प और झाड़ियों के फल तोड़ लाया– कमल के दोने में पुष्करिणी का मोतिया जल भर कर उसने नील माधव के चरण पखारे–उन्हें नैवेद्य अर्पित किया–फिर शयन आरती कर भोर की रात अपनी कुटिया की ओर वापस लौटा। ●●●

पुष्करिणी के जल की ओर झुका युवक विद्यापति स्तब्ध रह गया। अंजली में समाया जल बूंद-बूंद रिसता फिर पुष्करिणी में लौट रहा था, किन्तु विद्यापति की थकान और प्यास बिसर गयी थी। पास ही जल में आवर्त उठे थे और दूसरे ही क्षण एक कमल-सा चेहरा ऊपर उठ आया।

शबर विश्वबसु की लाड़ली ललिता ने अजाने युवक को देखा तो डुबकी मार गयी।

विद्यापति ने शीघ्रता से दो-एक घूंट जल पिया और पुष्करिणी से परे मार्ग पर आ रहा। कुछ देर में ललिता जल भरा घड़ा लिये, भीगे बालों से मोती टपकाती आयी, तो विद्यापति ने अटकते स्वर में कहा, "शुभे, पथिक हूँ, आश्रय मिलेगा?"

ललिता मुसका आयी, "मैं तो स्वयं मार्ग पर हूँ, आश्रय कैसे दूं! आप कुटिया तक आयें।"

विद्यापति कुटिया पर पहुँचा, तो शबर विश्वबसु ने पाद्य, आचमनीय, आसन और भोजन से उसका स्वागत किया।

"अतिथि देव का परिचय मिलेगा?" शबर ने नम्रता से पूछा।

"मालव नरेश इन्द्रद्युम्न का दूत हूँ, मालव-अमात्य का भाई भी।" विद्यापति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बोला, "राजाज्ञा से एक विशिष्ट प्रयोजनवश भरतखंड में विचरण कर रहा हूँ।"

"गुप्त न हो तो मैं भी वह प्रयोजन जान लूं।"

"मालव राज को किसी एकांत, अद्वितीय तीर्थ की खोज है, जहाँ वे देवालय का निर्माण करा सकें। किन्तु मैं अब तक उनके संकल्प योग्य तीर्थ का दर्शन नहीं कर पाया।" युवक विद्यापति हँस पड़ा, "अवश्य इस अन्वेषण में भरतखंड की तीर्थ-यात्रा हो गयी।"

शबर स्नेहसिक्त स्वर में बोला, ',आप की यात्रा यहीं पूर्ण होगी। नील माधव ने ही आप को प्रेरित किया है। मैं वर्षों से गुफा-निवासी माधव की सेवा कर रहा हूँ। क्या आप उस भुवन मोहन मूर्ति के दर्शन करेंगे।"

विद्यापति ने स्वीकृति में सर हिलाया और सांध्य आरती के समय वह शबर के साथ नील माधव गुफा में पहुँचा तो, उत्साह भरे स्वर में बोला, "शबर राज तुम धन्य हो, तुमने मेरा उद्देश्य सिद्ध कर दिया। मैं शीघ्र ही मालवराज के साथ लौटूंगा।"

●●

मालवराज ने शिविर से बाहर हरियाली उपत्यकाओं की ओर निहारा, "यह समस्त उत्कल प्रदेश ही अभिराम है विद्यापति!"

और नीलमाधव गुफा तो अत्यन्त रमणीय है महाराज, कल प्रातः दर्शन करेंगे तो आप मुग्ध हो जायेंगे।"

महाराज ने सहमति में सिर हिलाया फिर उनकी भवें तन गयीं, "किन्तु तुम कहते थे कि एक शबर भगवान के विग्रह का पुजारी है।"

"हाँ, देव!"

"यह तो अधर्म है।" इन्द्रद्युम्न के चेहरे पर रोष उभर आया, "शबर, किरात आदि अस्पृश्य हैं, चतुर्थ वर्ण हैं। वह शबर भगवान की मूर्ति का स्पर्श कर पातक बढ़ा रहा है। हमें उसे तत्काल हटाना होगा।"

अगली भोर गुफा के द्वार पर अस्पृश्य शबर ने मालवराज का स्वागत किया।

"तुम यहीं रहो। हम स्वयं नीलमाधव के दर्शन कर लेंगे।"

"जो आज्ञा देव।" विश्ववसु ने महाराज के मुखमंडल पर उभरी घृणा की रेखाएं पढ़ीं और नतमस्तक एक ओर हट गया।

मालवराज ने अन्दर प्रवेश किया।

"दर्शन करें देव यह हैं नील माधव..."

विद्यापति का वाक्य अधर में ही घुट गया। स्फटिक वेदिका सूनी थी। नटनागर नीलमाधव वहाँ नहीं थे—सुभद्रा और रेवती पति भी नहीं थे।"

मालवराज ने रुष्ट नेत्रों युवक राजदूत की ओर निहारा, "यहाँ तो कोई मूर्ति नहीं है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मूर्ति थी—इसी वेदिका पर।" विद्यापति ने विश्वस्त स्वर में कहा, "मैं स्वयं उस भव्य विग्रह के दर्शन कर गया हूँ।"

"तो अब वह कहाँ है?"

"क्षमा करें देव, वह अब भी वेदिका पर है, किन्तु रुष्ट माधव ने हमारे नेत्रों पर माया की जवनिका डाल दी।

"क्यों हम से क्या अपराध बन पड़ा?"

"आप ने भक्तराज विश्ववसु के प्रति दुर्भावना प्रदर्शित की। आप की भेद दृष्टि ने वर्ण और जाति का विषेक किया, किन्तु समदर्शी माधव शवरराजकी निष्ठा में बंधे हैं।"

इन्द्रद्युम्न को बोध हुआ। वह झपट कर बेदिका पर सिर पटकते विह्वल हो गये, "प्रभु, पुराण पुरुष! क्षमा कर दो हमें। हमारे नेत्र वर्षों से तुम्हारी श्यामल छबि निहारने को व्याकुल हैं। हम उस भक्त शवर के प्रति नत मस्तक हैं माधव!"

और विह्वल मालवराज को अंतर्वाणी सुनायी दीं, "शवर विश्ववसु की धमनियों में मेरा ही चरषोदक प्रवाहित है। तुम अपनी अवज्ञा का प्रायश्चित्त करना और समुद्र तट पर देवालय का निर्माण करवाना। मैं अब यहाँ नहीं रहूँगा। मेरा अन्तिम दर्शन कर लो। कल समुद्र तट पर तुम्हें काष्ठ खंड मिलेगा। तुम उसी से मेरे विग्रह का निर्माण कराना।"

इन्द्रद्युम्न ने आँख खोली तो नीली, ज्योति के बीच भगवान नीलमाधव विहँस रहे थे। दूसरे ही दिन समुद्र तट पर जा कर उसने काष्ठ खंड से भगवान जगन्नाथ की मूर्ति का निर्माण करवाया।

शवर विश्ववसु से क्षमा प्रार्थना हेतु उसने ब्राह्मण विद्यापति के साथ ललिता का विवाह कर दिया। आज भी भगवान जगन्नाथ के पुरोहितों के रूप में विद्यापति और ललिता का वंशवृक्ष पल्लवित है।

*

काव्य और प्रेम दोनों नारी-हृदय की सम्पत्ति हैं। पुरुष विजय का भूखा होता है, नारी समर्पण की। पुरुष लूटना चाहता है और नारी लुट जाना।

—महादेवी वर्मा

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह मर्त्य नारी, जो अमर देवी बन गयी

केरल की लोक-कथा

● वी. शिवराम कृष्णन्

मक्कमवाई ने कडाकोट के एक प्रतिष्ठित परिवार में जन्म लिया था, वह बारह भाइयों की एकलौती बहन थी। उसके भाई उसकी इस तरह देख-रेख करते थे, जैसे किसी नाजुक पौधे की परवाह की जाती है। वे उसकी हर चाह पूरी करने में कुछ उठा न रखते थे और न तो उससे कहे बगैर स्वयं ही कुछ करते थे। इस तरह वह बड़ी होती गयी और एक अत्यन्त सुन्दरी युवती के रूप में परिणत हो गयी। वह उस घर की अधिष्ठात्री देवी के रूप में मानी जाने लगी। समुचित उम्र होने पर उसका विवाह एक विद्वान और चरित्रवान व्यक्ति से हो गया। भाइयों का विवाह भी क्रमशः हो गया, फिर भी मक्कम उनकी वैसी ही प्रिय और आदरणीया बनी रही।

घर में आने वाली नयी बहुएँ मक्कम के प्रति अपने पतियों के प्रेम में हिस्सा न बँटा सकीं। ईर्ष्या एक ज़हरीली नागिन की भाँति उनके हृदय में घुसती चली गयी और उसने उनकी प्रकृति को विषमय कर दिया।

उसी समय के आसपास मक्कम एक पुत्र की माँ बन गयी। मक्कन के भाई अपने भाँजे को बहुत प्यार करते। उनमें उसे अपनी तरफ हिलाने की होड़ लगी रहती, शायद ही कभी कोई ऐसा क्षण आता जब वे उसे अकेला छोड़ते।

मक्कम के पुत्र-जन्म ने भाइयों की पत्नियों की ईर्ष्या-रूपी अग्नि में घी का काम किया। उन्होंने अकारण ही उसमें दोष ढूँढने प्रारम्भ किये और उसके विरुद्ध हिंसक काल्पनिक बातों को अपने-अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पति के सामने रखने लगीं। फिर भी भाइयों ने उनकी बातों पर अपने कान नहीं दिये और वे पूर्ववत् ही अपनी बहन और भांजे पर मुक्त भाव से अपना प्रेम उँड़ेलते रहे।

मक्कम के हृदय में पुत्र के बाद पुत्री की कामना उदित हुई, साथ ही वह कुछ धार्मिक-उत्सवों को भी करना चाहती थी। भाइयों ने तुरन्त ही शास्त्रीय विधि-विधानों का प्रबन्ध कर दिया और वे उस दिन की राह देखने लगे जिस दिन मक्कम पुत्री को जन्म दे।

वह वेला शीघ्र ही आ पहुँची और वे खुशी से भर गये। उन्होंने बच्ची का अन्नप्राशन संस्कार बड़ी ज़ोर-शोर से मनाने का निश्चय किया और वे प्रीति-भोज के प्रबन्ध में लग गये।

छोटे भाई की पत्नी के अतिरिक्त अन्य भाइयों की स्त्रियाँ एकत्रित हुईं और उन्होंने उस प्रबन्ध को धूल में मिलाने के लिए षड्यंत्र प्रारम्भ कर दिया। उनमें से एक बहू ने कहा, मक्कम से मुक्ति पाये बगैर वे कभी भी मुसीबतों से छुटकारा नहीं पा सकतीं। पर यह कैसे सम्भव हो? "क्यों न उसके खाने में जहर मिला दें?" एक बहू ने सलाह दी।

"हाँ, यह ठीक है, लेकिन कौन इसे करेगा?" दूसरी ने पूछा।

"ज़ाहिर है कि महाराज यह काम करेगा। हम उसे बुला लें और उसे सब समझा दें।" तीसरी ने कहा।

"यह बहुत अच्छा विचार है। मैं महाराज को सौ रुपये दूंगी," चौथे या पाँचवें भाई की पत्नी ने कहा।

महाराज को फौरन ही बुलाया गया और उसे इस योजना को उन्होंने समझाया। इस विचारमात्र से भयभीत होकर महाराज ने कहा कि वह इस काम को नहीं करेगा।

"ठीक है, तुम मक्कम को मत परोसना। क्या यह काम तुम हमारे लिए नहीं कर सकते?" स्त्रियों ने यह अद्भुत विचार लगाया और महाराज को इस बात के लिए विवश किया कि वह ज़हर मिला खाना उन्हें परोस देगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्ते बिछा दिये गये और खाना परोसा जाने लगा। वे पापिनी स्त्रियाँ एक पंक्ति में बैठ गयीं और सबने अचानक चिल्लाना शुरू कर दिया कि उनके खाने में ज़हर मिला है। हलचल मच गयी और महाराज को बुलाया गया। उसने अपनी निर्दोषता जाहिर की, और घुमाव–फिराव से यह संकेत किया कि इसके मूल में मक्कम है।

अपने प्रति इस आरोप को सुनकर मक्कम पर मानो वज्रपात हो गया। एक क्षण को वह किंकर्त्तव्यविमूढ़ खड़ी रह गयी। लेकिन उसने साहस जुटाया और अतिथियों के बीच आकर कहा: "यदि मैं सचमुच ही अपराधी होऊँ तो मेरे सिर के टुकड़े-टुकड़े हो जायें। और यदि मैं अपराधी नहीं हूँ, तो जो वास्तविक अपराधी है वह उचित दण्ड पाये।"

मक्कम के बोलते न बोलते महाराज पागल आदमी की तरह भागता हुआ आया। "मेरा अपराध है, मेरा अपराध है। मैंने झूठ बोला। उफ तुम्हारे नयनों की यह आग, उफ तुम्हारे दाँतों और नखों की यह तीक्ष्णता, अरे मुझे अपने पंजों से मुक्त करो।" इस तरह बोलता हुआ वह गिर पड़ा और मर गया।

भाइयों की स्त्रियाँ अपनी योजना को निष्फल देख हताश तो हुईं, लेकिन इस बात से खुश भी थीं कि महाराज ने उन्हें धोखा नहीं दिया।

इस घटना को अनेक दिन बीत गये। एक दिन भाई सब काम पर चले गये थे और उनकी स्त्रियाँ नहाने के लिए कुएँ पर गयीं थीं। घर में केवल मक्कम ही थी। एक तेली, जो घर में तेल देता था, उस समय घर में आया। वह मक्कम से मिला। मक्कम ने उससे अगले दिन अपना हिसाब ले जाने के लिए कहा। वह घर से बाहर निकल ही रहा था कि स्त्रियाँ कुएँ से लौट आयीं। उन्होंने तुरन्त ही मक्कम और तेली को लेकर एक मनगढ़न्त कहानी रच ली और उसे तूल देकर सब जगह फैला दिया। उन्होंने अपने पतियों से भी यह बात कही।

भाइयों ने इस बात का विश्वास कर लिया और कुल की इज्ज़त को ध्यान में रखकर मक्कम को खतम कर देना ही उचित समझा। वे बहुत देर तक सोचते रहे और उन्होंने निश्चय किया कि वे मक्कम को एक मन्दिर–उत्सव के बहाने बाहर ले जायेंगे। निश्चित दिन आ पहुँचा और वे मक्कम को लेकर निकल गये। रास्ते में उन्होंने मक्कम से एक कुएँ में सितारे देखने के लिए कहा। जैसे ही उसने कुएँ में झाँका कि भाइयों ने उसके और उसके बच्चों के टुकड़े-टुकड़े कर उन्हें कुएँ में फेंक दिया।

[शेष पृष्ठ ५३ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इतिहास की आवाज़

• एर्नाल्ड टॉयनबी

वर्तमान जगत की एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है, उसका अति-प्राकृता पराशक्ति में विश्वास करना। इसके अभाव में मानव, से यह आशा नहीं की जा सकती कि वह वैज्ञानिक प्रयोग-शालाओं द्वारा प्रदत्त शक्ति का उचित प्रयोग ही करेगा।

अविश्वसनीय यंत्रशक्ति

क्या मानव आज जिन कठिनाइयों में है, वैसी परिस्थितियां अतीत में भी आ चुकी हैं? हां, कई बार। आधुनिक यंत्र-शास्त्र के कारण हमें यह नहीं समझना चाहिए कि संसार की ऐसी दशा पहली ही बार हुई।

जिस मार्ग पर आज हम चल रहे हैं, उसपर मानव पहले भी कई बार चल चुका है। पथ संचालन के जो नियम आज हमारा नियमन करते हैं, वैसे ही अतीत में भी करते थे। एक ही अंतर है। प्राचीन काल के लोग खच्चर-गाड़ियों आदि पर अथवा पैदल चलते थे। यदि आलस्यवश वह प्रचलित यातायात नियमों के विरुद्ध चलते तो दुर्घटनाग्रस्त भी होते थे। किन्तु यह दुर्घटना घातक नहीं होती थी। यदि हम अपनी नयी गाड़ी में अस्सी मील प्रतिघंटे की गति से [illegible] और-यातायात

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नियमों की उपेक्षा भी कर दें, तो परिणाम भयावह होगा।

मनुष्य का गर्व यह है कि यंत्र-जगत के कील-कांटे उसे अपने पूर्वजों की अपेक्षा अत्यधिक विकसित सिद्ध करते हैं। किन्तु केवल यंत्र-विद्या का कौशल यह सिद्ध नहीं करता कि हम बुद्धिमान हैं। यह कौशल हमारी सभ्यता के नष्ट न होने का आश्वासन भी नहीं दे सकता।

इतिहास बतलाता है कि जिन सभ्यताओं को अपने वाह्य कौशल का मोह हो गया था, उन्हें उनका यह मोह विनाश के पथ पर ले गया। संभव है उन्होंने इस प्रवृति को त्याग कर बाद में उन्नति कर ली हो। किन्तु यह तभी हुआ, जब उन्होंने यंत्र को ही सर्वसमर्थ और साध्य मानना छोड़ दिया।

सुखद सभ्यता की पीठिका

इतिहास निरंतर जो शिक्षा दे रहा है, उसका एक व्यवहारिक पाठ यह है कि भौतिक सफलता मानव को जितना ठगती है, उतना और कोई नहीं। मैं इक्कीस सभ्यताओं के अध्ययन के पश्चात् इस परिणाम पर पहुँचा हूं कि वे तभी तक सुखद होती हैं, जब तक वे पुरुषार्थी हैं। जलवायु, वाह्य जातियों के आक्रमण अथवा आंतरिक विप्लव आदि संकट सभ्यताओं को जो चुनौती देते हैं, उनका सामना उन्हें नवीन और विधायक तरीकों से करना चाहिए। जो सभ्यता अपने समृद्धि हेतु वह एकांत प्रयत्न करता रहा है संकट को परास्त करने के बाद आलसी बन जाती है और नयी परिस्थितियों का सामना नये ढंग से नहीं करती, उसका भविष्य उज्ज्वल नहीं कहा जा सकता।

शस्त्रशक्ति : एक असफल उपाय

इतिहास बतलाता है कि जिन जातियों ने अपने जीवन के पोषण-संवर्धन हेतु शस्त्रशक्ति का आश्रय लिया, उनका पतन हो गया। विजय जो प्रश्न उपस्थित करती है, उनका समाधान शस्त्रशक्ति नहीं दे सकती। शलिमैन, तैमूर, एथेंस के निरंकुश शासक ब्रिटेन के प्लेंटेजेनेट लोग सब इसीलिए असफल हुए कि उन्होंने सदियों से सीखे हुए एक ही उपाय, युद्ध कोशल पर विश्वास किया और समझा कि इसके द्वारा वे सभी परिस्थितियों से निबट सकेंगे।

किन्तु, जीवन इतना सरल तो नहीं। उसमें सफलता पाने का कोई एक सूत्र नहीं हो सकता। प्रत्येक नया प्रश्न व्यक्ति अथवा समाज से नये अंतः स्फूर्त उत्तर की आशा रखता है।

किन्तु मानव आलसी है। अतीत के उपायों के रहते वह नये उपाय चिंता का श्रम नहीं करना चाहता। यही कारण है कि आज का मानव वर्तमान-संसार की समस्यायों को भौतिक साधनों द्वारा सुलझाने की आशा छोड़ नहीं पाता। भौतिक

CC-0.In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और यह जीवन के अनेक क्षेत्रों में लाभप्रद भी सिद्ध हुआ है। मनुष्य ने सागरों को बांधा और झंझाओं को बेड़ी पहनायी। यह देख कर हमारी यंत्रयुग की संतति आज का मनुष्य कहता है कि विज्ञान और इसके यंत्रों द्वारा ही हम बंधु भावना युक्त और सुखी मानवों के अखंड जगत का निर्माण कर सकते हैं।

किन्तु यह संभव नहीं। विज्ञान में यह शक्ति नहीं है। इसी प्रकार यह आशा भी अत्यंत भ्रामक है कि कोई विशेषज्ञ इसका राजनैतिक समाधान खोज सकेगा। प्रकृति पर आधिपत्य जमाने में मानव अत्यंत कुशल सिद्ध हुआ है, किन्तु उसे स्वयं पर ही अधिकार करना नहीं आया। इस विद्या में वह बहुत पिछड़ा है।

आध्यात्मिक शक्ति

यदि विश्व-ऐक्य का कोई सीधा-सरल मार्ग संभव हो सकता, तो हम अपने विद्वानों को पारिश्रमिक देकर उसे ढूंढ़ने के लिए कह सकते थे। किन्तु, यदि यह प्रश्न आधुनिक मानव के आध्यात्मिक परिवर्तन की अपेक्षा रखता है, जो सच है—तो यह शासक वर्ग के किसी विभाग को सौपने से नहीं होगा। कार्य इतना गुरु है कि उसे सोचकर मनुष्य अधीर हो जायगा। स्मरण रखना चाहिए कि प्रत्येक बड़ी सभ्यता आध्यात्मिक आत्म-पुनरुत्थान द्वारा अपने उत्कर्ष पर पहुंची है।

यदि हम ऐसा आध्यात्मिक-पुनर्जीवन चाहते हैं, तो पहली चीज़ हमें यह सीखनी होगी कि हम आधुनिक युग के नये देवताओं, यंत्र, राष्ट्रध्वज, अर्थशास्त्र विज्ञान आदि की पूजा बंद कर दें। इन मानव साधनों का हम जितना उपयोग करेंगे, इनकी मर्यादा को ऊंचा उठाना उतना ही कठिन होता जायगा। प्रत्येक युग में अमीर के लिए स्वर्ग में प्रवेश करना विशेष कठिन होता है, इसी प्रकार विश्वराष्ट् स्थापित करने के लिए अपना-अपना देश अभिमान छोड़ना अधिक उन्नत जातियों के लिए विशेष कठिन होगा।

विश्व ऐक्य

विश्व की एकता तो अभीष्ट है ही। किन्तु किसी भी दृष्टिकोण से देखा जाय उचित यही होगा, कि वह शांतिपूर्ण और स्वैच्छिक उपायों से स्थापित हो।

खड्ग बल से स्थापित ऐक्य न तो इतिहास में स्थायी होगा न किसी को प्रिय लगेगा।

हमें विश्व की एकता तो वांछनीय है। किन्तु यदि हमने उसी को अपनी आशा का मध्यबिन्दु मान कर उसे लक्ष्य बना लिया, तो मुझे भय है कि वह असफल हो जायगी। ऐसा करके हम अपने ध्येय को बहुत नीचा-रखेंगे। मेरा दृढ़ विश्वास है कि मानव-बंधुत्व तब तक एक असंभव आदर्श बना रहेगा जब तक समस्त मानवता एक

CC-0.In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्व शक्तिमान परात्पर भगवान में अपनी सामान्य श्रद्धा के सूत्र से न जुड़ जाय।

आधुनिक स्त्री

अपनी समस्याओं के भौतिक स्तर पर समाधान करने का हमारा सारा प्रयत्न व्यर्थ हो चुका है। हमारी समस्त बड़ी-बड़ी योजनाएं हमारा उपहास कराने वाली सिद्ध हुई हैं। हम दावा करते हैं कि हमने श्रम न्यून करने वाले यंत्रों के निर्माण में उल्लेखनीय प्रगति की है। यह सत्य भी है। किन्तु इस उन्नति का एक विचित्र परिणाम हुआ है। स्त्रियों पर आज जितना कार्य भार है, उतना कभी न था। अमरीका में अब स्त्रियों को गृह व्यवस्था में कोई सहायता नहीं मिलती। वे केवल गृहस्थी की साजसवांर और व्यवस्था में अपना पूरा समय और शक्ति भी नहीं लगा पातीं। परिणाम यह है कि आज की स्त्री पर दोहरा कार्य-भार है। वह घर में पत्नी और मां होकर रहती है और कार्यालय तथा प्रयोग शालाओं में कर्मचारी बनकर।

युद्धकाल में इंगलैण्ड में सभी स्त्रियां इस प्रकार के दोहरे श्रम का भार उठाती थीं। इतिहास में बहुधा वह युग किसी देश की सभ्यता के लिए ह्रास युग सिद्ध हुए, जिनमें स्त्रियों ने सहज गृह धर्म का त्याग कर दिया। ईसा से पांच सौ वर्ष पूर्व का यूनान प्राचीन इतिहास के शिखर पर शोभित है। उस अवधि में यूनानी स्त्रियों का क्षेत्र उनका घर ही था। किन्तु सिकंदर महान के समय आज की भाँति वहाँ स्त्री स्वातंत्र्य का आंदोलन चल पड़ा। और ठीक उसी समय यूनान के नगर राज्य घर्षित हो रहे थे।

बहिष्कार : एक अवांछनीय प्रयत्न

आज हम अपने समस्त सामाजिक दोषों को उन उपायों द्वारा दूर करना चाहते हैं, जिनमें परमात्मा का हस्तक्षेप किसी प्रकार न हो। इस अनास्थावादी प्रवृति के अनेक शोचनीय और विचित्र परिणाम हुए हैं।

यंत्र युग ने अनेक ऐसे अभावों को हमारे समक्ष ला खड़ा किया है, जिनका पहले कोई अस्तित्व नहीं था। इसने आवास व्यवस्था में अकाल की स्थिति उत्पन्न की है। श्रम न्यून करने वाले यंत्रों का उद्देश्य लोगों को अधिक अवकाश देना था, किन्तु उसने श्रम और श्रमिकों की तंगी का एक अंतहीन चक्र बना दिया है।

हमने यंत्रों को अपना संचालन करने दिया। इस प्रयोग के अत्यत—भयंकर परिणाम हुए हैं। स्पष्ट ही आज मानव को आध्यात्मिक दृष्टि से निर्णय करना चाहिए। पुराने सरल-सहज युगों की अपेक्षा आज इसकी आवश्यकता और भी बढ़ गयी है। इन निर्णयों पर हमारा हिताहित आज जितना आश्रित है, उतना पहले नहीं था। औद्योगीकरण द्वारा

CC0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२१ मार्च १९६५

जन साधारण को सुख सुविधाएं बांटने का ध्येय सिद्ध नहीं हुआ। मुझे लगता है कि यदि हमारा उद्देश्य इससे कुछ उच्च रहा होता, तो कदाचित हम यंत्रों पर अपना नियंत्रण रखने के व्यावहारिक उद्देश्य में भी सफलता के निकट पहुंच जाते।

इतिहास के महत्वपूर्ण निर्णयों ने सदा आध्यात्मिक परिणाम प्रदर्शित किये हैं। यांत्रिक उपलब्धियों का उपयोग मानवता के कल्याण हेतु भी किया जा सकता है और उसके विनाश के लिए भी। यह उपयोग किस दिशा में प्रेरित हो, इसका निर्णय किसी न किसी को करना ही चाहिए।

प्राचीन मिस्र की यंत्रसंपन्न सभ्यता में वहाँ के निवासियों ने नील नदी की तटवर्ती भूमि को बाढ़ से बचाने का प्रशंसनीय कार्य किया। उन्होंने अन्नोत्पादन की दिशा में भी प्रगति की। इससे शक्ति एवं समृद्धि बढ़ गयी। मिस्र की समस्त जनता के स्वातंत्र्य-सुखोपभोग का मार्ग भी प्रशस्त हुआ।

किन्तु मिस्र के शासकों में इस अनुदृष्टि के प्रति उपेक्षा थी। उन्होंने इस सद्यप्राप्त समृद्धि का उपयोग अपनी कीर्ति के स्मारक-पिरामिड़ों के निर्माण हेतु किया। इसका अर्थ यह कि शक्ति और साधनों का दुरुपयोग सदा संभव है। मिस्र के शासकों ने भी यह किया था और हम भी कर सकते हैं।

हमारा प्रथम कर्तव्य है आध्यात्मिक निश्चय। यह पग-पग पर हमारी प्रतीक्षा करता है और हम इससे आंखें नहीं चुरा सकते। हमारी प्रत्येक विजय हमारे गुणों और दुर्गुणों के परिणाम में गति लाती है। विज्ञान की प्रत्येक नवीन उपब्धियां हमारी नैतिक शक्तियों का परीक्षा हेतु नयी कसौटी बन कर आती हैं।

अध्यात्म की पुनर्प्रतिष्ठा

यही नियम अन्य शास्त्रीय विशेषताओं की सिद्धि पर लागू होता है। एक समय ऐसा माना जाता था कि सार्वजनिक साक्षरता और शिक्षा शांति एवं उन्नति की अग्रदूत है। इसी दृष्टि से इंग्लैण्ड में निःशुल्क शिक्षालयों की योजना बनी। किन्तु इन शिक्षालयों से विद्यार्थियों का पहला दल शिक्षित हुआ, उसके बीस वर्ष के अंदर ही इंग्लैण्ड में गंदे समाचार पत्रों की बाढ़ आ गयी। इन समाचार पत्रों ने सनसनीखेज उत्तेजक समाचारों का फ़ैशन बढ़ाया और शिक्षा के समस्त उद्देश्यों को दूषित कर दिया।

जिन इक्कीस सभ्यताओं का मैंने अध्ययन किया है, उनके इतिहास का स्मरण कर मुझे अनुभव होता है कि यदि मनुष्य भौतिक सफलताओं और उपलब्धियों में ही डूब गया, तो विशुद्ध आध्यात्मिक निश्चय तथा संकल्प उसके लिए कठिन हो जायँगे। मानव प्रेम भी इतिहास में एक सशक्त शक्ति रहा है, किन्तु तभी जब वह भगवत प्रेम का गौण रहा हो।

वर्तमान जगत की एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है, उसका अतिप्राकृता पराशक्ति में विश्वास करना। इसके अभाव में मानव, संस्कार विहीन मानव, से यह आशा नहीं की जा सकती कि वह वैज्ञानिक प्रयोग-शालांओं द्वारा प्रदत्त शक्ति का उचित प्रयोग ही करेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसी आध्यात्मिक श्रद्धा का पुनर्जन्म कठिन नहीं। यह सहज संभव है। इस पुनर्जन्म की आशा उन अविकसित राष्ट्रों से भी की जा सकती है, जिनके नाम अभी इतिहास पटल पर नहीं लिखे हैं। उन्होंने अभी तक अपना कौशल दिखाने का अवसर नहीं पाया है, अतएव वे शक्तिशाली राष्ट्रों को अंधी बनाने वाली आत्मश्लाघा से पीड़ित नहीं हैं।

अभी हमारे पास स्थिति विनाश, शुभ-अशुभ हेतु भविष्य निर्माण के लिए समय है। एक इतिहासकार के नाते इस सूत्र पर मेरा अटल विश्वास है कि इतिहास कभी स्वयं निर्मित नहीं होता। उसका निर्माण किया जाता है। यह निर्माण मनुष्यों के स्वतंत्र निर्णयों द्वारा संपन्न होता है। उनके भविष्य की रचना इस बात पर निर्भर है कि वे आगामी सुबह का सामना भयपूर्वक करते हैं अथवा शौर्यपूर्वक।

अनु. नरेशचन्द्र मिश्र

★

अपनी आवश्यकता के लिए खरीदिए

Hind FLOORING TILES

हाइड्रालिक इटालियन मशीनों से

निर्मित : प्रीफ़ब (पूर्वनिर्मित) आर. सी. सी. गृह, सीमेण्ट पाइप, टैंक, रंगाई की नाँदें व बाग़ीचों के सामान का निर्माण करते हैं। सरकार, रेलवे, म्युनिसिपैलिटी, पी. डब्ल्यू. डी. के कंट्राक्टर हैं और सामान मुहैया करते हैं।

हिन्दुस्तान सीमेन्ट पाइप्स एण्ड कंक्रीट कन्स्ट्रक्शन कं०

मुख्य कार्यालय : ओछवलाल गोरधनदास शाह

टाइल, पाइप्स एण्ड सेनीटरी मरचेण्ट्स

खाडीआ, चार रस्ता, अहमदाबाद

फैक्टरी : सुएज फार्म रोड, अहमदाबाद

कार्यालय तथा निवास फोन : ५२२९२ फैक्टरी फोन : ५१६३६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥श्री रामायण॥

[तुलसीकृत रामचरित मानस का एक पावन प्रसंग]

राम-चरित

चरित्र वही जो दूसरों की आत्मोन्नति में सहायक हो, जो दूसरों का मार्ग-दर्शन कर सके, जो दूसरों के लिए आदर्श हो तथा जिसका अनुकरण करने में लोग अपने को धन्य समझें। यही कारण है कि समाज के परम हितैषी भक्त प्रवर गोस्वामी तुलसीदास जी ने किसी अन्य सांसारिक व्यक्ति को अपने महाकाव्य का नायक न चुन कर मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र जी को अपने काव्य का विषय बनाया है। श्री राम के समस्त कार्य, समस्त लीलाएँ, समस्त चरित्र एवं आदर्श अनुकरणीय हैं। गोस्वामीजी ने राम-चरित्र का महत्त्व अनेक सुन्दर तथा सटीक उपमाएँ देकर स्पष्ट करने की चेष्टा की है। वे लिखते हैं:—

रामचरित चिंतामनि चारू।
संत सुमति तप सुभग सिंगारू॥
जग मंगल गुन ग्राम राम के।
दानि मुकुति धन धरम धाम के।
सदगुरु ज्ञान बिराग जोग के।
बिबुध बैद भव भीम रोग के॥
जननि जनक सिय राम प्रेम के।
बीज सकल ब्रत धरम नेम के॥

श्रीराम का चरित्र—सुन्दरचिन्तामणि के समान है; संतों सद्बुद्धि रूपी स्त्री का सुन्दर शृंगार है; राम के गुण-समूह संसार का मंगल हैं, अर्थ, धर्म, मोक्ष के दाता हैं, ज्ञान—वैराग्य—योग के सद्गुरु हैं, कठिन सांसारिक रोगों के लिए देवताओं के वैद्य अश्विनीकुमार हैं, सीताराम के प्रति प्रेम के माता-पिता हैं तथा सम्पूर्ण व्रत-धर्म-नियम के बीज हैं।

समन पाप संताप सोक के।
प्रिय पालक परलोक लोक के॥
सचिव सुभट भूपति विचार के।
कुंभज लोभ उदधि अपार के॥
काम कोह कलिमल करिगन के।
केहरि सावक जन मन बन के॥
अतिथि पूज्य प्रियतम पुरारि के।
कामद घन दारिद दवारि के॥

श्री राम के चरित्र पाप-ताप-शोक को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शांत करनेवाले हैं, लोक-परलोक सुधारने-वाले हैं, विचार रूपी राजा के मंत्री तथा वीर योद्धा के समान हैं; लोभरूपी अपार सागर को सोखने के लिए अगस्त्य मुनि के समान हैं; काम, क्रोध तथा कलियुग के पाप रूपी हाथियों के लिए भक्तों के मन रूपी बन में विचरण करने वाले सिंह-शावक के समान हैं; भगवान शंकर के पूज्य तथा प्रिय अतिथि के समान हैं; दरिद्रता रूपी दावाग्नि के लिए इच्छा पूर्ण करनेवाले बादल के समान हैं।

मंत्र महामनि विषय ब्याल के।
मेटत कठिन कुअंक भाल के॥
हरन मोह तम दिनकर कर से।
सेवक सालि पाल जलधर से॥
अभिमत दानि देवतरु बर से।
सेवत सुलभ सुखद हरि हर से॥

विषय भोग रूपी सर्प के लिए मंत्र और महामणि हैं; मस्तक की कठिन और अशुभ रेखाओं को मिटाने में भी समर्थ हैं; मोहरूपी अंधकार को दूर करने के लिए सूर्य की किरणों के समान हैं; भक्त रूपी खेती को हरी-भरी रखने के लिए जलमय बादलों के समान हैं; श्रेष्ठ कल्पवृक्ष के समान इच्छित वस्तु देने वाले दानी हैं; उनकी उपासना सरल है और सुख देने में भगवान विष्णु तथा शंकर के समान हैं।

सुकबि सरद नभ मन उडुगन से।
रामभगत जन जीवन धन से।
सकल सुकृत फल भूरि भोग से।
जग हित निरुपधि साधु लोग से॥
सेवक मन मानस मराल से।
पावन गंग तरंग माल से।

राम के चरित्र सुकवि के मन रूपी निर्मल आकाश के तारकों के समान हैं; रामभक्तों के तो जीवन–धन ही हैं; समस्त पुण्यों के फल स्वरूप अमित भोग हैं; संसार के कल्पाण के लिए अवगुणरहित संतों के समान हैं; भगवद्भक्तों के मनरूपी मानसरोवर के हंस हैं तथा पवित्र गंगा की तरंगों के समान हैं।

कुपथ कुतरक कुचालि कलि, कपट दंभ पाखंड।
दहन राम गुन ग्रामजिमि, ईंधन अनल प्रचंड।
राम चरित राकेस कर, सरिस सुखद सब काहु।
सज्जन कुमुद चकोरचित हित बिसेषि बड़ लाहु॥

दुर्गुण, कुतर्क, दुष्ट स्वभाव, कलियुग के छल-कपट-धोखा आदि को राम के गुणों का कीर्तन-अनुकरण इसी प्रकार भस्म कर देता है, जैसे प्रचंड अग्नि घास-फूस या लकड़ी को। राम-चरित्र चन्द्रमा की शीतल किरणों के समान हैं, जो सब को सुख देनेवाले हैं, किन्तु सज्जन रूपी कुमुदों और चकोरों को विशेष हितकर एवं लाभप्रद हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द साहित्य

सचित्र, आकर्षक गेट-अप

विवेकानन्द चरित—
सत्येन्द्रनाथ मजुमदारकृत ६.००

स्वामी विवेकानन्द कृतः—

विवेकानन्द संचयन— विवेकानन्दजी की वृहत् साहित्य सामग्री से चुने हुए व्याख्यान, सम्भाषण, लेख, पत्र, कविताओं इ० का प्रतिनिधिक संचयन ७.५०

भारत में विवेकानन्द (भारतीय व्याख्यान) ... ५.००

विवेकानन्दजी के संग में (वार्तालाप) ... ५.२५

पत्रावली (स्फूर्तिदायक पत्र) प्रथम भाग ५.२५ द्वितीय भाग ४.२५

ज्ञानयोग	३.५०
राजयोग	३.००
भक्तियोग	१.५०
कर्मयोग	१.७५
प्रेमयोग	२.००
सरल राजयोग ...	०.६०
व्यावहारिक जीवन में वेदान्त	१.१५
आत्मानुभूति तथा उसके मार्ग	१.६०
हिन्दू धर्म	१.५०
धर्मविज्ञान	२.००
धर्मरहस्य	१.२५
शिकागो वक्तृता	०.६५
कवितावली	१.६५
स्वाधीन भारत ! जय हो ! ...	१.५०
जाति, संस्कृति और समाजवाद	१.२५

सचित्र, आकर्षक जैकेट सहित

श्रीरामकृष्णलीला प्रसंग—स्वामी सारदानन्दकृत सुविस्तृत मूल बँगला जीवनी से अनुवादित। प्रथम खण्ड ९.००
द्वितीय खण्ड १०.००
तृतीय खण्ड ७.००

श्रीरामकृष्णलीलामृत— विस्तृत जीवनी, महात्मा गांधी द्वारा भूमिका सहित
प्रथम भाग ५.००
द्वितीय भाग ५.००

श्रीरामकृष्णवचनामृत— श्रीरामकृष्णदेव के अमृतमय उपदेशों का अपूर्व संग्रह
प्रथम भाग ६.५०
द्वितीय भाग ६.५०
तृतीय भाग ७.००

श्रीरामकृष्ण उपदेश—स्वामी ब्रह्मानन्द द्वारा संकलित, पाकेट साइज, ०.७५

माँ सारदा—श्रीरामकृष्णदेव की लीला-सहधर्मिणी की विस्तृत जीवनी, स्वामी अपूर्वानन्दकृत, मूल्य ४.५०

रामकृष्ण-संघ—आदर्श और इतिहास—स्वामी तेजसानन्दकृत ०.७५

धर्म-प्रसंग में स्वामी शिवानन्द—श्रीरामकृष्णदेव के अन्तरंग शिष्य द्वारा धर्म के गूढ़ तत्वों पर वार्तालाप ५.००

साधु नागमहाशय— श्रीरामकृष्णदेव के अन्तरंग गृही शिष्य का जीवनचरित १.५०

श्रीरामकृष्ण और श्री माँ—
स्वामी अपूर्वानन्दकृत ३.४०

सम्पूर्ण विस्तृत सूचीपत्र के लिए लिखिए :—

श्रीरामकृष्ण आश्रम [भा.], धन्तोली नागपुर–१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामदास ग्रह-नक्षत्रों से फुटबॉल खेलता है

● स्वामी रामदास

रामदास : अक्सर हमारे मन में शकुनों और शुभ-मुहूर्तों को लेकर प्रश्न उठा करता है। मान लो रामदास एक तथाकथित अशुभ मुहूर्त में भिक्षाटन के लिए जाता है, और इसी से उसे कुछ नहीं मिलता और वह भूखा रह जाता है, यह तो उसके लिए और भी अच्छी बात है। इसी प्रकार, इन मिथ्या विश्वासों पर अमल न करने के फलस्वरूप यदि उसे विरोध, अपमान, कलंक, पीड़ाएँ आदि झेलनी पड़ती हैं, तो क्या हुआ, वह उनका आनन्द उठायेगा। जो कुछ भी आता है, वह उसे अच्छे के लिए मानकर स्वीकार करेगा। रामदास इस प्रकार की धारणाओं से कभी प्रभावित नहीं हुआ। सफलता और असफलता, अच्छा और बुरा—ये सब उसके लिए समान थे।

उदाहरण के लिए यदि कोई मकान किसी अशुभ मूहूर्त में बनना शुरू हुआ, तो यह सोच लिया जायेगा कि यह काम बहुत लम्बा जायेगा और सम्भवतः पूरा भी नहीं होगा। यहाँ नीलेश्वर में सरकार कोई पुल बनवाना चाहती थी। किसी शुभ-अशुभ मुहूर्त का ध्यान रखे बगैर उसने काम शुरू कर दिया। लगभग चार साल बीत गये पर काम पूरा न हो सका। किसी न किसी कारण से इसमें देर लगती ही चली गयी। मद्रास के एक आश्रम-भक्त चीफ इंजीनियर ने सुपरिण्टेंडेण्ट इंजीनियर को यह निर्देश किया कि वह तुरन्त जाकर रामदास को उस स्थान पर ले जाये और उनके आशीर्वाद को प्राप्त करे। तदनुसार, एक कार आयी और रामदास वहाँ गया। उन्होंने पूजा के लिए मालाओं, फूलों, नारियल और आरती आदि का प्रबन्ध कर दिया था। समारोह हो गया। बाद में खबर आयी कि रामदास के आगमन के बाद छह माह के अन्दर काम समाप्त हो गया। जब भगवान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का आशीर्वाद तुम्हारे साथ है, तब शुभ और अशुभ का प्रश्न ही नहीं उठता।

साधना के दिनों में जब रामदास बनों में जाया करता था, तब गाँव वाले उसे बहुत डराते थे। जंगली जन्तु बनों में घूमा करते थे। रामदास वहाँ अखण्ड रात्रि रामनाम जपता हुआ बैठा रहता था। कभी कोई घटना नहीं घटी। यदि तुम्हें भगवान की कृपा और निर्देशन में आन्तरिक श्रद्धा है, तो पृथ्वी पर कोई ताक़त न तो तुम्हें डरा सकती है और न हानि पहुँचा सकती है। यदि तुम्हें मुसीबतों को उठाना पड़ता है, बाधाओं का सामना करना पड़ता है तो और भी अच्छा है। वे तो तुम्हारी श्रद्धा-भक्ति की कसौटी बनकर आती हैं।

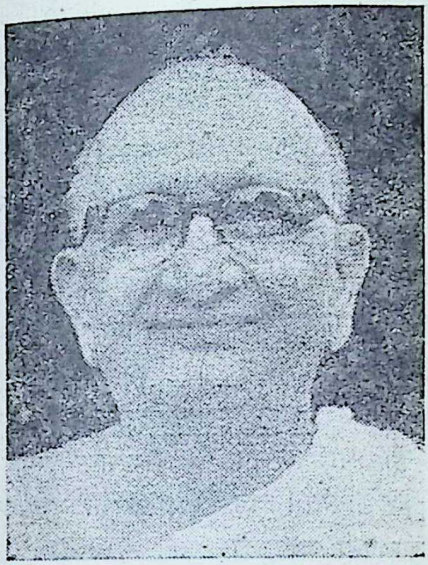

स्वामी रामदास

लेकिन माताजी (स्वामी रामदास के आश्रम की अधिष्ठात्री कृष्णाबाई) इन सब बातों में विश्वास करती हैं। यदि एक बछड़े का भी दान देना है तो वे इस प्रयोजन के लिए शुभ दिन को निश्चित करती हैं। जब रामदास इन सब बातों पर हँसता है, तो वे कहती हैं, 'ठीक है तुम हँसो।' कभी-कभी वे रामदास से इन सब बातों के अनुरूप काम करने और इन तथ्यों से सहमत होने के लिए ज़ोर देती हैं। 'ठीक है', वह कह देता है। इनकार क्यों होना चाहिए ? लेकिन यदि यह उसके साधना के दिनों की बात होती, तो वह सहमत नहीं होता।

एक बार रामदास की दाहिनी आँख फड़क रही थी। रामदास ने पूछा इसका क्या महत्व है—यह कोई शुभ लक्षण है अथवा अशुभ ? किसी ने कहा, 'दाहिनी आँख का फड़कना पुरुषों के लिए शुभ होता है और बाँयी आँख का फड़कना स्त्रियों के लिए शुभ होता है।' तब रामदास ने प्रश्न किया, 'रामदास स्त्री है कि पुरुष ?' माताजी ने उत्तर दिया 'जब दाहिनी आँख फड़के तो तुम पुरुष हो; और जब बाँयीं आँख फड़के तो तुम स्त्री हो ! दोनों ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम्हारे लिए शुभ हैं।' तो रामदास पुरुष भी हैं और स्त्री भी, या दोनों ही नहीं हैं। इसका मतलब है कि सारे देश, काल, चिह्न उसके लिए शुभ हैं।

जब कभी रामदास को यात्रा पर जाना हुआ, या होता है, माताजी एक शुभ-दिन निश्चित करेंगी; और वह दिन कभी भी शनिवार नहीं हो सकता। जब वह एक स्थान से दूसरे स्थान पर घूमता था, तब उसने बहुत बार अपनी यात्रा शनिवारों को शुरू की होगी। उसे याद नहीं आता कि कभी कोई घटना इसके परिणाम में घटी हो। रामदास सदा साहसी और निर्भीक था। उसने कभी किसी शुभ मुहूर्त या शगुन की परवाह नहीं की।

जब १९२२ में रामदास ने घर छोड़ा और वह बिना पैसे के इधर से उधर भटकता फिरा; तब यह उसकी शनि-दशा थी। शनि ही था, जिसने उसे घर से बाहर ही कर दिया। जब उसे बाद में इस बात का पता लगा, तो रामदास ने शनि को नमस्कार किया, क्योंकि उसने उसे वैराग्य दिया था। यदि शनि की जगह वहाँ कोई अच्छा ग्रह-नक्षत्र होता, तो उससे रामदास को लाभ नहीं होता। शनि-दास उसके लिए वरदान था। कुछ साल बाद एक ज्योतिषी रामदास के पास आया और उससे उन्होंने जन्मपत्री की माँग की। 'क्यों?' रामदास ने पूछा। उन्होंने उत्तर दिया, 'मैं उसे पढ़कर तुमसे तुम्हारे भविष्य पर ग्रह-नक्षत्रों के प्रभाव के बारे में बताऊँगा।' 'रामदास तो ग्रह-नक्षत्रों के साथ फुटबॉल खेलता है,' रामदास ने कहा। उसने नमन किया और चुपचाप वहाँ से चला गया। रामदास ज्योतिष-विद्या में विश्वास करता है। वह मानव-जीवन पर ग्रह-नक्षत्रों के प्रभाव में विश्वास करता है। लेकिन राम की शक्ति से वह सब स्थितियों को पचा सकता है और सदा सम्पूर्णतया प्रसन्न रह सकता है। उसकी जन्मपत्री राम हैं।

—अनु. वेन्द्रिश

विचारशीलता स्वाभाविक सौंदर्य को कितना मधुर बना देती है। विचारोत्कर्ष ही सौंदर्य का वास्तविक श्रृंगार है। वस्त्राभूषणों से तो उसकी प्राकृतिक शोभा ही नष्ट हो जाती है, वह कृत्रिम और वासनामय हो जाता है।

मुन्शी प्रेमचन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुट्ठियां खोल दो

● अनामिका

मुट्ठियां खोल दो,
तुमने जो बन्द किया है इनमें
वह छोड़ दो
चेहरे पर खुलापन आयेगा
मुट्ठियाँ खोल दो
तुमने तो मौसम भी बन्द किया है
फूल कुचले गयें हैं
और मैं गर्म–साँसें सह रही हूँ
इन मुट्ठियों में बन्द है ठण्डापन
इन मुट्ठियों में बन्द है स्वरों का संगम
इन मुट्ठियों में बन्द है युग की रचना
खोल दो—
नयी कृति—नयी रचना बन्द न रखो।

●

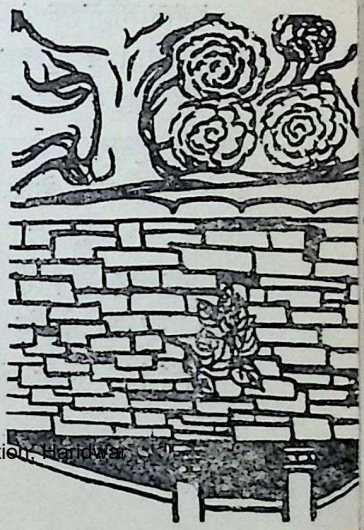

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुर्लभा

• सुरेश जोशी

[गुजराती कहानी]

रेखा कहाँ खो गयी? सुहास ने बंबई जैसे बड़े शहर के रास्ते पर की भीड़ में रेखा को खोजने का प्रयत्न किया। 'भारी हठीली है, रेखा!' सुहास बड़-बड़ा गया, 'यहाँ कौन हमें देख लेता? परन्तु कहते हैं कि.....'। देखा तो सामने के फुटपाथ पर रेखा खड़ी थी। उसके जी में जी आया। कहीं वह वापस घर नहीं चली गयी हो, इसी आशंका से उसका हृदय कांप उठा था।

सुहास भी सड़क पार कर रेखा के पास पहुँच गया। परन्तु वह कुछ कहे इसके पूर्व ही रेखा ने उसे चुप रहने का इशारा किया। सुहास बौखलाया। उसने इस प्रसंग पर पहनने के लिए रेखा को एक विशेष साड़ी दी थी। परन्तु साड़ी देख कर तो वह चिढ़ ही गयी थी। 'तुम्हें कुछ होश भी है कि नहीं?'

'क्यों?' सुहास ने उदास होकर पूछा।

'ऐसी मँहगी साड़ी देख कर माँ को वहम होगा कि नहीं? मैंने कुछ इतने अधिक पैसे जमा नहीं कर रखे हैं!'

सुहास उत्साहवश बोल उठा, 'परन्तु रेखा, यदि आज तुमने वह साड़ी पहनी होती तो कितनी सुन्दर.....।'

'तुम क्या मुझे गुड़िया की तरह सजाना चाहते हो?' बीच में ही बात काट कर रेखा बोली, 'तो फिर इस खादीभवन से एकाध गुड़ियाँ क्यों नहीं खरीद लेते-कम से कम मुझे तो घर जाने की छुट्टी मिले!'

सुहास फटी आँखें उसकी ओर देखता ही रह गया। उसे ऐसा आकुल देख कर रेखा ने पूछा, 'कहाँ है तुम्हारे मित्र का घर?'

फिर दोनों चलने लगे—रेखा आगे और सुहास पीछे।

सुहास सोच रहा था, रेखा खिंची तो नहीं आ रही? खिंची ही आ रही हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२१ मार्च १९६५

तो क्या हुआ? अब वह उसे वापस नहीं जाने देगा। वैसे उन दोनों के बीच घनिष्ठता नहीं दिखायी पड़ती। रेखा जरा बोलने में तेज तर्राट थी। कई बार तो सुहास को चिढ़ाने के लिए ही वह चाहे जैसा मजाक कर बैठती।

'यह युडि कोलन कहाँ से ले आये?'

'क्यों?'

'मुझे तो इसकी गन्ध जरा भी अच्छी नहीं लगती।' फिर भी सुहास और रेखा

साथ-साथ जा रहे थे। दोनों के बीच में कुछ अटूट था। होगा ही, नहीं तो . . . . रेखा कुछ आगे निकल गयी। उसे रोकते हुए सुहास ने कहा, 'बस यही है घर।'

रेखा खड़ी हो गयी। एक ओर होटल के उच्छिष्ट का स्वाद लेते भंगी, दूसरी ओर दो लड़ती हुई बिल्लियाँ। रेखा ने भौंहे टेढ़ी कर पूछा, 'यहाँ!' सुहास कहने जा ही रहा था कि हम कहाँ संसार बसा कर यहाँ बारह दिन रहने वाले हैं– परन्तु शब्द जबान पर आने से पहले ही रेखा बोल उठी, 'मुझे तुम्हारा कोई मित्र अच्छा नहीं लगता। वह श्रीकान्त भी कैसा बेहूदा आदमी है! कहीं सारी टोली को तो जमा नहीं कर लिया है उसने!'

सुहास ने तो किसी को कहा भी नहीं था। पर प्रियंवद उत्साह में सभी को बुला लाया हो तो!

सुहास ने रेखा को वहीं खड़ा कर कहा, 'रेखा, यदि तुझे अच्छा नहीं लगता, तो हम यहीं से वापस लौट चलें।' रेखा ने असाधारण दृढ़ता से कहा, 'वापस लौटने के लिए मैं यहाँ नहीं आयी!' सुहास धड़कते दिल से सीढ़ियाँ चढ़ने लगा। उसके पीछे-पीछे रेखा थी। प्रियंवद के कमरे के सामने पहुँच कर सुहास ने दरवाजा खटखटाया। मित्र मण्डली में सुशील जरा हँसोड़ था। उसने कहा, 'क्यों सुहास, अकेला तो नहीं आया न?' फिर रेखा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को देख कर आनन्दित हो बोला, 'इस बार प्रियंवद का निकाला हुआ मुहूर्त्त सच्चा साबित हुआ।'

प्रियंवद ने पूछा, 'रेखा, इला, मंजु, वन्दना कोई नहीं आयीं ?'

रेखा ने उत्तर दिया, 'मैंने किसी से नहीं कहा।' इससे आगे और कुछ बोलने की किसी को इच्छा नहीं हुई ? सही साक्षी के दस्तख़त— सभी ठीक से हो गये। पेड़े बांटे गये। मित्रों ने सुहास को जरा ऊँचा चढ़ाया, 'अबे, देख क्या रहा है ! डाल दे रेखा के मुंह में पेड़ा !' रेखा तेजी से तुरन्त बोल उठी, 'मुझे नहीं पसन्द है यह बेहूदापन !'

फिर थोड़ी देर रुक कर उसने सुहास से कहा, चलो, अब चलें !'

प्रियंवद ने आश्चर्य से कहा, 'अब कहाँ जाओगी ?' रेखा बोली, 'कहाँ जाऊँगी ? मेरे घर ! और कहाँ ? गोरेगांव पहुँचते-पहुँचते नौ बज जायेंगे।'

श्रीकान्त बोला, 'हमने तो यह कमरा तुम्हें ही सौंप देने का निश्चय किया था।'

फिर रेखा और सुहास मार्ग पर आगे-पीछे चलने लगे। मेरिन ड्राइव, नरीमान पॉइण्ट, चट्टान से टकराती हुई लहरें, उछलती हुई तरंगें, तेज़ हवा में क्षीण होतीं रेखा की आवाज़—सुहास को कई बातें याद आने लगीं। छः वर्ष ! कितने प्रकोष्ठ का था यह प्रणयव्यूह।

साँझ पड़ चुकी थी। सुहास घर लौटते हुए लोगों के दल देख रहा था। इस समुदाय पर गहरी उदासी का अश्रुत स्वर छाया हुआ था। चर्चगेट स्टेशन के आगे भिखारी गिड़गिड़ाकर भीख मांग रहे थे। ईरोस की नियोन लाइटें जगमगा रही थीं। ऐसा लगता था मानों इस उदासी के अंग पर ये नियोन लाइटें अलंकार की भाँति चमक रही थीं। ओवल का मैदान, एलफिंस्टन का कालेज, अपोलो बन्दर, दूर समुद्र में पहाड़ियाँ-सुहास देखता ही रहा। रेखा कुछ भी नहीं बोल रही थी। कोयल की तरह कुहुकने, पतंगे की तरह उड़ने और मछली की तरह तैरने वाला यह प्रेम आज सभर कैसे बन गया ? रेखा सोच रही थी, सुहास भी सोच रहा था। परन्तु, दोनों के विचारों के छोर क्या सचमुच कहीं मिलते थे ?

भीड़ के बीच जहाँ कुछ निर्जनता थी, वहीं दोनों जाकर खड़े हो गये। रेखा का हाथ सुहास के हाथ को खोजता हुआ आगे बढ़ा। सुहास के हाथ ने प्रगल्भ होकर रेखा के हाथ को पकड़ लिया। रेखा कुछ बोली नहीं। सुहास बड़ी मुश्किल से मौन धारण किये खड़ा था। किसी जहाज का भोंपू बजा। समुद्र में, एक छोटी सी नांव में एक टिमटिमाता दीपक दिखायी पड़ा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२१ मार्च १९६५

सुहास और रेखा किनारे पर बैठे। दूर समुद्र पर के अगोचर अन्धकार में भविष्य की रेखा खोजती हुई उनकी आँखें मूक थीं, फिर भी मानों दोनों की वेदना अंगुली पकड़ कर चल रही थी– दूर के अन्धकार में दोनों की वेदना मानो विहार करने निकल पड़ी थी, नन्हें बालक की तरह। सुहास अकुलाया, उसने रेखा से कहा, 'रेखा, बोल, कुछ तो बोल!'

रेखा ने कहा, 'क्या बोलूं? प्रियतम, प्राणेश्वर.....' सुहास ने कहा, 'नहीं। मात्र हूँ कह न! अथवा वह भी नहीं। अन्धकार में जिसे देख भी नहीं सकूं, ऐसी तुम्हारे ओठों की किंचित् कम्पन!...'

रेखा बोली, 'कल तक सब कुछ कितना निश्चित था। अब सब कुछ अनिश्चित है।'

सुहास सहज ही आकुल होकर बोला 'अनिश्चित है, इसीलिए तो साहस.....'

रेखा ने हँस कर कहा, 'अब मुझे तुम्हारा नाम बदलने का अधिकार मिल गया न! चलो, अब से तुम्हारा नाम 'सुहास' के बदले 'साहस' हो गया!'

सुहास ने कहा, 'तुम्हारे बिना क्या कभी ऐसा साहस होता?'

रेखा बोली, 'मानती हूँ। मैं मात्र सहचारिणी नहीं, सह साहसिनी भी हूँ।'

सुहास को सूझ नहीं पड़ा कि आगे क्या बोलना चाहिए? उसे याद आया: वह बोलता है, रेखा लिखती है– लिखती चली जाती है, साथ-साथ हँसी मजाक भी करती जाती है। उसके काव्य की पंक्तियों के बीच में रेखा की मधुर मुस्कान भी थिरक उठती है। उसकी आँखों की अचलता सुहास की कविता के अन्वय को चकरी की तरह घुमा देती है। कभी-कभी रेखा की आँखों में अकारण ही (कारण जानने के लिए सुहास बार-बार पूछता है, रेखा एक ही जवाब देती है: कारण जानने के लिए ही तो तुम्हारे पास आयी हूँ।) आँसू आ जाते थे। सुहास उसकी तरफ देखता रहता है। दो आँखें, आँसुओं से भरी दो लाल–लाल आँखें– इनमें किसी का प्रतिबिम्ब नहीं, ये आँखें किसी को देखतीं नहीं, फिर भी इन आँखों में स्मृति है– अगाध स्मृति। इस स्मृति में वेदना के ज्वार आते हैं और इन ज्वारों के आगे वह अपने को बिलकुल नगण्य देखता है– किसी नाव में टिमटिमाते दीपक की तरह। और फिर यह रेखा– जो गाढ़ आलिंगन में बिलकुल अपने में खो जाती है, उसे वह बहुत दुर्लभ मानता है। उसका हृदय विमूढ़ बन जाता है। कुछ भी नहीं सूझने पर वह सामने बैठी हुई रेखा को दबोच लेता है। रेखा अकुलाती नहीं, असमंजस में नहीं पड़ती। पूर्ण स्वस्थता से मानों कहती है: 'सुहास, तुम्हीं ने तो जीवनानन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की कविता मुझे सुनायी थी, सुनायी थी न ! कवि क्या कहता है, वह याद है ? कवि कहता है कि यह तो व्याघ्रयुग है। इस की मुख्य प्रवृत्ति हरिणी का मीठा मुलायम मांस भक्षण करने की है। सभी पुरुष बाघ–अथवा अच्छे शब्दों में कहूँ तो नर–शार्दुल हैं।' यह याद आते ही रेखा को स्पर्श करने का सुहास का मोह चला जाता है। अन्धकार में उभर आती मात्र उसके आभास की रेखाओं को आँख से स्पर्श करता है– जिस प्रकार दूर-दूर के तारे समुद्र की तरंगों को स्पर्श करते हैं; जिस प्रकार जुहू के समुद्र तट पर के नारियलों का पूर्ण मर्मर आकाश के मौन को स्पर्श करता है। फिर दोनों उठे– एक-दूसरे से अलग होने के लिए गाड़ी में बैठे। फर्स्ट क्लास का डब्बा लगभग खाली था। स्टेशन इस प्रकार आ-जा रहे थे, जैसे, रंगबिरंगी चित्रों वाली किताब के पन्ने हवा में फरफराते हों। सुहास रेल की पटरियाँ देख रहा था। पटरियाँ किस प्रकार एक-दूसरे से मिल जाती थीं, फिर दूर हो जाती थीं। दूर माहिम की खाड़ी में समुद्र जल पर धुंधला प्रकाश पड़ रहा है, सफेद फैनों की माला अंधकार में दौड़ती हुई दिखायी पड़ती है। रेखा उसके अधिक निकट आती है। सुहास के हृदय में कोई गहरी व्यथा जाग पड़ती है। उसे खबर नहीं कि यह व्यथा कहाँ से आती है ? उसके वक्षस्थल में रेखा का मुख खो जाता है। सुहास कहता है, 'रेखा क्या ऐसे ही प्रेम की आशा से हमने जन्म नहीं लिया ? तुम मेरी ओर जानबूझ कर नहीं बढ़ रही थी, न मैं ही दिशा का ज्ञान भूलकर खड़ा था। यह प्रेम– इसके सर पर किसी घर की छत नहीं, उसके चौखट की कोई सीमा नहीं, तुलसी की क्यारी, कंकण ध्वनि करते हाथ द्वारा प्रज्वलित घी के दिये से यह घिरा नहीं। आकाश का ही इसको सहारा। रेखा यह गाड़ी दौड़ती जाती है, मान लो कि यह कभी रुकने वाली ही नहीं। हम दूर-दूर तक दौड़ते ही जाते हैं– नदी का प्रवाह हममें मिलता है, पर्वतों की निर्जनता हमारे हृदय के एकान्त को पहचानने लगी है, एक अश्रु बनकर जमता है और पास ही बैठी है हमारी मौत–उसकी उष्णता से हम ठिठकते नहीं, हम दौड़ते ही चले जाते हैं। रेखा, तुम दूर तक फैली हुई एकान्तिकता की सीधी रेखा हो जो पीछे मुड़ कर देखती नहीं, क्षितिज को भेद कर दौड़ती जाती हो, और मैं निहारिका को अदृश्य तारे की तरह दूर-दूर से उसे देखता रहता हूँ, युग-युग से–'

सुहास बोलता जाता है और रेखा, परम सुख से तृप्तक पोती की तरह, अतल गहरायी से मात्र, 'हाँ' कहने के लिए सहज-समतल पर आती है। सुहास उसकी आँखों में एक गहन सुख की मादकता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देख रहा है। ये आँखें उसे बहुत अच्छी लगती हैं। इन आँखों में प्रलय है, और प्रणय प्रलय के बिना क्या कभी सम्भव है? रेखा के हृदय की अत्यन्त गहराइयों से आते 'हाँ' को सुननेके लोभ में वह बोलता ही जाता है। उसे मालूम नहीं कि ये शब्द कहाँ से आते हैं? चारों ओर के अंधकार में से या आसपास फैली हुई मानव व्यथा की गहरायी में से, अथवा ये शब्द केवल मौन के बुद्बुदे हैं और आखिर तो वह स्वयं रेखा के मौन भँवर में एक बुद्बुदा मात्र!

सुहास ये सब कुछ नहीं जानता। स्पर्श का कोई झंकृतिपूर्ण महाकाव्य उसके अंगुली के पोर के नीचे उभरता मालूम होता है। उसे आँख से पहचाना नहीं जा सकता, स्पर्श से ही जाना जा सकता है। वह स्पर्श में उतर आता है। दूर की नीलिमा का स्पर्श, धूसर विह्वलता का अश्रु, गद्गद् स्पर्श, दूर-दूर से ताकता मृत्यु, का स्पर्श—

सुहास तुष्ट है, रेखा लुप्त है—मानों अंधकार में ही अंधकार की सहस्र धाराएँ लुप्त हों।

अनु. ओंकारनाथ शर्मा

मुसीबत क्यों मोल लेते हैं?

क्या आप लेना चाहेंगे? नहीं, न! लेकिन आप हमेशा खरीददारी सेर या पौंड में करते हैं।

ये बाट गैरकानूनी हैं। जो दुकानदार इनका प्रयोग करते हैं उन्हें सजा मिल सकती है। पर आपको तो तुरन्त सजा मिल जाती है—आपके पैसे के बदले में आपको वस्तु कम मिलती है।

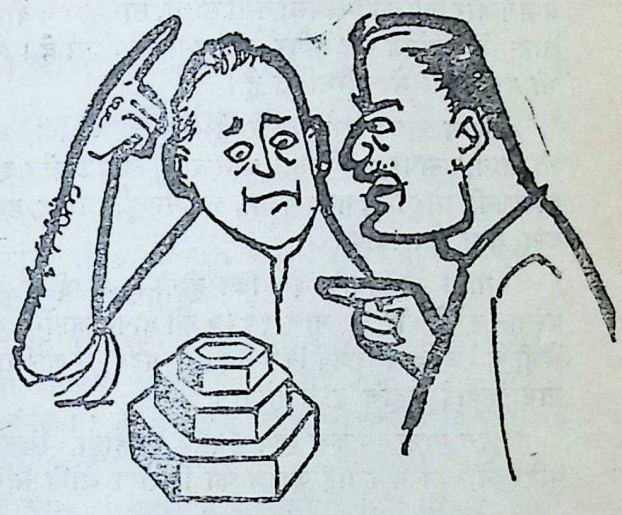

किलो में ही खरीददारी कीजिए

DA 64/372

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भवन की चतुर्थ सांस्कृतिक विकास-यात्रा

पशुपतिनाथ की यात्रा

यह सूचित करते हुए हमें अपार हर्ष हो रहा है कि भारतीय विद्या भवन की चतुर्थ सांस्कृतिक विकास यात्रा, नेपाल की राजधानी काठमाण्डू में महाशिवरात्रि के पुण्यपर्व पर भगवान पशुपतिनाथ के दर्शनार्थ जायेगी। प्रत्येक वर्ष इस पवित्र अवसर पर भगवान के दर्शन-पूजन के लिए सहस्रों तीर्थयात्री वहाँ एकत्रित होते हैं और महादीप, अखण्ड-दीप तथा लक्षवत्ती के दर्शन तथा भगवान शिव के स्तुतिगान और रात्रि-जागरण का पुण्य प्राप्त करते हैं।

काठमाण्डू की घाटी अपनी सुन्दरता के लिए प्रख्यात है। इसे मंदिरों की भूमि भी कहा जाता है क्योंकि यहाँ पर बहुत बड़ी संख्या में मंदिर, पगोडा तथा धार्मिक स्थान हैं, जो बौद्ध और हिन्दू स्थापत्यकला के उत्कृष्टतम उदाहरण हैं।

हमने इस यात्रा में द्वारका, डाकोर और जगन्नाथपुरी के सुप्रसिद्ध वैष्णवधाम तथा उज्जैन के महाकाल तथा प्रभास, पाटण के सोमनाथ के ज्योतिर्लिंगों तथा काशी, प्रयाग और गया की त्रिस्थली तथा सांची, सारनाथ व बौद्ध गया के बौद्धतीर्थ और पालीताना के सुप्रसिद्ध जैन मंदिर का समावेश किया है। राष्ट्रीय महत्व एवं विकास-केन्द्र भी इस मात्रा में सम्मिलित हैं।

मुख्य स्थान इस प्रकार हैं—सूरत, वड़ौदा, अहमदाबाद, द्वारका, पोरबन्दर सोमनाथ, जूनागढ़, पालीताना, आनन्द, डाकोर, उज्जैन, इन्दौर, भोपाल, सांची, इलाहाबाद, वाराणसी, सारनाथ, गया, पटना, काठमाण्डू, दुर्गापुर, हवड़ा, पुरी, कोणार्क, सिकन्दराबाद तथा हैदराबाद।

यात्रा की अवधि ३५ दिन होगी। बम्बई से ६ फरवरी १९६५ को यात्रीगण प्रस्थान करेंगे और १२ मार्च १९६५ को वापस आयेंगे। यात्रा के लिए विशेषरूप से प्रथम श्रेणी के रेल-डिब्बे रिजर्व किये गये हैं। पटना से काठमाण्डू और वहाँ से वापस पटना की यात्रा हवाई जहाज द्वारा होगी।

इस यात्रा का कुल व्यय १२५० रु. होगा, जिसमें भोजन, घूमने-फिरने, ठहरने, परिवहन व्यय व हवाई जहाज का किराया आदि सम्मिलित है।

भवन के सभी सदस्यों तथा मित्रों को सपरिवार इस यात्रा में भाग लेने के लिए आमन्त्रित किया जा रहा है। अधिक विवरण के लिए लिखिए– या मिलिए:–

सांस्कृतिक विकास यात्रा विभाग, भारतीय विद्या भवन, चौपाटी रोड, बम्बई ७

[टेलीफोन : ७७४५१, ७८७०२]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[वह मर्त्य नारी...पृष्ठ ३२ का शेष]

भाई मक्कम को सदा के लिए मरी हुई जान घर लौट आये। लेकिन यह उनकी भूल थी। उन्होंने अपने घर में जो देखा उससे उनके रोंगटे खड़े हो गये। मक्कम, अपने दोनों बच्चों के साथ देवी के रूप में खड़ी थीं और घर की स्त्रियाँ दण्डवत् की मुद्रा में पड़ी हुई थीं। उसे देखकर भाइयों ने खून के झाग भरे मुख से पागलों की तरह चिल्लाना शुरू कर दिया और वे देवी के चरणों में निष्प्राण होकर गिर पड़े।

मक्कम की यह कहानी अब भी गीतों में कही जाती है और उत्तर मालाबार में कडाकोट के मक्कम भगवती नाम के उसके मन्दिर में गायी जाती हैं। जिस कुएँ में मक्कम को फेंका गया था, वह आज तक सुरक्षित है और 'मक्कम कुआँ' कहलाता है। कहीं देवी उन्हें उनकी ज़ुबान से खींच न ले, इसलिए बहुत कम लोग उसमें देखने का साहस करते हैं।

—अनु. विमल के. गुप्ता

★

विवेकानन्द साहित्य

जन्मशती हिन्दी संस्करण

कुल १० खंड—डबल डिमाई १६ पेजी साइज में; अनुक्रमणिका समेत पृष्ठ संख्या प्रति खंड लगभग ४५०; मजबूत और आकर्षक सजिल्द प्रति खंड का मूल्य ६ रु.। पूरे सेट रेल द्वारा मँगाने से रेल-खर्च नहीं लगेगा। पुस्तक विक्रेताओं के लिए विशेष कमीशन दिया जाता है।

स्वामी विवेकानन्द की समग्र ग्रन्थावली **'विवेकानन्द साहित्य'** उनके ओजपूर्ण व्याख्यानों तथा गम्भीर लेखों का पूर्ण संकलन है। अनुवादकों में पं. सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', पं. सुमित्रानंदन पंत, डा. प्रभाकर माचवे, श्री फनीश्वरनाथ रेणु, डा. नर्मदेश्वर प्रसाद आदि ख्यातिलब्ध साहित्यकारों के नाम उल्लेखनीय हैं।

"निस्सन्देह किसी से स्वामी विवेकानन्द के लेखों के लिए भूमिका की अपेक्षा नहीं है। वे स्वयं ही अप्रतिहत आकर्षण हैं।"—महात्मा गाँधी

व्यवस्थापक, अद्वैत आश्रम,

५, डिही एंटाली रोड, कलकत्ता—१४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परम अग्नि-पुरुष जरथुस्त्र

डॉ. सी. कुन्हनराजा

…एक ही व्यक्ति को मैं जानता हूँ, जिसने मेरे सभी आदेशों का पालन किया है, वह है महात्मा जरथुस्त्र वह गीतों और भजनों के रूप में मेरे आदेशों से संसार के सामने प्रस्तुत करके मानवता से सत्य के मार्ग पर प्रवृत्त करता है।

लगभग तीन हज़ार वर्ष पूर्व, ईरान में ज़रथुस्त्र के धर्म का प्रवर्तन हुआ था। यद्यपि इस धर्म का प्रादुर्भाव ईरान में हुआ, यह समस्त संसार में फैला। किन्तु, विडम्बना यह रही कि जिस भूमि पर इसका प्रकाश सर्व प्रथम विकीर्ण हुआ, वही भूमि छूट गयी और इस धर्म के अनुयायी शरण लेने आये भारत में। ईसा की प्रथम सहस्राब्दी के अन्त में एक अन्य धर्म-प्रवाह के वेग से इस धर्म की दिशा पूर्व हो गयी।

ज़रथुस्त्र के धर्म के अनुयायी हाथ में अग्नि और हृदय में आस्था लेकर, अतिथि बने उस देश में आये, जो सभ्यता के आरम्भ से ही अतिथि-सत्कार में आगे रहा है– अतिथि देवो भव। ये अनुयायी हमारे पारसी भाई हैं।

आज उनके अपने देश ईरान में बहुत कम पारसी-परिवार रह गये हैं और जो महत्त्वपूर्ण अल्पसंख्यक होकर रह गये हैं। आप ईरान जायँ तो आप उनसे मिलेंगे, जो अपने को ज़रथोष्टि कहते हैं। ज़रदोश्त के धर्म के अनुयायी जो हैं वे।

ईरान भर में, शहरों के कोने-कोने में तथा पहाड़ियों की चोटियों पर वर्गाकार इमारतों के अवशेष मिल जायेंगे, जिन्हें वे आतिश-कदे कहते हैं। अतिशकदे का अर्थ है– अग्नि का स्थान। ये अवशेष वे मन्दिर हैं जहाँ ज़रथुस्त्र के अनुयायी अग्नि की पूजा किया करते थे।

पारसी धर्म के महान् प्रवर्तक ज़रथुस्त्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

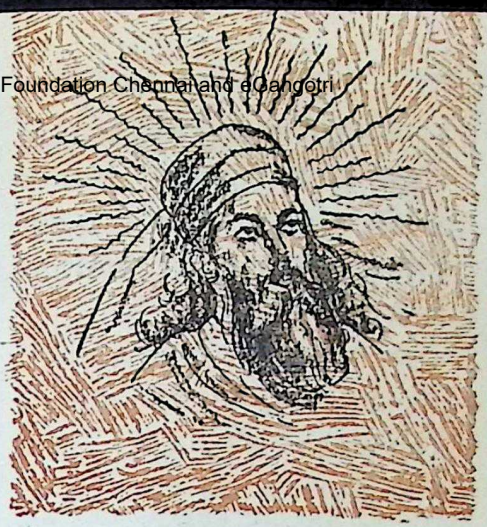

का जन्म ईरान में हुआ था। उनके जन्म-स्थान के सम्बन्ध में मतैक्य नहीं हैं, और जन्म का ठीक समय भी किसी को ज्ञात नहीं है।

पारसी धर्म की गाथाओं से इस धर्म का विस्तृत परिचय मिलता है। गाथाओं में खास तौर से इस बात का ज़िक्र किया गया है कि परमात्मा ने ज़रथुस्त्र को संसार में अपना सन्देश देकर भेजा, ताकि वे धरती पर आकर मानवता को पापों से बचायें।

ज़रथुस्त्र और श्रीकृष्ण के जन्म की कथाओं में बहुत साम्य है। गाथा में ज़रथुस्त्र और श्रीमद्भागवत में श्रीकृष्ण के जन्म की कथा है। दूसरी गाथा में इस प्रकार का वर्णन है। धरती, अहुरा मज़्दा जो ईश्वर है, के पास स्वर्ग में, एक गाय के रूप में पहुँची। उसने प्रभु अहुरा मज़्दा से अपनी पीड़ा कही और बताया कि भयानक अत्याचारों के मारे संसार का बुरा हाल है। धरती ने शिकायत भी की कि आखिर उसे जन्म ही क्यों दिया गया? क्या केवल इतना कष्ट और अपमान सहने के लिए ही? घोर हिंसा और अन्याय ने धरती को जकड़ लिया था। उसने अहुरा मज़्दा से अपने रक्षक की मांग की।

अहुरा मज़्दा ने कहा– 'एक ही व्यक्ति को मैं जानता हूँ जिसने मेरे सभी आदेशों का पालन किया है, वह है महात्मा ज़रथुस्त्र स्पितमा। वह गीतों और भजनों के रूप में मेरे आदेशों को संसार के सामने प्रस्तुत करके मानवता को सत्य के मार्ग पर प्रवृत्त करने जा रहा है। मैंने उसे मधुरतम स्वर भी दिया है। उसके कण्ठ में दिव्य प्रभाव की क्षमता होगी।' धरती ने नम्रतापूर्वक कहा– "परन्तु मैं एक शक्तिशाली राजकुमार की अपेक्षा रखती हूँ, जो शक्ति के बल से भी पाप का नाश करे और मानवता का रक्षण एवं पोषण करने में समर्थ हो। क्या मैं अपने स्वप्नों के अनुसार ऐसा कोई त्राता पा सकूँगी?"

अहुरा मज़्दा ने कहा– "जो मेरे आदेशों पर चलेंगे, उनके हाथों में असीम शक्ति होगी और वे सभी प्रकार से समर्थ और सूक्ष्म होंगे। वे ही मानवता को शान्ति और आनन्द के मार्ग पर ले जायेंगे।"

धरती ने ज़रथुस्त्र को अपने त्राता के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूप में स्वीकार करने का वचन दिया और प्रतिज्ञा की कि वह अहुरा मज़्दा के आदेशों का पूर्णतया पालन करेगी और देवदूत ज़रथुस्त्र को सर आँखों पर रखेंगी।

ज़रथुस्त्र का सम्बन्ध राज परिवार से था। अधर्म के बढ़ने पर परमात्मा ने उन्हें धरती के उद्धार के लिए भेजा। भगवान श्रीकृष्ण भी एक राज परिवार से ही सम्बद्ध थे और "यदा यदाहि धर्मस्य ---" के अनुसार ही धरती पर आये थे। फ़र्क इतना है कि ज़रथुस्त्र ईश्वर का सन्देश लेकर आये और श्रीकृष्ण स्वयं परम पुरुष माने गये हैं।

आधुनिक विद्वानों ने ऐतिहासिक पुरुष ज़रथुस्त्र और देवदूत ज़रथुस्त्र में भेद किया है। उनका कहना है कि एक ऐतिहासिक ज़रथुस्त्र अवश्य हो गया है, जिसने ईरान में धर्म का सुधार किया और जन-जीवन पर हावी रहा, किन्तु, वह ज़रथुस्त्र कोई और था, जो मात्र पुराण-पुरुष है और जिसके व्यक्तित्व पर अनेक चमत्कार आरोपित कर दिये गये हैं।

किन्तु, यह एक प्रवृत्ति विशेष का द्योतक है। आधुनिक विद्वानों ने प्रायः एक क्राइस्ट से अलग दूसरा क्राइस्ट खोज लिया है और एक बुद्ध के अतिरिक्त उनके खज़ाने में से एक-दो बुद्ध और निकल आये हैं। श्रीराम और श्रीकृष्ण के बारे में भी वे अनेक सन्देह और शंकाएँ प्रस्तुत करते हैं, किन्तु, अरब के पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद के व्यक्तित्व के सम्बन्ध में उनके मस्तिष्क की उर्वरता न जाने कहाँ चली जाती है। कुछ भी हो, ज़रथुस्त्र के व्यक्तित्व और मानवता को उनकी देन का महत्त्व निर्विवाद है। इतिहास-पुरुषों के पौराणिकीकरण की प्रवृत्ति आधुनिक चिन्तन-पद्धति का एक चमत्कार बन कर रह गया है।

कुछ विद्वानों का मत है कि ज़रथुस्त्र का यह नाम उन्हें बाद में मिला था, किन्तु अधिकतर लोग इस बात पर सहमत हैं कि यह उनका वही नाम है, जो परिवार में मिला था। उन्हें स्पितमा कुटुम्ब का माना जाता है। उनके पिता का नाम पौरूशस्प बताया जाता है।

ज़रथुस्त्र अपने समय के अप्रतिम महापुरुष थे। उनके अनेक गुणों के कारण वे एक आदर्श व्यक्तित्व थे जिनकी अद्भुत विशेषताओं ने उन्हें मानवेतर प्रतिष्ठा प्राप्त करायी। सदाचरण में वे इतने आगे थे कि अहुरा मज्दाने मानवता के कल्याण के लिए उनको ही चुना।

अनेक अकार्षणों ने उन्हें उनके पथ से विचलित करना चाहा, किन्तु, वे अडिग रहे। शैतान ने उन्हें समाप्त कर देना चाहा, किन्तु, वह स्वयं अभिभूत हो गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज़रथुस्त्र के अद्भुत कार्यों का व्यवस्थित लेखा उस रूप में नहीं मिलता, जिस रूप में बाइबिल प्रभु येसु के सम्बन्ध में बहुत कुछ बतलाता है।

श्री राम को वाल्मीकि, श्रीकृष्ण को व्यास मिले। ज़रथुस्त्र के समकालीन विद्वान और मनीषी भी थे। जिन्होंने उनके सम्बन्ध में जानकारी प्रस्तुत की थी, किन्तु वह सब कुछ अब काल-कवलित हो चुका है जिसका दायित्व महान कहे जानेवाले सिकन्दर पर है।

ज़रथुस्त्र के उपदेशों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उन्होंने किसी पर आक्रमण नहीं किया, किसी की भर्त्सना नहीं की। उस समय पूर्व में वैदिक धर्म का प्रचार था और ईरान में ज़रथुस्त्र के धर्म का, किन्तु, दोनों में किसी प्रकार के विग्रह-संघर्ष का उल्लेख नहीं मिलता। बाद में बौद्ध धर्म भी ज़रथुस्त्र के अनुयायियों के क्षेत्रों की सीमाओं तक पहुँच गया, किन्तु, इतिहास साक्षी है कि दोनों धर्मों के अनुयायियों ने शान्तिपूर्ण सह अस्तित्व को व्यावहारिक रूप से जिया, कोरी बातें नहीं कीं।

आज कल ज़रथुस्त्र की वाणी मूल अवेस्ता और पहलवी में सुरक्षित है, वही प्रचलित भी है। कहा जाता है कि अवेस्ता में बीस लाख पद थे, किन्तु, अब जो कुछ प्राप्य है, वह बहुत कम है। फिर भी अनेक जिल्दों में जो कुछ मिलता है, वह अमूल्य है, महान है।

जैसे वैदिक ऋषि प्रायः कवि भी हुआ करते थे, ज़रथुस्त्र भी एक कवि थे, किन्तु, एक साथ धर्म प्रवर्तक और सशक्त कवि होना एक निराली बात है। यश्न के बहत्तर खण्ड हैं। फारसी में जो 'यश्न' है वही संस्कृत में 'यज्ञ' है। फारसी में जो 'यश्त' है वही संस्कृत में 'यजत्' है।

गाथाओं में महत्त्वपूर्ण धर्म और अध्यात्म होने के अतिरिक्त काव्य का उच्च स्तर भी है। यश्त में, छन्दों की अपूर्णता के बावजूद भाव-समृद्धि है और जो उच्चतर भूमिपर प्रतिष्ठित है। साहित्यिक दृष्टि से भी इनका अत्यधिक महत्त्व है।

ज़रथुस्त्र के उपदेशों तथा वैदिक ज्ञान में बहुत साम्य है। 'हाओमा–यश्न' अवेस्ता में है और 'सोम-यज्ञ' वेदों में। 'अहुरा' वास्तव में 'असुर' है। यहाँ यह स्मरणीय है कि एक समय में 'असुर' शब्द उसी अर्थ में प्रचलित और व्यवहृत था, जिस अर्थ में आज कल 'सुर' शब्द है। समानता के अनेक सूत्र यह प्रमाणित करते हैं कि ज़रथुस्त्र का धर्म एक पॉज़िटिव और सशक्त, किन्तु, अनाक्रामक प्रकृति का है और हमेशा से ऐसा ही रहा है।

ज़रथुस्त्र के धर्म में उच्च नैतिकता का समावेश है। वह आज भी न केवल पारसियों का, बल्कि व्यापक मानवता को प्रेरित करने में समर्थ है।

अनु. श्रीहरि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२१]

कृष्ण के साथ मैं लड़ नहीं सकूंगा

शृंगलव वासुदेव के महल में आज उत्सव मनाये जाने की धूम थी। राज-दरबारी प्रातः ही से सुन्दर-सुन्दर वस्त्रालंकारों से सज्जित हो राज-दर्शन के लिए एकत्र होने लगे थे। श्वेतकेतु तथा उसके सहायक अधिकारी के रूप में उद्धव भी वहाँ उपस्थित थे। उद्धव ने इस आशंका से कि कोई पहचान न लें, अपनी दृष्टि नीचे झुका ली थी। शाम तक तो उसके नगर से बाहर निकल जाने का प्रबंध श्वेतकेतु करने ही वाला था, परन्तु तब तक के लिए तो उसे यह स्वांग रचे बिना चारा नहीं था।

श्रृंगलव के आते ही उसका स्वागत करने के लिए इत्र, पुष्प, रंग, संगीत सभी का प्रबंध पहले से ही तैयार था। प्रमुख पुजारियों के अंग स्वर्णालंकारों से प्रदीप्त थे।

श्रृंगलव आ पहुँचा। उसके प्रवेश के साथ ही वातावरण शंखनाद और जय-जयकार से गूंज उठा। रत्नमुकुट, कंठ-हार, बाजूबंध, कमरबंध इत्यादि रत्नजड़ित अलंकारों पर पड़ रहे सूर्य प्रकाश के कारण श्रृंगलव के चारों ओर एक तेजवर्तुल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की रचना हो गयी थी। गजराज की सी मंथर गति से वह आगे बढ़ा। सभी लोगों ने उसके चरणों में साष्टांग प्रणाम निवेदन किया। अपने आसन पर बैठने के बाद जब उसने चारों ओर भुजा उठा कर सब-को आशीर्वाद दिया तो फिर एकबार शंखध्वनि हुई। तब एक अन्य सुन्दर स्त्री ने हाथ में आरती लेकर प्रवेश किया। उसके पीछे एक प्रौढ़ स्त्री थी। उद्धव को लगा कि वह रानी पद्मावती होनी चाहिए। पहली सुन्दर स्त्री को उसने शैव्या समझा। शैव्या की सुन्दरता की सराहना स्वयं उद्धव ने की और श्वेतकेतु को उसके अपराध के लिए मन ही मन क्षमा प्रदान की। वह अनिंद्य सुन्दरी थी और कोई भी उसके रूप से मोहित हो सकता था। उसके सामने रानी पद्मावती फीकी पड़ती थी। कभी वह सुन्दर रही होगी, परन्तु अब तो वह कृषकाय और भीत लगती थी। उद्धव को लगा कि रानी सतत भय के वातावरण में ही जीती होगी, यहाँ तक कि शैव्या से भी वह भय-भीत जान पड़ती थी। उद्धव को सहज ही उसके प्रति सहानुभूति हो गयी।

आरती के बाद सभी एकत्र स्त्री-पुरुषों ने श्रृंगलव के चरणों में फिर प्रणाम किया और 'देवाधिदेव भगवान वासुदेव की जय,' के नारे लगाये। रानी से लेकर सभी ने चरणामृत लिया। उद्धव ने देखा कि रानी इस विधि में यंत्रवत् भाग ले रही थी, जबकि शैव्या एक प्रेरक और अपूर्व भक्तिभाव से उसमें रस ले रही थी। भगवान वासुदेव के प्रशस्तिपत्र गाये गये। शैव्या ने वासुदेव के भक्तिस्तोत्र गाये और लोगों ने उसका अनुकरण किया। विधि जब पराकाष्टा पर पहुँची, तब दुर्गपाल तेजी से महल में आता दिखायी पड़ा। वह वेगवान अश्व पर आया था। अश्व पर से कूद कर वह सीधा दरबारगृह में ही चला आया। दरबारी और सेवक स्तोत्र गाने में लीन थे, परन्तु शृंगलव की दृष्टि तत्काल उस पर गयी।

श्रृंगलव के हाथ उठाने पर सभी शांत हो गये। उसने दुर्गपाल को हाथ के संकेत से पास-बुलाया। दुर्गपाल ने आकर, प्रणाम निवेदन किया और हाथ जोड़ कर खड़ा हो गया।

'क्यों, क्या बात है?' श्रृंगलव ने गौरवपूर्ण स्वर से पूछा।

'भगवान वासुदेव की जय हो! भगवान, कृष्ण वा.....' वह हिचकिचाया और शब्द ढूंढ़ने लगा। 'मथुरा का यादव, कृष्ण बाहर दरवाज़े पर खड़ा है और कहता है कि भगवान के दर्शनार्थ आया है। वह किले में प्रवेश पाना चाहता है!' उसने कंपमान स्वर में कहा। श्रृंगलव का चेहरा विकराल बन गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुर्गपाल के शब्द सुन कर उद्धव का हृदय चंचल हो उठा। कृष्ण आये हैं, और उन्हें यह भी मालूम नहीं कि उद्धव का क्या हुआ और यहाँ आने में क्या ख़तरा है!

'हम ऐसे आदमी को दर्शन नहीं देते। श्वेतकेतु, यहाँ आओ!' शृंगलव ने कहा।

श्वेतकेतु भी दुर्गपाल की ख़बर से चिंता में पड़ गया था। शृंगलव के बुलाने पर और भी बौखला गया।

'श्वेतकेतु, तुम कृष्ण की भाषा जानते हो। तुम जाकर उससे पूछ आओ कि हमसे उसे क्या काम है!' शृंगलव ने कहा।

श्वेतकेतु क्षण भर दुविधा में पड़ गया।

'जाओ, जल्दी जाओ और जल्दी ही लौट आओ। यहाँ हम तब तक पूजनविधि पूरी कर लेते हैं,' शृंगलव ने कहा।

श्वेतकेतु ने देखा कि अब बचने का कोई उपाय नहीं है। उसने प्रणाम कर विदा ली। रानी पद्मावती ने धीमी आवाज़ में पूछा, 'भगवान, कोई अतिथि दर्शन के लिए आये, तो उसका आतिथ्य तो करना ही चाहिए न?'

शृंगलव ने रानी के सामने इस तरह घूर कर देखा कि रानी भयभीत होकर चुप हो गयी। लज्जा से उसका मुख निस्तेज हो गया। यदि शैब्या उसे सहारा न देती तो शायद वह गिर ही जाती। उद्धव ने देखा कि शृंगलव रानी का खुला अपमान कर उसे संत्रस्त कर रहा है। शायद इसमें उसने शैब्या को साधन बनाया होगा। उत्सव चालू रहा, लेकिन उत्सव का जोश खत्म हो गया। फिर प्रसाद बंटा जिसे सभी ने चुपचाप ग्रहण किया। जैसे कुछ असाधारण घटित होने वाला है, इस प्रकार का एक बोझ सभी के मन पर था। थोड़ी देर बाद श्वेतकेतु लौटा। उसके चेहरे पर उत्तेजना के भाव स्पष्ट थे। प्रणाम कर वह हाथ जोड़े खड़ा रहा।

'क्या कहता है वह ग्वाला?' शृंगलव ने पूछा।

'भगवान वासुदेव,' श्वेतकेतु ने कंपमान स्वर में कहा, 'अतिथि ने भगवान के प्रश्न के उत्तर में कहा कि मैं मथुरा के शूरों के अधिनायक वसुदेव का पुत्र हूँ। मैं अपने भाई तथा चेदिराज को पीछे छोड़ कर अकेला आप से मिलने आया हूँ। करवीर-पुर के स्वामी से मैत्री सम्बन्ध स्थापित करने की मेरी इच्छा है।' फिर कुछ हिचकिचाहट के साथ श्वेतकेतु बोला, 'उसने एक कृपा की याचना की है। वह कहता है कि मेरे मित्र उद्धव को लौटा दो और जितने भी आचार्यों को कारावास दे रखा है, उन्हें मुक्त कर दो—मैं उन्हें अपने साथ ले जाऊँगा।'

शृंगलव भड़क उठा। 'इस दुष्ट ग्वाले को तुमने भगा नहीं दिया?'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'भगवान, आपकी आज्ञा के बिना मैं क्या कर सकता हूँ? परन्तु जो उद्धव को कहा वही मैंने उससे भी कहा, मेरे भगवान को एकमात्र वासुदेव भगवान मान लो तभी वे तुम्हें दर्शन देंगे।'

श्वेतकेतु के स्मृतिपट पर कृष्ण से हुई अपनी बातचीत पूरी उभर आयी। कृष्ण उसे देखते ही पहचान गये थे और उसकी स्थिति का अनुमान भी उन्होंने लगा लिया था। माँ की ममता से कृष्ण ने पूछा था, 'श्वेतकेतु, भाई, तुम यहाँ? हम साथ-साथ जिस प्रभु की भक्ति करते थे, उन्हें छोड़ कर तुम यहाँ कैसे पहुँच गये?' कृष्ण के इन शब्दों में अपार व्यथा थी। उद्धव के अपमानभरे शब्दों से अधिक कृष्ण के इन स्नेह पूर्ण शब्दों ने श्वेतकेतु के हृदय में गहरा घाव कर दिया। मेरा कितना-कितना पतन हुआ है, इसका वास्तविक भान उसे तभी हुआ।

'उसने क्या उत्तर दिया?' श्रृंगलव ने पूछा।

श्वेतकेतु ने अपने मन से कृष्ण के प्रश्न की स्मृति को चेष्टा कर निकाल दिया और सावधान हो कर बोला, 'कृष्ण यादव मेरा प्रश्न सुन कर हँसा। उसने कहा कि मैं गिरिवर कैलाश परजाऊँगा तब देवाधिदेव महादेव के चरणों में प्रणाम करूँगा। और, अभी तक मैं वहाँ गया नहीं।'

'दुष्ट, अविवेकी, पापी ....' श्रृंगलव चीख उठा, 'वह अकेला है? सशस्त्र है?'

'वह रथ में आया है। साथ में सारथि है और ध्वजा लेकर चलनेवाला गरुडमुख सेवक भी है। कृष्ण के पास गदा, धनुष, चक्र और शंख है। उसने बार-बार यही कहा है कि मेरे आने का उद्देश्य करवीर-पुर के स्वामी से मैत्री स्थापित करना है,' श्वेतकेतु ने कहा।

'मैत्री करनी है? यह ग्वाला भगवान वासुदेव का मित्र बनना चाहता है?' श्रृंगलव ने तिरस्कार से होंठ विचकाये।

'भगवान यदि अनुमती दें तो कृष्ण ने जो आगे कहा वह भी निवेदन करूँ!'

'कहो!' श्रृंगलव ने आज्ञा दी।

'कृष्ण ने कहा, मैं थोड़ी देर धैर्य धारण कर प्रवेशद्वार पर खड़ा हूँ। पर, यदि उद्धव और आचार्यों को तुरन्त नहीं भेजा गया, तो दरवाज़ा तोड़ कर मैं अन्दर चला आऊँगा और अपने हाथों से सबको मुक्ति दिलाऊँगा!' श्वेतकेतु ने कहा।

दरबार में खड़े सभी लोग यह बात सुन कर स्तब्ध रह गये। एक अपरिचित युवक द्वार पर खड़ा यह धमकी दे रहा है कि करवीरपुर का दरवाज़ा वह तोड़ डालेगा! रानी ने भय से थरथराती आवाज़ में श्रृंगलव की ओर देख कर कहा, 'भगवान, कृपाकर आचार्यों को मुक्त करें!'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रृंगलव ने फिर एक बार रानी की ओर विकराल दृष्टि से देखा। 'हमें किसी-की सलाह नहीं चाहिए!' रानी पद्मावती के होंठ पर ही आगे के शब्द जम गये। वह बेहोश हो गयी। शैव्या ने उसे पकड़ लिया। शैव्या के मुख पर स्पष्टतः भक्ति भाव उमड़ आया। श्रृंगलव का बारह वर्ष का पुत्र शत्रु सिसकियाँ भरता हुआ माँ से लिपट गया।

'यादव हमारे तीर्थधाम के पवित्र द्वार का स्पर्श करे इससे पहले ही वह हमारे क्रोध का भोग बनेगा। श्वेतकेतु, श्रेष्ठ योद्धाओं को लेकर जाओ और अपने मामा का वध करनेवाले उस ग्वाले का सिर ले आओ! बृहद्रथ का पुत्र जरासंध शायद उसके सामने से भाग गया हो—वह कायर था—पर, हम इस छोकरे को अच्छा पाठ पढ़ायेंगे!'

श्वेतकेतु को लगा कि वह स्वयं बेहोश हो जायेगा। उसने श्रृंगलव के कठोर चेहरे की ओर देखा; फिर उसकी दृष्टि शैव्या पर पड़ी। शैव्या गौरव से उसकी ओर देख रही थी। उद्धव के चेहरे पर चिंता थी। बेहोश रानी का चेहरा एकदम निस्तेज हो गया था। श्वेतकेतु के कर्णपट पर कृष्ण का वह वात्सल्य प्रश्न गूंज रहा था: 'श्वेतकेतु, भाई, तुम यहाँ? हम एक साथ जिस प्रभु की भक्ति करते थे, उन्हें छोड़ कर तुम यहाँ?'

श्रृंगलव का भय उसे सता रहा शैव्या का आकर्षण उसके हृदय को लित कर रहा था। परन्तु कृष्ण के उज्जयनी में कृष्ण के साथ की गयी महाकालेश्वर की पूजा, ये स्मरण शक्तिशाली सिद्ध हुए। श्वेतकेतु के का संघर्ष अधिक नहीं टिका। प्रिय के शब्दों की विजय हुई। उसने मस्तक कर कहा, 'भगवान, इसके सिवा कोई भी आज्ञा कीजिए। कृष्ण के मैं लड़ नहीं सकूंगा।'

श्रृंगलव के चेहरे पर आश्चर्य क्रोध भाव देखने योग्य थे। शैव्या अपने कानों पर विश्वास नहीं हो रहा उसके होंठों से चीत्कार फूट पड़ी।

'क्या कहा!' श्रृंगलव गरजा।

श्वेतकेतु के कर्णपट पर फिर की वही मधुर वाणी गूंज उठी, तुम यहाँ! जिस प्रभु की भक्ति लोग साथ-साथ करते थे, उन्हें छोड़ तुम यहाँ?' उसने निर्भय होकर 'मैं कृष्ण के साथ नहीं लड़ूंगा- चाहें तो मेरी गर्दन उड़ा सकते हैं।'

दरबारी सभी स्तब्ध रह गये। श्रृं वासुदेव के साथ ऐसा साहस पहले ने नहीं किया था। उद्धव को लगा अब उसका वहाँ रुकना अनावश्यक श्रृंगलव के अधिकारी का रूप उसने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था, इसलिए वह स्वयं जाकर कृष्ण के लिए द्वार खोलने की स्थिति में था। सभी बौखलाये हुए थे, इसलिए स्थिति का लाभ उठा कर वह वहाँ से खिसका। फिर भी शैव्या की रोष भरी दृष्टि से वह छुपा न रह सका। क्रोध से उसका मुख लाल हो गया। कोई स्त्री क्रोध में इतनी सुन्दर दिख सकती है, इसकी उद्धव को कल्पना भी नहीं थी।

श्वेतकेतु की धृष्टता से क्षण भर तो श्रृंगलव भी बौखला गया। 'तुम उसे जानते हो?' उसने पूछा।

'हम दोनों गुरु संदीपनि के आश्रम में सहपाठी थे। वह मुझे प्रिय है, अतीव प्रिय है?' श्वेतकेतु ने उत्तर दिया।

'तो फिर तुम्हें भी यमद्वार जाना पड़ेगा!' श्रृंगलव ने कहा और रक्षकों को संकेत कर बोला, 'इस द्रोही को नर्क में डाल दो!'

श्वेतकेतु ने शस्त्र उतार दिये। रक्षकों के पीछे पीछे वह चला। शैव्या ने चीत्कार किया। श्वेतकेतु ने पीछे मुड़ कर देखा। उसकी दृष्टि में भयानक अनादर था। शैव्या के आकर्षण का जादू अब उस पर नहीं चढ़ सकता था। श्रृंगलव ने कहा, 'अब हम स्वयं ही जायेंगे। अपने हाथ से ही उस ग्वाले का वध करेंगे। सारथि! हमारा रथ तैयार करो! हमारा विराट धनुष प्रस्तुत करो! यादव को उसका काल पुकार रहा है।'

तत्काल रथ आ गया। चार पहियों के इस रत्नजड़ित रथ में करवीरपुर के चार श्रेष्ठ घोड़े जुते थे। चमचमाते स्वर्ण के बख्तर, कमरबंध और बाजूबन्ध पहने दो सारथी रथ चला रहे थे। रथ में आठ रक्षक भी खड़े थे। एक के हाथ में श्रृंगलव का ध्वज था और वह हवा में फरफरा रहा था।

श्रृंगलव ने अपना धनुष उठाया। एक रक्षक उनके रत्नजड़ित तरकश को हाथ में लिये खड़ा था; रथ में कूद कर श्रृंगलव उच्च सिंहासन पर जा बैठा। रत्नजड़ित स्वर्णालंकारों से सज्जित आसन पर बैठा हुआ वह सत्ता और समृद्धि का स्वामी प्रतीत होता था।

[क्रमशः]

अनु० ओंकारनाथ शर्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समीक्षक : श्रीहरि

अपने आप को पहचानिए—ले० महावीर अधिकारी, प्रकाशक—नारायण दत्त सहगल एण्ड सन्ज, दरीबा कलाँ, दिल्ली, पृ० सं० १५३, सजिल्द ,मूल्य: तीन रुपया।

इस पुस्तक का एक शीर्षक 'सुकरात की राह' भी है। अधिकारी जी ने सुकरात को प्रतीक रूप में लेकर विवेक की शक्ति द्वारा सत्य के मार्ग से जीवन चलाने की प्रेरणा देने का प्रयास प्रस्तुत पुस्तक के माध्यम से किया है। आज की संस्कृति कितनी खोखली, जीवन कितना उलझन-पूर्ण, राहें कितनी भ्रामक और तरीके कितने नक़ली हैं, यह हर समझदार आदमी जानता-समझता है। अँधियारे में विवेक का दीप किस प्रकार अक्षुण्ण रह कर मार्ग-दर्शन करता रहे, यही पुस्तक का प्रतिपाद्य है।

अधिकारीजी ने शास्त्रीय बातों को भी बातचीत के ढंग से रोचक बनाया और कठिन सिद्धान्तों को भी सरल सहज रूप में रखकर विषय से तादात्मय का परिचय दिया है। बात से नही, दिल से निकली हुई, बेचैनी हुए निकली हुई मालूम होती है।

अधिकारी जी एक चेतनमस्ति पत्रकार और मुक्त मन के निश्छ बेलौस आदमी हैं, इनकी इन विशेषता की छाप प्रस्तुत पुस्तक की शैली पर है। व्यक्ति और समाज के द्वन्द को उन्हे विचार ही नहीं, अनुभव के स्तर पर भोगा है, ऐसा उनके कथन की तीव्रता झलकता है।

वास्तव में, सहज स्वभाव के विका द्वारा, विवेक की राहों से आत्मोपलब्धि करने की कुंजी ही इस पुस्तक द्वारा आ हाथ में आती है, जिसे तैयार करने कितना परिश्रम हुआ होगा, ,अनुमा में आता ही है।

यह पुस्तक प्रत्येक समझदार आदमी पढ़ने की चीज है और आज के जीवन संदर्भ में इसकी उपयोगिता असन्दिग्ध है

भारतीय प्रदेश और उसके निवासी—ले० वसन्त कुमार बन्द्योपाध्याय, प्रकाशक—एन. डी. सहगल एण्ड सन्ज, दिल्ली पृ० स० ३८८, सजिल्द, मूल्य: छ: रु० पचास पै.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम भारतवासियों में भरपूर विविधता के बावजूद एक चिरन्तन एकता है। प्रान्त, भाषा, जाति, सम्प्रदाय आदि से सम्बन्धित अनेक भेदों का लाभ उठाते हैं वे स्वार्थी लोग, जो जन साधारण की कमजोरियों से पूर्णतया परिचित हैं। वे जानबूझकर इस देश की अन्तर्निहित एकता की ओर से आँखें मूंदे हुए रहते हैं। श्री वन्द्योपाध्याय ने भारत के सभी प्रदेशों के निवासियों की विशेषताओं और जीवन की झाँकिया देते हुए भारत की अनेकता में उसकी मूलभूत एकता का भावमय एवं मर्मस्पर्शी दिग्दर्शन कराते हुए राष्ट्रीय भावों के विकास की प्रेरणा दी है। लेखक के कई वर्षों का परिश्रम स्पष्ट है, पुस्तक भारत को समझने समझाने की दृष्टि से उपयोगी है।

कहिए समय विचारि—ले० लक्ष्मी निवास बिड़ला, प्रकाशक-सस्ता साहित्य मण्डल, नयी दिल्ली, पृ० स० ६२, मूल्य: एक रुपया।

प्रस्तुत पुस्तक में नौ निबन्ध संग्रहीत हैं, जो दैनिक जीवन में प्रेरणा सिद्ध हो सकते हैं और विचार करने की पर्याप्त सामग्री भी उनमें वर्तमान है। हिन्दी में व्यक्तिगत विचारों की अधिकता लिए हुए निबन्धों की कमी है। श्री बिड़ला का यह प्रयास नहीं प्रयास है, किन्तु, उनकी विचारणा की सीमाएँ है, अतः निबन्ध बहुत कुछ साधारण और चलताऊ ढंग के हैं, जिनकी प्रवृत्ति सर्वथा सुधारवादी है और लेखक के 'मेण्टल मेकअप' को स्पष्ट करती है। अन्तिम निबन्ध में पूंजीपतित्व की प्रशंसा कुछ अजीब सी लगती है, किन्तु, कुल मिलाकर निबन्ध साधारण पढ़े-लिखे लोगों के लिए अधिक रोचक और पठनीय है।

कृत्रिम ग्रह और उपग्रह—ले० डॉ० रईस अहमद, प्रकाशक-हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय वाराणसी-१, पृ० सं० ७४, मू० एक रुपया पचास पै.।

रूसी स्पुतनिकों ने संसार को चकित कर दिया। अतः कृत्रिम उपग्रहों और ग्रहों के सम्बन्ध में जिज्ञासा स्वभावतया बलवती हो उठी, किन्तु, वैज्ञानिक जानकारी सम्पन्न व्यक्ति ही वह सब आसानी से समझ सकते है और जनसाधरण को मोटे ढंग से ही समझाया जा सकता है। प्रस्तुत पुस्तक इसी तरह का प्रयास है। राकेट क्या हैं, कैसे छोड़े जाते हैं, आदि की जानकारी भी इस पुस्तक में मिलेगी।

बीच-बीच में वैज्ञानिकों की देन का भी उल्लेख है। लेखकने गैलिलियों और न्यूटन को भी स्मरण किया है। सामान्य जानकारी की दृष्टि से पुस्तक उपयोगी है।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आख्यान

तरुणचन्द्र वैद्य और राजा अजर का

[नीति-कथा]

पहले कभी हिमालय के किसी विलासपुर नगर में विनयशील नामक राजा राज्य करता था। उसकी रानी का नाम कमलप्रभा था, जो उसे प्राणों से भी अधिक प्रिय थी। राजा ने बहुत काल तक उसके साथ सुख-भोग किया।

कुछ समय के पश्चात् सौन्दर्य को नष्ट करनेवाली वृद्धावस्था ने उसके शरीर में प्रवेश किया। तुषारपात से गलित कमल के समान सफ़ेदी से मलिन अपने मुख को देखकर राजा ने सोचा कि 'अब रानी को यह मुख कैसे दिखाऊँगा, इससे तो मर जाना बेहतर है!'—और उसने दरबार में आये हुए तरुणचन्द्र वैद्य से आदरपूर्वक कहा:

'भद्र! तुम हमारे हितैषी हो और कुशल भी हो, क्या कोई ऐसा उपाय है, जिससे वृद्धावस्था का निवारण हो सके?'

यह सुनकर उस कुटिल वैद्य ने मन ही मन सोचा: 'यह राजा मूर्ख है, और मेरा भोज्य भी, धीरे-धीरे जानूंगा।' उसने प्रत्यक्ष में कहा।

'महाराज यदि आप भू-गृह में माह तक रहकर मेरी औषधि खायें, आप को ठीक कर दूंगा।'

ऐसा सुनते ही राजा ने तुरन्त भू बनवाया और मंत्रियों के समझाने-बु की तरफ से बहरा होकर भूगृह में अ रहने लगा।

वैद्य अपने एक सेवक के साथ राजा परिचर्या करने लगा। राजा उस अ कारमय भूगृह में इस प्रकार रहने मानो उसके हृदय का अज्ञान बाहर गया हो।

इस प्रकार छह माह बीतने पर राजा की वृद्धावस्था को बढ़ी देखकर दुष्ट वैद्य राजा से मिलती-जुलती आ वाले एक पुरुष को लाया और उस से बोला: 'मैं तुम्हें राजा बनाता इस प्रकार उससे सम्मति करके दूर से ही भू-गृह तक एक लम्बी बनवायी और सोये हुए राजा को मार उसे रात में एक अन्धकूप में फेंक दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब राजा के बदले वह युवक उस भू-गृह में रहने लगा। सुरंग को बन्द कर दिया गया।

इस घटना के दूसरे दिन प्रातःकाल वैद्य ने सभी अमात्यादियों से कहा; 'मैंने छह माह के अन्दर राजा को अजर कर दिया है, अब दो माह के अन्तर्गत इनका असली ही रूप हो जायेगा, इसलिए अब आप लोग दूर से ही अपने को दिखायें।'

इसके पश्चात् वह एक-एक राजकर्मचारी को भू-गृह के दरवाजे पर ले जाकर उनका नाम और काम बतलाकर दिखाने लगा। इस प्रकार दो महीनों के भीतर उसने अन्तःपुरिकाओं तक से उस युवक का परिचय करा दिया।

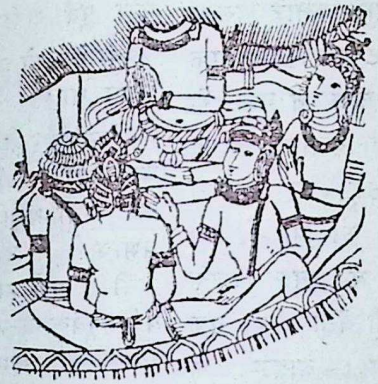

आठ माह पूरे होने के पश्चात् उस भोगपुष्ट पुरुष को भू-गृह से निकालकर उसने घोषणा कर दी कि राजा औषधि के प्रभाव से युवक हो गया है। इस घोषणा से प्रसन्न प्रजाओं ने भी उसे राजा ही समझा। तदनन्तर उस पुरुष को स्नानादि कराकर अमात्यों के साथ उसका राज्याभिषेक उत्सव किया गया।

तब से वह युवा राजा 'अजर' नाम से विख्यात होकर रानियों के साथ क्रीड़ा करता, राज्यभोग करता हुआ सुख से रहने लगा। वह अत्यन्त प्रेम से प्रजा और राजकर्मचारियों को तथा महारानी कमलप्रभा को प्रसन्न करके राजोचित व्यवहार करता हुआ मन्त्रियों के साथ प्रीतिपूर्वक राज्य करने लगा।

लेकिन वह तरुणचन्द्र वैद्य को केवल व्यावहारिक दृष्टि से मानता था, उस पर विश्वास नहीं करता था।

एक बार तरुणचन्द्र वैद्य ने एकान्त में उस राजा से कहा: 'क्यों तुम मुझे कुछ न मानकर स्वतंत्रतापूर्वक कार्य करते हो? क्या तुम्हें विस्मृत हो गया, कि मैंने ही तुम्हें राजा बनाया था?' यह सुनकर राजा अजर बोला:

'ओह, तू बड़ा मूर्ख है! कौन किसका कर्ता या दाता है? प्राक्त कर्म ही देते या बनाते हैं। इसलिए तू अभिमान मत कर। यह राज्य मेरी तपश्चर्या का फल है। यह मैं जल्दी ही तुम्हें प्रत्यक्ष दिखलाऊँगा।'

अन्य किसी दिन राजा अजर भ्रमण के लिए तरुणचन्द्र आदि मित्रों के साथ निकला। घूमते-घूमते वह नदी के किनारे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहुँचा और उसने वहाँ नदी की धारा में बहते हुए पाँच सोने के कमल देखे।

राजा ने उन कमलों को मंगवाया और पास में खड़े तरुणचन्द्र वैद्य से कहा– 'तुम अभी नदी-तीर से ऊपर की ओर जाओ और इन सोने के कमलों का उत्पत्ति-स्थान खोजो। उसे देखकर तुम मेरे पास आओ। मुझे बड़ा कौतुक है इन सुवर्ण-कमलों में; और तुम मेरे प्रिय सुहृत—हो।'

राजाज्ञा पाकर किनारे-किनारे चलता हुअ वह वैद्य नदी के तट पर स्थित एक शिव-मंदिर में पहुँचा। वैद्य ने नदी के उद्गम-स्थान पर एक विशाल बरगद के पेड़ को तथा उस पर लटकते हुए एक नर-कंकाल को भी देखा। वैद्य उस सरित-तीर्थ में स्नान करके थकित भाव से जैसे ही बैठा कि एक मेघखण्ड वहाँ बरसा। बादल के बरसने के कारण उस वट वृक्ष की शाखा पर लटकते हुए उस नर कंकाल पर जो बूंदे गिरीं, उनको उसने सरोवर में सुवर्ण कमल के रूप में बदलते देखा।

वैद्य ने सोचा: 'ओह, यह क्या आश्चर्य है। इस निर्जन वन में किससे पूछूं? अथवा विधि की आश्चर्यमयी सृष्टि को कौन जानता है? मैंने सोने के कमलों का उद्गम-स्थल तो देख लिया, अब इस नरकलेवर को जल में फेंक देता हूँ। मुझे इसकी सद्गति का पुण्य होगा धर्म होगा।' ऐसा सोचकर उसने बन्धन काटकर उसे सरोवर में फेंक दि

इस प्रकार कार्यसिद्ध करके, मार्ग धूलि से भरा हुआ वह वैद्य राजा के पहुँचा। चरणों पर पड़े हुए वैद्य से रा कुशल पूछी और एकान्त में कहा :'कि तुमने सोने के कमलों का वह उत्पत्ति-स्थ देखा? नरकंकाल को तुमने देखा, मेरा पूर्व शरीर था। वहाँ तपस्या अपनी देह को शोषित कर मैंने प्राण त्य किया था।

'उसी तप के माहात्म्य से मेरे कंका प्रच्युत होती वर्षा के जल की बूंदें सुवर्ण-क बन जाती थीं। उसी पूर्वजन्म के प्रभाव से मैं जातिस्मर और ज्ञानी उसी से मुझे राज्य मिला। यह सब युक्तिपूर्वक प्रत्यक्ष तुम्हें दिखा दि पूर्व जन्म के कर्मों के सिवा कोई किसी दाता नहीं है। इसलिए तुम अहंकार मत करो।'

राजा अजर की ये बातें सुनकर तरुणचन्द्र असन्तोष त्याग कर राजा सेवा में तत्पर हो गया। उस जाति राजा अजर ने भी उसे समुचित धन- दिया, और स्वयं मित्रों एवं रानियों साथ पृथ्वी का भोग करता हुआ निष्क राज्य करने लगा।

प्रस्तुति : विमल के.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत की एकता के शिल्पी सरदार पटेल

आ. चन्द्रशेखर शास्त्री

सरदार पटेल का प्रस्तुत रेखाचित्र हाल ही में प्रकाशित आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री की पुस्तक 'राष्ट्रनिर्माता सरदार पटेल' (सोसायटी फॉर पार्लामेण्टरी स्टडीज, नयी दिल्ली १) में से उद्धृत किया गया है।

सरदार पटेल स्वभाव से ही निर्भय, वीर तथा दृढ़ निश्चयी थे। उन्हें लोह-पुरुष कहा जाता था। वह बोलते कम तथा कार्य अधिक करते थे। वह उत्तरदायी नेता तथा मूक अनुयायी थे।

व्यक्तिगत जीवन में सरदार न केवल एक अच्छे मित्र थे, वरन् वह सभी परिस्थितियों में अपने साथियों का साथ दिया करते थे। सार्वजनिक जीवन में यद्यपि उनको लोहपुरुष कहा जाता था, किन्तु उनका हृदय अत्यन्त कोमल था, जो उनके स्थिर तथा आत्मविश्वासपूर्ण नेत्रों के पीछे छुपा हुआ था। वह प्रायः चुप रहते थे और बोलते भी थे तो बहुत कम शब्दों में, केवल काम की बात करते थे। उनके शब्द प्रायः तीक्ष्ण तथा काट करनेवाले होते थे। जिसे उनके निकट सम्पर्क में रहने का अवसर नहीं मिला, वह उनके कोमल हृदय को नहीं देख सकता था। मनुष्यों तथा समस्याओं के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्बन्ध में उनकी विशेष चतुरता तथा उनका ठोस निर्णय होने पर भी वह अपने विश्वासपात्र व्यक्तियों के सम्बन्ध में बहुत कुछ बच्चे जैसे सरल तथा विश्वास-पात्र थे। किसी मित्र के आड़े समय में काम आने के लिए वह अपने को वचनबद्ध मानते थे। अपने दृढ़ निश्चय के साथ-साथ उनकी रुचियाँ तथा अरुचियाँ भी दृढ़ होती थीं। अपराध के लिए तो वह प्रायः दृढ़ ही होते थे। किन्तु उनका सबसे बड़ा गुण यह था कि वह किसी व्यक्तिगत उद्देश्य से कभी किसी पर प्रहार नहीं करते थे। न वह किसी मित्र को अनुगृहीत करने अथवा किसी शत्रु पर ही चोट करने का कोई कार्य करते थे। वह प्रत्येक वस्तु का जायजा लेकर उसके अनकूल अपना रुख तथा आचरण इस प्रकार बनाते थे कि वह देश-हित के अधिक से अधिक अनकूल हो। उनकी असाधारण बुद्धिमत्ता तथा उनका हास्य उनकी ऐसी विशेषता थी कि उनकी संगति में कोई भी व्यक्ति अत्यधिक प्रतिकूल परिस्थितियों में भी अपने को सुखी ही मानता था।

सरदार का व्यक्तित्व प्रेरणादायक था। वह किसी भी विचार को तत्काल समझ लेते, उस पर फौरन विचार करते तथा शीघ्रही कार्यवाही करते थे। उनका विश्वास था कि मित्रों तथा साथी कार्य-कर्ताओं के एक नेता के प्रति भक्ति में परस्पर बँध कर सामूहिक रूप में कार्य करके ही किसी कार्य को सम्पन्न किया जा सकता है। वह सदा ही चुस्त रहते और सूचनाओं को ग्रहण कर उनको अपने मन में उसी प्रकार संजोकर रखते थे, जिस प्रकार शहद के छत्ते के किसी विशेष छिद्र में शहद जमा रहता है और उसे तब तक जमा रखते थे, जबतक कि उस मामले के पक जाने पर उसका उपयोग करने की आवश्यकता न पड़ती। वह स्वस्थ होते या अस्वस्थ, दिल्ली होते अथवा बम्बई में, सोते होते या जागते, सोचते होते अथवा स्वप्न लेते, तत्कालीन महत्त्व की समस्याओं पर न केवल उनका ध्यान लगा रहता था, वरन् वह उसका उसी समय हल भी सोच लेते और उनका टेलिफोन प्रथम उनके मन में कार्य करके फिर बाहर उनके कार्यालय में कार्य करता रहता। कभी-कभी तो शेयर मार्केट के स्टाक दलालों के समान इस प्रकार उनके चार-चार टेलिफोन एक साथ कार्य किया करते थे। इसी प्रकार ५६२ रियासतों का भाग्य एक मिनट में तय किया जाता तथा ९ प्रान्तों के भाग्य का निवटारा एक सेकण्ड में किया जाता था। ज़मीन्दारों तथा उनको मिलने वाले मुआवजे का प्रश्न होता, तो प्रान्तीय सरकारों की लगाम एक क्षण में खींच ली जाती थी। काँग्रेस कमेटियों तथा प्रान्तीय मन्त्रिमण्डलों के सम्बन्ध का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्न होता, तो प्रत्येक को एक क्षण में अपने-अपने स्थान पर स्थित कर दिया जाता था।

यदि सरदार भारत के स्वातंत्र्य युद्ध के एक वीर सैनिक तथा युद्ध विद्या विशारद थे, तो वह एक नये राज्य के निर्माता के रूप में एक चतुर तथा अधिकार सम्पन्न प्रशासक के रूप में तथा जादूगर की एक छड़ी को घुमानेवाले के रूप में भी कम बड़े नहीं थे। इसी से उन्होंने लगभग छः सौ रियासतों को भारत में मिलाकर एक कर दिया।

वह बहुत कम बोलते और सुनते अधिक थे। जब वह बोलते थे, तो वह कार्य करने की घोषणा ही किया करते थे और वह युद्ध-घोष होता था। उनको सहमत करने में बहुत समय लगता था।

गांधीजी ने काँग्रेस में जान डाली। जवाहरलाल नेहरू ने उसके दृष्टिकोण तथा उसकी कल्पना को विस्तृत किया। डॉ. राजेन्द्रप्रसाद ने उसमें आचरण का प्रवेश कराया। सरोजिनी नायडू ने उसमें शान दी, किन्तु उसे कार्य-क्षमता पटेल ने ही दी। उन्होंने उसमें सम्पूर्णता तथा शक्ति की भावना का संचार किया।

"जब तक भारत जीवित है तब तक वर्तमान भारत के निर्माता के रूप में सरदार का नाम अजर-अमर रहेगा।"

—डॉ. राधाकृष्णन्,

राष्ट्र निर्माता सरदार पटेल

[सरदार पटेल के जीवन पर सांगोपांग प्रकाश डालने वाला तथा उनके अनेक दुर्लभ चित्रों से सज्जित हिन्दी में प्रकाशित एक अद्वितीय ग्रन्थ]

लेखक :

आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री

प्रकाशक :

सोसायटी फॉर पार्लामेण्टरी स्टडीज्

१८, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद रोड, नयी दिल्ली १
६७, मरीन ड्राइव, बम्बई १.

मूल्य : ६ रु.

प्राप्ति स्थान : **भारतीय विद्या भवन चौपाटी रोड, बम्बई ७**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रख्यात वैद्य श्री शिवशर्मा तथा अत्यन्त लोकप्रिय समाज सेविका एवं भवन्स परिषद् की सदस्या श्रीमती थरीटी जे. एच. तल्यारखाँ के गत गणतन्त्र दिवस पर क्रमशः पद्मभूषण तथा पद्मश्री की उपाधि से विभूषित किये जाने के फलस्वरूप भारतीय विद्या भवन द्वारा उनके सम्मान में एक समारोह का आयोजन किया गया था।

अतिथियों का स्वागत करते हुए श्रीमती लीलावती मुन्शी ने पंडित शिवशर्मा तथा श्रीमती तल्यारखाँ को हार्दिक बधाई दी और उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डाला।

अपने स्वागत के उत्तर में श्रीमती तल्यारखाँ ने कहा कि मुझे तथा मेरे पति को जो भी सफलता मिली है, उसका एक बड़ा श्रेय बापाजी तथा ममीजी का हमें प्राप्त मार्ग-दर्शन है। श्री शिव शर्मा ने कुलपति श्री मुन्शीजी का आभार मानते हुए कहा कि भारत में आयुर्वेद चिकित्सा को पर्याप्त प्रोत्साहन नहीं दिया जा रहा है।

●●●

भारतीय विद्या भवन के एम. एम. आर्टस कालेज के अर्थ-शास्त्र के विभागाध्यक्ष श्री अमुल नानूभाई देसाई का अवसान गत ४ मार्च को हृदय की गति रुक जाने से हो गया। स्मरण रहे श्री देसाई की उम्र मात्र ३७ वर्ष थी।

गत ६ मार्च को भवन के प्रमुख सभागृह में दिवंगत आत्मा को श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए भवन के प्राध्यापकों एवं छात्रों की एक शोक सभा हुई, जिसकी अध्यक्षता भवन के संयुक्त नियामक श्री ज. ह. दवे ने की।

श्री देसाई के इस आकस्मिक अवसान से बम्बई के शिक्षा-जगत का एक प्रखर पुंज बुझ गया। भवन को तो जिस क्षति का सामना करना पड़ा, वह शीघ्रता से शायद पूर्ण न हो। श्री देसाई भवन में सन् १९५८ से ही अर्थ-शास्त्र विभाग के अध्यक्ष-पद पर कार्य कर रहे थे। इसके पूर्व वे सूरत के एस. के. पी. कालेज आफ कामर्स एण्ड इकॉनॉमिक्स से सम्बन्धित थे।

गुजरात के सूरत जिले में स्थित चिकाली ग्राम में १५ अगस्त १९२८ में जन्में श्री देसाई भारत में अपनी शिक्षा पूरी कर लेने के बाद सन् १९६२–६३ में विदेश भी गये। अमेरिका के एक अग्रगणी विश्व-विद्यालय में उन्होंने प्राध्यापक के रूप में कार्य भी किया।

श्री देसाई अपने पीछे पत्नी तथा चार बच्चे छोड गये हैं। संतप्त परिवार के प्रति हमारी समवेदना है। भगवान दिवंगत आत्मा को चिर शान्ति दे। ●●●

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन के लिए बम्बई से प्रकाशित व मुद्रित तथा एसोसिएटेड एडवर्टाइजर्स एण्ड प्रिन्टर्स, तारदेव, बम्बई ३४ में मुद्रित।
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने स्वर्ण और स्वर्ण वस्तुओं

को

७ प्रतिशत स्वर्ण बाण्ड १९८० में बदलिये

ये बाण्ड ३१ मई, १९६५ तक बिकेंगे

- इन बाण्डों पर सम्पत्ति कर और पूंजी लाभ कर नहीं लगेगा।
- विनियोजन-पूंजी के संचय का जरिया या उसको स्वर्ण-नियंत्रण कानून के अन्तर्गत घोषित न करने के कारण नहीं पूछे जायेंगे।

विस्तृत जानकारी रिजर्व बैंक आफ इण्डिया की निकटतम शाखा, स्टेट बैंक आफ इण्डिया की शाखाओं और उसके सहायक बैंकों से प्राप्त की जा सकती है।

वित्त मंत्रालय, भारत सरकार

डी ए ६४/७०१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतुल

• रंग

• रसायन

• और औषधि

अतुल प्रॉडक्ट्स लि.

अतुल, (वाया बलसार)

पश्चिम रेलवे.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

7428

रवीन्द्र अंक
२ मई १९६५

११.२.६५

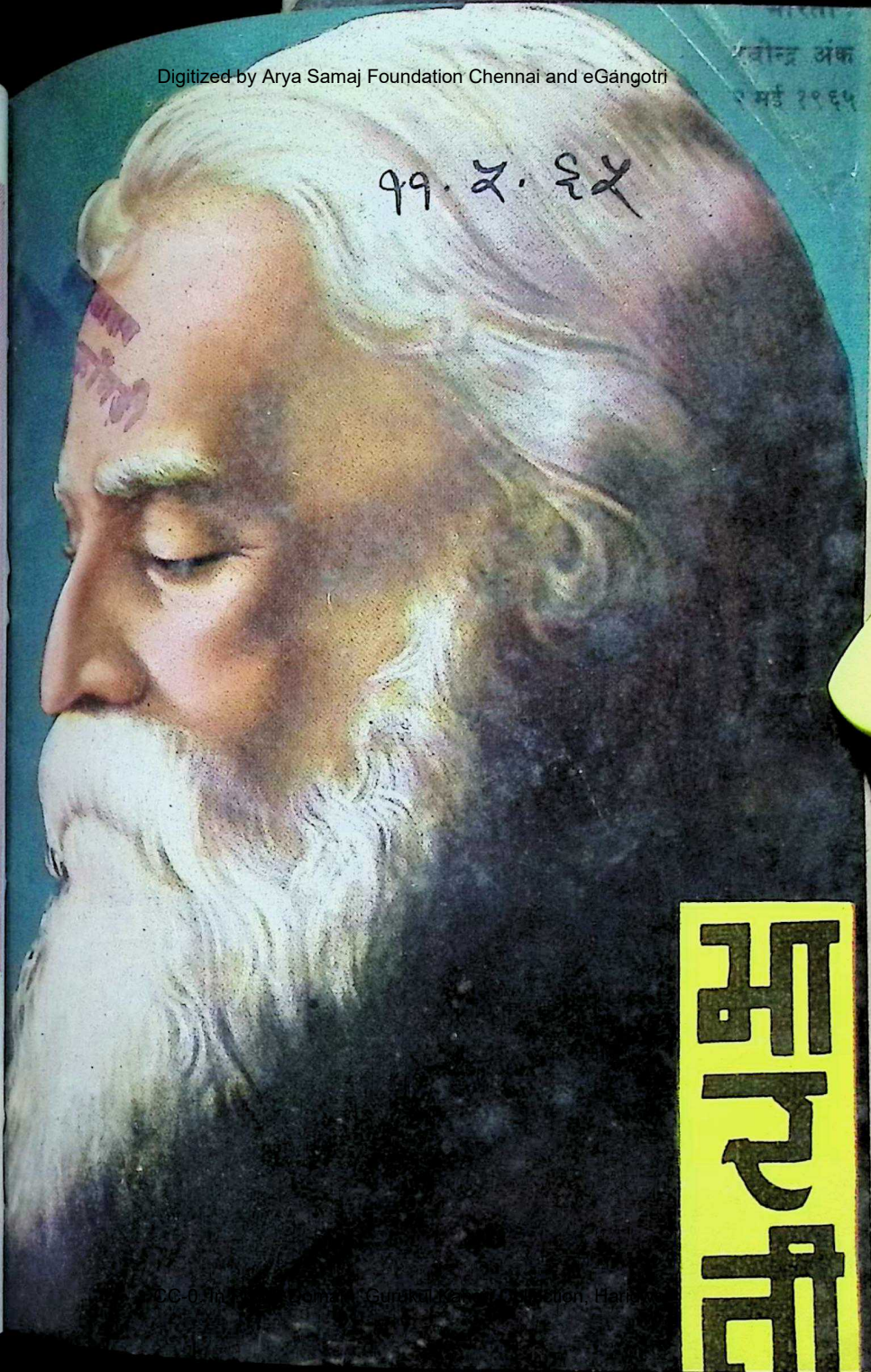

भारती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतमें सब जगह प्रसिध्द

चँपियन

(रजिस्टर्ड)

सबकी पसंदगी

गुजरात इंडस्ट्रीज प्रायव्हेट लि., बंबई २

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल कांगड़ी

रत्नकी तरह

चमकदार

आँखोके

लिये

जाई काजल

आँखों को ठंडक पहुँचाकर सौंदर्य बढ़ाता है।

वेस्टर्न इन्डिया केमिकल कंपनी,
बोरिवली, बम्बई-६६

SAS

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष ९ : अंक १८] [२ मई १९६५

भारती

संस्थापक :
कन्हैयालाल मुन्शी

प्रबन्ध सम्पादक :
जयन्तकृष्ण ह. दवे

प्रकाशक :
सु. रामकृष्णन्

सम्पादक :
वीरेन्द्रकुमार जैन

सहयोगी :
श्रीराम मिश्र
ओंकारनाथ शर्मा
रामलाल शुक्ल

कार्यालय :
भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड,
बम्बई ७

प्रति अंक : ३० पै.
वार्षिक : ६.५० पै.
अर्धवार्षिक: ३.५० पै.

ऋग्वेद : प्रार्थना
कन्हैयालाल मुन्शी : कुलपति का पत्र
श्री ज्ञानदेव : आत्मा की लीला
श्री प्रताप यन्दे : जिनके श्री चरणोंमें ब्रह्म-विद्या सुलभ हो गयी है
श्रीमती लीलावती मुन्शी : मेरी इज़राइल यात्रा
वेद-वाणी : ओ अग्नि, ओ आदित्यो
उपनिषद् प्रवचन : वे अमर हो जाते हैं
बोध कथा : ईश्वर में अडिग श्रद्धा
श्री अमृतलाल वी. याज्ञिक : वृद्धावस्था : समस्या और समाधान
स्टीफेन ज़िवग : एक बेचैन आत्मा : जीवन के अर्थ की खोज में
डॉ. एलेक्सी केरल : मृत्यु : विज्ञान और अध्यात्म की दृष्टि में
श्रीमती लावण्यप्रभा राय : रवीन्द्रनाथ पर उपनिषद् का प्रभाव
रवीन्द्रनाथ ठाकुर : बन्द कमरा
रवीन्द्रनाथ ठाकुर : वे मजलिसें
भगिनी निवेदिता : उत्तुंग मेधा के स्वामी आचार्य शंकर
कन्हैयालाल मुन्शी : कृष्णावतार

★

आवरण-चित्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः ।
[प्रत्येक दिशा से शुभ एवं सुन्दर विचार हमें प्राप्त हों]

भारती
[भवन की पत्रिका]

आगामी विश्व विकास का सूचक :
जीवन, साहित्य और संस्कृति का पाक्षिक

प्रार्थना

उद्यानं ते पुरुष ! नावयानं
जीवातुं ते दक्षतातिं कृणोमि ।
आ हि रोहेमममृतं सुखं रथम्,
अथ जिर्विर्विदथमावदासि ॥

हे जीव ! तेरा उत्थान ही हो, उन्नति ही हो; नीचे पतन कभी नहीं । तेरे जीवन को बल से युक्त करता हूँ । इस विद्यमान अमृत युक्त सुखकारी रथ पर निश्चय से तू चढ़ जा । फिर जीर्ण होकर बुढ़ापे में भी ज्ञान का प्रचार करता रह ।

—अथर्व ८, १, ६

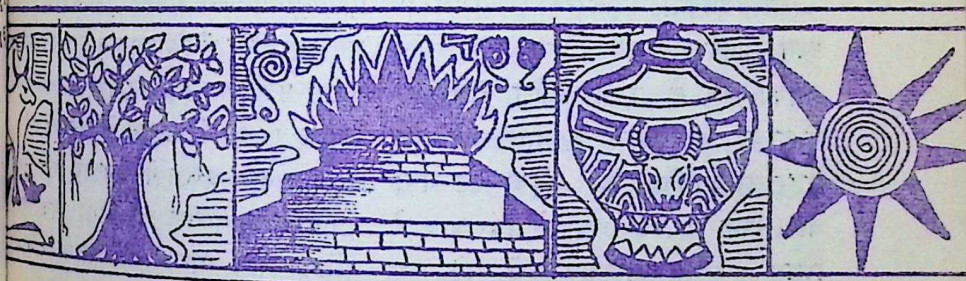

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

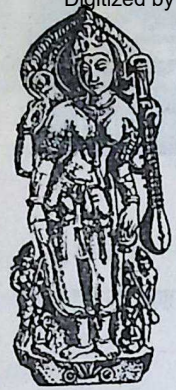

कुलपति का पत्र

जीवन साहित्य तथा संस्कृति से संबंधित

- साम्यवादियों के तरीके
- तैलंगाना का साम्यवादीकरण
- केरल निर्णय का औचित्य

भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड, बम्बई ७
२ मई १९६५

मेरे युवा मित्र,

मैंने हमेशा यही माना है कि मानव-जाति के सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक कल्याण के लिए साम्यवाद एक गहरा खतरा है। वह ईश्वर के अस्तित्व को अस्वीकार करता है और वास्तिवकता का प्रचार करने के लिए वचनबद्ध है। नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों में उसे कोई विश्वास नहीं। घृणा का वातावरण पैदा कर वह संघर्ष और हड़तालों की योजना करता है तथा हिंसा के प्रयोग को अच्छा समझता है।

साम्यवादियों के तरीकों से भिज्ञ मैं स्वयं अपने अनुभवों द्वारा हुआ हूँ। १९३७–३९ में, प्रथम कांग्रेस मंत्रिमंडल में बम्बई के गृहमन्त्री के नाते, जब यह शहर साम्यवादियों का अड्डा बन गया था; फिर १९४८–४९ में हैदराबाद में स्थित भारत के एजेंट जनरल के नाते, जब साम्यवादियों ने जनता के प्रति अपने व्यवहार का नमूना देश को बता दिया था, १९५७–५९ में केरल के साम्यवादी मंत्रिमंडल के कार्यों के चश्मदीश गवाह के रूप में, और चालीस वर्ष पहले जब से साम्यवाद का सितारा बुलन्द हुआ, तब से मानवजाति के इतिहास के विद्यार्थी के नाते, मुझे उनकी चालों को अच्छी तरह समझने का मौका मिला है।

साम्यवाद मनुष्य की प्रकृति और भविष्य के आधार पर ही चोट करता है। एक सुनियोजित समाज की आवश्यकता इसलिए होती है कि वह मनुष्य को अपनी पूर्णता प्राप्त करने की सुविधा दे। प्रत्येक मनुष्य को अपनी प्रकृति के अनुकूल और योग्यता तथा इच्छा के अनुसार कार्य का रचनात्मक विकास करने का ईश्वरदत्त अधिकार है। साम्यवाद व्यक्ति के व्यक्ति-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्व और संपूर्ण होने के उसके अधिकार का सम्मान नहीं करता। सिद्धान्तों के घेरे में उसे बांध कर और भयभीत कर वह व्यक्ति को हीन अथवा कुत्सित बना देता है।

साम्यवादी समान मानव भविष्य का दम घोंट देता है। प्रेम के जिस मार्ग का ज्ञानियों और संतों, त्रिकालदर्शियों और अवतारों ने मानव के ऊर्ध्वगामी होने के लिए उपदेश दिया, उसे वे अस्वीकार करते हैं।

केन्द्रीय गृहमंत्री श्री नन्दा ने कुछ दिन पूर्व लोकसभा में बताया था कि भारत सरकार के पास इस बात के पर्याप्त, प्रमाण हैं कि वामपक्षी साम्यवादी पेकिंग की मदद से भारत में साम्यवाद की स्थापना करने के लिए 'तेलंगाना किस्म का जंग' छेड़ने की तैयारियाँ कर रहे थे। दुनिया भर में साम्यवाद यही तो कर रहा है। नन्दाजी ने केवल इसकी पुष्टि की; परन्तु कई लोगों को इससे आश्चर्य हुआ। ऐसा किस प्रकार संभव है ?

हमारा राष्ट्र अपनी क्षीण स्मृति के लिए प्रख्यात है। फरवरी १९४८ के अंत में दक्षिण-पूर्व एशियाई युवक कांग्रेस कलकत्ते में हुआ। इसका आयोजन वर्ल्ड फेडरेशन आफ डेमोक्रेटिक यूथ और इंटरनेशनल यूनियन आफ स्टुडेंट्स ने किया था। दोनों ही साम्यवादी संगठन हैं। इस निर्दोष दिखनेवाली कांफ्रेंस में संसार के विभिन्न भाग के, विशेषकर चीन, वर्मा, मलाया और इंदोनेशिया के महत्त्वपूर्ण साम्यवादी नेताओं ने एक क्रान्तिकारी कार्यक्रम निश्चित किया। उनके अनुसार भारत के साम्यवादी दल की नीति में एक निश्चयात्मक परिवर्तन लाना था।

जो प्रस्ताव उन्होंने पारित किया, उसमें जनतंत्रीय क्रान्ति के साथ धोखा करने का इल्जाम भारतीय समाजवादियों पर लगाया गया। नेहरू सरकार को उसने अमरिका और इंग्लैण्ड का पिट्ठू बताया और उसे साम्यवादियों का जो समर्थन मिल रहा था, उसे हटा लेने को कहा गया। भारत के संविधान को भी उन्होंने प्रतिक्रियावादी और अप्रजातांत्रिक कहा।

इस निर्णय से हैदराबाद की साम्यवादी पार्टी के कार्यों में परिवर्तन आया। एक गुप्त सरक्युलर के अनुसार उन्हें आंध्र का साम्यवादीकरण करना और फिर वहाँ से सारे भारत को 'मुक्त' करना था। ८७ प्रतिशत हिंदू जनसंख्या वाले हैदराबाद को निज़ाम के झंडे के नीचे मुस्लिम शक्ति का गढ़ बनाने के लिए कृतसंकल्प रज़ाकारों को भी अपने पक्ष में करने की नीति साम्यवादियों ने अपनायी। रज़ाकारों के इतिहास का उद्देश्य हैदराबाद रियासत को भारत में मिलने से रोकना था और प्रजातंत्र की स्थापना न होने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देना था।

मद्रास के पश्चिम गोदावरी और पूर्व गोदावरी ज़िलों के तेलेगूभाषी कृष्णा और गंटूर क्षेत्रों के गाँवों तथा हैदराबाद के नालगोंडा और वारंगल जिलों में गुरीला युद्ध कर 'सोवियत' (साम्यवादी ढंग की पंचायतें) स्थापित करने की सक्रिय योजना बनायी गयी।

यद्यपि इस नीति का प्रभाव हैदराबाद में फरवरी के मध्य में ही दिखायी पड़ा, फिर भी हैदराबाद रियासत में कांग्रेस के खिलाफ साम्यवादी प्रचार बहुत पहले से शुरू हो गया था। कांग्रेस ने वहाँ साम्यवादी के साथ संयुक्त मोर्चा लेने की भूल कर ली थी। अब साम्यवादी हैदराबाद के साथ हुए समझौते को निज़ाम पटेल षड़यंत्र बताने लगे और राज्य कांग्रेस को अप्रजातांत्रिक और प्रतिक्रियावादी कहने लगे। उन्होंने मुस्लिम रज़ाकारों से साठगांठ की। दोनों का उद्देश्य एक ही था और और शत्रु भी एक वही नेहरू सरकार थी।

हैदराबाद में भी वही हुआ, जैसा कि दुनिया भर में होता आया है, जबकि कोई प्रजातांत्रिक अथवा समाजवादी दल साम्यवादियों से संयुक्त मोर्चे के लिए हाथ मिलाता है। फरवरी के अंत तक साम्यवादियों ने राज्य कांग्रेस के साथ संयुक्त मोर्चे का ढोंग भी छोड़ दिया। कांग्रेस के लोग जो कुछ दिन पहले मित्र थे; अब दुश्मन बन गये और उन्हें बड़ी बेरहमी से उन क्षेत्रों से खदेड़ दिया गया, जहाँ वे उनसे घिर गये थे। हैदराबाद शहर में भी साम्यवादियों का प्रभाव फैल गया और अतराफाबन्दा के दक्षिणी जिले में उनके सक्रिय केन्द्र स्थापित किये गये। मार्च के मध्य तक साम्यवादियों और रज़ाकारों दोनों के ही जुल्म बढ़ने लगे।

साम्यवादी तेलुगू भाषी जिलों पर टूट पड़े और रज़ाकारों का प्रतिकार करने के बहाने गाँव के गाँव हथियाने लगे। हैदराबाद सरकार की जो रिपोर्ट साम्यवादी अपराधों पर छपी थी, उसका सारांश इस प्रकार है :

'१५ अगस्त १९४६ से १३ सितम्बर १९४८ तक उन्होंने नृशंसतापूर्वक २०० लोगों की हत्याएँ कीं, २२ पुलिस थानों पर आक्रमण किया, गाँव के सरकारी कागज़ों को जला डाला, वहाँ के अधिकारियों को मारा-पीटा, 'चद्री' और चुंगी नाकों को जलाया, २३० बंदूकें हथियालीं, बहुत लूटा या नष्ट किया और दस लाख से अधिक के मूल्य के नकद तथा जवाहिरात पर डाका डाला। बड़े पैमाने पर उन्होंने संचार और परिवहन व्यवस्था को नष्ट भ्रष्ट करने का प्रयास किया और आस पास जो भी शस्त्र तथा साधन थे, उनसे बाकायदा गुरीला युद्ध किया।'

साम्यवादियों ने जो जुल्म ढाहे, उन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

र मई १९६५

छ नमूने देखिये :

नालगोंडा जिले के हुजूरनगर तालुके के पेड्डाविड गाँव पर पांच सौ से अधिक साम्यवादियों ने हमला किया, स्त्रियों और बच्चों को लेकर दस गाँववालों को मार डाला और दस अन्य लोगों को गहरा जख्मी किया। कई मकानों को उन्होंने आग लगा दी और कई बच्चों को भी आग में झोंक दिया। ऐसा उन्होंने बदला लेने की भावना से किया, क्योंकि उस गाँव के एक निवासी ने पुलिस को, पास ही के एक कुख्यात साम्यवादी अड्डे कोट नारायण के बारे में खबर दी थी.... पेंगोट नामक स्थान से साम्यवादियों ने एक स्त्री सहित सोलह लोगों का अपहरण किया और उन्हें लिंगागिरी ले गये। आदमियों को मार डाला गया और उनकी लाशें जला दी गयीं। बाद में जली हुई लाशें लिंगागिरी की सीमा के पास पायी गयीं, परन्तु जिस औरत को उठा ले गये थे उनका पता न चला। पच्चीस साम्यवादियों का एक दल रात में धरनीपहाड गाव में घुसा, एक वृद्ध मुस्लिम महिला को पकड़ कर जंगल में ले गया और उसे मार डाला।

४ मई १९४८ को निज़ाम सरकार ने हैदराबाद में साम्यवादियों पर से प्रतिबंध हटा लिया और नारायण रेड्डी तथा अन्य साम्यवादी नेताओं की गिरफ्तारी के वारंट भी रद्द कर दिये। तत्काल ही हैदराबाद की कम्युनिस्ट पार्टी ने अपनी पुरानी नीति के विपरीत एक पैम्फलेट निकाला। हैदराबाद के भारतीय संघ में संयुक्त हो जाने की उन्होंने निन्दा की, क्योंकि उनके अनुसार भारत सरकार एक पूंजीपतियों की सरकार थी। फिर भी, अपनी नीतियों को असंगत न दिखाने के लिए यह भी उन्हें कहना पड़ा कि वास्तविक स्वतंत्रता-प्राप्ति के पहले सामन्तशाही को खत्म करना होगा।

प्राप्त रिपोर्टों से मालूम होता है कि केवल निजाम सरकार और साम्यवादियों के बीच ही एक प्रकार का समझौता न था, परन्तु रज़ाकारों को पश्चिम बंगाल के साम्यवादियों द्वारा विस्फोटक पदार्थ भी भेजे जाते थे।

उनके नये प्रचार के अनुसार, देशी रियासतों का भारतीय संघ में आना अत्यन्त अप्रजातांत्रिक कार्रवाई थी, जिसका ध्येय 'क्रान्तिकारी चेतना' और लोगों की 'जनतांत्रिक कार्रवायों' को दबा देना था। यदि भारतीय सेनाएँ हैदराबाद में घुसीं तो वे जन-आन्दोलन को पीस डालेंगी, यह कर उन्होंने अपने कार्यकर्ताओं को उन सभी स्थानों पर भारतीय सेनाओं की गति को रोकने का हुक्म दिया, जहाँ गाँववालों को जबरदस्ती डरा-धमका और हत्या तथा लूटमार मचा कर उन्होंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साम्यवादी अड्डे स्थापित कर लिये थे।

साम्यवादी दल ने अब भारत विरोधी मोर्चे पर निज़ाम सरकार से संधि की। भारत भर में जहाँ कहीं साम्यवादी छुपे हुए थे, वे सब हैदराबाद में आने लगे। कुछ साम्यवादी नेता तो हैदराबाद शहर में खुले आम घूमने, मंत्रियों और राज्य के उच्च कर्मचारियों से सम्बंध स्थापित करते देखे गये– निजाम से भी उन्होंने समझौता करने की कोशिश की। उन्हें यह भी आशा थी कि उनका एक प्रतिनिधि निजाम के मंत्रिमंडल में ले लिया जायेगा और उसी जरिये निजाम सरकार में हाथ-पैर पसारने का मौका भी उन्हें मिलेगा।

निज़ाम सरकार के साथ इस गठबंधन से साम्यवादियों को उन क्षेत्रों पर अपनी पकड़ मज़बूत करने, जहाँ उनका प्रभुत्व था, और दूसरे जिलों में अपनी गतिविधियाँ फैलाने का मौका मिला। अप्रैल के बाद ऐसे गाँवों में सम्पन्न व्यक्तियों की ज़मीनें, मवेशी और अनाज साम्यवादी-समर्थक किसानों–दरअसल, उन आवारों में जिन्होंने उन्हें शक्ति प्राप्त करने में मदद की थी, बांट दिये गये। गाँवों पर किये गये हमलों में जो लूट की सम्पत्ति उन्हें मिली, उससे उनका युद्धकोष भरा जाने लगा। रिपोर्टों से पता जलता है कि केवल जुलाई मास में उन्होंने चालीस बार लूट की।

अगस्त में, साम्यवादियों ने दावा कि कि उन्होंने तीन हज़ार से भी अधि गाँवों को मुक्ति दिलायी है। यह अ शयोक्ति थी; परन्तु यह संख्या दो हज़ से कम नहीं हो सकती।

साम्यवादी इसी आशा में थे कि निज़ाम सरकार भारतीय संघ में सम्मि लितहोने के सभी प्रस्ताव ठुकराती गयी, हैदराबाद की न्याय और शासन व्यवस्था भंग हो जायेगी और तब हैदराबाद भारत की कम्युनिस्ट पार्टी का प्रदे हो जायेगा।

जब १८ सितम्बर १९४८ को भारत सेना ने सिकन्दराबाद में प्रवेश किया, जनता रज़ाकारों और साम्यवादियों वेहद भयभीत थी। जनकल्याण की स प्रवृत्तियाँ बन्द थीं, न्याय और व्यवस्था का लोप हो गया था और प्रशासन, जिस रज़ाकार घुस गये थे, भंग हो गया था पिछले साल के बजट में आठ करोड़ रु का घाटा था। पुलिस कार्रवाई के परिणा स्वरूप दक्षिण भारत का रूप ही बदल गया हैदराबाद और आसपास के राज्यों शांति का वातावरण स्थापित हो गया धंधा-व्यापार मुक्त रूप से फिर चल लगा; जो प्रतिबंध निज़ाम सरकार माल के आने-जाने पर लगा दिया वह हट गया। जन-सेवाओं में नियुक्ति फिर से योग्यता के आधार पर हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगी।

नालगोंडा और वारंगल जिलों में जो साम्यवादी आतंक छाया हुआ था, वह तो भारतीय सेना तथा स्पेशियल पुलिस की बड़े पैमाने पर की गयी कार्रवाइयों से ही मिटा और इसमें करीब चार साल लग गये। इसके लिए जबरदस्त प्रचार, बार-बार कांफ्रेंसें बुलाना, नये गाँव बसाना, नयी सड़कें बनाना और जहाँ कम्युनिस्ट छिपे थे, उन जंगलों को साफ करना, इत्यादि कई मुश्किल काम करने पड़े। यह कार्रवाई इसीलिए सफल हो सकी कि अगलबगल में कोई साम्यवादी सैनिक शक्ति स्थानीय साम्यवादियों को योजनाओं, शस्त्रों और सैनिक सहायता से मजबूत नहीं बना सकती थी।

आसाम और पश्चिम बंगाल में इस समय जो स्थिति है, वह इससे भिन्न है। इन राज्यों में यदि कम्युनिस्ट घुस बैठे तो उन्हें तिब्बत में भी चीनियों द्वारा आयोजित गुरीला युद्ध से सहायता मिल सकती है; और यदि आवयकता पड़े तो दक्षिण वीयतनाम की तरह वे सैनिक विध्वंस करने में नहीं चूकेंगे।

गृहमंत्री श्री नन्दा ने जो कहा है, वह बिल्कुल सही है।

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी इस बात पर बहुत हो तो-हल्ला मचा रही है कि केरल में राष्ट्रपति शासन क्यों लाया गया, क्यों नहीं उन्हें अपना मंत्रिमंडल बनाने दिया। परन्तु, जैसा कि मैंने २४ मार्च १९६५ को अपने वक्तव्य में कहा था, केरल में राष्ट्रपति शासन चालू रख कर भारत सरकार ने इस परिस्थिति में अत्यन्त बुद्धिमानी का काम किया है; यह पूर्णतः संवैधानिक था।

साम्यवादियों के साथ आप जनतंत्रीय औचित्य से पेश नहीं आ सकते। जनतंत्र में एक सरकार के असफल होने पर दूसरी सरकार का आना जनतंत्रीय प्रणाली के लिए आवश्यक माना जाता है। परन्तु साम्यवादियों पर यह नियम लागू नहीं होता। जब साम्यवादी अकेले या किसी अन्य दल से मिल कर सत्तारूढ़ होते हैं, तो सारी शक्ति स्वयं हस्तगत कर बैठते हैं। सुनिश्चित परिस्थितियों में दूसरों के हाथ में सत्ता सौंपने की सभी प्रणालियों और माध्यमों को वे नष्ट कर देते हैं, ताकि भविष्य में सरकार में कोई परिवर्तन होने की संभावना ही न रहे।

आपका

कामराज नाडार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आत्मा की लीला

●

श्री ज्ञानदेव

जगत उस सम्पूर्ण ब्रह्म से अलग नहीं है, बल्कि वह उसी का प्राकट्य है। वह उस प्रबुद्ध आत्मन् की लीला है। ब्रह्मन् के अलावा अन्य कुछ भी अस्तित्वमान नहीं है, मात्र वही जगत के रूप में भास्वर होता है। जब उस परम आत्मन् में स्वयं को देखने की कामना जगती है, तब वह स्वयं विविधरूपी जगत बन जाता है, अपने निकट स्वयं पदार्थ बन जाता है, और इस प्रकार वह दृश्य संसार के रूप में अपने को देखता है। वह आत्मन्, जो त्रिगुणात्मक प्रकृति से परे विशुद्ध ज्योति की प्रकृति से युक्त है, को जगत के रूप में विस्तारित करता है। संसार के समस्त प्रबुद्ध पदार्थों के भीतर या उनके तह में वही परम प्रबुद्ध आत्मा है, वे पदार्थ जो सदा परिवर्तनशील हैं और विभिन्न रूपों को धारण करने वाले हैं; यह आत्मा इतनी समृद्ध है कि यह संसार के पदार्थों के रूप में नित नये वेशों को धारण करता है। और जब आत्मन् एक बार उत्पन्न किये गये पदार्थों को जीर्ण-शीर्ण और पुराना महसूस करता है, तब वह अपने दर्शन के लिए नित नूतन और नवीन पदार्थों का सृजन करता है।

यद्यपि ब्रह्मन् स्वयं दृश्य जगत बन जाता है और इसका आनन्द भोग करता है, फिर भी इसका दृष्टा होने के कारण उसकी इकाई तनिक भी भंग नहीं होती। ठीक उसी प्रकार भंग नहीं होती, जैसे किसी मूल चेहरे की इकाई अथवा सम्वादिता दर्पण में प्रतिबिम्बित होने से भी बाधित नहीं होती है। जैसे पानी लहरों का रूप धारण करके अपने आप से ही खेलता है, वैसे ही सम्पूर्ण ब्रह्म जगत बनकर अपने से क्रीड़ा कर रहा है। जब अग्नि ज्वाला की मालाओं को पहनती है, तब क्या उसमें कोई अन्तर हो जाता है? जब सूर्य अपनी किरणों से आच्छन्न हो जाता है, तब भी उसमें और उसकी किरणों में कहीं कोई द्वैत नहीं रहता। चांदनी से घिरा होने पर भी चाँद की इकाई में कहीं कोई अन्तर नहीं पड़ता। कब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तब भी वही रहता है, जब वह अपनी सहस्रों पंखुरियों में प्रस्फुटित होता है।

उसी प्रकार सम्पूर्ण ब्रह्म में किसी प्रकार का अन्तर नहीं है, चाहे वह अपने को जगत के दृष्टा के रूप में प्रकट करे, और चाहे उस जगत के रूप में प्रस्तुत हो जिसका वह दृष्टा है। क्योंकि यह वह सम्पूर्ण ब्रह्म ही है, जो दोनों बन जाता है। इसलिए आत्मा की इकाई तब भी लुप्त नहीं होती, जब वह सम्पूर्ण विश्व को व्याप्त करता है। यदि आँख पलक खोले बग़ैर संसार को देखने में समर्थ नहीं है, और यदि वट-वृक्ष का बीज उद्भिन्न हुए बग़ैर इतना बड़ा वृक्ष उत्पन्न कर सका है, तो यह स्पष्ट हो जाता है कि ब्रह्मन् की इकाई इस विविधरूपी जगत को स्वयं अविच्छिन्न और सम्पूर्ण रहकर भी व्याप्त करती है।

साथ ही जब आत्मन् में अपने को देखने की कामना विलुप्त हो जाती है, जिसके फलस्वरूप वह अपने को जगत के रूप में देखता है, तब यह लीला उसके लिए और भी आसान है; क्योंकि तब वह अपने प्रकृत रूप में रहता है, उस रूप में रहता है, जो उसका मूल स्वरूप है। तब वह अपने आप में विश्रमित हो जायेगा, जैसे आँखों के बन्द हो जाने पर दृष्टि स्वयं में विलीन हो जाती है, जैसे कच्छप अपने में अपने पैरों को सिकोड़ लेता है, या जैसे प्रतिपदा के दिन चन्द्रमा की सोलहों कलाएँ उसमें विश्राम लेती हैं। यह सम्पूर्ण ब्रह्म ही है, जो अपने भ्रू-कुंचन-मात्र से अपने को एक विशिष्ट जगत के रूप में प्रस्तुत करता है, और इस जगत को नष्ट करने के बाद अपनी मूलभूत सम्पूर्ण स्थिति में लौट जाता है।

जब जो कुछ अस्तित्त्व में है, वह सम्पूर्ण ब्रह्म के सिवा कुछ नहीं है, तब अन्य कौन-सा विषय ऐसा हो सकता है, जिसे देखना हो, ऐसा कौन-सा पदार्थ है, जो देखने योग्य हो? फिर भी यह दृश्य-जगत जो देखा जाता है और वह दृष्टा जो देखता है, उस सम्पूर्ण ब्रह्म से ही सनातन रूप से अनुगमन करते हैं, वे सनातन हैं, नये रूप से सृजित नहीं हुए हैं, ठीक वैसे ही जैसे आकाश और शून्य, हवा और स्पर्श प्रकाश और आभा सदा से संयुक्त हैं और नये रूप से एक दूसरे से संयुक्त नहीं कर दिये गये हैं।

वह सम्पूर्ण ब्रह्म जो प्रकाशमान है, ब्रह्माण्ड को ब्रह्माण्ड बनकर देखता है, मानो जगत ही जगत को देख रहा है, लेकिन वह ब्रह्माण्ड के विलीन होने पर उसके अनस्तित्त्व को भी देखता है। क्योंकि यह विश्व के अस्तित्त्व में होने और न होने पर भी अपनी दृष्टा की स्थिति में रहता है; क्योंकि यह सदा सत्तावान् है, क्योंकि सम्पूर्ण ब्रह्म और जगत में कोई अन्तर वैसे ही नहीं है, जैसे चन्द्रमा और कर्पूर की सफेदी में कोई अन्तर नहीं है।

ऐसा सोचने की कोई आवश्यकता नहीं है कि सम्पूर्ण ब्रह्म और जगत दो भिन्न सत्ताएँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
हैं, कि उनमें एक दूसरे को देखता है; क्योंकि वह केवल सम्पूर्ण ब्रह्म है, जो अपने को जगत के रूप में देखता है। प्रबुद्ध ब्रह्म सदा अपने को देखता है। उसे अपने को देखने के लिए अन्य किसी सत्ता की आवश्यकता नहीं है, जैसे किसी हीरे को अन्य किसी प्रकाशमान दीप्ति की ज़रूरत नहीं होती। किसी दूसरी सत्ता के द्वारा ब्रह्म का स्वयं को देखना उतना ही असम्भव है, जितना चन्दन को किसी दूसरी सुगन्ध से व्याप्त होने की आवश्यकता होना अथवा कर्पूर को अन्य वस्तु से श्वेत बनाये जाने की ज़रूरत होना।

जैसे कोई दीपक प्रकाश से परिपूर्ण हो जाता है, वैसे ही ब्रह्माण्ड सम्पूर्णतया उस परम प्रज्ञा से परिपूर्ण है, जो प्रज्ञा अथवा सर्वदा स्पन्दनशील है। ब्रह्मन् के देखने और न देखने की स्थिति चन्द्रमा के सन्दर्भ में अंधकार और प्रकाश की स्थिति के समान है, जो वस्तुतः इन दोनों से ही निर्बाध अपनी मूल स्थिति में रहता है। दृष्टा और दृश्य परस्पर सम्बद्ध होते हुए एक दूसरे को उसी तरह नष्ट कर देते हैं, जैसे अग्नि में रखा हुआ कर्पूर अग्नि के साथ ही ओझल हो जाता है; और वह सम्पूर्ण ब्रह्म इन दोनों से परे दोनों के मूलभूत सारतत्त्व के रूप में शेष रह जाता है, जैसे एक से एक को घटा देने पर शून्य शेष रह जाता है, या जैसे पूर्वी और पश्चिमी समुद्रों के मिलने पर जब उनका वैभिन्य नष्ट हो जाता है, तब केवल जल शेष रह जाता है।

जैसे उद्गत लहर के ओझल हो जाने पर और कोई नयी लहर के न उठने के काल के बीच जल अपनी प्रकृत स्थिति में रहता है, वैसे ही सम्पूर्ण ब्रह्म की मूलभूत स्थिति दृष्टा और दृश्य के विनाश तथा उनके पुनरुज्जीवित होने के बीच रहती है; यह आकाश की उस अवस्था के समान है, जब दिन का अन्त होता है और फिर भी रात्रि का आगमन नहीं होता, अर्थात् सन्ध्या-काल रहता है। जब कि सम्पूर्ण ब्रह्म ही समस्त वस्तुओं में अस्तित्त्वमान है, तब देखने और न देखने की स्थिति ही कहाँ बनती है, जो द्वैत की द्योतक हो? देखना और न देखना ये परस्पर सम्बद्ध हैं और सम्पूर्ण ब्रह्म पर निर्भर करते हैं। माया द्वारा प्राकट्य में न आने पर भी आत्मन् मिथ्या नहीं होता, बल्कि तब वह अपने स्वरूप में रहता है, जैसे चेहरा चाहे दर्पण में प्रतिबिम्बित हो अथवा नहीं सत्ता में रहता ही है। जैसे किसी व्यक्ति द्वारा जलाया गया दीपक उस व्यक्ति की सत्ता को प्रमाणित करता है, उसी प्रकार माया अपनी सत्ता के लिए आत्मन् के प्रति ऋणी है। इसलिए आत्मन् के अतिरिक्त अन्य कुछ भी सत्ता में नहीं है, चाहे वह जगत के रूप में प्रकट हो अथवा उसके दृष्टा के रूप में प्रकट हो। यह बात ठीक उसी प्रकार है, जैसे चाहे समुद्र में बहे अथवा चाहे अपने में रहे, गंगा का पानी गंगा के पानी के सिवा अन्य कुछ नहीं होगा; जैसे घी, चाहे वह जमा हुआ हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२ मई १९६५

अथवा पिघला हुआ, घी ही रहेगा।

इसलिए सूक्ष्मतम चिन्तन यह प्रमाणित करता है कि दृष्टा और दृश्य दोनों ही मिथ्या हैं; क्योंकि जब आत्मन् के सिवा कुछ भी अस्तित्व में नहीं है, वह आत्मन् जो सर्वत्र स्पन्दन-शील है, तब कैसे कोई दृष्टा हो सकता है और कौन सी वस्तु दृश्य हो सकती है? वह स्वयं को देखता है, यह कहना उतना ही व्यर्थ है, जितना पानी में लहर को उड़ेलना, प्रकाश में प्रकाश को मिलाना, सन्तुष्टि को सन्तोष प्रदान करना, या आग को लपटों का मुकुट पहनाना।

इसलिए आत्मन् को शब्दों में अनिर्वचनीय कहा है और न तो वह ज्ञान अथवा अनुभव-गम्य पदार्थ ही है। जब यह जगत के रूप में प्रकट नहीं होता, तब इसका विभव अतुलनीय होता है; सम्भवत: इसकी उपमा उस सूर्य से दी जा सकती है, जिसकी किरणें उसीमें व्याप्त हों, बाहर न निकली हों। आत्मा की लीला अतनुपम है, अतुलनीय है, इसके लिए यदि हम कुछ कह सकते हैं तो यही कि यह अपने तुल्य है। जब आत्मन् अपने को जगत के रूप में प्रकट करता है, तब भी इसके प्रकाश में कोई क्षय या ह्रास नहीं आता। वह अपने ही भीतर अपनी अतुलनीय सर्वोच्चता और विभव का अंश बाँटता हुआ वेगवत्ता और गति से इस जगत का आनन्द लेता है।

—अनु. अ. भा.

★

अन्तर्यामी को बिना पहचाने न योग, न कर्म, न भक्ति, न ज्ञान कुछ नहीं हो सकता। ईश्वर की खास पहचान 'अन्तर्यामी' यह मनुष्य देह में स्पष्ट हुई है जितनी अन्यत्र कहीं नहीं हुई। ईश्वर की व्याख्या मानव ने की। देखने में सर्वत्र वही मिलता है जो स्वयम् है। परन्तु मानने पर सारी ही अव्यवस्था दिखाई देती है, क्योंकि अन्तर्यामी सर्वत्र होते हुए दिखाई तो देता नहीं। यह अन्तर्यामी देखने का विषय नहीं, समझने का एवं अनुभव करने का विषय है। अपने-अपने मन के हम सब अन्तर्यामी ही तो हैं।

—'प्रकाश'

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिनके श्रीचरणों में ब्रह्म-विद्या सुलभ हो गयी है

●

श्री प्रताप यन्दे

बम्बई के उत्तर में लगभग पचास मील की दूरी पर वज्रेश्वरी नाम का एक तीर्थ-स्थान है। वहाँ के किले में स्थित वज्रेश्वरी माता के ऐतिहासिक मन्दिर तथा आसपास के गरम पानी के कुण्ड-झरनों के कारण यह स्थान पहले से ही महत्वपूर्ण माना जाता रहा है, पर हाल ही में एक अन्य कारण से यह स्थान असाधारण महत्व प्राप्त कर चुका है। लगभग तीस वर्ष पूर्व इस स्थान पर देवी के मन्दिर के सामने सुनसान पड़े एक आँगन में ढूह पर एक दिगम्बर अवधूत प्रकट हुए थे। पहले तो लोगों ने उस अवधूत को कोई पागल व्यक्ति मानकर उसकी अवज्ञा कर दी, पर जब उसकी दैवी शक्ति के चमत्कार प्रकट होने लगे तो लोगों की आँखें खुल गयीं और धीरे-धीरे वज्रेश्वरी का काया-पलट होने लगा। उन अवधूत महात्मा ने अपने प्रचण्ड तपोबल, शुद्ध चारित्र्य, प्रेमल स्वभाव और अद्भुत शक्ति से वहाँ की आबाल वृद्ध प्रजा का मन बरबश ही जीत लिया। उस परम प्रेम-योगी ने अपने प्रेम के रासायनिक चमत्कार से आसपास के वियाबान जंगल को मंगलमय गणेशपुरी में रूपान्तरित कर दिया। शालाएँ खोलीं, अस्पताल खड़ा किया, रास्ते बनवाये और वहाँ के लोगों के जीवन को एक अनोखा अर्थ प्रदान कर दिया। उन महापुरुष का नाम है भगवान श्री नित्यानन्द। भगवान जन्मसिद्ध अवधूत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परम गोपन और परम दुर्लभ आत्म-विद्या के बारे में आपने अनेक ग्रन्थों में पढ़ा होगा। आदिकाल से ही उसकी खोज में अनेक नर-पुंगवों ने पर्वत और समुद्र लांघे हैं, जन्मान्तरों में दारुण तपस्या की है। बम्बई के समीपस्थ गणेशपुरी के मुक्तानन्द दरबार में, श्रीगुरुदेव के चरणों में, अत्याधुनिक मनुष्य के लिए, अत्याधुनिक ढंग से, वह अमृता विद्या सुलभ हो गयी है।

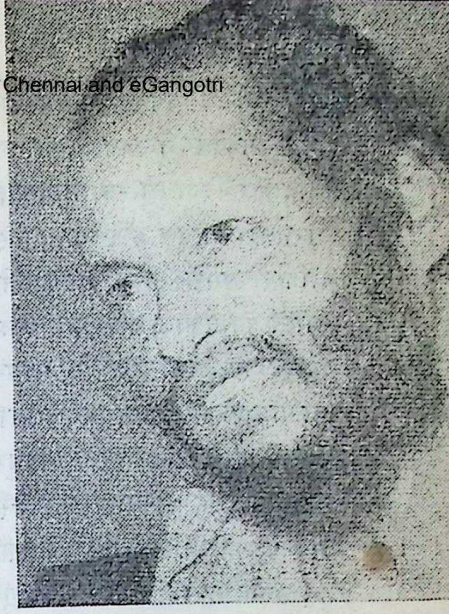

अमृतेश्वर स्वामी मुक्तानन्द

थे। विचार-विकार के उस पार ब्राह्मी-स्थिति का उद्गम जिसमें से होता है, वे जगदाधार विश्वम्भर मानो स्वयं ही भगवान नित्यानन्द में एक अवधूत के रूप में अवतरित हुए थे। उन महान योगीश्वर ने ८ अगस्त १९६१ के दिन अपनी इहलोक लीला संवरण करके महासमाधि ले ली थी। उस समय उनकी विशाल भक्त-प्रजा ने जिस विरह-वेदना का अनुभव किया था, उसका शब्दों में वर्णन संभव नहीं। नित्यानन्द बाबा की गणेशपुरी कुछ समय के लिए तो एकदम उदास, वीरान और ग़मगीन हो गयी थी, मानो कि घर के अन्दर का दिया अचानक बुझ गया हो और उसके बाद कुछ देर तक आंख में उंगली डालकर भी देखना संभव न रह जाये। ऐसी ही स्थिति उस समय गणेशपुरी की हो गयी थी। क्षण भर को लगा कि सब कुछ समाप्त हो गया। गणेशपुरी के इतिहास में मानो यह अन्तिम पर्व था।

पर इसी अंधकार में से धीरे-धीरे एक मद्धिम-सा प्रकाश चारों ओर फैलने लगा। इसी गणेशपुरी के गर्भागार में एक दूसरी ज्योति चमकती हुई दिखायी पड़ी। विश्व-रूप भगवान नित्यानन्द के ब्रह्म-तेज में से ही अवतरित हो रही यह अमर ज्योति अध्यात्म-मार्ग के यात्रियों को मार्ग-दर्शन कराने लगी। वास्तव में यह ज्योति जाने कब से प्रकट हो चुकी थी, पर जब नित्यानन्द सद्गुरु के प्रकाश से सारा ही जगत जाज्वल्यमान था, तब आगे बढ़कर अपने को प्रकट करने के बजाय इस ज्योति ने उस प्रकाश में ही अपने तेज को विलीन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर जीने में अपनी धन्यता मानी थी। परन्तु गुरुदेव ने जब स्थूल शरीर का त्याग कर दिया तो स्वाभाविक ही उनका सारा आध्यात्मिक और व्यावहारिक उत्तर-दायित्व उसके ऊपर आ पड़ने से इस ज्योति का प्रकाश धीरे-धीरे फैलने लगा। दूर-दूर के देश-विदेश के साधक मुमुक्षु इस प्रकाश में अपना अगला मार्ग देखने-समझने लगे। नित्यानन्द सद्गुरु-गृह के इस कुलदीपक का नाम है स्वामी मुक्तानन्द परमहंस। गणेशपुरी के रास्ते जाते हुए सबसे पहले बाँयी ओर जो एक सुन्दर पक्की इमारत दिखायी पड़ती है, वही है स्वामी मुक्तानन्द बाबा का आश्रम।

आश्रम के आँगन में प्रवेश करते ही दायीं ओर पारिजात के फूलों का एक वृक्ष आपका स्वागत करने के लिए खड़ा है। बाबा का दर्शन करने के लिए आनेवाले मेहमानों के जूतों की रक्षा करने का पवित्र काम यह वृक्ष करता है। इसके बाद आप एक प्रशस्त दीवानखाने में प्रवेश करेंगे। इस दीवानखाने के सामने के कोने में एक सुन्दर आरामकुर्सी पर बाबा बैठे हुए दिखायी पड़ते हैं। क्वचित् गम्भीर, कुछ विनोद। सदा प्रसन्न चेहरा, भव्य तेजस्वी शरीर-सौष्ठव, ताम्रवर्ण देह, बोलचाल में एक विशिष्ट चपलता, यही है स्वामी मुक्तानन्द का प्रथम दर्शन में आने वाला व्यक्तित्व। लेकिन अधिक परिचय के बिना उनकी दिव्यता का अनुभव होना कठिन है।

स्वामी जी की बैठक के सामने के कोने में एक विशाल सिंहासन पर भगवान नित्यानन्द का सुन्दर तैलचित्र दिखायी पड़ता है। इस चित्र में अंकित गुरुदेव की भव्य मूर्ति एक नज़र उठते ही देखनेवाले के हृदय को बींध जाती है। स्वामी जी के सामने थोड़ी देर बैठने के बाद जब हम आश्रम देखने को निकलते हैं तो उनके व्यक्तित्व का मनोहारी प्राकट्य देखने को मिलता है। किसी की भी नज़र लग जाये, ऐसा सुन्दर है आश्रम का बाग। मुख्य इमारत के पीछे की ओर जापानी ढंग से बना हुआ एक छोटा-सा कॉटेज है। चारों ओर बरामदा और उसके बीच दो छोटे कमरे : एक है बाबा का ध्यान का कमरा और दूसरा है उनका विश्रान्ति-कक्ष। बरामदे के चारों ओर बाँस की सलाइयों की बनी हरे रंग की चिकें पड़ी हैं, और उसके बाहर हैं, जुही-चमेली के फूलों के लता-मण्डप। उसके आसपास है नारियल और आम के वृक्ष, चम्पे और गुलाब की फुलवारी। ऐसा सुहाना दृश्य है कि देखने वाला मुग्ध–स्तम्भित देखता ही रह जाता है।

इस उद्यान के छोर पर एक छोटे द्वार से नीचे उतर कर जाने पर एक और विस्तृत बाग दिखायी पड़ता है, जिसमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फूल-झाड़ों का विपुल ऐश्वर्य फैला है। पर देखिये इन फूलों को कहीं आप तोड़ने को न ललचायें। बालक और फूल हैं बाबा के प्राण। बाबा की प्रेम–वर्षा के कारण झाड़-पान विकसित होकर जो प्रफुल्लित होते हैं, इसमें आश्चर्य क्या है? इस फूल–बन के बीच-बीच में बिल्व-वृक्ष खड़े दिखायी पड़ेंगे। शंकर भगवान को अतिशय प्रिय हैं बिल्ववृक्ष। बाबा को भी परमात्मा के शिव–स्वरूप के प्रति विशेष प्रेम है। बाबा की ऐसी अनुभव-सिद्ध श्रद्धा है कि यदि मन के सर्व विचार-विकार दूर करके क्षण भर बिल्व-वृक्ष के नीचे स्वस्थ बैठकर ध्यान किया जाये तो ईश-कृपा सहज ही प्राप्त होती है और मनुष्य-जन्म सार्थक होता है। इसी कारण बाबा ने बाग में बिल्व के झाड़ का एक सुन्दर चबूतरा बनवाया है। इस बाग में अन्य स्थानों पर भी शान्तिपूर्वक बैठने के लिए सीमेण्ट की बेंचें बनवा दी गयी हैं। और इससे भी अधिक एकान्त में बैठने की इच्छा यदि साधक को हो, तो जहाँ-तहाँ छोटे-छोटे ध्यान-कुटीर विद्यमान हैं। हफ़्ते के दरमियान बम्बई नगर में रहकर जीवन-निर्वाह की दौड़धूप में व्यस्त रहने के बाद शनि, रविवार की छुट्टी में इस महान सिद्धपुरुष के सहवास में समय बिताने के लिए नियमित रूप से आने वाले मुमुक्षु और साधक बगीचे में स्थान-स्थान पर शांत बैठे हुए अथवा परस्पर चर्चा करते हुए दिखायी पड़ेंगे। "परस्पर देवो भव" यही है आश्रम का मुद्रा–लेख। मैं तुम्हें देव-रूप समझता हूँ तो तुम्हारे मन में भी मेरे लिए देव-भाव उत्पन्न होगा। मन में ऐसा ही भाव और आशय रखने और प्रकट में ठीक वैसा ही आचरण करने के ज्वलन्त आदर्श के रूप में स्वयं बाबा का महान प्रत्यक्ष उदाहरण सम्मुख उपस्थित है। इसी से भगवान श्रीरामचन्द्र के जीवन-आचरण के अनुसार बाबा स्वयं भी मर्यादा-पुरुषोत्तम भगवान हैं। पहले करना फिर कहना, यही है बाबा की भूमिका। इसी से आश्रमवासी स्त्री-पुरुष भी आचार-विचार में मर्यादा रखकर उस स्थान की पवित्रता की रक्षा के लिए प्रयत्नशील दिखायी पड़ते हैं।

"हे पांडव, यह संभव नहीं है कि दीपक एक घर को उजाला रखकर दूसरे घरों को अंधेरा रखे।": भगवान श्रीकृष्ण द्वारा साधु-महात्माओं के विषय में वर्णित यह स्वभाव-विशिष्टता स्वामी मुक्तानन्द में परिपूर्ण प्रकाशमान है। गरीब से लगाकर श्रीमन्त तक सबको उनके निकट एक से ही प्रेम और आत्मीयता का अनुभव होता है।

बाबा जब शान्त बैठे होते हैं, तब आस-पास के सभी लोग शांत हो जाते हैं। वहाँ उपस्थित सभी व्यक्तियों को सहज ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

असीम शान्ति का अनुभव होने लगता है। विचार थम जाते हैं और अनेकों को अनिर्वचनीय, निर्विकार, निर्विचार स्थिति का अनुभव होता है। जिस स्थिति की प्राप्ति के लिए विकट योग-साधना का अभ्यास करना पड़ता है, बाबा के सान्निध्य में कोई भी बड़ी सरलता से उस स्थिति का सहज आनन्द अनुभव कर सकता है। इसी का नाम है 'शक्तिपात'। आत्म-साक्षात्कार पाये हुए योगियों की सच्ची कृपा शक्तिपात के रूपमें ही प्रकट होती है। जहाँ वेद तक रुक जाते हैं, उस स्थिति के प्रथम अनुभव की यही भूमिका है। इसकी लगन लगने पर संसार का स्वार्थ सहज ही छूट जाता है, और व्यक्तित्व विशाल हो जाता है। सर्वात्मभाव जागने लगता है और मनुष्य अपना कर्त्तव्य अनासक्त वृत्ति से करता हुआ जीवन के अन्तकाल में महानन्द में विलीन हो जाता है। वेदा की भाषा में इस मार्ग को महायोग क हैं। मुक्तानन्द बाबा के सहवास में सहयोग की प्राप्ति सहज ही हो जाती है

संसार छोड़ने की बात बाबा कभी न कहते। इसके ठीक विपरीत उनका यही दृढ़ मत है कि जिसने संसार को भ प्रकार निभाया है, वही परमार्थ का घू पीने के योग्य हो सकता है। उनका क है कि सर्वत्र एक ही परमात्मा व्या होते हुए भी विचार और वृत्ति का यो विनिमय शास्त्र-शुद्ध मार्ग से ही कि जाना चाहिए। चीन का यह कहना, हिन्दुस्तान का हमारे द्वारा अधि प्रदेश हमारा है, तामसिक वृत्ति का लक्षण इससे ठीक उलटे भारत का यह कहना यह भूमि हमारी है, सात्विक अहंकार तामसी अहंकार के बदले सात्विक

प रि वा र

सद्वैद्यशाला
जिंचीप
अपचन दूर करने

आयुर्वेदिक फैक्टरी
ज्वरघ्न
तापांघर

नांजनगुड
आत्मवर्द्धक
टॉनिक

प्रत्येक शहर के लिए हम एकही व्यापारी को अपना स्टाकिस्ट नियुक्त करते हैं।

नांजनगुड
दुग्धपाउडर

सोल एजेन्ट्स:
दी युनायटेड कम्प
५४, बन्दर स्ट्रीट,
मद्रास-१

बम्बई-शाखा-२७७ विश्वास भवन, घेवदार रोड़, माटुंगा, बम्बई १९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेने में कोई दोष नहीं है, बल्कि वही उत्तम व्यवहार का मार्ग है, ऐसा बाबा का उपदेश है। ब्रह्म ही सर्वत्र व्याप्त है, इस भाव से देशभक्ति करना देवभक्ति का ही एक स्वरूप है, ऐसी बाबा की शिक्षा है। भारत की उत्तरी सरहद पर जब चीन ने आक्रमण किया था, तो उसकी खबर पाते ही तुरन्त बाबा ने संरक्षण-फंड के लिए डेढ़ हज़ार की रक़म महाराष्ट्र-राज्य के मुख्यमंत्री को भेजी थी। उनके इस व्यवहार में उनके सिद्धकर्मयोगी स्वरूप का परिचय मिलता है।

अपने स्वार्थ की खातिर दुनिया को युद्ध के गर्त में ढकेलने का आसुरी शक्तियों का नग्न-नृत्य जब जगत में सर्वत्र दिखायी पड़ने लगता है, तब निखिल चराचर को समभाव से देखने वाले स्वामी मुक्तानन्द जैसे निस्वार्थ महात्माओं ने ही इस जगत के संतुलन को कायम रखा है, इसमें रंच भी संशय नहीं हैं। संसार के ताप से त्रस्त जीवों के लिए बाबा ने सद्गुरुकृपा की सहज-सुलभ प्याऊ खोल दी है। कोई भी वहाँ जाकर अपने को तृप्त कर सकता है।

अनु० ऐन्द्रिला

★

अपनी आवश्यकता के लिए खरीदिए

Hind FLOORING TILES

हाइड्रालिक इटालियन मशीनों से

निर्मित : प्रीफ़ब (पूर्वनिर्मित) आर. सी. सी. गृह, सीमेण्ट पाइप, टैंक, रंगाई की नाँदें व बाग़ीचों के सामान का निर्माण करते हैं। सरकार, रेलवे, म्युनिसिपैलिटी, पी. डब्ल्यू. डी. के कंट्राक्टर हैं और सामान सुहैया करते हैं।

हिन्दुस्तान सीमेन्ट पाइप्स एण्ड कंक्रीट कन्स्ट्रक्शन कं०

मुख्य कार्यालय : ओछवलाल गोरधनदास शाह

टाइल, पाइप्स एण्ड सेनीटरी मरचेण्ट्स

खाडीआ, चार रस्ता, अहमदाबाद

फैक्टरी : सुएज फार्म रोड, अहमदाबाद

कार्यालय तथा निवास फोन : ५२२९२ फैक्टरी फोन : ५१६३६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरी इज़राइल यात्रा

लेखांक : २ :

श्रीमती लीलावती मुन्शी

अब मैं पुन : सेमिनार पर कुछ प्रकाश डालूंगी।

तीसरे दिन डॉ. एल. मिलर ने 'स्थानान्तरण एवं स्वास्थ्य' विषय पर अपना पेपर पढ़ा। उसके बाद हम एक स्वास्थ्य सेण्टर देखने गये। किसी भी महिला को उसके गर्भवती होने से लेकर बच्चा जन्म लेने तक इस सेण्टर द्वारा सलाह दी जाती है। नर्सें बच्चों के शारीरिक एवं मानसिक विकास का पूरा-पूरा ध्यान रखती हैं।

चूंकि मैं अन्य सदस्यों की अपेक्षा इजराइल जल्दी छोड़ रही थी, मेरा अलग से कार्यक्रम शुरू हो गया। माउण्ट कारमेल पर स्थित मैं एक ड्रूज गांव देखने गयी। अरब की यह एक रूढ़िवादी जाति है। वे अपने धर्म के सम्बन्ध में किसी से विशेष चर्चा नहीं करते। आर्थिक दृष्टि से वे संपन्न हैं। इजराइल की सेना में भी कार्य करते हैं। वे अब मोटर-कार का भी उपयोग करने लगे हैं।

हमने एक दूसरा किबुत्ज़ भी देखा। वह सुन्दर घरों, स्वीमिङ्ग पूल, वास्केटबाल तथा अन्य सुविधाओं से सम्पन्न था। किबुत्ज़ लोग श्रम के साथ मनोरंजन को भी महत्त्व देते हैं। एक सामुदायिक केन्द्र भी वहाँ स्थापित है।

शनिवार को मैं सोराह इरमैन के साथ नाजरेथ शहर देखने गयी। यहां ईसाई मुसलमान तथा यहूदियों की मिश्रित बस्ती है। यहीं वह शहर है, जहाँ ज़ीजस क्राइस्ट रहते थे। यह पुराने ढंग का शहर है। इसकी गलियाँ अत्यन्त संकरी हैं। यहाँ एक विशाल गिरजाघर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२ मई १९६५

का निर्माण हो रहा है। हमने यहूदियों का एक पूजा-स्थान भी देखा, जहाँ क्राइस्ट ने अपना प्रथम प्रवचन दिया था। नाजरेथ अब ईसाइयों के लिए तीर्थ स्थल बन गया है।

१ बजे हम लेक टिबेरियाज़ पहुँचे जो समुद्रसतह से ६०० फीट नीचे है। यहाँ किसान टमाटर, अंगूर, केला, खीरा, अंजीर तथा अन्य खाद्य पदार्थों को उपजाते हैं। इससे उनको खासी आमदनी भी हो जाती है। पर्यटकों को ठहरने के लिए वहाँ एक सुन्दर गेस्ट-हाउस भी है। यह भी उनकी आमदनी का जरिया है।

श्रीमती लीलावती मुन्शी

जोरडन नदी इजराइल के लिए जल का प्रमुख स्रोत है। किन्तु संयुक्त राष्ट्र संघ के निर्णायानुसार वे इसके जल का ४० प्रतिशत भाग ही उपयोग कर सकते हैं। हम उपानावो से गुजरे और हखुला घाटी को भी देखा। एक समय जहाँ कीचड़ था, वहाँ अब उपजाऊ खेत बन गये हैं। सारा इजराइल घाटियों और पहाड़ियों से भरपूर है। इसलिए असमतल भी है।

मार्ग में हमने दो युवक सैनिकों को 'लिफ्ट' दिया और आफ़ा शहर पहुँचे जो प्राचीन काल में एक बन्दरगाह था। यहाँ की सड़के पत्थर की बनी हैं और दीवालें ऊँची ऊँची हैं। हम वह किला भी देखने गये, जहाँ से पूर्व काल में लोग बैठ कर दुश्मनों की आनेवाली नावों का निरीक्षण करते थे।

शाम को हम पुन: अपने आवास-स्थान पर लौट आये।

अपनी यात्रा का दूसरा भाग मैं शुरू करूँ, उसके पूर्व यह बताना चाहती हूँ कि इजराइल क्या है।

इजराइल देश का क्षेत्रफलमात्र७९९२.६ वर्ग मील है, जिसमें से १७१.८ वर्ग मील तो जल ही जल है। सम्भवत: यह पृथ्वी पर सब से छोटा देश है। एक छोर से दूसरे छोर की लम्बाई २८० मील है और सबसे अधिक चौड़ाई ४१ मील तथा सबसे कम चौड़ाई १० मील है। इजराइल चार अरब-देशों से घिरा हुआ है। उत्तर में लेबनान, उत्तर-पूर्व में सीरिया, दक्षिण-पश्चिम में मिस्र तथा दक्षिण में सबसे निकट सौदी अरब है। भूमि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

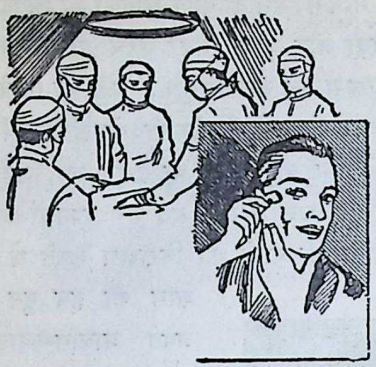

शेब्रॉल

यह हॉस्पिटल तथा घर में कृमिनाश के लिए अत्यन्त प्रभावकारी हैं।

उत्पादक :

एस. एच. शेलत एन्ड सन्स

शेलत ब्रदर्स, मद्रास

और उसकी अन्य शाखाओं के मालिक

GP

से चारों ओर घिरे समुद्र पर इजराइल के दो बन्दरगाह– हैफा और टेल एविव स्थिति हैं। नेगाव मरुस्थान के अन्त में लाल सागर पर ईलाट नामक बन्दरगाह भी बनाया गया है। फिलहाल मेडिटेरियन सागर और लाल सागर के लिए बसें चलती हैं। शीघ्र ही इन बन्दरगाहों को जोड़ने के लिए ट्रेन भी शुरू हो जायगी।

इजराइल भूमि तथा वह भाग, जो अन्य देशों ने ले लिया है, पैलेस्टाईन कहा जाता था। वह सन् १९२० से १९४८ तक ब्रिटिश अधिकार में था। द्वितीय महायुद्ध के समय हिटलर द्वारा ६० लाख यहूदियों के निकाले जाने के बाद यह आवश्यकता महसूस की गयी कि यहूदियों का अपना एक देश–घर–होना चाहिए, जहाँ वे शान्ति पूर्वक रह सकें। बाद में इजराइल के कई टुकड़े हो गये और यहूदियों ने लड़ाई भी लड़ी। उन्हें जो कुछ भी मिला, उसी में बस गये और वहाँ की भूमि को उपजाऊ बनाया। यहूदी जाति परिश्रमी होती है। उनका धर्म ४ हजार वर्ष पुराना है। महत्त्व की बात तो यह है कि हजारों वर्ष तक विश्व भर में भटकते रहने के बावजूद यहूदियों ने अपने अस्तित्व को नहीं समाप्त होने दिया। मातृभाषा के रूप में उन्होंने हेब्रयू को स्वीकार किया, वैसे अंग्रेजी या अरबी भाषा बच्चों को अनिवार्य रूप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से सीखनी पड़ती है। उनका धर्म, उनकी भाषा ही उन्हें एकता के सूत्र में पिरोये रखने का कारण है। उनकी एकता का एक और कारण उनके पड़ोसी देश हैं, जिनसे उनकी कम पटती है। आक्रमण के भय से वे सदा एक रहते हैं। वे तो यही समझते हैं कि या तो हमें इसी भूमि पर रहना है, या इसकी सुरक्षा के लिए मर जाना है। निश्चय ही इजराइल के लोग महान हैं। परिस्थितियों ने उन्हें बहादुर बना दिया है। यहूदियों में भी महान वैज्ञानिक, डाक्टर, वकील, लेखक तथा लक्ष्मीपति हो गये हैं।

एक यहूदी के भोजन-टेबल पर दूध और मांस एक साथ नहीं परसा जाता। दूध वहाँ पर्याप्त मात्रा में होता है। उनका भोजन पर्याप्त रूप से पौष्टिक होता है। आश्चर्य है कि एक मरुस्थली देश अपनी आवश्यकता से अधिक खाद्यान्न उपजा लेता है। भांति-भांति के फल तथा सब्जियाँ भी वह उगाता है। गेहूं या चावल वहाँ कम पैदा होता है। वह इनका आयात करता है। पानी उसके लिए सबसे बड़ी समस्या है। इस समस्या का समाधान भी हो जायगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

उद्योगों की ओर भी इसका ध्यान गया है। १५ ता. की सुबह को मैंने सबसे विदा ली और श्रीमती इरमन के साथ रवाना हुई। रास्ते में मैंने सीजर की खुदाई भी देखी। विभिन्न काल की परतों का परिलक्षन होता है उसे देखने से। पुष्पों में भी मेरी रुचि है, ऐसा जान कर हमारे कार्यक्रम में पुष्पों का प्रोग्राम भी सम्मिलित किया गया था।

—क्रमशः

वैराग्य

सौदागर दरवेश हो गया और उसने चेलों की जमात खड़ी कर ली। एक दिन वह पारसी संत आजर कैवान के पास आया और गर्व से बोला, "जब मैं अमीर था तब मुझे चोरों का डर सताया करता था कि कहीं वे मुझे लूट न लें। और मैं इसी डर से चैन की नींद सो नहीं पाता था। लेकिन अब इस फकीरी जामे में बेपरवाह नींद सोता हूँ।"

संत रहस्य भरी हंसी हंस पड़े "सौदागर था तब चोर तुझे लूट सकते थे फकीर हुआ तो तू रिआया को लूटेगा। फकीरी दुनिया से भाग कर चैन की नींद सोने के लिए नहीं है वह तो खुदा और उसके हर मजलूम बंदे की फिक्र में रात-रात जागने से ही मिलती है"।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

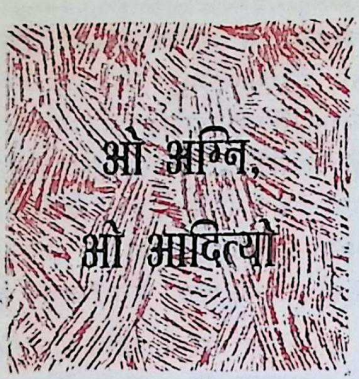

हमारे नेत्रों को दृष्टि दो :

हमारी देहों को दृष्टि दो, ताकि वे देख सकें। हम जगत को समग्रता में देख सकें, सुविस्तृत रूप में देख सकें।

हे देवों, सौ शरद हमारे सम्मुख हैं, जिनके भीतर तुम हमारी देहों का क्षय करते हो; जिनमें पुत्र पिता बन जाते हैं; मत तोड़ना मध्य में हमारे गतिमान जीवन का प्रवाह।

ओ वरुण, मेरे जीवन के तन्तु का छेदन मत करना, जब तक मैं अपना गीत बुन रहा हूँ; ऋतु से पहले मेरे कर्म की मात्रा भंग न हो।

ओ अग्नि ! हमारी पुरातन मित्रता को तोड़ना नहीं। ऊपर छाये हुए मेघ की तरह, वृद्धावस्था देह की क्षति करती है, उस अनिष्ट के समीप आने से पहले ही मेरी रक्षा करना।

ओ रुद्र ! हममें चाहे कोई महान हो या अर्भक, क्षय मत करना। जो विकसित हो रहे हैं या विकसित हो चुके हैं, उनका भी क्षय मत करना। हमारे बीच में माता या पिता का भी वध मत करना, और हमारी प्यारी देहों को भी कोई हानि न पहुँचाना।

ओ आदित्यों ! हम मनुष्यों का वह मृत्यु-बान्धव है, कृपापूर्वक पृथ्वी पर हमारे दिनों को दीर्घ बना देना, ताकि हम जी सकें।

ओ अग्नि, तुम देह के रक्षक हो : मेरे देह की रक्षा करो। तुम दीर्घ जीवन के प्रदाता हो; मुझे दीर्घ जीवन प्रदान करो। तुम बौद्धिक प्रकाश के प्रदाता हो, मुझे बुद्धि का प्रकाश दो। हे अग्नि, मेरे तन को जो कुछ भी चाहिए, तुम मेरे लिए उसका निर्माण करो।

मुझमें ज्ञान का प्रकाश हो, यश, और यज्ञ में जो शक्ति है, उसका प्रकाश हो, ताकि प्रजापति मुझमें, द्यु में ज्योति की तरह, स्थित हो जायें।

—ऋग्वेद

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे अमर हो जाते हैं

वह जो ऋग्वेद की उस परम अक्षर सत्ता को नहीं जानता, जिसमें अधिविश्वों के सारे देवता निवास करते हैं–उसके लिए ऋचा का क्या प्रयोजन है ? केवल वे, जो इसे जानते हैं, अमर हो जाते हैं।

इसी से सृष्टा सृजन करता है–वेदों, यज्ञों, क्रतुओं, व्रतों, भूत, भविष्य और उन सबका, जिन्हें वेद उद्घोषित करते हैं। और इसी में अन्य (आत्मा) भी माया से संनिरुद्ध होता है।

जानो कि प्रकृति माया है, और माया का संचालक महेश्वर है। यह समस्त जगत उसके अवयव रूप प्राणियों से व्याप्त है।

वह परम एक जो हर कारण का अधिष्ठाता है, जिसमें सब एक साथ आता है और पृथक् भाव से चला जाता है, जो ईश्वर है, वरों का प्रदाता है, आराधनीय है– उसके साक्षात् से मनुष्य सनातन शान्ति को प्राप्त करता है।

जो देवताओं का प्रभव और उद्भव है, विश्वाधिप है, रुद्र है और महर्षि है, जिसने हिरण्यगर्भ को जन्म लेते देखा– वह हमें शुभ बुद्धि से सम्पन्न करे !

जो देवों का अधिपति है और जिसमें लोक आश्रय लेते हैं, वह जो द्विपदों और चौपायों का अधीश्वर है— उस भगवान के लिए हम हवि से आहूति दें।

जो सूक्ष्म से भी सूक्ष्म है, जिसने शून्य के बीच में विविध रूपाकारों की समस्त वस्तुओं का सृजन किया है, जो विश्व का एकमात्र परिवेष्टा है– उसे जानकर मंगलमय भगवान के रूप में प्राणी सनातन शान्ति को पा लेता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह काल में इस भुवन का रक्षक है, विश्वाधिपति है, सब वस्तुओं में प्रच्छन्न है। उसमे ब्रह्मर्षि और देवता संयुक्त होते हैं। उसे जानकर प्राणी मृत्यु के पाश को छिन्न कर देता है।

सर्व भूतों में गूढ़ मंगलमय भगवान, जो घृत के ऊपर की झिल्ली से भी सूक्ष्मतर है, जो अकेला इस जगत को व्याप्त करता है– उसे जानकर प्राणी समस्त पाशों से मुक्त हो जाता है।

वह देव, जो विश्वकर्मा है, महात्मा है सदा मनुष्यों के हृदय में रहने वाला; हृदय, मनीषा और मन से सीमित कर दिया गया है। जो इसे जानते हैं, वे अमर हो जाते हैं।

जब अंधकार नहीं रहा, तब न दिन है न रात्रि, न सत् है न असत्। केवल परम मंगलमय भगवान (शिव) ही वहाँ हैं। वह सनातन है, सविता का वरेण्य प्रकाश है, और उसी से पुरातन प्रज्ञा निःसृत हुई है।

न ऊर्ध्व में न तिर्यक् और न मध्य में किसी ने उसे पकड़ा है। उसके समकक्ष कोई नहीं है, जिसका नाम महद्यश है।

उसका रूप देखा नहीं जा सकता : कोई उसे आँख से नहीं देखता। जो उस हृदयस्थ को हृदय और मन से जान लेते हैं, वे अमर हो जाते हैं।

'तुम अजात हो'– इन शब्दों से कोई भीरु तुम्हारे पास पहुँच जाता है। ओ रुद्र, तुम्हारा दक्षिण-मुख सदा मेरी रक्षा करे।

प्रस्तुति : अ. मा.

वैराग्य और उपादान

असार संसार से विरक्त एक व्यक्ति पारसी संत आजर कैवानं के पास आया और बोला, हज़रत, मैंने क़सम खाई है कि फ़ानी दुनिया के सारे ऐसो हसरत छोड़ दूंगा, इस फंदे को तोड़ दूंगा।

संत ने गंभीर स्वर में कहा 'तुमने ठीक सोचा है।" वही व्यक्ति कुछ दिन बाद संत के पास आया और कहने लगा, "मैं अभी गुदड़ी और फकीरी-पोशाक बना रहा हूँ। सरो सामान तैयार होते ही मैं फ़कीर हो जाऊँगा।"

संत जोर से हंस पड़े, "भाई सरोसामान छोड़ने के लिए ही कोई दरवेश होता है और तू उसी को जुटाने के लिए परेशान है। अपनी दुनिया में लौट जा। तू अभी फ़कीरी के क़ाबिल नहीं है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईश्वर में अडिग श्रद्धा

[बोध-कथा]

एक समय महाराष्ट्र में वर्षा न होने से भीषण जलकष्ट हुआ; पशु और मनुष्य दोनों ही त्रस्त हो गये। तब सभी ने मिल कर वर्षा के लिए ईश्वर से प्रार्थना करने का निश्चय किया! एक निश्चित् स्थान पर सभी एकत्र हुए। इतने में एक बालक छतरी लिये आया और वह भी सबके साथ प्रार्थना करने लगा। लोगों ने पूछा, 'यह छतरी क्यों लाये?' तो उसने उत्तर दिया, 'जब आप सभी लोग ईश्वर के पास वर्षा के लिए प्रार्थना करने आये हैं तो मैं भी उसी आशा में चला आया– सामान्य लोग भी किसी वस्तु के मांगने पर हमें निराश नहीं करते तो फिर ईश्वर के यहाँ क्या कमी है? वर्षा आयेगी इसलिए उससे बचने के लिए छतरी ले आया।' कई लोग तो इस पर उसकी मज़ाक उड़ाने लगे। परन्तु बालक की श्रद्धा से प्रसन्न होकर प्रभु ने वर्षा भेजी। सभी भीगने लगे, परन्तु बालक छतरी के नीचे सकुशल घर लौट आया।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री. अमृतलाल बी. याज्ञिक

"वृद्धावस्था का कारुण्य' विषय पर लिखे हुए लेख के सम्बन्ध में पूज्य केदारनाथ जी के साथ बात चल पड़ी। जीवन-प्रवाह से अलग जा पड़ने के कारण एक वृद्ध को सब कुछ कितना अटपटा लगता है और सन्तानों–द्वारा उसकी बहुत चिन्ता किये जाने के बावजूद उसकी स्थिति कितनी करुण हो जाती है, मैं श्री नाथ जी के साथ चर्चा कर रहा था कि उन्होंने एक नया दृष्टिकोण ही प्रस्तुत कर दिया, जिससे न केवल इस समस्या पर प्रकाश पड़ता है, बल्कि इसके हल की दिशा में भी संकेत मिलते हैं। यह बात हमारे पाठकों के लिए भी अधिक उपयोगी हो सकती है, मैं ऐसा मानता हूँ और इसीलिए उस बात का हवाला यहाँ देना चाहता हूँ।

"वृद्ध पिता को, ज़्यादा से ज़्यादा सुविधा देते और पूरी-पूरी चिन्ता और ध्यान रखते हुए भी कोई न कोई कसर नज़र आती ही है। इसका कारण केवल मानस-शास्त्रीय है, ऐसा मुझे लगता है। जो लोग सन्तानों को आज्ञा देते रहने के आदी होते हैं और सन्तानों को आज्ञा-पालन करना ही चाहिए, ऐसी अपेक्षा जिन्हें पहले से ही रहती है, वृद्ध होने पर उनके मन में प्रायः यह बात बैठ-सी जाती है कि बड़े हो जाने पर अब सन्तानों को उनकी चिन्ता नहीं, बाप की परवाह नहीं। वे ऐसा मान लेते हैं कि अब किसी को उनकी ज़रूरत नहीं, मात्र लोकलज्जा-वश उनकी थोड़ी-बहुत सेवा हो जाती है। कोई घर पर आता भी है तो मात्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाराष्ट्र प्रदेश के दीर्घ अनुभवी शिक्षा-शास्त्री, गुजराती साहित्य के मर्मज्ञ विवेचक और शिक्षक प्रिंसिपल अमृतलाल बी. याज्ञिक जीवन-निर्माण विद्या के सूक्ष्म-द्रष्टा विज्ञानी, और कुशल कलाकार हैं। आधुनिक जीवन की ज्वलन्त व्यवहारिक समस्याओं पर हाल ही में उन्होंने गंभीर मंथनशील, चिन्तनशील, और समाधानकारी लेख लिखे हैं। उन्हीं में से यह एक लेख, 'भारती' के पाठकों के हाथों सौंपते हम कृतकार्यता अनुभव करते हैं।

औपचारिक नमस्कार करके भी बात नहीं करता। घर के युवा, प्रौढ़, बालकों के साथ बातचीत करके चला जाता है। अगर यह पूर्वग्रह वृद्ध के मन में समाया रहे तो पुत्र या कोई बालक करे क्या? बेटा अपने कामकाज में फँसा हुआ हो, बच्चे अलग-अलग अपने-अपने रस में लीन हों तो ऐसी हालत में बूढ़े के साथ बातचीत का वक्त कहाँ से निकाले? वृद्ध की अपेक्षा होती है कि सन्तानें उसे सभी वस्तुओं से परिचित कराती रहें। ज़माने भर की रुचि बुरी दिखने से वृद्ध को भूत-काल ही अधिक सुन्दर लगता है और याद आया करता है और उसे वर्तमान बिगड़ा हुआ लगता है।

नयी स्थिति को समझने की भी हमदर्दी, यदि वृद्ध न दिखाये, उसे नयी-नयी बातें भी, यदि पुरानी, रूढ़िग्रस्त और वर्तमान में अनुपयोगी मालूम हों, तो इस विचारणा के कारण उत्पन्न करुणा को भला कैसे दूर किया जा सकता है। इसमें किसका क़सूर है? इस परिस्थिति को कैसे सुधारा जाय? इस प्रकार की अनेक बातें मन में घुमड़ती रहीं और हम अपने तथा मित्रों के घरों में अनुभव की गयी बातों की चर्चा आपस में कर रहे थे।

श्री नाथ जी ने बड़ी गंभीरता के साथ कहा– "वृद्धों से सम्बन्धित प्रश्न को मैं बहुत महत्त्व का समझता हूँ। आपने जो कुछ कहा, यथार्थ है और ऐसा होता है, सच्ची बात है; मगर इस प्रश्न का हल भी हो सकता है, ऐसा मैं मानता हूँ। मेरे पिता जी की स्थिति का पूरा-पूरा ध्यान मुझे आ रहा है और सब कुछ मेरी आँखों के सामने स्पष्ट-सा है।

मेरे पिता जी वृद्धावस्था बीतते-बीतते अपनी आँखें गवाँ बैठे थे। वृद्ध की सेवा बराबर होनी चाहिए, इस पुरानी परम्परा में मेरी दृढ़ आस्था थी। मैं उनकी सेवा करता था। वे परवश थे। उनकी सभी ज़रूरतें मुझे पूरी करनी थीं और मैं प्रेम तथा आदर के साथ यह कार्य करता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था, इसमें मुझे हमेशा आनन्द मिलता था। किन्तु, उनको इस बात से कष्ट होता था। मेरे जीवन में वे एक विक्षेप कर्ता की तरह हैं, ऐसा उनके मन को लगता था, इससे वे मन में दुःखी थे।

एक बार अत्यन्त कोमल-स्वर और सजल-नयन होकर उन्होंने मुझसे कहा– "बेटा, मैं तुमको कितनी-कितनी तकलीफ़ें दे रहा हूँ! मगर, क्या करूँ? मैं अन्धा हूँ। आँखे नहीं हैं इसलिए निरुपाय होकर तुम्हें हैरान करना पड़ता है। परमात्मा ऐसा करे कि मेरे आयुष्य की डोर खींच ही ले, ऐसी मेरी हार्दिक इच्छा है!"

एकाएक मेरे मुंह से निकल गया– "पिताजी, यह आप क्या कह रहे हैं? आप की आँखें नहीं हैं, यह किसने कहा? आप की तो आठ आँखें हैं (हम चार भाइयों की), आप को यह विचार कैसे आया? हमारी सबकी आँखें किस काम की हैं?"

केदारनाथ जी जब यह बात कह रहे थे, उनकी वाणी की आर्द्रता में उनकी पितृ-भक्ति की कोमलता मैं देख रहा था। नाथ जी ने इस सम्बन्ध में मत व्यक्त करते हुए कहा– "मैं कोई साहित्यकार नहीं, फिर भी, पिता जी की आठ आँखें हैं, ऐसी साहित्यिक भाषा, कौन जाने, कहाँ से निकली, इस पर मुझे भी आश्चर्य हुआ। लेकिन पिता श्री की करुणार्द्रता की तीव्र अनुभूति के कारण ही ये शब्द अपने आ निकल गये।"

मुझे कविता के उद्रेक से सम्बन्धि वर्ड्सवर्थ के उद्गार याद आये। गहरी अनुभूति से ही कविता का जन्म होत है– साहित्य के उद्गम से सम्बन्धित य तथ्य, इस प्रकार केदारनाथ जी के द्वा व्यक्त होता देखकर मुझे आनन्द मिश्रि आश्चर्य हुआ। तदनन्तर केदारनाथ जी की विचारधारा प्रवाहित होती रही।

"इस प्रसंग के बाद पिता जी के हृद का उद्वेष चला गया, इतना ही नहीं उनके चेहरे पर आनन्द की झलक मैं स्पष्ट देख सकता था। जिसे आप कारुण्य कहते हैं, वह भाव चला गया। पिता के हृदय में पुत्र-प्रेम की सहज प्रतीति होने से उनके हृदय को जीवन की कृतार्थता का अनुभव होता है, सारा मानसिक उतार-चढ़ाव अदृश्य हो जाता है। आप अपना अधिक समय पिता जी को दें, ऐसी अपेक्षा वे नहीं रखते। आप, दिन में केवल पाँच मिनट ही सही, उनके प्रति प्रेम तथा आदर प्रकट कर सकते हैं। आप अपने काम पर जाते समय उनसे कहिए कि– "मैं आफ़िस जाऊँ न?" नाथ जी की वाणी का विनोद उनके पास रहने वाले सभी लोग जानते हैं। नाथ जी ने कहा–'आप न जाइए। ऐसा तो पिताजी कहने वाले नहीं न? तो फिर इस प्रकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भविष्य के लिए बचत **देना बेंक** को आपकी मदद करने दीजिये

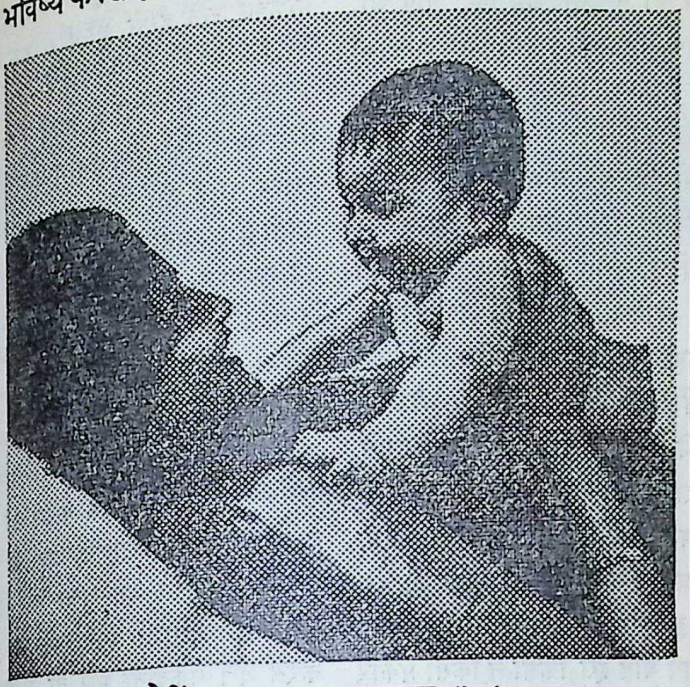

सेविंग्ज एकाऊण्ट – ब्याज ४%

अल्पवयस्क बचत योजना – ब्याज ४%

फ़िक्स्ड डिपॉज़िट – ब्याज ६% से ७½%

देना बेंक

देवकरण नानजी बेंकिंग कंपनी लिमिटेड

रजिस्टर्ड ऑफ़िसः देवकरण नानजी बिल्डिंग्ज़, १७, हॉर्निमेन सर्कल बम्बई-१.

१४५ से अधिक ऑफ़िस तथा ४५ सेफ़ डिपॉज़िट वॉल्ट

प्रवीणचंद्र व. गांधी मॅनेजिंग डाइरेक्टर

DB/H/168 – A

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी किसी दिन, अगर अपना पूज्य भाव प्रकट करें तो इसमें क्या बुराई है? किसी दिन आप की गृहिणी कहे कि "बापू जी, आज अमुक-अमुक चीज़ें पकाऊँगी, आप को कौन सी पसन्द है?" ऐसा बोलें तो उन्हें ज़रा भी बुरा न लगे। आप को उन्हें अपने अनुकूल बनाने के लिए, मात्र एक दो मिनट आदर प्रेम से बात भर कर लेनी चाहिए, इससे यह मन्तव्य पूरा हो जायेगा। लेकिन, यदि उनमें अपनी दिलचस्पी नहीं ज़ाहिर करें और तमाम आसानियाँ देते जायँ, पैसा दें, नौकर-चाकर की सेवा की सुविधा कर दें तो इससे उन्हें बुरा लगेगा ही। वे तो भूखे हैं सिर्फ़ आप के प्रेम के। इस प्रेम का, किसी न किसी प्रकार से आविष्कार आवश्यक है। आप के हृदय में प्रेम है, मान लिया, किन्तु, आप यदि इसे किसी न किसी प्रकार व्यक्त न करें तो उनके मन में आशंका होती ही है। इसमें उनका भी क्या दोष? क्या इस सम्बन्ध में आपकी उपेक्षा उत्तरदायी नहीं? दिन में एक-दो मिनट उनके पास बैठकर बिता लीजिए और फिर सारे दिन आप अपने काम में लगे रहिए तो उन्हें इससे पीड़ा नहीं होती। जीवन में दूसरे आनन्द विलुप्त हो जाने से उनके जीवन के रस का एक मात्र केन्द्र सन्तान-प्रेम हो जाता है। इसकी खोज के लिए वे विकल होते हैं, यह सच है, कारण कि आप को अपने काम में ख़लल मालूम पड़ता है, ऐसी आशंका उन्हें होती ही है। इस आशंका का दूर किया जाना ज़रूरी है।

बाद में, नाथ जी ने अपने पिता जी के संस्मरण में एक प्रसंग बतलाया, जो अविस्मरणीय तो है ही, उससे विशेष जानकारी बढ़ती है। उन्होंने बताया– "मेरे पिताजी को तम्बाकू खाने की आदत बहुत वर्षों से थी। तम्बाकू खाने वाले को बार-बार थूकना ज़रूरी होता है, यह तो आप जानते ही हैं। इसके लिए थूकदानी रक्खी गयी थी। चूंकि पिता जी की सेवा मैं करता था, इसलिए थूकदानी साफ करने की जवाबदारी मेरी थी। लेकिन, अब तो मैं एक प्रख्यात व्यक्ति बन चुका था, इसलिए अनेक लोग मुझसे मिलने के लिए आया करते थे। थूकदानी मुझे ही साफ करनी पड़ती है, पिताजी के मन में यह बात टीसती थी। ऐसे गण्यमान पुत्र को इस प्रकार थूकदानी साफ करने का काम अंजाम देना पड़ता है, यह बात उन्हें ज़रा भी नहीं जंचती थी। एक बार उन्होंने मुझसे कहा– "तुमसे मिलने के लिए ऐसे-ऐसे प्रतिष्ठित लोग आया करते हैं और मेरे कारण तुमको थूकदानी साफ करनी पड़ती है, यह मुझे अच्छा नहीं लगता। मैंने तम्बाकू छोड़ देने का विचार किया

[शेष पृष्ठ ६३ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक बेचैन आत्मा : जीवन के अर्थ की खोज में

स्टीफ़ेन ज़िवग

•

टॉल्स्टॉय ने यह साफतौर पर महसूस किया था कि प्रत्येक प्राणी के लिए और स्वयं उसके लिए भी जीवन में सिवा पीड़न, मौत और निरन्तर क्षय के कुछ नहीं हैं; इसी-लिए उसने निश्चय कर लिया था कि इस तरह वह ज़िन्दा नहीं रह सकता। या तो जीवन का कोई अर्थ उसे जानने को मिलना चाहिए, और नहीं तो वह स्वयं को गोली मार देगा।

•

टॉल्स्टॉय के बाद उसके राष्ट्र के दूसरे सबसे महान रूसी लेखक तुर्गनेव ने २७ जुलाई १८८३ को अपने मित्र टॉल्स्टॉय के नाम यासनाया–पोलियाना में एक बड़ा ही पुरअसर पत्र भेजा था। कई बरसों से बड़ी बेचैनी के साथ वह इस बात पर गौर कर रहा था कि टॉल्स्टॉय, जिसका वह अपनी जाति के सबसे बड़े लेखक के रूप में आदर करता था, साहित्य से हटकर अपने को एक धार्मिक नैतिकता में खोये दे रहा है। प्रकृति और मनुष्य के चित्रण में जिसकी सफलता अद्वितीय मानी जाती थी, उस व्यक्ति की टेबुल पर आज धर्म-ग्रन्थों और बाइबिल के सिवा और कुछ भी नहीं रह गया था। तुर्गनेव के मन में यह भय पैदा हो गया था कि गॉगल की तरह टॉल्स्टॉय भी अपनी परिपक्व सर्जक प्रतिभा के ये निर्णायक बरस धार्मिक चिंतन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में बरबाद न कर दे, जो कि आज की दुनिया के लिए निरर्थक है। इसलिए अपनी आखिरी बीमारी के दिनों में वह अपनी कलम पकड़ने दौड़ा-कहें कि पेन्सिल, क्योंकि कलम पकड़ने में उसका कमज़ोर हाथ अब असमर्थ हो गया था और उसने अपने युग की सबसे महान सार्वभौम प्रतिभा के नाम एक दिल हिला देने वाला प्रार्थना-पत्र लिखा। उसने लिखा कि "यह एक मरते हुए आदमी की अन्तिम और हार्दिक बिनती है: साहित्य में लौट आओ! वही तुम्हारी सच्ची देन है। —ओ रूसी भूमि के महान् कवि! मेरी यह विनती सुनो?"

मौत के बिस्तर पर से आनेवाली इस पुकार का (वह पत्र बीच में ही अधूरा छूट गया था, क्योंकि तुर्गनेव लिखता है कि उसकी शक्ति चुक गयी थी) टाल्स्टॉय ने तुरन्त कोई जवाब नहीं दिया; और आखिर जब उसने उत्तर देना चाहा, तब बहुत देर हो चुकी थी। टाल्स्टॉय ने उसकी बिनती पर ध्यान दिया है या नहीं, यह जानने के पहले ही तुर्गनेव इस दुनिया से उठ गया था। पर टाल्स्टॉय के लिए भी शायद अपने मित्र की उस पुकार का उत्तर देना और उसे स्वीकार करना आसान बात नहीं थी, क्योंकि किसी दम्भ या चिन्तनात्मक जिज्ञासा से प्रेरित होकर वह ईश्वरप्राप्ति और ईश-चिन्तन के मार्ग पर नहीं गया था। ठीक इसके विपरीत अपनी इच्छा के विरुद्ध, बरबस उसने अपने को उस ओर खिंचते पाया। टाल्स्टॉय तो इस दुनिया का अत्यन्त पार्थिव व्यक्ति था, संसार के ऐन्द्रियिक सुखभोगों को, जैसा उसने देखा या अनुभव किया था, शायद ही किसी दूसरे ने किया हो। इसीलिए इसके पहले तत्त्वज्ञान की ओर कभी उसकी रुझान नहीं हुई। किसी भीतर की तात्विक प्रेरणा से या चिन्तन में आनन्द अनुभव करने की वृत्ति से वह कभी भी चिन्तक नहीं हो सका था; जीवन की ऐन्द्रियिक इच्छाएं ही (न कि उनके अर्थ), उसकी महान हैं। इसी से कहता हूँ कि वह जान-बूझकर विचार-चिन्ता की ओर नहीं झुका था। अनायास ही एक आघात उसे लगा— आघात जो कि बाहर के अज्ञात अंधकार में से आया था। जीवन में सदा आत्मविश्वस्त और निश्चित कदम से आगे बढ़ते ही चले जाने वाले इस बलवान, ठोस, स्वस्थ मनुष्य को इस आघात ने लड़खड़ा दिया और उसके हाथ किसी सहारे की खोज में छटपटाने लगे।

उम्र के क़रीब पचासवें बरस में यह जो भीतर से एक धक्का टाल्स्टॉय को लगा, उसे न कोई नाम ही दिया जा सकता है और न उसका कोई प्रत्यक्ष कारण ही सामने था। इन्हीं दिनों, सुखी जीवन के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए आवश्यक माने जाने वाले सारे सरंजाम उसे बड़े ही आलीशान रूप में प्राप्त हुए थे। टाल्स्टॉय स्वस्थ व्यक्ति था, शारीरिक-दृष्टि से शायद अपने समकालीनों में वह सबसे अधिक स्वस्थ था; उसकी बौद्धिकता बड़ी ही ओजस्विनी थी और उसकी कला में एक अद्भुत ताज़गी थी। एक बड़ी ज़मीदारी का वह स्वामी था, इसी से उसे कोई आर्थिक चिन्ताएँ भी नहीं थीं। एक ओर जहाँ उसे एक बड़े ही आला अमीर और कुलीन खानदान की प्रतिष्ठा प्राप्त थी, वहाँ दूसरी ओर, उससे भी बढ़कर, रूसी भाषा के सबसे बड़े लेखक और समस्त भूमण्डल के एक प्रख्यात कथाकार होने का यश उसे प्राप्त था। उसका कौटुम्बिक जीवन सम्पूर्णतया सुखी था: उसके पत्नी थी और बच्चे थे, जीवन से असन्तुष्ट होने का कोई भी बाहरी कारण उसके सामने नहीं था।

तभी अंधकार के भीतर से एकाएक यह आघात आया। टाल्स्टॉय ने अनुभव किया कि उसके जीवन में कोई भयानक घटना घटी है– "जीवन की धारा रुक गयी, जीवन अशुभ हो गया" उसने अपने अंग-अंग को अनुभव किया, मानो वह अपने से ही पूछना चाहता था कि उसे क्या हो गया है– क्यों एकाएक यह उदासी छा गयी है, क्यों यह भय का भूत उस पर हावी हो गया है, क्यों कोई भी चीज़ उसके मन को नहीं रुचती– उसे प्रभावित नहीं करती। वह केवल यही अनुभव करता था कि काम से उसका मन उचट गया है, उसकी पत्नी उसके लिए अजनबी हो पड़ी है, अपने बच्चे में उसे कोई रस नहीं रह गया है। जीवन की एक घोर ग्लानि उसे धर दबाये हुए थी, और अपनी शिकारी बन्दूक को उसने इसीलिए ताले में बन्द कर दिया था कि कहीं निराशा के आवेग में वह अपनी ही ओर वह बन्दूक न घुमा दे। "उन दिनों उसने पहली बार यह साफ तौर पर महसूस किया कि प्रत्येक प्राणी के लिए और स्वयं उसके लिए भी, जीवन में सिवा पीड़न, मौत और निरन्तर क्षय के, और कुछ नहीं है; इसी लिए उसने निश्चय कर लिया था कि इस तरह वह ज़िन्दा नहीं रह सकता। या तो जीवन का कोई अर्थ उसे जानने को मिलना चाहिए और नहीं तो वह अपने को गोली मार लेगा।"

इस आन्तरिक संघर्ष को, जिसने टाल्स्टॉय को एक दृष्टा, चिन्तक और जीवन-तत्त्व का प्रवक्ता बनाया, कोई नाम देना निरर्थक होगा। सम्भवतया यह विकास के एक खास घुमाव की मनोदशा थी, जिसके पीछे शायद बुढ़ापे और मौत का भय था, एक मानसिक दुर्बलता थी, जिसने उसकी सारी चेतना को पंगु बना दिया था। पर एक बुद्धि-जीवी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यक्ति और उसमें भी विशेषरूप से एक कलाकार का यह स्वभाव होता है कि वह अपने भीतरी संघर्षों का अध्ययन करता है और उन पर विजय पाने की कोशिश करता है। शुरू में अज्ञात बेचैनी टाल्स्टॉय पर अधिकार जमाने लगी। वह यह जानना चाहता था कि उसे क्या हो गया है; जो जीवन उसे अब तक इतना सार्थक, इतना सम्पन्न, इतना वैभवपूर्ण और वैविध्य से भरा दिखायी पड़ता था, वही एकाएक अब क्यों इतना छिछला और सारहीन मालूम होने लगा था? अपनी उस भव्य कथा के एक पात्र आयविन-इलिच की तरह जब वह मौत के पंजों को अपने ऊपर अनुभव करता है, तो चौंक कर पहली बार वह अपने आप से पूछता है, "शायद जिस तरह जीना चाहिए था, उस तरह मैं नहीं जिया हूँ?" टाल्स्टॉय दिन-बदिन अपने ही जीवन की कसौटी पर अपने आप को परखने लगा और जीवन के अर्थ की खोज करने लगा। विचार-चिन्तन में कोई मौलिक रस होने के कारण या किसी बौद्धिक जिज्ञासा से प्रेरित होकर वह सत्य-शोधक या दार्शनिक नहीं बना था; वह तो दार्शनिक बना था, निराशा से अपनी आत्म-रक्षा के लिए। ठीक एक दार्शनिक की तरह ही; उसका चिन्तन तो खाईं के किनारे पर उदय होनेवाला तत्त्व-ज्ञान था; मृत्यु और शून्य के भय में से वह जीवन को खोज रहा था। उन दिनों की टाल्स्टॉय के हाथ की लिखी एक विचित्र दस्तावेज़ एक कागज़ के टुकड़े पर मिले हैं, जिस पर उसने छह 'अज्ञात प्रश्न' लिख छोड़े हैं, जिनके कि उत्तर वह देना चाहता था।

(१) मैं क्यों जी रहा हूँ?
(२) मेरे और अन्य सब लोगों के अस्तित्व का क्या कारण है?
(३) मेरे अस्तित्व और दूसरे सारे अस्तित्वों का क्या प्रयोजन है?
(४) अपने भीतर जो अच्छाई और बुराई का यह विभाजन मैं अनुभव करता हूँ, इसका क्या अर्थ है, और ऐसा क्यों होता है?
(५) मुझे कैसे जीना चाहिए?
(६) मृत्यु क्या है—उससे मैं अपने को कैसे बचा सकता हूँ?

टाल्स्टॉय के जीवन के अगले तीस बरसों में, साहित्य से भी बढ़कर जो उसके जीवन की सबसे बड़ी सार्थकता थी और जो प्रयोजन रहा आया था, वह है—ऊपर लिखे सवालों का जवाब देना कि वह स्वयं और यह सारी दुनिया सही तरीके से कैसे ज़िन्दा रहे?

जीवन के अर्थ की खोज का सबसे पहला कदम बड़े ही तार्किक रूप से सामने आता है। 'युद्ध और शान्ति' नामक उसके उपन्यास में, इतिहास के दर्शन के रूप में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो उसकी थोड़ी-सी नकारात्मक वृत्ति सामने आयी है, उसके बावजूद टाल्स्टॉय कभी भी श्रद्धालु नहीं रहा; भीतर और बाहर से उसने सदा एक शांत, स्वतंत्र, ऐश्वर्यपूर्ण और उद्योगशील जीवन बिताया था। एकाएक दर्शन के क्षेत्र में आ जाने पर वह अधिकारी दार्शनिकों की ओर झुका—यह जानने के लिए कि मानव-जीवन के प्रयोजन के बारे में दार्शनिकों की क्या राय है? हर प्रकार की दार्शनिक पुस्तकें उसने पढ़ना शुरू कर दिया। उसने शॉपेनहार और प्लेटो पढ़ा; कान्ट और पास्कल पढ़ा, उनसे यह जाननें के लिए कि जीवन के अर्थ की व्याख्या उन्होंने कैसे की है। पर न तो दार्शनिक और न समूचे विज्ञान ही उसके प्रश्न का उत्तर दे सके। टाल्स्टॉय को यह जानकर बड़ा खेद हुआ कि इन दानिशमन्दों ने उन्हीं प्रश्नोंका उत्तर अत्यन्त स्पष्ट और सुनिश्चित रूप से दिया है, जिनका प्रत्यक्ष जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं है; पर जहाँ भी एक निश्चित सुझाव और मार्ग-दर्शन का सवाल उनके सामने रक्खा गया है, वे उसे साफ टाल गये हैं; और जिस बात को वह सबसे अधिक महत्वपूर्ण समझता था, उसे समझाने की कोशिश किसी ने भी नहीं की है कि "पार्थिवदृष्टि से, कार्य-कारण की दृष्टि से तथा देश-काल की दृष्टि से मेरे जीवन का क्या अर्थ है?"

इसीलिए उसका अगला कदम यह हुआ कि वह समाधान पाने के लिए दार्शनिकों को छोड़ धर्मों की ओर मुड़ा। ज्ञान ने उसे निराश कर दिया था, इसी से वह धर्म-श्रद्धा की खोज में निकल पड़ा, और उसने प्रार्थना की "हे प्रभु, मुझे धर्म प्रदान करो और मुझे शक्ति दो कि औरों को भी धर्म-प्राप्ति की खोज में सहायता कर सकूँ।"

इस भटकी हुई मनोदशा में कोई सार्वभौम सिद्धान्त स्थापित करने का प्रयोजन टाल्स्टॉय का नहीं था; वह कोई आद्य-प्रवक्ता या आध्यात्मिक- क्रान्तिकारी भी नहीं था। वह तो 'सिर्फ अपने लिए' एक मार्ग और लक्ष्य खोज निकालना चाहता था; किंकर्त्तव्यविमूढ़ व्यक्ति लियों टाल्स्टॉय अपनी आत्मा की खोयी हुई शान्ति को फिर से लौटाना चाहता था। उसके अपने ही शब्दों में वह अपनी ही नास्तिकता से अपने को बचाना चाहता था। अभी तक किसी नये धर्म की घोषणा करने का सपना भी उसका नहीं था, और न वह प्राचीन, परम्परागत, कट्टर ईसाई-धर्म से ही अलग होना चाहता था। इसके ठीक विपरीत वह तो फिर से चर्च के नज़दीक खिंचता जा रहा था; जब वह दस बरस का था तभी उसने प्रार्थना करना, चर्च जाना तथा योग-साधना की तैयारी करना छोड़ दिया था, लेकिन अब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर से सम्पूर्ण ईश्वर-भक्ति का प्रयत्न वह करने लगा; चर्च की सारी शासन-आज्ञाएँ तथा नियमों का वह पालन करने लगा; वह उपवास करता, तीर्थयात्राओं पर तथा मठों में जाता, मूर्तियों के आगे घुटने टेककर मस्तक नमाता, धर्मगुरुओं और पादरियों से वादविवाद करता; और इन सबके भी ऊपर वह बाइबिल के प्रवचनों का स्वाध्याय भी करने लगा।

सत्य के बेचैन शोधकों के साथ जो सदा से होता आया है, वही आखिर टाल्स्टॉय के साथ भी हुआ। उसने पाया कि बाइबिल की धर्मदेशनाओं की अवज्ञा हो रही है; उसे यह भी अनुभव हुआ कि कट्टर-पंथी रूसी चर्च में क्राइस्ट की शिक्षाओं के नाम पर जो धर्मोपदेश दिया जाता है, वह क्राइस्ट की मूल और सच्ची शिक्षा नहीं है। यहीं आकर उसे अपना पहला कर्त्तव्य सुझायी पड़ा: धर्मदेशनाओं का अर्थ लोगों को समझाया जाय, और रहस्यवाद के रूप में नहीं, बल्कि एक नवीन जीवन-दर्शन के रूप में क्रिश्चियन धर्म की शिक्षा लोगों को दी जाये। सत्य का शोधक स्वयं आत्मनिवेदक बन गया, और आत्मनिवेदक मसीहा बन गया; और मसीहा को कट्टरपंथी होने के लिए अब बहुत दूर जाने की ज़रूरत नहीं थी। एक आदमी की व्यक्तिगत निराशा ने एक अधिकारिक सिद्धान्त का रूप ले लिया, समूचे बौद्धिक और नैतिक चिन्तन के सुधार का मार्ग उसमें से निकला और उसके परिणामस्वरूप एक नवीन समाज-शास्त्र का निर्माण हुआ। एक एकाकी व्यक्ति का भय से प्रेरित वह मूल प्रश्न—"मैं किसलिए जी रहा हूँ, और मुझे कैसे जीना चाहिए?" धीरे-धीरे समूची मानवता का एक शासक सिद्धान्त बन गया, कि "तुम्हें इस प्रकार जीना चाहिए।"

—अनु० ऐन्द्रिता

★

जीवन में सब प्रकार के भय, संकट और विनाश के प्रति सशस्त्र होकर चलने के लिए दो ही चीजें ज़रूरी हैं और ये दोनों ऐसी हैं जो सदा एक साथ रहती हैं— एक भगवती माता की कृपा और दूसरी तुम्हारी ओर से ऐसी अंतः स्थिति जो श्रद्धा, निष्ठा एवं समर्पण से गठित हो।

—श्री अरविन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मृत्युः विज्ञान और अध्यात्म की दृष्टि में

● डॉ. एलेक्सी केरल

क्या अमरता में आस्था उन नियमों के विरुद्ध है, जो स्वयं हमारे शरीर और आत्मा में अंकित है ? क्या वह जीवन को कायम रखने, उसे आगे बढ़ाने और आत्मा के उन्नयन को प्रोत्साहित करती है या उसमें बाधा देती है ? स्पष्ट ही मृत्यु के अनन्तर व्यक्तित्व के कायम रहने के तथ्य में आस्था हमारे जीवन-काल में हमारी चेतना के विकास को प्रेरणा ही दे सकती है। निश्चय ही अमरत्व में आस्था आध्यात्मिक विकास के लिए अनुकूल पड़ती है।

हम कहाँ जा रहे हैं ? मृत्यु की ओर। यदि हम नये वैज्ञानिक आविष्कारों की बदौलत दैहिक काल की दिशा बदलने और एक खास अवधि तक के लिए अपने शरीर को पुनरुज्जीवन देने तथा अपने जीवनों को दो तीन शताब्दियों तक जीवित रखने की हद तक भी पहुँच जाते हैं, तब भी हम मृत्यु पर विजय प्राप्त नहीं कर सकेंगे; क्योंकि हमारे शरीर की रचना ही मृत्यु को आवश्यक बना देती है। हमारी नन्हीं प्राणसत्ता गर्भ में अस्तित्त्व धारण करते ही वृद्ध होना आरम्भ कर देती है। वृद्धत्व की यह प्रक्रिया भ्रूण और नवजात शिशु में वयस्क लोगों से अधिक होती है और बूढ़े लोगों की बनिस्बत और भी अधिक वेगवती होती है। बढ़ते हुए वर्षों के साथ मृत्यु की ओर होनेवाली प्रगति धीमी पड़ जाती है, लेकिन वह कभी रुकती नहीं है और न अपनी दिशा ही बदलती है। भविष्य में विज्ञान चाहे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जितनी ही सफलता क्यों न प्राप्त करे, प्रत्येक मानव प्राणी की यह एक अनिवार्य नियति है कि देर-अबेर उसे इस दुनियाँ से तिरोहित हो जाना पड़ेगा।

मृत्यु का अभिप्राय क्या है? हम अच्छी तरह जानते हैं कि हमारे शरीर का अन्तिम रूप क्या होगा; थोड़ी-सी गैसें और मुट्ठी भर राख। लेकिन हमारा चैतन्य? देखने से तो यही जान पड़ता है कि हमारे दैहिक अंगों के साथ वह भी नष्ट हो जाता है। चूंकि हमारे जीवन-काल में वह हमारे रक्त-मांस से अभिन्न होकर रहता है, इसी से यह सोचना अत्यन्त तर्क सम्मत है कि हमारे रक्तमांस के विसर्जन के साथ उसका भी विसर्जन हो जाता है। जो भी हो, भावना ने तर्क के इस निर्णय को स्वीकार करने से सदा ही इन्कार किया है।

पश्चिम के लोग बड़ी उत्कटता से जीवन को चाहते हैं; केवल इस दुनिया के जीवन को ही नहीं—कब्र के पार के जीवन को भी। उनके लिए यह काफी नहीं है कि अपनी मृत्यु के बाद वे अपने कामों में जीवित रहें, अपने रोंपे हुए पेड़ों और अपने मकानों में जीवित रहें, अपने मस्तिष्क के आविष्कारों में जीवित रहें, अपने कामों के तात्कालिक या दूरगामी परिणामों में जीवित रहें। न उन्हें केवल इसी से सन्तोष है कि प्रजनन के द्वारा अपनी सन्तानों के भीतर अपनी हस्ती को बनाये रक्खें, जो उन्हें स्वयं भी अपने पूर्वजों से मिली है। सबसे ऊपर होकर जो हम चाहते हैं, वह यह है कि हम व्यक्ति-गत रूप से चिरकाल जीवित रहें। अपनी मृत्यु के बाद हम उन्हें देखना चाहते हैं जिन्हें हम प्यार करते हैं; हम शान्ति और न्याय के प्रदेश में प्रवेश करना चाहते हैं और भगवान के अटूट माधुर्य का आनन्द भोगना चाहते हैं।

जो प्रजाएँ एक दूसरे के बाद इस पृथ्वी पर जीवित रही हैं, उन्होंने लगभग सदा ही कम से कम मौत के बाद चैतन्य के जीवित रहने में विश्वास किया है। चर्च में तो एक अन्धविश्वास की हद तक आत्मा की अमरता और शरीर के पुनरुत्थान में श्रद्धा को अविचल कर दिया है। जो भी अधिकांश सभ्य प्रजाओं ने धार्मिक विश्वास का परित्याग कर दिया है, फिर भी उनमें से कई प्रजायें अब भी मृत्यु के रहस्य पर गहरायी से विचार-चिन्तन करती हैं। वे बड़ी व्यग्रता से अपने आप से पूछती हैं कि क्या आध्यात्मिक विकास ही जीवन का सच्चा उद्देश्य है? क्या पुरुषोत्तमों और सन्तों द्वारा एकत्रित किये हुए आध्यात्मिक कोश अनिवार्य रूप से एक दिन असत्ता के शून्य में विलीन हो जायेंगे? कम से कम फिलहाल विज्ञान इन प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं दे सकता। विज्ञान को अभी तक मन और मस्तिष्क के सम्बन्धों का ठीक-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ठीक पता नहीं है। न वह यही निश्चित रूप से बता सकता है कि क्या मस्तिष्क के नष्ट होने के साथ मन भी ज़रूरी तौर पर नष्ट हो जाता है। चैतन्य के स्वरूप के बारे में भी विज्ञान को अभी कोई जानकारी नहीं है। शायद यह अज्ञान सदा ही बना रहेगा, क्योंकि चैतन्य जीवित भौतिक-तत्त्व के साथ गुंथा हुआ होकर भी देश-काल के जगत से परे है और इसी से वह वैज्ञानिक निर्णयों की सीमा से परे है। शरीर-रहित होने पर भी आत्माएँ हमारे चारों ओर ओतप्रोत हैं, और हम उन्हें केवल इसीलिए नहीं जान पाते हैं कि उनकी उपस्थिति का निश्चय करने के कोई साधन हमारे पास नहीं हैं।

तब मृत व्यक्तियों के भूतों का क्या मतलब हो सकता है? असन्दिग्ध रूप से प्रामाणिक कई ऐसी घटनाएँ विद्यमान हैं, जिनमें मृत व्यक्ति अपने किसी सम्बन्धी या मित्र के सम्मुख उसकी मृत्यु के समय प्रकट हुआ पाया जाता है और उन्हें यह बताता है कि किन परिस्थितियों में उसकी मृत्यु हुई। स्वगत– लेखन और माध्यमों के द्वारा मृत व्यक्तियों से पारलौकिक सन्देश-वहन के भी कई उदाहरण मिलते हैं। साधारणत: ये सन्देश अशरीरी आत्माओं के जीवन की ऐसी अवस्थाओं से सम्बन्ध रखते हैं, जिनकी जाँच-पड़ताल नहीं की जा सकती। लेकिन कभी-कभी इन सन्देशों में ऐसे आश्चर्यजनक तथ्य भी प्रकट होते हैं, जो ऐसी वस्तुओं के बारे में होते हैं, जिनका पता केवल मृत व्यक्ति को ही होता है। सर ओलिवर लॉज सदा ही यह मानते रहे कि उनके पुत्र की मृत्यु के कई वर्षों बाद तक उसके साथ उनका सन्देशों का आदान-प्रदान होता रहा। परलोकवादियों का कहना है कि इस प्रकार मिलनेवाले सन्देश मृत्यु के उपरान्त आत्मा के कायम रहने का प्रमाण देते हैं। उनका विश्वास है कि, सम्पूर्ण चेतना नहीं तो कम से कम मूलभूत चैतन्य तत्त्व मृत्यु के बाद अवश्य कायम रहता है। यह तत्त्व माध्यम की आत्मा के साथ एकीभूत हो जाता है और एक ऐसी चेतना का निर्माण करता है, जो एकबारगी ही माध्यम और मृत व्यक्ति दोनों की होती है। उसका अस्तित्त्व अल्पकालिक जान पड़ता है। वह धीरे-धीरे विसर्जित होकर अन्तत: लुप्त हो जाती है।

उन तथ्यों के महत्त्व से इन्कार नहीं किया जा सकता, जिन पर ये अनुमान आधारित हैं। लेकिन उनकी व्याख्याएँ निश्चय ही सही नहीं हैं, क्योंकि परलोकवादी अदृश्य दर्शन की विद्या को मान्यता नहीं देते हैं। फिर भी हम जानते हैं कि अदृश्य-दर्शन के विशेषज्ञ भूत और भविष्य की घटनाओं का दर्शन करते हैं। उनके लिए कुछ भी गोपनीय नहीं है। मृत व्यक्ति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आत्मा के साथ जोड़े जानेवाले तथ्यों का प्रकटीकरण केवल मात्र माध्यम के अदृश्य-दर्शन का परिणाम भी हो सकता है। मरणोत्तर जीवन और अदृश्य-दर्शन की घटनाओं में भेद करना सम्भव नहीं है। इसी से फ़िलहाल मृत्यु के बाद आत्माओं के जीवित रहने का कोई वैज्ञानिक प्रमाण हमें नहीं मिलता। जो भी हो कोई भी निश्चित रूप से ऐसी स्थापना नहीं कर सकता कि ऐसे विज्ञान का होना सर्वथा असम्भव है। अतिभौतिक सत्यों का प्रणालीगत अध्ययन निस्सन्देह हमें आत्मा के गुणों को जानने में ठीक उसी तरह मदद करेगा, जैसे रोगों के लक्षणों ने स्नायु-प्रणाली के शरीर-विज्ञान की एक बेहतर समझ हमें प्रदान की है।

धर्म द्वारा दी गयी मृत्यु की व्याख्या विज्ञान से सर्वथा भिन्न है। धर्म के अनुसार मृत्यु जीवन के अन्त की नहीं,बल्कि आरम्भ की सूचक है। धार्मिक मान्यता यह है कि मृत्यु के समय आत्मा शरीर के साथ विसर्जित न होकर अपना ऊर्ध्वगमन ज़ारी रखती है और अपनी व्यक्तिमत्ता को खोये बिना ही भगवान में विलीन हो जाती है।

पिछले दो हज़ार बरसों में करोड़ों स्त्री-पुरुष बड़ी शान्तिपूर्वक इस निश्चय के साथ मरे हैं कि अपने मरणोत्तर जीवन को वे अपने प्रियजनों, सन्तमहात्माओं, देवदूतों और स्वयं भगवान के साथ बिता सकेंगे।

चर्च ने मनुष्य को उसके शरीर और आत्मा की अमरता का ही आश्वासन नहीं दिया है, बल्कि यदि वह योग्य हो तो भगवान और अनन्त सुख की प्राप्ति के बारे में भी उसे आश्वस्त किया है। इस प्रकार मृत्यु के रहस्य का सामना होने पर मानव-जाति जिस व्यथा का अनुभव करती है, उसको धर्म-श्रद्धा द्वारा दिया गया उत्तर विज्ञान द्वारा दिये गये उत्तर से कहीं बहुत अधिक संतोषकारक है। जब भावना अन्तःप्रज्ञा और प्रेम का रूप धारण करती है, तो वह उन सत्यों को प्रकाशित करती है, जो बुद्धि से छुपे रहते हैं। 'तूने यदि पहले ही मुझे नहीं पा लिया है, तो तू मुझे नहीं खोजेगा।'– यह एक रहस्य-मर्मी का कथन है। धर्म मनुष्य को वह उत्तर प्राप्त कराता है, जिसकी चाह उसके हृदय में होती है।

हमें विज्ञान का उत्तर स्वीकारना चाहिए या धर्म का? हमें तर्क द्वारा परिचालित होना चाहिए या भावना द्वारा? कुछ लोग भावना का अनुसरण करते हैं, कुछ तर्क का। समझदारी इस बात में है कि मनुष्य तर्क और भावना, विज्ञान और धर्म, सत्य और सौन्दर्य दोनों ही के समन्वय द्वारा अपने जीवन का निर्माण करें। मृत्यु के अर्थ के बारे में सोचने से इन्कार करना हमारे लिए असंभव है। हमारे सामने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो मान्यताएँ उपस्थित होती हैं या तो मरते समय हम सम्पूर्ण रूप से नष्ट हो जाते हैं या हमारा कोई अंश मृत्यु के बाद भी कायम रहता है। इन दोनों के बीच से हमें अपना चुनाव करना होगा। इन दोनों व्यवहार-सुलभ मान्यताओं के बीच से हमें उसे चुनना चाहिए, जो अधिक शक्ति-दायक हो, और जो तार्किक रूप से अधिक निश्चित न होते हुए भी बड़े परिणाम देने में समर्थ हो। इसीलिए हमें अमरत्व की मान्यता को स्वीकृति देनी चाहिए। और वह भी केवल इस शर्त के आधार पर कि इस मान्यता की स्वीकृति हमें जीवन के परम नियमों का अनुसरण करने में बाधा नहीं देती है। हमें यह कभी नहीं भूल जाना चाहिए कि प्रकृति का सर्वोपरि नियम-विधान और हमारे अस्तित्त्व का उद्देश्य यह है कि हम अपने शारीरिक और मानसिक प्रवृत्तियों को उनकी सम्पूर्णता में जियें।

क्या अमरता में आस्था उन नियमों के विरुद्ध है, जो स्वयं हमारे शरीर और आत्मा में अंकित हैं? क्या वह जीवन को कायम रखने, उसे आगे बढ़ाने और आत्मा के उन्नयन को प्रोत्साहित करती है या उसमें बाधा देती है? स्पष्ट ही मृत्यु के अनन्तर व्यक्तित्व के कायम रहने के तथ्य में आस्था हमारे जीवनकाल में हमारी चेतना के विकास को प्रेरणा ही दे सकती है। निश्चय ही अमरत्व में आस्था आध्यात्मिक विकास के लिए अनुकूल पड़ती है। जो लोग एकबारगी ही दूसरों की सेवा और भगवान की सेवा में अपने को लगा देते हैं, उनमें अक्सर ही एक बहुत उच्चकोटि की आध्यात्मिकता के दर्शन होते हैं। यह भी सच है कि प्रायः एक ग़लतफ़हमी से भरा वैराग्यवाद आत्मा की प्रगति को शरीर की प्रगति से अलग कर देता है। वस्तुतः चेतना, एक सामानान्तर शारीरिक विकास के बिना, उत्कृष्ट विकास की उपलब्धि नहीं कर सकती। भगवान के मिलन के लिए आत्मा को तैयार करने में शरीर का होना अनिवार्य है। इसके अलावा जीवन के नियमों का पालन अपने आप में भी एक पवित्र कर्त्तव्य हो जाता है। अध्यात्मवादी के लिए जीवन के नियम भगवान की इच्छा का ही प्रकटीकरण हैं।

जो भी यह सच है कि मृत्यु के क्षण में होनेवाले हमारी सत्ता के सम्पूर्ण विसर्जन को तर्क जितना अधिक संगत मानता है, उतना मृत्यु के उपरान्त आत्मा के कायम रहने को नहीं। फिर भी अमरत्व की मान्यता को वह प्रतिकूल के बजाय एक अधिक अनुकूल सत्य के रूप में ही स्वीकार कर सकता है। मृत्यु के उपरान्त चेतना के कायम रहने के तथ्य को समझाना जितना कठिन है, उतना ही कठिन है

[शेष पृष्ठ ६९ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रवीन्द्रनाथ पर उपनिषद् का प्रभाव

श्रीमती लावण्यप्रभा राय

रवीन्द्रनाथ की कविसत्ता, उनका जीवन दार्शनिक भावनाओं के द्वारा अत्यधिक प्रभावित है। शैशव से ही उनका ध्यान उपनिषद् के मन्त्रों के प्रति आकर्षित हुआ था। इसमें प्रमुख सहायक थे, उनके पिता महर्षि देवेन्द्रनाथ। वास्तव में उपनिषद् की वाणी तथा मन्त्रों के साथ रवीन्द्रनाथ का सम्बन्ध इतना घनिष्ठ है कि एक को दूसरे से अलग करना असंभव है। उपनिषद् के आदर्श से–प्रेरणा से प्रेरित होकर कवि की शिल्पी सत्ता, उनकी सौन्दर्य प्रियता, सत्यं–शिवं-सुन्दरं के प्रति उनकी अपरूप निष्ठा ने उनकी कवि प्रतिभा को अधिक से अधिक महिमा-मंडित किया है। उपनिषद् की भावधारा के सम्यक अनुशीलन से ही कवि के भीतर एक अखण्ड समग्रता की रूपरेखा, ज्ञान-भक्ति-कर्म-प्रेम के साथ मन के भीतर विश्व का एकात्मताबोध साथ ही मानवमन की बहुमुखी विचित्रता का भास विकसित हो उठा है। उपनिषद् की वाणी ही कवि की जीवनसाधना का मूल स्रोत तथा अवलम्बन है।

रवीन्द्र की कविसत्ता, उनका जीवन तथा कर्मधारा उपनिषद् के जिन मन्त्रों से प्रभावित हुई है, उनमें प्रमुख है गायत्री मन्त्र। उपनयन के साथ बालक कवि ने जिस "भूर्भुवः स्वः" आदि प्रेरणादायक मन्त्र का उच्चारण किया था, उसी मन्त्र की अपूर्व शक्ति ने कवि को आजीवन सत्य सुन्दर के मार्ग पर दृढ़ रखा। बिना ठीक-ठीक समझकर ही बालक गायत्रीमन्त्र का जप करते थे। साथ ही अन्तःकरण के भीतर एक अनिर्वाण शिखा के स्पर्श का अनुभव भी करते थे। गायत्रीमन्त्र के जप के साथ–साथ कभी–कभी बालक रवीन्द्रनाथ की आँखों से आँसुओं की धार बहती थी। इसका कारण बालक स्वयं नहीं जानते था, परन्तु एक विचित्र, दिव्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुभूति से उनकी आँखें बारंबार सजल हो जाती थीं। गायत्री मंत्र का गंभीर तात्पर्य अधिक आयु में ही कवि को हृदयंगम हुआ था। वह समझ गये थे कि अध्यात्म जगत के साथ बाह्य जगत का, जड़ के साथ चेतन का समन्वय करना ही है, इस महान मन्त्र का मूल उद्देश्य। वह यह भी समझ गये थे कि इस महामन्त्र के एक छोर पर है "भूर्भुवः स्व:", दूसरे छोर पर है मनुष्य की 'धी'– उसकी चेतना। और इन दोनों के बीच में हैं वह वरणीय देवता' जिन्होंने "भूर्भुवः स्वः" की भी सृष्टि की है, साथ ही हमारी धी शक्ति को भी प्रेरणा देते हैं। सब में वह ओतप्रोत हैं–तभी वह हैं प्रणव-ओम्। विश्व चराचर के साथ मानव चित्त का समन्वय कर जो विराजमान हैं, जिनकी सम्यक् उपलब्धि के लिए इस मन्त्र का ध्यान करना अत्यावश्यक है, वही है मन्त्रों में श्रेष्ठ गायत्रीमन्त्र।

"ईशावास्यमिदं सर्वं" है उपनिषद् का दूसरा मन्त्र, जिसके द्वारा रवीन्द्रनाथ का जीवन व भावधारा विशेष प्रभावित हुई है। इस मन्त्र के सम्यक् ज्ञान व उपलब्धि में ही परमेश्वर की शाश्वत सत्ता, जो अणु-परमाणु में भी ओतप्रोत है, उसका आभास प्राप्त होता है। जगत के तुच्छ से तुच्छ वस्तु में भी ईश्वरीय सत्ता विद्यमान है, यह ज्ञान मानवचित्त में उद्भासित होता है। अपने जीवन में, कर्मधारा की उच्छ्वल

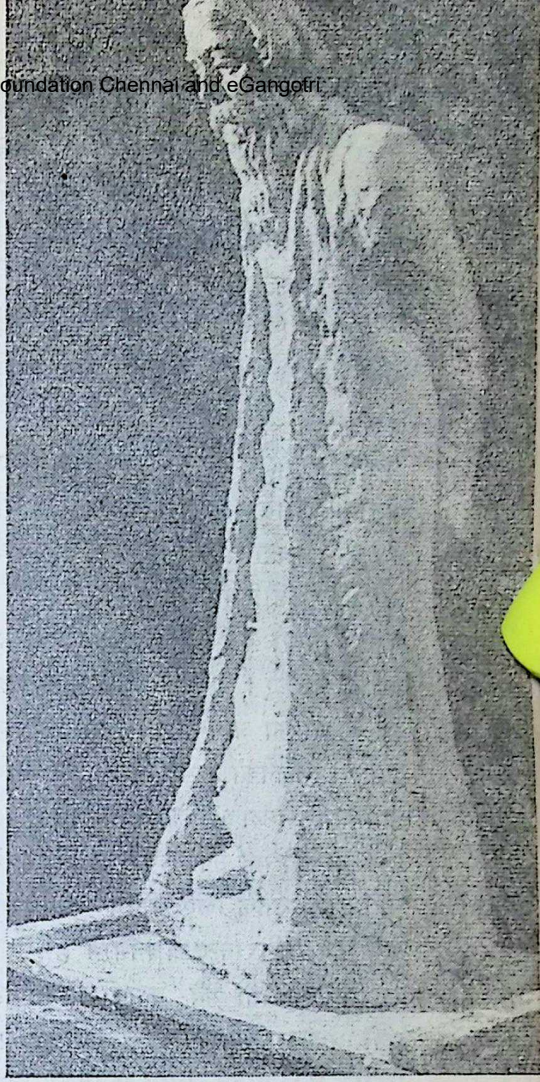

श्री सुधीर खास्तगीर की शिल्पाकृति

लहरों के बीच भी प्रति मुहूर्त रवीन्द्रनाथ इस मन्त्र का ध्यान करते थे: अपने जीवन तथा कार्यों को इसके द्वारा नियन्त्रित करने का प्रयास करते थे। वह अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्तःकरण की गहराई में अनुभव करते थे कि ईश्वर के द्वारा ही सम्पूर्ण जगत विधृत व चालित है : उनकी इच्छा के कम्पन से ही सब कुछ स्पन्दित है– आनन्द की परमाद्युति से द्योतमान है।

रवीन्द्रनाथ एक ओर थे प्रतिभाशाली कवि– साथ ही वह थे एक निरलस कर्मी। कर्मयोग के द्वारा ही वह जीवन को परिपूर्णता की ओर अग्रसर करते थे। उपनिषद् के जिस मन्त्र से उनको कर्म के प्रति प्रेरणा मिलती थी वह है– "कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेत् शतं समाः।" कर्म के भीतर ही सौ वर्ष जीवित रहने की इच्छा करनी चाहिए। कर्म के भीतर ही प्रच्छन्न है, आत्मा का आनन्द। इस आनन्द की उपलब्धि जिनको प्राप्त हुई है, वह मनुष्य कभी दुर्बल–म्लान–विषण्ण नहीं हो सकता है। जिनको यह उपलब्धि, यह ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ, उनके लिए जीवन दुःखमय है– कर्म केवल निरानन्द बंधनमात्र है। श्रीमद् भगवद्गीता की कर्मयोगशिक्षा भी इसी प्रकार विजयी वीरों का ही पथ प्रदर्शक है। जीवन संग्राम में विजयी होने के लिए यही है एकमात्र पथ– नान्य पन्था विद्यते।

इसी कर्मशीलता के साथ-साथ कवि-चित्त में गतिशीलता के प्रति भी एक दुर्वार आकर्षण है। गति के साथ कर्म का एक पारस्परिक अच्छेद्य योग है। जहाँ कर्म है, वहाँ गति अवश्य होगी– नैष्कर्म्य की गतिहीनता ही है जड़ता व प्राणहीनता। तभी रवीन्द्रनाथ की जीवनसाधना का मूलमन्त्र था अग्रगति का मन्त्र– उपनिषद् ने जिसे "चरैवेति चरैवेति" कहा है। परब्रह्म से लेकर उनकी सृष्टि यह जीव-जगत–सभी परिवर्तनशील व सदा विवर्तनशील है– स्थितिशील नहीं। तभी कवि के जीवन प्रवाह के गतिवेग में कितना वैचित्र्य है, इन्द्रधनुषी सात रंगों का कैसा विचित्र समावेश है। गति के भीतर कितनी कथा, कितने गान, कितना प्राण, कितना सुख, कितनी साध– आशा-आकांक्षाएँ प्रच्छन्न हैं, जो निर्झर के कलतान के साथ, उच्छ्वल खलखल हँसी हँसकर, गा-गाकर, ताल के छंद के साथ ताली बजा-बजाकर चपल गति से एक निर्झर के ही समान पत्थरों से टकरा-टकरा कर आगे बढ़ती हैं। इस गति में है एक परमानन्द का स्पर्श, जिसके द्वारा मानव चेतना एक समग्रता-बोध की ओर जागृत होती है। रवीन्द्रनाथ की गतिशील जीवनधारा हंस व बलाकामिथुन की लीला चंचल गति से प्रभावित हुई है। तभी उन्होंने कहा–

शुधु धाओ, शुधु धाओ, शुधु बेगे धाओ
उद्याम उधाओ,
फिरे नाहि चाओ,
जा किछु तोमार सब दुइ हाते फेले फेले जाओ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुहाये लओ ना किछु कर ना संचय,
नाइ शोक, नाइ भय
पथेर आनन्द वेगे अबाधे पाथेय कर क्षय।"

गति के दुर्वार वेग से रवीन्द्रनाथ के जीवन में एक असाधारण वैशिष्ट्य का प्रभाव लक्षित होता है। उनके गति-धर्म में अंध कुसंस्कार का कोई चिह्न नहीं है। तुच्छ अचार-विचार के अचलायतन ने कहीं पर भी उनके मार्ग को अवरुद्ध नहीं किया है। जहाँ कहीं भी उनका मार्ग संस्कारों के प्राणहीन पत्थरों से टकराया है, वहीं कवि वज्रगंभीर दृढ़ता के साथ सब कुछ तोड़फोड़ कर आगे बढ़े। उपनिषद् के महाप्राण ऐतरेय महीदास के समान कवि ने भी अपने जीवन में 'चरैवेति' महामन्त्र का ही अनुशीलन किया है तभी रवीन्द्र रचना में कहीं गति या प्राण-प्राचुर्य का अभाव लक्षित नहीं हुआ।

रवीन्द्र काव्य में जो प्राणप्राचुर्य लक्षित होता है, उसके मूल में हैं कवि की 'प्राण-स्तुति' का अनुशीलन। अतीत के किस आलोकोज्ज्वल युग में ऋषिकंठ से उदात्त प्राणस्तुति ध्वनित हुई थी—

"प्राणो मृत्युः प्राणस्तक्मा। नमस्ते अस्तु आयते। नमो अस्तु परायते। प्राणे ह भूतं भव्यं च। यदिदं किंच प्राण, एजति निःसृतम्। प्राणो ह सूर्यश्चन्द्रमाः..."

सृष्टि के भीतर जो निरवकाश, निरवच्छिन्न प्राणप्रवाह प्रवहमान है, उसी का भास हमें इस मन्त्र से आभास होता है। चारों ओर प्राण का ही स्पन्दन, प्राण का ही स्फुरण, प्राण का ही मोहक उल्लास है। कविचित्त उच्छ्वसित होकर गा उठता है—

"आकाश भरा सूर्य तारा, विश्वभरा प्राण,
ताहारि माझखाने आमि पेयेछि मोर स्थान—
विस्मये ताइ जागे आमार गान!
कान पेतेछि, चोख मेलेछि,
धरार बुके प्राण ढेलेछि,
जानार माझे अजानारे करेछि सन्धान,
विस्मये ताइ जागे आमार गान!"

उपनिषद् के ध्यान गंभीर, उदात्त मन्त्रों में नारीकंठ से ध्वनित केवल एक ही आकुल प्रार्थना सुनायी देती है— **"येनाहं नामृता स्यां किमहं तेन कुर्याम्।'** वृहदारण्यक के इस व्याकुल मन्त्र से रवीन्द्रनाथ की कविसत्ता एक अनास्वादित, करुण-मधुर अनुभूति से पूर्ण हो गयी थी। इस प्रार्थनामन्त्र का अश्रुपूर्ण माधुर्य ने कवि-मानस की भीत को ही हिला दिया था। रवीन्द्रनाथ का 'पगला' जिस प्रकार दिन रात, पल-पल पारसपत्थर की खोज में अपनी सुधबुध खो देता है, उसी प्रकार कवि भी जीवन भर अमृत के स्पर्श के लिए, भूमा की प्राप्ति लिए व्यग्र व्याकुल थे। उनके कविचित्त का एक ही धर्म है— और वह है—

[शेष पृष्ठ ५१ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बन्द कमरा

• रवीन्द्रनाथ ठाकुर

विशाल घर। अन्दर मात्र एक कमरा बन्द है, उसके ताले में जंग लग गया है, उसकी चाबी कहीं खोजे भी नहीं मिलती। साँझ-बेला में इस घर में दिया नहीं संजोया जाता, दिन की बेला में इस घर में कोई रहता नहीं है। ऐसा कितने दिनों से है, कौन जाने ?

इस कमरे को खोलते हुए भय लगता है। अंधकार में इस कमरे के सामने से गुजरते हुए शरीर के रोंगटे खड़े हो जाते हैं। जहाँ-जहाँ भी मनुष्य मनुष्य के साथ हँसकर बात नहीं करता, वहीं हमें भय लगने लगता है। जहाँ मनुष्य एक दूसरे के साथ हिलते-मिलते हों, उस पवित्र स्थान में भय प्रवेश ही नहीं कर सकता।

दोनो ही द्वार बन्द करके कमरा बीचों-बीच खड़ा रह गया है। द्वार के ऊपर कान देकर सुनने से कमरे के भीतर से मानो 'हू हू' की ध्वनि सुनायी पड़ती है।

यह कमरा विधवा है। कोई एक जन था वह चला गया है, तबसे इस कमरे का द्वार बन्द है। तब से यहाँ कोई आता नहीं है, यहाँ से कोई जाता भी नहीं है। तब से यहाँ मानो मृत्यु की भी मृत्यु हो गयी है।

इस जगत में अविश्रान्त जीवन का प्रवाह मृत्यु को 'हू हू' करता हुआ बहा जाता है। मृत कहीं भी टिक कर नहीं रह सकता है। इसी डर से समाधि-भवन कृपण की तरह मृत को चोर के हाथ से बचा लेने के लिए उसे पत्थर की दीवारों के बीच छुपाकर रखता है, भय उस पर रात-दिन पहरा देता रहता है। लोग मृत्यु को ही चोर कहकर उसकी निन्दा करते हैं, लेकिन जीवन भी देखते-देखते मृत्यु को चुराकर अपनें अति विस्तृत परिवार में बाँध देता है, इस बात का कोई उल्लेख तक नहीं करता।

पृथिवी मृत्यु को भी गोद में लेती है, जीवन को भी गोद में लेती है; पृथिवी की गोद में ये दोनों भाई–बहन की तरह खेलते रहते हैं। इस जीवन-मृत्यु के प्रवाह को देखते हुए, इसकी तरंगों पर छाया और प्रकाश की किरणों को निहारते हुए हमारे मन में कोई भय नहीं रहता; लेकिन बद्ध मृत्यु और रुद्ध छाया को देखते हुए हमें भय लगता है। जहाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

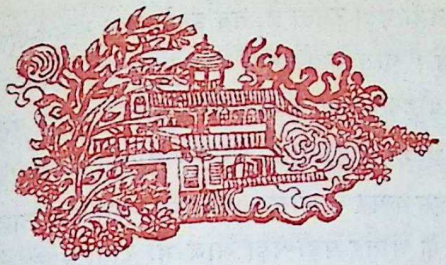

मृत्यु गतिशील है, जहाँ नृत्यु जीवन का हाथ पकड़कर एक ताल से नृत्य कर रही है, वहाँ मृत्यु ही जीवित होती है; वहाँ मृत्यु भयानक नहीं लगती। लेकिन अमुक एक चिह्न म आबद्ध गतिहीन मृत्यु ही असली मृत्यु है, वही भयानक लगती है। इसी से समाधि भूमि ही भय का निवास-स्थान है।

पृथिवी पर जो कुछ आता है, वह चला जाता है। इस प्रवाह के कारण ही जगत का स्वास्थ्य कायम रहता है। एक कण का भी आवागमन यदि बन्द हो जाये तो जगत का सामंजस्य भंग हो जाये। जीवन जैसा आता है, वैसा ही चला जाता है; मृत्यु भी जैसी आती है, वैसी ही चली जाती है। उसे पकड़ कर रखने का प्रयत्न क्यों करते हो? हृदय को पत्थर जैसा बनाकर उस पत्थर के अन्दर उसे बन्द क्यों रखते हो? यही अस्वास्थ्य का कारण हो जाता है। उसे छोड़ दो, उसे चला जाने दो, जीवन-मृत्यु के प्रवाह को अवरुद्ध न करो। हृदय के दोनों द्वार निरन्तर खुले रखो। प्रवेश के द्वार में से सब प्रवेश करें, प्रस्थान के द्वार में से सब प्रस्थान करें।

इस कमरे ने अपने दोनों द्वार बन्द कर रखे हैं। जिस दिन द्वार पहली बार बन्द हुए थे, उस दिन का पुराना अंधकार इस कमरे के अन्दर अकेला जागता बैठा है। इस कमरे के बाहर दिन के बाद दिन, रात के बाद रात आती है। कमरे के अन्दर मात्र वह दिन ही अकेला बैठा रह गया है। पुरातन और कहीं नहीं है, केवल इस कमरे के अन्दर है।

इस कमरे के अन्दर-बाहर का सम्पूर्ण विच्छेद हो गया है। बाहर की खबर अन्दर नहीं पहुँचती और अन्दर का निश्वास बाहर नहीं आ सकता। जगत का प्रवाह इस कमरे के दोनों ओर होकर बह जाता है। मानो इस कमरे का विश्व के साथ का नाड़ी-बन्ध विच्छिन्न हो गया है।

द्वार बन्द करके कमरा रास्ते की ओर देख रहा है। जब पूर्णिमा के चन्द्र का प्रकाश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसके द्वार ठोंक कर वहाँ पड़ा रहता है, तब इसके द्वार खुलने-खुलने को होते हैं कि नहीं, सो कौन कह सकता है। पास के कमरे में जब उत्सव की आनन्द ध्वनि जाग उठती है, तो क्या इसका अंधकार दौड़कर निकल जाने की इच्छा न करता होगा! यह कमरा किस प्रकार चाहता है, किस प्रकार सुनता है, सो कुछ भी हम समझ नहीं पाते हैं।

बालक एक दिन इस कमरे के भीतर खेलते थे; उनके कोलाहल से भरा वह दिन इस कमरे की मध्यरात्रि के भीतर पड़ा-पड़ा आज भी रोता रहता है। इस कमरे के अन्दर स्नेह-प्रेम की जो सारी लीला हो गयी है, उस स्नेह-प्रेम को एकाएक द्वार उढ़का कर बन्द कर दिया गया है; इस निस्तब्ध कमरे के बाहर खड़ा रहकर मैं इसका क्रन्दन सुनता हूँ। स्नेह-प्रेम बन्द करके रखने के लिए नहीं होते। मनुष्य से विच्छिन्न करके ..... उसे जबर्दस्ती बाँधकर रखा जाये, तो वह संसार-क्षेत्र के लिए रोता रहता है।

तो इस कमरे को बन्द करके मत रखो, इसके द्वार खोल दो। सूर्य के प्रकाश को देखकर, इसके मनुष्य का प्रत्युत्तर पाकर, चौकन्ना होकर भय पलायन कर जायेगा। सुख और दुख, शोक और उत्सव, जन्म और मृत्यु पवित्र समीरण की तरह इसकी खिड़की में से सदा आवागमन करते रहेंगे। समस्त जगत के साथ फिर से इसका योग स्थापित हो जायेगा।

अनु. अ. ग

साहसी और ईमानदार बनो, फिर किसी भी मार्ग पर पूर्ण लगन से चलो तो तुम निश्चय ही पूर्णत्व को पा लोगे। एक बार जंजीर की किसी भी कड़ी को पकड़ लो और क्रमशः पूरी जंजीर ही तुम्हारी पकड़ में आ जायगी। पेड़ की जड़ में पानी दो (अर्थात् ईश्वर को प्राप्त करो) तो सारा पेड़ हरा-भरा हो जायगा। परमात्मा को पा लेने पर हम सबको पा लेंगे। संसार के लोग केवल एक पक्षीय होते हैं। जितने पहलुओं को तुम विकसित कर लोगे उतना ही तुम संसार को विभिन्न जीवों के द्वारा देख [illegible] द्वारा। अपनी प्रगति का निश्चय करो और उसी [illegible]

[illegible] विवेकानन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[रवीन्द्रनाथ पर...पृष्ठ ४७ का शेष]

'शरीरेर स्पर्श चेये फिरियाछि, तार बेशि किछु

हृदयनिसंचय करा, अधरार गोछि पिछु पिछु।'

ऋषि याज्ञवल्क्य की महीयसी पत्नी मैत्रेयी की अश्रुसजल इस प्रार्थना के समान दूसरी कोई विनती क्या कहीं मिलती है? मैत्रेयी की यह प्रार्थना है मानवचित्त की शाश्वत प्रार्थना, मनुष्यमात्र का एकमात्र आकुल निवेदन, अमृतत्व प्राप्ति की एक महान आकूति!

किसी विद्वान ने ठीक ही कहा है कि कवि रवीन्द्रनाथ के अधिकतर काव्य ही हैं मन्त्रसाहित्य। आधुनिक युग के कवि ऋषि की सृष्टि है यह नवमन्त्रसंहिता, जिसमें उपनिषद् की भावधारा, उपनिषद् की मन्त्रावली घनिष्ठ रूप से संश्लिष्ट है। तभी रवीन्द्रकाव्य में वर्षा के घनघोर घटाच्छन्न आकाश में दामिनीचमक व मेघगर्जन के भीतर हमें प्रजापति की गुरुगंभीर वाणी "द, द, द,—तदेतत् एवं शिक्षेत् दमं दानं दयमिति— दमन करो, दान करो, दया करो" सुनायी देती है। साथ ही कवि की रचना में अमृतत्व के लिए मैत्रेयी की आकुल आकति की भी प्रतिध्वनि हो उठती है: कवि कहते हैं—

"दीप चाहे तव शिखा, मौन वीणा धेयाय तोमार
अंगुलि-परश,
ताराय ताराय खोंजे तृष्णाय आतुर अन्धकार
संग सुधारस।
निद्राहीन वेदनाय भाबि, कबे आसिबे पराने चरम आहवान
मने जानि, ए जीवने सांग हय नाइ पूर्ण ताने मोर शेष गान।"

महर्षिओं के साथ रवीन्द्र ने भी इस चरम सत्य की उपलब्धि की थी कि 'नित्योऽनित्यानां' अनित्य के भीतर जो नित्य हैं, 'चेतनश्चेतनानां' अचेतन के भीतर जो चेतन हैं, 'सोऽहं' वही मैं हूँ और 'अहं ब्रह्मास्मि' मैं ही ब्रह्म हूँ। विचित्र गम्भीर यह अनुभूति ही है सब उपनिषदीय चेतना का मूल भाष्य, जिसका प्रमुख तत्व यह है कि "तुम्हारे भीतर जैसे मैं हूँ, मेरे भीतर भी वैसे ही तुम हो।" यही है मनुष्य का सर्वश्रेष्ठ गर्व कि मेरे बिना हे त्रिभुवनेश्वर, तुम्हारा प्रेम, तुम्हारी सृष्टि, तुम्हारी सत्ता ही मिथ्या है। उपनिषद् का जो सार तत्व है, प्रकाश के आवरण को उन्मुक्त करने की जो प्रार्थना है, वही रवीन्द्रनाथ का जीवनधर्म है। वह जीवन का, आनन्द का, प्रकाश का जयगान है—

"भेंगेछे दुआर एसेछ ज्योतिर्मय
तोमारि हउक जय।
तिमिर-विदार उदार अभ्युदय
तोमारि हउक जय।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे मजलिसें

● रवीन्द्रनाथ ठाकुर

तब की बातें जितनी ही सोचता हूँ, उतना ही मुझे ऐसा लगता है कि उस पुराने ज़माने में 'मजलिस' नाम की जो एक चीज़ थी, वह अब नहीं रही। पुराने ज़माने में जो एक तरह की निविड़ सामाजिकता थी, हम लोग बाल्यकाल में मानो उसकी शेष अस्वच्छता को देख सके थे। परस्पर मिलना-जुलना खूब घनिष्ट था, लिहाजा 'मजलिस' उस समय की एक आवश्यक चीज़ थी। उन लोगों का तब ज़्यादा आदर होता था, जो मज़लिसी होते थे। अब लोग सिर्फ काम के लिए आते हैं, मिलने आते हैं, मजलिस जमाने के लिए नहीं आते। आदमी के पास न तो समय है और न घनिष्टता का वह भाव ही है। उस ज़माने में घर पर कितनों का आना-जाना देखा करता था। हँसी और गपशप से वरांडा और बैठक मुखरित रहती थी। अपने चारों तरफ ऐसे विभिन्न व्यक्तित्व का समावेश कर सकना और हास्य कौतुक गपशप जमा सकना—यह एक प्रकार की विशेष शक्ति है और वह शक्ति अब न जाने कहाँ गायब हो गयी! आदमी अब भी हैं, पर वे वरांडे और बैठकखाना अब सदा सूने—सूने लगते हैं। तब का सारा असबाब आयोजन और क्रिया-कर्म सब कुछ पाँच जनों के लिए था, इसलिए उसमें जो ठाट-बाट था, वह उद्धत नहीं था। आज के बड़े आदमियों के घर की सजावट पहले से बहुत बढ़ी-चढ़ी होती है, किन्तु वह निर्मम है, वह बग़ैर परहेज के उदार और समदृष्टि से आह्वान करना नहीं जानती। खुला बदन, मैली चादर और सहास्य चेहरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

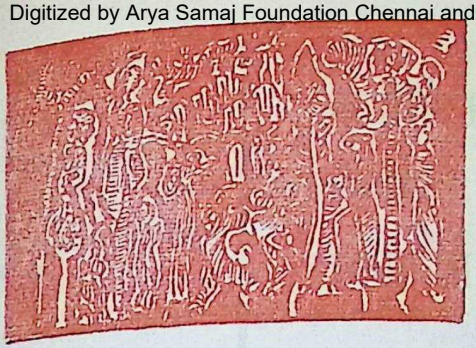

बिना हुकुम प्रवेश करके वहाँ आसन नहीं जमा सकते। हम लोग आजकल जिनकी नक़ल करके मकान बनाते और सजाते हैं, अपनी पद्धति के अनुकूल उनके भी समाज है और उनकी सामाजिकता भी बहुव्याप्त है। पर हमारे यहाँ मुश्किल यह देखने में आती है कि हमारी सामाजिक पद्धति गढ़ने का कोई उपाय नहीं है। नतीजा यह है कि, प्रत्येक घर निरानन्द हो गया है। आजकल काम के लिए, देशहित के लिए अनेकों को लेकर तो हम सभा कर सकते हैं, किंतु काम के लिए नहीं, बल्कि एकत्रितों के लिए ही एकत्रितों का जम कर बैठना, महज इसलिए कि आदमी अच्छे लगते हैं। उनके इकट्ठे होने के लिए नाना उपलक्ष्यों की सृष्टि करना—यह बात अब बिलकुल ही उठ गयी हैं। इतनी बड़ी सामाजिक कृपणता जैसी भद्दी बात संसार में दूसरी नहीं हो सकती। यही कारण है कि उस ज़माने में जिन लोगों ने खुले हृदय की सहास्य ध्वनि से रोज़मर्रा के जीवनभार हलका कर रक्खा था, आज वे किसी और देश के आदमी मालूम होते हैं।

अनु. अनवर आगेवान

ईश्वरेच्छा

किसी व्यक्ति ने पारसी संत आजर कैवान को प्रणाम कर पूछा, "हजरत दुनिया में तमाम मज़हब और फिर्क़े हैं। सभी अपने को खुदा का सही रास्ता कहते हैं। आखिर हमें किस पर यकीन करें।"

संत हंस पड़े, "भाई, यकीन तो सिर्फ़ इस पर करो कि खुदा ने अब तक अपनी मर्ज़ी से जो चाहा किया और आगे भी उसकी जो मर्ज़ी होगी, करेगा।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तुंग मेधा के स्वामी आचार्य शंकर

● भगिनी निवेदिता

इस आश्चर्यजनक बालक ने—क्योंकि बत्तीस वर्ष की अवस्था में तो वे इस संसार से विदा हो गये थे— अठारहवीं सदी के अन्त में जन्म लिया और उस अल्प अवस्था में ही एक महान कार्य को पूरा कर लिया, जब अधिकांश मनुष्य भविष्य के सपने देखते हैं। पूर्वीय संस्कृति में भाष्य का पाया जाना प्रायः स्वाभाविक है। साहित्य के इस अंग द्वारा भविष्य का गठबंधन अतीत से भलीभांति हो जाता है, और यद्यपि दोनों को जोड़नेवाला तत्त्व एक विदेशी के लिए इतना स्पष्ट न हो, फिर भी पूर्वीय मस्तिष्क के लिए वह सुग्राह्य होता है।

किसी सूत्र विशेष पर नया भाष्य लिख कर प्रतिभाशाली पुरुष किसी प्रश्न विशेष के साथ समग्र तत्कालीन विचार के सम्बध को पुनः स्थापित करने की क्षमता रखता था। इसलिए कोई आश्चर्य नहीं कि शंकराचार्य के जीवन की सर्वोत्तम रचना वेदांत सूत्र पर उनका भाष्य है।

भारत की समग्र राष्ट्रीय प्रतिभा शंकराचार्य में चेतन हो उठी। अपने युग की चमक-दमक और विलासिता के बावजूद, पौराणिक युग की सम्पन्न और अलंकार-युक्त रुचि के बावजूद, उनकी आत्मा ने वैदिक ऋचाओं के प्राचीन संगीत और लय की रहस्यमयी ध्वनि सुनी, और आत्मा को अतिचेतना के स्तर पर ले जाने की श्रद्धा की विलक्षण शक्ति उनके लिए हिंदूधर्म के प्रत्येक अंग का रहस्य बन गयी। वेद उनके लिए प्रेरणा और प्रेम के स्रोत बन गये। स्वयं उनकी कविताओं में वेदों का प्राचीन सौन्दर्य और शक्ति झलकती है, और उनकी पुस्तकों को उपनिषदों के सूक्ष्मतम और ज्ञानगर्भित वाक्यों की माला ही कहा जा सकता है, जिसे उन्होंने बड़ी दक्षता और सौन्दर्य से गूंथा।

अपने लघु जीवन-काल में शंकराचार्य ने दक्षिण के अपने जन्म स्थान से हिमालय पर्वत की विस्तृत यात्राएँ कीं और जहाँ कहीं भी वे गये, वहाँ की प्रत्येक वस्तु उनके विचारकेन्द्र से जुड़ गयी। उन्होंने सभी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अकार की पूजाविधियाँ स्वीकार कीं, यहाँ तक कि प्रारम्भ में वे जिसके विरुद्ध थे उन्हें भी माना, परन्तु सदा इसी एक कारण से कि 'एकोऽम् द्वितीयो नास्ति' की महान भावना केवल वैदिक ही नहीं पौराणिक लक्ष्य भी था। अपने बारह सुविख्यात, युगप्रवर्तक भाष्यों में विशेषतः अपनी सर्वश्रेष्ठ रचना वेदांत सूत्र के भाष्य में वे इसी सिद्धान्त को अभिव्यक्त करते हैं। इसी को अद्वैत दर्शन कहा जाता है और वह हिंदू युग के शेष ज्ञान में भारत की वास्तविक एकता का आधार रहा है।

पश्चिमी लोग शंकराचार्य जैसे व्यक्तित्व की कल्पना भी बड़ी मुश्किल से कर पायेंगे। कुछ ही वर्षों में कम-से-कम दस महान सम्प्रदायों का नियोजन करना, जिनमें से चार तो अब भी प्रतिष्ठित हैं; संस्कृत का इतना ज्ञान उपार्जित करना कि जिससे एक विशिष्ट दर्शन का निर्माण हो सका और भारत की प्रबुद्ध कल्पना पर इतना प्रभाव पड़ा कि जो आज बारह सौ वर्षों के बाद भी जीवित और वैसा ही सुदृढ़ है; ऐसे काव्य की रचना करना, जिसकी भव्यता विदेशी और अशिक्षित लोगो को भी आकर्षित करे; और साथ ही साथ अपने शिष्यों के साथ संतों की परम तृप्ति सादगी और वास्तविक करुणा के साथ जीवन व्यतीत करना— यह सब एक ऐसी महानता है, जिसकी वन्दना ही हम कर सकते हैं, उसे समझना बड़ा कठिन है।

शंकराचार्य का कार्य ब्रह्मवाद के साथ जनव्यवहार का सम्बंध पुनः स्थापित करना, पौराणिक कल्पनाओं का मेल उपनिषदों के ज्ञान से बैठाना था। उन्होंने माया, कर्म, पुनर्जन्म इत्यादि अनेक प्रचलित शब्दों की व्याख्या की और हिंदू धर्म की शब्दावलि जो आज है, उसे प्रस्तुत किया। परन्तु यह भी याद रखना आवश्यक है कि यदि जातिगत स्वभाव और रुचि से विलग उनकी अभिव्यक्ति होती, तो उन्हें वह अवसर नहीं मिलता, जो उन्हें मिला। एक महान पुरुष की मान्यता उनके अपने इतिहास में उतनी ही आवश्यक है, जितनी कि उनकी शक्ति और चरित्र। अपने राष्ट्र द्वारा उनका सम्पूर्ण आत्मीयकरण इसी का प्रमाण है कि राष्ट्रीय विचार और महत्वाकांक्षा से उनका सम्पूर्ण स्वरैक्य था।

★

बादशाह अपनी स्थिति के गुलाम हैं; वे अपने दिल के कहे पर चलने की हिम्मत नहीं कर सकते।

—शिलर

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वितीय भाग

[२४]

रुक्मिणी का विद्रोह

राजमहल की छत पर राजाओं में मंत्रणा हो रही थी और छत के पास ही एक छोटी सी कोठरी में बैठ कर दो युवतियाँ, छत पर खुलते चोर दरवाज़े पर कान लगाये इस मंत्रणा को बड़े ध्यान से सुन रही थीं। इनमें से एक थी रुक्मी की पत्नी सुव्रता। पति द्वारा वर्णित गोमांतक की पराक्रमकथा में उसे विश्वास न था। बड़ी-बड़ी आशाएँ लेकर ग्वालों के पीछे जानेवाले इन महाराजाओं के खाली हाथ वापस आने में क्या रहस्य था यह जानने के लिए वह उत्कंठित थी। दूसरी युवती थी सुव्रता की नदद, रुक्मिणी। वैसे तो ननद भौजाई में अधिक पटती नहीं थी, पर यह रहस्य जानने में दोनों को समान रुचि थी . कृष्ण जब से सह्याद्रि के लिए रवाना हुए थे, तब से वह बेचैन थी और जरासंध, रुक्मी तथा अन्य राजाओं के उनका पीछा करने पर तो वह अत्यन्त चिंतातुर हो उठी थी।

रुक्मिणी रात-दिन इसी आशंका से पीड़ित रहती कि उसके स्वप्नों के राज-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुमार कृष्ण को कहीं कुछ हो न जाय, कि रुक्मी उनका वध न कर डाले। उसने कई मनौतियाँ मानी थीं कि रुक्मी और उसके साथियों की योजना निष्फल हो। जब रुक्मी ने गोमांतक में अपने पराक्रम की कथा कही, तब रुक्मिणी को यह जान कर संतोष हुआ कि कृष्ण जीवित हैं। उनका भाई इतना औदार्य बतायेगा यह बात उसके मानने में नहीं आती थी। उसे लगा कि ऐसी कुछ घटना घटी है, जिसे वे सब राजा छुपाना चाहते हैं। सुव्रता, के साथ संधि कर वह यह भेद लेना चाहती थी।

जरासंध और भीष्मक की बाचचीत सुनकर दोनों युवतियों के तन-बदन में आग लग गयी। सुव्रता इसलिए क्रुद्ध थी कि रुक्मी उसके ऊपर एक सौत लाना चाहता था, और रुक्मिणी को यह दुख था कि शिशुपाल के साथ उसका विवाह निश्चित हो रहा है। रुक्मिणी ने सुव्रता ने इस अवसर पर, मेलजोल बढ़ाना ही उचित समझा। उसने सुव्रता से हँस कर कहा, 'क्यों भाभी, अब तो जरासंध की पोत्री तुम्हारी सौत बन कर आ रही है। तुम मेरे साथ रोज़ झगड़ती थीं न? बड़ी भाग की हो तुम! वह मेरे साथ झगड़ा तो नहीं करेगी!'

'मुझे मत छेड़ो!' सुव्रता ने क्रोध में आकर कहा। उसकी आँखों में आँसू छलक आये थे, मैं अभागिन जनमते ही क्यों न मर गयी!'

'भाभी, अब तुम युवा नहीं रही, और मेरे भाई को युवती भाभी चाहिए,' रुक्मिणी ने कहा।

'चुप रहो जी! तुम्हें या तुम्हारे भाई को मैं कब अच्छी लगती हूँ!' रुक्मिणी ने कहा।

'मैं तो भाभी, तुमसे कितना प्यार करती हूँ! तुम ही बेकार मुझ पर गुस्सा होती हो!'

'नहीं! तुम ही मुझे बार-बार छेड़ा करती हो!'

'तो मैं क्या करूँ! मेरे विरुद्ध कोई भी बात हो तो तुम मेरे भाई का ही साथ देती हो न!' रुक्मिणी के स्वर में आत्मीयता थी।

'नहीं बहन! मैं तो तुम्हारे भाई से कितनी ही बार कहती हूँ कि अपनी बहन के साथ इतनी सख्ती मत बरता करो! पर, तुम तो जानती ही हो उनका स्वभाव!' सुव्रता ने कुछ कटुता से कहा।

'जानती हूँ, भाभी! जानती हूँ! तुम न होतीं तो रुक्मी मुझे और भी तंग करता। खैर, कोई बात नहीं। तुम और मैं बराबर ही हैं।'

'मेरे तो दुख का पार नहीं!' सुव्रता ने अवरुद्ध कंठ से कहा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'मैं देखती हूँ, मेरा भाई मगध की छोकरी को किस तरह यहाँ लाकर तुम्हारे ऊपर बिठाता है ! मगध की वह उजड्ड लड़की मेरी भाभी नहीं बन सकती ! रुक्मी तुम्हारे जैसी अच्छी भाभी के लायक ही नहीं !' रुक्मिणी ने ममत्व से कहा।

'अपने भाई को तुम चक्रवर्ती की पौत्री से विवाह करने से नहीं रोक सकती। उनकी महत्वाकांक्षाओं का छोर नहीं !' सुव्रता ने कहा।

'हताश न हो भाभी ! कोई न कोई उपाय हम ज़रूर ढूंढ़ लेंगी,' रुक्मिणी ने सांत्वना देने के स्वर में कहा। उसके मन में तो योजना तैयार थी, पर उसे प्रस्तुत करने का अवसर वह ढूँढ़ रही थी।

'कोई उपाय नहीं ! तुम्हारे भाई चक्रवर्ती के जमाई बनने का अवसर कभी नहीं खोयेंगे,' सुव्रता ने कटुता से कहा।

'मैं देखती हूँ, कैसे बनता है वह चक्रवर्ती का जमाई ! पहले शिशुपाल का व्याह मुझसे हो, तभी तो वह मगध की राजकुमारी को ला पायेगा ! और यदि मेरा व्याह शिशुपाल से हो ही नहीं, तो फिर तुम्हारे सौत भी नहीं आयेगी,' रुक्मिणी ने कहा।

'तुम्हें चेदि की महारानी बनना पसन्द नहीं ?' सुव्रता ने आश्चर्य से पूछा।

'भाभी, तुम्हारे सुख के लिए क्या इतना त्याग भी मैं नहीं कर सकती ?' रुक्मिणी ने भाभी का आलिंगन करते हुए कहा 'चलो, हम किसी योजना का आविष्कार कर डालें !'

फिर भी रुक्मिणी के मन में एक विचार रह-रह कर टीस पैदा कर रहा था। कृष्ण इस लड़ाई में मारे नहीं गये इसका उसे आनन्द था, परन्तु रुक्मी तथा उसके साथियों द्वारा उन्हें जीवनदान मिला यह सोच कर वह दुखी हो रही थी। तो कृष्ण भी दूसरों के समान ही निकले ! उसके मुख से दीर्घ निश्वास निकल गयी।

दूसरे दिन सदा की भांति जब वह कौशिक दादा को प्रणाम करने गयी, तब उसने उन्हें एक अपरिचित नवागंतुक से गुप्त मंत्रणा करते देखा। उसे आश्चर्य हुआ। कौशिक ने मुस्करा कर रुक्मिणी को पास बुलाया। उस अपरिचित युवक ने उसे प्रणाम किया।

'रुक्मिणी, तू इस युवक को जानती है' दादा ने कहा।

रुक्मिणी ने अस्वीकृति में सिर हिलाया।

'ये आचार्य श्वेतकेतु हैं—गुरु संदीपनि के शिष्य और अवंती के राजकुमार अनुविंद के मित्र,' कौशिक ने बताया।

'हूँ !' रुक्मिणी ने बिना ध्यान दिये ही कहा।

'ये उद्धव और कृष्ण वसुदेव के भी मित्र हैं,' कौशिक ने कहा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'हैं!' रुक्मिणी अब एकाग्र हो उस युवक को देख रही थी।

'मैं करवीरपुर से आये हैं—कृष्ण ने मुझे भेजा है, "कौशिक बोले।

'कृष्ण सकुशल हैं न?' रुक्मिणी से पूछे बिना नहीं रहा गया।

वृद्ध कौशिक हँस पड़े और बोले, 'विदर्भ की कुँवारी राजकन्या को इस बूढ़ा ग्वाले में इतनी रुचि दिखाना उचित नहीं!'

'दादाजी, मुझे चिढ़ाइये मत!' रुक्मिणी ने कहा, 'मैं कृष्ण के बारे में सब कुछ सुनना चाहती हूँ!'

गोमांतक में कृष्ण और बलराम ने जो पराक्रम दिखाया था, उसकी कथा श्वेतकेतु ने तब सविस्तार कही और यह भी बताया कि कृष्ण और दामघोष ने किस प्रकार जरासंध के प्राण बचाये। शृंगलव के वध और आचार्यों की मुक्ति की कथा भी उसने कही और करवीरपुर की घटनाओं की तथा स्वयं वहाँ किस प्रकार आया उसकी भी चर्चा की।

यह अपूर्व शौर्य और कीर्तिवंत विजय की कथा थी। रुक्मिणी आँखें बन्द कर बड़े ध्यान से इसे सुन रही थी। उसका हृदय विजय के स्वरों से गूंज उठा था। उसके सपनों का राजकुमार दूसरों की भांति सामान्य पुरुष न था; वह पुरुषोत्तम था, प्रभु था! कृष्ण ने शैव्या के क्रोध को किस प्रकार शांत किया। यह जान कर रुक्मिणी की आँखों में आँसू छलक आये।

'कथा या काव्य में भी ऐसा पराक्रम तो कभी सुना नहीं!' कौशिक ने कहा,' दुर्दम और महान जरासंध इन दो ग्वालों से जी बचा कर भागा यही न? हा..हा.. हा.. हा.....! आर्यावर्त का यह महान दिवस है। जरासंध को अपना साम्राज्य स्थापित करने में तीस वर्ष लगे और एक ही दिन में वह नष्ट हो गया। रुक्मिणी, तेरा जन्म भी नहीं हुआ था, तब जरासंध ने हमारी सेनाओं को नष्ट किया था, हमें अपमानित किया था। इसी से मैंने राजगद्दी तेरे बाप को सौंप दी। आज मेरे वैर का बदला पूरा हुआ। उद्धव की तरह मुझे भी अब लगता है कि कृष्ण भगवान हैं!'

'उन्होंने शैव्या के मन को जिस प्रकार जीता यह तो कभी भी भुलाया नहीं जा सकता। वे भगवान हैं, श्रृंगलव वासुदेव जैसे बनावटी नहीं, सच्चे भगवान!' श्वेतकेतु ने कहा।

'यदि वे राजा या राजकुमार होते तो!' रुक्मिणी के मुख से निकल पड़ा।

'तो उन्हें स्वयंवर में आमंत्रण मिल जाता, यही न?' कौशिक ने हँस कर कहा,' लड़की! उस ग्वाले का स्वप्न छोड़ दे! तू राजकुमारी है, तुझे किसी राजकुमार से ही विवाह करना होगा।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रुक्मिणी का चेहरा निस्तेज हो गया। निश्वास दबा कर और बात का विषय बदलते हुए उसने कहा, 'आचार्य, वासुदेव और रुक्मी के बीच क्या हुआ, यह मुझे बतायें। मैं रुक्मी के मुंह पर ही उसे दोहराऊँगी!'

रुक्मिणी मानों स्वप्न देख रही थी। उसने देखा कि घनश्याम वर्ण का वह तरुण रुक्मी को पराजित कर रहा है, जरासंध के प्राण बचा रहा है, शृंगलव वासुदेव का वध करता है, आचार्यों को मुक्ति दिलाता है, शैव्या को बहन के रूप में स्वीकार करता है। उसे शैव्या से ईर्ष्या हुई। कृष्ण के साथ बात करने का भी स्वप्न उसे तो नहीं मिला था। लोग जिसकी चर्चा करते थकते नहीं, उस कृष्ण की मधुर मुस्कान उसने कहाँ जी भर पायी है? फिर भी दिन-रात कृष्ण का ही विचार उसके चित्त में समाया रहता है, पल भर के लिए भी वह उन्हें भूल नहीं पाती!

परन्तु वह तो मात्र एक ग्वाला है, अधिक से अधिक यादव शाखा के नायक का पुत्र! और वह स्वयं एक राजकुमारी है। इस घनश्याम वर्ण के युवक के साथ विवाह करने का स्वप्न भी वह कैसे देख सकती है? उसके लिए तो चेदि का राजकुमार शिशुपाल ही है। स्वयंवर की योजना होगी, जरासंध एक नाटक की रचना कर देगा, शिशुपाल कोई पराक्रम कर दिखायेगा, स्वयंवर में कोई आयेगा नहीं और शिशुपाल वरश्रेष्ठ सिद्ध होगा। इस स्वयंवर में तो मात्र राजा ही आमंत्रित होंगे न! बाजार में बिकते पशु की तरह उसे पकड़ कर कोई ले जायेगा। 'राज-कुमारी होने के बदले मैं ग्वालन बन कर जन्म लेती तो!' उसने सोचा।

जरासंध और अन्य राजागण अपने-अपने राज्य में जाने के लिए विदा हुए। श्वेतकेतु वहीं रुक गया। कौशिक ने घोषणा की कि विदर्भ के युवा सेनापति को आचार्य श्वेतकेतु शस्त्रविद्या सिखायेंगे। भीष्मक और रुक्मी को भी यह विचार पसन्द आया। श्वेतकेतु ने कुंडिनपुर में आश्रम स्थापित करने का निर्णय किया।

रुक्मिणी ने आचार्य श्वेतकेतु का सुव्रता से परिचय कराया। श्वेतकेतु ने फिर से कृष्ण की पराक्रम कथा कही और बताया कि यदि कृष्ण बीच में न पड़ते तो रुक्मी और जरासंध दोनों के ही प्राण नहीं बचते। सुव्रता का रोष नियंत्रित न रह सका। एक दिन जब रुक्मी गोमांतक के युद्ध में अपने पराक्रम की डींगें हांकने लगा तो सुव्रता ने साफ कह दिया: 'यह झूठ है। तुमको तो कृष्ण ने जीवनदान दिया। उस वीरपुरुष के प्रति इतने अकृतज्ञ न बनो और जरासंध की पौत्री के साथ विवाह करने का विचार छोड़ दो।' घर में कलह छिड़ गया—' पति-पत्नी दोनों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक-दूसरे से बोले भी नहीं।

प्रवासी, यात्रीगण, भटकते हुए साधु, मल्लयागादि के निमित्त स्थान-स्थान पर जाते ब्राह्मण, गोमांतक की लड़ाई में भाग लेने वाले और वहाँ से लौटे हुए सैनिक—सभी कृष्ण के पराक्रम की कथा गाँव-गाँव नगर-नगर में फैला रहे थे। कच्चे वासुदेव का उदय हुआ है। इस वासुदेव ने जंगली गरुड़ों को संस्कार सम्पन्न किया, दलित यादवों का उद्धार किया, गोमांतक की रक्षा करने समुद्र को आज्ञा दी, अपने प्रभाव से जरासंध को भगाया, शृंगलव 'वासुदेव' का वध किया और आचार्यों का 'नर्क' में से उद्धार किया।

आग की तरह यह खबर फैलती गयी और कर्णोपकर्ण प्रसारित बातों में अनेक चमत्कार भी जोड़ दिये गये। कुंडिनपुर में भी ये बातें पहुँचीं। प्रजाजनों ने यह खबर बड़े चाव से सुनी-सुनायी कि राजकुमार रुक्मी किस अपमानित दशा में पहुँच गया था और उसे जीवनदान किस प्रकार मिला। कुंडिनपुर के राजमहल में रुक्मिणी हर्ष से नाच उठी। अब उसका मन इस भगवान में ही रम गया था। श्वेतकेतु से वह बारंबार कृष्ण की बातें सुनती। कृष्ण को उनके साथी प्राण-प्रण से चाहते हैं, यह सुन कर उसे परम संतोष का अनुभव होता।

रुक्मिणी अपने राजवंश पर शाप बरसाती। यदि उसका जन्म राजकुमारी के रूप में न होता तो कितना अच्छा होता! तो वह त्रिवक्रा की तरह उनके चरणों में गिर पड़ती और उनकी देवी बन जाती। 'मैं ग्वालिन ही क्यों न हुई?' वह कई बार सोचती। राजमहल की अटारी में बैठ कर वह कई बार बाहर चरती गायों को देखती रहती, मानो उनसे पूछ रही हो कि गोपाल की वधू कैसे बना जाय!

रुक्मी शिशुपाल से मिलने चेदि गया। रुक्मिणी समझ गयी कि वह उसी की शादी तय करने गया है। जब वह लौटा तो दरबारी विशेष रूप से पसन्द किये गये राजाओं को यह संदेश देने निकल पड़े कि राजा भीष्मक की पुत्री का स्वयंवर मृगशीर्ष के साथ जिस पूर्णिमा को पूर्ण-चन्द्र की प्रतीति होती है, उस दिन आयोजित किया गया है।

रुक्मिणी के हृदय में कुछ आत्मस्फुरणा हुई। जब उसका भाई कुंडिनपुर लौटा तो उसने पिता तथा विश्वसनीय अधिकारियों के समक्ष उसकी भर्त्सना की। उसे कायर कहा और जरासंध की कूट नीति का प्यादा बता कर बोली, 'क्या तू अपनी बहन का चेदि के राजकुमार के साथ सौदा कर चक्रवर्ती की पौत्री प्राप्त करना चाहता है?' उसने आंसू बहाये, बाल बिखेर लिये और प्रतिहारियों पर अकारण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुस्सा किया। यदि रुक्मी ने उसे शिशुपाल के साथ विवाह करने पर मजबूर किया तो वह आत्महत्या करेगी। यह धमकी भी उसने दी।

श्वेतकेतु के साथ उसने महत्वपूर्ण मंत्रणा की और फिर राजमहल के एकांत कक्ष में जाकर बैठ गयी और किसी से भी मिलने की मनाही कर दी। पर, वहाँ भी एक बात का विस्मरण वह न कर सकी। सतत यही विचार उसके मन में उठता रहता, 'मैं एक साथ ग्वालन और देवी कैसे बन सकती हूँ?'

थोड़े दिन बाद आचार्य श्वेतकेतु मथुरा गये। करवीरपुर की राजकुमारी से उनके विवाह की संधि निश्चित होनी थी। यह अर्धसत्य था। श्वेतकेतु के मन से शैव्या अभी दूर नहीं हुई थी।

अल्पकाल में ही राजपरिवार की बातें सब जगह फैल गयीं। नगर भर में चर्चा होने लगी कि रुक्मी को जरासंध की पौत्री से विवाह करना है, इसलिए वह अपनी बहन को जबर्दस्ती शिशुपाल के हाथ में सौंप रहा है। रुक्मिणी को यह सम्बंध स्वीकार नहीं, इसलिए उसे महल में बन्द कर दिया गया है। जरासंध के प्रति वैसे ही विदर्भ की जनता में रोष था, रुक्मी के बर्ताव से वह और भी भड़क उठा। रुक्मी और उसके साथियों ने इन बातों का विरोध यह कह कर किया कि ये सब अफवाहें हैं, इनमें तथ्य नहीं। परन्तु लोगों के मनों में जो बात बैठ गयी थी, उसे हटाया नहीं जा सकता था।

—क्रमशः

अनु० ओंकारनाथ शर्मा

★

पुस्तकें ईश्वर को नहीं सिखा सकतीं, लेकिन वे अज्ञान को नष्ट कर सकती हैं। इनकी क्रिया निषेधात्मक होती है। पुस्तकों को पकड़कर और साथ ही स्वतंत्रता के लिए रास्ता खोल देना आचार्य शंकर की बहुत बड़ी प्राप्ति है। लेकिन फिर भी यह एक प्रकार से बाल की खाल निकालना ही है। पहले व्यक्ति को मूल-तत्त्व दो, फिर उसे क्रमशः उच्चतम की ओर ले जाओ। बहुत से धर्मों का यही प्रयास रहा है। उन्होंने यह स्पष्ट किया है कि विभिन्न अवस्थाएँ विकास के किसी स्तर के लिए अनुकूल हैं। —स्वामी विवेकानन्द

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[वृद्धावस्था : समस्या और समाधान पृष्ठ ३२ का शेष]

हैं। मेरे मुंह से तत्काल ये शब्द निकले– "दादा, (मैं पिता जी को दादा कहा करता था) आपको लगभग साठ वर्षों से तम्बाकू खाने की आदत है। अस्सी वर्ष की इस उमर में अब तम्बाकू छोड़ेंगे तो आपकी तबीयत बिगड़ेगी। कृपा करके आप यह विचार छोड़ दें। थूकदानी साफ करने में मुझे पितृ-सेवा का आनन्द प्राप्त होता है, अतः तम्बाकू छोड़ने का विचार न कीजिए।" किन्तु, दादा तुरन्त बोल उठे– "क्या तम्बाकू खाने की आदत गन्दी नहीं है? बार-बार थूकना पड़ता है, ऐसी आदत क्या अच्छी कही जा सकती है?" मैं क्या जवाब देता? तम्बाकू खाने का वर्षों पुराना व्यसन त्याग देने से उनकी तबीयत बिगड़ सकती है, ऐसी आशंका मुझे थी। इस प्रकार तम्बाकू छोड़नेवाले का माथा दुखता है, कब्ज़ियत रहती है, पेट में गड़बड़ी रहती है, यह मैं जानता था। मुझे मालूम था कि लम्बे काल तक पाला हुआ व्यसन छोड़ देनेवाले की तबीयत पर असर होता है। और तम्बाकू जैसे व्यसन को छोड़ने के हाल का मुझे पता था। लेकिन, तम्बाकू की टेव गन्दी नहीं, अच्छी है, ऐसा भी मैं किस प्रकार कह सकता था? इसलिए मैंने कहा– "दादा, आप मेरी बात दूसरे ढंग से क्यों नहीं लेते? पितृ-सेवा जैसी जो भी वस्तु है, मेरे पुत्र-पालन में खोटी बात क्या है? और मुझे कोई तकलीफ नहीं होती, सिर्फ इतना ही नहीं, सेवा का सन्तोष भी है। इतनी उम्र पक जाने पर अगर आप तम्बाकू छोड़ दें तो मुझे ठीक नहीं लगता और उल्टे आपकी तबीयत बिगड़ेगी तो हमारे कष्ट ही बढ़ेंगे, इसलिए आप ऐसा विचार न करें।' किन्तु, तम्बाकू की टेव गन्दी है, इस बात का उत्तर मैं नहीं दे सकता था और अपने मन में उन्होंने जो निश्चय कर लिया था उसे भला मैं जानूं भी कैसे? मैंने यह बात ही अटका दी, जिससे इस विषय में अधिक चर्चा न हो। उनके भोजन कर लेने पर, हमेशा की तरह मैंने तम्बाकू तैयार करके दी। दादा बोल उठे– "मैंने इतना सब कहा, तू ने न मानी, नहीं मानी! तम्बाकू की टेव गन्दी है, इसलिए छोड़ने की बात मैंने कही।"

फिर उन्होंने अपने अन्तिम दिन तक, कभी तम्बाकू नहीं खायी। प्रबल निश्चय के सामने कोई मुश्किल ठहर नहीं सकी। न तो शिर-पीड़ा की शिकायत, न कभी तबीयत बिगड़ी हुई दिखी। वे जो साठ वर्षों के इस व्यसन को एक क्षण के निर्णय से छोड़ सके, उसके पीछे उनका निश्चय-बल और सन्तान-प्रेम ही था। इसलिए जब कभी कोई यह कहता है कि वर्षों पुराना व्यसन किसी भी रीति से नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

टूट सकता, तब मेरे सामने मेरे पिता का उदाहरण ताज़ा हो उठता है, और मुझे यह मानने की प्रेरणा मिलती है कि पुराना व्यसन भी टूट सकता है।

तदुपरान्त नाथ जी ने कहा– "मैं तो श्रद्धापूर्वक पितृ-सेवा का महत्त्व स्वीकार करता हूँ। बड़ों को सम्मान देने और उनकी सेवा करने से, वृद्ध पिता का जीवन आनन्दमय बनता है, इतना ही नहीं, घर का, कुटुम्ब का समग्र वातावरण प्रेम-मय एवं प्रसन्नतापूर्ण बनता है। अपने बालकों पर संस्कार पड़ते हैं और उन्हें शिक्षा मिलती है। बालकों में बड़ों के प्रति पूज्यभाव उत्पन्न होता है और कौटु-म्बिक शिक्षा प्राप्त होती है। इस प्रकार वृद्ध बालकों में, वात्सल्य से प्रेम और सेवा का सुन्दर बीजारोपण करते हैं।

अगर हम अपने बड़े-बूढ़ों के प्रति पूज्यभाव प्रदर्शित नहीं करते तो हमारे वृद्ध होने पर हमारे बाल-बच्चे हमारे प्रति ऐसा ही बर्ताव करेंगे। बच्चे साक्षात् अनुभव से जो कुछ भी सीख जाते हैं, वह विचार या उपदेश देने से नहीं सीख सकते।" ऐसा कहकर उन्होंने एक और सुन्दर संस्मरण सुनाया–

"हजामत करने के लिए, हमारे यहाँ एक हज्जाम नियमित रूप से आता था और कुटुम्बीजनों की हजामत बनाता था। हम सभी भाइयों के लिए वह दिन और समय का बराबर पालन करता था, किन्तु, पिताजी के लिए वह अक्सर देर कर दिया करता था, क्योंकि वह समझता था कि बूढ़े आदमी को कहीं बाहर जाने की ज़रूरत तो है नहीं, कम से कम हमारे समय की उपयोगिता ज्यादा है! एक बार पिता जी हज्जाम का इन्तज़ार ज़रा बेसब्री से कर रहे थे। एक घण्टा देर हो गयी, फिर भी वह नहीं आया। उसके घर पर उसकी खोज की गयी तो पता चला कि वह दूसरे किसी के यहाँ चला गया है। पिताजी ने निश्श्वास छोड़ते हुए कहा– "वह अभी नहीं आया।"

पिताजी की विकलता मैंने देखी, मैंने कहा– "मैं हजामत बना दूंगा?" पिता जी तो पल भर के लिए स्तब्ध रह गये। मैंने तो तेज़ी से पूछ लिया था।

पिता जी ने कहा– "तू मेरी हजामत बनायेगा?" मैंने कहा– "इसमें क्या? मेरे पास तो साधन है। मैं तो बहुत बार अपनी हजामत अपने हाथों से बनाता हूँ। चलिए आप की हजामत कर दूं।" ऐसा कहकर मैंने सामान निकाला और पिता जी की हजामत बना दी। उनको थोड़ा अटपटापन लगा होगा, कारण कि हजामत की कुशलता मुझे कहाँ से प्राप्त होती? लेकिन, पिताजी के आनन्द का पार नहीं था। वे हजामत से खुश थे। हजामत तो उनके लिए पुत्र-प्रेम की अभि-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यक्ति मात्र थी। उन्हें अत्यन्त संतोष अनुभव हुआ और आनन्द के उद्गार प्रकट किये। उनमें आनन्द समा नहीं रहा था। पितृभक्ति से प्राप्त मेरा भी आनन्द कहाँ कम था?

"एक-दो घण्टे बाद हज्जाम आया। पिता जी की बनी हजामत देख कर उसे विस्मय हुआ। हमने क्रुद्ध होकर कोई दूसरा हज्जाम रख लिया है, ऐसी आशंका उसे हुई। उसने मुझसे पूछा– "हजामत के लिए किसे बुलाया? देर हो गयी, मेरी भूल हुई!" मैंने हँस कर जवाब दिया "मैंने हजामत की है। तुम्हारी राह देखी। घर पर पुछवाया। तुम्हारा पता नहीं लगा। इसलिए पिताजी को राह देखने में तकलीफ न हो, मुझसे जैसे बना, मैंने हजामत कर दी। ग्राहकी तो तुम्हारी बनी रहेगी!"

श्री नाथ जी ने बताया कि "उस दिन के बाद नाई ने पिता जी को दिये हुए समय का पूरा-पूरा पालन किया। पिता श्री के प्रति हमारे भाव देखकर उसने उनकी उपेक्षा नहीं की। अगर इस प्रकार सम्मान दिया जाय तो उसपर इसका असर हुए बिना कैसे रहे?

"इस प्रकार, यदि हम अपने पिता का सम्मान करें तो अपनी सन्तानें भी हमारा सम्मान करना सीखेंगी। आप उन्हें कितना महत्व देते हैं, यह देखकर वे अपने वनुरूप अपने बर्तन गढ़ेंगे। इतना ही नहीं, हमारे वृद्ध होने पर यह चारित्र्य-शिक्षण काम आयेगा और वे अपने प्रति भी सम्मान प्रकट करेंगे। इसी प्रकार यदि किसी के द्वारा अपने माता-पिता के प्रति अनुचित व्यवहार किये जाय तो उसकी अपनी सन्तानों के द्वारा भी, बड़े होने पर वैसे ही व्यवहार किये जायँगे। ऐसा देखने में आता है। किन्तु, इसमें इन नौनिहालों का दोष नहीं। उनकी शिकायत नहीं की जा सकती, यह सब वे समझ नहीं सकते। यह बात ध्यान में रखने लायक है।"

श्री नाथ जी के साथ हुई बातचीत को मैंने विचार-सरणि के रूप में रक्खा है। इसमें वृद्धावस्था के कारुण्य को दूर करने के उपायों पर प्रकाश पड़ता है।

अनु: श्रीहरि

★

प्रेम एक भावनागत विषय है, भावना ही से उसका पोषण होता है, भावना ही से वह जीवित रहता है और भावना ही से लुप्त हो जाता है। वह भौतिक वस्तु नहीं है।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काश्मीर की पर्यटन सह तीर्थयात्रा

हमें जून १९६५ में काश्मीर की पर्यटन सह तीर्थ यात्रा की घोषणा करते हुए अत्यन्त हर्ष हो रहा है।

काश्मीर की घाटी समुद्र सतह से ६००० फीट ऊंची है। उसका प्राकृतिक दृश्य अप्रतिम है। उसकी नदियाँ और झरनें न केवल भारत-वासियों के लिए आकर्षण के केन्द्र हैं, अपितु समस्त विश्वभर में उनकी ख्याति है।

अपने प्राकृतिक सौन्दर्य के लिए काश्मीर विशेष रूप से प्रख्यात है। आकाश को छूनेवाली बर्फीली पहाडी चोटियाँ, सुन्दर झीलें, झरनें, चश्में, हरे चरागाह, बागीचे तथा घने जंगल उसके सौन्दर्य में चार चाँद लगा देते हैं।

वहाँ का सर्वाधिक आकर्षण का केन्द्र श्रीनगर शहर है जिसे पूर्व का वेनिस कहा जाता है। साथ ही चश्माशाही, नसीम, निशात तथा शालिमार भी मुख्य हैं। शंकराचार्य हिल भी वहाँ काफी प्रख्यात है। यहाँ से सम्पूर्ण श्रीनगर शहर देखा जा सकता है।

दूसरा नम्बर आता है गुलमर्ग का, जिसे 'फूलों का मैदान' कहा जाता है। यह ८५०० फीट की ऊँचाई पर बसा है। यहाँ से आप को महादेव के रूप में हिमालय की चोटियों का दर्शन होता है। काश्मीर में पहलगाम दूसरा हिल स्टेशन है। यह समुद्र सतह से ७,००० फीट ऊँचा है। यह वर्फीले पर्वतों से घिरा हुआ है और भू-दृश्य एवं शक्ति-वर्धक जलवायु के लिए प्रख्यात है। सोनमर्ग, अद्दबल, वुलार झील, मंसबल झील, और अनन्त नाग भी यहाँ के दर्शनीय स्थान हैं।

काश्मीर राज्य हमारी धर्मनिरपेक्षता का प्रतीक हैं। शताब्दियों तक यह बौद्ध धर्म का केन्द्र रहा है। काश्मीर में बौद्ध एवं हिन्दू धर्म

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ-साथ फूले-फले। काश्मीर की प्रचीन संस्कृति में इस्लाम धर्म भी जुड़ गया और काश्मीर राज्य में हम भ्रातृत्व भावना से पूर्ण एक मिश्रित संस्कृति का दर्शन करते हैं।

काश्मीर में कितने ही मंदिर, मस्जिद तथा मठ भी आकर्षण के केन्द्र हैं। प्रख्यात मार्तण्ड मंदिर, खीरभवानी की समाधि, जम्मूस्थित रघुनाथ मन्दिर, तथा वैष्णव देवी की समाधि भी ऐसे पवित्र स्थल हैं, जिनके देखने का लाभ आप इस यात्रा में उठा सकेंगे।

निम्नलिखित स्थान भी इस यात्रा में सम्मिलित हैं :

आगरा, मथुरा, नयी दिल्ली,
अमृतसर, चण्डीगढ़, भांखरा-नांगल

यह यात्रा ३० दिनों की होगी जो ३१ मई १९६५ से बम्बई से शुरू होगी। यात्रा के लिए प्रथम श्रेणी की सुव्यस्थित बोगियों की व्यवस्था की गयी है।

प्रति व्यक्ति सम्पूर्ण यात्रा का व्यय, जिसमें भोजन, विभिन्न स्थानों के देखने व काश्मीर में ठहरने की व्यवस्था भी सम्मिलित है, १०००) होगा।

इस यात्रा में आप, आपके मित्रगण तथा परिवार के लोग भाग लेने के लिए आमन्त्रित हैं। नाम दर्ज कराते समय १००) तत्काक देना होगा और शेष रकम १५ मई तक दे देनी होगी। चूँकि सीमित संख्या में यात्रीगण इस यात्रा में सम्मिलित किये जा सकेंगे, इस लिए आप शीघ्र ही, **सांस्कृतिक विकास यात्रा विभाग, भारतीय विद्या भवन, चौपाटी रोड, बम्बई ७** के पते पर लिखें या सम्बन्ध स्थापित करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने स्वर्ण और स्वर्ण वस्तुओं

को

७ प्रतिशत स्वर्ण बाण्ड

१९८० में बदलवाइए

इनकी बिक्री ३१ मई, १९६५ तक होगी

- इन बाण्डों पर सम्पत्ति कर और पूंजी लाभ कर नहीं लगेगा।
- यह भी नहीं पूछा जायेगा कि विनियोग का जरिया क्या है अथवा स्वर्ण नियंत्रण कानून के अन्तर्गत उनकी घोषणा क्यों नहीं की गयी।

विस्तृत विवरण रिजर्व बैंक आफ इण्डिया की निकटतम शाखा, स्टेट बैंक आफ इण्डिया की शाखाएँ व उसके सहायक बैंकों से प्राप्य।

वित्त मंत्रालय, भारत सरकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[मृत्यु : विज्ञान और अध्यात्म की दृष्टि में...पृष्ठ ४३ का शेष]

चेतना के सम्पूर्ण विनाश को व्याख्यायित करता। यदि हमारे शरीर के साथ ही हमारा व्यक्तित्व लुप्त हो जाता है तो उस आध्यात्मिक विकास का क्या उपयोग है, जिसे प्रकृति ने व्यक्ति के अस्तित्व के एक उद्देश्य के रूप में स्थापित किया है। प्रजनन-परम्परा के द्वारा ही वैयक्तिक अस्तित्व का दिशा-निर्देश नहीं होता है। क्योंकि पुरुष और विशेषकर स्त्री जब अपनी प्रजनन-शक्ति खो देते हैं, तब भी उनका आध्यात्मिक व्यक्तित्व विकास करता ही चला जाता है। अनगिनत युगों के अपार जीवित भौतिक तत्त्व में जो आध्यात्मीकरण सम्पन्न किया है, उसका कोई अर्थ नहीं रह जायेगा, यदि मनुष्य की आत्मा उसके शरीर के साथ ही विनष्ट हो जाती है।

फिर भी यह समझना अभी भी हमारे लिए सुगम नहीं हो सका है कि शरीर से नितान्त अभिन्न दिखायी पड़नेवाली आत्मा शरीर के बिना अस्तित्व में कैसे रह सकती है? इस पहेली का गोपन रहस्य हम पर प्रकट होने में शायद हज़ारों वर्ष भी लग सकते हैं। तब तक हम इस मान्यता से काम चला सकते हैं कि जिस प्रकार बिजली के गोले में प्रकाश उत्पन्न होता है, वैसे ही मस्तिष्क में से आत्मा उत्पन्न होती है। बिजली के गोले में उत्पन्न होनेवाले प्रकाश के कण उसमें से निकलकर अवकाश में अन्तहीन यात्रा करते हैं। जब बिजली का लैम्प बुझ जाता है, तब भी उसमें से प्रसारित होनेवाले प्रकाश-कण नष्ट नहीं होते हैं। केलिफोर्निया के खगोलशास्त्रियों ने ऐसे प्रकाश-कणों के फोटो लिये हैं, जो ऐसे तारों से प्रसारित होकर आते हैं, जो संभवतः एक करोड़ प्रकाश-वर्षों पहले मृत हो चुके होंगे। यह मानना निरर्थक नहीं होगा कि हमारे मस्तिष्क द्वारा प्रसारित जो ऊर्जा देश-काल से परे के प्रदेशों में अभिसरित होती है, हमारी मृत्यु के बाद भी उसका अस्तित्व इस अनजान जगत में कायम रहता है।

प्रत्येक मानव-प्राणी के लिए मृत्यु अलग-अलग मायने रखती है। क्योंकि मृत्यु जीवन पर निर्भर करती है और जीवन का अर्थ विभिन्न व्यक्तियों के लिए विभिन्न होता है। लगभग हमेशा ही मृत्यु एक उबा देने वाले बरसाती दिन की तरह होती है। कभी-कभी मृत्यु में पर्वतों की द्वाभा का सौन्दर्य भी होता है या फिर कभी-कभी वह युद्ध के बाद एक वीर की निद्रा है। पर यदि हम चाहें तो मृत्यु भगवान के वैभव में आत्मा का निमज्जन भी हो सकती है।

अनु. विमल के. गुप्ता

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

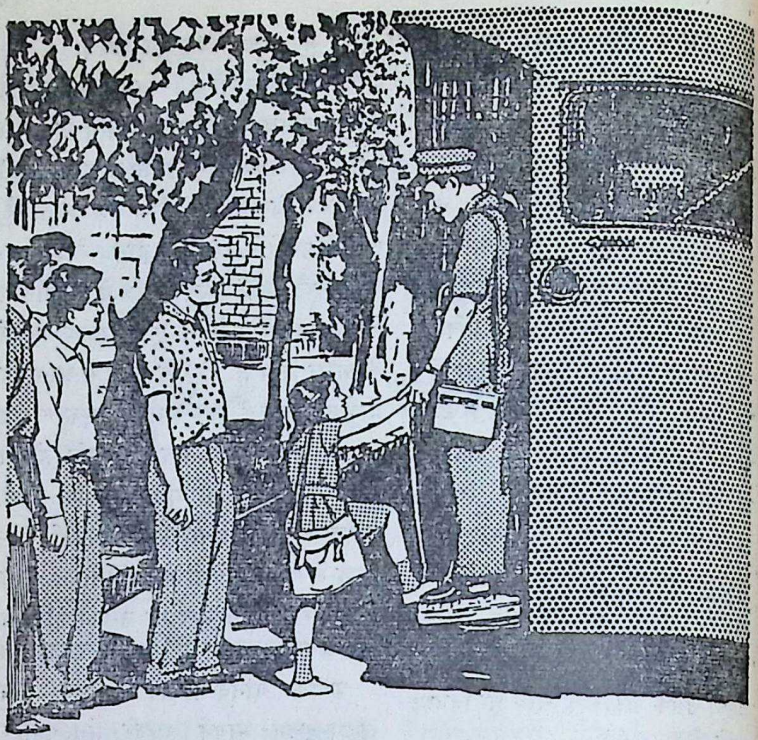

ललिता के लिए बस की सवारी कितनी आनन्ददायक है

स्कूली छात्रा ललिता हमेशा बस की सवारी का आनंद उठाती है, किन्तु वह और उसकी तरह के अन्य बच्चे शायद ही कभी यह महसूस करते होंगे कि इण्डियनऑयल उनके लिए क्या करता है। उन्हें क्या मालूम कि यह राष्ट्रीय संगठन उनके जीवन में महत्त्वपूर्ण पार्ट अदा करेगा जब वे बड़े होकर भारत के नागरिक बनेंगे।

सार्वजनिक क्षेत्र के तेल शोधक कारखानों के अलावा, जो अभी उसके अन्तर्गत आये हैं, इण्डियनऑयल उद्योग के लिए आवश्यक विभिन्न पेट्रोलियम उत्पादनों का विक्रय करता है। केवल यातायात के ही क्षेत्र में इण्डियनऑयल भारत के प्राय सभी प्रमुख यातायात संगठनों की तेल की जरूरत की पूर्ति करता है।

INDIANOIL

इण्डियनऑयल

"राष्ट्र की आर्थिक समृद्धि का प्रतीक"

इण्डियन ऑयल कार्पोरेशन लिमिटेड

maa.IOC. 4711C.HIN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भवन-समाचार

गत १० अप्रैल को अंधेरी स्थित भारतीय विद्या भवन के कॉम्पस में हंसराज मोरारजी पब्लिक स्कूल के प्रस्तावित छात्रावास का शिलान्यास करते हुए महाराष्ट्र के शिक्षा मन्त्री श्री मधुकरराव चौधरी ने विद्यार्थियों को उनकी संस्था द्वारा प्रदान की गयी तमाम प्रकार की मानसिक, बौद्धिक एवं शारीरिक सुविधाओं का सदुपयोग से लाभ उठाने के लिए प्रोत्साहित किया। उन्होंने विद्यार्थियों को लक्ष्य करते हुए कहा कि निस्सन्देह इस स्कूल के विद्यार्थी भाग्यशाली हैं, जिन्हें डॉ. के एम. मुन्शी जैसा ट्रस्ट के चेयरमैन के रूप में अभिभावक प्राप्त है। शिक्षा के क्षेत्र में डॉ. मुन्शी की सेवाएँ अप्रतिम हैं। स्कूलों और कालेजों की सुव्यस्थित स्थापना कर उन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में एक क्रान्ति पैदा की है। भारतीय संस्कृति के प्रचार एवं प्रसार में भी उन्होंने अप्रतिम ढंग से योग दिया है।

●●●

मद्रास केन्द्र

गत १८ अप्रैल को भवन के मद्रास केन्द्र में श्री अनन्तरामकृष्णन की प्रथम पुण्य तिथि मनाने के लिए एक सभा का आयोजन किया गया था। मद्रास बार एसोसिएशन के अध्यक्ष श्री के. राजा अय्यर ने सभा की अध्यक्षता की। इस अवसर पर श्री केवाल सुब्रमनिया अय्यर, श्री टी. चेंगालवेरेयाह, श्री एस. नारायण स्वामी, तथा श्री के. नागराजन् ने अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की। श्री राजनीकान्त मेहता ने आभार प्रकट किया। अपने एक सन्देश में कुलपति श्री मुन्शीजी ने कहा कि मैं तथा ममी आप सब के साथ भवन के एक निकटतम मित्र और एक महान आत्मा को श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ।

●●●

गत १३ अप्रैल को 'दिन मणि' के समाचार सम्पादक श्री ए.जी. वेंकटचारी ने 'कुत्तिविलक्कु' को जला कर भारतीय विद्या भवन की बिल्डिंग में निःशुल्क पठन-कक्ष का उद्घाटन किया। इस शुभ प्रसंग पर श्री सी. राजगोपालाचारी अन्य मित्रों के साथ उपस्थित थे। यह निःशुल्क पठन-कक्ष जनता के लिए प्रातःकाल ८.३० से रात्रि के ९.३० बजे तक खुला रहेगा।

●●●

गत ९ अप्रैल को भारतीय विद्या भवन के मद्रास केन्द्र ने बड़ी धूमधाम से रामनवमी उत्सव मनाया। इस अवसर पर श्री एस. राममूर्ति शास्त्रिगल ने 'श्री रामप्रभावम्' विषय पर विद्वतापूर्ण भाषण दिया।

●●●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गत ७ अप्रैल को भवन के मद्रास केन्द्र में संस्कृत कक्षाओं का नया सत्र शुरू किया गया। भवन द्वारा संचालित प्रारम्भ, प्रवेश, परिचय तथा कोविद की परीक्षाओं के लिए यहाँ विद्यार्थियों को शिक्षा दी जाती है।

●●●

गत १३ मार्च को भवन के मद्रास केन्द्र द्वारा मेसर्स चित्रा एण्ड कम्पनी के मालिक श्री एस. नारायण स्वामी को उनके 'शष्टिआब्दपूर्ति' के शुभ अवसर पर एक सम्मान समारोह का आयोजन किया गया था। श्री के. दाल सुब्रमनिया अय्यर ने समारोह की अध्यक्षता की। उनके साथ ही अन्य वक्ताओं ने भी श्री एस. नारायण स्वामी द्वारा राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक क्षेत्रों में की गयी सेवाओं की प्रसंशा की। अन्त में श्री रजनीकान्त मेहता ने आभार प्रदर्शित किया।

●●●

बम्बई के नये मेयर

श्री मेलाथ माधवन को बम्बई नगर का मेयर चुन कर यह यहाँ के लोगों ने सिद्ध कर दिया है कि निस्सन्देह बम्बई एक पचरंगी नगरी है। आज से ३१ वर्ष पूर्व श्री माधवन् नौकरी की तालाश में इस वैभवमयी नगरी में पधारे थे। बाद में वे काँग्रेस के नेतृत्व में राष्ट्रीय आन्दोलन में जुट गये। उन्हें कितनी ही बार जेल भी जाना पड़ा। मेयर चुने जाने के पूर्व कार्पोरेशन में श्री माधवन काँग्रेस पार्टी के नेता रह चुके हैं। उनमें कार्य करने की महान क्षमता है। भारतीय विद्या भवन उनकी हर प्रकार की सफलता की कामना करता है।

✶

लेखकों से आवश्यक निवेदन :

- इधर कविताएँ 'भारती' कार्यालय में इतनी अधिक जमा हो गयी हैं कि विरल ही कोई नयी कविता स्वीकारना सम्भव होगा। अच्छी होने पर भी कविताएँ अस्वीकृत हो सकती हैं; कवि-मित्र इसे हमारी विवशता जान क्षमा करेंगे।
- भविष्य में 'भारती' में आनवाले लेख 'भारती' के अधिक से अधिक ५–६ पृष्ठों से ज़्यादा विस्तृत नहीं होने चाहिए। अधिक लम्बे लेख स्वीकारने में हम असमर्थ होंगे।

—सम्पादक

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन के लिए बम्बई से प्रकाशित व मुद्रित तथा एसोसिएटेड एडवर्टाइजर्स एण्ड प्रिन्टर्स, तारदेव, बम्बई ३४ में मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

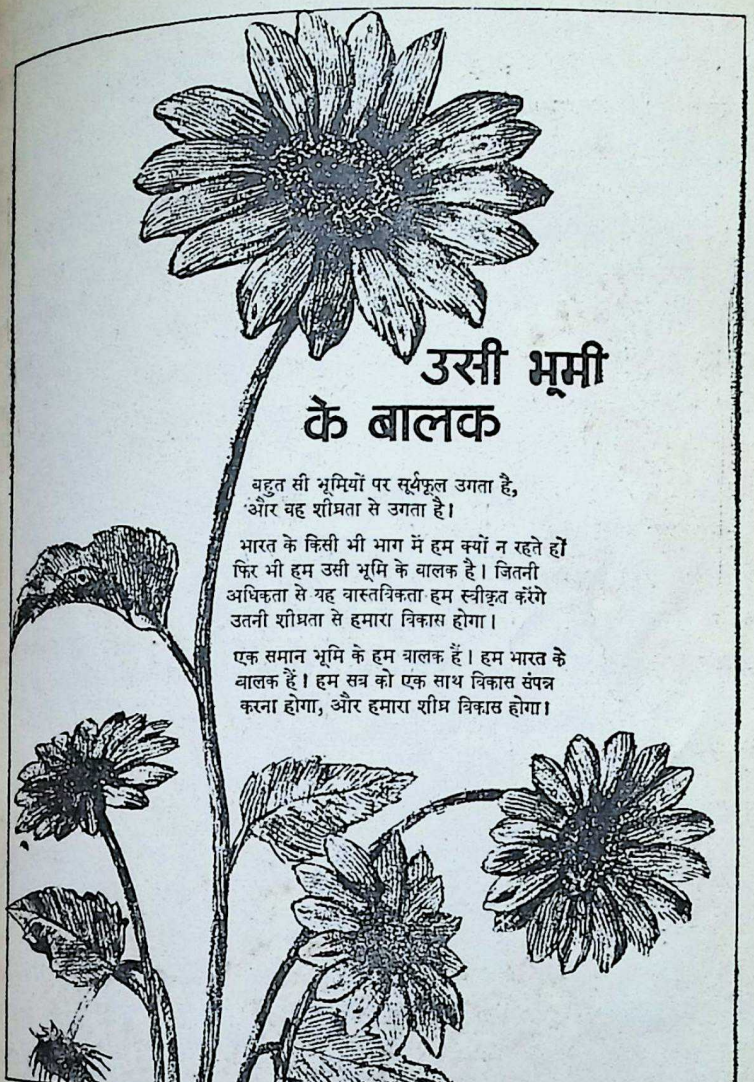

उसी भूमी के बालक

बहुत सी भूमियों पर सूर्यफूल उगता है, और वह शीघ्रता से उगता है।

भारत के किसी भी भाग में हम क्यों न रहते हों फिर भी हम उसी भूमि के बालक है। जितनी अधिकता से यह वास्तविकता हम स्वीकृत करेंगे उतनी शीघ्रता से हमारा विकास होगा।

एक समान भूमि के हम बालक हैं। हम भारत के बालक हैं। हम सब को एक साथ विकास संपन्न करना होगा, और हमारा शीघ्र विकास होगा।

संचालक प्रकाशन विभाग महाराष्ट्र शासन बंबई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गाडी में सफर करते समय

सावधानी बरतें!

सिगरेट के जलते हुए टुकड़े को फेंकने से पहले बुझा दें या राखदान में डाल दें।

•

सवारी डिब्बों में स्टोव न जलायें।

गाडी में **सुरक्षा** के लिए **अग्नि-रोधक नियमों का पालन** करें।

आग पकडने वाली वस्तुओं को साथ में न रखें।

असावधानी से गाडी में आग लग सकती है और जान और माल की हानि हो सकती है।

यात्रा में सुरक्षा के वास्ते मध्य रेलवे द्वारा प्रसारित।

HINDI

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

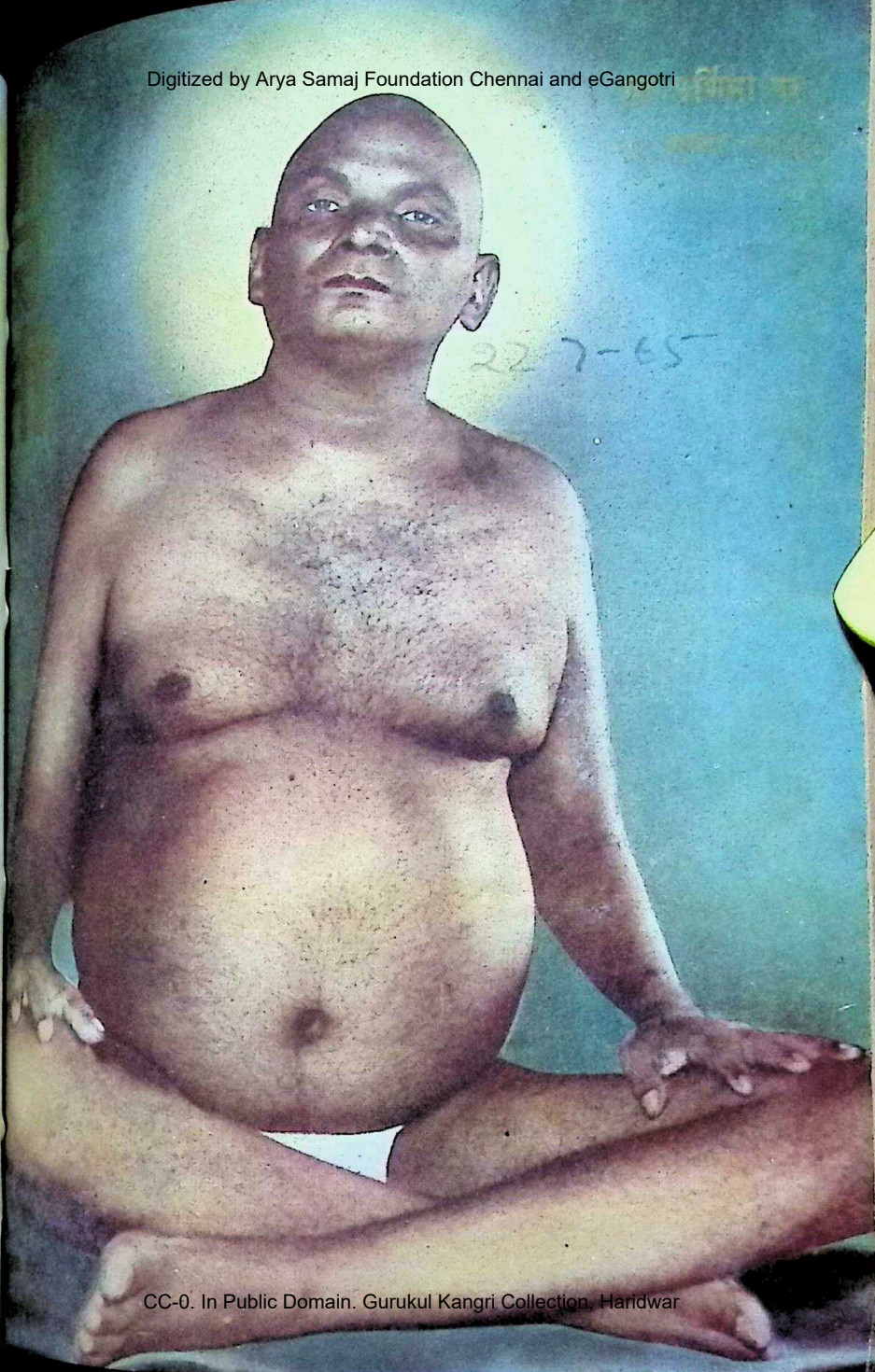

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतमें सब जगह प्रसिध्द

चँपियन

(रजिस्टर्ड)

सबकी पसंदगी

गुजरात इंडस्ट्रीज प्रायव्हेट लि., बंबई २

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रत्नकी तरह

चमकदार

आँखोंके

लिये

जाई काजल

आँखों को ठंडक पहुँचाकर सौंदर्य बढ़ाता है।

वेस्टर्न इन्डिया केमिकल कंपनी.
बोरिवली, बम्बई-६६

SAS

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष ९ : अंक २३]

भारती

[११ जुलाई १९६५

संस्थापक :
कन्हैयालाल मुन्शी

प्रबन्ध सम्पादक :
जयन्तकृष्ण ह. दवे

प्रकाशक :
सु. रामकृष्णन्

सम्पादक :
वीरेन्द्रकुमार जैन

सहयोगी :
श्रीराम मिश्र
ओंकारनाथ शर्मा
रामलाल शुक्ल

कार्यालय :
भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड,
बम्बई ७

प्रति अंक : ३० पै.
वार्षिक : ६.५० पै.
अर्धवार्षिक:३.५० पै.

यजुर्वेद	: प्रार्थना	
कन्हैयालाल मुन्शी	: कुलपति का पत्र	
स्वामी मुक्तानन्द परमहंस	: श्री गुरुदेवः भगवान नित्यानन्द	
वेद-वाणी	: सूर्या का विवाह	
श्री माँ	: मृत्यु क्यों होती है	
देवी भागवत पुराण	: भारत के आदिगुरु भगवान वेदव्यास का जन्म	
अमृता भारती	: आत्म विस्मरण	
उपनिषद् प्रवचन	: वह आत्म का ज्ञाता	
गौरीशंकर श्रीवास्तव	: गुरु-तत्त्व की वैज्ञानिक व्याख्या	
सन्त तुलसीदास	: रामायण गान	
श्रीमती लीलावती मुन्शी	: मेरी इज़राइल यात्रा	
बाइबिल	: सन्तों की प्रार्थना भगवान का विधान बदल देती है	
ओंकार सारस्वत	: वार्ता, कृष्ण दीवानी सन्त जनाबाई की	
जाह्नवी कुमार चक्रवर्ती	: मेखला मन्त्र	
कन्हैयालाल मुन्शी	: कृष्णावतार	

आवरण चित्र : भगवान श्री नित्यानन्द
छायाकार : श्री आर. वी. गाडेकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः ।
[प्रत्येक दिशा से शुभ एवं
सुन्दर विचार हमें प्राप्त हों]

भारती
[भवन की पत्रिका]

आगामी विश्व विकास का सूचक :
जीवन, साहित्य और संस्कृति का पाक्षिक

प्रार्थना

ओऽम् अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि
तच्छकेयं तन्मे राध्यताम्
इदमहमनृतात्सत्यमुपैमि ।।

सबके अग्रणी और व्रतपति परमात्मा, मैं नियम और धर्म पालन का व्रत धारण करता हूँ। मेरा व्रत पूर्ण हो। मैं असत्य से सत्य को प्राप्त होता हूँ।

यजुर्वेद १–५

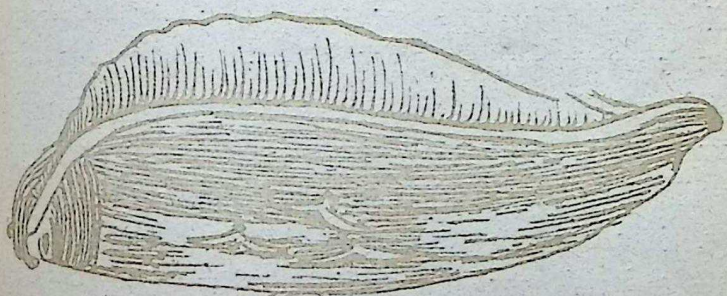

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुलपति का पत्र

जीवन साहित्य तथा संस्कृति से संबंधित

• अतीत और भविष्य का अवलोकन

भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड, बम्बई ७
११ जुलाई, १९६५

मेरे युवा मित्र,

शीघ्र ही मैं अपने जीवन के ७८ वर्ष और भारतीय विद्या भवन के अपने कुलपति–काल के २८ वर्ष पूर्ण करूँगा।

निश्चय ही भवन का विस्तार तेजी से हो रहा है। देश के विभिन्न भागों और विदेशों से भी प्रति वर्ष अधिकाधिक संख्या में नये सदस्य, नये मित्र, नये कार्यकर्त्ता, नये शिक्षक और विद्यार्थी इसके साथ संलग्न हो रहे हैं।

१९६२ में जब भवन की रजत-जयंती मनायी गयी थी, तब भारत के विभिन्न भागों से हजारों व्यक्ति, और कुछ विदेशी भी, इसके जुबिली-एसोशिएट बने थे। उनमें से कईयों ने, तथा भवन के केन्द्रों, संलग्न संस्थाओं, संस्कृत और गीता परीक्षाओं, पत्रिकाओं-पुस्तकों तथा नृत्य, नाट्य, संगीत आदि प्रवृत्तियों में भाग और रुचि लेनेवाले बहुत से व्यक्तियों ने कई बार जोर देकर हम से अनुरोध किया है कि कोई ऐसी योजना बनायी जाय जिससे भवन के आदर्शों और कार्यों में सहायक अथवा सहानुभूति रखनेवाले व्यक्ति और अधिक निकट सम्पर्क में आ सकें। उनकी इच्छा का आदर करते हुए भवन की कार्यकरिणी समिति ने ने ऐसे मित्रों और हितैषियों को भवन के असोशिएट (सहयोगी) के रूप में विशेष रूप से भर्ती करने का निश्चय किया है। [देखें मध्य में संलग्न परिशिष्टकार्ड]

भवन के उद्देश्य को आगे बढ़ानेवाले इन सभी साथियों के सम्मुख भवन के कार्यों और लक्ष्य का स्पष्ट चित्र शायद न हो। इसलिए मैं आप सभी नये, पुराने और भावी साथियों, मित्रों तथा कार्यकर्त्ताओं को उससे अवगत कराना चाहताहूँ। भवन का उद्देश्य, भवन के कार्य तथा उसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

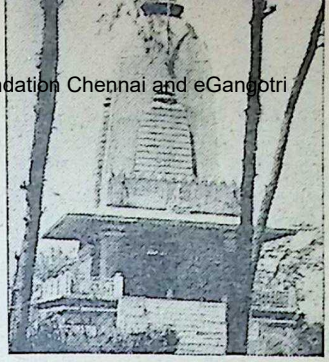

भवन-कॉम्पसस्थित भगवान चन्द्रशेखर का मंदिर

न केवल भवन के उपकुलपतियों—सर सुप्रसिद्ध भाई दिवेटिया और मम्मी—तथा मेरे लिए ही नहीं, बल्कि भवन के निर्माण में योगदान देने का सुअवसर जिनको भी मिलता है, उन सभी साथियों-कार्यकर्त्ताओं के लिए क्या महत्व रखते हैं, यह उन्हें जान लेना चाहिए।

(१) भवन एक परिवार

उन सभी मित्रों, सदस्यों और कार्यकर्त्ताओं के अति निकट मैं स्वयं को अनुभव करता हूँ, जिन्होंने 'भवन-परिवार' में सम्मिलित होने का निश्चय किया है, और जो भवन के सर्वाङ्गीण विकास के लिए मन-प्राण से जुटे हुए हैं। उनमें से कई तो आपस में कभी मिले तक नहीं। उनका सम्पर्क केवल भवन की पत्रिकाओं, पुस्तकों और पत्रों द्वारा ही संभव हुआ है। इस परिवार में भवन के मुख्य कार्यालय, केन्द्रों और शाखाओं के निष्ठावान सदस्य और कर्मचारीगण तथा भवन के मुद्रणालय के कर्मचारी भी हैं। इन में से कुछ तो मुझे 'बापाजी' और मेरी पत्नी को 'मम्मी' कह कर हमारा सम्मान करते हैं।

यह सब ईश्वर की ही कृपा का सुफल है। हमने भी विनम्रतापूर्वक भरसक चेष्टा की है कि इस सम्मान के लायक हम सिद्ध हों। कई बार मैं सोचता हूँ कि यदि मेरी माँ का वह जादूई स्पर्श मेरे व्यक्तित्व में भी होता, जिसके फलस्वरूप वह अपने संसर्ग में आनेवाले प्रत्येक व्यक्ति को ममता और प्यार से पूर्ण अपना बालक

कुलपति मुन्शीजी

सर एच. वी. दिवेटिया

श्रीमती लीलावती मुन्शी

श्री मुंगालाल गोयनका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बना लेती थीं, तो मैं क्या-कुछ नहीं कर सकता था।

(२) बीज

प्रारम्भ से ही मैंने भवन को एक मिशन का, सेवा का साधन माना है। इसका बीज १९२३ में ही बंबई में मेरे कुछ अन्तरंग मित्रों के हृदय में एक आशा और महत्त्वाकांक्षा के रूप में आरोपित हुआ। हमने अनुभव किया कि यदि भारतीय संस्कृति को नवजीवन देना है, उसे प्राणवान बनाना है तो तीन बातों का होना हमारे लिए अत्यन्त आवश्यक है: प्रथम, हमारे लोगों पर छाये संसार के प्रति विरक्ति के उस भाव के स्थान पर, जो अतीत में हमारे लिए एक शाप सिद्ध हुआ है, जीवन में आनन्द और उत्साह की भावना का लाना। द्वितीय, ऐसी पुरानी परम्पराओं के, जो हमारे व्यक्तिगत और सामूहिक जीवन की रचनात्मक प्राणशक्ति का ह्रास कर रही थीं, स्थान पर जीवन के प्रति प्राणवान और परिवर्तनशील दृष्टिकोण अपनाना। तृतीय, वर्तमान के लिए उन मौलिक मूल्यों को पुनः प्राप्त करना, जिन्होंने हमारी संस्कृति को सनातन प्रेरणा दी है।

तदनुसार, हममें भारतीय विद्या को आधुनिक परिस्थितियों के अनुरूप पुनः गठित करने तथा हमारे जीवन में सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् के त्रिरूप में धर्म के प्रति चेतना और प्रयास जागृत करने की इच्छा बलवती हुई।

देश के महान नेता भवन के पथ-प्रदर्शक रहे हैं

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद

श्री जवाहरलाल नेहरू

सरदार पटेल

श्री सी. राजगोपालाचारी

(३) विकास

भवन की स्थापना ७ नवम्बर १९३८ को हुई। अब यह अपने २८ वें वर्ष में है। अपनी स्थापना के प्रथम वर्ष से ही इसका विकास उत्तरोत्तर होता जा रहा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस समय वह भारत के कई भागों तथा विदेशों में भी विस्तार पा चुका है। इसका मुख्य कार्यालय बम्बई में है। अहमदाबाद बंगलोर, डाकोर, दिल्ली, कानपुर और मद्रास में इसके केन्द्र हैं। इस वर्ष जम्मू और काश्मीर, आन्ध्र प्रदेश तथा मोरिशस में भी केन्द्रों की स्थापना के लिए आयोजन-समितियाँ बनी हैं। इसके अलावा, भवन की शाखाएँ कोयम्बतूर, कलकत्ता और हैदराबाद में भी हैं।

भवन के तत्त्वाधान में पच्चीस संस्थाएँ और विभाग कार्यरत हैं। इनका कार्यक्षेत्र विविध है; प्राचीन शास्त्रों से लेकर आधुनिक ज्ञान-विज्ञान तक—जिसमें प्राचीन शास्त्र, अमर-ग्रंथ, महाकाव्य, मानवीय विद्याएँ, विज्ञान और टेक्नालॉजी, विदेशी भाषाएँ तथा जन प्रचार के साधन—सभी का समावेश हो जाता है। संगीत-नृत्य और नाट्यशास्त्र भी इसकी परिधि में हैं। सन् १९६१ में जब भवन के प्रधान कार्यालय में पंडित जवाहरलाल नेहरू पहले पहल पधारे थे तो उन्होंने बताया कि वे भवन की विविध प्रवृत्तियों को देख कर अत्यंत प्रभावित, बल्कि पुलकित हुए; कि दुर्भाग्यवश भारत में ऐसी प्रवृत्तियों को साधारणतया प्रोत्साहन नहीं मिलता और देश में ऐसे स्थान कम ही हैं जहाँ जीवन के सांस्कृतिक रूप पर ध्यान दिया जाता है।

राष्ट्रपति डॉ. राधाकृष्णन्

भवन की विविध संस्थाओं में पूर्ण-कालीन शिक्षा प्राप्त करनेवाले विद्यार्थियों की संख्या इस वर्ष प्रायः ७ हजार है। करीब ५० हजार विद्यार्थी हमारी गीता और संस्कृत परीक्षाओं में बैठते हैं। अब तक प्रायः ३ लाख परीक्षार्थियों ने भवन की गीता और संस्कृत परीक्षाओं में भाग लिया है। प्रायः दस हजार नवयुवक और नवयुवतियों को हमारे अन्तर-महाविद्यालय नाट्य प्रतियोगिता में, जो हर-साल बम्बई में होती है, भाग लेने और नाट्यशास्त्र में अपनी प्रतिभा को चमकाने का अवसर मिला है। अब दो-एक केन्द्र भी ऐसी प्रतियोगिताएँ अपने यहाँ प्रारम्भ करने का प्रयास कर रहे हैं।

बम्बई स्थित भवन के पुस्तकालय में ६० हजार पुस्तकें हैं। देश में यह भारतीय विद्याओं के श्रेष्ठ पुस्तकालयों में से एक है। इससे संलग्न, भोजपत्रों पर लिखे तथा अन्य दुर्लभ पाण्डुलिपियों का एक संग्रहालय भी है।

भवन से आठ पत्रिकाएँ प्रकाशित होती हैं—भवन्स जरनल (पाक्षिक),

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय विद्या (त्रैमासिक), अल्फा (मासिक) और दि वर्ड (वार्षिक), अंग्रेजी में; भारती, हिन्दी में; समर्पण गुजराती में और संविद् संस्कृत में। भवन की पाठशालाओं, कालेजों द्वारा प्रकाशित पत्रिकाओं की संख्या इनसे अलग है। सभी पत्रिकाओं की संयुक्त वितरण-संख्या एक लाख से भी अधिक है।

भवन की बुक युनिवर्सिटी पुस्तक माला की पिछले १२ साल में बिकी हुई किताबों की संख्या १५ लाख से भी अधिक है। सामान्यतः प्रति वर्ष पचास किताबें प्रकाशित होती है, जिनमें पुनः संस्करण भी शामिल हैं। इन पुस्तकों की बिक्री ३.५ लाख तक पहुँच गयी है। कुछ जनप्रिय किताबों की बिक्री तो एक लाख से भी अधिक हुई है।

भवन का इस साल का वार्षिक बजट १ करोड़ २० लाख रुपये का है। उसकी सम्पत्ति का बहियों में दर्ज मूल्य १ करोड़ ६० लाख से भी अधिक है जो कि बाजार दर पर इसका चार या पाँच गुना अधिक होगा।

भवन द्वारा आयोजित संस्कृत विश्व परिषद अपने नाना केन्द्रों द्वारा देश भर में संस्कृत के उत्थान का कार्य कर रही है।

यह सब ईश्वर का ही कार्य रहा है। भवन की सेवा करनेवाले हम सब लोगों को यह नहीं भूलना चाहिए कि हम केवल उसके माध्यम हैं।

(४) हमारी श्रद्धा

कभी-कभी हमें चिन्ता की घड़ियों में से भी गुजरना पड़ा है। ऐसे मौकों पर गुजरात के सन्त कवि नरसी मेहता की भांति हमने भी भगवान से सहायता के लिए प्रार्थना की, और मित्रों, धन, तथा कार्यकर्त्ताओं के रूप में उसका उत्तर भी हमें मिला। कभी कभी मैं यह सोचता हूँ कि क्या हम अत्यधिक कार्यभार तो अपने ऊपर नहीं ले रहे हैं, कि हम कहीं अति तेज गति से तो विस्तार नहीं कर रहे हैं। परन्तु प्रत्येक बार हमारी श्रद्धा हमें आश्वस्त करती है। ऐसी श्रद्धा के बिना हम कभी भी आधुनिकता और परम्परा के विरोध का सामना नहीं कर सकते थे, न इसी समस्या को सुलझा सकते थे कि हमारी संस्कृति के मूल्यों और कठोर अनुशासन का तीव्र गति से परिवर्तनशील आधुनिक सभ्यता की माँगों के साथ मेल किस प्रकार बैठाया जाय!

भवन जिस श्रद्धा से अभिभूत है, वह मेरे विचार से इस प्रकार है:

भवन भारतीय संस्कृति के पुनर्गठन के लिए कटिबद्ध है। एक अनैतिक तकनीकी प्रगति के अन्तर्गत विघटित होते संसार में वह हमारी संस्कृति के मौलिक मूल्यों—ऋत्, सत्य, यज्ञ और तपस्—को प्रतिष्ठित करने का प्रयत्न करता है। ईश्वर में आस्था, मन-वचन-कर्म में एकता, जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के सभी कार्यों को ईश्वर के प्रति समर्पित करने की भावना, शरीर और मन को पवित्र करनेवाला इच्छाओं का उर्ध्वीकरण, जिसमें इच्छाएँ, वासनाएँ तथा भावनाएँ भी सौन्दर्य की वस्तुएँ बन जाती हैं—अनेक रूप और सिद्धान्तों के बावजूद यही सच्चा धर्म है जिसके तीन रूप, जैसा कि मैंने आगे कहा है, सत्यम्, शिवम् और सुन्दरम् हैं।

इन्हीं मूल्यों के लिए हमारे पूर्व पुरुष जिये और मरे। श्री रामकृष्ण परमहंस, स्वामी दयानन्द, स्वामी विवेकानन्द, महात्मा गान्धी और श्री अरविन्द ने भी आधुनिक काल में यही किया। आज हम संसार का आदर उन्हीं की बदौलत प्राप्त कर सके हैं। भविष्य के प्रति भी हम इसीलिए आश्वस्त हैं कि इन महापुरुषों ने हमें जीवन में भय से मुक्ति दी।

(५) भूख

भवन आज इसीलिए निरन्तर विकासशील है कि वह भारतीय पुनर्जागृति द्वारा उत्पन्न उस भूख की तृप्ति करने का यथाशक्ति प्रयास कर रहा है, जिसका अनुभव संवेदनशील व्यक्तियों ने हमारी संस्कृति के भौतिक मूल्यों को, आधुनिक परिस्थितियों के अनुसार, राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक और आर्थिक बन्धनों के परे, पुनः प्राप्त करने के लिए किया।

इस भूख के कई पहलू हैं: प्रथम, हमारे अतीत—ऐतिहासिक, साहित्यिक, धार्मिक, आध्यात्मिक अतीत—को वर्तमान के विविध रंगों में देखने की हमारी इच्छा, जिससे हमारी परम्पराएँ हमारे लिए बाधक न हो कर शक्ति का एक स्रोत बन जायँ। यह इच्छा हममें इसलिए जागी कि हमें यह विश्वास हो गया था कि हमारे भविष्य की जड़ें हमारे अतीत में हैं और हमें अपनी महान परम्परा को कभी नहीं भूलना चाहिए। जिन राष्ट्रों के कोई अतीत नहीं होता, उनका न तो कोई अर्थपूर्ण वर्तमान होता है, और न कोई महान भविष्य।

इस भूख का दूसरा पहलू हमारी आध्यात्मिक सम्पदा को वर्तमान युग में ले आने की हमारी प्रबल इच्छा है, ताकि वह अपनी प्राणशक्ति फिर से प्राप्त कर सके। विज्ञान और तकनीक की कोई प्रगति उपनिषदों की प्रेरणा अथवा गीता के प्राणदायक संदेश को निष्प्रभ नहीं कर सकती। कोई भी महानतम गणितज्ञ सत्य अथवा प्रेम अथवा सौन्दर्य की सर्वोच्चता को बदल नहीं सकता; न ईश्वर में आस्था और विश्व की नैतिक व्यवस्था में जो शक्ति छुपी है, उसे मिटा सकता है।

इस भूख का तीसरा पहलू मनुष्य को ईश्वर के अधिकाधिक निकट लाने की

[शेष पृष्ठ ६७ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामी मुक्तानन्द

श्री गुरुदेव : भगवान नित्यानन्द

●

स्वामी मुक्तानन्द परमहंस

[लेखांक : १ :]

जैसा जगत का जनसमुदाय होता है वैसी ही उनकी भावना होती है, भावना के अनुसार संकल्प होता है, संकल्प के अनुसार मनोवृत्ति का उदय होता है, मनोवृत्ति के उदय होते ही प्रश्न उठता है और तदनन्तर मनुष्य अपनी-अपनी भावना के अनुरूप प्रश्न पूछने लग जाता है।

कोई एक भक्त आता है और पूछता है—"महाराज! क्या आप भक्त हैं?" श्री गुरुदेव बोलते हैं, "हाँ।" दूसरा अष्टांगयोग-प्रेमी आता है और पूछता है—'बाबाजी! क्या आप योगी हैं?" गुरुदेव कहते हैं: "हाँ।" तीसरा वेदान्त-प्रेमी पुरुष आता है और पूछता है—"क्या जी महाराज! आप ज्ञानी हैं ना?" भगवान बोलते हैं, "हाँ"। अब बस, वे अपनी-अपनी समझ के अनुसार झगड़ा, वाद-विवाद, तर्क-वितर्क करने लग जाते हैं। एक कहता है, 'हमने पूछ लिया है वे भक्त हैं।' दूसरा कहता है, 'हमने भी पूछा है वे योगीराज हैं।' तीसरा कहता है, 'वे वेदान्त-ज्ञानी हैं।' इस तरह आपस में तर्क-कुतर्क से लड़ाई करके वे अपने सिद्धान्त को पुष्ट करते हैं। वस्तुतः भगवान नित्यानन्द सब कुछ थे, उनमें सब कुछ था पर यह समझ किसको है? क्या प्रेमभक्ति के बिना योग रहता है? योगाङ्ग के बिना ज्ञान रहता है? और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन की व्याप्ति बिना भगवद्-तत्त्व कहाँ है? भगवद्-तत्त्व के बगैर प्रज्ञानघन परमानन्द स्थिति कहाँ? परमानन्द और नित्यानन्द क्या भिन्न हैं? वस्तुतः योग, भक्ति, ज्ञान इत्यादि 'एकमेवाद्वितीयं' हैं।

भक्ति का नाम प्रेम है और प्रेम आनन्द ही कहते हैं। जब चित्तवृत्ति का सर्वथा निरोध होता है, तब आनन्द उदय होता है। चित्तवृत्ति-निरोध को योग कहते हैं। वस्तुतः योग का नाम लेते ही कुछ लोग घबराते हैं। वे योग को उन्हीं की विद्या समझते हैं, जो संसार से सदा दूर और गिरिकन्दराओं में केवल कंदमूल, फलाहार पर ही रहते हैं। लेकिन ऐसा नहीं है। हर जीवात्मा में योग का कुछ न कुछ अंश अवश्य रहता है और आचरण में आता है। योग के आठ अङ्ग हैं, जीवात्मा

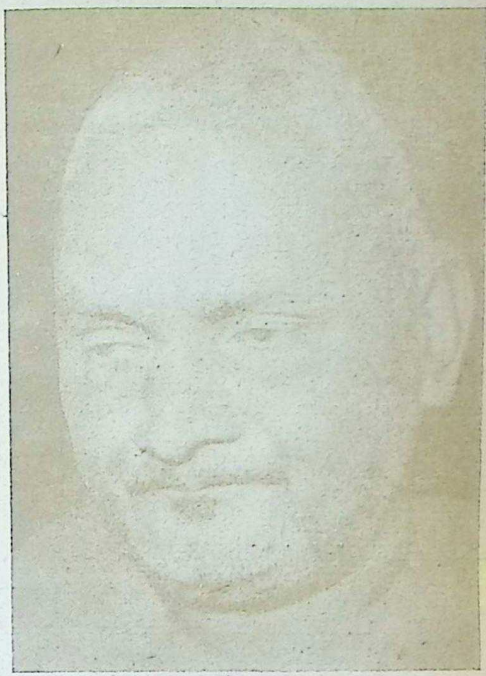

भगवान नित्यानन्द

आधुनिक भारत के योगीश्वरों की ज्योतिर्मान हारमाला में बम्बई के समीपस्थ, गणेशपुरी के भगवान श्री नित्यानन्द का व्यक्तित्व सकल चराचर-वल्लभ प्रेम की एक अनोखी आभा से मंडित है। सन् १९६१ में रक्त-मांस की सीमित देह का परित्याग कर, आज भगवान नित्यानन्द अपनी वैश्विक देह में सहस्र गुनी अधिक शक्ति के साथ हमारे बीच क्रियाशील रूप से विद्यमान हैं।

महाराष्ट्र और दक्षिण भारत के वे लक्ष-लक्ष नर-नारी, जिन्हें उन भगवान की कृपा का प्रसाद प्राप्त है, इसकी ज्वलन्त साक्षी देते हैं। गणेशपुरी के शक्ति-पीठ पर वर्तमान में विराजमान, भगवान नित्यानन्द के अभिन्नांश उत्तराधिकारी स्वामी मुक्तानन्द के श्रीचरणों में, आज, इस पल भी नित्यानन्द प्रभु की उस जीवन्त कृपा का प्रसाद पाया जा सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनमें से हर अंग का अनुकरण करता है और ज्ञान का भी। इसलिए गुरुदेव सभी के प्रश्न के उत्तर में 'हाँ' कहते थे।

श्री गुरुदेव पूर्ण योगीश्वर थे। वे एक सादी लंगोटी लगाकर फिरते थे, कभी-कभी एक शाल ओढ़ लेते थे। उनका कृष्णवर्ण सुन्दर शरीर जो भी एक बार देख लेता, उसकी आँखों में वह बस जाता। छोटे-बड़े, पढ़े-अनपढ़े सबको वे समभाव से देखते थे। उनके लिए समस्त ब्रह्माण्ड एक आत्मछवि थी। उनका रहन-सहन बिलकुल सादा था। वे वेदान्त के उपदेश को अत्यन्त सरल भाषा में बोलते थे। भगवान नित्यानन्द का कथन था कि यह जगत परब्रह्म का विलास है। जैसे एक सुवर्ण से अनेक तरह के आभूषण—कंगन, अंगूठी, तोड़ा, हार, कर्णफूल इत्यादि बनते हैं, जैसे एक ही मृत्तिका से अनेक तरह के बर्तन बनते हैं, जैसे वस्त्र वस्त्ररूप में दीखने पर भी तन्तुओं से ही बना है—वैसे ही यावन्मात्र प्रत्यक्ष दीखनेवाला जगत अनेक रूप में दीखने पर भी एक ही चैतन्यरूप है।

गुरुदेव नित्यानन्द के दर्शनार्थ बहुत लोग आया करते थे। नित्य नयी-नयी यात्राएँ होती थीं। वे कुछ पूछने पर ही जवाब देते थे। उनके लिए सर्व धर्म समान थे। इसी से किसी के प्रश्न करने पर वे सदा यही उत्तर देते थे: "अपने आत्माराम को भजो; अन्तरात्मा ही परमेश्वर है।" वे सभी को उनकी योग्यतानुसार भिन्न-भिन्न साधन बताते थे। स्वयं के लिए उन्हें मौन और ध्यान बहुत प्रिय था। वे अपने निवासस्थान 'वैकुंठ-हॉल' में शांत, मौन बैठे रहते थे, और सब लोग भी उनके सम्मुख निःशब्द बैठे रहते थे। भगवान नित्यानन्द सभी संप्रदाय, सभी सिद्धान्त और सभी दर्शनों में सम भाव रखते थे। उनका कहना था कि हर संप्रदाय 'अध्वा' है, 'अध्वा' यानी रास्ता। जैसे एक निश्चित स्थान पर जाने के लिए अनेक रास्ते होते हैं, तो भी सब रास्तों से एक ही क्षेत्र की प्राप्ति होती है; जैसे बम्बई क्षेत्र में पहुँचने के लिए पूना मार्ग से, नासिक से, आगरा से तथा गोवा से जलमार्ग या वायुयान द्वारा भी जाया जा सकता है, वैसे ही सब दर्शनों द्वारा एक ही परमात्मतत्त्व की प्राप्ति होती है, यह बिलकुल सत्य है।

सब प्रकार की उपासना में भगवान नित्यानन्द की समबुद्धि थी, वे सगुण-निर्गुण में भेद नहीं मानते थे। उनका कहना था कि परमेश्वर सब रूप में एक ही हैं। पृथ्वी मंडल में एक ही प्रकार की साधन-सामग्री से अनेक प्रकार की इमारतें बनती हैं—शैवों का शंकर-मन्दिर, वैष्णवों का विष्णु-मंदिर, जैन लोगों का जैन-मंदिर, ईसाइयों का गिरजाघर,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुसलमानों की मसजिद आदि। उन विभिन्न इमारतों में सब अपनी-अपनी भावना के अनुसार—कोई अभिषेक करके, कोई पूजा करके, कोई स्तोत्रपाठ करके तथा कोई प्रार्थना करके, अपना समाधान प्राप्त करते हैं। इन सबकी उपलब्धि एक ही होती है, समाधान, तृप्ति, आनन्द, मस्ती और जीवनमुक्तस्थिति भी एक ही होती है। श्री गुरुदेव का कहना था कि भेद उपासना में और व्यक्ति में होता है, भगवान या प्राप्ति में नहीं। वस्तुतः भेद है किसमें? व्यक्ति में या भगवान में? भेद भगवान में नहीं है, ज्ञानहीन व्यक्तियों में ही है। भगवान में भेद नहीं, द्वेष नहीं, ईर्ष्या नहीं, मत्सर नहीं, छोटे-बड़े का भेद नहीं, ऊँच-नीच की भावना नहीं, मत और पंथ का अभिमान नहीं—'समोऽहं सर्वभूतेषु न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः'—जैसा श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है वैसा ही सभी भूतमात्र में उनकी ही आत्मा का स्फुरण होता है। ईश की दृष्टि में "मया ततमिदं सर्वं जगदव्यक्त-मूर्तिना" मेरी ही नाशरहित व्याप्ति सभी में है। बात ऐसी ही है। भगवान नित्यानन्द कभी-कभी आनन्द की मस्ती में आ कर बोला करते थे कि यह सब मेरी ही व्याप्ति है—"सभी में मैं हूँ-मुझमें सब है।" गुरुदेव नित्यानन्द के पास हर एक रंग के, हर एक ढंग के लोग आया करते थे। उन सब में वे ऐसे ही समभाव से व्यवहार करते थे।

भगवान नित्यानन्द क्रियाशील ब्रह्म-निष्ठ थे, उनकी इन्द्रियाँ स्वाभाविक रूप-से अन्तर्मुख थीं। उनकी आँखें अर्धोन्मी-लित थीं, उनकी दृष्टि विषय यानी रूप-गुणों में नहीं रमती थी, अंतर्मुख हो कर अपनी आत्मप्रभा में ही वे विश्रान्ति लेते थे। एक मौज की बात है—महाभाग संतऋषि श्री तुकाराम कहते हैं कि "विषय तो त्यांचा झाला नारायण"—अर्थात् नारायण ही जिसका एकमात्र व्यसन बन गया है ऐसे वे आत्मा में तन्मय आत्मा-राम पुरुष थे। उनकी आँखें अपनी ही आँखों में रममाण हो गयी थीं, कर्ण अपने ही कर्णमूल के महा मंत्र में विलीन हो गये थे, प्राण अंतर के गंध-तत्त्व में—सुगंध में एकरस हो गया था, रसना विश्वरस के भूल महारस में समरस बन गयी थी, ऐसी स्थिति में इन्द्रियाँ अंतर के सुख-समुद्र को छोड़ के कहाँ जावें? "रसो वै सः"—अन्तरात्मस्थिति रसमय, आनन्दमय, प्रेममय, सुखमय, शांतिमय है ऐसा सर्व महापुरुष कहते हैं।

भगवान नित्यानन्द के पास यदि कोई अभाव का कथन करता तो वे कहते, "अरे, तेरे आत्मा मे सब रे, सब कुछ तेरे अंदर है, कायकू रोता रे, तेरे अन्दर सब है, अंदर खोज।" वे स्वयं भी अंतरर्मुख-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वृत्ति में ही सतत महामग्न अवस्था में रहते थे। कोई महान व्यक्ति भी दर्शन को क्यों न आवे, उन्हें अपनी बन्द आँखें खोलने में बहुत समय लग जाता था। इससे ऐसा समझा जाता है कि वे अंतर की महान दिव्य अवस्था में समरस रहते थे। जैसा वे दूसरे को कहते थे कि—"तेरे अंदर सब है" वैसा ही उन के भीतर सब कुछ था, इस बात की वे स्वयं साक्षी थे। श्री तुकाराम महाराज कहते हैं, "बोले तैसा चाले, त्याचीं वन्दावी पाऊले" अर्थात दूसरे को जैसा उपदेश करते थे, वैसा ही आप भी वर्तन करते थे। उन्हीं की चरण वन्दना कर, वहाँ ही परमात्मा का दर्शन कर, वे ही भगवान हैं, यह सत्य नित्यानन्द भगवान में प्रत्यक्ष दिखायी देता था।

जीवात्मा रसप्रिय, शब्दनादप्रिय, रूपप्रिय, स्पर्शप्रिय और गंधप्रिय है। जगत में जितने प्रकार के व्यवहार हैं, कला कौशल हैं वे सब जीवात्मा के आनन्द के लिए हैं। मानव रात-दिन सुख की खोज करता रहता है। सुख की खोज करते-करते अपने को भी खो देता है। अनन्त प्रकार के प्रलोभनों में पछताते हुए, नानाविध तृष्णा की अग्नि में जलते हुए, महामृगजलरूप आशा की बाढ़ में बहते हुए, त्रिताप की मार से हक्के-बक्के होते हुए जीवात्मा का यह महान दयनीय जीवन अत्यन्त दुःखमय तथा करुणामय है। फिर भी वह इस लाचार जीवन को न तो छोड़ता है, न तो उससे छूटने का उपाय करता है और न तो छुटे हुए का मंत्र लेता है। क्या कहना—यही अविद्या है। हर रोज सुबह से शाम और शाम से सुबह होती है। सुबह से शाम-शाम से सुबह होने पर एक दिन, आठ दिनों का एक हफ्ता, चार हफ्तों का एक महीना, बारह महीनों का एक वर्ष—इस प्रकार गिनते-गिनते मनुष्य की आयुष्य समाप्त हो जाती है। मन की मन में ही रह जाती है और वह जैसा आया था, वैसा ही चला जाता है। कौन जानता है काल का कर्त्तृत्व? क्यों जीव चेतता नहीं? जैसे तुम आये जाते हो वैसे ही पहले कई जीवात्मा गये हैं। उनको देख कर भी तुमने कोई सुधार नहीं किया। बस भ्रम-नदी में बहते रहते हो और खुद को बहुत अकलमन्द समझते हो! स्वयं हो परम निराधार और दूसरों को आश्वासन देते हो! स्वयं पूरे दुखी हो और दूसरों को सुख के लिए मार्ग बताते हो। ——क्या इससे भी बड़ा कोई आश्चर्य हो सकता है? अरे जीव तुम होश में हो या नींद में? इस प्रकार की बातें कह कर श्री गुरुदेव अपने भक्तों को अंतरखोज के लिए प्रवृत्त करते थे।

अन्तरात्मा में सब कुछ है। कस्तूरी मृग की नाभि में कस्तूरी होती है फिर भी कस्तूरी मृग भ्रम के कारण इस सुगंध की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने में न करके उसे बाहर ढूँढता है। पश्चिम दिशा से आनेवाली वायु के वेग में प्रवाहित दिव्यगंध को न समझने के कारण पश्चिमाभिमुख दौड़ते-दौड़ते आखिर हृदय फटने से वह मर जाता है। नाभिकस्तूरी जन मृग को चीर कर कस्तूरी ले लेते हैं, बस यही गति इस जीव की भी होती है। वह सुख के लिए अनेक प्रकार का व्यवहार करते हुए भी सुख को नहीं देखता, मरते समय में यदा-कदा जब महापुरुष का दर्शन होता है, तभी वह पूर्ण सुखी होता है।

जब कभी भी देखो श्री गुरुदेव अंतरात्म-स्थिति में ही मग्न रहते थे। बाह्य की अपेक्षा अंतर में अनेक गुना सुख है। सारे बाह्य-विषय अंतर में पूर्णरूप से हैं। अंतररूप, अंतरशब्द, अन्तररस, अंतर-स्पर्श, अंतरगंध ये सब महान होते हैं। अंतरात्म-स्थिति में एक दिव्य तेज है, इस तेज को देखते-देखते योगीजन अपने को भी भूल जाते हैं। हमारे अंदर एक ऐसा तेज है जिसका वर्णन करने के लिए न भाषा है, न वाणी है। वस्तुतः यह शरीर एक दृष्टि से मांसमय, मलमूत्र से युक्त, अशुचि और कुरूप कहा जाता है। यह सच्ची बात है कि जिस शरीर से वह दिव्य-ज्योतिरूप चेतन अलग हो जाता है, उस निचेष्ट शरीर को देख कर लोग डर जाते हैं। कितना ही स्नेहमय शरीर क्यों न हो उसके प्रति घृणा आ ही जाती है। उस प्रेत को देखने से आँखें इनकार कर देती हैं। जो इस प्रेतरूप शरीर को तेज-युक्त, प्रेमयुक्त, सौन्दर्ययुक्त, सौजन्य-युक्त बनाता है वह आत्मज्योति प्रकाशक चेतनाशक्ति कितनी सुन्दर होगी? कितनी तेजोमय होगी? कितनी शक्ति-शाली होगी? उसमें क्या मिठास होगी? उसको वही जानता है जो अंतरात्मा में रमा है। भगवान नित्यानन्द कहते थे, "अरे जीवात्मा, तू उस अंतररूप को देख, वह कितना मीठा है, कैसा रुचिकर और आनन्दमय है। उस अंतरसमुद्र का एक बिन्दु भी तुमको बाहर नहीं मिलेगा। इसलिये "ध्यान कर, ध्यान कर"—ऐसा उनका आदेश था।

दूसरा है अंतरशब्द। मधुर शब्द सभी को बहुत प्रिय लगते हैं। वन के पक्षी मधुर स्वर से अपने अंतरहेतु का कथन करते हैं। इस दिव्य अंतरशब्द को नाद भी कहते हैं। यह दिव्य मधुर नाद या संगीत एक महान रुचिकर और प्रिय विषय है। यह दिव्य नाद महदाकाश में गूँज उठता है, और इस नादानुसंधान से योगीजन अपने आपको अंतर में समरस बना देते हैं, नाद में ब्रह्मानन्द प्राप्त है। नाद परब्रह्म को साक्षात करनेवाली एक महान शक्ति है। नाद के अनेक प्रकार भी हैं और यह शास्त्रीय कथन है कि जो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विधि से नाद का श्रवण करता है उसके कष्ट, पीड़ा आदि सर्व रोग नष्ट हो कर काया आवरणरहित हो जाती है। नाद तुरीय स्थान की प्राप्ति करवा देता है। नाद में रमता हुआ साधक ब्रह्माकार बन जाता है। भगवान नित्यानन्द कहते थे "वाह्य संगीत क्या चीज है? अंतर-संगीत सुनो उसमें आत्मा की तृप्ति है। वे आत्मा के बोल हैं, मन अन्तर्मुख करके सुनो।"

तीसरा है अंतररस। अंतर-रस को महारस कहते हैं। नाद सुनते-सुनते कर्णमूल में चित्त एकाग्र हो जाने से जब जिह्वा ऊपर के तालुगोलक में लटक जाती है तब अंतर-आनन्द के कारण सहस्रार से अमृत का झरना बहने लग जाता है। उस अमृत का एक सूक्ष्मबिन्दु भी इतना दिव्य मिठासयुक्त है कि सारे जगत का समस्त अन्नरस एकत्र किया जाये तो भी उसके समान नहीं हो सकता। अंतर के इस महान अमृत-रस का पान करना चाहिए, इसे भगवान नित्यानन्द 'अन्त-रात्मा-रस' कहते थे।

चौथा है अंतरस्पर्श। जब हृदयस्थान का चक्र खुल जाता है तब अंतर-आनन्द के प्राण द्वारा सर्वांग में प्रसारित होने से एक प्रकार के दिव्य स्पर्शसुख की अनुभूति प्राप्त होती है। इस सुख की अनुभूति प्राप्त होने से योगी नाचता है, कूदता है, उन्मत्त-सा बन जाता है। वह प्रेम आवेश में आ कर पूर्णकाम की अनुभूति से अपने को कृतकृत्य समझता है। भगवान नित्यानन्द कहते थे "अरे तेरा सर्व तेरे अंदर ही पूर्ण रूप में वर्तमान है।"

गुण, कर्म तथा संगति के अनुसार मानव अनेक प्रकार का हो जाता है। कोई सद्गुणी, कोई भ्रष्ट, कोई पंडित, कोई मूढ़, कोई राजा तो कोई दरिद्र, कोई धर्मात्मा, कोई लुटेरा, कोई सज्जन, कोई दुर्जन, फिर भी गुरुदेव की दृष्टि में सब समान थे। वे प्रसंग पर छोटे से छोटे व्यक्तित्व से भी सहानुभूतिपूर्ण बात करते थे। गुरुदेव के किसी भी व्यवहार में रंचमात्र आसक्ति भी कभी नहीं दिखायी पड़ती थी।

गुरुदेव ने गणेशपुरी में ई. सन् १९३० समाधि-दिन तक लीलामय जीवन बिताया। जब वे पहली बार गणेशपुरी में आये तो गणेशपुरी एक ऐसा एकांत स्थान था जहाँ आने जाने का रास्ता भी नहीं था तथा भीमेश्वर महादेव की इमारत को छोड़कर अन्य कोई इमारत भी नहीं थी। श्रीगुरुदेव शुरू में एक सादे झोंपड़े में भीमेश्वर के आसपास में ही रहते थे। उस समय यह जगह एक निर्जन वन के समान थी। यदि यहाँ कोई भक्तजन आये तो क्षणभर के विश्राम के लिए कोई स्थान

[शेष पृष्ठ ६४ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूर्या का विवाह

सविता ने अपनी पुत्री सूर्या का विवाह उस वर के साथ कर दिया, जिसकी वह हृदय से कामना करती थी।

रैम्या छन्द वधू सूर्या की सहेली बन गया था। नाराशंसी ऋचा उसे घर लिवा ले गयी थी।

अति सुन्दर था सूर्या का वेश, जो गाथा गीत से सुसज्जित था। चिन्तन था उसकी शैया का सिरहाना। उसकी आँखों में अन्तर्दृष्टि का अंजन लगा हुआ था। आकाश और पृथ्वी थे उसके रत्नाभरण।

ऐसी सज्जा से सज कर ही सूर्या अपने पति के घर गयी थी।

सूर्या के पति ने सूर्या से कहा था: मैं सौभाग्य की प्राप्ति के लिए तेरा हाथ अपने हाथ में लेता हूँ, कि तू मेरे-अपने पति के साथ दीर्घकाल तक जीकर सुख-भोग करे।

भग, अर्यमा, सविता, पुरन्धिर आदि देवताओं ने तुम्हें मुझको प्रदान किया है कि तुम मेरे घर की भार्या और स्वामिनी हो कर रहो।

देवता वधू को आशीर्वाद देते हुए कहते हैं: पूषन् तेरा हाथ झालें, और अब से तेरे जीवन का परिचालन करें। दोनों अश्विनीकुमार अपने रथ में तेरा वहन करें।

तू अपने पति-गृह में जा, और उसकी गृह-स्वामिनी बन कर रह। तू उस घर की अधिष्ठात्री हो कर सर्व को सम्बोधन करेगी।

प्रस्तुति अ. भा.

—ऋग्वेद

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मृत्यु क्यों होती है

● श्री माँ

जिनकी चेतना जरा भी जागृत हो चुकी है उन सभी व्यक्तियों ने अपने जीवन में कम से कम एक बार तो यह प्रश्न किया है कि मृत्यु क्यों होती है ? प्रत्येक प्राणी को गभीरतम प्रदेश में अधिक जीवित रहने, विकास करने तथा जीवन को लम्बा बनाने की एक माँग मौजूद है इसीलिए मृत्यु का संपर्क उन्हें आघात पहुँचाता है और उनमें जुगुप्सा उत्पन्न कर देता है। कुछ संवेदनशील प्राणियों में तो वह भय और कुछ में क्रोध भी उत्पन्न कर देता है। व्यक्ति अपने से पूछता है: "यह क्या मायावी नाटक है जिसमें मनुष्य को बिना चाहे और बिना समझे भाग लेना पड़ता है ? यदि मरना ही है तो पैदा होने का क्या अर्थ ? प्रगति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

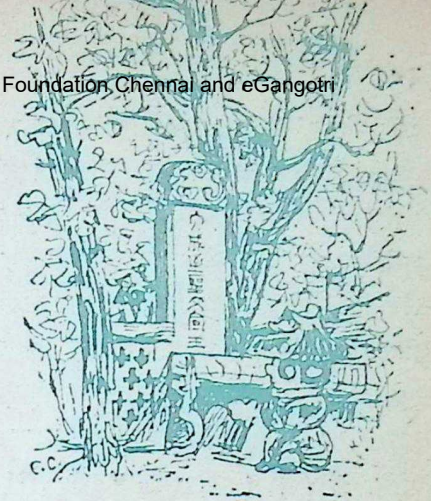

श्री अरविन्द हमें यह बताते हैं कि मृत्यु जड़-प्रकृति की चेतना में पूर्णता और विकास की मांग को जागृत करने का एक अनिवार्य साधन है। उसके बिना प्राणी जिस अवस्था में होते, उसी में अनिश्चित काल के लिए पड़े रहते हैं।

उन्नति और अपनी शक्तियों के विकास के लिए किये गये प्रयत्नों से क्या लाभ, यदि अंत में अवनति और पीछे नाश और विघटन ही होता है।" कुछ तो चुपचाप निष्क्रिय भाव से भावी को कठोर मानकर उसके अधीन हो जाते हैं, कुछ विद्रोह करते हैं अथवा यदि वे कम शक्तिशाली हुए तो निराश हो जाते हैं। पर ये प्रश्न सदा ही सबके सामने उठते रहते हैं। यदि उस सबके पीछे कोई चेतन संकल्प विद्यमान लगता है तो वह दानवी ही प्रतीत होता है।

किंतु श्री अरविन्द हमें यहाँ बताते हैं कि मृत्यु जड़-प्रकृति की चेतना में पूर्णता और विकास की माँग को जागृत करने का एक अनिवार्य साधन थी। उसके बिना, प्राणी जिस अवस्था में होते उसी में अनिश्चित काल के लिए संतोष किये पड़े रहते। "मृत्यु वह प्रश्न है जिसे 'प्रकृति' सदा ही 'जीवन' के सामने उसे यह स्मरण कराने के लिए रखती है कि उसने अभी तक अपने को नहीं ढूंढा है। यदि मृत्यु का घेरा न होता तो प्राणी सदा के लिए एक अपूर्ण ढाँचे के साथ बंधा रहता। मृत्यु द्वारा पीछा किये जाने पर वह पूर्ण जीवन के विचार के प्रति जागृत हो जाता है तथा उसके साधन और उसकी संभावना की खोज करता है।"

इसके अतिरिक्त, हम जानते हैं कि प्रत्येक वस्तु सर्वदा विकास एवं उन्नति करती रहती है, दूसरे शब्दों में समस्त सृष्टि, समस्त विश्व एक पूर्णता की ओर विकसित हो रहा है; और ज्यों-ज्यों व्यक्ति आगे बढ़ता जाता है, त्यों-त्यों वह पूर्णता पीछे हटती प्रतीत होती है। कारण, जो एक समय पूर्ण प्रतीत होता था, वह पीछे वैसा प्रतीत नहीं होता। सत्ता की चेतना-सम्बन्धी सूक्ष्मतम अवस्थाएँ विकास की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसी दिशा का उस हद तक अनुसरण करती हैं जिस हद तक वे अपने आपको चरितार्थ कर लेती हैं और वे जितनी अधिक सूक्ष्म होती हैं उनकी प्रगति की लय दिव्य विकास की लय के उतनी ही निकट पहुँचती है। किंतु यह जड़ जगत स्वभाव से ही कठोर है, यहाँ रूपान्तर बड़ा धीमा, अत्यंत धीमा होता है, इतना धीमा कि काल की गणना के लिए जैसा कि मानव-चेतना उसे देखती है, वह करीब-करीब दृष्टि में ही नहीं आता। इसका परिणाम यह होता है कि बाह्य और आंतरिक चेष्टा में सदा ही संतुलन का अभाव रहता है। संतुलन के इस अभाव ने, विकास-क्रिया का अनुसरण करन में बाह्य विकास की असमर्थता के कारण, विघटन और आकार के परिवर्तन को एक आवश्यकता बना दिया है।

तो भी, यदि हम इस जड़ पदार्थ में इतनी चेतना फूँक सकें कि उसकी विकास-क्रिया सत्ता के सूक्ष्मतर भागों के साथ-साथ चलने लगे और यदि वह इतना नमनीय हो जाये कि आंतरिक विकास का अनुसरण कर सके, तो संतुलन नहीं टूटेगा और न मृत्यु की आवश्यकता ही होगी।

अतएव वर्तमान समय में, क्योंकि हम इसके बारे में कुछ अधिक जानते हैं, हमें रूपान्तर को अवश्य ही साधित करना है, ऐसा हम अपने उपलब्ध साधनों की सहायता से तथा 'शक्ति', 'चेतना' और नयी 'सामर्थ्य' का आवाहन करके करेंगे; यह शक्ति जड़-पदार्थ में उस स्पन्दन का प्रवेश करा सकती है जिस में उस रूपान्तर करने तथा नमनीय, कोमल और विकसनशील बनाने की सामर्थ्य मौजूद है।

यह स्पष्ट है कि इस रूपान्तर के रास्ते में जो सबसे अधिक गंभीर बाधा आती है वह वस्तुओं के वर्तमान स्वरूप के प्रति आसक्ति है। प्रकृति अपने पूरे कार्य में यह देखती है कि जिन व्यक्तियों की चेतना गहन है वे जल्दी-जल्दी आगे बढ़ना चाहते हैं। पर वह घुमावदार रास्ते, क्रमिक परीक्षण, रुकावटें और बार-बार किये गये आरम्भ एवं नयी खोजें पसन्द करती है। मार्ग की सनकी घटनाएँ तथा अनुभव की आकस्मिकता भी उसे पसंद है। हम यह कह सकते हैं कि यह रूपान्तर जितना अधिक समय ले उतना ही प्रकृति का मनोरंजन होता है।

किंतु बढ़िया से बढ़िया खेल से भी तुम तंग आ जाते हो। एक ऐसा समय आता है जब तुम्हें उसे बदलने की आवश्यकता होती है। और तब तुम एक ऐसे खेल का स्वप्न देखते हो जिस में आगे बढ़ने के लिए किसी चेतना को नष्ट करने की जरूरत नहीं होती बल्कि जिस में उन्नति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के लिए एक ऐसा उत्साह होगा कि तुम्हें सदा ही नये साधन और नये भाव प्राप्त होंगे। इन में प्रेरणा इतनी तीव्र होगी कि दुर्बलता, निर्बोधता, थकावट और तन्द्रा सब समाप्त हो जायेंगी।

ज्यों ही शरीर कुछ उन्नति कर चुकता है उसे बैठ जाने की आवश्यकता क्यों पड़ती है? वह थक जाता है और कहता है, "ठहरो, मुझे आराम करने के लिए कुछ समय दो।" वस्तुतः यही बात उसे मृत्यु की ओर ले जाती है। यदि उसके अंदर सदा पहले से अधिक अच्छा करने का, सदा अधिक स्पष्ट, अधिक सुन्दर, अधिक और सदा युवा बना रहने का यह उत्साह होता तो व्यक्ति 'प्रकृति' की इस भयंकर प्रणाली से बच सकता था।

प्रकृति के लिए इस में से कोई भी चीज महत्वपूर्ण नहीं है। वह 'समग्र' की ओर देखती है, वह इस बात का ख्याल रखती है कि वहाँ से कोई चीज खो न जाये। वह जानती है कि यह केवल अगणित, अत्यंत छोटे और तुच्छ तत्त्वों का मिश्रण है जिसका उद्देश्य किसी नयी चीज को बाहर निकालना है। किंतु यह खेल सबके लिये मनोरंजक नहीं होता, और यदि कोई उसके समान और उस से अधिक विशाल चेतना प्राप्त कर ले तो वही कार्य भिन्न तरीके से क्यों नहीं हो सकता?

यही समस्या आजकल हमारे सामने है, और अतिमानसिक शक्ति की नयी सहायता प्राप्त हो जाने के बाद इस बृहत् खेल को अधिक सुन्दर, अधिक समस्वर, अधिक सच्चा, दूसरे शब्दों में अधिक दिव्य बनाने के लिए हमें क्यों नहीं हाथ में ले लेना चाहिये?

यदि कुछ मस्तिष्क इतने बलशाली हों कि वे इस शक्ति को ग्रहण कर सकें तथा इसे चरितार्थ करने के आवश्यक कार्य को विधिवत् कर सकें तो अभी इतना ही पर्याप्त होगा। कुछ ऐसी 'चेतनाएँ' होनी चाहियें जो 'प्रकृति' को यह विश्वास दिला सकें कि उसके साधनों के अलावा और साधन भी हैं।

यह एक पागलपन-सा प्रतीत होता है, पर समस्त नयी वस्तुएँ जब तक वास्तविकता में परिणत नहीं हो गयीं, वे पागलपन ही प्रतीत होती रही हैं। अब वह समय आ गया है जब इस 'पागलपन' को चरितार्थ हो जाना चाहिये। और क्योंकि हम सब यहाँ मौजूद हैं, और यद्यपि तुममें से कोई यहाँ रहने का कारण भी नहीं जानते, जब कि ये कारण अत्यन्त सचेतन हैं, हम इस पागलपन को चरितार्थ करने का निश्चय कर सकते हैं। कम से कम यह जीवित रहने के कष्ट का उचित पुरस्कार तो हो ही जायेगा।

अनु. विमल के. गुप्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत के आदि गुरु
भगवान वेद-व्यास का जन्म

देवी भागवत पुराण

सूत बोले: 'हे ऋषियों, एक बार तीर्थ-यात्रा के लिए जाते हुए महातेजस्वी पराशर मुनि यमुना के रमणीय किनारे पर आये। उन धर्मात्मा ने उस समय भोजन करते हुए मत्स्य-गंधा के पालक पिता मछियारे से कहा: 'तू मुझे नाव से यमुना के उस तट पर पहुँचा दे।'

मुनि का यह वचन सुनकर तट पर भोजन कर रहे मछियारे ने अपनी सोलह वर्ष की सुन्दर पुत्री मत्स्यगंधा से कहा: हे पुत्रि, तू इन मुनि को नाव से सामने के किनारे पर ले जा। ये धर्मात्मा तपस्वी वहाँ जाना चाहते हैं।' पिता की आज्ञा पा कर वह वसु-पुत्री मत्स्यगंधा मुनि को नाव में बैठाकर उस पर ले जाने लगी। उस समय यमुना के जल में यात्रा करते वे मुनि उस सुन्दर नेत्रोंवाली कन्या को देखकर भावि-भाव से तथा दैवयोग से मोहाविष्ट हो गये। प्रकट यौवनवाली उस सुन्दरी बाला को देखकर, अनुराग-विह्वल हो मुनि ने अपने दाहिने हाथ से उसके हाथ का स्पर्श किया। उस समय श्याम कटाक्षवाली उस कन्या ने हास्यपूर्वक मुनि से ये वचन कहे: 'आपके कुल, शास्त्र-ज्ञान, और तप के लिए क्या यह योग्य है? आप वशिष्ट के पुत्र हैं, परम कुलीन और शीलवान हैं। इस प्रकार मोह-पीड़ित हो कर आप क्या करना चाहते हैं? हे श्रेष्ठ ब्राह्मण! पृथ्वी पर मनुष्य-जन्म दुर्लभ है। और उसमें भी ब्रह्मणत्व और भी दुर्लभ है, ऐसा मैं मानती हूँ। हे विप्रेन्द्र! कुल, शील तथा शास्त्र-ज्ञान से आप ब्राह्मणों में उत्तम और धर्मवेत्ता हैं। फिर भी मछलियों की गंधवाली मुझपर आप क्यों इस प्रकार आसक्त हो रहे हैं। हे अमोघ बुद्धिवाले ब्राह्मण! मेरे शरीर में कौन सी वस्तु देखकर आप यों कामातुर

CC-0.In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो कर, मेरा हाथ पकड़ने को व्याकुल हो गये हैं ? आप अपने धर्म को क्यों नहीं समझते ?'

मुनि को ऐसे वचन कहकर वह कन्या मन ही मन विचार करने लगी: 'अहो, यह ब्राह्मण आज मन्दबुद्धि होकर मुझे ग्रहण करने को आतुर हो गया है, और मुझे देखकर निविड़ शृंगाररस में डूब गया है। इसका मन कामदेव के बाण से बिंध कर व्याकुल हो गया है और शाप के भय से इसके विरुद्ध यहाँ कोई कुछ भी करने में समर्थ नहीं है।' ऐसा विचार कर उस बाला ने महामुनि से कहा: 'हे महाभाग, धैर्यधारण करिये। मैं आपको तट के पार ले जा रही हूँ।'

सूत बोले: पराशर मुनि हितपूर्वक उसका यह वचन सुनकर, उसका हाथ छोड़कर

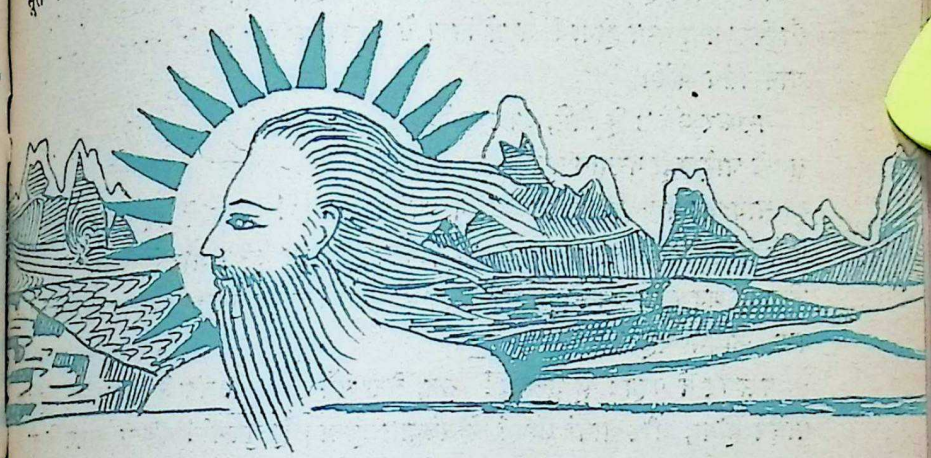

अपने स्थान पर चुपचुाप खड़े रह गये और यथा समय नदी के उस पार पहुँच गये। लेकिन फिर मोहविह्वल होकर मुनि ने मत्स्यगंधा का हाथ पकड़ लिया। तब काँपती हुई उस कन्या ने सामने खड़े मुनि से कहा: 'हे श्रेष्ठ मुनि, मैं दुर्गन्धी हूँ। क्यों आपको मुझसे ग्लानी नहीं होती ? समान रूप वाले स्त्री-पुरुषों का संयोग-मिलन ही सुखकारी हो सकता है।'

यह सुनकर मुनि ने क्षणभर में ही उस कन्या को रूपान्तरित कर दिया: उसकी देह से सुगन्ध प्रवाहित होकर एक योजन तक व्याप गयी: उसके रूप और सौन्दर्य की आभा से दिशाएँ जगमगा उठीं। यों वह श्यामा सुन्दरी कस्तूरी-सी महकने लगी, सौन्दर्य की उन्मादना से कण-कण को मूर्छित करने लगी। तब फिर अनुराग-विह्वल होकर मुनि ने उसे अपने दायें हाथ से पकड़ लिया। तब सत्यवती नाम की उस सुन्दर कन्या ने अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को पकड़ने को व्याकुल उस मुनि से कहा: हे मुने, चारों ओर लोगों का आवागमन हो रहा है। और सामने के तट पर मेरे पिता भी खड़े हैं। यह अति दारुण देहासक्ति मुझे प्रीतिकर नहीं लग रही है। इसी से हे मुनि श्रेष्ठ, आप प्रतीक्षा करें, अभी रात होने ही वाली है, आप ज्ञानीजन हैं...स्वयं ही समझ सकते हैं। .....'

मुनि को उस बाला का कथन योग्य ही जान पड़ा। तब उन उदार बुद्धिवाले मुनि ने शीघ्र ही अपने तप के बल से ओस की वर्षा आरम्भ कर दी। बात की बात में यमुना का वह रमणीय तट घटाटोप धुंध से छा गया। तब सत्यवती ने कोमलतापूर्वक ये वचन कहे: 'हे ब्राह्मण श्रेष्ठ! मैं कन्या हूँ। आप तो अपनी कामना पूर्ण करके चाहे जहाँ चले जायेंगे। और हे तपोनिधि! आप अमोघ वीर्यवाले हैं। इसी से यदि मैं सगर्भा हुई तो मेरी क्या दशा होगी? अपने पिता से मैं क्या कहूँगी? हे महाभाग, आप ही मेरा मार्ग-दर्शन करें।'

पराशर बोले: 'हे प्रिये, आज तू मेरा प्रिय करके भी कन्या ही रहेगी। हे भीरु स्त्री, तू जो चाहे वही वरदान मुझसे माँग ले।...'

सत्यवती ने कहा: 'हे अनन्त विभूतियों के स्वामी! लोक में मेरे माता-पिता न जान पायें और मेरा कन्या-व्रत नष्ट न हो, वैसा ही आप करें। और हे द्विजोत्तम! आपके जैसा ही अद्भुत पराक्रमी पुत्र मुझे प्राप्त हो और मेरी यह सुगन्ध तथा यह नव-नूतन यौवन सदा कायम रहे।'

पराशर ने कहा: 'हे सुन्दरी! सुन, तेरा पुत्र विष्णु के अंश से जन्म लेगा, वह परम पवित्र होगा, और तीनों लोकों में प्रख्यात होगा। हे सुवर्णा! किसी कारण से ही मैं तेरे प्रति कामासक्त हुआ हूँ। हे सुमुखि! ऐसा महामोह इससे पूर्व मेरे हृदय में कभी नहीं जागा। अप्सराओं के रूप को देखकर भी मैंने सदा धैर्य धारण किया है। इसी से जान ले, कि दैव के योग से ही मैं तुझे देख कर कामवश हुआ हूँ। इसमें कोई गंभीर प्रयोजन है, ऐसा ही तुझे समझना चाहिये। सचमुच, दैव का उल्लंघन करना संभव नहीं है। जो ऐसा न होता तो तुझ जैसी अत्यन्त दुर्गन्धवाली को देख कर मैं मोहाविष्ट क्यों होता? हे सुन्दर मुखवाली! तेरा पुत्र पुराणों का कर्ता, वेदों का ज्ञाता, वेदा का विभाग करनेवाला और त्रिभुवनजयी ख्याति का स्वामी होगा।'

सूत बोले: ऐसा कहकर वशवर्ती हुई उस सत्यवती के साथ रमण करके मुनि श्रेष्ठ पराशर तुरंत ही यमुना के जल में स्नान करके चले गये, और सत्यवती भी तुरन्त ही सगर्भा हो गयी। उसने यमुना के द्वीप पर ही दूसरे कामदेव जैसे सुन्दर पुत्र को जन्म दिया।

CC-0.In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस तेजस्वी पुत्र ने जन्म लेते ही अपनी माता से कहा: 'हे माता, तुम अपनी इच्छापूर्वक चाहे जहाँ चली जाओ। मैं अब तप करने जाता हूँ। हे महाभाग्यवती! तुम जब मुझे याद करोगी, तभी मैं अपना स्वरूप तुम्हें दिखाऊँगा। हे माता, जब भी तुम्हारा कोई बड़ा काम हो, तब तुम मुझे याद करना। उस समय मैं तुरन्त ही आऊँगा। तुम्हारा कल्याण हो। चिन्ता छोड़कर तुम सुख से रहो।'

ऐसा कहकर वे महातेजस्वी, महापराक्रमी व्यास मुनि तप करने के लिए वन में चले गये, और सत्यवती भी अपने पिता के पास चली गयी, उसने उस बालक को जन्म दे कर द्वीप में रख दिया था, इस से वह द्वैपायन के नाम से प्रसिद्ध हुआ। और वह विष्णु के अंश से जन्मा था, इसी कारण जन्म लेते ही बड़ा हो गया, और अनेक तीर्थों में स्नान करता हुआ तप करने लगा।

इस प्रकार द्वैपायन व्यास का जन्म, पराशर के द्वारा सत्यवती की कोंख से हुआ था। उन्होंने कलियुग को आया जानकर वेद को शाखाओं में विभक्त किया और वेद का विस्तार करने के कारण ही वे वेद व्यास के नाम से विख्यात हुए। फिर उन्होंने पुराणों और संहिताओं की रचना भी की, और पुराणों में श्रेष्ठ महाभारत रचा। उसी प्रकार वेदों का विभाजन तथा ग्रथन करके उन्होंने सुमन्त, जैमिनी, पैल, वैशम्पायन, असित, देवल आदि शिष्यों तथा अपने पुत्र शुकदेव को सर्व शास्त्रों का ज्ञान प्रदान किया।

सूत बोले: 'हे उत्तम मुनियों! इस प्रकार मैंने तुम्हें महान दैवी प्रयोजन के अन्तर्गत सत्यवती के गर्भ से आदि गुरु भगवान वेद व्यास के जन्म की कथा सुनायी। इस अनोखे अवतरण के विषय में किसी प्रकार का संशय मन में नहीं लाना चाहिये।

महापुरुषों के चरित्रों में से गुणों को ही ग्रहण करना चाहिये। सत्यवती से व्यास मुनि की उत्पत्ति, मछली के पेट से सत्यवती की उत्पत्ति, उसी प्रकार सत्यवती का पराशर मुनि तथा शान्तनु राजा के साथ होनेवाला संयोग, यह सब विशिष्ट कारण और प्रयोजन से ही घटित हुआ था। जो ऐसा न होता तो पराशर मुनि का चित्त कामाधीन क्यों होता! वे मुनि धर्म को जानते थे, फिर भी वे काम में क्यों प्रवृत्त हुए? इसी से इस आश्चर्यजनक उत्पत्ति को सकारण कहा गया है। इसे सुनकर मनुष्य सर्व प्रकार के पापों से छूट जाता है। जो भी मनुष्य इस शुभ आख्यान को सुनता है, वह दुर्गति को प्राप्त नहीं होता और सदा सुखी रहता है।

प्रस्तुति : ऐन्द्रिला

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

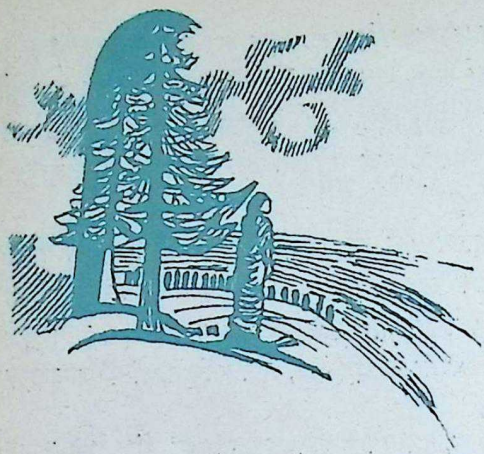

आत्म-विस्मरण

अमृता भारती

आँखें जब अन्तर्मुद्रित हो जाती हैं
मैं चली जाती हूँ
कहीं दूर—
लेट जाती हूँ
बहुत ऊँचे किसी रिक्त मंदिर में।
चारों ओर से उड़-उड़ कर आती है ख़ुशबू
फूल सीढ़ियाँ चढ़ते हैं :
क्रमशः खो जाता है मंदिर
खो जाती है देव-प्रतिमा
सीढ़ियाँ भी शून्य में
टँगी रह जाती हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११ जुलाई १९६५

और लहर उठता है
मेरे चारों ओर
नीले पीले फूलों का
रेशमीन सागरः

पूछती हूँ अपने से आप ही
कौन है वह--
जिसने फूलों का सागर बनाया
पवन ?
कौन है वह--
जो मुझे शून्य आकाश में रख गया
स्वप्न ?
उत्तर नहीं मिलता
और मैं ऊपर
बहुत ऊपर चली जाती हूँ
छूट जाता है नीचे
फूल-सागर
धूप-गंधिल बादल
कहीं दूर भटक जाते हैं:
बस, कहीं से तैर कर आता है
कोई अजाना क्षण
और शेष रह जाता है
अपने निकट
अपना ही विस्मरण।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह आत्म का ज्ञाता, उस परम ब्रह्म के धाम को जानता है, जिस पर आधारित यह विश्व आभा से जाज्वल्यमान है। इच्छा से रहित जो ज्ञानीजन परम पुरुष की उपासना करते हैं, वे पुनर्जन्म के बीज शुक्र पर विजय पा लेते हैं।

जो सर्वदा कामनाओं का चिन्तन करता हुआ, उनका, पोषण करता है, वह उन कामनाओं के कारण यहाँ-वहाँ बार-बार जन्म लेता रहता है। पर जो आप्तकाम है, जिसकी कामनाएँ परिपूरित हो गयी हैं, जिसने आत्म का साक्षात्कार कर लिया है, उसकी सारी कामनाएँ इस पृथ्वी पर ही निःशेष हो जाती हैं।

इस आत्म को न तो शास्त्रों के अध्ययन से पाया जा सकता है, न मेधा से पाया जा सकता है, न ज्ञान के अधिक श्रवण से पाया जा सकता है। इसे वही पा सकता है, जिसे यह आत्म चुन लेता है। उसी के समीप यह आत्म अपना सच्चा स्वरूप प्रकाशित करता है।

वह आत्म का ज्ञाता

जो बलवान नहीं है, तत्पर और प्रामद-विहीन नहीं है, जो समुचित रूप से संयमी नहीं है वह इस आत्मा को प्राप्त नहीं कर सकता। पर यदि कोई ज्ञानीजन बल, तत्परता और संयमपूर्वक साधना करे तो निश्चय ही उसकी आत्मा ब्रह्मधाम में प्रवेश कर सकती है।

जब ऋषिगण उस ब्रह्म तक पहुँच जाते हैं, तो वे अपने ज्ञान के द्वारा परम तृप्ति कर लेते हैं। वे अपनी आत्मा में परिपूर्ण हो जाते हैं, वे वीतराग और प्रशान्त हो जाते हैं। ये ज्ञानीजन एकाग्र चित्त से सर्व शक्तिमान को सर्वांगीण रूप से प्राप्त करके स्वयं निखिल में प्रवेश कर जाते हैं।

वेदान्त के ज्ञान को सुनिश्चित रूप से जान कर, संन्यास योगद्वारा अपने चित्त की शुद्धि करके, ये योगीजन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परम अमृत अवस्था का भोग करते हुए, मृत्यु के समय ब्रह्म-लोकों में मुक्त हो जाते हैं।

उनकी पन्द्रह कलाएँ अपने तत्त्वों में लौट जाती हैं, उनकी इन्द्रियों की शक्तियाँ अपने- अपने देवताओं के पास चली जाती हैं। उनका विज्ञानमय आत्मा और उनके सारे कर्म परम अव्यय के साथ एकाकार हो जाते हैं।

जैसे बहती नदियाँ, अपना नाम और रूप खो कर समुद्र में लीन हो जाती हैं, इसी प्रकार ज्ञाता पुरुष, नाम और रूप से मुक्त हो कर, परात्पर दिव्य-पुरुष में लीन हो जाता है।

निश्चय ही जो परब्रह्म को जानता है वह स्वयं ब्रह्म-स्वरूप हो जाता है। उसके वंश में ऐसा कोई न जन्मेगा जो ब्रह्म को न जानता हो। वह दुख-शोक से ऊपर उठ जाता है। वह पापों से परे हो जाता है। हृदय के बन्धनों से मुक्त हो कर वह अमर हो जाता है।

यही वह सत्य है, जिसे दृष्टा अंगिरस ने पूर्व काल में प्रकाशित किया था। ऋषियों के शासन का जो व्रती नहीं है, वह इसे पढ़ने का अधिकारी नहीं है। परम ज्ञानी ऋषियों को नमन हो। ब्रह्मज्ञानी ऋषियों को नमन हो।

—मुण्डकोपनिषद्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

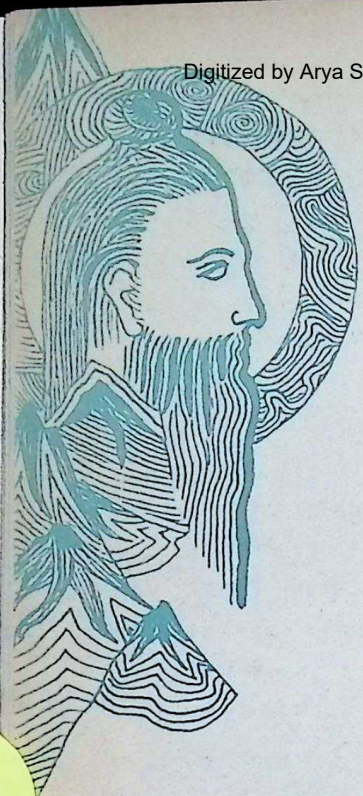

गुरु-तत्त्व की वैज्ञानिक व्याख्या

गौरीशंकर श्रीवास्तव

गुरुपूर्णिमा या व्यासपूर्णिमा के पुण्य पर्व पर श्रीसद्गुरु का ध्यान, चिन्तन, मनन और पूजन कर पाप-ताप-दग्ध जीवन की मुक्ति के मार्ग को प्रशस्त करना भारतीय जन जीवन का एक अनिवार्य अंग रहा है। यद्यपि अब इस परम्परा में शिथिलता आ गयी है, फिर भी अनेक धर्मप्राण हिन्दू साक्षात् मानव गुरु या व्यास-प्रतिमा अथवा विष्णु, शंकर या श्री हनुमानजी का पूजन कर संतोष लाभ करते हैं। आज के इस वैज्ञानिक या अणु-युग का मानव पदार्थवादी, अविश्वासी या कुतर्की हो कर आचार और विचार में अत्यन्त उच्छृंखल, उपलब्ध तथाकथित सुख पर प्राण देनेवाला तथा सच्चे श्रेय, सुख की उपेक्षा करनेवाला बन गया है। वह अणु और उद्जन शक्ति केन्द्रों का रहस्योद्घाटन करने के पश्चात् ऐसे गहन अंधकार की ओर अग्रसर हो रहा है, जहाँ से उद्धार पाना कठिन है।

आत्मा के द्वारा ही आत्मा की मुक्ति का मार्ग मिलता है। शुद्ध-बुद्ध-मुक्त आत्मा ही गुरु है। इस सृष्टि में जो कुछ भी ज्ञान, कर्म और भोग का क्रम चल रहा है, कभी भी एक के पास दूसरे का विच्छिन्न भाव नहीं है। इसी में सृष्टि की सार्थकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर जेम्स जीन्स के अनुसार प्रकृति की कार्य विधि को समझने के लिए मनुष्य के प्रयत्नों में तीन बड़े-बड़े युग अथवा अवस्थाएँ आयी हैं। इन्हें हम प्रेतनिष्ठ (एनीमिस्टिक), यंत्रनिष्ठ (मिकैनिकल) और गणितनिष्ठ (मैथमेटिकल) अवस्था कह सकते हैं। प्रेतनिष्ठ विचारधारा को मनुष्य भूल से यह मान बैठता है कि प्रकृति की गतिविधि का संचालन ऐसे प्राणी करते हैं जिनकी मनोभावनाएँ और मानसिक विकार मनुष्य के अपने जैसे हैं। वह प्रत्येक वस्तु का कोई-न-कोई साकार रूप बनाकर ही उसे समझने का प्रयत्न करता है। मनुष्य से पहली भूल तो मानवीकरण की यह हुई कि उसने समझा कि प्रकृति के कार्यों में भी उसी प्रकार उच्छृंखलता और अकारणता है जिस प्रकार उसके अपने मन के विकारों की उत्पत्ति में। इससे छुटकारा मिला तो वह एक दूसरे प्रकार के मानवीकरण की भूल (एन्थरोपोमार्फिक एरर) में उलझ गया और यह समझने लगा कि प्रकृति के कार्य करने के लिए साधन उसके अपने शरीर के साधनों, स्नायु और पुट्ठों के-से हैं। यह है यांत्रिक दृष्टिकोण ।

आजकल के वैज्ञानिकों की समझ भी उसी भूल के चक्कर में पड़ गयी है जिसका आरोप जीन्स महोदय ने प्रेतनिष्ठों और यन्त्रनिष्ठों पर लगाया है। प्रेतनिष्ठ और यन्त्रनिष्ठ कुछ-कुछ वैसे ही आचरण करते रहे हैं, जैसे छोटा बच्चा या विचार हीन जंगली। उसी प्रकार आधुनिक वैज्ञानिक ने भी अपने उपकरणों तथा ज्ञानेन्द्रियों द्वारा संचित ज्ञान के आधार पर एक ऐसा संसार खड़ा कर रखा है जो कि केवल मात्र अनुमानों पर आश्रित है।

एक वैज्ञानिक समझता है कि, जिस युक्ति से उसका समाधान नहीं हो पाता अथवा जो वस्तु उसे असम्भव प्रतीत होती है, उसके विषय में शेष मानव जाति की धारणा भी वही है और वही होनी चाहिए। यह सोचना कि एक आविर्भूति (फेनामेनन) जो उसकी समझ से परे है, वह शेष सबके लिए भी वैसी ही है, मूर्खों से बातें करने के समान है।

जिन मौलिक नियमों के अनुसार ब्रह्माण्ड और उसके वासियों का नियन्त्रण हो रहा है, उन्हें खोजने का श्रेय प्राचीन हिन्दुओं को ही प्राप्त है। ऋषियों के पास एक बहुत सूक्ष्म, विश्वसनीय और व्यापक साधन था, जिससे प्राकृतिक आविर्भूतियों का निरीक्षण किया जा सकता था। वह साधन योग अथवा चतुराशा व्यापी चैतन्य (फोर डायमैन्सनल कानशसनेस) के साथ कार्य करने की योग्यता थी। इसी परम चैतन्य को परब्रह्म भी कहते हैं। परात्पर ब्रह्म उससे भी अधिक व्यापक तत्त्व है जिसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साक्षात्कार को ही मोक्ष कहते हैं।

हमारे ऋषि-मुनि ब्रह्म-साक्षात्कार की योग्यता के बल पर ही सूक्ष्म-मापक और दूर-दर्शक यन्त्रों के बिना ही इस विश्व के सम्बन्ध में सब बातें जान सकते थे। वे उन्हें माप और तौल सकते थे तथा उनका वर्गीकरण कर सकते थे।

प्राचीन और नवीन दोनों ही विज्ञान के अनुसार एक विश्वव्यापी कारक (यूनिवर्सल एजेंट) समस्त ब्रह्माण्ड में व्यापक है। यह एक प्रकार का सजीव पदार्थ है जिसे हम विश्वशक्ति कह सकते हैं और जिससे यह सम्पूर्ण स्थल परिपूर्ण है। इस बात का आभास उत्तरोत्तर बढ़ता जा रहा है कि मनुष्य के चेतन 'अहं' (कानशस इगो) और प्रकृति में एक रहस्यमय सम्बन्ध है। किसी समय में सम्बन्ध केवल शारीरिक और तात्त्विक (एलिमेंटल) ही समझे जाते थे। अब वे मनोवैज्ञानिक (साइकालौजिकल) और मानसिक (मेंटल) समझे जाते हैं। विज्ञान को अब यह अनुभव होने लग गया है कि हमारे सामने एक विश्व-व्यापी नियम है जिसके अनुसार संसार में सब कुछ पहले से ही निश्चित है। इस 'पूर्व निश्चयता' के नियम के सामने हमारी स्वतंत्रताएँ बुद्धि का धोखामात्र हो कर रह जाती हैं। ये स्वतंत्रताएँ वैसी ही भ्रममूलक हैं जैसे हमारा 'डरना' अथवा 'क्रुद्ध होना'।

हम समझते हैं कि हम अपनी इच्छा और यथार्थ कारणों के वश डरते अथवा क्रुद्ध होते हैं, परन्तु वास्तव में ये डर अथवा क्रोध के भाव उस समय भी यंत्रों द्वारा देखे जा सकते हैं जब सिर में से दुःख-सुख का अनुभव करने वाली त्वचा (सेरी-ब्रल कोर्टकस) को अस्त्रों द्वारा शल्य विधि से निकाल दिया जाय। इसीलिए शोपनहारका मत है कि मनुष्य की जो इच्छा हो वैसा वह कर सकता है, परन्तु जैसी इच्छा वह अपने मन में लाना चाहे, ला नहीं सकता।

मानव के पिण्ड और चेतना को तथा सभी सगात्र प्राणियों को गर्भाधान के समय से ही ग्रह-नक्षत्रों से आनेवाली रश्मियाँ तथा आकाश मण्डल में व्याप्त युग-युग की विचारधाराएँ प्रभावित करती हैं। उनका प्रभाव देश, काल और परिस्थिति के अनुसार विभिन्न मनुष्यों पर विभिन्न प्रकार का पाया जाता है। उक्त अलक्ष्य शक्ति के प्रभाव से ही मनुष्य के स्वभाव का गठन होता है। अवस्था भेद से उस स्वभाव में परिपक्वता आती है।

प्रायः यह देखा जाता है कि मानव वृद्धावस्था में अधिक सात्विक होने से उस अलक्ष्य पराशक्ति के साक्षात्कार के लिए उन्मुख हो उठता है, जो इस समस्त

[शेष पृष्ठ ५९ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥श्री रामायण॥

[तुलसीकृत रामचरित मानस का एक पावन प्रसंग]

सती-सन्देह

[२]

वन-मार्ग में राम-लक्ष्मण को देख कर शंकरजी ने 'जय सच्चिदानंद' कह कर श्रीराम का अभिवादन किया। इस बात पर भगवती सती को बड़ा आश्चर्य हुआ और उन्होंने शंकरजी से पूछा कि एक साधारण राजपुत्र को आपने वंदन क्यों किया? शंकर जी ने उन्हें समझाने की चेष्टा की कि ये साधारण राजपुत्र नहीं हैं, वरन् योगियों के ध्यान में भी शीघ्र न आनेवाले अखिल ब्रह्माण्ड-नायक मेरे इष्टदेव हैं। किन्तु सती को विश्वास न आया।

नाथ न उर उपदेसु, जदपि कहेउ सिव बार बहु।
बोले बिहसि महेसु, हरिमाया बलु जानि जिय॥

यद्यपि शिव ने अनेक बार समझाया; किन्तु सती की समझ में बात नहीं आयी, तब भगवान की माया की प्रबलता मन में समझते हुए शंकरजी हँस कर बोले—

जौं तुम्हरे मन अति सन्देहू।
तौ किन जाइ परीछा लेहू॥
तब लगि बैठ अहऊँ बट छाहीं।
तब लगि तुम्ह ऐहहु मोहि पाहीं॥
जैसे जाइ मोह भ्रम भारी।
करेहु सो जतनु बिबेक बिचारी॥

शंकरजी ने कहा, "यदि तुम्हारे मन में इतना बड़ा संदेह है तो जाकर परीक्षा क्यों नहीं ले लेतीं? जब तक तुम लौट कर मेरे पास नहीं आ जाओगी, तब तक मैं यहीं इस वटवृक्ष की छाया में बैठा रहूँगा। जिस प्रकार तुम्हारे मन का यह भारी भ्रम दूर हो सके, वैसा ही करना। किन्तु जो कुछ भी करना, तनिक सोच-समझ कर करना।"

चलीं सती सिव आयसु पाई।
करहिं बिचारु करौं का भाई॥

शिव की आज्ञा पा कर सती परीक्षा लेने के लिए चलीं। चलते-चलते वे सोच रही थीं कि परीक्षा लेने के लिए क्या करूँ।

इहाँ संभु अस मन अनुमाना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दच्छसुता कहुँ नहिं कल्याना ॥
मोरेहु कहे न संसय जाहीं।
बिधि बिपरीत भलाई नाहीं॥

यहाँ शंकरजी सोचने लगे कि दक्ष-पुत्री सती का कल्याण नहीं दीखता। मेरे समझाने पर भी उनके मन का संदेह दूर नहीं हुआ। ऐसा लगता है कि दैव प्रतिकूल हो गया है और उनका अहित होनेवाला है।

होइहि सोइ जो राम रचि राखा।
को करि तर्क बढ़ावै साखा॥
अस कहि लगे जपन हरि नामा॥
गईं सती जहाँ प्रभु सुखधामा॥

शंकरजी ने विचार किया कि होगा तो वही जो श्रीराम ने निश्चय कर रखा है, फिर इधर-उधर की बात विचार कर बात क्यों बढ़ाई जाय। मन ही मन ऐसा कह कर वे भगवान् का नाम जपने लगे और सती उस ओर गयीं, जिस ओर सुख के धाम श्रीराम थे।

पुनि पुनि हृदय बिचारु करि,
धरि सीता कर रूप।
आगे होइ चलि पंथ तेहिं,
जेहिं आवत नरभूप॥

सती ने बार-बार मन में विचार कर सीता का रूप धारण किया और जिस रास्ते से श्रीराम आ रहे थे, उसी रास्ते में कुछ आगे चलने लगीं। उन्होंने सोचा कि यदि राम साधारण मनुष्य होंगे तो मुझे सीता ही समझेंगे और यदि भगवान होंगे तो मुझे पहचान लेंगे।

लछिमन दीख उमाकृत बेषा।
चकित भए भ्रम हृदय बिसेषा॥
कहि न सकत कछु अति गंभीरा।
प्रभु प्रभाउ जानत मतिधीरा॥

कुछ ही देर में राम-लक्ष्मण सती के पास पहुँच गये। उमा के बनाये हुए वेष को देख कर लक्ष्मण चौंक गये। उनके हृदय में बहुत भ्रम उत्पन्न हो गया, किन्तु वे कुछ कह नहीं सके, गंभीर हो कर रह गये, क्योंकि वे स्थिर बुद्धि के थे और श्रीराम के प्रभाव को जानते थे।

सती कपटु जानेउ सुरस्वामी।
सबदरसी सब अंतरजामी॥
सुमिरत जाहि मिटइ अग्याना।
सोइ सरबग्य रामु भगवाना॥

देवताओं के स्वामी श्रीराम ने सती के कपट को जान लिया क्योंकि वे तो सब कुछ देखनेवाले तथा सब के मन की बात जाननेवाले हैं। जिनके स्मरण मात्र से अज्ञान मिट जाता है, भगवान राम वे ही हैं और वे सर्वज्ञ हैं।

सती कीन्ह चह तहँहुँ दुराऊ।
देखहु नारि सुभाव प्रभाऊ॥
निज माया बलु हृदय बखानी।
बोले बिहसि राम मृदु बानी॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१४ जुलाई १९६५

गोस्वामी जी कहते हैं—स्त्री-स्वभाव का प्रभाव तो देखिए, ऐसे सर्वज्ञ श्रीराम के साथ भी सती छिपाव की बात करना चाहती हैं। श्रीराम ने मन में विचार किया कि मेरी माया अत्यन्त बलवती है, इसमें सती का दोष नहीं है। अतः कुछ मुस्कुरा कर वे मधुर वाणी में बोले।

जोरि पानि प्रभु कीन्ह प्रनामू।
पिता समेत लीन्ह निज नामू॥
कहेउ बहोरि कहाँ वृषकेतू।
बिपिन अकेलि फिरहु केहि हेतू॥

पहले तो भगवान ने हाथ जोड़कर अपने पिता के सहित अपना नाम बताकर उन्हें प्रणाम किया, फिर पूछा—"बैल की ध्वजावाले भगवान शंकर कहाँ हैं और आप वन में अकेली क्यों फिर रहीं हैं?"

राम बचन मृदु गूढ़ सुनि,
उपजा अति संकोचु।
सती सभीत महेस पाहिं
चलीं हृदय बड़ सोचु॥

सती ने देखा कि श्रीराम ने मुझे पहचान लिया। राम के मधुर एवं रहस्य-युक्त वचन सुनकर सती को बहुत अधिक संकोच हुआ। भयभीत होकर वे शंकरजी के पास चलीं। उनके मन में बड़ी आशंका हुई कि अब क्या होगा। [क्रमशः]

✶

अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के भारत के सर्वोच्च तांत्रिक, हस्तरेखाविद् तथा ज्योतिष सम्राट

पं. श्री रमेशचन्द्र भट्टाचार्य, ज्योतिषार्णव, एम. आर. ए. एस. (लन्दन)

पंडित रमेशचन्द्रजी कठिन समस्याओं को सुलझाने के लिए भविष्य देखने, हस्तरेखा और जन्म-कुण्डली पढ़ने तथा तांत्रिक अनुष्ठानों के लिए भारत में अप्रतिम हैं। विदेशों में भी आपकी प्रखर ख्याति है। निराश व्यक्तियों को दैविकी की शक्तियों का अवश्य लाभ उठाना चाहिए।

विश्व में लाखों व्यक्तियों द्वारा समर्थित चमत्कारपूर्ण यन्त्र।

[ज्योतिष-सम्राट]

सम्पदा यन्त्र (सम्पदा के लिए) पूजाखर्च–साधारण ७. ६२ रु., विशेष ३६.१९ रु., अतिविशेष १२९.६९ रु.

बगलमुखी यन्त्र (शत्रु-विजय व मुकदमा के लिए) पूजाखर्च–साधारण ९.१२ रु., विशेष ३४.१२ रु., अति विशेष १८४.२५ रु.

मोहिनी यन्त्र (मित्रता के लिए) पूजाखर्च–साधारण ११.५० रु. विशेष ३४.१२ रु. और अतिविशेष ३८७.८७ रु.

सरस्वती यन्त्र (परीक्षा में पास होने के लिए) पूजाखर्च–साधारण ९.५६ रु., विशेष ३८.५६ रु.

प्रमाण-पत्रोंसहित विस्तृत सूचि-पत्र मुफ्त [पत्र-व्यवहार सदैव अंग्रेजी में ही करें]

प्रधान कार्यालय :-50/2, (BH) धरमतल्ला स्ट्रीट (८८-२ वेलेस्ली स्ट्रीट द्वारा प्रवेश) ज्योतिष सम्राट भवन कलकत्ता १३, फोन २४-४०६५, समय-सायं ५ से ७ बजे।

शाखा-१०५ ग्रे स्ट्रीट, वसन्त निवास, कलकत्ता ५। समय–सुबह ९ से ११ बजे। फोन ५५-३६८५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरी इज़राइल यात्रा

श्रीमती लीलावती मुन्शी

पहले तो हम समृद्धिशाली आशकेलोन नगर के सामुदायिक केन्द्र पर रुके। बंबई के जुहू के समान ही इसका समुद्र तट है, जहाँ बहुत से लोग मौसम में समुद्र-स्नान का आनन्द लेने आते हैं। कभी यह एक रोमन शहर था। पब्लिक बाग में उसके भग्नावशेष अब भी विद्यमान हैं। होटल में लंच लेने के बाद हम साठ हजार की आबादी वाले एक नये रेगिस्तानी शहर वीरशेवा के लिए रवाना हुए।

शाम को वीरशेवा पहुँच कर 'डेजर्ट इन' नामक होटल में ठहरे जो रेगिस्तान के मध्य में एक सुन्दर और सभी सुखों से पूर्ण विश्राम-स्थल है। शहर भी अपनी कई चमकदार दूकानों के साथ एक आधुनिक नगर दिखायी पड़ता है। कौन कह सकता है कि वह मरुस्थल के बीच स्थित है? होटल में सभी आधुनिक सुविधाएँ प्राप्त थीं; खाद्य पदार्थ यहाँ भी उतने ही अच्छे थे जितने कि इस देश की उन सभी होटलों में मिलते हैं, जहाँ मैं ठहरी थीं।

२० तारीख को नाश्ते के बाद, हम मृत सागर देखने गये। रास्ते में आंधी इतनी तेज चली कि उड़ती हुई रेत से सारे आकाश में अंधेरा-सा छा गया और बहुत कम दिखायी पड़ने लगा। रास्ते में गाँव बहुत कम थे।

पहले हम गाज़ा पट्टी पर की इजराइली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सीमा पर हुके। सीमा पर का द्वार रेस्टेंगेट जैसा था। उस पार यूनो के दो सैनिक चौकीदारी कर रहे थे। हमें बताया गया कि गाज़ा पट्टी का कमांडर-इन-चीफ एक भारतीय है, और गाज़ा में पेलेस्टाइन के अरब शरणार्थी रहते हैं। शहर तो कुछ दूर पर होने के कारण हम नहीं देख सके। ये अरब पेलेस्टाइन में चले गये थे। उन्हें आशा थी कि वे विजयी अरब सेनाओं के साथ लौटेंगे, परन्तु उनकी आशा फलवती नहीं हुई। इन अरबों को पेलेस्टाइन के उस हिस्से में बसाया जा सकता था जो यूनो ने अरबों को दिया था, जैसे कि यहूदियों को दिये गये हिस्से में यहूदी बसे। परन्तु अरब देश इन्हें शरणार्थी ही बनाये रखना चाहते थे। संधि के समय अरबों का जितना धन था वह इजराइलियों ने अरबों को दे दिया। इजराइल की वर्तमान सीमा यूनो द्वारा ही निर्धारित की गयी थी और मिस्र, लेबनोन, सीरिया तथा जोर्डन ने इजराइल के साथ संधि पर हस्ताक्षर किये थे।

मैंने सोचा था कि नेगव एक रेगिस्तान होगा, परंतु वहाँ तो बड़े पैमाने पर खेती हो रही है और कई किबुट्ज़ भी हैं। सड़क के दोनों किनारों पर फलों से लदे वृक्ष और खेत हैं। पानी बहुत दूर से आता है, परन्तु ऐसा जान पड़ता है कि इजराइली इस भूमि में दूर से पानी लाने के खर्च को फिजूलखर्ची नहीं मानते।

इस रेगिस्तान में भी रेत के टीलों के बीच सड़कें दौड़ती हैं और उनकी अच्छी देखभाल भी की जाती है। सड़क के एक ओर किबुट्ज हैं और दूसरी ओर अभी भी रेत के टीले हैं।

मृत सागर समुद्र की सतह से भी १२८६ फीट नीचे है। मृत सागर में कोई भी चीज जीवित नहीं रह सकती, मछली भी नहीं; क्योंकि इसके जल में सामान्य समुद्री जल से सत्रह गुना अधिक नमक रहता है। इसमें कोई आदमी चाहने पर भी नहीं डूब सकता क्योंकि इसका जल नमक के कारण बहुत भारी हो गया है।

हमने दूर से मृत सागर और उस पर स्थित कारखानों को देखा। यहाँ पर मृत सागर के जल से हजारों टन पोटास और ब्रोमाइट तैयार किया तथा विदेशों को भेजा जाता है। पोटास खेती के लिए बहुत उपयोगी है। मृत सागर के जल का एक भाग रसायनों के कारण हरा दिखायी पड़ रहा था। प्रायः ५ सौ मजदूरों को यहाँ कारखानों में काम करने के लिए प्रतिदिन लाया जाता है। उनके लिए मकान बनाये गये है; परन्तु दिन-रात ऐसे स्थान पर रहना उनके लिए असम्भव है। मृत सागर के एक भाग को सूखा दिया गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जहाँ हमने कुछ पेय लिया, वहाँ एक छोटा सा रेस्ट्राँ है। ऐसी जगह पर भी हमें सोवेनियर, फोटोग्राफ, पिक्चर पोस्ट-कार्ड्स और अच्छा खाना मिला। दुकान के अग्र भाग पर शीशा जड़ा हुआ था।

इजराइल में कोई भी व्यक्ति बिना काम किये नहीं रह सकता है। यदि वह बीमार हो, या काम करने के लायक नहीं हो, तो बात अलग है। यहाँ स्त्री-पुरुष सभी को काम करना ही पड़ता है।

लौटते समय रास्ते में बड़ी जोर की बारिश हुई। इस देश में नवम्बर से वर्षा शुरू होती है और सर्दियोंभर जारी रहती है। रास्ते में हमारी मोटर बिगड़ गयी परन्तु एक फौजी जीप हमारी मदद को आ गयी। रस्सा बांध कर हमारी गाड़ी को वह ले चली। हम एक बजे होटेल में पहुँचे। लंच के बाद हम टेल एविव के लिए रवाना हो गये।

विभिन्न व्यक्तियों से बातचीत करने पर जो सूचना मुझे मिली, और जो प्रभाव मुझ पर पड़ा, उसका मैं यहाँ फिर से उल्लेख करना चाहती हूँ।

इजराइल युवाओं का देश है। यहाँ पर वृद्धों से अधिक युवा हैं। खेती और वृक्षारोपण पर बहुत जोर दिया जाता है। मकानों में भी कहीं किसी कोने में कुछ हरीतिमा का होना आवश्यक है।

इजराइल में नये मकान आधुनिक और ऊँचे-ऊँचे होते हैं। पहले तो किबुट्ज तथा अन्य बस्तियों में बिना मंजिल के छोटे मकान होते थे। अब ये लोग बड़े बड़े मकान और मालिकी के फ्लैट बना रहे हैं। सरकार मकान खरीदने के लिए आसान शर्तों पर उदारतापूर्वक ऋण भी देती है जिसकी अदायगी कई सारे वर्षों में की जा सकती है। मकान आधुनिक हैं। जीवन का स्तर, वेश-भूषा, भोजन और मकान यूरोपियन हैं। यह समाज किसी भी अवस्था में दरिद्र नहीं कहा जा सकता। यदि शान्ति बनी रही तो यह और भी अधिक समृद्धिशाली बनता जायगा। अपनी लम्बी मोटर यात्राओं में कहीं भी हमने गन्दी झोपड़ियां या दरिद्र मकान नहीं देखे, जैसा कि अपने देश में दिखायी पड़ते हैं। पूरे इजराइल में मैंने दो ही भिखारी देखे, एक नजोरथ में और दूसरा जेरुसलेम में। यहाँ की होटलें अत्याधुनिक हैं और कई यूरोपियन देशों जैसी ही अच्छी तथा आरामदायक हैं।

जैसा कि मुझे बताया गया, शीर्षस्थ व्यक्तियों और सामान्य कारीगरों की आमदमें केवल १ से ५ तक का ही अन्तर है। होटल के वेटर को भी 'सर' कहना पड़ता है और आर्डर देने के पहले 'कृपया' लगाना पड़ता है। बहुत कम लोग यहाँ नौकर रख सकते हैं और जहाँ वे रखे भी जाते हैं,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११ जुलाई १९६५

वहाँ भी वे दिन में केवल कुछ घण्टों के लिए ही आते हैं। सामान्यतः यहाँ हर आदमी अपना काम खुद ही कर लेता है। यही वास्तविक अर्थों में समाजवादी समाज है।

इजराइल की पूरी जन संख्या करीब २२,५०,०००, है जोकि बम्बई की आधी है।

यदि यहाँ कोई नया व्यक्ति बसने के लिए आता है तो उसे सभी आवश्यक सुविधाओं से पूर्ण एक मकान दिया जाता है। एक खेत भी उसके लिये तैयार रहता है, जहाँ उसे काम करना है। यह वस्तुएँ सरकारी ओर से ऋण के रूप में दी जाती हैं। अधिकांश आगन्तुक खेती करनेवाले नहीं होते। उनको खेतों में काम करना सिखाया जाता है और तब तक निर्वाह खर्च भी दिया जाता है जब तक कि वे स्वयं काम करने और कमाने लायक नहीं हो जाते। दीर्घकाल में ही सही, परन्तु ऋण वापस लौटाने की उनसे आशा रखी जाती है। मकानों को साफ सुथरा रखा जाता है। इजराइल में जो सबसे बड़ी बात मैंने देखी वह है समर्पण की भावना से लोगों का काम करना। उन्हें अपने लिए एक देश की तमन्ना थी और वह उन्हें मिल गया।

मैं अपनी यात्रा के समय इजराइल की राजनीतिक स्थिति की चर्चा करना भूल ही गयी थी। इस समय लेवॉन काण्ड और भूतपूर्व प्रधान मन्त्री बेन गुरिओं द्वारा पार्टी से इस्तीफा देने की बहुत चर्चा थी। मिस्र के जासूस होने की आशंका फलस्वरूप लुकमी सबकी दिलचस्पी का विषय था। एक और चर्चा का विषय था, डॉन किबुट्ज पर हुआ गोली चालन, जिसके परिणाम स्वरूप इजराइल ने भी विपक्षियों पर बम गिराये।

हमारी तरह इजराइल मास भी चन्द्रमा की गति पर निर्धारित होता है। हमारी दिवाली की तरह इनका भी एक दीपोत्सव होता है। दोनों देशों के बीच कई बातें एक समान हैं।

२१ तारीख को शनिवार था और सभी जगहें बन्द थीं। तेज आँधी और भीषण वर्षा के बावजूद हम टेल एविव के लिए कार से रवाना हुए और बाद में चार म्युजियम भी देखने गये (१) कांच का हारेत्ज म्युजियम (२) मानव नस्ल विज्ञान सम्बन्धी म्युजियम (३) सिक्कों का म्युजियम (४) आधुनिक कला का ड़िजेन गोफ म्युजियम। कांच के म्युजियम में प्राचीन समय से आधुनिक काल तक के कांच रखे हैं। एक और म्युजियम में प्राचीन काल से आधुनिक समय तक के सिक्के रखे गये हैं। एक म्युजियम में यहूदियों द्वारा उपयोग में लायी गयी वस्तुएँ और पोशाक रखी गयी हैं। चौथे में आधुनिक कला के चित्र हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी भी संग्रहालय में भारतीय कला अथवा भारतीय वस्तुएं प्रदर्शन के लिए नहीं रखी गयीं।

हमारा पथ-प्रदर्शक मि. राफेल २३ वर्ष का एक ऊंचे कद का विवाहित युवक है और वह न्याय का स्नातक भी है। उसे अपने देश पर बहुत गर्व है।

दोपहर को श्री और श्रीमती खटाऊ तथा श्री पोहेकर से अलग हो कर मैं एस्टोर होटेल में फिर गयी। शाम को शापेरा नाम की एक रिपोर्टर अपने पत्र 'अल हेमश्मार' के लिए इण्टरव्यू लेने लिए आयी। रात को मैं खटाऊओं के साथ 'मेडम बटरफ्लाई' नामक आपेरा देखने गयी, जिसकी कहानी जापानी से हिब्रू में भाषान्तर की गयी थी। शिथिल गति; परन्तु सुन्दर संगीत, जापानी पोषाक और दृश्य, और नायिका विख्यात मिचिकोसुनाहारा थी।

दूसरे दिन शाम को श्री अभय खटाऊ की चित्र-प्रदर्शनी जेरुसलम में खुलने-वाली थी। वे सभी सुबह से ही वहाँ जानेवाले थे। सुबह एक दूसरे अखबार के लिए इण्टरव्यू लेने श्रीमती लेर्नर आ पहुँची। लंच के समय श्री जोसेफ ग्रेब्रिएली, श्री कोहेन, तथा दूसरे कृषि विशेषज्ञ बातचीत करने आ गये। १५ दिन बाद वे बम्बई भी आनेवाले थे।

दोपहर को श्री खटाऊ की चित्र-प्रदर्शनी में उपस्थित होने के लिए मैं जेरुसलम के लिए रवाना हुई। मैं प्रेसिडेण्ट्स होटेल में ठहरी। प्रदर्शनी में कुछ लोगों से भेंट हुई। यद्यपि खटाऊ और मैं दोनों ही बम्बई के हैं, फिर भी उनकी प्रदर्शनी प्रथम बार विदेश में देखी। खटाऊ दम्पति और पोहेकर उसी होटेल में बगल के कमरों में ठहरे हुए थे।

२३ तारीख को भी बरसात का जोर था। बाहर जाना मुश्किल था। श्रीमती इरमन और मैं एक कान्वेन्ट के उपरी मंजिल पर गयीं जहाँ से जेरुसलम के दोनों शहर साफ दिखायी पड़ते हैं। बर्लिन की तरह इन दोनों शहरों को विभक्त करती एक दीवार खड़ी है। रात में श्री याफे ने किङ्ग डेविड होटेल में हमें भोज दिया। उसके बाद हम सब उनके मकान पर गये। प्रेसिडेन्ट के दफ्तर के डायरेक्टर और भूतपूर्व बम्बई के काउन्सेल जनरल श्री ग्रेब्रियल डोरोन और उनकी पत्नी भी वहाँ उपस्थित थे। श्री ग्रेब्रियल डोरोन ने कहा कि श्री मुन्शीजी का मैं उनके वन महोत्सव और जब वे केन्द्रीय मन्त्री थे, तब उन्होंने वृक्षों को रोपने का जो अभिमान शुरू किया, उसका बहुत प्रसंशक हूँ। कुछ और लोग भी वहाँ उपस्थित थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२६ तारीख इजराइल में मेरा अन्तिम दिन था। शाम को मुझे टेल एविव से हवाई जहाज पर जाना था। श्रीमती इरमैन के साथ मैं ११ बजे रवाना हुई। रास्ते में हम लोगों ने यहूदियों के एक मन्दिर को देखा। हम रेहोवोथ्स में विज़मैन इन्स्टिट्यूट आफ सायन्स भी देखने गये। इसकी स्थापना महान वैज्ञानिक और इजराइल के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. विजमैन ने की थी। यहाँ पर बड़े-बड़े मैदान, कई प्रयोगशालाएँ, एक अच्छा पुस्तकालय और एक सभागृह है। डॉ. विजमैन की विधवा उसी आहाते में रहती हैं। डॉ. विजमैन की कब्र उनके मकान के बगल में है। यहाँ की ईमारतों, मैदानों, बगीचों का मैं कैसे वर्णन करूँ? वे आश्चर्य जनक रूप से सुन्दर हैं। डॉ. मेअर, जो जन-सम्पर्क वैज्ञानिक अधिकारी हैं, ने हमें घूमा-फिरा दिया और सभी स्थानों को घूमा-फिरा कर दिखाया। बाद में वे हमें अपने घर ले गये, जहाँ हम उनकी पत्नी से मिले। वहाँ से रहे थे, तब हम उनके मकान में थे, तब राइफल के घूटने जैसी आवाज हमें सुनायी दी। श्रीमती मेअर ने बताया कि वह उस जेट-प्लेन की आवाज थी, जो ध्वनि सीमा को पार कर रहा था।

कुछ देर के बाद हम हवाई अड्डे के लिए रवाना हुए। श्रीमती इरमैन ने मुझे हिब्रू बाइबल—ओल्ड टेस्टामेण्ट की एक सुन्दर प्रति भी दी।

४.२५ बजे (इजराइल-समय) मैं भारत आने के लिए हवाई जहाज में बैठी। श्रीमती इरमैन की कृपा से मुझे किसी प्रकार की तकलीफ नहीं हुई।

तेहरान हवाई अड्डे पर हम रुके, जहाँ गुजरात के राज्यपाल नवाब मेहदी नवाबजंग के बेटे श्री ज़ैदी से मुलाकात हुई। २५ तारीख को चार बजे सुबह (भारतीय-समय) मैं दिल्ली पहुँची और उसी दिन सुबह नौ बज कर पन्द्रह मिनट पर बम्बई के लिए रवाना हो गयी।

[समाप्त]

शुद्ध घी की सात्विक और मसालेदार मनमोहक मिठाइयों के लिए :—

विशेषज्ञ : माहिम हलवा—इंग्लिश हलवा

जोशी बुढ़ाकाका माहिम हलवावाला

H.O. माहिम : कपड़ा बाजार, बम्बई—१६, फोन : 454007

दादर : खोरदाद सर्कल, बम्बई—१४, फोन : 60506

तारदेव टी. टी. बम्बई—७, फोन : 40365

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम ?

पढ़ने लिखने और काम करने के बीच
कुछ छूट जाता है।
पर्याप्त सावधानी बरतने के बावजूद
इस संसार को उठाने-धरने के बीच
कुछ टूट जाता है।
उस छूटे और टूटे हुए को लेकर
जब कविता या कहानी लिखता हूँ मैं
तो उसमें होता है पुनः प्रस्तुत
यही पढ़ना लिखना, काम करना
और इस संसार का उठाना-धरना।
मेरी बात तो खैर छोड़ो
मगर तुम--ओ मेरी प्रेमिका!
तुम भी कहीं हो या नहीं।

—ओम प्रभाकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मंजुश्रीः

[एक सॉनेट]

•

यज्ञ-धूम-सी हविर्भूत देदीप्यमान वह भ्रू-लतिका;
श्यामायमान वसुधा के पीवर यौवन सा गदराया गात,
जपा कुसुम सा भरा-भरा वह केशपाश : स्फीत स्नात--
वेणु-वनों के कुहसिल-निद्रा सम, नीबू-कलिका
की गंध सरीखी महमह वाणी : ज्यों मुग्धा शकुन्तला--
की प्रणय-कथा, क्रीड़ा के मधुरिल अंतरीप : यह चक्रवात
इस रूप-समुद में, ऊंघ रहे शुक-तारक का प्रात
आज पुष्पायित तेरे रूपाकाशे, ज्यों विदिशा की मुक्त-कुंतला
निज यक्षागमने परमाह्लादित : वैसी ही तुम थी तृप्ता,
मुग्धा गोपा के प्रणय-दंभ सी मुखर तुम्हारी रूप-शिखा,
आरती-वह्नि कर्पूरी जैसी श्रद्धानता तुम्हारी देह-यष्टि
जिस पर तिर आयी थीं मन की आँखें मेरी, चक्षु-दृष्टि
में रूप तुम्हारा रंजित है अहरह-निशिवासर ओ आर्या,
तुमको कहूं रूप या भाव अरी, ओ मधुरा मञ्जु श्री भटाचार्या।

— रंगनाथ राकेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

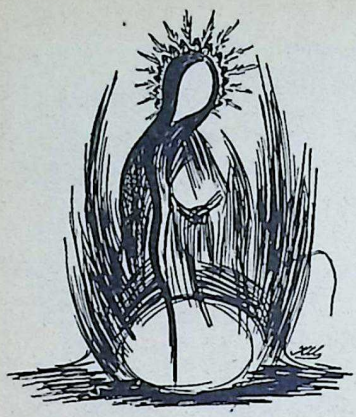

सन्तों की प्रार्थना भगवान का विधान बदल देती है

•

बाइबिल

मोज़ेज़ सिनाई-पर्वत पर चढ़ा और वहाँ चालीस दिन और चालीस रात भगवान से बातचीत करता रहा। बातचीत समाप्त होने पर भगवान ने मोज़ेज़ को दो पत्थर की चौकियाँ दीं, जिस पर उनके दिये हुए दस आदेश खुदे हुए थे।

उधर नीचे जब लोगों ने देखा कि मोज़ेज़ पर्वत से उतर कर नीचे नहीं आ रहा है तो वे एरॉन के विरुद्ध उठ खड़े हुए। उन्होंने एरॉन से कहा: "तुम हमारे लिए ऐसे देवताओं की प्रतिष्ठा करो जो हमारा नेतृत्व कर सकें; क्योंकि यह मोज़ेज़ जो हमें मिस्र से निकाल लाया है, पता नहीं कहाँ लापता हो गया है। और उस पर क्या गुजरी होगी सो भी कौन जानता है।"

लोगों के मनों में चल रही इस अधार्मिक योजना से उन्हें बचाने के लिये एरॉन ने उत्तर दिया:

"तुम लोग अपनी पत्नियों और बेटे-बेटियों के कानों की सोने की बालियाँ निकाल कर मेरे पास ले आओ।"

एरॉन को रंच भी आशा नहीं थी कि वे उसकी बात मानेंगे। लेकिन वे सब तुरन्त ही बालियाँ ले कर एरॉन के पास आ गये। एरॉन नहीं चाहता था कि वह किसी भी तरह उनका विरोध करे। उसने उनसे वे बालियाँ लेकर उनके सोने का ढाल कर एक बछड़ा बनवाया और एक वेदी। और, लोग हर्ष से पागल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो कर परस्पर एक दूसरे को पुकार उठे: "ओरे इस्रायल, ये हैं तेरे देवता, जो तुझे मिस्र की भूमि से निकाल कर लाये हैं।"

दूसरे दिन सवेरे उन सबों ने बलि चढ़ायी और भोजन-पान के बाद ठीक देसी रीति के अनुसार नृत्य, गीत-गान में मग्न हो गये।

इसी बीच मोज़ेज़ पर्वत पर से वे दो पत्थर की चौकियाँ लेकर उतर आया जिन पर दस धर्मादेश लिखे हुए थे। जब उसने लोगों की चीखपुकारों को सुना और सोने के बछड़े के सामने नाचते देखा तो उसने उन चौकियों को तलहटी की धरती पर दे मारा और उनके टुकड़े-टुकड़े कर दिये। उसके बाद उसने उस बछड़े को वेदी पर से उठा लिया और जलाकर राख कर दिया।

लोगों की दुर्जन और अधार्मिक भावनाओं के प्रति आत्म-समर्पण कर देने की जो भूल एरॉन ने की थी, उसके लिए मोज़ेज़ ने उसे बहुत डाँटा–फटकारा। इसके बाद डेरे के द्वार पर खड़े हो कर उसने पुकार उठायी :

"तुममें से जो भी कोई भगवान के पक्ष में हो वह मुझसे आकर मिल जाये।" और लेवी के सारे बेटे उसके आसपास आकर जमा हो गये। तब मोजेज ने उन्हें आज्ञा दी कि वे अपनी-अपनी तलवारें लेकर सारे डेरों में घूम जायें, और जो-जो भी आदमी वहाँ मूर्ति-पूजा करते पाये जायें उन्हें कत्ल कर डालें। लेवी के बेटों ने आदेश का पालन किया और उस दिन तेईस हजार आदमी मौत के घाट उतार दिये गये।

दूसरे दिन मोज़ेज़ फिर पर्वत पर चढ़ा और बहुत ही कातर और विह्वल होकर उसने अपने कृतघ्न लोगों को सुमति देने के लिए भगवान से प्रार्थना की। पर भगवान ने कहा: "इन्हें मेरे हाथ में छोड़ दो मोज़ेज़, अच्छा यही होगा कि मैं इनका विनाश कर दूँ।"

मोज़ेज़ ने फिर बहुत ही अनुनयपूर्वक अनुरोध किया: "जानता हूँ भगवान, मेरी प्रजा ने भारी पाप किया है। लेकिन मेरी बारम्बार यही विनती आपसे है कि या इन अज्ञानी जनों को इस अपराध के लिए क्षमा कर दीजिये, या फिर अपनी लिखी किताब में से मेरा नाम काट दीजिये।"

भगवान ने उसकी प्रार्थना को सुना और उसे पत्थर की दो और चौकियाँ काटने की आज्ञा दी। मोज़ेज़ ने आज्ञा का पालन किया, और उन दो नयी चौकियों पर फिर से भगवान ने अपने दस धर्मादेश अंकित कर दिये। लेकिन जब मोज़ेज़ वे चौकियाँ हाथ में लिये पर्वत से उतर कर नीचे आया तो उसका मुख-मण्डल एक

[शेष पृष्ठ ४९ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वार्ता, कृष्ण-दीवानी सन्त जनाबाई की

ओंकार सारस्वत

मराठी साहित्य में सन्त कवियित्री जनाबाई का महत्वपूर्ण स्थान है। आपकी कृष्ण-भक्ति अनुपम थी। आपके 'अभंग' मराठी साहित्य की अमूल्य निधि हैं, जिनमें शब्दाडम्बर एवं अलंकारों का भले ही अभाव हो; परन्तु भाषा की जो सहज विनम्रता एवं लालित्य, जो उसके अपेक्षित गुण हैं, उनकी इनमें तनिक भी कमी नहीं है। आत्माभिव्यक्ति की सहज एवं स्पष्टता और प्रेमार्द्र हृदय की भक्त विह्वलता ने ही आपको यहाँ के सन्त साहित्य में अमरता प्रदान की है। आज लगभग ६०० वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी, आपकी प्रेमार्द्र वाणी वहाँ के जन-जीवन में पूर्ण तरङ्गित दीख पड़ती है।

जनाबाई १३ वीं शताब्दी में, गोदावरी के तीर गंगाखेड़ नामक ग्राम की रहने वाली थीं। आप जाति की शूद्र थीं। आपके माता पिता विट्ठल भगवान के परम भक्त थे। वे प्रत्येक वर्ष पंढरपुर की यात्रा किया करते थे; अतः उनका भी अपने माता-पिता के साथ वहाँ जाना होता था। यही जनाबाई के हृदय में अपने आराध्य विट्ठल के प्रति अपार भक्ति का स्रोत उमड़ पड़ने में सहायक सिद्ध हुआ। मीरा और जना की भक्ति-साधना में पर्याप्त मेल है। मीरा के जो गिरधर गोपाल हैं वही जना के विट्ठल अथवा पाण्डुरंग हैं।

सन्त जनाबाई सन्त नामदेव की शिष्या और दासी थीं। वह प्रायः अपना परिचय नामदेव की शिष्या कहकर दिया करती थी। एक बार जब वह अपने माता-पिता के साथ विट्ठल भगवान के दर्शन करने आयीं तो भगवान की मोहिनी मूर्ति के दर्शन करके अपना तन-मन खो बैठीं। माता-पिता के आग्रह एवं समझाने पर भी आप किसी भी तरह मन्दिर से जाने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजी न हुई। हार कर माता-पिता आपको वहीं छोड़ दिया और आप समय से नामदेव के परिवार की बनकर रहने लगीं। नामदेव भक्ति एवं साधना से ही आपको आराध्य के दर्शन प्राप्त हुए। जाता है कि स्वयं नारद ने इन्हें शिक्षा थी।

आपने निष्काम भावना से प्रेरित होकर ही भगवान की भक्ति की थी। आपकी एक मात्र यही कामना थी कि आपके आराध्य प्रत्येक पल एवं प्रत्येक साथ रहें। आपने जीवन पर्यन्त अविवाहित रह कर मुरली मनोहर की आराधना की। आपकी हृदयगत आकांक्षा यही थी कि—

हेंच देई हृषीकेषी। तुझे नाम अहर्निसी।

भक्त–वार्ता

रूपन्याटाळीन डाला। पुडें नाचेन वेळोवेळा।
सर्वाठायीं तुज पाहें। ऐसें देऊनी करीं साहे॥
धावां करिता राजाली। दासी जनीसि भेटी दिली॥

अर्थात्-"हे हृषिकेश! तू मुझे केवल एक यही वरदान दे कि मैं रात-दिन तेरा ही नाम स्मरण करती रहूँ। मेरी आँखों के समक्ष तू ही तू रहे। मैं सर्वत्र तुझको ही देखती रहूँ। तू मुझे इस प्रकार का वरदान देकर मेरी मदद कर। जब मुझे दौड़ते-दौड़ते रात्रि हो गयी, तब भगवान ने मुझे दर्शन दिये।"

अपने आराध्य के दर्शन पाकर जना आत्मविभोर हो उठी। उनका जीवन आराध्यमय हो गया। उन्हें स्थान स्थान एवं वस्तु वस्तु में अपने प्रियतम के दर्शन होने लगे। समस्त आन्तरिक एवं बाह्य क्रिया-कलापों में उनके विट्ठल ने स्थान ले लिया—

देव खातें देव पितें। देवावरी मी निजतें॥
देव देतें देवा घेते। देवासवें व्यवहारिते॥
देव येथें देव तेथें। देवा वीण नाहीं हितें॥
जनी म्हणे बिठाबाई। भरुनी उरली अन्तर्बाही॥

मैं देव ही खाती, देव ही पीती, और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देव पर ही सोती हूँ। मैं देव देती, देव लेती और देव के साथ ही व्यवहार करती हूँ। इधर-उधर सभी जगह देव ही हैं। कोई भी स्थान ऐसा नहीं जहाँ देव न हो। मेरा बाह्य एवं अन्तर दोनों ही देव से पूर्ण है।"

सच्चे भक्त की पुकार और आत्म-विश्वास को टालने की शक्ति भगवान में भी नहीं है। इधर जना को अपने आराध्य के अभाव में सभी कुछ शून्य नजर आता है और उधर उसके आराध्य की भी वही दशा है। उनको भी अपनी प्रिया के अभाव में कुछ अच्छा नहीं लगता। वे भी उसके संग-संग डोलते-फिरते हैं—

पाणी आणावया गेली। तिच्या मागें धांव झाली॥
घागर घेऊनी हागंत। पाणी ओती रांजणांत॥

"जब वह पानी भरने जाती तो उसका आराध्य भी उसके साथ ही चला जाता और अपने हाथ से गागर भरने लगता।"

और जब वह—

शेणी वेंचू गेलें राना। पाठी मोरा उभा कान्हा।"

जंगल में कंडे बीनने के लिए जाती तो वह भी वहाँ पीताम्बर धारण किये हुए उसके साथ कंडे बीनता दीख पड़ता।

जना को अपनी तरफ भी सुध-बुध न रहती। कार्यव्यस्तता के कारण उसे स्नानादि कर्मों का भी ध्यान न रहता। अगर शरीर गन्दा है तो कोई परवाह नहीं, अगर सिर साफ किये कई मास व्यतीत हो चुके हैं तो भी कोई चिन्ता नहीं; क्योंकि जब स्वयं उनका आराध्य ही—"आपुले हातीं वेणी घाली। जनी म्हणे माय झाली। "स्वयं उसकी वेणी अपने हाथों में लेकर माता की तरह सँवारने लगता है।"

जब वह प्रातः उठकर अनाज पीसती और मधुर स्वर में गाती तो उसके स्वर से स्वर मिलाकर उसका आराध्य विट्ठल भी गा उठता। अनेक बार संत नामदेव की माता को उसके साथ किसी पुरुष के होने का आभास भी मिला और जब वह देखने की इच्छा से कमरे में गयी तो केवल प्रेमदीवानी जना को ही तन्मयता से गीत गाते सुना, जो अपना नाम "विठाबाई" कहती थी। यह देखकर माता गोणई को अत्यन्त विस्मय हुआ। जब यह समाचार सन्त नामदेव तक पहुँचा तो उन्हें समझते देर न लगी कि यह विठाबाई और कोई नहीं साक्षात् विट्ठल ही हैं।

इसी अनन्य भक्ति के कारण उनका जीवन अत्यन्त पावन एवं आह्लादमय बन चुका था। उनको यह तो पूर्ण विश्वास था ही कि प्रत्येक कार्य ईश्वर की प्रेरणा से ही होता है। अतः जना हृदय निशि-वासर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूरती मनोहर की ओर लगा रहता था। जिस प्रकार माता से विलग होकर शिशु बिलख पड़ता है उसी प्रकार जना का हृदय भी अपने प्रिय को आँखों से ओझल देखकर चीत्कार कर उठता था। अनेक अभंगों में उनकी यह वात्सल्य भावना मुखरित हो उठी है। माता भी अपने शिशु का करुण क्रन्दन भला कैसे सुन सकती है—

तुज विण काय करूं। प्राण किती कष्ठी धरूं॥

जातां जीव जाऊँ पाहे। धांव धाली माझे माये॥

माझी भेटेना जननी। संग विनवी दासी जनी॥

"मैं तेरे बिना कैसे जीवित रहूँ, अपने प्राणों को जाने से कैसे रोकूं। मेरे प्राण निकलना ही चाहते हैं, मेरी माता तू शीघ्र दौड़कर आ। हे माता। मैं तुझसे प्रार्थना कर रही हूँ, तू आकर मुझे दर्शन दे।"

सन्त जनाबाई के अनेक अभंगों में उनकी दार्शनिक अभिव्यक्ति भी पूरी तरह निखर उठी है। रूपक की सहायता से भाव-सौन्दर्य खिल उठा है।

सन्त-साहित्य की कसौटी पर आपका काव्य अत्यन्त उच्च कोटि का ठहरता है। किसी भी साहित्य-प्रेमी को आत्म-विभोर कर देने की इसमें पूर्ण क्षमता है। आपके ३०० अभंग मराठी साहित्य में उपलब्ध हैं, जिनमें आपकी भक्ति-भावना सजीव हो उठी है।

आपका महाप्रयाण आषाढ़ कृष्ण त्रयोदशी सम्वत् १३५० को हुआ था। कहा जाता है, कि आपको अपनी मृत्यु की पूर्व सूचना भी प्राप्त थी। भला, ऐसे भक्त एवं प्रेमी के लिए क्या असम्भव एवं अलभ्य हो सकता है जिसका प्रिय आराध्य उसके साथ प्रति पल रहता हो।

★

[संतों की प्रार्थना : पृष्ठ ४३ का शेष]

अलौकिक तेज से ऐसा जगमगा रहा था कि इस्रायल के लोग उसके पास आने से डरने लगे। इसलिये वह जब भी अपने लोगों से बात करता तो अपने चेहरे पर अवगुंठन डाल लेता।

इस्रायलों को दिया गया यह भयंकर दण्ड हमें सिखाता है कि भगवान का विरोध करना कितना भयानक है। पुरातन धर्म-शासन का संयोजक मोज़ेज़, नवीन धर्मशासन के संयोजक प्रभु जीजस का ही पूर्वरूप है। मोज़ेज़ की प्रार्थना हमें सिखाती है कि सन्तों के दखल में—भगवान के दण्ड-विधान को भी बदल देने की एक जबर्दस्त शक्ति होती है।

[बाइबिल से]

अनु० वि के गुप्ता

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेखला-मंत्र

[वैदिक कथा]

जाह्नवी कुमार चक्रवर्ती

क्या दुर्जय शक्ति है मूंजा मेखला की, ब्रह्मचारी भरद्वाज सोचते हैं। दृढ़बद्ध मेखला की शक्ति से उभय लोक पर उन्होंने विजय पायी। मर्त्य के मानव, स्वर्ग के देवता, गंधर्व, अप्सरा, किन्नर—कौन उनके वश में नहीं है? त्रिजगत ब्रह्मचारी के पदानत है।

'मेखला! भगिनी मेखला!' कटि में दृढ़ बद्ध मेखला की ओर देख आदर से पुकारते ऋषि भरद्वाज। मूंजघास से निर्मित मौंजी-मेखला बात नहीं बोलती, किन्तु भरद्वाज को मालूम पड़ता मानो जीवन्त मेखला खिलखिल हँस रही हो, मानो हास्य मुख से उनकी ओर देख रही हो।

मेखला उत्तर नहीं देती। तो भी भरद्वाज बोलते, 'देह के प्राण और अपान वायु में तुम बल, स्वास्थ्य हो। देवी मेखला, तुम मुझे शान्ति दो।' कटिबद्ध मूंज से मेखला के पास ब्रह्मचारी भरद्वाज की यह प्रार्थना प्रति मुहूर्त चलती। क्षण क्षण यही आह्वान, यही संभाषण करते।

आज भी इसी मुहूर्त भगिनी को स्मरण कर रहे हैं ऋषि भरद्वाज। गंगा, यमुना के पवित्र संगम पर ऋषि भरद्वाज का आश्रम है। सायं संध्या की छाया पृथ्वी के वक्ष पर पड़ रही है, अदूर आश्रम में मंत्र ध्वनि गूंज रही है। भरद्वाज नदी पुलिन के वन-विपिन में बैठे हैं।

आज भरद्वाज वृद्ध, अतिशय वृद्ध हैं। दो जन्मों को उन्होंने अतिक्रम किया है—और त्रेता। यह उनका तृतीय जन्म है। द्वापर जन्म का शेष भी सन्निकट है। भरद्वाज समझ रहे हैं, इस आसन्न संध्या मय उनके इस जन्म के जीवन में भी संध्या उतर रही है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

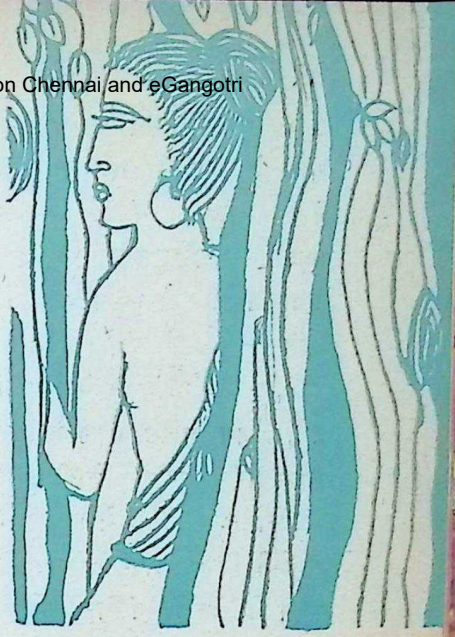

द्वापर का शेष। अधर्म से जगत
परिपूर्ण है। सर्वत्र उन्मुक्त हुआ है
स्वेच्छाचारिता का द्वार। इसके बाद ही
कलि का आक्रमण होगा। उस दिन धर्म
का शेष पर्याय भी अक्षुण्ण रहेगा या नहीं
कौन जाने।

करुणा में कातर हो उठे कृपालु भर-
द्वाज। कलि के भविष्य रूप की चिन्ता
करते ही उनके नेत्र में अश्रु भर आये।
उस दिन ब्रह्मचर्य नहीं रहेगा, प्रकाश
पथ में उन्मुख होगा कामना का व्यभिचार।
सुन्दरी पृथ्वी के वक्ष पर अकरुण स्वैराचार
की लीला!

वे क्या कर सकते हैं? ब्रह्मचारी
भरद्वाज क्या कर सकते हैं? सुन्दरी,
सुचेतना यह पृथ्वी। क्या अपरूप इसका
रूप। संध्या के अस्पष्ट अंधकार में भी
यह रूप म्लान नहीं होता। मधुर, मधुर।
पृथ्वी मधुव्रता, पृथ्वी मधुमति। क्या
शांति, क्या तृप्ति इसके हृदय में है!
पृथ्वी की ओर देख दृष्टि फेर नहीं
पाते हैं ऋषि। इच्छा होती है, दीर्घ
जीवन ले बचे रहें, बचे रहें अटूट इंद्रिय-
शक्ति ले। जन्म जन्म में इस पृथ्वी पर
अनुभूतपूर्व तृप्ति और शान्ति का स्वाद
उन्होंने पाया है। जीवन का अनुभूत
सत्य अनवद्य-ऋक् मंत्र में छन्द मुखर
हुआ है। पृथ्वी की वंदना में मन प्राण
लगा दिये हैं भरद्वाज ने। मधुर क्षारयित्री
पृथ्वी, सुवीर्य दात्री पृथ्वी, मधुर शांति
देने वाली पृथ्वी। इसकी तुलना कहाँ?
पृथ्वी पर दुख का अभाव नहीं, पृथ्वी
असुन्दर भी है, यहाँ स्तुति-द्वेष्टा का
अभाव भी नहीं है तो भी भरद्वाज को
यह पृथ्वी भली लगती है।

कटि में बद्ध दृढ़ मौंजी मेखला की
ओर सस्नेह दृष्टि निक्षेप करते हैं ऋषि।
त्रिवृत मौंजी बद्ध। भरद्वाज की कटि में
चिर अशिथिल यह बंधन। मूंजा-मेखला
का यह दृढ़ बंधन भरद्वाज के जीवन में
अविरत प्रशांति लाया है, उनकी दृष्टि
में मधुमति हो उठी है धरणी, धरणी की
तुच्छतम धूलि।

जन्म जन्म के ब्रह्मचारी भरद्वाज। वे
जितकाम हैं। सुभगा मेखला की यह दृढ़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रंथि उस ब्रह्मचर्य का प्रतीक है। इस ग्रंथि के बल से उन्हें क्या नहीं प्राप्त है? सुख, संपद, समृद्धि–पार्थिव ऐश्वर्य, और अपार्थिव ऋद्धिः सर्वोपरि मेधा, वीर्य, शक्ति—और साथ ही साथ अन्तर बाह्य की गंभीर प्रशान्ति।

यह सब सुमंगली मेखला का दान। क्या दुर्जय शक्ति है मूंजा मेखला की, ब्रह्मचारी भरद्वाज सोचते हैं। दृढ़ बद्ध मेखला की शक्ति से उभय लोक पर उन्होंने विजय पायी है। मर्त्य के मानव, स्वर्ग के देवता, गंधर्व, अप्सरा, किन्नर–कौन उनके वश में नहीं हैं? त्रिजगत ब्रह्मचारी के पदानत है। जितने दिन सुदृढ़ है यह मौंजी मेखला, उतने दिन वे ही इंद्र, वे ही महेन्द्र हैं। ब्रह्मचारी ब्रह्मा के समकक्ष प्रजापत्य में अधिकारी हैं।

हाय रे विमूढ़ भोगी मानव। ब्रह्मचर्य की यह अमित शक्ति देखकर भी भोग चाहता है। सुदृढ़ मेखला बंधन की शक्ति की उपेक्षा कर मेखला उन्मोचन चाहता है।

मन ही मन हँसे यतात्मा भरद्वाज। सम्मुख में समासन्न कलि है। कल्पना में कलि का भविष्य रूप देख सिहर उठे भरद्वाज। उन दिनों ब्रह्मचर्य का कोई मूल्य नहीं रह जायेगा। केवल पथिक वधू ही नहीं, गृहवधु भी प्रमत्ता होगी साधारण प्रमदा मत। कलि?—कलि का संक्रमण कहाँ नहीं है? द्वापर, त्रता, सत्ययुग— कौन कलि के प्रभाव से मुक्त है? मूर्तिमान कामना कलि। उसका संक्रमण युग युग में चलता है। सत्ययुग भी व्यभिचार मुक्त नहीं रहा। 'भरद्वाज' नाम उस कुटिल कामना की कलंक रेखा है।

वासन्त अनिल में चंचल उपवन। राका ज्योत्स्ना में प्रकाश का प्लावन। उस रात को उद्यान में दोहद-साध मिटाने आयी थीं उतथ्य पत्नी अंतर्वती ममता। सहसा उनके सम्मुख आ खड़ी हुई ऋजु देह एक सुदीर्घ पुरुष मूर्ति। चकित हुई ममता।—कौन? —मैं वृहस्पति। —देवर वृहस्पति? इस असमय में यहाँ? —पुष्पिता वल्लरी किस समय भृंग को आकर्षित कर सकती है, कौन कह सकता है?—छिः मैं अग्रज वधू अंतर्रत्ना।

—मैं अन्तर में विद्ध, मदनविह्वल हूँ। हँसकर आगे बढ़े वृहस्पति। त्रस्त हो दूर भागी ममता। अकामा नारी, सकाम नर; अनिवार्य काम, निवारित प्रयास। तिरस्कार करती रहीं ममता, उत्तेजना में गर्जन करते रहे क्षुब्ध वृहस्पति। असिद्धकाम वृहस्पति के अमोघ वीर्य में ममता के पार्ष्णिदेश से जन्म ग्रहण किया अनिन्द्य सुन्दर एक पुत्र संतान ने।

क्षुब्ध हो बोली माता ममता, 'भरस्व द्वाजम'—इस संतान का भरण करो।' आक्रोश में उद्यान-पथ से बढ़ चली ममता।

[शेष पृष्ठ ६१ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आनंदमय जीवन के लिये बचत. देना बेंक को आपकी मदद करने दीजिये

सेविंग्ज एकाऊण्ट – व्याज ४%
अल्पवयस्क बचत योजना – व्याज ४%
फ़िक्स्ड डिपॉज़िट – व्याज ६% से ७½%

देना बेंक

देवकरण नानजी बेंकिंग कंपनी लिमिटेड
रजिस्टर्ड ऑफ़िस: देवकरण नानजी बिल्डिंग्ज़, १७, हॉर्निमेन सर्कल बम्बई-१.
१४५ से अधिक ऑफ़िस तथा ४५ सेफ़ डिपॉज़िट वॉल्ट
प्रवीणचंद्र व. गांधी मॅनेजिंग डाइरेक्टर

DB/H/169 – A

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

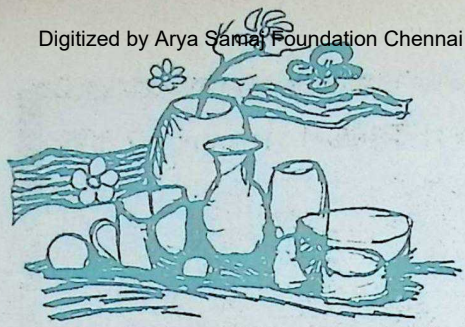

हर बुझती सांझ में

हर बुझती साँझ में
झुलसे सूर्य का स्याह मुखौटा,
कँगूरों पर जली
मोमबत्तियों के निशान,
दिशा – दिशा व्यापी
गलते अस्तित्व की परछाइयाँ
और आखिरी मौसम में
वासन्ती फूलों की उदास-उदास गन्ध.....
सभी कुछ तो जाना है--परखा है
रोज ही अकेले इस कमरे में।

एक हलका एकान्त स्वर
सिमट जाता है
सहसा ही
मकड़ी के जाले में--
और तब सुनता हूँ
खूंटियों पर टँगे
गूंगे चित्रों के आखरः
जो समर्पित हैं
एकान्त पर अंकित
अँधेरे को।

—पद्मधर त्रिपाठी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

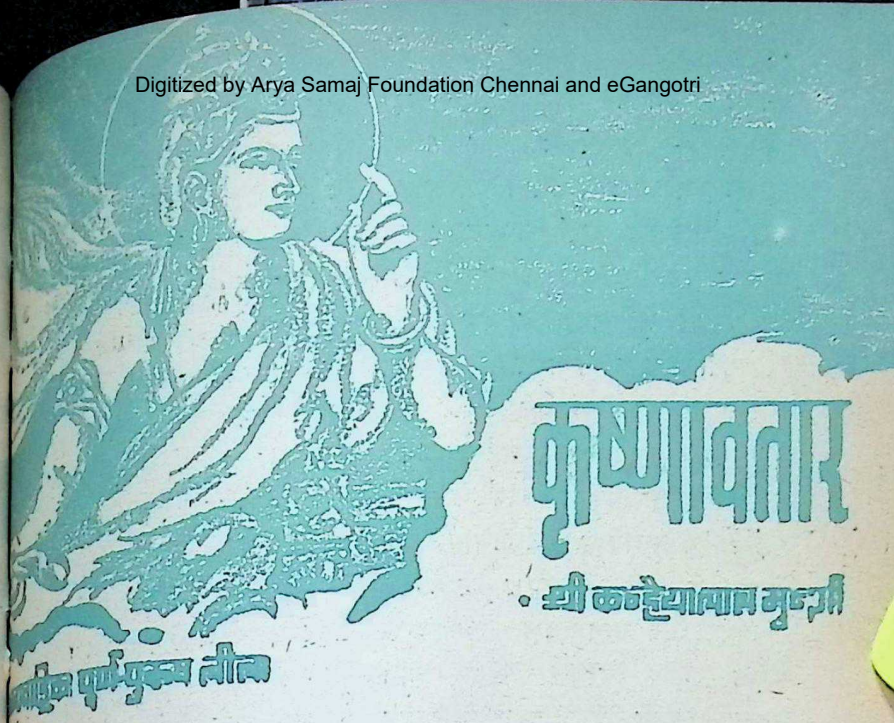

द्वितीय भाग

[२९ क]

बलराम की विजय

मौसम अच्छा था, हवा अनुकूल चल रही थी; इसलिए बलराम का जहाजी बेड़ा बड़े मजे से किनारे-किनारे आगे बढ़ रहा था। तटपर उन्हें कभी-कभी अपनी ओर ताकते हुए लोग नजर आ जाते थे। परन्तु कुशस्थली के नजदीक पहुंचते ही उन्हें पुण्यजनों के छोटे-छोटे जहाज दिखायी पड़े, जो उन्हें देखते ही, पंखे की शक्ल में आयोजित हो, सीधे जल पर चढ़ आये।

दो पुण्यजन जहाजों में युद्धपोतों जैसी नुकीली फालें लगी थीं, जिनसे टकरा कर बलराम के कुछ जहाजों के लकड़ी के शीर्ष भाग टूट गये। सांदीपनि के शिष्यों और दामघोष के योद्धाओं ने तत्काल तीर छोड़े और घायल तथा मृत पुण्यजनों की चीखों से आसमान गूंज उठा। एक पुण्यजन जहाज के टकराने से भिक्खु के जहाज की दोनों पतवारें टूट गयीं। जहाज के खलासी घबड़ा कर चिल्लाने लगे।

बलराम ने क्रोधित हो उस आक्रमक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुण्यजन जहाज पर लोहे का एक बड़ा गोला अचूक निशाने के साथ फेंका। वह जा कर उसके पृष्ठभाग पर लगा। सारा जहाज बड़े जोरों से हिलकर रुक गया। जहाज की लकड़ियाँ चटख गयीं और जहाज टूट गया। नाविक घबड़ा कर अपनी जान बचाने समुद्र में कूद गये।

रात पड़ने पर पुण्यजन जहाज कुछ दूरी पर जा कर समुद्र में खड़े हो गये। अपने आसपास प्रकाश करने के लिए उन्होंने दिये जलाये ताकि भिक्खु के जहाज अंधकार में उन पर हमला न कर बैठें।

सागर शांत था। भिक्खु का पतवार-विहीन जहाज निश्चल खड़ा था। भिक्खु ने दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए सोचा, 'मैंने स्वप्न में भी कल्पना नहीं की थी कि मेरा जहाज बिना पतवार का रह जायगा और लट्ठों की तरह सागर में डोलेगा।' उसने जहाज में रोशनी करने की आज्ञा दी और रड्डू ने आधी रात तक जाग कर पतवारों को दुरुस्त किया।

वलराम ने सोचा कि पुण्यजन जहाज यहाँ से चल कर कहीं कुशस्थली न पहुँच जायँ और आक्रमक जहाजी बेड़े की खबर वहाँ न पहुँचा दें; इसलिए सवेरा होने से पहले ही कुशस्थली के बंदरगाह में पहुँच जाना चाहिए। भिक्खु ने कहा, यह बिलकुल असंभव है। नाविकों का उत्साह भी अब इतना नहीं रह गया था। परन्तु बलराम इस समय किसी विरोध को सहन करने की स्थिति में नही थे। क्रोध से उनका चेहरा तमतमा गया-सारा बदन कांपने लगा। वे भिक्खु के जहाज के अग्र भाग पर खड़े हो गये और निर्निमेष दृष्टि से सागर की ओर ताकने लगे। बलराम अब क्या करेंगे, यह किसी की समझ में नहीं आया; इसलिए सभी भयभीत और चिंतातुर हो कर दूर खड़े थे।

सहसा बलराम ने अपने दोनों हाथ ऊपर उठाये और सागर की शांत सतह को संबोधन करते हुए बोले, 'मैं इस पृथ्वी का भार वहन करने वाला अनंत, तुम्हारा आह्वान करता हूं। हे मरुतो! तुम आओ-आँधी फूंको, तूफान उठाओ, और हमें कुशस्थली पहुँचा दो!' फिर जहाज के अग्र भाग पर पैर पटकते हुए उन्होंने कहा, 'हे मरुतो! मैं, सहस्रशीर्ष शेषनाग, तुम्हें आज्ञा देता हूँ कि वेगवान पवन लाओ, आंधी उठाओ—हमें कुशस्थली ले जाओ।'

वलराम की आज्ञा मानो सागर ने शिरोधार्य की—सागर में ऊंची-ऊँची लहरें उठने लगीं। जहाज डोलने लगे। तेज पवन बहने लगा। मशालें हिल उठीं। आकाश बादलों से घिर गया। भिक्खु और उसके नाविक चमत्कारिक रूप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के तूफान उठानेवाले इस विराटकाय महामानव को दंग हो कर देखने लगे।

पुष्पजन जहाज अचिंत्य रूप से आंधी की चपेट में आ गये। मशालें हवा में उड़ीं और जहाज सुलग उठे। सागर गर्जना कर रहा था। पवन बड़े वेग से चलने लगा। भिक्रु ने अपने नाविकों को अपने-अपने काम पर लगा दिया। उनका मात्र एक जहाज ही टूटा था। शेष सब सहज ही बच गये। टूटे हुए जहाज के लोगों को दूसरे जहाज पर चढ़ा लिया गया। भिक्रु के जहाज का पाल ऊँचा उठाया गया और दुरुस्त की गयीं पतवारें भी ठीक काम देने लगीं। इस जहाज के नेतृत्व में सारा बेड़ा सुगमता से आगे बढ़ा।

तूफान एकाएक रुक गया। पौ फटने पर प्रातःकाल का मंद समीर बहने लगा। भिक्रु का जहाज सीधा कुशस्थली के बंदर में पहुँच गया था। बलराम अब भी जहाज के अग्रभाग पर खड़े थे और योद्धाओं को आवश्यक निर्देश दे रहे थे। वे स्वयं सोमरस पी रहे थे और योद्धाओं में भी मुक्तरूप से बांट रहे थे।

बंदरगाह में प्रवेश करते ये जहाज आक्रमण की नीयत से आये हैं, इसका अंदेशा किसी को नहीं हुआ। भिक्रु का जहाज वहाँ अक्सर आया-जाया करता था, इसलिए बंदर के चौकीदार भी निश्चित हो कर टहल रहे थे।

बलराम की आज्ञा पा कर, भिक्रु के जहाज ने बंदर में लंगर डाले एक व्यापारी जहाज पर आक्रमण किया। इस जहाज का पाल टूट गया और ऊपर बैठे हुए आदमी घबड़ा कर समुद्र में गिर पड़े। तब बलराम के नेतृत्व में १२० आदमी इस जहाज पर चढ़े और जो भी सामने आया उसे मार गिराया। बाद में वे किनारे पर आये और कुछ ही देर में नगर के द्वार पर जा पहुँचे। अपने हल के एक ही वार में बलराम ने द्वार तोड़ डाला।

नगर में प्रवेश करने के बाद वे चार टुकड़ियों में विभाजित हो गये। एक टुकड़ी का नेतृत्व स्वयं बलराम ने संभाला; कुकुद्मीन, उद्धव तथा रेवती ने अन्य तीन टुकड़ियों का नेतृत्व लिया। अब सभी उत्साह से परिपूर्ण थे। भिक्रु ने भी समझ लिया कि अब उसे क्या करना चाहिए। जहाज की रक्षा के लिए जो थोड़े-से योद्धा रह गये थे, उनकी सहायता से उसने बंदर में जितने जहाज और नावें खड़ी थीं, उन पर कब्जा कर लिया। अधिकांशतः वे व्यापारी जहाज थे। इस अचिंत्य आक्रमण से उनके आदमी किंकर्तव्यविमूढ़ से बन गये थे। हुक्कु और हुल्लु के कुछ कोड़े पड़ने पर ही सभी शरण में आ गये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुशस्थली के जहाजों के मालिक तटपर बनी बंद कोठरियों में गुलामों को कैद रखते थे। भिक्रु ने इन गुलामों को मुक्त कर जहाजों पर पकड़े गये खलासियों को उनकी जगह कैद कर दिया। गुलाम स्वतंत्रता पा कर बड़े खुश हुए। भिक्रु ने उन्हें रसोई बनाने का काम सौंपा।

बलराम और उनके साथी सारे नगर पर छा गये। जो कोई प्रतिकार करता उसका मस्तक धड़ से जुदा हो जाता। पुण्यजन नाविक लोग थे—थल युद्ध से वे अनभिज्ञ थे। इस समय उनके अधिकांश जहाज बीच समुद्र में थे; मात्र कारीगर, व्यापारी, दलाल, धर्मगुरु और निशस्त्र गुलाम ही नगर में थे। इससे बलराम और कुकुद्मीन को नगर जीत लेने में कोई विक्षेप नहीं पड़ा। उन्होंने पुण्यजनों के मंदिर को भी घेर लिया। पुजारी देवता को नरबलि देने की तैयारी कर रहे थे। बलराम ने उनको रोका और पकड़ कर कैद कर लिया।

मदिरा की दुकानें लूटी गयीं। बलराम इस 'सोमरस' का पान अधिकाधिक करते गये और इसके साथ ही उनके उत्साह की मात्रा भी बढ़ती गयी। विजय-प्रवेश पूर्ण होने के बाद उन्होंने रेवती को भी आग्रह कर यह 'सोमरस' दिया। रेवती इसकी अभ्यस्त न थी, इसलिए एक घूंट भी नहीं पी सकी होगी कि वह बाहर निकल आया। मात्र उद्धव ने ही इस 'सोमरस' के हाथ नहीं लगाया। बलराम उद्धव को बैरागी ही कहते थे, इसलिए उनसे अग्रह भी नहीं किया। उद्धव तत्काल शहर की व्यवस्था में लग गये। सांझ पड़े जब आकाश में चंद्रमा उदय हुआ तब बलराम के सैनिक विजय और मद्य से उन्मत्त हो कुशस्थली के राजमार्गों पर गीत गाते हुए निकल पड़े। [क्रमशः]

अनु० ओंकारनाथ शर्मा

★

प्रत्येक शहर के लिए हम एकही व्यापारी को अपना स्टाकिस्ट नियुक्त करते हैं।

सोल एजेन्ट्स:
दी युनायटेड कन्सर्न
५४, बन्दर स्ट्रीट,
मद्रास-१

बम्बई-शाखा-२७७ विश्वास भवन, घेवदार रोड़, माटुंगा, बम्बई १९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...की नियामिका है।

...ऐसी स्थिति में वह प्राकृतिक शक्ति ...सभी प्राणियों की अभीष्ट सिद्धि के ...तत्पर रहती है, सहायता करती ...। वे सात्विक विचारधाराएं, जो ...वायुमण्डल में व्याप्त हैं, उसकी ओर ...वाहित होती हैं और वे उस प्राणी के ...अनुरूप किसी ज्ञानी पुरुष से उसकी ...करा कर उसकी मनस्तुष्टि करती हैं ...स्वतः उसके ज्ञानचक्षु का उन्मीलन ...उसे आप्यायित कर देती हैं।

इस प्रकार प्रत्यक्ष गुरु या अलक्ष्य गुरु के जुटाने में प्रकृति ही हमारी सहायता करती है। पृथ्वी के एक छोर से दूसरे छोर तक यह योगायोग घटित हो रहा है। प्रकृति अपूर्व है, अनिर्वचनीय है। सृष्टि के सम्पूर्ण कार्यों में प्रकृति ही मध्यवर्तिनी है। इसी प्रकार के योगायोग और गतानुगतिक फल से, कर्म और भोग की चरमावस्था अर्थात् परिसमाप्ति अवस्था में जिस-जिस मानवात्मा को इस सृष्टि का रहस्यभेद हुआ है, आत्म चैतन्यता प्राप्त करने पर भी जो परमात्मा में लय नहीं हो सके हैं, उनके द्वारा सब उप-

विवेकानन्द साहित्य

जन्मशती हिन्दी संस्करण

कुल १० खंड–डबल डिमाई १६ पेजी साइज में; अनुक्रमणिका समेत पृष्ठ संख्या प्रति खंड लगभग ४५०; मजबूत और आकर्षक सजिल्द प्रति खंड का मूल्य ६ रु.। पूरे सेट रेल द्वारा मँगाने से रेल-खर्च नहीं लगेगा। पुस्तक विक्रेताओं के लिए विशेष कमीशन दिया जाता है।

स्वामी विवेकानन्द की समग्र ग्रन्थावली **'विवेकानन्द साहित्य'** उनके ओजपूर्ण व्याख्यानों तथा गम्भीर लेखों का पूर्ण संकलन है। अनुवादकों में पं. सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', पं. सुमित्रानंदन पंत, डा. प्रभाकर माचवे, श्री फनीश्वरनाथ रेणु, डा. नर्मदेश्वर प्रसाद आदि ख्यातिलब्ध साहित्यकारों के नाम उल्लेखनीय हैं।

"निस्सन्देह किसी से स्वामी विवेकानन्द के लेखों के लिए भूमिका की अपेक्षा नहीं है। वे स्वयं ही अप्रतिहत आकर्षण हैं।"–महात्मा गाँधी

व्यवस्थापक, अद्वैत आश्रम,

५, डिही एंटाली रोड, कलकत्ता–१४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

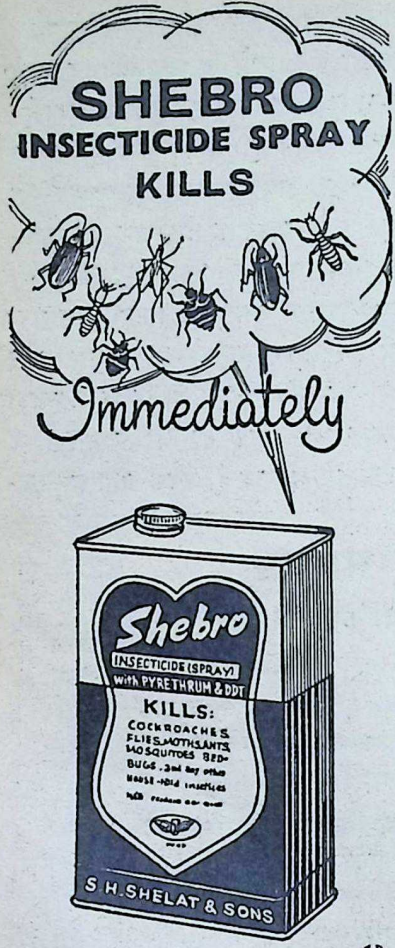

GD

उत्पादक :

एस. एच. शेलत एण्ड सन्स

शेलत ब्रदर्स, मद्रास

और उसकी अन्य शाखाओं के मालिक

ड्रग कानून के अनुसार निर्मित उत्तम ब्लॅक फिनाइल के लिए भी पूछताछ कीजिए।

लब्ध तत्त्व तथा जिस क्रम से उन्हें आत्म-ज्ञान प्राप्त हुआ है उसकी धारा निरन्तर सूक्ष्म भाव से आकाश द्वारा जीव-समाज में प्रवाहित हो रही है। उसी को सद्गुरु कहते हैं।

आत्मा के द्वारा ही आत्मा की मुक्ति का मार्ग मिलता है। शुद्ध-बुद्ध-मुक्त आत्मा ही गुरु है। यहाँ पर आत्माराम का ही खेल चल रहा है। इस सृष्टि में जो कुछ भी ज्ञान, कर्म और भोग का क्रम चल रहा है, कभी भी एक के साथ दूसरे का विच्छिन्न भाव नहीं है। इसी में सृष्टि की सार्थकता है। चैतन्यमुखी जीव समूह के मध्यवर्ती केन्द्र में परमात्मा अवस्थित हैं। उनकी आत्म ज्योति से चैतन्य रश्मियाँ विकीर्ण हो कर प्राकृतिक नियमानुसार वैराग्यवान, चैतन्यमुखी सात्विक प्रकृति-पुरुषों के अन्तर में प्रकाश प्रदान करती हैं। उनका प्रभाव सार्वदेशीय और सार्वकालीन है। वह जाति, धर्म आदि भेद भाव से रहित हैं।

गुरुपूर्णिमा के अवसर पर प्राकृतिक नियमों के अनुसार ज्ञानधारा का वेग बढ़ जाता है। मानव चाहे तो उस धारा में अवगाहन कर जीवन को धन्य बना सकता है।

सद्गुरु की वह ज्ञान धारा समस्त मानव-समाज को निर्मल बुद्धि प्रदान करे—यही भगवान् से प्रार्थना है।

✶

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[मेखला-मंत्र.....पृष्ठ ५२ का शेष]

सिद्धकाम बृहस्पति गर्जन कर बोले, 'भरत्व द्वाजम्'-- मैं क्यों, तुम इस नाम का भरण करो।'

उभय निज गमन पथ में बढ़ गये। उस उद्यान में सद्यजात शिशु एकाकी रो रहा। वे ही भरद्वाज थे। माता-पिता दोनों ने एक दूसरे से कहा था, 'भरत्व द्वाजम्'—इसीसे उनका नाम हुआ भरद्वाज।

तो भी भरद्वाज ने रक्षा पायी थी। शब्द विधाता का अभिप्राय कुछ और था। उस समय उस पथ से मरुत-देवगण जा रहे थे। अनाथ शिशु का क्रंदन सुन कर परवश हो उन्होंने भरद्वाज को उठा लिया था और पुत्रकाम भरत के हाथ में समर्पण कर दिया था। भरत का गृहीत पुत्र भरद्वाज,—यह भी उनका एक परिचय है।

भरद्वाज ने भलीभांति अनुभव किया, जन्म में जितने पाप होते हैं—उनका मूल असंयत कामना है। इसीसे आजीवन ब्रह्मचर्य पालन करने की प्रतिज्ञा की।

तृतीय जन्म शेष हो चला है। यदि चतुर्थ जन्म पायेंगे तो क्या करेंगे? संध्या का अंधकार घनीभूत हो चला है। अतीत चिन्ता में मन विकारग्रस्त हो गया है। सहसा उन्होंने एक दिव्य ज्योति देखी। निमेष में वह ज्योति उनके समक्ष आ खड़ी हुई। सविस्मय भरद्वाज ने देखा, एक ज्योतिर्मय पुरुष अपूर्व दीप्त कांत! उन्होंने प्रश्न किया, 'आप कौन?'

—परिचय पीछे दूंगा, पहले मेरे प्रश्न का उत्तर दो। भरद्वाज, ब्रह्मचर्य के प्रताप से तुमने तीन जन्मों को अतिक्रम किया। तुम क्या पुनः चतुर्थ जन्म की कामना करते हो।

—मानव जन्म कौन नहीं चाहता महाराज?

—सिद्धकाम ब्रह्मचारी तुम, तुम्हारी इच्छा ही तुम्हारी प्राप्ति है। किन्तु पुनर्जन्म क्यों चाहते हो? तुमको मालूम नहीं है, दुखमय जीव-जन्म है?

—दुख उनके लिए है महाराज जो कामना-चंचल हैं।

फिर दिव्यदेही बोले, 'कामना पर जिसने विजय पायी है, वे भी मोक्ष या निर्वाण चाहते हैं। कहते हैं, संसार दुखमय, आवर्तन दुखकर है।'

भरद्वाज ने उत्तर दिया, 'मैं तो यह कहता नहीं हूँ देव। मैं कहता हूँ, सुन्दर धरणी, मधुमती है। मरने पर भी मानों मैं यहीं जीवन ग्रहण करूँ।'

—तब चतुर्थ जन्म की कामना करते हो?

—करता हूँ।

—मैं यदि तुम्हारी यह इच्छा पूर्ण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करूं, चतुर्थ जन्म में क्या करोगे ?

'--तीन जन्म तक ब्रह्मचर्य का पालन किया है। समझा है–विश्व में ब्रह्मचर्य ही अमृत है। यदि चतुर्थ जन्म पाऊँ, उस जन्म में भी ब्रह्मचर्य पालन करूंगा। जगत को बताऊँगा, कितना सुख है इस व्रत के पालन करने में--कितना आनन्द देती है मूंज-मेखला !'

मधुर हँसकर दिव्यदेही बोले, 'धन्य हो भरद्वाज, तुम धन्य हो। तुमने प्रेय की प्रार्थना नहीं की, प्रार्थना की तो उसकी जो निःश्रेयस है।' बोलते बोलते उस दिव्यदेही ने तीन विराट, दृढ़काय पर्वतों का निर्माण किया।

विस्मय विमुग्ध चित्त से भरद्वाज ने प्रश्न किया, 'यह क्या।'

'--तीन जन्म में तुमने जो संचय किया है—पर्वतमय दृढ़ता, सहिष्णुता, धैर्य, यह सब उसी भगिनी मेखला का दान है।'

इतना कह उन पर्वतों से तीन मुट्ठी धूल उठाकर भरद्वाज के सम्मुख हस्त प्रसारित किया। भरद्वाज अवाक् हुए। प्रश्न किया, 'यह क्या है ?' ज्योतिर्मय पुरुष ने धीर स्वर में उत्तर दिया, 'तीन जन्म तक देवी मेखला की सेवा कर जिस वस्तु की प्राप्ति की योग्यता तुमने अर्जन की है, यह वही है।'

निर्वाक विस्मय से भरद्वाज देखते रहे प्रसारित सुन्दर हस्त में प्रदीप्त एक ज्योति-पिंड–उज्ज्वल, अनिर्वाण। ज्योति की सहस्र धाराओं में उद्भासित अंधकार

दिव्य पुरुष बोले, 'भरद्वाज, इसका नाम अग्नि-सावित्र है, ब्रह्मचर्य की सिद्धि सावित्री-दीक्षा का शेष फल है। जो ब्रह्मचारी, चिर अटूट जिनकी मूंज-मेखला की ग्रंथि, वे ही इसकी प्राप्ति कर सकते हैं। अग्नि-सावित्र ही अमृत और अभय, अग्नि-सावित्र ही परम वेद है। साधु भरद्वाज, इसको तुम ग्रहण करो।' सिद्धकाम ब्रह्मचारी भरद्वाज ने उस दिव्यदेही के दीप्त कर से प्रदीप्त अग्नि-सावित्र को ग्रहण किया, प्रश्न किया, 'आप कौन हैं देव ?'

उस समय क्रम से ऊर्ध्व में उठ रही है दिव्य ज्योति। ऊर्ध्वदेश से गंभीर प्लुतस्वर में उत्तर आया, 'मैं इन्द्र हूँ। इन्द्रियों का राजा हूँ, इसलिए मेरा नाम पड़ा इन्द्र। ब्रह्मा की कृपा से मैंने इस अग्नि सावित्र को पाया था, इंद्रियों को जय कर। तुम आज इंद्रत्व के अधिकारी हुए, अग्नि-सावित्र रूप वेदप्राप्ति के उपयुक्त हुए हो। कठोर ब्रह्मचारी ही यह अधिकार लाभ कर सकते हैं। जो इस वेद को प्राप्त कर लेते हैं, अमृत और अभय में उनकी प्रतिष्ठा होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूर्य में मिल गया सुगंभीर प्लुत-
मुदीप्त अग्नि-सावित्र को प्राप्त कर
को ऐसा अनुभव हुआ मानो
अनन्त आनन्द-सागर में गोते लगा
हों। अनुभव हुआ, सार्थक उनका
सार्थक ब्रह्मचर्य व्रत धारण।
मेखला ने ही उनके जीवन में
परम संपद दी है। सप्रेम दृष्टि से
ने फिर देखा त्रिवृत मूंज-मेखला
को, गंभीर स्नेह से स्पर्श किया उसको। आनन्द गदगद कंठ से बोले, 'इयं दुरुक्तात् परिबाद्यमाना वर्णं पवित्रं पुनती न आगात्।'

यह मेखला मंत्र एक दिन भारतवासी के जीवन का मंत्र था। इस मंत्र के बल से ब्रह्मचारी सुदिव्य अग्नि-सावित्र के अधिकारी होते थे।

—अनु. रामप्रसाद पाण्डेय

अपनी आवश्यकता के लिए खरीदिए

Hind FLOORING TILES

हाइड्रालिक इटालियन मशीनों से

निर्मित : प्रीफ़ब (पूर्वनिर्मित) आर. सी. सी. गृह, सीमेण्ट पाइप, टैंक, खाई की नालियाँ व बाग़ीचों के सामान का निर्माण करते हैं। सरकार, रेलवे, म्यूनिसिपैलिटी, पी. डब्ल्यू. डी. के कंट्राक्टर हैं और सामान मुहैया करते हैं।

हिन्दुस्तान सीमेन्ट पाइप्स एण्ड कंक्रीट कन्स्ट्रक्शन कं०

मुख्य कार्यालय : ओछवलाल गोरधनदास शाह
टाइल, पाइप्स एण्ड सेनीटरी मरचेण्ट्स
खाडीआ, चार रस्ता, अहमदाबाद

फैक्टरी : सुएज फार्म रोड, अहमदाबाद
कार्यालय तथा निवास फोन : ५२२९२ फैक्टरी फोन : ५१६३६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[गुरुदेव.....पृष्ठ १६ का शेष]

भी न था, फिर भी बम्बई से तथा अन्य शहर तथा प्रान्त से भी बहुत से भक्तजन गुरुदेव को ढूँढते-ढूँढते आया करते थे। गणेशपुरी से ड़ेढ़ मील की दूरी पर इतिहास-प्रसिद्ध बहुत पुराना वज्रेश्वरी माता का मंदिर है। इस मंदिर के महंत श्री बलराम-गिरि और उनकी धर्मपत्नी भी गुरुदेव के प्रेमी थे। श्री वज्रेश्वरी देवी के दर्शनार्थ आने-जानेवाले यात्रियों के लिए श्री गुरुदेव ने धर्मशाला, दवाखाना आदि बनवाये थे जो आज भी मौजूद हैं। लेकिन उनमें इससे भी बड़ी एक शक्ति थी।

श्री गुरुदेव में इन सबसे विशेष, जिस महान दिव्य शक्ति का परिचय मिलता था, वह शक्ति थी कि जो कोई भी श्रद्धा-युक्त प्रेमपूर्ण हृदय से श्री गुरुदेव का स्मरण करता था, उसकी अंतरात्म-शक्ति को वे तुरंत जगा देते थे। इस शक्ति के जागृत होते ही साधक कुशलतापूर्वक, उल्हासपूर्वक अपनी साधना को पूर्ण कर सकता है। मानव समाज शांतिप्रिय, आनन्दप्रिय, उत्साह प्रिय, उन्नतिप्रिय है और दिव्य-जीवन की आशा रखता है। यह जीवात्मा कभी भी अपने को छोटा, कुरूप, अपूर्ण आदि बनाने की अथवा अज्ञानी मूढ़ दरिद्र-स्थिति में रहने की इच्छा नहीं करता; क्योंकि यह जीवात्मा परमात्मा से अभिन्न चिद् अंश है। इसलिए वह अपने महान स्वरूप का प्रत्यभिज्ञा स्मरण करता रहता है। लेकिन वह जि अधिक संसार में अग्रसर होता है, उ ही अपनी महिमा को भूलता जाता ऐसे समय में सच्चे मार्ग की तथा आत्म महिमावान स्वरूप की स्मृति और पह करा देनेवाले गुरु की अत्यन्त आवश्य होती है। गुरु के बिना अंतरात्मस्थि का प्राप्त होना कठिन है। मानव सम को दिव्य जीवन प्रदान करने में श्री गु समर्थ हैं, सर्वथा शक्तिशाली हैं। ज में सर्वत्र यही देखने में आता है कि प्रसिद्ध नट से दूसरा नट, पंडित से पं वैद्य से वैद्य, वकील से वकील, कारीग कारीगर, कलाकार से कलाकार, मल्ल से मल्लाह, विद्या प्राप्त करके तैयार हो है और उनके सदृश बन जाता है तदरूप हो जाता है। धनवान अ धन दे कर या विद्वान विद्या दे कर दू को धनवान अथवा विद्वान बना देते हैं कवि कालिदास के साथ कई कवि तै हुए थे। भगवत्भक्त के साथ कई भ बने हैं, योगी के साथ योगाभ्यास क तथा उनकी संगति में कई योगी बने हैं ठीक ऐसे ही श्री गुरु के साथ आत्म बन जाना कोई बड़े आश्चर्य की बात न है—यह बात श्री गुरुदेव नित्यानन्द बा बार कहा करते थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं काकभुशुंडी की एक कथा पढ़ी
काकभुशुंडी श्रीराम के अनन्य भक्त
उस कथा में ऐसा वर्णन है कि जो
काकभुशुंडी के साथ थोड़ा समय भी
था अर्थात उनसे सत्सङ्ग करता था
रामनाम का अनन्य उपासक बन जाता
इसी प्रकार भगवान बुद्ध के संग
लोग अहिंसावादी बन जाते थे।
कहते हैं 'संगति का प्रभाव'।
गौराङ्गप्रभु का चरित्र इस विषय में
तथा पढ़ने योग्य है। श्री
के पास जो कोई जाता था
प्रेमोन्मत्त बन जाता था। वह
उस समय किसी भी भाव में क्यों
लेकिन गौराङ्गजी को देख लेने पर
कुछ समय तक प्रेममय अवश्य ही
जाता था।

भगवान नित्यानन्द के पास भी अनेक
के लोग आते थे, लेकिन जो भी
था वह थोड़ी देर के लिए स्तब्ध-
अवश्य हो जाता था। कुछ लोग
दर्शन करके वैसे ही त्यागी बन
हैं। अरे! कोई-कोई तो बिलकुल
की तरह उठते, बैठते, मंदगति से
सित करते, हँसते, सूत्ररूप से बोलते
वैसे ही हावभाव करते दिखायी देते
यह सब बाह्य अनुकरण की बात
ठीक है लेकिन उन लोगों के अंतर की
को भी कौन जाने ? कुछ लोग आज
भी प्रातःकाल में पूज्य गुरुदेव की तरह पाँच आम्बे के वृक्ष तक घूमने आते हैं। कहने का मतलब यह है कि जो गुरुदेव के बाह्याचरण की सर्व प्रकार से नकल करते हैं और अंतर में मोह, वैरभाव, प्रमाद आदि रखते हैं तथा बहुत कुछ सग्रंह करके विलासी जीवन बिताते हैं वे सब लोग केवल दम्भी और नाटकीय ही होंगे।

भगवान नित्यानन्द मदमत्त हाथी की तरह ज्ञानोन्मत्त, गंभीर सागर की तरह मूर्तिमान प्रेमोन्मत्त, तुरीयातीत अमनस्क गति की तरह योगोन्मत्त की विलक्षण स्थिति में सतत आरूढ़ दिखायी देते थे। जो भी उपासक उनके पास आते थे उनको वे अपने-अपने भाव के अनुरूप दिखते थे। "अपने आत्माराम श्री नित्यानन्द ही हैं" इसलिए सब में यह दृढ़ आत्मनिष्ठा उदय हो जाती थी। गुरुदेव में एक ऐसी आकर्षण शक्ति थी, मानो उसका कारण उनकी अवर्णनीय, निष्काम अंतरात्मस्थिति ही थी।

एक बड़े आश्चर्य की बात है जिसको मैं प्रत्यक्ष देखता था। कोई एक भाविक भक्त आता और कहता—"बाबाजी, आप भगवान हैं, हमको मोक्ष दो।" दूसरा पढ़ा लिखा आदमी आता और बोलता—"बाबाजी, आप देव हैं मुझे ज्ञान दो"। तीसरा आता और कहता—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"बाबाजी हमको कुछ नहीं चाहिए, थोड़ा सा प्रेम दो"। "कहता है कि 'कुछ नहीं चाहिए' और इच्छा रखता है जो सत्य का पूर्ण आश्रय है ऐसे परमानन्दमय प्रेम की।" ऐसी गम्मत देख कर गुरुदेव 'हाँ' कहकर हँसते थे। जैसे स्टेट बैंक से साधारणतः सभी लोग जा कर कर्जा लेते हैं, वैसी ही यहाँ की भी स्थिति थी। अनेक स्त्रियाँ भी गुरुदेव के पास आती थीं। एक कहती "भगवान हमको बच्चा नहीं, बाबा! मुझको एक बच्चा दो, आपके पास बहुत हैं।" दूसरी आती और बोलती—"भगवान छः लड़कियाँ हैं, अब एक लड़का दो।" गुरुदेव कहते, "हाँ-हाँ श्रद्धा रखो, सब मिलेगा।"

कुछ समय पहले मैं हमेशा पंढरपुर जाया करता था। वहाँ नरसिंह स्वामी नामक एक सिद्धपुरुष थे। उनका और हमारा बड़ा प्रेमयुक्त परिचय था। इसलिए मैं साल में चार-पाँच बार पंढरपुर जाता था। पंढरपुर मेरा बहुत प्रिय क्षेत्र है। वहाँ मंदिर में पंढरीनाथ के पास भी हर रोज बहुत भीड़ जमती थी। अनेक प्रकार के भक्तलोग—ज्ञानी, सिद्ध, पढ़े-अनपढ़े, भोगी-त्यागी, पतित-पुण्यशील, राजा रंक—पंढरीनाथ विठोबाजी के पास जमा होते थे। पूजने योग्य भगवान श्रीहरि ही हैं। जगत की साधन-सामग्री में वे ही हैं—क्योंकि हरिमय जगत और जगतमय श्रीहरि। वहाँ के मंदिर में पंढरीनाथ के पास भी मैं गणेशपुरी के दृश्य ही छोटे रूप में देखता था।

श्री गुरुदेव के पास कोई आकर बोलता "बाबाजी, हमको विद्या दो," वैसे कोई धन, कोई घर, कोई नौकरी माँगता। दिनभर इसीप्रकार चलता था। रोज यही मजाक। और भी एक नयी गम्मत है कोई भक्त आ कर कहता—"बाबा मैं श्रीदत्त की नित्य पूजा करता हूँ कल जब आरती उतार रहा था उस आप दिखायी पड़े। इसलिये आज यहाँ दौड़कर आया हूँ।' दूसरा कहता "भगवान, आठ दिन के पहले के दृष्टान्त में बोले थे—'एक मन लड्डू लाकर बच्चों में बाँटों, इससे तुम्हारी तकलीफें टल जायेंगी तो ये लड्डू यहाँ रखे हैं।" तीसरा बाबाजी के सामने आकर पूछता—"कल रात स्वप्न में आकर आपने कहा 'तुम को एक नौकरी मिलेगी, जाओ' तो क्या मैं जाऊँ?" बाबाजी जवाब दे देते 'हाँ' वह चला जाता तो उसको नौकरी मिल भी जाती। ऐसी ही आश्चर्य जनक, उल्हासमय, भक्ति-श्रद्धा को बढ़ानेवाली अनन्त नयी-नयी घटनाओं को सुनते, देखते, अनुभूति करते-करते मनुष्यों का हृदय श्री गुरुदेव को गले आलिंगन कर लेता और उनके प्रति भक्ति के लिए श्रद्धा से झुक जाता।

[रूपान्तर : सम्पादन : अ. भा.] ★ [आगामी अंक में समाप्य]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[कुलपति का पत्र : पृष्ठ ९ का शेष]

स्वाकांक्षा है। यह तभी सम्भव है, कि मनुष्य अपनी व्यक्तिगत और हिक प्रवृत्तियों को किंचित् मात्र भी र के समर्पित करे और उसका उपकरण कर स्वयं को ऊर्ध्वगामी बनाये।

सब धर्मों का यही सार है। जैसा कि वी विवेकानन्द ने कहा है, इसके सभी धर्म महज़ अन्धविश्वास हैं। के रहने पर सब कुछ धर्म बन जाता है।

६) मातृभूमि

भवन के सभी प्रयास हमारी इसी धरोहर को केन्द्रित कर किये हैं, जो हममें से प्रत्येक का पुण्यभूमि से स्नेह का अटूट नाता जोड़ने में मदद करती है, जहाँ देवता भी जन्म को तरसते हैं और जो हम सबकी है तथा करोड़ों कण्ठों से वन्दे मातरम् के स्वरों में जिसकी प्रार्थना की है।

जो भी भवन के परिवार का सदस्य है, इसमें यह विश्वास जागृत करना आवश्यक है कि हमारी मातृभूमि की परम्पराएँ, विरासत, एकता, स्वतन्त्रता और भविष्य प्रत्येक व्यक्ति के साथ संलग्न है। कभी कभी मान-से होने के कारण, मातृ-भूमि के भविष्य की हमारी कल्पना अस्पष्ट हो जाती है। कभी-कभी हमें यह अनुभव होता है कि हमारे पुनर्जागरण की रचनात्मक शक्ति शेष हो गयी है, कि भाषावाद, प्रान्तीयता और सांप्रदायिकता की शक्तियाँ बढ़ रही हैं, कि देश की एकता खतरे में है और हमारे व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन में भोगवाद का जहर फैल रहा है।

ऐसे अवसरों पर हमें कुछ आश्वासन के चिन्ह भी दिखायी पड़ते हैं। उदाहरण के लिए, जब चीनियों का भारत पर आक्रमण हुआ तब विविध राजनीतिक दलों के आपस के झगड़े बन्द हो गये, भाषावाद का जोर कम हो गया और देश भर में एकता और देशभक्ति की लहर फैल गयी। ऐसे संकट के समय इस प्रकार का स्वतः स्फूर्त उत्साह और आक्रमणकारी का प्रतिकार करने की सामूहिक इच्छा कम ही देशों में दिखायी पड़ी है। अपने प्राणप्रिय मूल्यों के प्रति खतरे की इस चुनौती को हम सहर्ष स्वीकार करते हैं।

यदि सामूहिक रूप से कार्य करने की यह इच्छा वर्तमान सैनिक संकट में भी बनी रही तो हमारी पुनः जागृत संस्कृति फिर अपने उसी गौरवशाली रूप में चमक उठेगी, जैसा कि भारत में केवल एक ही बार, गुप्त-काल में हुआ था। तभी हम अपने संकुचित स्वार्थों से ऊपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उठ कर सम्पूर्ण भारत के प्रति अपनी एकनिष्ठा की सामूहिक चेतना के धरातल तक ऊँचे उठ सकेंगे। फिर एक भारत से एक विश्व और एक विश्व से सम्पूर्ण सृष्टि तक की एकता साध कर हम मानव की भावी को सुफल कर सकेंगे।

(७) परीक्षा

भवन के लिए अपने अस्तित्व के अधिकार की परीक्षा यही है कि विभिन्न क्षेत्रों और विभिन्न स्थानों पर इसके कार्य-कर्त्ता और विद्यार्थी एक ऐसी सेवा-भावना अपने में जागृत कर सकें, जो जीवन के मौलिक मूल्यों को कुछ हद तक अपने व्यक्तिगत जीवनों में चरितार्थ करने में उनकी सहायक हो।

किसी संस्कृति की रचनात्मक प्राण-शक्ति इसी में है कि उसके श्रेष्ठ व्यक्ति, चाहे उनकी संख्या कितनी ही कम क्यों न हो, मौलिक मूल्यों को अपने जीवन में चरितार्थ करने में जीवन की सार्थकता समझते हैं।

हमें यह जान लेना चाहिए कि संसार का इतिहास उन्हीं लोगों की कथा है, जिन्हें अपने आप में तथा अपने ध्येय में विश्वास था। जब किसी युग में ऐसे निष्ठावान व्यक्ति पैदा नहीं होते तब उस युग की संस्कृति का ह्रास होने लगता है।

अतः भवन की वास्तविक शक्ति उसकी इमारतों अथवा उसके द्वारा संचालित संस्थाओं की संख्या अथवा उसकी सम्प[illegible] और खर्च अथवा उसकी शैक्षणिक प्रवृत्ति[illegible] में नहीं है। वह तो इसके निष्ठा[illegible] मित्रों और कार्यकर्त्ताओं के चरित्र [illegible] निहित है। केवल यही लोग मा[illegible] स्वभाव में परिवर्तनकारी प्रभाव उ[illegible] कर सकते हैं।

(८) सहयोगी

कई निःस्वार्थ सेवाभावी महानुभा[illegible] ने भवन के विकास में योगदान दिया है[illegible]

मुंगालालजी गोयनका ने, जिन्हें मैं [illegible] अपने एक कुलपति-पत्र में 'विनम्र देवदू[illegible] की संज्ञा दी है, एक सोमवती अमवस्या [illegible] शुभ घड़ी में अपनी सारी भौतिक सम्प[illegible] दे देने का मुझसे आग्रह किया। भवन [illegible] बीजारोपण की भूमि यहीं से तैयार हुई[illegible]

कई आध्यात्मिक नेताओं और [illegible] गुरुओं और आचार्यों का भवन [illegible] आशीर्वाद प्राप्त है। इनमें सभी पी[illegible] के शंकराचार्य, स्वामी शिवानन्द, स्वा[illegible] रामदास, स्वामी अखण्डानन्द, स्वा[illegible] चिन्मयानन्द, स्वामी रंगनाथानन्द, ब[illegible] के बड़े पादरी कार्डिनल ग्रेशियस [illegible] आर्चबिशप रोबिन्सन हैं। इनमें [illegible] कुछ तो भवन को अपनी ही संस्था मा[illegible] हैं। मैं आशा करता हूँ कि उनके आशी[illegible] के अनुरूप ही सिद्ध होने का हम प्र[illegible] करते रहेंगे।

सरदार वल्लभभाई पटेल, डॉ राजे[illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डॉ. एस. राधा कृष्णन् और श्री राजगोपालाचारी जैसे देश के महान भवन के पथप्रदर्शक और मित्र हैं। भवन के कार्यों की प्रसंशा डॉ. हुसेन और प्रधान मन्त्री श्री शास्त्री, एटली और प्रेसिडेण्ट डीवेलेरा, सर वी. रमन, भारतरत्न डॉ. भगवान डॉ. सी. पी. रामास्वामी अय्यर, बुंच, प्रॉ. पिथिरिम सोरोकिन, कारलोस पी. रोमुलू तथा राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के अनेक व्यक्तियों हैं। श्री. एस. के पाटिल तो हमारे सदा शक्ति के स्तम्भ रहे हैं।

वाणिज्य और उद्योग क्षेत्र के कई व्यक्तियों ने भवन के कार्यों के प्रति संतुष्ट और आकर्षित होकर उदारतापूर्वक दान दिया है। हमें इन लोगों की सदिच्छा प्राप्त करने की चेष्टा करते रहना चाहिए। विभिन्न क्षेत्रों के बहुत से प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने भवन के मुख्य कार्यालय और केन्द्रों के उपाध्यक्ष, ट्रस्टी, चेयरमैन, उपचैयरमैन, मानद् सचिव, मानद् कोषाध्यक्ष, नियामक और समिति के सदस्य बन कर और निशुल्क सेवाएँ प्रदान कर भवन का गौरव बढ़ाया है।

भवन की पत्रिकाओं और अन्य प्रकाशनों के हजारों पाठकों ने पर्याप्त मात्रा में अपनी सदिच्छा और स्नेह हमें दिया है। उनसे हमें अधिकाधिक मात्रा में शक्ति और पोषण प्राप्त करते रहना चाहिए। अपनी पत्रिका और अन्य प्रकाशनों में हम संसार की उन महान आत्माओं का दिव्य सन्देश पहुँचाने का प्रयास करते हैं, जिन्होंने मानवता को सनातन सत्य का दर्शन कराया। हमें उनकी वाणी का मनन करना चाहिए, उनके उपदेशों पर चलना चाहिए और अपने मित्रों, कार्यकर्त्ताओं और शिक्षार्थियों को भी ऐसा करने के लिए प्रेरित करना चाहिए।

भवन की अनेक संस्थाओं से शिक्षा प्राप्त कर जीवन में पदार्पण करनेवाले नवयुवक और नवयुवतियों को इस चेतना से अभिभूत होना चाहिए कि वे भारत के गौरवशाली अतीत के उत्तराधिकारी हैं और अपनी मातृभूमि, और उसके माध्यम से संसार के लिए, एक सुन्दर भविष्य बनाने के लिए उन्हें सचेष्ट रहना है। भवन को भी उनके लिए केवल कक्षाओं में ही नहीं, बल्कि प्रार्थनाओं, सभाओं, शिविरों और परिगोष्ठियों द्वारा भवन को छोड़ने के बाद भी, व्यक्तिगत सम्पर्क का अवसर देकर उन्हें प्रेरणा देते रहना चाहिए।

भवन ने अपनी संस्थाओं की स्थापना केवल शिक्षा, सूचना अथवा अच्छी नौकरियों के लिए योग्यता प्रदान करने के लिए ही नहीं की। इसका ध्येय शैक्षणिक संस्थाओं में उच्चतर मूल्यों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के प्रति श्रद्धा पैदा करना, जीवन में अपने आदर्श के प्रति निष्ठावान होना, शिक्षा देने और प्राप्त करने के दैनिक कार्यों से ऊपर उठ कर जीवन में समर्पण की भावना लाना और सुगठित व्यक्तित्व का निर्माण करना है। शिक्षा देना और प्राप्त करना अपने आप में ध्येय नहीं। हमारी संस्थाओं का संचालन इस प्रकार होना चाहिए कि शिक्षकों और विद्यार्थियों और उनके जरिए पूरे शैक्षणिक कार्यक्रम में ही उच्चतर मूल्यों की स्थापना हो। इस समय शिक्षकों और विद्यार्थियों में व्यक्तिगत सम्पर्क का निरन्तर अभाव होता जा रहा है जिसके परिणामस्वरूप फैक्टरी की तरह विद्यालय भी स्तानक तैयार करते हैं और एक प्रकार की नियोंजित अव्यवस्था फैल रही है। हमें इसी का प्रतिकार करना है।

हमारे यहाँ ऐसे कई श्रद्धालु स्त्री-पुरुष शिक्षक हैं, जो धार्मिक आस्था के साथ प्रार्थनाएँ करवाते हैं और शिविरों का आयोजन करते हैं, ताकि विद्यार्थी और शिक्षक के बीच व्यक्तिगत सम्बन्ध स्थापित हों। विद्यार्थी का बौद्धिक विकास ही पर्याप्त नहीं है। उसका नैतिक और आध्यात्मिक विकास भी होना चाहिए। इसीलिए मैं शिबिरों, प्रार्थनाओं, धार्मिक चर्चाओं और उत्सवों पर जोर देता हूँ। इनसे कुछ मात्रा में गुरूकुल की भावना उत्पन्न होती है जोकि भवन के जीवन में एक महत्वपूर्ण तत्त्व है।

मैं आशा करता हूँ कि इस तथ्य को कभी नहीं भुलाया जायगा कि सभी मित्रों, कार्यकर्त्ताओं और विद्यार्थियों ने इस मिशन में भाग लिया है और भवन को जो शक्ति और प्रभाव उन्हें प्राप्त है, वह इन्हीं की बदौलत है। हमारे यहाँ इस परम्परा का विकास हुआ है कि सभी सहयोगी अपनी सामर्थ्यभर भवन को समय, शक्ति अथवा धन, जो कुछ भी दे सकते हैं, दें। मैं आशा करता हूँ कि यह स्वस्थ परम्परा उस समय भी सुरक्षित रखी जायगी जब हममें से कुछ यहाँ नहीं रहेंगे।

कुछ हद तक भवन का विकास अपने संविधान के फलस्वरूप भी हुआ है, जिसने अवैतनिक और साधारण पारिश्रमिक पर कार्य करनेवाले कार्यकर्त्ताओं की एक संस्था खड़ी की है। इस सामूहिक प्रयास में नये मित्रों और नये कार्यकर्त्ताओं को निरन्तर आकर्षित करने के साथ-साथ संस्था को सतत रूप से सुगठित और प्रभावशाली रूप देने का प्रयास भी हम करते हैं। भवन के संविधान का मुख्य श्रेय मुख्य न्यायधीश शेलत को है, जो आरम्भ से ही भवन के कार्यों में योग देते रहे हैं।

(९) अविस्मरणीय

भवन के प्रारम्भ काल से ही हरसिद्ध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं और मम्मी भवन के शीर्षस्थ अधिकारी रहे हैं। हम तीनों में से हरेन्द्र भाई और मैं अस्वस्थ और वृद्ध होने पर भी अपनी शक्ति भर कार्य करते रहे हैं। मम्मी ने सभी प्रकार के उत्तरदायित्वों का भार सहर्ष संभाल रखा है, जिसमें धन एकत्र करना, कई महत्वपूर्ण विभागों का संचालन करना, निर्माण कार्य की देखरेख करना तथा भवन के उद्देश्यों की ऊँचा रखना सभी कुछ शामिल हैं। मैं समझता हूँ कि भवन का संचालन तब ही भली प्रकार नहीं हो सकता, जब कि ये तीन शीर्षस्थ अधिकारी पारस्परिक विश्वास द्वारा एकरूप नहीं हो जाते, और अन्ततः इन में से एक भवन के ध्येय का प्रतीक नहीं बन जाता और अपना पूरा समय तथा ध्यान दिन प्रति दिन उठनेवाली विविध समस्याओं पर नहीं देता।

यद्यपि मैंने प्रायः अपना सम्पूर्ण जीवन सक्रिय राजनीति में बिताया है, फिर भी भवन को अपनी राजनीतिक प्रवृत्तियों में सहायक बनाने से मैं सदा बचता रहा हूँ; बल्कि भवन की प्रवृत्तियों को अपनी अन्य किसी प्रवृत्ति के साथ संलग्न न होने देने के लिए सदा सचेष्ट रहता हूँ। भावी प्रमुख अधिकारियों को भी सदा ध्यान में रखना चाहिए कि यदि इस नीति का उल्लंघन किया गया तो भवन एक मिशन नहीं रह पायेगा।

मैं जानता हूँ कि कई शिक्षाविद् भवन को एक मिशन के रूप में मानना मुश्किल समझेंगे। परन्तु मैं यहाँ फिर कहना चाहूँगा कि भवन के मूल में एक छोटे से मित्र मण्डल की यही इच्छाशक्ति कार्यरत रही है कि सांस्कृतिक, नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों को, अविराम रचनात्मक प्रवृत्तिद्वारा, व्यक्तिगत और सामूहिक जीवन में चरितार्थ करना चाहिए। भवन ने जो भी कार्य हाथ में लिया, उसको सफलतापूर्वक पूर्ण करने में जो परिश्रम और कष्ट कई मित्रों और कार्यकर्त्ताओं ने उठाया, जिनमें विभागों के अध्यक्ष, कालेजों के प्रिन्सिपल तथा अन्य कर्मचारीगणभी हैं, उन पर मैं गर्व कर सकता हूँ।

व्यवस्था और शिक्षा-विभाग के कर्मचारियों के प्रति, विशेषकर जिन्होंने पूरी श्रद्धा और लगन के साथ रामकृष्णन्, रामन, और शिवरामकृष्णन् के नेतृत्व में व्यवस्था विभागों में, तथा आचार्य दीक्षितारजी, प्रिंसिपल नाइक और प्रिंसिपल पारेख के नेतृत्व में शिक्षा विभाग में, सुयोग्य और निष्ठावन कार्यकर्त्ताओं की टीम तैयार करने में मदद की है, आभार प्रकट करने में मुझे अत्यन्त प्रसन्नता होती है।

(१०) मौलिक वृत्तियाँ

भवन द्वारा संचालित शैक्षणिक संस्थाओं की संख्या में वृद्धि तथा व्यवस्था-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार्यों के विकास के साथ-साथ यह आवश्यक हो गया है कि हम भवन के ध्येय की ओर उसके कर्मचारियों के दृष्टिकोण पर नजर रखें।

मैं यहाँ उन मौलिक वृत्तियों को स्पष्ट करना चाहूँगा, जिनका विकास करने की मैं भवन से सम्बन्धित प्रत्येक व्यक्ति से आशा करता हूँ।

(१) भवन के उद्देश्यों को समझना और उनके साथ तादात्म्य अनुभव करना, जिसकी अभिव्यक्ति प्रत्येक कार्य क्षेत्र में उन उद्देश्यों को प्राप्त करने के निरन्तर प्रयास के रूप में हो।

(२) भवन के प्रति समर्पण की भावना, जिससे प्रेरित हो प्रत्येक व्यक्ति स्वयं से यह पूछे कि मैं भवन के लिए क्या कर सकता हूँ, न कि भवन से मैं क्या प्राप्त कर सकता हूँ ?

(३) हमारी मातृभूमि की संस्कृति, विशेषकर धर्मग्रन्थों, महाकाव्यों और भगवद्गीता की शिक्षाओं के प्रति गहन श्रद्धा।

(४) एकांत में अथवा सामूहिक रूप से नित्य प्रार्थना करने की आदत, तथा किसी भी कार्य के प्रारम्भ में भगवान की कृपा प्राप्त करने के लिए प्रार्थना करना, और उस कार्य को इस प्रकार करना कि वह ईश्वर को अर्पित किया जा सके।

(५) संस्कृत भाषा के प्रति उत्कट प्रेम, उसे स्वयं सीखना तथा दूसरों में प्रचार करना।

(६) एक ऐसे स्वस्थ मानस का विकास करना, जो रुढ़ियों अथवा कल्पनाओं से विचलित न हो, बल्कि जिसकी जड़ें अतीत में हों, जो वर्तमान के महान तत्त्वों से पोषण प्राप्त करे और अधिक उज्वल भविष्य के लिए सचेष्ट हो।

मैं प्रभु से प्रार्थना करता हूँ कि सभी वर्तमान-भावी मित्र और भवन के कार्यकर्त्ता इन्हीं वृत्तियों को अपनायेंगे तथा जब मैं और भवन के वर्तमान मित्र और कार्यकर्त्ता नहीं रहेंगे, तब भी भवन उत्तरोत्तर शक्ति प्राप्त करता रहे और अपने ध्येय की ओर निरन्तर प्रगतिशील हो।

यह हम सभी का कर्तव्य है कि 'ईश्वर प्राणिधान' की दृष्टि से हम अपना कार्य करें, जिससे ईश्वर की उपस्थिति में जीने और उसकी इच्छा के प्रति यथाशक्ति समर्पित होने का भाव हममें जागे। हमें सदा याद रखना चाहिए कि केवल उसीकी इच्छा पर कोई प्रयास अथवा उसका परिणाम निर्भर करता है। हम केवल उसके उपकरण हैं; परन्तु महत्व की बात तो यह है कि उसके उपकरण होने के योग्य हम बनें।

आपका,

कन्हैयालाल मुन्शी

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन के लिए बम्बई से प्रकाशित व मुद्रित तथा एसोसिएटेड एडवर्टाइजर्स एण्ड प्रिन्टर्स, तारदेव, बम्बई ३४ में मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

THE NATIONAL RAYON CORPORATION LIMITED

WHERE QUALITY AND QUANTITY GO TOGETHER

THE LARGEST AND LEADING MANUFACTURERS OF RAYON YARN IN

450, 300, 150, 120, 105, 100, 75 AND 60 DENIERS

Head Office :
Ewart House, Bruce Street,
Fort, Bombay–1.
Gram :
"NARACORP" BOMBAY
Phone : **259291**(5 Lines)

Registered Office :
Eros Bldg., 42 Queen's Road,
Fort, Bombay–1.
Phone : **246063; 246064; 246065**

Plant :
Mohone, Kalyan (C.Rly.)
Phone : KALYAN NRC

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वंतत्रता की ज्योति जगमग रखने में खनिज तेल का योगदान

बियाबान जंगल हों या बर्फीली पहाडियाँ, धूलभरे रेगिस्तान या खतरनाक दलदल – देश की सीमाओं की रक्षा का कार्य तेल पर निर्भर है। टैन्क और ट्रक चलते रहें, रसद और हथियार पहुँचते रहें – इसके लिए जरूरी है कि तेल समय से सुलभ होता रहे।

सुरक्षा सेनाओं को इण्डियनऑयल पूरा सहयोग देता है जिससे देश की प्रतिष्ठा और सम्मान को तनिक भी आँच न आने पाये।

INDIANOIL

राष्ट्र की आर्थिक समृद्धि का प्रतीक

इण्डियनऑयल कारपोरेशन लि.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

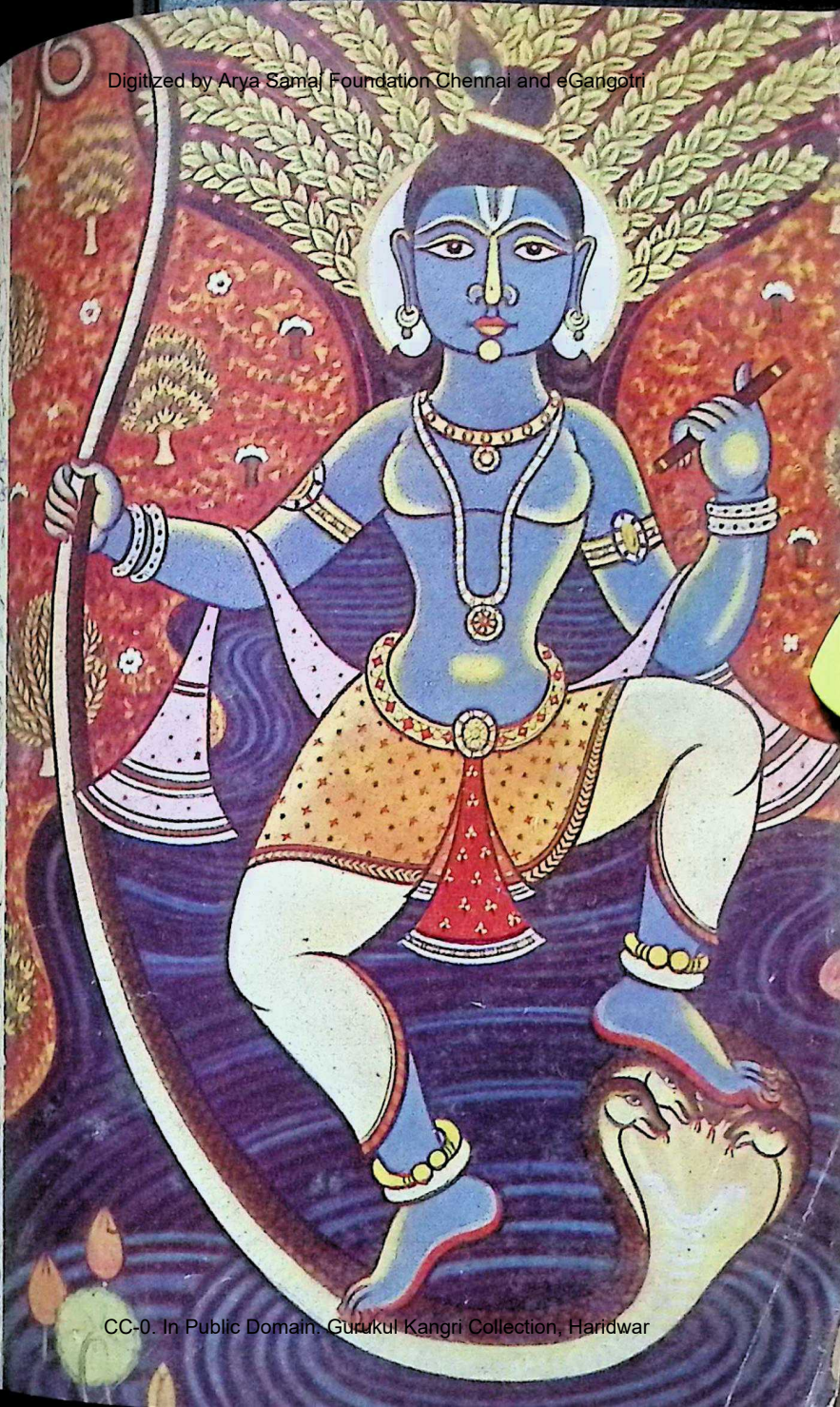

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतमें सब जगह प्रसिध्द

चँपियन

(रजिस्टर्ड)

सबकी पसंदगी

गुजरात इंडस्ट्रीज प्रायव्हेट लि., बंबई २

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रत्नकी तरह

चमकदार

आँखोंके

लिये

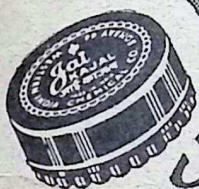

जाई काजल

आँखों को ठंडक पहुँचाकर सौंदर्य बढ़ाता है।

वेस्टर्न इन्डिया केमिकल कंपनी.
बोरिवली, बम्बई-६६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साठे

बिस्कुट

इतने स्वादिष्ट कि बस पूछिए ही नहीं !

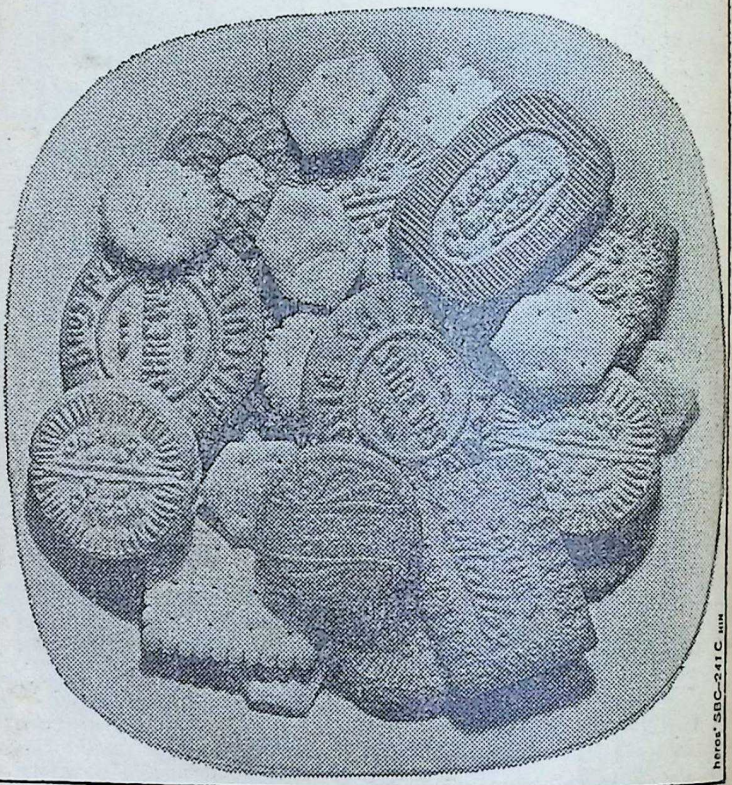

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष १० : अंक १] भारती [५ सितम्बर १९६५

संस्थापक :
कन्हैयालाल मुन्शी

प्रधान सम्पादक :
वसन्तकृष्ण ह. दवे

प्रकाशक :
सु. रामकृष्णन्

सम्पादक :
वीरेन्द्रकुमार जैन

सहयोगी :
श्रीराम मिश्र
ओंकारनाथ शर्मा
रामलाल शुक्ल

कार्यालय :
भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड,
बम्बई ७

एक अंक : ७५ पै.
वार्षिक : ६.५० पै.
अर्धवार्षिक : ३.५० पै.

ऋग्वेद	: प्रार्थना	५
कन्हैयालाल मुन्शी	: कुलपति का पत्र	६
स्वामी मुक्तानन्द	: श्री गुरु-कृपा और सुलभ साधन	१६
स्वामी प्रभुलाल गणपतराम जोशी	: नर-नारी का प्रेम और भागवत प्रेम	२०
सु. रामकृष्णन्	: समन्वय की साधना	२८
दीनेन्दु भारती	: नया अक्षयवट	३३
म. म. डॉ. गोपीनाथ कविराज	: योग शक्ति द्वारा आसन का उत्थान और आकाशगमन	३४
डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल	: मनुष्य के पूर्णत्व और अमरत्व का प्रतीक : पूर्णकुम्भ	४६
ऋताश्री	: प्रणय : एक प्रक्रिया	५०
जगदीश चतुर्वेदी	; अगवानी	५१
डॉ. कन्हैयालाल मुन्शी	: आर्य संस्कृति का आद्य-केन्द्र : नैमिषारण्य	५४
श्रीमती लीलावती मुन्शी	: हुतात्मा महासती जोन ऑफ आर्क	५८
राजेन्द्रप्रसाद सिंह	: सिन्धु-सम्बोध	६२
सर हर्बर्ट रीड	: भीतरी मनुष्य का महानतम अधुनातन शिल्पी : हेनरी मूर	६६
जैनेन्द्र कुमार	: मुक्ति ?	७४
वीरेन्द्र कुमार जैन	: हमारा कल का मकान	७८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीतूभाई प्र. मेहता	: भारतीय संगीत में प्रणय की रस-भीनी रागिनियाँ	८२
अमृता भारती	: देवांशिनी का आत्म-निवेदन	८६
ज्योत्स्ना मिलन	: दो कविताएँ	
रमेशचन्द्र शाह	: धार्मिक कविता और आन्तरिक अध्यात्म: महाकवि रिल्के	७८
एन्थॉनी ब्रूक	: सन् १९६७ में परमाणविक विस्फोट द्वारा विश्वव्यापी आध्यात्मिक क्रान्ति होगी	१०६
एडवर्ड एलन	: मोमबत्ती का प्रकाश	११४
दिनेशचन्द्र शाह	: भारतीय कला का समृद्ध प्रतीक : कमल	११८
जयकान्त पटनी	: अस्तित्व का आनन्द	१२७
कन्हैयालाल मुन्शी	: कृष्णावतार	१२९
शचीन्द्रनाथ सान्याल	: विज्ञान और हिन्दू धर्म	१३६
जोनाथन मार्टिन	: महाकवि विलियम ब्लैक: जो शताब्दियों पूर्व गुजरी आत्माओं से भेंट किया करते थे	११४

आवरण चित्र : **कालिय-मर्दन**

चित्रकार : **के. राजैय्या**

भीतर के संगीत-रागिनियों के
दोनों रंगीन-चित्र : श्री गजेन्द्रकुमार सिंह के सौजन्य से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः ।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[प्रत्येक दिशा से शुभ एवं
सुन्दर विचार हमें प्राप्त हों]

आगामी विश्व विकास
का सूचक :
जीवन, साहित्य और
संस्कृति का पाक्षिक

प्रार्थना

ओऽम् अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्
विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां
ते नम उक्तिं विधेम॥

हे प्रकाशस्वरूप परमात्मन्, ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिए हमें धर्मयुक्त मार्ग पर चलाओ। आप हमारे सब कर्मों को जानते हो। हमें पाप कर्मों से दूर रखो। हम सब आप की स्तुति किया करें।

अ. १-१८९-१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुलपति का पत्र

जीवन साहित्य तथा संस्कृति से संबंधित

● देवदूत गान्धीजी

भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड, बम्बई ७
५ सितम्बर, १९६५

मेरे युवा मित्र,

गांधीजी को देशभक्त 'राष्ट्रपिता' और इतिहासकार 'भारत के मुक्तिदाता कह कर पुकार सकते हैं; परन्तु हमें यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि गांधीजी उन देवदूतों की दिव्य श्रृंखला की अटूट कड़ी ,थे जिन्होंने नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों के प्रतिपादन के लिए बर्बर शक्तियों के विरुद्ध संघर्ष किया।

किसी विशेष काल या सभ्यता की आचार-संहिता गांधीजी को प्रभावित नहीं करती थी। वे तो उस नैतिक व्यवस्था में विश्वास करते थे, जिसका उपदेश मसीहोंने हमें दिया और जिसका गुणगान कवियों ने अपने गीतों में किया। मनुष्य में जो नैतिकता की अन्तर्प्रवृत्ति छिपी है, उसे अपूर्व सफलता के साथ प्रकट करने का श्रेय इन्हीं को है।

गांधीजी की उपलब्धियाँ इससे और भी अधिक श्रेयस्कर हो जाती हैं कि वे एक ऐसे युग में जिये जिसमें ईश्वर की उपेक्षा और नैतिकता के प्रति विद्रूप की भावना पनप रही थी। भौतिक जगत के नियम मानव की गहनतर आकांक्षाओं पर लागू नहीं होते, फिर भी तथाकथित वैज्ञानिक सिद्धान्त मनुष्य की नैतिकता में, बल्कि स्वयं मनुष्य में, विश्वास क्षीण करने में सहायक हुए हैं। उदाहरण के लिए, नैतिकता का उपयोगितावादी सिद्धान्त अधिक से अधिक लोगों की अधिकतम भलाई में विश्वास करता है। वह इस विश्वास पर टिका है कि मनुष्य का सबसे अच्छा मार्गदर्शक उसकी बुद्धि ही है। वास्तव में यह सिद्धान्त सामूहिक स्वार्थ को ही सर्वोच्च स्थान दे बैठा है। परिणामस्वरूप, शक्ति-लोलुप समुदाय,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वार्थ और परमार्थ का भेद मिटाये बिना, बड़ी-बड़ी संख्या में लोगों को वोट देने ले जाते हैं।

जीव-विकास सिद्धान्त के जनक, डारविन ने नैतिक जीवन पर भी जीव शास्त्र के नियमों को लागू करने का प्रयास किया। उनकी कसौटी अधिक सक्षम का बचे रहना था। इस प्रकार उन्होंने जंगल के कानून को ही मनुष्य की महत्वाकांक्षाओं का एकमात्र पथ प्रदर्शक बना लिया।

आधुनिक एक तंत्रवाद के जन्मदाता हीगेल को तर्कशास्त्र ने वैयक्तिक नैतिकता को गौण स्थान दिया और नैतिक आचरण के ऊपर राज्य की आवश्यकताओं को बताया। उन्हीं तर्कों से 'सोवियत नैतिकता' के साम्यवादी सिद्धान्त का आविर्भाव हुआ। लेनिन ने कहा है 'वर्ग संघर्ष के हितों के सर्वथा अधीन हमारी नैतिकता है'। उसकी कसौटी है साम्यवाद के सिद्धान्तों को पूर्णतः सफल करने के लिए क्या आवश्यक है? और क्या आवश्यक है, इसका निर्णय अन्तिमरूप से साम्यवादी दल ही करेगा, अर्थात् समय-समय पर जो उसके नेता होंगे, वे ही करेंगे। आज जो नैतिक है, वही कल अनैतिक हो सकता है और आज जो अनैतिक है, वही कल नैतिक हो सकता है।

गान्धीजी नैतिकता का समर्थन स्पष्ट रूप से और बिना किसी समझौते के करते थे। उनका सबसे पहला कार्य नैतिक मूल्यों को अपने व्यक्तिगत जीवन में चरितार्थ करना था। धीरे-धीरे उन्होंने केवल अहिंसा और सत्य का ही व्रत नहीं लिया, बल्कि अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह के महाव्रतों की भी साधना की, जिनका वर्णन पतंजलि ने योग सूत्र में किया है और बताया है किसी भी स्थान अथवा काल में योग की साधना करनेवाले को इनका पालन अनिवार्य है।

नैतिक कारणत्व का न्याय जिसे गान्धीजी विश्वव्यवस्था का एक रूप कहते थे, विश्वव्यापी और अनिवार्य है। इस न्याय के अनुसार यदि सत्य की प्राप्ति की जाय तो स्थायी उपलब्धियाँ अपने आप सुलभ हो जायेंगी; यदि अहिंसा की सिद्धि हो जाय तो प्रेम आकृष्ट होगा; यदि ब्रह्मचर्य का पालन किया जाय तो शक्ति स्वयं चली आयेगी, यदि सम्पूर्ण ईमानदारी बरती जाय तो धन स्वयम् चला आयेगा; यदि अपरिग्रह का पालन किया जाय तो आत्मानुभूति उपलब्ध हो जायेगी— यही एक मार्ग है। यदि इस नियम का पालन मनुष्य दृढ़ता से करे, तो उसके अद्यतन और भावी जीवन का वातावरण इस प्रकार परिवर्तित हो जायेगा कि हरएक के लिए सर्वोदय की प्राप्ति हो जायेगी।

नैतिक कारणत्व के न्याय का वर्णन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करनेवाले सूत्रों की गान्धीजी की व्याख्या उनकी प्रतिदिन की प्रार्थना सभाओं में उच्चारित श्लोकों में पायी जाती है। इन श्लोकों में सत्य, अहिंसा, अस्तेय, असंग्रह, अस्वाद, ब्रह्मचर्य, शरीर-श्रम, स्वदेशी, स्पर्श भावना (छुआछूत का त्याग), समभाव (दूसरों द्वारा अनुभव किये गये सत्य का भी समानरूप से आदर) और अभय पर वल दिया गया है।

गान्धीजी की मान्यता थी कि मनुष्य भौतिक शक्तियों द्वारा विरचित अथवा संक्रांत नहीं है। कुछ आधुनिक सामाजिक विचारकों के मतानुसार वह वातावरण का दास भले ही हो, परन्तु गान्धीजी उसे वैसा नहीं मानते थे। उनके अनुसार, मनुष्य आनुवंशिक तथा अपने आस पास के वातावरण की शक्तियों तथा नैतिक और आध्यात्मिक शक्तियों, जो कई जन्मों में कार्यरत रहती हैं, सम्मिलित रूप से प्रभावित रहता है।

मनुष्य द्वारा महान व्रतों का अपने जीवन में चरितार्थ करना नैतिक शक्ति द्वारा ही सम्भव है। इसी रूप में, वैश्विक व्यवस्था, मानव आचरण में प्रकट होती है। नैतिक शक्ति मनुष्य को पशुत्व से निकाल कर देवत्व की ओर प्रेरित करती है। इस रचनात्मक शक्ति का उपयोग वह केवल अपने ही मौजूदा और भावी जीवन में परिवर्तन लाने के लिए नहीं कर सकता, कि सामाजिक और भौतिक वातावरण का रूप परिवर्तन भी वह इसमें कर सकता है।

गान्धीजी की असाधारण आत्मकथा 'मेरे सत्यानुभवों की कहानी' एक साधारण मनुष्य से सत्य के संदेशवाहक के रूप में उनके परिवर्तित होने का एक अच्छा आलेख है। गांधीजी न अपने जीवन के प्रारंभिक काल से ही आत्मानुशासन का पालन किया था। उन्होंने धूम्रपान और मांसभक्षण छोड़ दिया, रहन-सहन और कपड़ों में वे सादगी का आचरण करने लगे और व्यक्तिगत सम्पदा तथा धन का उन्होंने सर्वथा त्याग कर दिया। विवाहित होने पर भी ३७ वर्ष की अवस्था में उन्होंने पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन प्रारंभ कर दिया और धीरे-धीरे वे क्रोध, घृणा, आत्मश्लाघा, वदले की भावना, कोढ़ियों से दूर भागने, प्लेग का भय तथा अन्य वासनाओं और स्वार्थ अथवा अहंकार-पूर्ण भावनाओं पर नियंत्रण करने में सफल हुए। अपने शरीर और उसकी आवश्यकताओं पर मुनियों के समान आत्म-नियंत्रण करने के साथ-साथ उन्होंने अपना नैतिक और आध्यात्मिक विकास भी साधा, इसकी परिणति उनके सत्यान्वेषण और सत्य की सेवा में हुई। सत्य को ही वे भगवान कहते थे।

[शेष पृष्ठ १० पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

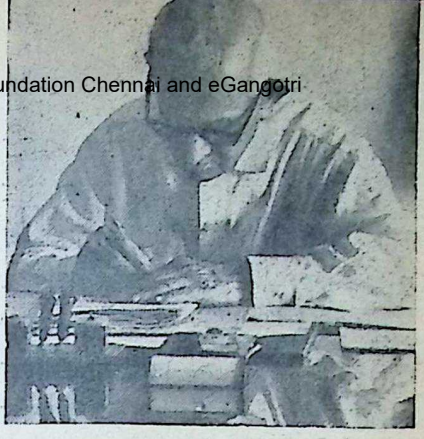

प्रस्तुत वार्षिकांक के साथ 'भारती' अपने दसवें वर्ष में प्रवेश कर रही है। इस अवसर पर मैं उसके हज़ारों पाठकों और उसके संचालक, भारतीय विद्या भवन के देश-व्यापी विशाल परिवार का हृदय से स्वागत करता हूँ।

नौ वर्षों की अपनी इस यात्रा में 'भारती' ने देश के विभिन्न भागों में अनेक मित्र बनाये हैं, और हज़ारों नये घरों के प्यार और स्वागतभरे द्वार उसके लिए खुले हैं। यह देख कर मुझे आनन्द होता है।

'भारती' की अपनी एक विशेषता यह रही है, कि विश्व-व्यापी नकार और विघटन के इस संकटकाल में उसने अपने पाठकों को, मौलिक अध्यात्म पर आधारित एक विधायक जीवन-दर्शन प्रदान करने का प्रयास किया है।

भारतीय संस्कृति मानवीय अभीप्साओं का एक अक्षय कोष है। इतिहास में भारत की अपनी एक परम्परा और मिशन रहा है। गत अट्ठाईस वर्षों में इस परम्परा और मिशन का संवाहक होने का श्रेय भवन को प्राप्त हुआ है। भवन की अन्य पत्रिकाओं की तरह ही 'भारती' ने भी इस महत् कार्य में अपना विनम्र योगदान किया है।

अपने देश-व्यापी पाठकों के विशाल समुदाय में 'भारती' भारतीय संस्कृति पर आधारित पारिवारिक आत्मीयता के इस बन्धन-सूत्र को दृढ़तर बनाये, और भारत और भवन के आध्यात्मिक और नैतिक सन्देश को और भी अनेक नये हृदयों और घरों तक पहुँचाये, यही मेरी शुभकामना है।

मैं आशीर्वाद देता हूँ, कि 'भारती' अपने इस उद्देश्य में उत्तरोत्तर अधिक सफलता प्राप्त करे।

—कन्हैयालाल मुन्शी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनका सम्पूर्ण जीवन इस शक्ति को अपने व्यक्तिगत जीवन में चरितार्थ करने में ही बीता। मन, वचन और कर्म में एकात्मकता साधना ही उनका महान लक्ष्य था। 'मानस्येकम्, वाचस्यकम्, कर्मण्येकम् महात्मनम्' उनके लिए मात्र एक आदर्श वाक्य ही नहीं था, बल्कि उसका सर्वथा पालन करना वे आवश्यक समझते थे। उनकी उपलब्धियाँ चाहे जितनी महान रही हों, पर वे सब इस प्रयास की आंशिक अभिव्यक्तियाँ ही हैं।

गान्धीजी ने सत्य की नैतिक शक्ति को कैसे पहचाना, यह एक रोचक कथा है। अपने बाल्यकाल में उन्होंने 'श्रवण पितृभक्ति' नाटक पढ़ा और अभिनीत होते भी देखा था। इसका जबरदस्त प्रभाव उनके मन पर पड़ा। उन्होंने इसे अपने जीवन का आदर्श बना लिया। फिर उन्होंने 'हरिश्चन्द्र' नाटक भी देखा। वे कहते हैं: "इसने मेरे मन को आन्दोलित कर दिया और अपने सम्मुख मैंने अनेकों बार हरिश्चंद्र की भूमिका की होगी। दिन-रात यही प्रश्न मेरे मन को कचोटता रहता कि सभी कोई हरिश्चद्र क्यों नहीं बन जाते।" इसी से उनमें सत्यान्वेषण की प्रवृत्ति जागी।

उनके प्रारंभिक संघर्षों से जान पड़ता है कि उनमें भी मानवोचित कमजोरियाँ थीं। वे मांसाहारी बने, धूम्रपान भी उन्होंने किया और सिगरेट खरीदने के लिए उन्होंने अपने भाई से पैसे भी चुराये। वे एक वेश्यालय में भी गये, परन्तु शर्म के मारे उल्टे पैरों लौट आये। अपने पिता की मृत्यु के समय भी वे अपनी काम-वासना को नहीं रोक पाये। अपनी 'असफलताओं' पर उन्हें इतनी ग्लानि हुई कि उन्होंने अपने सभी दोषों को स्वीकार करते हुए अपने पिता को पत्र लिखा, जिसमें कठोर दंड पाने की याचना की गयी थी।

उनके पिताजी ने अपनी रोग-शैय्या पर इस पत्र को पढ़ा और आँसू बहाते हुए उन्होंने इस पत्र को फाड़ डाला। "मैं भी रो पड़ा... प्रेम के इन मोतियों ने मेरे हृदय को परिष्कार कर दिया और मेरे पापों को धो डाला। जिसने ऐसे प्रेम का अनुभव किया है, वही उसे जान सकता है... मेरे लिए यह एक अहिंसा का पाठ था। जब ऐसी अहिंसा सर्व-ग्राही हो जाती है, तब वह अपने सम्पर्क में आनेवाली प्रत्येक वस्तु को परिवर्तित कर देती है। उसकी शक्ति असीम है।"

आयोजित धार्मिक और शैक्षणिक प्रवृत्तियों से गांधीजी प्रभावित नहीं होते थे। भगवद्गीता के पाठ, तुलसीदास के महान ग्रंथ रामचरित्र मानस में से दोहे-चौपाइयों का सस्वर पढ़ना और संत-कवि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नरसी मेहता के अमर भजन 'वैष्णव जन तो' के बारम्बार गायन से वे इस परिणाम पर पहुँचे थे कि सभी वस्तुओं का आधार नैतिकता है और सत्य ही सब नैतिकता का सार है। और "सत्य ही मेरा एकमात्र ध्येय बन गया", उन्होंने कहा।

अपनी आत्मकथा में गांधीजी ने ब्रह्मचर्य के विषय में काफी लिखा है। "ऐसे ब्रह्मचारी के लिए सारा संसार एकही परिवार के समान हो जाता है; उसकी एकमात्र महत्वाकांक्षा मानवता के कष्टों को दूर करने की होगी...."

कठोर त्यागमय जीवन व्यतीत करने के बारे में श्री अरविन्द के विचार गांधीजी से नहीं मिलते। उनके 'सम्पूर्ण योग' के लिए शरीर को कष्ट देना अथवा सहज प्रवृत्तियों का निष्ठुर दमन आवश्यक नहीं। वे संयत आहार और संयत व्रत पर जोर देते हैं। परन्तु काम-वासना के बारे में वे भी कहते हैं कि जिन्हें ईश्वर-साक्षात्कार अथवा इसी जीवन में 'दिव्य, प्रेम और जीवन' की उपलब्धि इष्ट है, उन्हें सम्पूर्ण ब्रह्मचारी रहना चाहिए।

अपने व्यक्तिगत जीवन में, गान्धीजी ने अंतिम समय तक ऋषियों द्वारा कथित इस सत्य को देखने के लिए निरंतर प्रयोग किये कि यौन-प्रवृत्ति का नियंत्रण और ऊर्ध्वीकरण करने से नैतिक और आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त होती है। इन प्रयोगों को करते समय स्त्री के सम्पर्क में आने से उन्होंने कभी इनकार नहीं किया; न स्त्रियों के प्रति आदर अथवा लिहाज रखने से वे कभी चूके। उनके दैनंदिन कार्यक्रम में सभी वय की स्त्रियों से मिलना, उनके साथ घूमने जाना और उनकी मुश्किलों को समझना भी शामिल था। वृद्धावस्था में भी वे युवा और वृद्ध, सभी अवस्था की स्त्रियों की भक्ति और प्रेम के पात्र रहे। कुछ युवती भक्तों को वे अपने चरणस्पर्श करने अथवा बड़े स्नेह के साथ आलिंगन करने भी देते थे। कभी-कभी इसे लोग गलत भी समझ बैठते थे; परंतु सभी समय वे यौन-भावना के नियंत्रण से प्राप्त ऊर्ध्वीकरण की शक्ति और तीव्रता का अंदाज लगाते रहते थे।

उनके आश्रम में युवा और वृद्ध स्त्री-पुरुष स्वतंत्र और शिष्ट रूप से विचरण करते थे। परन्तु मानव स्वभाव कभी-कभी अपना प्रभाव दिखा ही देता था और यदा-कदा आश्रम के युवक-युवतियों के बीच यौन-सम्बंध प्रकट हो जाता था। ऐसे अवसरों पर वे इस समस्याओं पर मानव स्वभाव की गहरी समझ के साथ गंभीर विचार करते थे।

'क' उनका एक कट्टर और सुयोग्य अनुयायी थी, जो उनकी कुछ महत्वपूर्ण प्रवृत्तियों से संलग्न था। एक प्रकार से

[शेष पृष्ठ १४९ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगामी मनुष्य मृत्यु पर विजय प्राप्त करेगा

●

श्री अरविन्द

अतिमानस-सिद्धि हुए बिना शरीर का अमर होना संभव नहीं है। योग-शक्ति में यह संभावना निहित है और योगी दो सौ से तीन सौ वर्षों तक या उससे भी अधिक जीवित रह सकते हैं, किन्तु अतिमानसिक सिद्धि के बिना अमरत्व का सच्चा तत्त्व प्राप्त नहीं हो सकता। विज्ञान भी यह विश्वास करता है कि एक दिन ऐसा आ सकता है, जबकि स्थूल उपाय से मृत्यु को जीता जा सकेगा। उसकी युक्तियाँ पूरी संगत भी हैं। ऐसा कोई कारण नहीं कि अतिमानस-शक्ति उसे न कर सके।

मृत्यु आती है और इसका कारण यह है कि शरीरस्थ पुरुष इतने पर्याप्त रूप में विकसित नहीं हुआ होता कि वह परिवर्तन की आवश्यकता के बिना एक ही देह में निरन्तर वर्धित होता रहे और स्वयं शरीर भी काफी सचेतन नहीं होता। यदि मन, प्राण और शरीर और अधिक सचेतन और नमनीय होते, तो मृत्यु की कोई आवश्यकता न रह जाती। मृत्यु का अपना कोई पृथक अस्तित्व नहीं है। शरीर में ऱ्हास होने का जो एक नियम है, जो पहले से ही विद्यमान है और भौतिक प्रकृति का अंग है, उसी का परिणाम मृत्यु है। फिर भी, यह अपरिहार्य नहीं है; यदि आवश्यक चेतना तथा शक्ति प्राप्त की जा सके, तो फिर ऱ्हास और मृत्यु अवश्यम्भावी नहीं रह जातीं। किन्तु उस चेतना और शक्ति को सम्पूर्ण जड़-प्रकृति के अन्दर उतार लाना सबसे कठिन कार्य है,— कम-से-कम ऐसे रूप में उतारना तो सबसे कठिन है ही कि वह ऱ्हास के नियम को ही रद्द कर दे।

मृत्यु से रक्षा, रोग-मुक्ति आदि ऐसी चीज़ें हैं, जो केवल चेतना के सम्पूर्ण परिवर्तन से ही प्राप्त की जा सकती हैं। प्रत्येक व्यक्ति को यह चेतना स्वयं अपने अन्दर विकसित करनी होगी,— इस उपलब्धि के बिना अपने-आप इन चीज़ों से निकलना संभव नहीं है।

अतिमानस—सिद्धि हुए बिना शरीर का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अमर होना संभव नहीं है। योग-शक्ति में यह संभावना निहित है और योगी २००, ३०० वर्षों तक या उससे भी अधिक जीवित रह सकते हैं, किन्तु अतिमानसिक सिद्धि के बिना अमरत्व का सच्चा तत्त्व प्राप्त नहीं हो सकता। विज्ञान भी यह विश्वास करता है कि एक दिन ऐसा आ सकता है, जबकि स्थूल उपाय से मृत्यु को जीता जा सकेगा। उसकी युक्तियाँ पूरी संगत भी हैं। ऐसा कोई कारण नहीं कि अतिमानस शक्ति उसे न कर सके। पृथ्वी पर स्थूल आकार चिर-स्थायी नहीं होते (अन्य लोकों में वे चिरस्थायी होते हैं)। इसका कारण यह है कि ये इतने कठोर होते हैं कि आत्मशक्ति की प्रगति को प्रगट करते हुए उसके साथ-साथ विकसित नहीं हो पाते। वे यदि नमनीय बनकर ऐसा कर पाते तो उनके चिरस्थायी न होने का कोई कारण न रह जाता।

चेतना का परिवर्तन ही आवश्यक चीज़ है। इसके बिना शारीरिक सिद्धि नहीं प्राप्त हो सकती। परन्तु पूर्ण अतिमानसिक परिवर्तन तब तक संभव नहीं है, जब तक कि शरीर वैसा ही रहे, जैसा कि वह अभी है—यानी मृत्यु, रोग, ह्रास, दुःख, अचेतनता और अज्ञान के अन्य सभी परिणामों का दास बना रहे। यदि इन चीज़ों को बन रहना है, तो अतिमानस के अवतरण की आवश्यकता कदाचित् ही रह जाती है। क्योंकि भगवान के साथ मानसिक-आध्यात्मिक मिलन प्राप्त करने के लिए चेतना के जिस परिवर्तन की आवश्यकता होती है, उसके लिए अधिमानस पर्याप्त है, यहाँ तक कि उच्चतर मन भी पर्याप्त है। अतिमानस का अवतरण इसलिए आवश्यक है कि मन, प्राण और शरीर के अन्दर सत्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की प्रबल क्रिया हो। इसका अर्थ होता है कि अंत में शरीर की अचेतनता भी विलीन हो जाये और वह रोग और ह्रास के नियम की अधीनता से मुक्त हो जाये। इसका अभिप्राय यह होगा कि वर्तमान में मृत्यु जिन सामान्य प्रक्रियाओं के द्वारा आती है, उनसे वह मुक्त हो जायेगा। यदि देह का परिवर्तन करना ही हो, तो वह परिवर्तन उस देह को धारण करनेवाले पुरुष की इच्छा से ही करना होगा। शरीर की अमरता का मूल स्वरूप यही है, न कि यह कि उसे तीन हज़ार वर्ष जीना ही पड़े, क्योंकि वह भी एक बंधन ही होगा। किन्तु हाँ, यदि कोई एक हज़ार वर्ष या और भी अधिक जीना चाहे, तो ऐसा असंभव नहीं होना चाहिए, बशर्ते कि उसे पूर्ण सिद्धि प्राप्त हो।

हम जो रूपान्तर चाहते हैं वह यह है कि हमारी चेतना भगवान में लीन हो जाय। चैत्य पुरुष समस्त प्रकृति को अनुशासित करता रहे, बदलता रहे और भगवान की ओर अभिमुख किये रखे, जिसमें कि अंत में समग्र सत्ता भगवान में निवास कर सके। इसके आगे है अतिमानसीकरण; किंतु यही रूपान्तर को उसकी निजी उच्चतम और विशालतम संभावनाओं तक ले जाता है, यह बात दूसरी है कि वह उसका मूल स्वरूप नहीं बदलता।

अतिमानसीकरण का एक संभाव्य परिणाम है अमरत्व; किन्तु अमरता कोई बाध्यकारक परिणाम नहीं है और न इसका अर्थ यह है कि जीवन अभी जैसा है, उसी रूप में चिरकाल तक अथवा अनिश्चित अवधि तक स्थायी बना रहेगा। बहुत से लोग समझते हैं कि ऐसा ही होगा, यानी वे जैसे के तैसे बने रहेंगे, उनकी मानवीय कामनाएँ बनी रहेंगी, अन्तर केवल यही होगा कि वे उन कामनाओं को अनन्त रूप से पूरी करते रहेंगे। लेकिन ऐसी अमरता तो प्राप्त करने योग्य नहीं होगी और लोगों को इससे थक जाने में बहुत अधिक समय नहीं लगेगा। भगवान में निवास करना और भागवत चेतना प्राप्त करना ही अपने-आप में अमरता है। शरीर को भी दिव्य बनाने में समर्थ होना और उसे दिव्य जीवन तथा दिव्य कर्म के लिए उपयुक्त यंत्र बनाना तो इस अमरता का स्थूल प्राकट्य होगा।

प्रश्न उठता है कि शरीर के रूपान्तर की क्या आवश्यकता है, जबकि अंत में उसे छोड़ना ही पड़ेगा– स्वेच्छा से अथवा बाध्य होकर?— यह तर्क मायावादी का है। उसके लिए समस्त अभिव्यक्ति ही व्यर्थ और असत्य है, क्योंकि वह क्षणिक है; उसके लिए देवताओं का जीवन भी व्यर्थ है, क्योंकि उनका जीवन भी काल के अन्तर्गत है, काल से परे नहीं। किन्तु सृष्टि का यदि कोई अर्थ हो तो फिर एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपूर्ण अभिव्यक्ति के स्थान में एक सर्वांग-पूर्ण अभिव्यक्ति का होना उपयोगी है। "छोड़ना ही पड़ेगा, स्वेच्छा से"– इसमें विरोधाभास है। व्यक्ति की जब तक इच्छा रहती है–और यह इच्छा प्रकाशमय होती है–वह शरीर रखता है और उसी इच्छा के अनुसार शरीर छोड़ देता है या बदल देता है। हाँ, जिस शरीर पर निरन्तर कामना और पीड़ा का आक्रमण होता रहता है, रोग और ऱ्हास के कारण मृत्यु हावी रहती है, उससे यह स्थिति बहुत ही भिन्न है। हाँ, पहले यह मान लिया जाये कि भागवत अभिव्यक्ति या कोई भी अभिव्यक्ति उपयोगी है।

...साधना की तीन स्थितियाँ हैं—चैत्य परिवर्तन, चेतना के उच्चतर स्तरों में गमन और उनकी सचेतन शक्तियों का अवतरण, और अतिमानसिक रूपान्तर। मृत्यु पर विजय पा लेना अतिमानसिक साधना में भी बाद की स्थिति है, आरम्भ की नहीं। इनमें से प्रत्येक स्थिति बहुत लम्बे समय और उच्च तथा दीर्घ प्रयास की मांग करती है।

शरीर के रूपान्तर की अपेक्षा कहीं अधिक आसान चीज़ें जब तक पूरी नहीं हो जातीं– यद्यपि इनमें से कोई चीज़ वास्तव में आसान नहीं है– तब तक शरीर के रूपान्तर की बात सोचना बिलकुल ही व्यर्थ है। आंतरिक सत्ता को बदलना होगा और उसके बाद ही सबसे बाहरी सत्ता परिवर्तित होगी। अतएव इस पर एकाग्र होने का तब तक क्या उपयोग है, जब तक कि कोई यह न समझ ले कि बाकी सब कुछ पूर्ण हो चुका है–और ऐसा दावा करना वस्तुतः आश्चर्य में डाल देने वाला होगा। शरीर के साथ जो सब से पहले करना है, वह है उसे भगवान की शक्ति के प्रति खोल देना, ताकि वह रोग और थकान की अवस्था में बल-शक्ति पा सके; जब ये चीज़ें (रोग और थकान) आयें, तब ऐसी शक्ति होनी चाहिए, जिससे इनके विरुद्ध प्रतिक्रिया की जा सके, उन्हें दूर फेंका जा सके और शरीर के अन्दर, बल-सामर्थ्य का अनवरत प्रवाह बहता रहे। यदि इतना किया जाये, तो शारीरिक परिवर्तन-सम्बन्धी बाकी चीज़ें अपने उपयुक्त समय की प्रतीक्षा कर सकती हैं।

जब तक शरीर के प्रति आसक्ति है, तब तक अमरता नहीं आ सकती। क्योंकि अमरता तभी आ सकती है, जबकि व्यक्ति अपने अमर भाग में निवास करने लगे (और यह भाग देह के साथ एकात्म नहीं होता) और उसकी चेतना, तथा शक्ति को देह के कोषों में उतार लाये। निस्सन्देह, मैं यहाँ यौगिक साधना की बात कह रहा हूँ। आजकल वैज्ञानिक लोग यह मानते हैं (कम-से-कम सिद्धान्त में)

[शेष पृष्ठ १३५ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

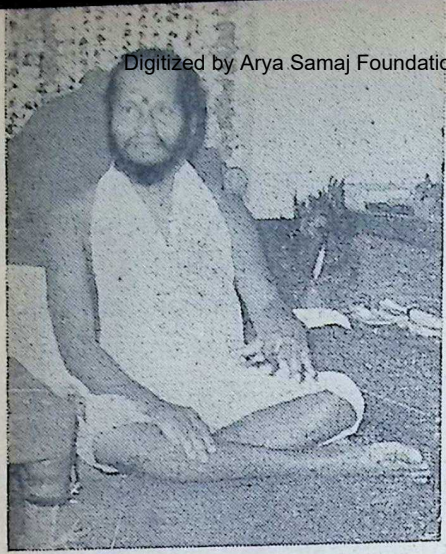

कुण्डलिनी महायोग के अमोघ शक्तिशाली गुरु श्री स्वामी मुक्तानंद परमहंस

आत्म-साक्षात्कार या भगवद्-साक्षात्कार की अनेक साधना-पद्धतियाँ, परम्पराओं और शास्त्रों में मिलती हैं। पर ये सभी मार्ग अत्यन्त कठिन, और कई वार खतरनाक भी होते हैं। आत्मप्राप्ति का सबसे सहज और सुलभ साधना-मार्ग है, गुरु-कृपा से शक्तिपात या कुण्डलिनी-जागृति। भगवान नित्यानन्द कुण्डलिनी महायोग के पराकोटि के योगीश्वर थे। उन्हीं के अभिन्नांश उत्तराधिकारी स्वामी मुक्तानन्द भी शक्तिपात के अमोघ शक्तिशाली गुरु हैं। आत्मजागृति की सच्ची लौ-लगन लेकर जो भी उनके पास जाता है, उसे गुरु-कृपा का यह परम प्रसाद अचूक रूप से प्राप्त होता ही है।

श्रीगुरु-कृपा और सुलभ साधन

स्वामी मुक्तानन्द

यावन्मात्र मानव-समाज का ही क्यों, चराचर सभी जीवों के जीवन का ध्येय है—सर्व दुःखों की निवृत्ति और परमानन्द की पूर्ण प्राप्ति। सुख के लिए ही मानव अनेकानेक उद्यम करता है, पूर्ण शांति पाने के लिए ही वह तरह-तरह के उद्योग करता है। जगत में एक छोटे से लेकर बड़े से बड़े तक सब जन सुख ढूंढ़ते हैं। सुख की ख़ातिर ही मनुष्य कारखाना बनाता है, सुख की ख़ातिर फ़ैक्टरी बनाता है और सुख की ख़ातिर ही व्यापार करता है; सुख की ख़ातिर ही मकान और सुख की ख़ातिर ही उद्यान है;

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुख की खातिर ही मनुष्य लग्न करता और संसार बनाता है; और सुख की ही खातिर कला-कौशल, नाटक, वस्त्राभूषण से लेकर अन्नपानादि, सब व्यवहार मनुष्य करता रहता है। मानव का ध्येय ही सुख है, और सुख के निमित्त ही वह-मारी खोजें करता है। निरुपाधिक नित्य सुख की प्राप्ति ही मानव जीवन का परम ध्येय है। नित्य आनन्द की प्राप्ति को ही मोक्ष, परमात्मा–दर्शन अथवा ईश्वर-साक्षात्कार कहते हैं। यही धर्म है। यही मानव-जीवन का चरम उद्देश्य है। यह सत्य है कि मानव अपने में ही परमानन्द को देख सकता है, अपने अंदर परमतत्त्व का दर्शन कर सकता है; अपने आपको ही परमतत्त्वों में परिणत कर सकता है। परमार्थ पंथ सर्व देश में है। सभी देशों के लोग परमार्थ या पर-मतत्त्व को कम-अधिक रूप में जानते हैं। पूर्ण सुख, नित्य आनन्द, और चिर शांति की आशा-अपेक्षा सभी करते हैं। अतएव–परमानन्द प्राप्ति मानव का मुख्य ध्येय है–ऐसा कह सकते हैं।

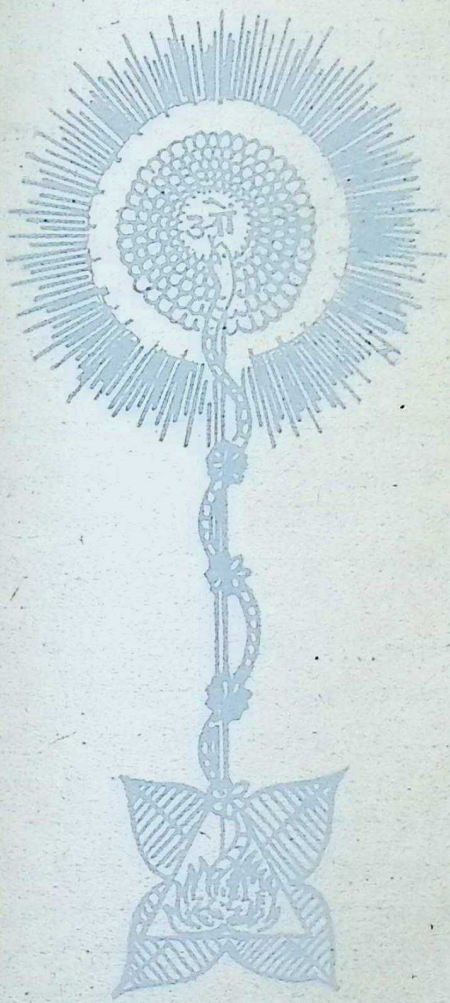

महाशक्ति कुण्डलिनी

जगत् में अनेक प्रकार के पंथ हैं। साधारणतः ये सर्व पंथ और सभी दर्शन महापुरुषों द्वारा रचे गये हैं। उसमें ज्ञान, योग, भक्ति तथा गुरु-कृपायुक्त सिद्ध-मार्ग मुख्य हैं। ये सब साधन या मार्ग परस्पर एक दूसरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में मिले हुए हैं। सभी साधन पूर्ण हैं। सर्व धर्म, सर्व पंथ और सभी संप्रदाय (एक) परमात्मा के ही हैं।

उसमें एक साधन है **ज्ञान**। ज्ञान उसको कहते हैं कि जिसमें मनुष्य का तत्त्वज्ञान से श्रीगुरु द्वारा अपने आप को जानना है। सामान्यतः गीता, ब्रह्मसूत्र और उपनिषद् के मतानुसार जो चैतन्य आत्मा–सर्व-व्यापक है, सभी में एक समान व्याप्त है, सभी का परम आधार है, जिसका (अन्य) कोई आधार न होने से पूर्ण है, और स्वयंभू है, सर्व प्रकार के शरीरों में वास करते हुए भी शरीराकार न बनते, अपने स्व-स्वरूप को न बदलते सभी में सभी का होकर रहना है– वही चैतन्य आत्माराम है और सभी के आराध्य पुरुषोत्तम हैं।

"**चैतन्यमात्मा**" (**भाष्य ..... इति, चेतयते इति चेतनः सार्वज्ञानक्रियास्वतन्त्रः तस्य भावः चैतन्यं .....**।) ऐसा शिव-सूत्रविमर्शिनी में कहा है। अर्थात् जो सर्वदा चित् प्रकाशमय है, वह जड़ से विलक्षण परम चैतन्य सभी जड़ वस्तु में प्रवेशकर जड़ को चैत्य बनाता है, सभी में उन-उन रूपाकार होकर भी जो सर्वथा अस्पर्श है, जिसका कोई लिंग नहीं, है जो सर्वथा अलिंग पुरुष है, ज्ञानचक्षुहीनों को न दिखते हुए भी जो सर्वत्र व्याप्त है, जिसके हाथ-पाँव न होने पर भी सभी तत्त्वों को दृढ़ता से पकड़ रखा है और सर्व स्थान में चल सकता है, जो सोते हुए भी सर्वत्र चलता रहता है, स्थिरता से बैठा होते हुए भी सर्व दिशाओं में घूमता रहता है, आँखों बिना देखना और बिना जिव्हा बोलना जिसकी महिमा है, जिसके आँख खोलने से जगत् का सर्जन और मींचने से प्रलय हो जाता है, सभी मानव-शरीरों में व्याप्त, हृदय में प्रतिक्षण पूर्णरूप से निवास करते रहने पर भी जो श्रीगुरुकृपाहीन को गोचर न होकर गुप्तवास कर रहा है– वही वेदान्त का अन्तिम लक्ष्य सच्चिदानन्द है।

सभी को चैतन्यरूप करके भी जो सभी से अलग और परम स्वतंत्र है, वही (पंचदेव) विष्णु, शिव, अम्बा, गणपति और सूर्य, किंबहुना सबका परमेश्वर है, वही वेदान्त में निरूपित घट-घटवासी आत्माराम है। आत्मा में रमण करने-वाला राम– 'रमंति इति राम'। ऐसे आत्माराम को, श्रीगुरु से श्रवण, मनन करके, निदिध्यास द्वारा जानना और तद्रूप हो जाना है–यही ज्ञानियों का मत है। कोई-कोई महाभाग्यशाली, उत्तमाधिकारी, जानते-जानते ही तद्रूप बन जाते हैं। वे अपने को उस सर्वव्यापी चैतन्य में समर्पित कर देते हैं, जैसे बिन्दु सिंधु में मिलकर सिंधु बन जाता है, अपने नाम रूप को सिंधु में समाकर सिंधु बना लेता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं किंतु वह नाम-रूप को त्यागता नहीं न उनमें मिथ्या का आरोप ही करता है, निर्फ बिन्दु नाम को सिंधु नाम में परिणत कर देता है, वैसे ही साधक (गुरुपदिष्ट ज्ञानमार्ग से) अपने चित्त को चैतन्य में मिलाकर चेतनरूप बना देता है। तदनंतर-सोऽहम् सोऽहम् जपते, 'मैं सब', 'मेरे सब,' करते, उनका 'मैं' और 'सब' एक हो जाता है, तब वह **ज्ञानी** अन्दररहित, बाहररहित, अनेकरहित, एकरहित, सब का अपने आप; सबसे निराला और पूर्ण हो जाता है। शास्त्रज्ञ ऋषियों ने जिस स्थिति का तुर्यातीत निर्विकल्प आदि नाम से वर्णन किया है, वही कैलास मठवालों का जीव-ब्रह्मैक्य स्थिति का लक्ष्य करानेवाला यजुर्वेद का महावाक्य 'अहं ब्रह्मास्मि' है। यही वेदान्त है। उस निर्विकल्प, स्वतंत्र, परमानन्द की प्राप्ति के बाद मानव सुख-दुःख से परे हो जाता है। यह सब श्रवण करने में सुलभ लगता है, किंतु साधन कठिन है– महाप्रयत्न से साध्य है। यह सूली पर का अमृत है। **'ज्ञात्वा देवं सर्वपाशापहानिः।'**

अब दूसरा साधन है **योग**। चित्तवृत्ति के पूर्ण निरोध को योग कहते हैं। महर्षि पतंजलि के कथनानुसार अष्टांग की साधना करके अपने चित्त को चैतन्य में पूर्ण तादात्म्य कर देना है। योग में यम-नियमादि अंग के साधन करके, बिछुड़े हुए प्राण को सम करके समता-योग प्राप्त करना है। चित्त पूर्ण शांत हो जाने से हृदय में परमानन्द का उदय होना, यह भी वेदान्तोक्त आनन्द की ही प्राप्ति है, जो ज्ञान है, वही योग हो जाता है। इसीलिए गीता में भगवान ने कहा है– **"सांख्ययोगौ पृथग्बालाः प्रवदन्ति न पंडिताः। एकमप्यास्थितः सम्यग् उभयोर्विन्दते फलम्॥"** (अ. ५–४) ज्ञान (वेदान्त) और (अष्टांग) योग दोनों से होनेवाली प्राप्ति एक ही है।

महर्षि पतंजलि द्वारा योगदर्शन रचा गया है, जो एक बड़ा महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है। थोड़े ही सूत्रों में साधक के लिए एक परम उपयोगी शास्त्र उन्होंने बनाया है। उसमें कोई तर्क-वितर्क के विषय नहीं हैं, मात्र क्रियाशील प्राणायाम आदि द्वारा चित्त का निरोध करके निर्विकल्प-नाम परमपद को प्राप्त करने का उसमें मार्ग बताया गया है। इस क्रियाशील योग में शरीर का तत्त्व-संशुद्धि करके दृढ़ बनाना ही मुख्य कार्य है। 'शरीर माद्यं खलु धर्मसाधनम।' जहाँ शरीर मांद्य होता है, रोग युक्त और अदृढ़ होता है, वहाँ कैसा सुख; और कैसे धर्म का अध्ययन या उपासना सम्भव है? किस तरह सुख से जिया जा सकता है? इसलिए आसनसहित क्रियाशील योग शरीर को दृढ़ और बलवान् करने की सामर्थ्य रखता

[शेष पृष्ठ २२ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नर-नारी का प्रेम और भागवत प्रेम

स्वामी श्री
प्रभुलाल गणपतराम जोशी

नर-नारी का प्रेम अत्यन्त पवित्र है, क्योंकि सृष्टि के मूल उद्गम स्वरूप परब्रह्म में से ही उसका आविर्भाव हुआ है। सृष्टि के आनन्द का उन्मेष जब उस परात्पर सच्चिदानन्द परमपुरुष के भीतर जागा, तब 'एकोऽहं बहुस्याम!' कह कर उसी ने आदि नर-नारी युगल के रूप में अपने को प्रकट किया: वह एक दो हुआ, और वे दो अनेक होकर अनन्त कोटि ब्रह्माण्डों की सृष्टि हुई।

इससे स्पष्ट है कि नर-नारी के युगल प्रेम की लीला, भगवान के मौलिक सृजनानन्द के भीतर से ही प्रकट हुई है। सृष्टि का जो उद्गम है, वह भगवान और भगवती का युगल प्रेमानन्द अपावन और वर्जित कैसे हो सकता है!

चूँकि सृष्टि आदि काल से चली आ रही है और अनन्तकाल तक चलेगी, इसीलिए इस सृष्टि का उद्गम स्वरूप नर-नारी का प्रेम अनादि-अनन्त है, अमर है, अविनाशी है। भगवान स्वयं प्रेम-स्वरूप हैं: उनके प्रेमोन्मेष में से ही सृष्टि होती है। भगवान का लीलाविलास यह सृष्टि, यह जीवन-जगत, नर-नारी के प्रेम-मिलन में से ही प्रकट होते हैं। चूँकि भगवान अजर-अमर, अविनाशी,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सनातन, अनन्त हैं, तो उनकी लीला-विलास रूप यह सृष्टि भी अजर, अमर, अविनाशी, अनन्त है: तब मानना होगा कि भगवान के इस लीला-विलास का उद्गम-स्वरूप नर-नारी का युगल प्रेम भी अजर-अमर अविनाशी, अनन्त और सनातन है।

भगवान की सृजनकारिणी महावासना में से प्रकट होनेवाला नर-नारी का यह प्रेम क्षुद्र वासना से विकृत या क्षुण्ण नहीं हो सका। अनाहत, अविचल परमपुरुष की इस लीला को चंचलता में चलित करके विनष्ट करने की शक्ति किसी में भी नहीं है। आत्मा के आकर्षण से ओतप्रोत होने के कारण नर-नारी के इस प्रेम का कभी अन्त नहीं होता, उसका स्वाद कभी कम नहीं होता। युग-युगान्तरों में भी उनकी अवस्था बदलती नहीं है। तुम कभी अलग होने वाले नहीं हो: भगवान और भगवती के परम युगल में संयुक्त होकर, तुम अनन्त काल की धारा में नाचते रहोगे, अपार आनन्द में विलसते रहोगे। नरनारी के युगल प्रेम का यही सच्चा और मौलिक स्वरूप है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। इस योगसाधन में भी योगदर्शन करनेवाले श्रीगुरु की अत्यन्त आवश्यकता है। यह भी एक पूर्ण साधन या मार्ग है और यह भी ज्ञान की अपेक्षा रखता है। भगवान गीता में अर्जुन को योगी बनने के लिए आदेश देते हैं– "**तस्माद् योगी भवार्जुन।**" (अ. ६–४६) ॥ अतएव योग साधन में भगवान भी सहमत हैं।

"**तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्** "। (पातंजल योगसूत्र–३) अर्थात् उस समय द्रष्टा की अपने रूप में स्थिति हो जाती है। यह योग का सर्वोपरि फल है। जब चित्त की वृत्तियों का निरोध हो जाता है, उस समय वह कैवल्य-अवस्था को प्राप्त हो जाता है। स्वस्वरूप स्थिति की प्राप्ति योग का फल है। योग सर्वज्ञ ऋषियों द्वारा रचा गया एक अप्रमेय शास्त्र है। इसमें ध्यान-धारणा द्वारा समाधि के योगानन्द की प्राप्ति है। इसको संसार में रहकर भी विवेकशील सब जन कर सकते हैं। योग न्यायोचित संसार का विरोध नहीं करता है। यह योग संसारियों के लिए भी साधक है, बाधक नहीं है। योग की प्रक्रिया सभी के लिए मित्र बन जाती है।

योग का नाम लेते ही कई लोग घबड़ा जाते हैं। वे ऐसा समझते हैं कि घरबार तजकर, कंदमूल खाकर, वन में या गिरि-गुहा में रहनेवालों के लिए ही योग है। लेकिन ऐसा नहीं, अपितु योग संसार के सर्व जनों का आराध्य दैवत है। योग के सभी अंग व्यवहार में पाये जाते हैं। क्या यम-नियम संसार में नहीं हैं? आसन याने एक नियम से (व्यवस्थित) बैठना संसार में नहीं है? कलाकार, शिल्पी, आर्टिस्ट, वॉचमेकर या इंजीनियर क्या चित्त एकाग्र किये बिना, कला को चित्त में बैठाये बिना, अपने ध्येय को पूरा कर सकते हैं? चित्त में कोई भी योजना (प्लान) किये बिना क्या काम अच्छी तरह सफल हो सकता है? क्या कॉलिज में पढ़नेवाले विद्यार्थी चित्त को शांत किये बिना अभ्यास कर सकते या परीक्षा में उत्तीर्ण हो सकते हैं? क्या चित्त निर्विकार-शांत हुए बिना कोई सुख-निद्रा में सो सकता है? कभी नहीं। इससे स्पष्ट होता है कि हमारे रोज़ के व्यवहार में भी बारंबार योग के अंगों का पालन अवश्य होता ही रहता है। क्या पत्नी पति से सत्य व्यवहार नहीं करती? करती है, परन्तु अन्य व्यवहारों में सत्य का आचरण कम है। मात्र इतना ही फ़र्क है। आजकल जो दवाख़ानों में भारी भरती दिखती है, उसका मूल कारण अनियमित जीवन ही है। जो शास्त्रों के नियमों का पालन करता है वह दुःख, दरिद्रता और डाक्टरों की शरण नहीं जाता। अतएव 'नियमबद्ध जीवन कार्य' योग कहलाता है। मनुष्य के जीवन में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शारीरिक आरोग्य मुख्य धन-संपत्ति है। जहाँ शरीर बीमार या कमज़ोर है, वहाँ सुख कैसे होगा? अनियमित जीवन बिताने से शरीर निरोग नहीं रहता, बल्कि रोगी दुर्बल बनता है और ऐसा होने से मानव दुःखी होता है। यदि जीवन व्यवहार नियम-पूर्वक किया जाय तो सुख-शांति मिलती है। योग इन्हीं नियमों को सिखाता है, योग दुर्बलता को भगाता है, योग संसार को स्वर्गमय बनाता है। अतएव योग नित्य आराध्य दैवत है। और इसी से **योग संसार और परमार्थ दोनों का परम मित्र है।**

तीसरा साधन है **प्रेम**। जैसे ज्ञान और योग पूर्ण साधन हैं, वैसे ही भक्ति भी एक स्वतंत्र एवं पूर्ण साधन है। भक्ति प्रेम को कहते हैं। प्रेम अमृत-तुल्य साधन है। प्रेम, आनन्द, सच्चिदान्द, ब्रह्मानन्द सब एक हैं। जब ज्ञानी ज्ञान द्वारा चराचर को परब्रह्म समझ कर रागरहित, द्वेषरहित, वैरभावरहित, ईर्ष्यारहित हो जाता है, तब वह अपने अन्दर पूर्ण आनन्द का भोक्ता बनता है। योगीजन जब यम-नियमादि से, प्राणायाम से, ध्यान द्वारा चित्त को अचित्त कर डालते हैं, तब उनको भी उसी परमानन्द के दर्शन होते हैं, जो ज्ञानी को हुए थे। यह योगी की प्राप्ति है। योगी योगानन्द में मस्त होते हैं, ज्ञानी ज्ञानानन्द में मस्त होते हैं, वैसे ही भक्तजन प्रेमानन्द में मस्त हो जाते हैं। यही भक्त की प्रेम-मस्ती है, यही भक्त जनों का परम प्रेमामृत है।

"यन्मित्रं परमानन्दं पूर्णब्रह्म सनातनम्।"। (श्रीमद्भागवत्) वस्तुतः भक्ति के अनुरागी भक्तजन भी अनादि अविनाशी पूर्णब्रह्म को ही प्रेम करते हैं। और प्रेम कहाँ नहीं है? जहाँ रस नहीं है, वहाँ प्रेम कहाँ? परमात्मा का स्वरूप ही प्रेम है, आनन्द है, मस्ती है। श्रुति में कहा है— **रसो वै सः। रसं ह्येवायं लब्ध्वानन्दी भवति"**। भगवान् निश्चय ही रसमय हैं। रस को पाकर ही मनुष्य आनन्दमय होता है।

"आनन्दाद्धयेव खल्विमानि भूतानि जायन्ते। आनन्देन जातानि जीवन्ति। आनन्दं प्रयन्त्यभिसंविशन्ति"॥ (तैत्ति.) उपनिषद् का कथन है कि आनन्द से ही विश्व का उदय, स्थिति अथवा लय होता है। जगत् की उत्पत्ति के कारण स्वयं भगवान् हैं, ऐसा सभी दर्शनकार मानते हैं। कारण ही कार्य म ओतप्रोत रहता है। जगत् का मूल प्रेम है—बढ़ना प्रेम से होता है, जीना प्रेम से होता है और लय भी प्रेम से ही होता है। अतएव साधना भी प्रेम ही है। प्रेम सर्वत्र व्याप्त है। प्रेमयोगी सर्वत्र अपने प्रेममय (भगवान्) को देखता हुआ सुख से जीवन बिताता है। वह भक्त जहाँ जाता है, वहाँ सर्वत्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैकुंठ बना लेता है। आँख जो भी रूप देखे, उसमें अपने प्रेम को देखती है, कर्ण जो भी सुनता, उसमें अपने प्रेम को सुनता है, जिह्वा प्रेम को ही गाती है, त्वचा प्रेम को ही स्पर्श करती है। जैसे सागर के बीच एक जल-बिन्दु सर्वत्र जल-ही-जल देखता है, वैसे वह प्रेम योगी सर्वत्र भगवान् को ही देखकर प्रसन्न होता है। इसका साधन है अखण्ड भजन द्वारा चित्त को प्रेममय में तन्मय करना, और प्राप्ति है **अमरानन्द**। इस अमर आनन्द की प्राप्ति भी प्रेमी महापुरुषों की कृपा से ही होती है। "महत्सङ्गस्तु दुर्लभोऽगम्योऽमोघश्च"। (नारद भक्ति सूत्र) अर्थात्– प्रेमी मोक्ष-दाता महापुरुषों का मिलना और उनके कृपापात्र बन जाना भी सुलभ नहीं है। परन्तु, संत-कृपा से ही भक्त प्रेमयोगी बन सकता है। प्रेममय भगवद् रूप संतों के मिलने से भक्तियोग सुलभ हो सकता है।

ज्ञान, योग, और प्रेम-भक्ति ये तीनों साधन करके मनुष्य अपने गंतव्य स्थान को प्राप्त कर सकता है। साधना के ये तीन प्रकार अलग-अलग होने पर भी उनके द्वारा साधक एक ही स्थान पर पहुँच सकता है, एक ही अमर-पद को प्राप्त कर सकता है। ये सब साधना के मार्ग कठिन हैं, इनसे परमपद की प्राप्ति कष्टसाध्य है। उपनिषद् में कहा है कि परमार्थ पथ तलवार की धार पर चलने–जैसा विकट है। **"क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया, दुर्गं पथस् तत् कवयो वदन्ति"**॥ (कठोपनिषद् १.३.१४). यह पथ इतना कठिन है कि एक कवि ने यह भी लिखा है, इस मार्ग में लोहे के चने चबाने होते हैं। और खुद भगवान् ने गीता में कहा है– **"बहूनां जन्मनामंते ज्ञानवान् मां प्रपद्यते"**। (अ. ७–१९)। अर्थात् ज्ञानी को भी जन्मजन्मान्तर के बाद परम आनन्द की गति प्राप्त होती है।

क्या इसके सिवा और कोई उपाय है? अवश्य है। एक साधन ऐसा है, जो श्रीसद्-गुरु से प्राप्त होता है। जिन पर उन श्रीगुरु की कृपा होती है, उनके लिए सारा मार्ग एकदम सरल बन जाता है, सब कुछ सहज हो जाता है।

यह सुलभ और श्रेष्ठ साधन वह है, जिसको कहते हैं– **गुरुकृपा**। श्रीसद्गुरु की कृपा से सद्शिष्य दुर्गम साधन पथ को सुलभ कर लेता है। गुरु से दीक्षा द्वारा शिष्य का साधन सुलभ हो जाता है। यह गुरुकृपा ही वह दीक्षा है, जिसको कहते हैं– **'शक्तिपात-दीक्षा'**। जिस कृपा से श्रीरामकृष्ण के स्वामी विवेकानन्द को स्पर्श करते ही उनको परमेश्वर की अनुभूति हुई, वह शक्तिपात-दीक्षा महा रहस्यमयी और आश्चर्यमयी है। वह महा पुरातन है। जिस दीक्षा द्वारा गहनी-नाथ जी ने निवृत्तिराय को एक क्षण में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्म संपन्न बना दिया, जिससे रामानन्दजी के कबीर साहब को स्पर्श करते ही उनमें भक्तिभाव-प्रेम उदय हो गया, और जिसके द्वारा शंकराचार्य ने देखते ही हस्तामलक अपने आत्मा को पा लिया—आत्मज्ञानी बना लिया—वही है शक्तिपात-दीक्षा। पुरी के गोवर्धनमठाधीश शंकराचार्य श्रीशंकरपुरुषोत्तमतीर्थ स्वामीजी इसके रहस्य को जानते थे और शक्ति-पात-दीक्षा देने में भी महाकुशल थे। उनका 'योगवाणी' नामक ग्रंथ इस विषय में प्रमाणबद्ध है। घेरण्डसंहिता, वायवीय संहिता, स्कन्द पुराण, कुलार्णव तंत्र, योगिनी तंत्र, आगम संदर्भ, शारदातिलक तंत्र, महायोग-विज्ञान आदि अनेक ग्रंथों में तथा शैव, वैष्णव, गाणपत्य, सौर और वेदान्त के ग्रंथों में और उनके रचयिता आचार्यों में इस विषय की पूरी जानकारी है। तिब्बत के लामाओं में भी इसकी प्रथा है, लेकिन सब नहीं जानते। एक-देशीय ज्ञानी लोग इसे पूर्ण रूप में नहीं जानते हैं। महाप्रभु श्रीगौरांगजी ने तो असंख्य पाखंडियों को, नौरोझ जैसे डाकू को और लक्ष्मीबाई जैसी वेश्या को भी प्रेम-दीक्षा दी थी। गौरांग प्रभु के स्पर्शमात्र से उन लोगों में प्रेमभाव जाग उठता था, और उसके बाद साधकजन प्रेमोन्मत्त होकर ईश्वर की मस्ती में जीवन बिताते थे।

शक्तिपात के विषय में कई लोगों को सन्देह भी होता है, या फिर अर्थ का अनर्थ करके यह कुछ तंत्र-साधना है, ऐसा भी भ्रम बहुतों को होता है। लेकिन यह उनका अज्ञान है। बहुतों को इसमें वाम-मार्ग का, अशास्त्रीय शक्ति-उपासना का भी भ्रम होता है, पर वे राह भूले पंडित शक्ति-पात रहस्य को किंचित् भी नहीं जानते। शक्ति नाम सुनते ही कुछ शाक्त है, ऐसा समझ लेते हैं, और सच्ची ईशानुभूति से दूर रहते हैं। शक्तिपात अनादिकाल से चला आया ऋषि-मुनि-महर्षियों का एक परम गुप्त साधन है। **अपने दिव्य ब्रह्मतेज को शिष्य में डालकर शिष्य को तुरंत ब्रह्मानुभूति कराना ही शक्तिपात रहस्य का अर्थ है।**

महाराष्ट्र के मराठवाड़ा में एक क्षेत्र है, जिसका नाम है 'जोगाई की अम्बा'। वहाँ की एक कथा संक्षिप्त में लिखता हूँ: उस प्रदेश के जयपाल राजा की "रकाब में पाँव, ब्रह्म बताओ" ऐसी हठ पर मुकुन्द-राज योगी ने चाबुक से एक फटका मारकर ब्रह्मानुभूति करा दी थी। जैसे ऋषिलोग तपोबल से शाप देते (या आशीर्वाद देते) हैं, वैसे ही ज्ञानयोग के बल से शिष्य पर अध्यात्म शक्ति का संचार करना, उनके लिए कोई आश्चर्य की बात नहीं है, और सच्चे परमार्थ पथिक के लिए अनानुभूति (अनअनुभूति) का विषय भी नहीं है। कोई भी संप्रदाय क्यों न हो, उसमें दीक्षा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो है ही। **'दीक्षा याने देना'** ईश्वरानुभूति कराना यही उसका मुख्य अर्थ होता है।

हरएक मानव में कुंडलिनी नामक एक दिव्य-शक्ति रहती है। उस शक्ति के दो रूप हैं। एक रूप व्यवहार को प्रकाश करता है, दूसरा रूप परमार्थ को साध्य करता है। जब श्रीगुरु अपने शिष्य पर अध्यात्म-शक्ति के तेज़ को डालते हैं, तब उसकी वह परमार्थ शक्ति अपने आप क्रियाशील बनकर कार्य करने लग जाती है। इसका नाम 'कुंडलिनी का अंतर्क्रियाशील होना' है और यही दीक्षा या गुरुकृपा है।

श्रीगुरु में ब्रह्मानन्दमयी चितिशक्ति का पूर्ण रूप से वास है। चिति उसको कहते हैं, जिसमें परम स्वतंत्रता से विश्व को रचने का सामर्थ्य है। वह चिति ही भेद-अभेद–भेदाभेदमय होकर एक ही वस्तु से अनंत रूप में ब्रह्मांड को रचकर एक में अनेक, अनेक में एक करके, निर्विकार आत्मा में साविकाररूप जगत् को दिखाती है। इस कार्यकारिणी शक्ति के अनेक नाम हैं– चिति, महामाया, परब्रह्मरूपिणी, शिव की गौरी, राम की सीता, कृष्ण की राधा, नारायण की लक्ष्मी, ब्रह्मा की ब्रह्माणी, योगी की कुंडलिनी, कवि की कवित्वशक्ति, ज्ञानी की विद्याशक्ति और आत्मा की आनन्ददायिनी शक्ति। इस शक्ति बिना शक्त, और शक्त बिना शक्ति नहीं; दोनों एक ही हैं, भिन्न नहीं। जैसे राजा और राजा की शासन-शक्ति है, वैसे ही ये सब एक ही रूप हैं।

निर्गुण निराकार जो सत्ता-संभूति शुद्ध परम चैतन्य है, वह जब स्पंदयुक्त होती है, तब उसमें ही यह शक्ति क्रियाशील बन जाती है। वही परमात्मा की महिमारूप महाशक्ति श्रीकुंडलिनी है। उस कुंडलिनी को क्रियाशील कर देना ही शक्तिपात, अनुग्रह, दीक्षा या गुरुकृपा आदि संज्ञाओं से पुकारा जाता है,।

योगवाशिष्ठ के निर्वाण प्रकरण में कहा है कि– **"दर्शनात् स्पर्शनात् शब्दात् कृपया शिष्यदेहके। जनयेद्यः समावेशं शांभवं सहि देशिकः॥"** अर्थात् जिनके दीक्षारूप दर्शन, स्पर्श या मंत्र-उपदेश से शिष्य को आनन्दानुभूति होकर उसकी अंतरशक्ति जागती है, वे ही गुरु हैं।

"गुरोर्यस्यैव संस्पर्शात् परानन्दोऽभिजायते।
गुरुं तमेव वृणुयात् नापरं मतिमान्नरः॥"

ऐसे गुरु से दीक्षा मिलने के बाद शिष्यों में अनेकानेक प्रकार के अन्तर-कार्य होते हैं। उनमें से कुछ क्रियाओं की जानकारी यहाँ गुरुभक्तिपरायण-गुरुप्रसाद प्राप्त शिष्यों के ज्ञान के लिए नीचे दी जाती है।

गुरुदेव की अन्तर्शक्ति शिष्यों के अन्दर प्रवेश होते ही किसी को आनन्दानुभूति,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी को चित्त की जड़ता, मूढ़ता या तो चंचलता आ जाती है। किसी को अंग-प्रति अंग में नाना तरह के कार्य—जैसे आसन, मुद्रा, कम्प, नृत्यादि चेष्टाएँ—स्वयं होने लगती हैं। तब वह साधक आश्चर्यमुग्ध बन जाता है। कोई-कोई डर भी जाते हैं। थोड़ा समय सर्वांग में दर्द होता है। पेट में, हृदय में, शिर में अनेक तरह के कार्य होने लगते हैं। स्नायु का उड़ना, रोमांच होना, ध्यान लग जाना, निद्रा आ जाना इत्यादि चिह्न शुरू होते हैं। ध्यान में श्वेत, कृष्ण, रक्त, नील आदि अनेक रंग की ज्योतियों के दर्शन होते ही दिन-प्रतिदिन साधक का आनन्द बढ़ता जाता है और वह उल्लास से साधन में लगे रहता है। कभी ध्यान में अनेक मन्दिरों के, गिरिकंदराओं के और लोकांतरों के दर्शन भी होते हैं। ध्यान में एक अवर्णनीय दिव्य ज्योति के सतत दर्शन होते रहते हैं—वह ज्योति ब्रह्म की सगुणरूप ज्योति मानी जाती है।

"अकल्पितोद्भवं ज्योतिःस्वयं ज्योतिः प्रकाशितम्।
अकस्माद्दृश्यते ज्योतिस्तज्ज्योतिः परमात्मनि॥"

अर्थात्—यह ब्रह्मज्योति बिना कल्पना के प्रगट होती है। ऐसी स्वयं-प्रकाशित ज्योति अकस्मात् दीखती है। ऐसी अपने आप बिना कल्पना के ध्यान में आनेवाली ज्योति परमात्मा में अवस्थित है। इस दिव्य-ज्योति के अन्दर लोकांतर के दर्शन भी होते हैं, तब साधक पितृलोक, चन्द्रलोक, इन्द्र-लोक सब सत्य हैं, ऐसा समझने लगता है।

दीक्षित साधकों में अष्टभाव भी जाग्रत हो जाते हैं। भावोन्मत्त होते ही मानो साधक अनन्त आनन्द के समुद्र में डुबकी लगाता और मस्त बन जाता है। दिनोंदिन साधना में उसका उत्साह बढ़ने पर अनन्त अनुभूतियाँ होने लगती हैं। ऐसी नयी-नयी अनुभूतियाँ होने से साधकों को दृढ़ता और साहस पूर्वक साधन करने का उत्साह एवं स्फूर्ति मिलती है। ऐसा साधक न्यायोचित रीति से किसी भी व्यवहार में, किसी देश में और कहीं भी क्यों न जावे, सर्वत्र अपनी श्रद्धा के कारण वह अपने श्रीगुरु के दर्शन करता है। यहाँ मैं किसी जादू की बात नहीं कर रहा हूँ, न तो पुराण की कथा कह रहा हूँ। यह बिलकुल सत्य है कि परमात्मा सर्वदा सत्य, नित्य, परिपूर्ण व्यापक है। इस प्रत्यक्ष दिखनेवाले जगत् के अणु-अणु में परमात्मा व्याप्त है। इतना ही नहीं, जड़-चेतन समस्त जगत् भी चैतन्य आत्मा है।

"तदेव भवति स्थूलं स्थूलोपाधिवशात्प्रिये।
स्थूलसूक्ष्मविभेदेन तदेकं संव्यवस्थिततम्॥"

[आगे पृष्ठ ३० देखें]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सु. रामकृष्णन्

समन्वय की साधना

यह युग दो प्राकृतिक विरोधी तत्त्वों-द्वंद्वों के बीच तीव्र संघर्ष का युग है। यौवन और जरा, मानवीय विद्याएँ और तांत्रिक विज्ञान, आध्यात्मिकता और भौतिकवाद, प्राचीन ज्ञान और आधुनिक दृष्टिकोण, जनतंत्र और एकसत्तावाद, श्रद्धा और संशय का विरोध अवश्यंभावी हैं। हमारे पूर्व पुरुषों के अनुसार इसका समाधान किसी एक मार्ग का अंधानुकरण करना नहीं, बल्कि दोनों का समन्वय करना है।

अत्रि, जमदग्नि, वशिष्ठ, विश्वामित्र, अगस्त्य, याज्ञवल्क्य, अरुणि, भृगु जैसे मुनिप्रंगवों, गार्गी और मैत्रेयी जैसी ब्रह्मवादिनियों; अरुंधती, अनुसूया, सुकन्या, लोपमुद्रा, सावित्री, दमयंती जैसी पतिव्रताओं तथा अन्य कइयों ने वैदिक और उपनिषद् कालों में इसी समन्वय को साधा।

त्रेतायुग में श्रीरामचन्द्र, ऋषि वाल्मीकि, राजर्षि जनक; और द्वापर में श्रीकृष्ण, व्यास द्वैपायन, अजातशत्रु धर्म-पुत्र भी ऐसा समन्वय अपने जीवन में साध सके।

गौतम बुद्ध और वर्धमान महावीर जैसे अवतार पुरुषों ने ई. पू. ६ वीं शताब्दी में इसी मध्य मार्ग का दिग्दर्शन किया। आचार्यश्रेष्ठ शंकर, रामानुज, माधव, वल्लभ, चैतन्य और गुरु नानक ने ८ वीं, ११ वीं, १२ वीं और १६ वीं शताब्दी में मानवता का नये रूप से पथ-प्रदर्शन किया। तुलसीदास, सूरदास, बिल्वमंगल, कबीर, गुरु नानक, नरसी मेहता, चंडीदास, विद्यापति, जयदेव, ज्ञानेश्वर, तुकाराम, नामदेव, अंदल, मीराबाई, पुरंदरदास, वेमना, त्यागराज जैसे संतों ने युग-युगों से इसी मार्ग को प्रशस्त किया।

महाकवि कालिदास, भवभूति, बाण और अन्य कवियों ने भी अपने जीवन-काल में, तथा सम्राट अशोक, समुद्रगुप्त, विक्रमादित्य, हर्ष, राजेन्द्र चोला, भोज, कृष्णदेव राय, अकबर, महाराणा प्रताप और शिवाजी जैसे वीर पुरुषों ने भी यही साधना की।

श्री रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी रामतीर्थ, महर्षि श्री रमण, महायोगी श्री अरविन्द, गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर, महात्मा गांधी और दूसरे महापुरुषों ने आधुनिक युग में इस आदर्श को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूर्तिमान किया।

भारतीय विद्या भवन इसी समन्वय की साधना के लिए कृतसंकल्प है। श्रद्धा, संयम और समर्पण जैसे मौलिक मूल्यों को जीवन में पुनःप्रतिष्ठित कर हम आधुनिक युग में भारतीय संस्कृति को पुनःसंघटित करना चाहते हैं। अपने उज्ज्वल अतीत के प्रति हम श्रद्धालु रहेंगे और हमारी जाति के रचनात्मक गुणों का हम सोत्साह अनुकरण करेंगे।

जैसा कि हमारे परम तेजस्वी संत और देश-भक्त स्वामी विवेकानन्द ने कहा है: "प्रत्येक जाति की अपनी विशेष विचार और कार्यप्रणाली होती है; विश्व के जीवन में प्रत्येक जाति का अपना विशेष योगदान होता है। राजनीतिक महानता अथवा सैनिक शक्ति कभी हमारी जाति का ध्येय नहीं रहा, और न कभी रहेगा, यह मैं दावे के साथ कह सकता हूँ। हमारा ध्येय, हमारी जाति की आध्यात्मिक शक्ति को संरक्षित, अक्षुण्ण और एकत्र रखना है, ताकि यह एकता शक्ति उचित अवसर पर संसार में धारा प्रवाह रूप से बह सके। भारत की आध्यात्मिकता और जीवन-दर्शन सदैव समस्त संसार में नवनिर्मित मार्गों से प्रवाहित होने को प्रस्तुत है। सम्पूर्ण मानवीय प्रगति में अपना योगदान देने के लिए हिंदू के प्रशांत मस्तिष्क को अपनी चिंतन-धारा प्रवाहित करते रहना चाहिए। संसार को भारत की भेंट आध्यात्मिक प्रकाश है ---- इस शांत, सहिष्णु, त्यागमय आध्यात्मिक जाति का विचार-जगत पर प्रभाव उन सुन्दर, सुकोमल ओसकणों की भांति है, जिन्हें गिरते कोई देखता या सुनता नहीं, परन्तु जिनका परिणाम अत्यंत आश्चर्यजनक होता है।"

समर्पित कर्म से ही प्रभावशाली और दीर्घ-कालीन सुपरिणाम प्राप्त होते हैं। जीवन की उपलब्धि और अपार आनन्द भी उसी म मिलता है। समर्पित कर्म के पीछे मानव की उत्कंठा का होना आवश्यक है, बल्कि वही ऐसे कर्मों का स्रोत है। और यह उत्कंठा सनातन, नित-नवीन शब्दों से जाग्रत होती है। परन्तु शब्दों में ऐसी शक्ति भगवद्कृपा से ही प्राप्त होती है, जो मानव हृदय को आन्दोलित, प्रभावित और सत्कर्मों के प्रति आकृष्ट कर सके। करुणानिधि, कृपालु भगवान की ऐसी कृपा का प्रसाद हमें प्राप्त हो, यही हमारी कामना है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(शिवसूत्रविमार्शिनी)

जो सूक्ष्म है, वही स्थूलभाव में आ जाता है। जैसे चिति चित्त बन जाती है, वैसे ही चेतन जड़भाव बन जाता है। अर्थात् वह महाप्रकाश आत्मा स्थूल भाव से स्फुरने पर स्वयं ही चित्र-विचित्र विषयों के रूप में उपाधि-युक्त बनता है। व्यापक आत्मा ही व्याप्य बनता है। व्याप्य और व्यापक अलग नहीं, इसी से उपाधि चैतन्य से भिन्न नहीं है।

एक संत की (मराठी) कविता याद आयी–'**तुला वाली म्हणुंका भुगुडी रे,वाली-भुगुडींत तुं एक सोना रे**'। और वैसे ही एक हिन्दी काव्य में कवि कहता है–

"गहनेको गढ़ाते कई सोने की भी तो जात है,
सोना बिच गहना है, गहना बिच सोना है।
भीतर भी सोना और बाहर भी सोना दिसे,
सोना तुं अचल अनंत गहने को बिच है।
सोने भी तो जान लिजो, गहने को बरबाद किजो,
यारी एक सोना तामें ऊँच कौन नीच कौन॥"

ऐसे ही अनेक दृष्टांत हैं। एक बूँद अन्न-रस से विचित्र शरीर की रचना हो जाती है। वस्त्र के सर्वांग में कपास से ही बना हुआ ताना और बाना है। वस्त्र में सूत है– सूत में कपास है। इस तरह भगवान् स्थावरजंगमात्मक जगत् है। विश्व ही विश्वात्मा है। जगत् ही जगदात्मा है। भूलोक ही वैकुंठ है।

बम्बई के प्रिन्सेस डॉक से छुटी हुई स्टीमर मंगलूर के बन्दर तक जाते हुए भी समुद्र तो एक ही है, स्टीमर समुद्र से अलग नहीं हुई है–समुद्र में ही है। वैसे ही शक्तिपात से दीक्षित साधक जहाँ-कहीं किसी देश में साधन करते हैं, ध्यान के समय अंतर्ज्योति में अपने गुरु या इष्ट को देखते हैं, तो उसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं, ना तो अतिशयोक्ति है। क्योंकि जैसे स्टीमर पानी में ही है, वैसे ही साधक के अन्दर जो चैतन्य है, वह सर्व देश, सर्व काल और सर्व स्थिति में उसके साथ ही रहता है। चिति के अन्दर साधक और साधक के अन्दर चिति है। चैतन्य सर्व-व्यापी होने से एक ही है। यह बात बिलकुल सत्य है। इसमें कोई नास्तिक के नाक-भौंहे सिकोड़ने का भी कारण नहीं। इसमें कोई प्रोपेगेंडा, झूठा प्रचार नहीं, भुवा–बाज़ी नहीं, ना पाखंड है।

'**तच्चमत्कार इच्छाशक्ति:**'। (तंत्र-सार) अर्थात् भगवान की शक्ति अनन्त चमत्कारयुक्त है। वह अपनी इच्छा से साधकों में अनेक प्रकार की क्रिया कराती है। उसी क्रियात्मक स्थिति में अनन्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चमत्कारजन्य आसन, योग मुद्राएँ और अनेकप्रकार के ध्यान होते हैं। इन क्रियाओं द्वारा अंतर की नाड़ी-शुद्धि होकर नाड़ियाँ निर्मल बन जाती हैं और सर्वसाधारण कई तरह के रोग भी नाड़ी-शुद्धि की क्रिया में मिट जाते हैं। बहुत प्रकार के प्राणायाम भी होने लग जाते हैं। प्राणायाम से सर्व चक्रों का भेद होकर सहज में सुषुम्ना नाड़ी का द्वार खुल जाता है। इसके बाद प्राण सुषुम्ना नाड़ी द्वारा सहस्रार में स्थिर होकर समभाव को पा जाता है। प्राण-अपान दोनों जहाँ तक समभाव में नहीं आते, वहाँ तक ये नाड़ी-शुद्धि की क्रियाएं होती रहती हैं। **'प्राणसमाचरे समदर्शनम्'**॥ (शिवसूत्रविमर्शिनी) अर्थात् प्राणों के सम होते ही योगी को समदर्शन हो जाता है। **तब वह योगी की** बुद्धि 'मैं अमुक हूँ,' ऐसे संकोच भाव को त्याग कर 'मैं सर्वव्यापी चैतन्य हूँ, ऐसी **विकसित भावयुक्त बन जाती है। 'इति वा यस्य संवित्तिः क्रीडात्वेनाखिलं जगत्।'** (स्पन्दशास्त्र)। तदनंतर वह गुरुप्रसाद प्राप्त साधक, श्रीसंवित्-देवतामय कुंडलिनी का ही यह क्रीडामय जगत् है, ऐसा समझकर आनन्द में पूर्ण हो जाता है। वह साधक योग्य रीति से चलकर व्यवहार के जगत में भी रह सकता है, उसको घर-द्वार त्यागने की ज़रूरत नहीं। उसकी जाग्रत हुई कुंडलिनी सदा उसका रक्षण करती है। कभी-कभी, दृष्टांत से चेतावनी देती है। इस शक्ति को **'इच्छा शक्तिरुमा कुमारी॥'** (शिवसूत्रविमर्शिनी) ऐसा कहकर परशिव ने वर्णन किया है। योगीजनों को परमानन्दमय स्थिति देनेवाली, अपनी इच्छा मात्र से योगीजनों में अनेक क्रिया करानेवाली, साधकों की इच्छापूर्ति करनेवाली यह इच्छाशक्ति जिनके हृदय में प्रवेश कर चुकती है, उनके लिए फिर पाने को क्या रह जाता है। **"सा च कुमारी विश्वसर्गसंहारक्रीडापरा 'कुमारक्रीडायाम्'।"** परमेश्वर की जो परशक्ति है-जिस शक्ति से सृष्टि-स्थिति-लय आदि क्रीड़ा होती है-वह परशक्ति उमा याने **'परैव पारमेश्वरी स्वातन्त्र्यरूपा'** जो स्वतंत्रता से शून्य में अनन्त जगत् को रचती, वही गुरुप्रसाद शक्ति है। जिनकी वह शक्ति (कुंडलिनी) गुरुकृपा से जागृत हो जाती है, उनके लिए कौन-सा साधन कठिन है? उनके लिए क्या मोक्ष भी कठिन है? उन गुरुप्रसाद-प्राप्त जनों को सहजों में सहज साधन करना होता है। गुरुकृपा-शक्ति उसका अधःपतन नहीं होने देती। वह कुंडलिनी शक्ति साधक के हृदय को परमानन्द से भर देती है- **'स्वातन्त्र्यम् आनन्दशक्तिः।'** (तंत्रसार) अन्य किसी की सहाय न लेते हुए अपने आप स्वतंत्रता से स्फुरनेवाली, आनन्दशक्ति कुंडलिनी जागने पर साधक केवल आनन्द का भागी ही नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होता, मूर्तिमंत परमानन्द का विग्रह बन जाता है। वह शक्ति अपने को आप जानती और आप ही अपने को पहचानती है। ऐसी वह '**आमर्शात्मकता ज्ञानशक्तिः**'। (तंत्रसार) सर्व विश्व-ब्रह्मांड को अपने में रखकर आनन्दोल्लास में रहनेवाली है। वह शक्ति जिनमें क्रियाशील बन जाती है, उनके लिए क्या अप्राप्य है? उनको कौन–सा अभाव रह सकता है? क्योंकि वह **सर्वाकारयोगित्वं क्रियाशक्तिः**।' (तंत्रसार) मनचाहे आकार को धारण करनेवाली है। **स्वशक्तिप्रचयोऽस्य विश्वम्** '॥ (शिवसूत्रविमर्शिनी) अर्थात्, अपनी स्वशक्ति से, बिना किसी साधनसामग्री, अनेक रूप में विश्व को रचनेवाली है। परमस्वतंत्रता से स्फुरनेवाली **चिति** जो परमेश्वरी योगमाया कुंडलिनी है, वह गुरुकृपा से जिनके हृत्कमल में क्रियाशील हो जाती है, उनके लिए मोक्ष तो साधारण वस्तु है, क्योंकि वह स्वयं ही मूर्तिमंत चिति रूप बन जाते हैं। यहाँ पाठकों को 'साधक चितिरूप बन जाता है' ऐसा पढ़कर आश्चर्य मानने का कोई कारण नहीं है। वस्तुतः यावन्मात्र जगत् चिति है। साधक चितिमय, साधन चितिमय, गुरु चितिमय, मंत्र चितिमय, प्राण चितिमय, क्रिया चितिमय; चितिमय आकाश, चितिमय वायु, चितिमय अग्नि, चितिमय जल, चितिमय पृथ्वी; चितिमय नभचर, चितिमय जलचर, चितिमय थलचर; सारे जगत् के कारण और कार्य भी चिति ही है। "**यथा चितिः विश्वं साधयति, चितिमासाद्य विश्वं भवति, चित्याविश्वमीश्वरः करोति चितेः विश्वंभवति, चितेः विकारोविश्वंभवति, चितौविश्वंस्थितमिति**"॥ तब चिदात्मामय विश्व में गुरुकृपा से पुनः चितिमय बनने में क्या बाधा हो सकती है?

सर्व वेदों का सिद्धान्त है कि 'अयमात्मा ब्रह्म'– आत्मा ही परमात्मा है। जब सारा जगत् जगदीश है, तब गुरुपदिष्ट मार्ग से चिति या आनन्द की अनुभूति करना यह कोई कल्पित विचार नहीं है, बल्कि बिलकुल सत्य है। भगवान् श्रीनित्यानन्दजी की यही देन है। शास्त्रकारों ने '**गुरुर्वा पारमेश्वरी अनुग्राहिका शक्तिः** ऐसा कहा है। शक्ति रूप में श्रीगुरु ही शिष्य के अन्दर दीक्षा के समय प्रवेश करते हैं। शिष्य में प्रवेश होते ही उसकी कायापलट हो जाती है। शिष्य में प्रविष्ट हुई शक्ति मूलाधार चक्र से लेकर सहस्रार तक अनन्त प्रकार के विचित्र कार्य करती रहती है, और सदा उसके हृदय में वास करती है। शिष्य को इस शक्ति के कार्य का परिचय भी निरंतर होता रहता है। कभी-कभी उसको प्रज्वलित चिता की अग्नि जैसा भासमान होता है, और अपने

[शेष पृष्ठ १५३ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

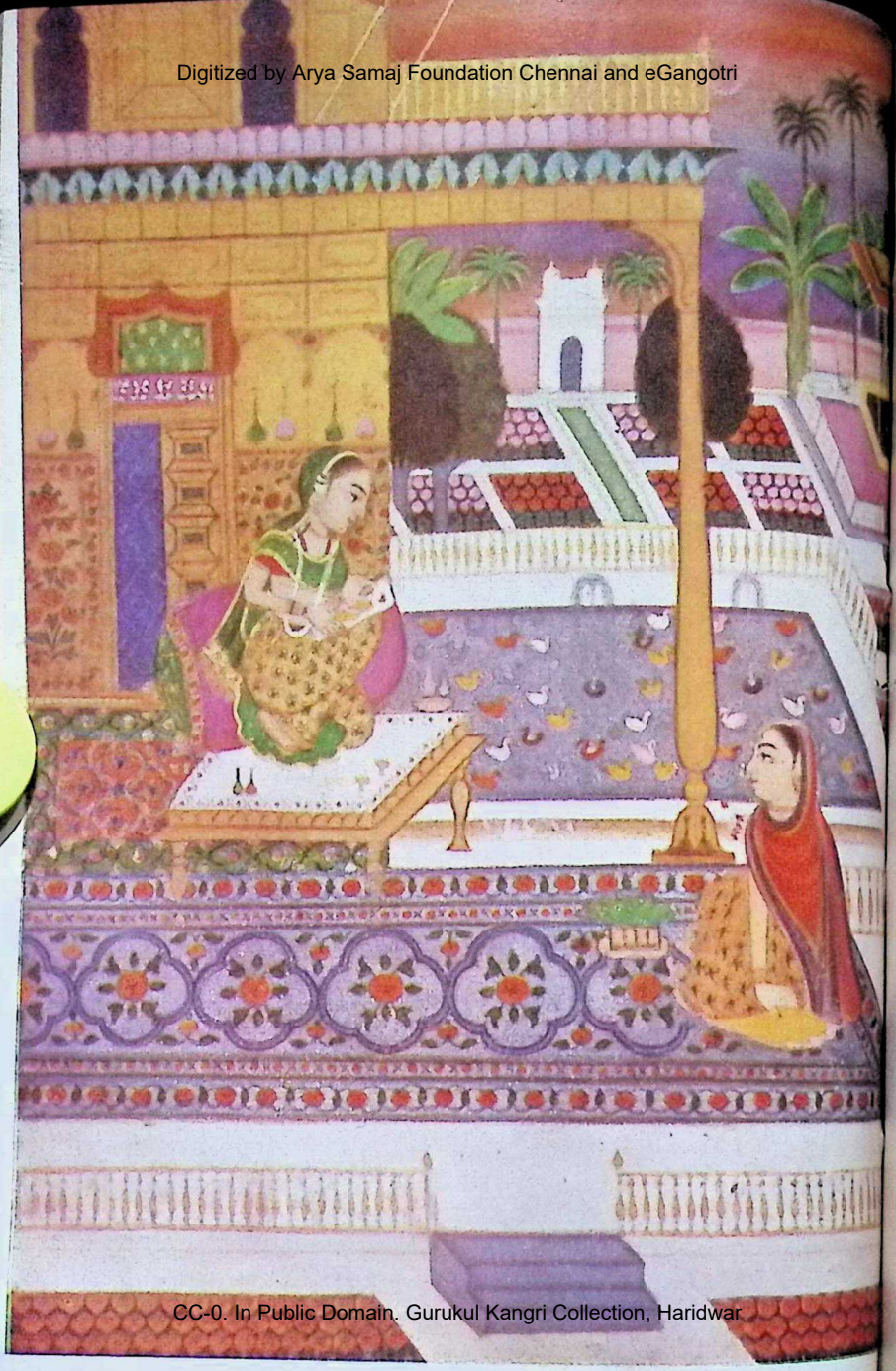

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

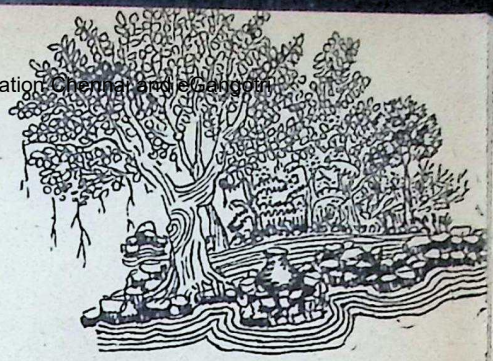

नया अक्षयवट

●

मैं
एक नया अक्षयवट
उगा हूँ
नया अमिताभ दूंगा
यशोधरा को
एक नया राहुल देकर
फिर मन उमगाऊँगा
'गच्छामि' का
कालजयी वह त्रयी–सूत्र
फिर से गुंजवाऊँगा
मुझमें कुछ ऐसा है
जिससे
तुम्हें कभी भी
मुझे
पहिचानने में
परेशानी नहीं उठानी पड़ेगी
कालजयी–अक्षयवट की–
छाँह में आने पर
आस्था अजिताभ ही होगी।

––दीनेन्दु भारती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

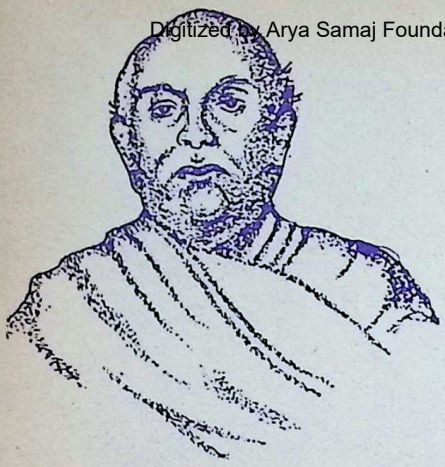

लेखक

योग-शक्ति द्वारा आसन का उत्थान और आकाश-गमन

म. म. डॉ. गोपीनाथ कविराज

श्रेष्ठ योगी और भक्त-सम्प्रदाय के साथ जिनका परिचय है, वे जानते हैं कि योगक्रिया के प्रभाव से अथवा अन्य किसी आध्यात्मिक शक्ति के सम्बन्ध से योगी का आसन भूतल से आकाश में उत्थित हो जाता है। अवश्य, जिनके आसन का उत्थान नहीं होता, ऐसे योगी भी देखने में आते हैं। फिर, किन्हीं-किन्हीं योगियों के सम्बन्ध में ऐसा भी सुनने में आता है कि उनका आसन ही केवल आकाश में उत्थित नहीं होता, वल्कि वे इच्छानुसार आकाश-मार्ग में विचरण भी कर सकते हैं।

आसन के उत्थान का वास्तविक रहस्य क्या है, एवं आसन-उत्थान के साथ आध्यात्मिक उत्कर्ष का कोई सम्बन्ध है या नहीं, इस विषय में अनेक लोगों के मन में जानने की उत्सुकता उत्पन्न होती है। साधारण विचारशील लोगों के मन में संदेह होता है कि स्थूल देह जब मध्याकर्षण नियम के अधीन है, तब उक्त नियम का उल्लङ्घन कर वह ऊपर को उत्थित कैसे होगी? यह संदेह निर्मूल नहीं है। किन्तु, इसके समाधान के पूर्व यह स्मरण रखना होगा कि आसन का उत्थान और आकाश-विहार—दोनों ही सत्य हैं। किन्तु, मध्याकर्षण का नियम देह की स्थूलता की निवृत्ति के साथ ही देह के ऊपर अनिवार्य रूप से लागू नहीं हो सकता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह स्थूलत्व-निवृत्ति-व्यापार तमोगुण और सत्त्वगुण के आपेक्षिक विनिमय से होता है, इसमें संदेह नहीं। यह योग के प्रभाव से भी हो सकता है एवं अन्य कारणों से भी, किन्तु आसन-उत्थान हुए बिना वास्तविक आध्यात्मिक सम्पत्ति का लाभ नहीं होता, यह भी कहना उचित नहीं, एवं आसन-उत्थान होने पर ही आध्यात्मिक उन्नति हुई, यह भी सब समय नहीं कहा जा सकता। आसन का उत्थान सचमुच ही होता है, ऐसा हृदयंगम होने पर उसके कारणों का निर्देश और प्रक्रिया के सम्बन्ध में आलोचना हो सकती है।

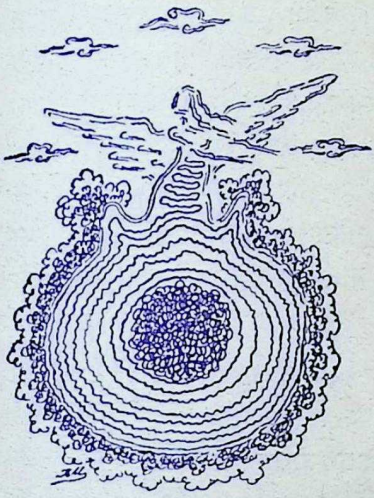

प्रत्यक्ष सत्य का अपलाप नहीं किया जा सकता। आसन-उत्थान-व्यापार सभी देशों में एक सुपरिचित सत्य है। आकाश-गमन आदि इसी की परिणति है। ख्रिस्तीय धर्म-ग्रंथ में भी उपासक-वर्ग के साधना-जीवन के इतिहास में दिखायी देता है कि प्रार्थना के समय अथवा अन्य किसी प्रकार के भगवच्चिन्तन के समय किसी-किसी साधक की देह प्रभा-मण्डल से वेष्टित होती है, यहाँ तक कि कभी-कभी समस्त घर भी उज्ज्वल आलोक से आलोकित हो उठता है एवं कुछ भाग्यवान साधक भूमितल से उत्थित होकर अल्प-काल के लिए आकाश में अवस्थित होते हैं। इसके बहुत-से उदाहरण हैं। उनमें दो-चार नीचे उल्लिखित हैं।

प्रसिद्ध संत सेण्ट अगास्टिन ने 'अपनी जीवनस्मृति' ग्रंथ में सेण्ट मणिका नाम की एक साध्वी की कथा कही है कि वह प्रार्थना के समय लगभग तीन फुट तक आकाश में उत्थित होती। मालूम पड़ता, मानों उसके शरीर में गुरुत्व है ही नहीं, शरीर वायु-मण्डल में तैरता रहता। यह ख्रिस्तीय चतुर्थ शताब्दी की घटना है।

प्रसिद्ध नव प्लातनिक दार्शनिक जाम ब्लिचास प्रार्थना के समय भूमि से प्रायः १० हाथ ऊपर उठता। उस समय, उसकी देह और वस्त्र-परिधान आदि सोने के भाँति चमकीली ज्योति से ज्योतिमर्य होकर भासमान होते।

इजिप्ट की सेण्ट मेरी नामक एक महिला के जीवन में भी इस प्रकार की अलौकिक घटना देखने में आयी है। इस महिला का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्व जीवन उतना अच्छा नही था। किन्तु, कालान्तर में इसके जीवन में घोर परिवर्तन हुआ। इसने पश्चात्ताप-रूप अग्नि में दग्ध होकर विशुद्ध भागवत जीवन लाभ किया। सुना जाता है कि यह पैलेस्टाइन की मरुभूमि में अकेले नग्न रूप से वास करती, एक शाक-सब्जी, जब जो पाती, उसी से देह-रक्षा की चेष्टा करती। एक बार फादर जोजिमास् नामक एक धर्म-प्रचारक की दृष्टि हठात् इस साधिका पर पड़ गयी। इसकी अवस्था देख कर उन्होंने अपने वस्त्र-खण्ड पहनने के लिए इसे प्रदान किये। कुछ क्षणों के बाद ही उन्होंने गौर करके देखा कि मेरी पूर्व की ओर मुंह करके प्रार्थना कर रही है एवं इसकी देह भूमि से पाँच फुट ऊपर उत्थित है।

विशप सेण्ट आर के विषय में सुना जाता है कि गिरजा-घर बन्द हो जाने पर भी वे किसी अलौकिक कौशल से उसका द्वार खोलते, तब सब पहरेदार सोये रहते। वे गिरजा-घर के भीतर मेज पर बैठ कर प्रार्थना करते एवं सारी रात जागरण करते। अनेक दिन देखा जाता कि उनकी देह आकाश में उत्थित हुई है। उस समय संपूर्ण गिरजा-घर दिव्य आलोक से आलोकित हो उठता। यह छठीं शताब्दी की बात है। हंगरी के सेण्ट मारग्यरेट गुड फ्राइडे के उत्सव में बहुत बार उत्थित हुए थे, ऐसा देखा गया था।

प्रसिद्ध सन्त सेण्ट फ्रान्सिस (पाओला) बहुधा रात्रि के समय प्रार्थना-काल में आकाश में उत्थित होते। कहा जाता है कि एक बार वे एकादश लुई के अनुरोध से उनके समीप गये थे। नेप्ल्स नामक नगर होकर उनके जाने की बात थी। उनके नेप्ल्स पहुँचने के बाद समग्र नगर ने उनके लिए सम्मान-प्रदर्शन किया एवं प्रथम फारडिनेण्ड ने उनका अपने प्रासाद में स्वागत किया। रात्रि के समय घर के दरवाजे के छेद से महात्मा का अवस्थान देखा गया कि वे प्रार्थना कर रहे हैं एवं एक विशाल ज्योति उन्हें घेरे हुई है। मेज़ से उनका शरीर कई फुट ऊपर देखा गया। यह देख कर राजा को अत्यन्त आश्चर्य हुआ था। यह पाँचवीं शताब्दी की घटना है। स्पेन की सुप्रसिद्ध महिला-सन्त, सेण्ट टेरेसा, जिसकी भारतीय मीरा के साथ बहुधा तुलना की जाती है, प्रार्थना-काल में प्रायशः आकाश में उठती थी। वह इस प्रकार उत्थित होकर बहुत समय तक शून्य में रहती थी। उसके बाद भगवान की सन्निधि में प्रार्थना करने पर उसकी देह नीचे उतरती।

प्रसिद्धि है कि स्थानीय विशप डन आलमेरेस् डे मोनडोसा एक बार सेण्ट टेरेसा से भेंट करने आये थे। उनकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इच्छा थी कि धर्म-सम्बन्धी चर्चा करेंगे। किन्तु, वे यह देखकर आश्चर्य में पड़ गये कि टेरेसा की देह उस समय जँगले के ऊपर उठ कर निरालम्ब रूप से शून्य में स्थित हैं। विशिष्ट प्रार्थना के समय उसकी देह प्रायः ज्योति से भर जाती और हल्की होकर शून्य में उत्थित होती। यह सोलहवीं शताब्दी की बात है।

वर्त्तमान युग में भी इस प्रकार की घटनाओं का अभाव नहीं है। हमारे देश में भी इस तरह आसन-उत्थान के व्यापार-विशेष योगियों अथवा भक्तों के जीवन में प्रायः दिखायी देते हैं। प्रसिद्ध महात्मा राम ठाकुर की कथा सर्वत्र सुपरिचित है। वे अति अल्प अवस्था में ही साधना से इतने उन्नत हुए कि आसन-उत्थान की शक्ति उसी समय से उनके जीवन में लक्षित होती थी। अपेक्षाकृत अल्प वय में वे किसी भद्र पुरुष के यहाँ पाचक ब्राह्मण का कार्य करते थे। तब उनकी माँ जीवित थीं। अपनी माँ के जीविका-निर्वाह के लिए ही उन्हें ऐसा कार्य करना पड़ा था। वे दिन की और रात की रसोई बना कर बाबू लोगों के भोजन के बाद विश्राम करने जाने के उपरान्त अपनी कोठरी में आकर आसन बाँधकर अत्यन्त गुप्तरूप में यह कार्य करते थे। घर में किसी को भी इसका पता न था। एक दिन विशेष कारण से अधिक रात्रि में उन्हें बुलाने की आवश्यकता पड़ी। जो व्यक्ति बुलाने गया था, उसने कमरे के अन्दर जो दृश्य देखा, उससे उसे अन्दर जाने की हिम्मत नहीं हुई। उसने देखा कि ठाकुर महाशय मशहरी के अन्दर आसन पर बैठे हैं, परंतु उनकी देह शून्य में उत्थित है और उज्जवल आलोक से वेष्टित है। यह देख कर उसने गृहस्वामी से निवेदन किया। गृहस्वामी ने स्वयं आकर अपनी आँखों से देखा। उन्होंने समझा कि यह पाचक ब्राह्मण केवल पाचक ही नहीं है, प्रत्युत एक महापुरुष है। ऐसा समझकर उन्होंने दूसरे दिन से ठाकुर महाशय को पाक-कार्य से मुक्त कर दिया, परन्तु प्रति मास आर्थिक सहायता पूर्ववत् करते रहे। राम ठाकुर महाशय के शून्य मार्ग में विचरण का वृत्तान्त उनके भक्तों में प्रसिद्ध है।

इस प्रकार, आसन का उत्थान, देह की ज्योतिर्मयता और इच्छानुसार आकाश-मार्ग में गमन का विवरण महायोगी श्री श्रीविशुद्धानन्द परमहंस, श्री श्रीलोकनाथ ब्रह्मचारी, श्री श्रीकाठिया बाबा तथा और आधुनिक योगियों के जीवन में मिलता है। ये सब प्रत्यक्ष दृष्ट घटनाएँ हैं, इनकी तथ्यता के विषय में अनेक साक्ष्य दिये जा सकते हैं। गुरु-परंपरा-चरित नामक ग्रन्थ से पता चलता है कि प्रसिद्ध तांत्रिक सिद्ध महात्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भास्कर राय का भी आसन शून्य में उठता था और उस समय समस्त गृह उज्ज्वल आलोक से उद्भासित हो उठता था। ईशु ख्रीस्त के समकालीन योगी टियाना-निवासी एपोलोनियस् में भी आकाश-गमन की शक्ति थी। वे भारत-वर्ष में आये थे। इसका वृत्तान्त उनके शिष्य और भक्तों ने प्रकाशित भी किया था। उनकी खेचरी शक्ति के विषय में बहुत-सी अलौकिक बातें सुनने में आती हैं। सिमन मेगास् किसी समय प्राचीन पाश्चात्य जगत् में अलौकिक योग-शक्ति के विषय में आदर्श माने जाते थे। बहुत लोग उन्हें मायावी समझते थे। विभिन्न प्रकार की योग-विभूतियों के सदृश ही आकाश-गमन की शक्ति भी उनमें थी।

योगवासिष्ठ रामायण से पता चलता है कि वीतहव्य, चूडाला प्रभृति आकाश-गमन में पूर्ण अधिकार-सम्पन्न थे। चूडाला में पहले ब्रह्मज्ञान का उदय हुआ था, उसके बाद एकान्त में योगाभ्यास के द्वारा अन्यान्य योग-शक्तियों के सदृश आकाश-गमन की शक्ति भी उन्होंने उपार्जित की थी। चूडाला तथा शिखिध्वज का विस्तृत विवरण योगवासिष्ठ में है। आचार्य शंकर और गोरक्षनाथ आकाश-गमन में दक्ष थे, यह प्रसिद्धि है। बुद्धदेव के आकाश-गमन की बातें बौद्ध ग्रन्थों में विभिन्न स्थानों में मिलती हैं। ऐसा कहा जाता है कि एक बार वे श्रावस्तीनगर से आकाश मार्ग से जाकर धनिय की कुटिया के ऊपर खड़े हो गये थे। श्रावस्तीनगर से धनिय का निवास-स्थान ७०० योजन दूर था। दत्तात्रेय की आकाश-गमन की बातें भी अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। कहा जाता है कि वे एक अहोरात्र में भारत के विभिन्न तीर्थों में तत्तत् समय पर तत्कालोपयोगी दैनिक कार्य सम्पादन करते थे और आजकल भी करते हैं।

इतिहास से मालूम होता है कि मियाँ मीर कभी-कभी लाहौर से आकाश-मार्ग द्वारा हिजाद जाते थे और वहाँ रात्रि बिताकर सूर्योदय के पहले ही लाहौर लौट आते थे। इसका विवरण दारा-शिकोह ने स्वरचित औलियों के जीवन वृत्तान्त में दिया है।

शेख अब्दुल कादिर जिलानी एक दिन धर्म-व्याख्या कर रहे थे, अकस्मात् भूमितल से वे शून्य में उठ गये। वहाँ से उनको सुनने में आया, 'हे इसराइलवासी, ठहर जाओ। इस्लाम-धर्म सुनो।' वे शून्य में थोड़ी दूर उठ कर फिर अपने स्थान पर लौट आये और व्याख्यान देने लगे। किसी के प्रश्न के उत्तर में उन्होंने कहा—'मुझे अकस्मात् दिखायी दिया कि खिदिर मस्जिद के पास से जा रहे थे। मैंने आकाश-मार्ग में जाकर उनका अभिवादन किया और अपना व्याख्यान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुनने के लिए आमन्त्रित किया।' ये महात्मा जिलानी आधे घंटे में ईराक से रोम गये थे। किसी एक महात्मा का देहावासन हो गया था, उनके कल्याण के लिए अन्तिम प्रार्थना करने इन्हें जाना पड़ा था।

प्रसिद्धि है कि गैब्रियल नामक देवदूत एक रात्रि में मुहम्मद साहब को शय्या से उठा कर सप्त स्वर्ग तथा नरकों के यावतीय दृश्य दिखाने के लिए ले गये थे। उनको बहुत बार भगवद्दर्शन कराये और अन्त में यथास्थान पहुँचा दिया। इसमें समय अत्यन्त कम लगा था। मुहम्मद साहब ने देखा, उस समय भी उनकी शय्या गरम ही थी।

एक बार मिस्र देश के सुलतान ने सूफी महात्माओं की योग शक्ति की महिमा सुन कर राज्य के सब पण्डितों तथा साधकों को अपने प्रासाद में आमन्त्रित किया था। उसने उनसे पूछा कि सूफी शक्ति-सम्पन्न हैं या नहीं? उन्होंने कहा कि सप्त स्वर्गों के भीतर किन्हीं दो स्वर्गों के व्यवधान का अतिक्रमण करने के लिए एक आदमी को ५०० वर्ष चाहिए। प्रत्येक स्वर्ग का विस्तार भी प्रायः ऐसा ही है। अतएव, एक क्षण में सप्त स्वर्ग भेद करना कैसे सम्भव है? सुलतान ने कहा कि इसीलिए मुहम्मद साहब के सम्बन्ध में जो वृत्तान्त प्रसिद्ध है, वह विश्वसनीय नहीं है। उस समय उसके उत्तर में किसी ने कुछ नहीं कहा, इसीलिए उक्त प्रश्न पर विचार नहीं हुआ, सभा भंग हो गयी। उस समय शेख शहाबुद्दीन अत्यन्त शक्तिशाली पुरुष थे। किसी विशेष कारणवश वे उस सभा में उपस्थित नहीं हो सके थे। वे सुलतान के संशय का विषय सुनते ही समाधान के लिए व्यग्र हुए। उस समय दिन में अत्यन्त तीव्र ताप रहने पर भी वे सुलतान से मिलने के लिए रवाना हुए। सुलतान ने भी उनका यथाविधि स्वागत किया। सुलतान ने समझा, ये कुछ माँगने के लिए आये होंगे। उसने शेखजी से कहा, 'आप स्वयं कष्ट करके यहाँ क्यों आये, किसी परिचारक को ही भेजने से काम हो जाता।' शेखजी ने कहा कि दूसरा प्रयोजन है।

शेखजी ने, जो बहुत अलौकिक शक्ति संपन्न योगी थे, अपनी योग-शक्ति के द्वारा भगवान की माया का प्रभाव, विभिन्न प्रकार के दृश्यों में दिखलाते हुए, उनके सामने उपस्थित किया। उन्हें देख कर 'देश-काल का रहस्य अत्यन्त गम्भीर है, यह माया का ही खेल है, एक क्षण के भीतर युगयुगान्तव्यापी काल का स्फुरण हो सकता है तथा विशाल काल में भी एक क्षण की अनुभूति हो सकती है। इसी प्रकार, देश में भी समझना चाहिए। एक बिन्दुमात्र स्थान में विराट् सिन्धु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का प्रत्यक्ष आविर्भाव हो सकता है तथा विराट् समुद्र भी दृष्टि-भेद से एक विन्दु के सदृश प्रतीत हो सकता है', यह समझ में आया और स्पष्ट हृदयंगम हुआ कि मुहम्मद साहब का अनुभव किसी प्रकार अविश्वसनीय नहीं है। भगवत्-शक्ति के प्रभाव से अणु में महान् और महान में भी अणु सिद्ध होता है।

[२]

प्रकृति के अवयव सत्त्व, रज और तम इन तीन गुणों में तमोगुण का धर्म है—गुरुत्व और आवरण; किन्तु सत्त्वगुण का धर्म है ठीक इसके विपरीत, अर्थात् लघुत्व और प्रकाश: क्रियाशील रजोगुण दोनों के वीच रह कर सत्त्व को तम में और तम को सत्त्व में ले जाने की चेष्टा करता है। तपस्या, योगक्रिया, प्रार्थना, ध्यान आदि सत्त्वगुणाश्रित रजोगुण की क्रियाएँ हैं। इन क्रियाओं के प्रभाव से सत्त्वगुण का आधिक्य होने से तमोगुण दव जाता है। इसलिए, देह का गुरुत्व घट जाता है एवं देह क्रमशः प्रकाशमय सत्त्वगुण में परिणति लाभ करता है। इसके कारण जो आवरण स्थूल देह को आवृत कर रखता है, वह हट जाता है और देह केवल हल्की ही हो, यह वात नहीं है, तेजोमय अवस्था भी उसे प्राप्त होती है। यह थोड़ा अधिक परिणाम में होने पर देह का लघुत्व होता है—यह देह-स्थित सत्त्वगुण का उत्कर्ष होने पर ही संभव है। यह उत्कर्ष-लाभ प्राणायाम के द्वारा, जप के द्वारा, ध्यान के द्वारा अथवा अन्य किसी उपाय से हो सकता है: जव तक देह सत्त्वगुण प्रधान रहती है, तभी तक तेजोमय या शुद्ध ज्योतिर्मय रहती है एवं उसके ऊपर मध्याकर्षणक्रिया कम मात्रा में अनुभूत होती है। इसी का नाम देह की लघुता है। इसी के कारण देह वायु-समुद्र में ऊपर की ओर उत्थित होने की चेष्टा करती है। देह की लघुता अत्यन्त अधिक होने पर वह ज्योतिर्मय होकर एवं गुरुत्व-रहित हो कर वायु-मण्डल के ऊपरी स्तर में उठ जाती है। उस समय तमोगुण अत्यन्त दबा रहता है। इसी का नाम देह का उत्थान है। यदि कुण्डलिनी शक्ति का प्रवल रूप से जागरण हो, तो यह स्वभावतः हो जाता है। कुण्डलिनी शक्ति की सुप्तावस्था का भंग होने पर यही चैतन्य-शक्ति के रूप में प्रकट होती है। चैतन्य-शक्ति युक्त देह ही चेतन देह है। देह की यह चेतनता सामयिक न होकर स्थायी होने पर अणु-परमाणु तक में परिवर्तित हो जाती हैं।

कुम्भक से भी किसी-किसी का आसन भूतल से थोड़ा वहुत उत्थित होता है। हम-लोगों के चारों ओर जो वायु-मण्डल है, उस वायु से आभ्यन्तर वायु के हल्की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होने पर हम लोगों की देह स्वभावतः ही वायु-मण्डल के ऊपर की ओर उठने की चेष्टा करती है। मूलाधार में स्थित कुण्डलिनी-रूप चिदग्नि के प्रज्वलित होने पर भीतर की वायु उस अग्नि के ताप से तप कर लघुत्व को प्राप्त होती है। देह के उपादान के सत्त्वगुण में रूपान्तरित होने पर वायु के साथ ही देह भी उत्थित होती है। देह के उत्थित होने पर ही आकाश में गमन या आकाश में संचरण सिद्ध नहीं होता। उसके लिए और भी अधिक प्रयास आवश्यक है।

आलोच्य विषय को और स्पष्ट करके कहने की चेष्टा की जा रही है। सम्पूर्ण जगत् का आश्रय करके सृष्टि-अवस्था में जैसे दो विरुद्ध शक्तियाँ क्रिया करती हैं, वैसे ही हम लोगों की जीव-देह का आश्रय करके भी निरन्तर दो विरुद्ध शक्तियों की क्रिया हो रही है। इन दो शक्तियों में परस्पर प्रतिद्वन्द्विता रहती है। जब एक प्रबल होती है, तब दूसरी क्रमशः दब जाती है। क्रमशः ऐसा समय आता है, जब वह प्रबल शक्ति ही विराजमान होती है। किन्तु, इसके बाद वह अभिभूत (दबी हुई) शक्ति फिर धीरे-धीरे जग उठती है। तब वह शक्ति ही प्रबल होती है। पहली शक्ति धीरे-धीरे क्षीण होकर लुप्तप्राय हो जाती है। बाद, एक समय आता है, जब दूसरी शक्ति का ही प्राधान्य रहता है। प्रथम शक्ति नाम-मात्र रह पाती है। इस प्रकार, परिवर्तन निरन्तर चल रहा है। जीव देह में सर्वत्र ही यह खेल दिखायी पड़ता है। जड़ में भी बहुत कुछ अंशों में यही बात है। इस आवर्त्तन का नाम ही शुद्ध भाषा में कालचक्र का आवर्त्तन है। चढ़ना और उतरना या भीतर आना तथा बाहर जाना इसका स्वभाव है। इस आवर्त्तन के बाहर यदि जाना हो, तो मध्य मार्ग का अवलम्बन करना चाहिए। मध्य मार्ग कहने से सन्धि की प्रतीति होती है, जहाँ दोनों का समभाव विद्यमान है दिन और रात्रि के मध्य में अथवा रात्रि और दिन के मध्य में जैसे सन्धि है, वैसे ही इन दो विरुद्ध शक्तियों के बीच भी एक सन्धि-स्थान है। चाहे जिस किसी कौशल से हो, इन दो विरुद्ध शक्तियों को साम्यावस्था में ला सकने पर सन्धि का पता चल जाता है। तब मध्यम मार्ग प्राप्त हो जाता है, जिसे बुद्धदेव कहते हैं—'मध्यम प्रतिपद'। इसका आश्रय किये बिना कोई भी योगी योग-सम्पत्ति प्राप्त नहीं कर सकता। इस मध्यम पथ की प्राप्ति होने पर ही ऊर्ध्वगति आरंभ होती है। मध्यम पथ की जो प्राप्ति है, वही कुण्डलिनी का उद्बोधन भी है। यही मार्ग सत्य है। ऊर्ध्वगति क्रमशः बढ़ते-बढ़ते देह की ऊर्ध्वसीमा में पहुँच जाती है, इसी को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहते हैं मेरु शिखर। योग-भाषा में यही हुआ आज्ञाचक्र-भेद, जिसके कारण सहस्र-दल के महाबिन्दु में स्थिति संभव होती है। आसन का उत्थान आदि इस ऊर्ध्व-गति के समकालीन व्यापार हैं। इसके बाद उस मेरु शिखर पर स्थित तेज अनन्त आकाश में चारों ओर फैल जाता है। इसी का नाम व्याप्ति है। आकाश-गमन आदि इसी व्याप्ति के पूर्वकालीन आनुषंगिक व्यापार मात्र हैं। खेचरी अवस्था की पूर्णता होने पर यह व्याप्ति स्वभावतः ही प्रकट होती है। पीछे जो कहा गया है, उसका अनुसन्धान कर आसन-उत्थान और आकाश-गमन का भागवत संबंध किस प्रकार का है, यह कुछ-कुछ समझ में आ जायगा। असली बात यह है कि विरोध के समन्वय के बिना ऊर्ध्वगति का सूत्रपात नहीं होता।

योगवासिष्ठ में लिखा है कि आकाश-गमन आदि की शक्ति जीवन्मुक्त देह में नहीं होती। आत्मविद् इन सब शक्तियों को नहीं चाहते। वह वस्तु स्वभाव है। आत्मज्ञान या मुक्ति न होने पर भी आकाश-गमनादि द्रव्य मंत्र, क्रिया और कालशक्ति से उद्भूत हो सकते हैं। द्रव्यशक्ति, जैसे मणि, औषध आदि। जैसे गुटिका-सिद्धिविद् जानते हैं कि यथाविधि निर्मित संस्कार युक्त पारद की गुटिका के प्रभाव से देह की ऊर्ध्वगति होती है। यहाँ तक कि खेचरीत्व भी हो सकता है। मंत्र, अर्थात् मंत्रशक्ति के द्वारा भी आकाशगति हो सकती है। 'क्रिया' से यहाँ योगाभ्यास आदि समझना चाहिए। 'काल-शक्ति' का प्रभाव भी अचिन्त्य है। इसीलिए कहा गया है— "अनात्मवित् अमुक्तोऽपि नभोविहरणादिकम्। द्रव्यकर्मक्रियाकाल—शक्त्या प्राप्नोति राघव॥" तत्त्वज्ञ या अतत्त्वज्ञ पुरुष क्रमानुसार साधन करने पर (मणि, द्रव्य, क्रिया आदि द्वारा) ऊर्ध्वगति आदि प्राप्त कर सकते हैं। नभोगति, सिद्धि, काल— इन सबको आत्मज्ञ नहीं चाहते। नियति के क्रमानुसार ये सब सिद्धियाँ होती हैं। देवादि की खेचरता आदि तथा वस्तु-स्वभाव स्वतः सिद्ध हैं।

पतञ्जलि का मत है, यदि आकाश-गमन करना हो, तो देह और आकाश के बीच जो परस्पर संबंध है, उसमें संयम (धारणा, ध्यान, समाधि) करके उसे आयत्त किया जाता है। आसनादि में देह चाहे जहाँ रहे, वहीं आकाश भी है। कारण, आकाश सर्वव्यापक और सब वस्तुओं का अवकाश दायक है। आकाश के साथ देह का व्याप्ति-रूप जो संबंध है, उसे एकाग्र चिन्तन द्वारा अपनी इच्छा के अधीन करना पड़ता है। तब साथ-ही-साथ देह हल्की हो जाती है। मध्याकर्षण की क्रिया नष्ट हो जाती है। इसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारे परिवार के स्वास्थ के लिये फॉसफोमिन

फॉसफोमिन विटामिन बी काम्प्लेक्स तथा मल्टिपल ग्लियसरोफासफेट से युक्त एक उत्कृष्ट टॉनिक है जो आपके परिवारको बलवान खुश और स्वस्थ रखेगा। फॉसफोमिन के सेवनसे थकावट और कमजोरी का नामोनिशान नहीं रहेगा। फॉसफोमिन थकावटको मिटाता है। भूक बढाता है। आन्तरिक बल बढाता है। शरीर को बलवान बनाता है। हर फल के स्वादवाले विटामिन टॉनिक... फॉसफोमिन से आपके सारे परिवारका स्वास्थ बना रहेगा।

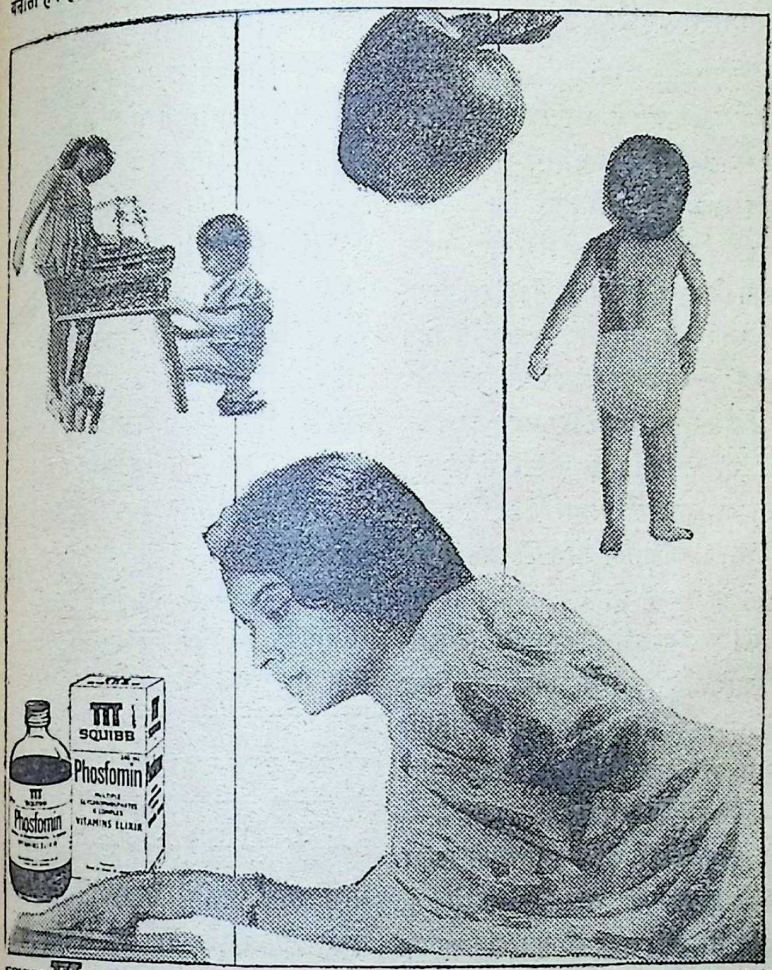

SQUIBB A century of experience builds faith

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतिरिक्त तूल से परमाणु-पर्यन्त अत्यन्त हल्के पदार्थ में चित्त लगने पर भी देह में हल्कापन आता है। तब आकाश आदि में संचरण करने का सामर्थ्य उत्पन्न होता है। उसके बाद सूर्य-राशि में विहार किया जा सकता है। वास्तव में ये सब राशियाँ ही साधारणतः आकाश में यातायात के मार्ग-रूप हैं।

बौद्ध आचार्यों ने आकाश के गमनागमन के विषय में बहुत विचार किया है। बुद्धदेव की छह अभिज्ञाएँ हैं। उनमें एक का नाम 'ऋद्धि' है। वस्तुतः प्रथम अभिज्ञा ही ऋद्धि-पद-वाच्य है। ये अभिज्ञाएँ योगी मात्र की ही हो सकती हैं। उनके लिए आर्य या अनार्य का कोई भेद नहीं, अर्थात् बुद्धोपदिष्ट धर्म ग्रहण न करके भी ऋद्धि प्राप्त करना संभव है। वास्तव में, छह अभिज्ञाओं में ऋद्धि आदि पहली पाँच अभिज्ञाएँ ही बौद्धमतानुसार अबौद्धों की भी हो सकती हैं। किन्तु, छठीं अभिज्ञा या आस्रव-क्षयज्ञान (साक्षात्कार-अभिज्ञा) आर्य या बौद्ध के सिवा दूसरों को नहीं हो सकता। बौद्ध योगियों के मत में आकाश-गमन नामक सिद्धि तीन श्रेणियों में विभक्त हो सकती है—(क) वहन-गति। जैसे, पक्षी अपने शरीर द्वारा आकाश में आरोहण करते हैं, यह गति भी उसी तरह की है। यह श्रावक और प्रत्येक बुद्ध की होती है। (ख) द्वितीय गति मन-वाह है, अधिमोक्ष-गति। यह गति वस्तुतः योगी की है, अपनी देह की गति नहीं है। यह संकल्प के बल से दूरस्थित वस्तु का निकट में आगमन-मात्र है। योगी को वस्तुतः लक्ष्य-स्थल पर जाना नहीं पड़ता। दूसरे शब्दों में, लक्ष्य वस्तु ही योगी के निकट उपस्थित हो जाती है। (ग) तृतीय है मनोवेग-गति, यह एक मात्र शास्ता या बुद्ध की ही हो सकती है, अन्य की नहीं। वहन-गति में अपनी देह को बाहर ले जाना पड़ता है; अधिमोक्ष-गति में जाना नहीं पड़ता, वस्तु ही निकट आ जाती है। कहावत है, मुहम्मद पहाड़ के पास नहीं जाता, पहाड़ ही मुहम्मद के पास आता है। तीसरी गति अतिक्षिप्र है, इसलिए अन्यत्र उसको 'मनोजवित्व' कहा है। योग सूत्रकार भगवान् पतञ्जलि के मत में मनोजवित्व इन्द्रिय-जय से उत्पन्न मधु-प्रतीक सिद्धि के अन्तर्गत है। इसे भाष्यकार ने कार्य का अनुत्तम गति-लाभ कहा है। सिद्ध योगी जिस शक्ति द्वारा, जिस किसी क्षण, जिस किसी दूरवर्ती प्रदेश में स्थूल सत्ता लेकर प्रकट हो सकते हैं, उसका नाम मनोजवित्व है। यह बुद्ध के अतिरिक्त दूसरे को प्राप्त नहीं होता। बौद्ध लोग 'ऋद्धि' से समाधि का ग्रहण करते हैं। इसके दो भेद—अर्थात् इसका फल आकाश-गमन और निर्मिति, यानी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इच्छानुसार कायादि-रचना—ये दोनों ही हो सकते हैं। पाशुपत योगी महेश्वर के परम ऐश्वर्य को ज्ञान शक्ति और क्रिया शक्ति, इन दो भागों में विभक्त करते हैं। उनमें मनोजवित्व, काम-रूपित्व और विकरणधर्मित्व के भेद से क्रिया शक्ति तीन प्रकार की है। सिद्ध योगी अपनी महेश्वरता का लाभ कर सकते हैं, इसलिए मनोजवित्व सुतराम् उनके अधीन है।

तिब्बत में इस समय भी प्रचलित आकाश-गमन के पूर्वाभास-स्वरूप देह के लाघव-निबंधन क्षिप्रगति की साधना कोई-कोई जानते हैं। इस प्रक्रिया को तिब्बती भाषा में 'लांगोम' कहते हैं। जो इस तरह संचरण करते हैं, उन्हें 'लांगोम्पा' कहते हैं। अलेक्जेण्डर डे. वि. ड. नील ने तिब्बत में अपने निवास-काल में इस प्रकार के तीन सिद्ध पुरुषों के दर्शन किये और गति भी देखी। इसका वर्णन उन्होंने अपनी पुस्तक 'दि मीस्टिक्स ऐण्ड मेजिशियन्स इन तिब्बत' के छठे अध्याय में किया है। यह गति आकाश-गमन का ही एक प्राथमिक रूप है। उसका कारण यह है कि इस प्रकार गमन-काल में भूमि-स्पर्श नहीं होता और गमनकारी का चित्त भी लक्ष्य में एकाग्र होता है। उन्होंने कहा है—

"As a result of long years of practice, after he has travelled over in certain distance the feet of the Longom-pa no longer touch the ground and he glides on the air with an extreme clarity."[1]

अर्थात्, दीर्घकाल के अभ्यास के फलस्वरूप कुछ दूर चलने के बाद लोंगोम्पा के चरण फिर भूमि-स्पर्श नहीं करते और वे वायु-मण्डल का भेदन कर अनायास तथा तीव्र वेग से अग्रसर हो सकते हैं।

---

१. The Mystics and Magicians in Tibet.

[बिहार राष्ट्र-भाषा परिषद् के सौजन्य से]

★

मैंने अतीत की बहुत सी परम्पराओं को त्याग दिया है और मैं चाहता हूँ कि भारत उन सभी बन्धनों से मुक्त हो, जो उसे कसे हुए हैं और संकुचित करते हैं, उसकी जनता में अलगाव पैदा करते हैं और उनमें से बहुतों का दमन करते हैं और देह व मन के उन्मुक्त विकास में बाधा खड़ी करते हैं। यद्यपि यह सब मैं चाहता हूँ, फिर भी मैं अपने को अतीत से पूरी तरह काटना नहीं चाहता।

—पंडित नेहरू

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्ण कलश :
अमरावती

मनुष्य के पूर्णत्व और अमरत्व का प्रतीक : पूर्णकुम्भ

डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल

भारतीय विचारकों ने मनुष्य शरीर की विचित्रता को प्रकट करने के लिए कई प्रकार की संज्ञाओं का प्रयोग किया है। 'हे अर्जुन, यह शरीर एक क्षेत्र है। इस क्षेत्र के व्यवहार को जो भलीभाँति समझता है, उसे क्षेत्रज्ञ कहते हैं'। बुद्ध ने कहा—हे भारद्वाज! यह जो आत्मा की खेती है, इसका बीज श्रद्धा है, वृष्टि तप है और फल प्रज्ञा है। शरीर का संयम, वाणी का संयम और आहार का संयम ये सब क्षेत्र की मर्यादाएँ हैं। मनुष्य का पुरुषार्थ बैल है और उसका मन जोत ह। जो इस प्रकार की खेती करता है, वह अमृत की फ़सल उत्पन्न करता है और दुःखों से छूट जाता है—

एव मेसा कसी कट्टा सा होति अमतप्फला।
एवं कसी कसित्वान सब्ब दुःखा पमुच्चति॥

अथवा, यह शरीर एक देवरथ है, जिसमें इन्द्रिय रूपी घोड़ों को मन की रास से बुद्धि रूपी सारथी नियंत्रित करता रहता है। यह रथ उस रथी की महिमा को प्रकट करता है, जो इसका अधिष्ठाता है। जिन घोड़ों की बागडोरों को दृढ़ संकल्पवान मन प्रेरित करता है, उस रथ की अद्भुत महिमा को लोक में कौन नहीं जानता? एक सफल रथी समस्त मानव जाति का पथ-प्रदर्शन करता है। हर एक मनुष्य समुदाय यह अभिलाषा करता है कि हमारे मध्य में इस प्रकार के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अध्यात्म रथ पर बैठनेवाले महारथी विजयशील हों। अथवा, यह शरीर एक दैवी नाव है, जिसमें उत्तम इन्द्रिय-रूपी पतवार लगे हुए हैं, जिस पर आरूढ़ होकर हम भवसागर के पार स्वस्तिप्रद लोक को प्राप्त कर सकते हैं—

दैवीं नावं स्वरित्रा-
मस्रवन्तीमारुहेम स्वस्तये ॥

घट

इसी प्रकार की एक मधुर कल्पना यह है कि यह शरीर पूर्ण घट के समान है, जिसमें आयुरूपी जल अपने उन रहस्य-पूर्ण चमत्कारों के साथ भरा हुआ है, जिनके द्वारा सृष्टि और प्रजनन के कार्य प्रवृत्त हो रहे हैं। अपनी भाषा में जब हम भगवान को घट-घट व्यापी कहते हैं तब अनजान में ही एक बड़े दार्शनिक तत्व को स्वीकार कर लेते हैं। यह शरीर घट है या मिट्टी का बना एक भाँड़ा है, परन्तु चैतन्य के अधिष्ठान से यह पूर्णातिपूर्ण सुवर्ण कलश से भी अधिक मूल्यवान और महिमाशाली है। जायसी ने कहा है—

माटी कर तन भाँड़ा, माटी मँह नव खंड।
जे केहु खेलै माटि कहँ, माटी प्रेम प्रचंड ॥

पूर्ण कलश: साँची

अर्थात्, शरीररूपी वर्तन मिट्टी का बना हुआ है। इस मिट्टी की रचना में अपूर्व कारीगरी है, जिसमें पृथ्वी के नौओं द्वीपों का चमत्कार भरा हुआ है। जो इस मिट्टी के शरीर को लेकर इसके साथ ठीक खेल लेता है, उसकी मिट्टी में से प्रचण्ड प्रेम की आग प्रकट हो जाती है। कवि की दृष्टि में प्रेम ही मानवी चेतना का सर्वोत्तम प्रतीक है। प्रेम अपने उदात्त अर्थों में आत्मा की अमर विभूति है, जो कि शरीर में प्रकट होकर विश्व को अपने उदार अंक में भर लेना चाहती है। सीमित घट को असीम विभूति का दान प्रेम के संकल्प से ही प्रवृत्त होता है। इस उच्च भूमिका में आत्मदर्शन से जनित मानसिक स्थिति को प्रेम की संज्ञा दी जाती है। इस प्रकार की दिव्य भावना का अधिष्ठान यह शरीर है। यही पूर्ण मानव की पूर्णता के आविर्भाव का रंग-मंच है। महा कवि उमर खैय्याम ने मानव देह को एक मिट्टी का कूजा मान कर अपने कूजेनामा में इसकी अमरता का वर्णन किया है—यह भाँड़ा क्या है और इसको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गढ़नेवाला कुम्हार कौन है? क्या यह कभी सम्भव है कि जिसने इस कूजे को इतने मनोवेग से रचा है, वही इसे नाशवान कल्पित करेगा?

भारतीय कलाकारों ने पूर्ण कुम्भ या पूर्ण कलश के रूप म मनुष्यविषयक इस मधुर कल्पना को चित्रित किया है। पूर्ण कुम्भ के उद्ग्रीव मुख पर प्रकट होने वाले पुष्प और पल्लव जीवन-समृद्धि के द्योतक हैं। इस कलश की पूर्णता ध्यान देने योग्य है। स्वर्ग और पृथिवी के बीच में ऐसा कुछ भी नहीं है, जो इसमें न हो। पाप और पुण्य, गुण और दोष एक साथ यहाँ रहते हैं। कहा जाता है कि एक ही समुद्र के मन्थन से विष और अमृत का जन्म साथ-साथ हुआ था। दैवी संकल्पों से युक्त मन का निवास इसी शरीर में है। साथ ही दैवी सृष्टि को क्षण भर में छिन्न-भिन्न कर देनेवाले आसुरी भावों की अभिव्यक्ति भी इसी पूर्ण घट से होती है। कौमार काल का मनोहर सौन्दर्य इसी पूर्ण घट के जल में प्रकट होता है। इसी में यौवन को लुप्त करनेवाली जरा का बीज भी विद्यमान है, जिसके कारण यह शरीर समस्त अवयवों के साथ पके फल की भाँति जीर्ण हो जाता है। अथर्ववेद के ऋषि की दृष्टि में स्वप्न और तन्द्रा ने, पाप और निर्ऋति ने इस मर्त्य शरीर में उसी प्रकार अपना निवास कल्पित किया है, जिस प्रकार पुण्यात्मा देवों न। स्तेय और दुष्कृत यहाँ उसी प्रकार अपना अधिकार जमा बैठे हैं, जिस प्रकार सत्य और यश। विद्या और अविद्या, निद्रा और अनिद्रा, श्रद्धा और अश्रद्धा, सवने शरीर में प्रवेश किया है। आनन्द और प्रमोद, हँसी और खुशी, नृत्य और गीत सभी शरीर में विद्यमान हैं। अनेक प्रकार के मधुर आलाप और विषय प्रलाप इस शरीर में प्रविष्ट हुए हैं। प्राण और अपान, व्यान और उदान, चक्षु और श्रोत्र वाक्, और मन, सबका समवाय शरीर में है। अनेक प्रकार के आशीर्वाद और विविध अभिलाषाएँ, विविध प्रकार के चित्तज संकल्प इस शरीर के आश्रम में ठहरे हैं—

चित्तानि सर्वे संकल्पाः शरीरमनु प्राविशन्।
क्षुधश्च सर्वाः तृष्णाश्च शरीरमनु प्राविशन्॥

(अथर्व ११।८)

इस प्रकार समस्त सृष्टिमूलक प्रवृत्तियों का एकत्र समवाय इस पुरुष में है। क्षुधा और तृष्णा सब भूतों में एक समान हैं। दुर्गा शप्तशती के मनीषी लेखक ने मनुष्य मात्र की इस मौलिक एकता को भली प्रकार समझ लिया था। यदि सृष्टि की मूल धारा को, जिसके वशवर्ती हम सब हैं, एक देवी कहा जाय, तो मनुष्य का विश्लेषण करते हुए हम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनसे विविध रूपों का सर्वत्र दर्शन कर सकते हैं—

या देवी सर्वभूतेषु चेत्यनेत्यभिधीयते।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥
या देवी सर्व भूतेषु बुद्धि रूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥
या देवी सर्वभूतेषु निद्रारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥
या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥

इस प्रकार के वर्णन का क्रम दूर चला गया है। इनमें से प्रत्येक श्लोक एक-एक चल-चित्र के समान मानव की मूलभूत विशेषताओं को हमारे सम्मुख उपस्थित करता है। जो देवी सब भूतों में बुद्धि, स्मृति, दया, तुष्टि, शक्ति, भ्रान्ति, क्षुधा, तृष्णा, निद्रा, चेतना आदि अनेक रूपों में स्थित है, वही इस सृष्टि की प्रेरक शाक्वरी माया शक्ति है। वह प्रत्येक चेतन प्राणी में अपने विविध रूपों से प्रकट हो रही है।

मनुष्य की समस्त शक्तियाँ देवी के स्वरूप की तरह अनन्त हैं। इस पूर्ण घट के कृत्स्नमाहात्म्य को किसी पुस्तक के आवरण पृष्ठों में सीमित नहीं किया जा सकता। इसलिए समस्त-ज्ञानविज्ञान पर अधिकार प्राप्त कर लेने पर भी मनुष्य के लिए सबसे बड़ी पहेली बना हुआ है। मनुष्य के प्रकट और अन्तर्हित मन की शक्तियों की, उसकी प्रज्ञा और कल्पना की कोई इयत्ता निर्धारित नहीं की जा सकती। मनुष्य के लिए यथार्थतः कहा जा सकता है कि उसका स्वरूप पूर्ण है, जिसका प्रादुर्भाव भी पूर्ण तत्व से हुआ है—

पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥

अर्वाचीन विज्ञान की उपासना में हम मनुष्य की इस पूर्णता और श्रेष्ठता को भौतिक जगत की कल्पना करते हुए प्रायः भूल गये हैं। मनुष्य का अनुसन्धान हमें अन्तर्मुखी बनने की ओर प्रेरित करता है। जड़ जगत का अनुसन्धान करते हुए हम बाह्य प्रकृति में श्रान्त होते रहते हैं। आज समस्त मानव-जाति को ही इस विषय में अपना दृष्टिकोण परिष्कृत करने की आवश्यकता पड़ गयी है। मानवी श्रेष्ठता और पूर्णता की उपासना किये बिना अन्य किसी प्रकार के विधानों से मनुष्य का कल्याण नहीं हो सकता। मनुष्य क्या है? यह प्रश्न प्रत्येक युग हमारे द्वार पर टकराता है। इसके समीचीन समाधान पर ही सभ्यता के विकास का स्वरूप निर्भर रहता है। जिस रूप में इस प्रश्न का उत्तर किसी जाति ने समझा, उसका समस्त इतिहास

[शेष पृष्ठ ५२ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रणय : एक प्रक्रिया

ऋताश्री

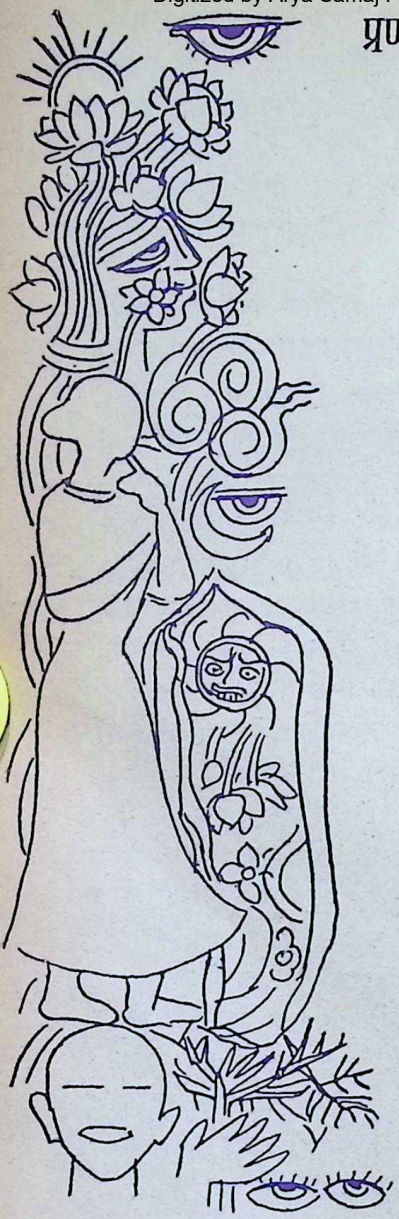

सिन्धु के तलों से
सहसा ही उठ खड़ा हुआ एक तूफान:
आकाश की ज्योतित शिराओं में
और उसके सुवर्णिम फेन में
डूबता-उतराता, यह कौन
झलमला जाता है अभिशप्त हीरे-सा।
मैं तट पर खड़ी--
लहरों के सिर पछाड़ते
रुष्ट, आक्रोशपूर्ण गर्जन में,
अनगिनती स्वरों में
--सुन रही हूँ एक हल्की-सी ध्वनि:
असहाय, स्तब्ध एक कराह:
अकस्मात् ही वह गर्जन-तर्जन
वे तट-तूफान
किसी जादुई खेल की तरह
ओझल हो जाते हैं:
शेष रह जाती है शून्य में
एक असहाय कराह:
दूरियाँ झुक जाती हैं
आकाश के वृन्त पर:
उग आता है एक फूल--
किसी अव्याप्त हवा की मुट्ठी से चू आये
एक सूक्ष्म मधुर रव में
सिमट आता है आसमान:
मेरे चारों ओर दीप्त हो जाती है
झकझक करती
एक हीरक मुस्कान।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अगवानी

जगदीश चतुर्वेदी

आज तुमने बहाई होंगी डोंगियाँ
दूब, चावल, दीप रखकर
जले होंगे आकाश–दीप
मेरी अगवानी के लिए, वर्षों बाद !
तुमने आज पहनी होगी
वही सन्दली साड़ी
अधखुले केशों में गूंथें होंगे
सुवासित मोतियों के गजरे ;
आज तुमने हर आवाज को
चौंककर देखा होगा
आज तुमने अपनी माँ के उलाहनों पर
मुस्करा दिया होगा ;
आज तुमने गुनगुनाई होगी
मनचाहे गीत की कड़ी
आज तुमने फिर से एकबार
बचपन को जिया होगा ;
आज तुमने खोल दी होंगी
बन्द जंगले की खिड़कियाँ
आज तुमको अच्छी लग रही होंगी
सावन की घटाएँ ;
आज तुमने पा लिया होगा
पूरा जीवन फिर से एक बार
आज तो तुम फिर से जवान हो गई होगी
–ताजे फूल सी जवान !

★

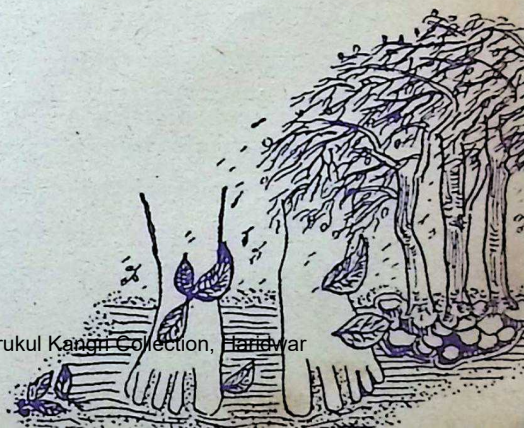

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसी रंग में रंग गया। यह प्रश्न मौलिक है, अन्य सब विषय गौण हो जाते हैं। सभ्यता के उषःकाल में वैदिक ऋषियों ने 'मनुष्य क्या है' इस पहेली पर विचार करते हुए मनुष्य में अन्तर्निहित चेतन अंश पर ध्यान दिया। उसको मूल्यवान मान कर उसी की प्राप्ति के लिए उन्होंने प्रयत्न किया। उस सभ्यता का उच्चतम ध्येय यही रहा कि मनुष्य के दैवी स्वरूप का साक्षात्कार किया जाय। उस साहित्य में सैकड़ों प्रकार से यही तत्व प्रकट किया गया है। **'आत्मानमुपास्व'**, आत्मा की उपासना करो; **'आत्मानं विद्धि'**, आत्मा को जानो, इसी मूल मंत्र की प्रेरणा से वैदिक दर्शन ओतप्रोत है। आत्मा को जानना ही सबसे बड़ा लाभ है; आत्मा को बिना जाने इस लोक से जाना विनाश है। आत्मा के लिए यह लोक-प्रिय होता है। आत्मा के लिए ही परलोक भी प्रिय लगता है। आत्मा के लिए ही स्त्री, पुत्र, धन, राज्य सब प्रिय लगते हैं। आत्मा यदि केन्द्र में नहीं है तो सब शून्य है। आत्मा प्रत्येक शरीर में अमृत का केतु या झंड़ा है। उस अमृत की उपासना सर्वोपरि धर्म है। आत्मा ही समस्त आनन्द का स्रोत है। आत्म-निरत रहने में जो सुख है, वह राज्य, परिवार अथवा अन्य किसी भी लौकिक पदार्थ में नहीं है। आत्मा ही सबसे पूर्व में था। वही विविध रूपों में प्रकट है। वही आत्मा मैं हूँ—**'सोहमास्मि'**। यह मंत्र मनुष्य के स्वरूप को कितने निश्चित और स्पष्ट शब्दों में व्यक्त कर रहा है। 'हे श्वेतकेतु, तुम वही हो—**तत्त्वमसि, श्वेतकेतो'**। इस घोषणा में कितना विश्वास है? पुरुष का स्वरूप निर्धारित करने में यहाँ तनिक भी सन्देह या संशय जान ही नहीं पड़ता और न किसी प्रकार बुद्धि का आयास ही प्रकट होता है। मानों यह महनीय अनुभव स्वर्गीय ज्योति के समान लोकान्तर से आकर तत्कालीन मानवों के हृदय में प्रविष्ट हो गया था। इतना आत्म-विश्वास, ऐसी आस्था, इतनी प्रबल श्रद्धा जैसी उपनिषदों में है, क्या संसार के अन्य किसी साहित्य में मिल सकती है? कौन इस प्रकार पत्थर पर लकीर खींच कर कह सका है-जब मनुष्य आकाश को चमड़े की तरह लपेट कर उसका तकिया बनाने में सफल होंगे, तभी यह सम्भव होगा कि देव को जान बिना भी दुःख का अन्त हो जाय—

यदा चर्मवदाकाशं वेष्टयिष्यन्ति मानवाः।
तदा देवमविज्ञाय दुःखस्यान्तो भविष्यति॥

आज तक आकाश का वेष्टन और दुःख का अन्त दोनों अप्राप्त आदर्श बने हुए हैं। ब्रह्मवादी लोग कहते हैं—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्योति को ढकनेवाला जो आवरण है, उसको दूर करो। हम इस स्वराज्य के लिए देव को देखना चाहते हैं। देव ही ब्रह्म है, जिसके ज्ञान से श्वेताश्वतर अमर हो गया था। नचिकेता ने अपने तपःपूत मन से मनुष्य रूपी पहेली को सुलझाने का जो अद्भुत प्रयत्न किया था, वह आज भी हम सबके लिए प्रकाश का मार्ग बना रहा है। उसको जान कर हमारे मन में अपने चैतन्य स्वरूप के विषय में श्रद्धा जाग उठती है। इस शरीर में ही ब्रह्म का अधिवास है। शरीर के अभ्यन्तर से उसको ऐसे प्राप्त करना चाहिए, जैसे मूंज में से सींक को निकालते हैं। इसके लिए धैर्य से प्रयत्न करना चाहिए। इस प्रकार मनुष्य ने अपने ब्रह्मपद के जानने का जो प्रयत्न किया, उससे वह ब्रह्म प्राप्त, विरज और अमर बन गया। यह कल्पना कि अन्न और जल से ही मनुष्य जीवित रहता है, सत्य हो तो भी कितनी क्षुद्र है। एक पाव सत्तू के आश्रित मनुष्य का जीवन है, यह पुरुष की परिभाषा कुछ विचारकों ने प्रस्तुत की है, परन्तु इसका आदर्श जो मानव है, उसका मूल्य भी इतना ही संकुचित रह जाता है। इस दृष्टि में मानव एक यंत्र मात्र रह जाता है। यंत्र शक्ति के नियमों से संचालित मनुष्य कितना सीमित और हेय है?

आज हम क्षुधा-पिपासा रूपी देवी की आराधना को ही युगधर्म मानने लगे हैं। हमारी शिक्षा और दीक्षा के आदर्शों को इस दृष्टिकोण ने बहुत दूर तक प्रभावित कर दिया है। बुद्धि और मन का कार्य करनेवाले मनुष्यों की तोल भी उदर का पोषण करनेवाले बट्टों से की जाती है, अथवा स्वयं मनुष्य ने ही अपने दैवी अंश को कुछ चाँदी के टुकड़ों के बदले में बेच डाला है। एक फ्रेंच विचारक ने इस स्थिति को युग का सबसे दारुण विश्वासघाती (The Great Betrayal) कहा है। हमारी वेध शालाओं ने दूरातिदूर नक्षत्रों को पहचानने का तो प्रयत्न किया, परन्तु समीपवर्ती मनुष्य को देखने का उचित प्रयत्न नहीं किया। यदि विश्व का नियंत्रण किसी प्रज्ञावान् व्यक्ति के हाथों में सौंप दिया जाय, तो उसका सर्वप्रथम कर्त्तव्य यही होगा कि समस्त विज्ञान मन्दिरों को इस बात के लिए विवश करे कि वे मनुष्य की महिमा का आविष्कार और अनुभव करें, जिसके द्वारा कुंठित मानव स्वक्षेत्र में अपना उचित आसन फिर ग्रहण कर सके।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आर्य-संस्कृति का आद्य केन्द्र : नैमिषारण्य

डॉ. कन्हैयालाल मुन्शी

'इसी नैमिषारण्य में भगवान वेद-व्यास ने वर्षों तपस्या कर तीनों वेदों और इतिहास का उद्धार किया,' कुलपति कह रहे थे। सेनाजित हँसा। ये अभी पुरानी कथा को लेकर ही जीवन नष्ट कर रहे थे। इन मूर्खों को भान न था कि मगध के सिंहासन पर वेदों का विनाशक महापद्म नंद का पुत्र राज्य करता था, और वह स्वयं, उसका अध्यक्ष, इच्छा होने पर सारे अरण्य को भस्मीभूत कर सकता था।

'यहाँ तो कितने ही महात्मा तर गये।' शेष ने पूज्यभाव से कहा।

'इस पुण्योदक ने किसे नहीं तारा ? ... कहा जाता है कि चक्रवर्ती मांधाता और ब्रह्मर्षि वसिष्ठ, राजा सगर और महर्षि और्व, पृथ्वीपति प्रतीप और पुरोहित सोमदेव यहाँ स्नान कर सद्गति को प्राप्त हुए थे। जब भगवान वेदव्यास इस अरण्य में तपश्चर्या करते थे, तब हे वत्स, वे यहाँ स्नान कर पावन हुए थे। और तपस्वियों में श्रेष्ठ, शांतुन के पुत्र देवव्रत भीष्म, दान और वीरता में अद्वितीय कुन्ती-पुत्र कर्ण, और भगवान पाराशर ने जिन्हें अपने हाथों अर्घ्य दिया था, वे नरों में उत्तम कृष्ण वासुदेव—'

'मिथ्या, व्यर्थ के नाम।' सेनाजित बड़बड़ाया।

'जब मैं इसकी कल्पना करता हूँ कि भगवान व्यास कैसे थे तो मुझे आप की याद आ जाती है,' शेष ने कहा।

'वत्स ! आजकल कई लोग ऐसा कहते हैं, परन्तु कहाँ स्वयंभू सूर्य और कहाँ उनके तेज से चमकता स्फटिक ? जैसी कल्पना मैं उनकी करता हूँ, वैसी तुम नहीं कर सकते।'

'भगवान कैसे रहे होंगे ?' महादेवी ने पूछा। पाटिलपुत्र के अंतःपुर में भ्रष्ट हुए पूज्यभाव को वह विशुद्ध करने का प्रयत्न कर रही थी। सेनाजित का मन हँसने का हुआ। नरेंद्रदेव की ये महादेवी ऐसे निर्माल्य प्रश्न पूछ रही थीं! और वह स्वयं, जिसके शब्दों से महादेवी कांपती, एक ओर लाचार होकर खड़ा था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'वत्से! मेरी कल्पना का आधार पितामह का कथन है', सुंदर वार्धक्य मोहक दीख रहे कुलपति ने कहा, 'इस युग के क्षुद्र जीवों को–हमें भगवान की क्या कल्पना होगी ? जब इतिहास नष्ट हुआ था, वेदों का विस्मरण हुआ था, विद्याओं या अधर्मों का आधिपत्य हो गया था, तब सत्यवती के इस सर्वदर्शी पुत्र ने भरपूर जवानी में यहीं–वह वरुणदेव का मंदिर है वहाँ–तपश्चर्या की थी। उन्हें शब्दब्रह्म का साक्षात्कार हुआ। भगवान स्वयं पार्थिवता त्याग कर शब्द की मूर्ति बने। सर्वव्यापी, सर्वशक्तिमान सनातन शब्द के अवताररूप ये महात्मा जब से संचरण करने लगे, तब से नैमिषारण्य, शब्द के विशुद्ध सामर्थ्य को संचित रखने का कोशागार बना', वृद्ध कुलपति की मधुर और शांत आवाज़ सभी के हृदय में पूज्यभाव प्रेरित कर रही थी। अपनी प्रिय कल्पना के विषय में बोलते समय

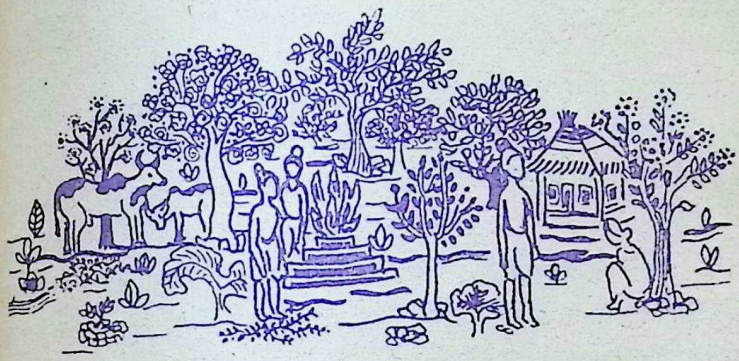

कई बार जब मैं अकेला यहाँ बैठता हूँ तब वे कैसे थे, वह दिखायी पड़ता है। फल-फूल पर जीवित, भूमि पर शयन करनेवाले वर्षों तक एकाग्र चित्त से सर्व विद्याओं का ध्यान करते इन कृष्ण द्वैपायन को विद्या और वाचा का ऐश्वर्य प्राप्त हुआ था। उनके फुल्लारविन्द जैसे नेत्रों के आगे सकल दृष्टिशब्दरूप में और शब्दसामर्थ्य प्रणवरूप में प्रकट हुए थे। अनेक वर्षों की तपस्या के बाद कुलपति संयम नहीं रख सके।

'वत्सो!' उन्होंने आगे कहा, 'मत्स्यगंधा के पुत्र द्वैपायन को मुनि पाराशर यहाँ ले आये, और उन्होंने तपश्चर्या का प्रारंभ किया; उसके बाद धरती कितनी ही बार डोली, यादव भागे, जरासंध परास्त हुआ, कुरुक्षेत्र में भारत समाप्त हुआ। यादवस्थली में वासुदेव ने वैकुंठगमन किया। तत्पश्चात् परीक्षित ने सार्वभौम होकर यहाँ यज्ञ किया, तब तक इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महावराह ने ज्ञान सृष्टि का उद्धार किया। और तब विद्याओं ने अधिकारियों का वरण किया, इतिहास जो पूर्वजों की स्मृति था, वह अनुजों की समृद्धि बना, और वेदों के द्रष्टाओं ने जैसे उन्हें प्रथम देखा था वैसे–दैवी अपूर्वता में सनातनता कर द्विजत्व लाभ किया।' कुलपति ने हँस कर दीर्घ श्वास ली। 'कलियुग आने पर पूर्व युगों के सत्व के समान व्यास भगवान दस सहस्र शिष्यों के साथ तपश्चर्या कर रहे थे।'

'बहुत वर्ष जिये।' महादेवी ने कहा।

'काल स्वयं उनका पूजन करने रुक गया था,' 'कुलपति ने कहा।

'उस समय इस वन की क्या शोभा रही होगी।' शेष ने कहा।

'वत्स! उनकी छत्रछाया में तपश्चर्या कर रहे थे, विश्वमनस के शिष्य कुलपति उद्दालक, पथिन के शिष्य कुलपति विदर्भी कौण्डिन्य, कुलपति देवय शौनक और कुलपति कवश के पुत्र महर्षि तुरकावशेय–ऐसे महर्षि जिनके कि शब्द संजीवनी के समान थे, जिनकी दृष्टि त्रिकालदर्शी थी, जिनकी तपश्चर्या धरा का धारण करती थी, जिनके संस्कारों से नैमिषारण्य ब्रह्मांड का केन्द्रस्थल बन गया था। यहीं से, वत्सो! धर्म का स्रोत प्रकट होता और नीचे बहता, राजत्व को निर्मल करता, लोकसंग्रह को मोक्षमार्ग दिखाता, सभी के लिए इन्द्रियजय सरल कर देता, आर्यावर्त को देवभूमि से उज्ज्वल और पितृलोक से निर्मल बनाता।'

और फिर कुलपति हँसे। सभी ने दीर्घ निःश्वास ली। इस वृद्ध ऋषि के शब्दविमान पर बैठ कर सभी की आत्मा भूतकाल में विहरती थी, और अर्चित सृष्टि की समृद्धि देख कर सभी के हृदय विशुद्ध और पूज्यभावभीने हो गये थे।

सेनाजित के हृदय में कुछ परिवर्तन हुआ। इस वृद्ध पुरुष में, इस व्यासतीर्थ में, इस नैमिषारण्य में, जो रहस्य थे वे उसे प्रथम बार दिखायी पड़े। उसका रोम-रोम रोमांचित हो उठा। पर, फिर उसे हँसी आ गयी। नैमिषारण्य पहले चाहे जैसा रहा हो, अब तो नरेंद्र के प्रताप से बचे हुए लोगों का वास था। और इन सबों ने क्या किया? महापद्म ने एक राज्यकाल में सब-कुछ उखाड़ दिया। परन्तु महादेवी के प्रश्न से उसकी विचारधारा टूट गयी-वह उसी के हृदय-भावों को प्रकट कर रही थी।

पर भगवन् सुमोहा ने कटाक्ष से कहा, 'तब नरेंद्र महापद्म नंद का जन्म नहीं हुआ था। इस कलि का संचार नहीं हुआ था। आज तो हमारे एक अध्यक्ष की स्वेच्छा के सामने यह सारा अरण्य नगण्य है।' कुलपति हँसे–जिस प्रकार सेनाजित की ओर पहले हँसे थे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसी प्रकार—ममता से। 'वत्से! महर्षियों ने यहाँ व्यर्थ जीवन नहीं बिताया। उनकी आत्मा अब भी इस भूमि में पड़ी है। उनके शब्दों को इन वृक्षों ने संचित कर रखा है। उनकी तपश्चर्या की प्रेरणा हमारे जीवन को प्रभावित करती है। महापद्म नैमिषारण्य को नहीं भुला सकते। नैमिषारण्य महापद्मों को भुला देगा। 'सर्वभूमि' बनने की इच्छा रखनेवाले जनमेजय परीक्षित का दृष्टांत भी तो सामने है।'

'यह क्या है?' आंभि ने पूछा।

'वह विभूति का शृंग देखो?' कुलपति ने सामने के तट पर स्थित पहाड़ी की ओर इशारा करते हुए कहा, 'उसका नाम सत्र शृंग है। उसकी भी एक कथा है।'

'क्या?' महादेवी ने पूछा।

'पार्थ के पौत्र परीक्षित की कथा से तो परिचित हैं? उस तट पर जहाँ शृंग स्थित है, वहाँ पाराशर की कृपा के आकांक्षी इस भरंख ने प्रथम सत्र किया। अथर्वणों ने उसे मर्त्यों से परे देवता की संज्ञा दी। फिर उसके पुत्र जनमेजय ने समस्त पृथ्वी को जीत कर यहाँ अश्वमेध किया। कुलपति इंद्रोत येवाय शौनक जैसे महर्षियों ने ऐन्द्रमहाभिषेक से उसे दुर्जेय बनाया। तब वह बोला: मुझे दिव्य अथवा मानवीय बाण स्पर्श नहीं कर सकते। मैं सर्व आयु जिऊँगा। मैं सर्व भूमि का स्वामी बनूंगा।'

'फिर?'

'हे वत्सो। महर्षियों के तप के प्रभाव से रक्षित परीक्षित ने पृथ्वी-विजय की, और फिर यहीं दूसरा अश्वमेध किया। तब विजय-मद में मत्त जनमेजय के गर्व की सीमा नहीं रही। उसे लगा कि उसकी कृपा पर ही नैमिषारण्य का प्रभाव अवलंबित है। उसने तपस्वियों का तिरस्कार किया, विद्या की विडंबना की, धर्म को पगधूलि के समान समझ। आंभि कुमार! सामान्यों को संयम की ज़रूरत है, परन्तु राजाओं को उससे भी अधिक है। अंत में अपने गर्वभार से ही वह पतित हुआ; और यहाँ इस सत्र शृंग पर, अश्वमेध की पवित्र भूमि पर कुलपति मुनि ऐन्द्रोते ने अपने पुत्र शतानिक को पृथ्वी का पति बनाया। वत्से। नंदों का तप जब तक है तब तक है, परन्तु विद्या विहिन, राजस्व जैसा ही चंचल है।

['भगवान कौटिल्य से']

★

कुछ लोगों द्वारा सत्ता ग्रहण करने से ही स्वराज्य नहीं आ जायगा, बल्कि स्वराज्य तब आयेगा जब सभी लोगों में यह सामर्थ्य पैदा हो जाय कि जब सत्ता का दुरुपयोग हो तो वे उसका प्रतिरोध कर सकें। —महात्मा गान्धी

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुतात्मा महासती जोन ऑफ आर्क

श्रीमती लीलावती मुन्शी

अशिक्षित होते हुए भी ज्ञानियों को विस्मित कर देनेवाली, अहीरपुत्री होते हुए भी देश के सर्वोत्तम पद को सुशोभित करनेवाली, अबला होने पर भी बलवानों का मानमर्दन करनेवाली, कुमारी जोन का नाम सुन कर किस संस्कारी सज्जन का हृदय पुलकित नहीं हुआ होगा? उसकी विजयगाथा सुन कर हृदय फड़कने लगता है; उसके जीवन के करुण अंत की कथा सुन कर आँखों में आँसू भर आते हैं। उसकी बालकोचित सरलता अंतर को छूती है। कूटनीतिज्ञों को लजाने वाली उसकी चतुराई प्रशंसनीय लगती है। जोन का जीवन केवल उस अकेली का ही जीवन नहीं था, बल्कि सारे विश्व का है। उसके अंग-अंग की धड़कन हमें रोमांचित करती है।

भेड़ चरानेवाली इस वनबाला ने सत्रह वर्ष की कम उम्र में फ्रान्स के सेनापति के महान पद को सुशोभित किया। और, जब वह मात्र उन्नीस वर्ष की थी तब मनुष्यों की—उसी के देशवासियों की कृतज्ञता के परिणाम स्वरूप और उसकी महानता को सहन न कर सकनेवाले उसके स्वार्थान्ध प्रतिपक्षियों की निर्दयता के कारण उसकी सुकोमल देह को अग्नि-देव को अर्पित कर दिया गया। परन्तु उसकी अविचल आत्मा तो अडिग और अपराजित ही रही। इस जगत के अन्याय और बंधन जोन जैसी आत्मा को बाँध सकने में सदा असमर्थ रहे हैं।

परन्तु जोन स्वभाव से युद्धप्रिय नहीं थी। शत्रु अथवा मित्र पक्ष के किसी घायल सैनिक को देखती तो आँसू बहाने लगती और उसकी सेवा-सुश्रुषा करती। उसे तुरंत उस अभागे सैनिक के कुटुंबियों-कोई निराधार माता अथवा प्रतीक्षारत युवती और सुन्दर, पर असहाय बच्चों का खयाल आ जाता। परन्तु यह उसकी दुर्बलता नहीं थी। कौन सी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जोन ऑफ आर्क

उसके नाममात्र से लोग आशान्वित हो जाते थे। उसे देखना ही एक महान पुण्य का कार्य था। उसके साथ बात करना जीवन का एक सुभग और स्मरणीय प्रसंग बन जाता। और वह मात्र सत्रह वर्ष की एक सुकुमार बालिका थी। इतिहास में जोन जैसी लड़की तो अद्वितीय ही है और अद्वितीय ही रहेगी।

युक्ति अथवा कौन सा वार शत्रु पक्ष पर सचोट होगा, इसका फैसला भी वह उतनी ही तेजी से कर सकती थी। मंत्रियों की सभा में उसके शब्दों की गूंज अनेक शंकाओं को निराधार करने में समर्थ थी। उसका उल्लासपूर्ण और बालक के समान भोला चेहरा दर्शन मात्र से उसके सैनिकों और हज़ारों अन्य लोगों में श्रद्धा और उत्साह भर देता था। उसके नाममात्र से लोग आशान्वित हो जाते थे। उसे देखना ही एक महान पुण्य का कार्य था। उसके साथ बात करना जीवन का एक सुभग और स्मरणीय प्रसंग बन जाता। और वह मात्र सत्रह वर्ष की एक सुकुमार बाला थी। इतिहास में जोन जैसी लड़की तो अद्वितीय ही है और अद्वितीय ही रहेगी।

अपने धनाढ्य मित्रों के कोलाहल में वह अपने भेड़ चरानेवाले साथियों को नहीं भूली थी। घोड़ों की हिनहिनाहट के बीच उसे अपनी भेड़ें सदा याद आती थीं। उसके बालपन का साथी परियों का वह वृक्ष उसे सदा घर लौटने के लिए लालायित करता था। वैभव से वह कभी आकृष्ट नही हुई। उसका सर्वाधिक प्रियतम उसका देश ही था। उसी के लिए वह जियी। गोपनीय उत्कंठाओं से उद्वेलित होने के समय उसने अपने आह्लादों की आहुति देश के लिए ही दी। और देश के लिए ही वह ऐसी भयानक मौत मरी, जिसे देख कर शत्रुओं की भी आँखों से आँसू बहे बिना नहीं रहे। ऐसी तो नारी एक मात्र जोन ही थी।

मृत्यु को सामने देख कर भी वह विचलित नही हुई। यमदूत के समान न्याय का स्वांग भरनेवाले, तथाकथित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विद्वान कूटनीतिज्ञ भी इस बालिका की बालबुद्धि को परास्त नहीं कर सके। उसके विश्वास की अविचलता को डिगाना मानव सामर्थ्य के परे था। उसके उत्तरों की अद्भुतता देख कर शत्रुओं को भी दांतों तले उँगली दबाना पड़ता था। परन्तु जोन को उस न्याय के पाखंड में न्याय नहीं मिला। आज जोन! जगत तेरी वंदना करता है, और विश्व की महान विभूतियों में तेरा अनन्य स्थान कभी का स्वीकार कर चुका है।

संसार सदा से महान आत्माओं के प्रति द्रोह करता आया है। उन्हें सताना जगत का एक नियम-सा बन गया है। इसका प्रायश्चित भी उसे पग-पग पर करना पड़ता है; फिर भी अपनी इस लीक को छोड़ने के लिए वह बिलकुल तैयार नहीं। महान आत्माओं का बलिदान एक परिपाटीसा बन गया है। जोन शहीद हुई, पर फ्रांस को स्वंतत्र कर। आज तो उसकी यशकथा का ही स्मरण हम कर सकते हैं।

महत्ता का प्रथम लक्षण लोकहृदय की नाड़ी का पहचानना ही नहीं, बल्कि उसे दिशा और गति देना भी है। जनता के हृदय को पहचाननेवाला अपने समय में उच्च स्थान प्राप्त करता है, पर अमरत्व नहीं। जोन ने इस प्रकार का मार्गदर्शन किया। फ्रान्स की नस-नस में व्याप्त परतंत्रता के बंधन को तोड़ने के लिए लोग आतुर थे, परन्तु निर्बल राजा और विलासी कर्मचारी उन्हें स्वतंत्रता के मार्ग की ओर प्रेरित करने के बदले अंतराय-रूप ही अधिक होते थे। लोग बौखला गये थे। वे मार्ग के लिए भटक रहे थे। ऐसे समय में स्वातंत्र्य का ध्वज फहराने जोन आयी, और लोगों ने उसे मुक्ति-दायक देवी मान कर उसकी पूजा की। निर्बल राजा की निर्बलता उसने दूर की, उत्साहहीन सेना में उसने शक्ति और व्यवस्था उत्पन्न की। विलासी अधिकारियों के विलास उसने छुड़ाये। वर्षों से अँग्रेजों की आधीनता से निःसत्व हुई जनता में वह एक नयी चेतना लायी। और यह सब इस अद्भुत लड़की ने कुछ ही महिनों में किया।

उसकी आत्मा का ओज सदा अखंड रहा। पशुओं के समान सैनिकों के बीच बैठ कर भी उसकी पवित्रता को किसी प्रकार की आँच नहीं आयी। सत्ता और विलास की मदिरा का असर इस देवी पर जरा भी नहीं हुआ।

वह मधुर में मधुरतम थी। सौन्दर्य का तो वह अवतार ही थी। युद्धनीति म पारंगत, श्रद्धालुओं की पूजापात्र और मित्रों में वह अनुपम थी।

आदरणीय योग्य जनों का वह आदर करती। राज्यकार्य में निपुण व्यक्तियों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की निपुणता से वह धोखा नहीं खाती। वह कपट नहीं करती, पर कपट कोई करता तो उससे छिपा नहीं रहता। वह प्रेरणा देने के लिए ही आयी थी— एक भेड़ें चरानेवाली ग्रामबाला की धन्यता और घबराहट के साथ नहीं, बल्कि विधाता की निश्चल सत्ता के साथ। उसकी आज्ञा की अवहेलना करना अथवा उसके मार्ग में आना संभव ही नहीं था। उसकी अडिग इच्छाशक्ति ने ही फ्रान्स आज जीवित है। ओरलींस की इस कुमारी के प्रति फ्रान्स आज भी कृतज्ञ है।

कल्पनादेश के निरंकुश राज्य में जोन जैसी दूसरी मूर्ति नहीं निर्मित हुई। सृष्टि की काव्यपुस्तक में जोन जैसे जीवंत काव्य कम ही लिखे गये हैं।

विश्व की रंगभूमि पर सत्ताधारी महारानियाँ और नयनवाण से घायल करनेवाली हृदय-साम्राज्ञियाँ अनेक हुई हैं। पति में ही मुक्ति देखनेवाली पतिव्रताएँ भी सर्व देश और सर्व काल में दुर्लभ नहीं रहीं। समय आने पर सिंहनी के समान गर्जना कर यद्धक्षेत्र में कूद पड़ने-वाली क्षत्राणियों के उदाहरणों से भी हम अपरिचित नहीं। सर्व-कला में पारंगत हृदयहारिणी मानिनियों को आज भी हम देख सकते हैं। कल्पना में उड़नेवाली कवियित्रियाँ और देववालाएँ अब भी पायी जाती हैं। परन्तु वालक होने पर भी बलवान, ज्ञान के विना भी निपुण जोन जैसी कुमारी मिलना अत्यंत दुर्लभ है।

उसने नयनडोर से नर नहीं नचाये, न सत्ता के जोर से किसी को ऊंचा उठाया या पछाड़ा। स्वर्ग से उतर आनेवाली देवी के समान उसने अपने पंखों के प्रकाश में जगत को उज्ज्वल बनाया है।

स्त्रियों के भाग्य में लिखा पति अथवा पुत्रों से पहचाना जानेवाला सद्भाग्य (!) जोन को नहीं मिला। वीरपत्नी अथवा वीरपुत्री होने से वह बच गयी। जोन की कीर्तिकथा तो मात्र उसी के व्यक्तित्व के फलस्वरूप है।

उसकी निर्मल आत्मा में शत्रुओं के प्रति भी द्वेष नहीं था। लोहे की बेड़ियाँ अथवा अग्निज्वाला की लपटें उसकी आत्मा को भयभीत करने में असमर्थ रहीं।

जोन भारत के स्त्री रत्नों की माला में सुशोभित नहीं होने पर भी, वह भारत के लिए कम आदर की पात्र नहीं। जोन जैसी आत्माएँ किसी एक देश अथवा काल की नहीं होतीं। सर्वकाल में प्रेरणा व स्रोत उनसे बहा करते हैं। भारत की सन्नारियाँ इस प्रेरणा का पान कर कितनी कृतार्थ होंगी!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

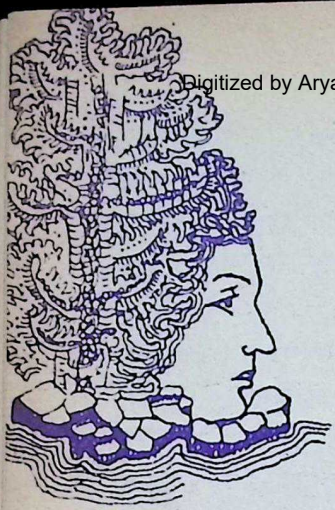

सिन्धु-सम्बोध

राजेद्र प्रसाद सिंह

नहीं, नहीं है अगस्त्य जीवन, नहीं है !
ओ सिन्धु : विन्दु एक अश्रुके.....!
अलभ्य हो तुम, अलभ्य हाय ! मेरे लिए;
आओ भी, किमाकार होकर खाओ पछाड़
मेरी आँखों के सिकता तट पर; डरो मत,
नहीं है जीवन अगस्त्य, नहीं है !

दूरान्तों तक बाँहें फैलाये वीरान
तेज हवा के हहास में पर्त्त पर पर्त्त उड़ा जाता है !
असंग हो उठा है वातावरण अबाध,
मेरी आँखों का-सिकता-तट गीला हो उठा है
आसन्न भूतकाल की तरंगों से ।
गीले पद-चिह्न सिर्फ अंकित हैं
काटती परस्पर क़तारों में,
और ये क़तारें भी उड़ती नागिनियों-सी
सैकड़ों चिमनियों की धूम-नलिकाओं में
घुसी जा रही हैं ।

असंग हो उठा है वातावरण अबाध,
इस अजनबी अमोहीपन का बोझ उठाये
मेरी आँखों का सिकता-तट डूब गया
दूरोदित उन अतीत-ज्वारों में,–
डूब गये सारे विदेशी राजाओं के गरजते
ध्वजावाही जलपोतों के मस्तूल ।
रंग-मेले-सी पहली नागरिक भीड़
डूब गई, डूब.....गई..... ।
लौटा ले गया क्षुब्ध रत्नाकर मोती-भरे खेत
और शंख-सीपियों-भरी अँजुरियाँ ।
फिर पर्त्त पर पर्त्त वीरान उड़ने लगा हहास में ।
दूरोदित उन अतीत-ज्वारों के पार कहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाखों पुट्टास्त्रों से घिरे मौन तीर्थों की
चोटियाँ लुप्त हो चलीं।
पृष्ठों से उतर उड़े गीले-गीले अक्षर
मानव-इतिहास के,....और मेरी आँखों के तट पर
अग्नि-पुरुष एवं धूमदेही दम्पतियों का
तांता बँध गया और सभी—
मेरी दोनों पुतलियों की कोमल चट्टानों को
चूर-चूर करते, विलुप्त हो गये !
फिर तो सहसा
उन्मथित और व्याकुल समुद्र
अरे ! कालान्तक ज्वारों के प्लावन में
बहा-ले गया सुधा-गरल को,
लक्ष्मी-ऊर्वशी को बहा लेगया,—
सब देवोपम अवदान, ज्ञान-ध्यान,
श्रेय-प्रेय, संस्कारी प्रतिमान,—
सभी बहा ले गया..... ।
फिर भी यह जीवन अगस्त्य तो नहीं,
कभी नहीं हुआ,—जो भी अगस्त्य था,
वह केवल जीवन की क्षणिक प्रतिक्रिया का
असम्भव संकल्प था।

...ओ सागर ! डरना मत,
आओ, आओ तुम किमाकार से
केवल बिन्दु अभी होकर,
आँखों के अनसींचे सिकता-तट पर,
आओ, विश्वास करो—
उगेंगे अनेक खुले होठों के ज्वालामुख,
किन्तु वे तुम्हारा यह आक्षितिज सलिल नहीं,
केवल बड़वानल पी लेंगे और जी लेंगे।

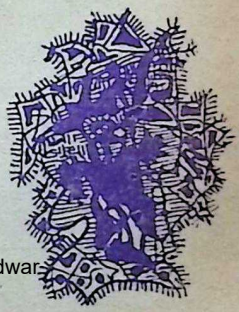

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुनो,–यहाँ झूमेंगे
हजारों बाँहों के नारिकेल-विटप;
कि वे अमित संयम-मर्यादा का
अपार कोष नहीं छीनेंगे,
केवल व्याकुलता तुम्हारी हर लेंगे।

हाँ, मेरी घोषणा सुनो, सागर !
जैसे आयामों में होगे तुम प्रकट,
सदा वैसे आयामों में
आँखों का सिकता-तट अभिनन्दन करेगा,
सहवर्ती बनेगा;
इसलिए कि जीवन अगस्त्य तो नहीं है,
नहीं है.... !

*

निराशा से दूर रहो !

कुछ लोगों के विषय में सर्वदा ही ऐसा होता है कि जिस चीज की वे कामना करते हैं या अभीप्सा करते हैं अथवा जिसे वे अपने लिए अच्छा समझते हैं ठीक उससे उलटी चीज ही घटित होती है। वे प्रायः ही इस कारण निरुत्साहित हो जाते हैं। क्या उनकी उन्नति के लिए यह आवश्यक होता है ?

निराशा कभी उन्नति के लिए आवश्यक नहीं होती, वह सर्वदा ही दुर्बलता और तमस् का एक लक्षण होती हैं, वह बहुधा यह सूचित करती है कि कोई विरोधी शक्ति उपस्थित हो गयी है, अर्थात् ऐसी शक्ति आ गयी है जो जानबूझ कर साधना के विरुद्ध कार्य करती है।

अतएव जीवन की चाहे जो भी परिस्थितियाँ क्यों न हों, तुम्हें बराबर निराशा से दूर रहने के लिए सावधान रहना चाहिए। इसके अलावा, उदास, खिन्न, निराश होने की यह आदत वास्तव में परिस्थितियों पर नहीं, बल्कि स्वभाव में विद्यमान विश्वास की कमी पर निर्भर करती है। यदि किसी में विश्वास हो, केवल अपने ऊपर ही विश्वास हो तो वह सभी कठिनाइयों, सभी परिस्थियों का, यहाँ तक कि अत्यन्त विरोधी परिस्थितियों का मुकाबला निरुत्साहित या निराश हुए बिना कर सकता है, वह बहादुरी के साथ अन्त तक लड़ सकता है। सच पूछा जाये तो जिन स्वभावों में विश्वास का अभाव होता है उनमें ही धैर्य और साहस का भी अभाव होता है। —श्री माँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

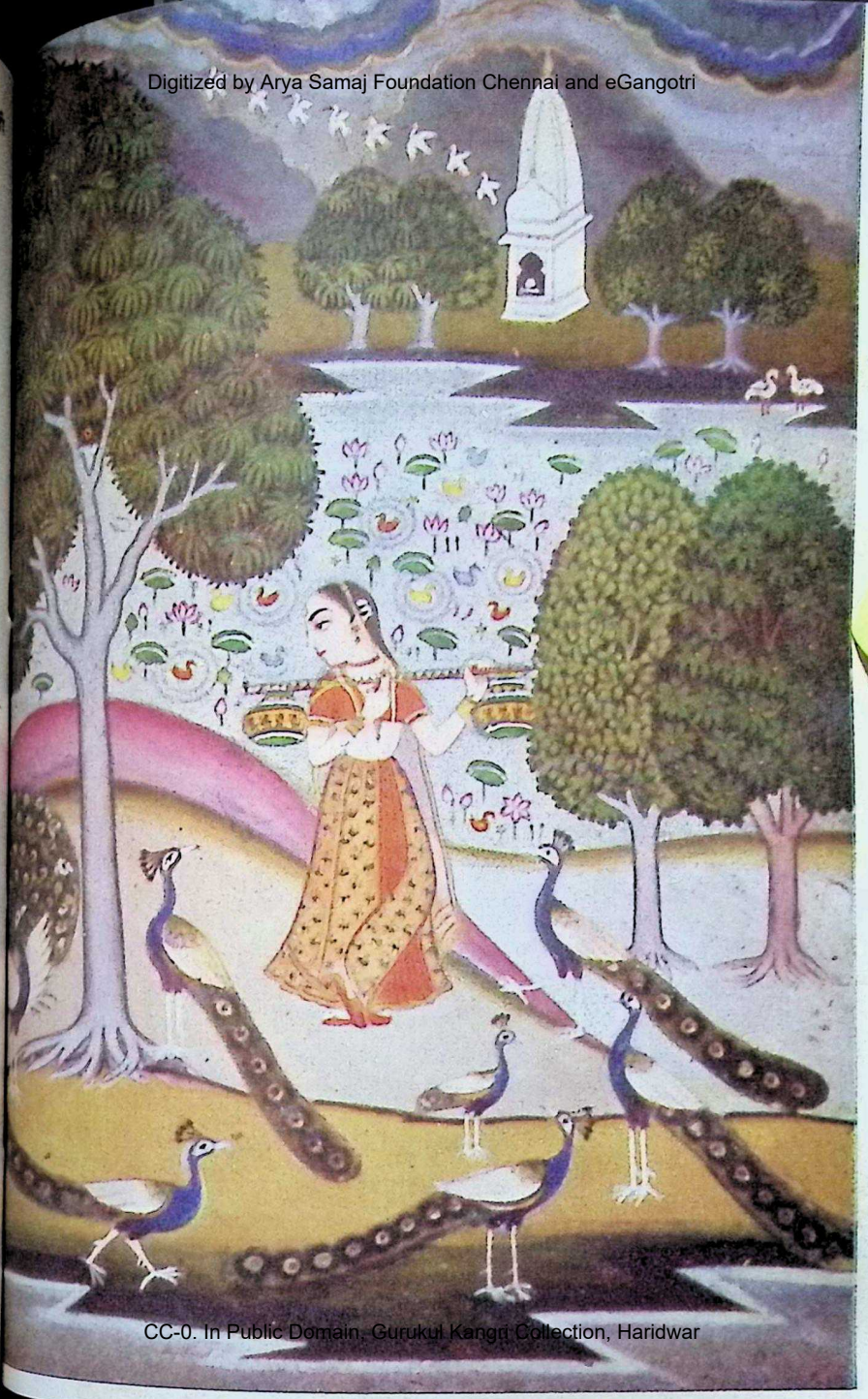

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गाडी में सफर करते समय

सावधानी बरतें !

सिगरेट के जलते हुए टुकड़े को फेंकने से पहले बुझा दें या राखदान में डाल दें।

•

सवारी डिब्बों में स्टोव न जलायें।

आग पकडने वाली वस्तुओं को साथ में न रखें।

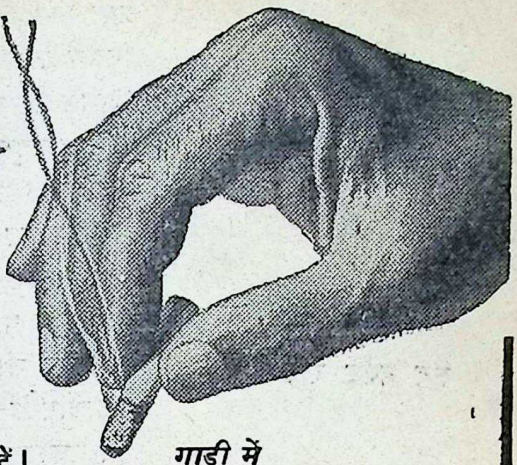

गाडी में **सुरक्षा** के लिए **अग्नि-रोधक नियमों का पालन** करें।

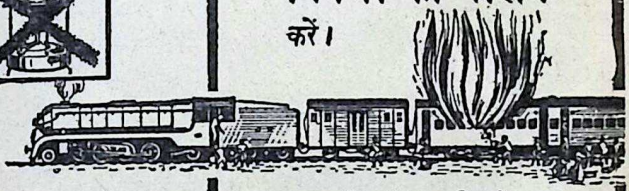

असावधानी से गाडी में आग लग सकती है और जान और माल की हानि हो सकती है।

यात्रा में सुरक्षा के वास्ते मध्य रेलवे द्वारा प्रचारित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पीसरी शताब्दी का महानतम अधुनातन शिल्पी : हेनरी मूर

●

सर हर्बर्ट रीड

यह मेरा सौभाग्य है कि पिछले तीस वर्षों से मैं अपने युग के महानतम् मूर्ति-शिल्पी हेनरी मूर की प्रतिभा के अनुक्रमिक विकास का एक गहरी आन्तरिक सहानुभूति से अनुसरण करता रहा हूँ। विशिष्ट जन्मजात अधिकारों और सुविधाओं के बीच इस व्यक्ति का जन्म नहीं हुआ था। समाज के निचले तबके में ही वह पैदा हुआ था और भौतिक मूल्यों की उपलब्धि को समर्पित इस युग में एक कलाकार के सम्मुख जो बाधाएँ आती हैं, उन सबका एक प्रचण्ड इच्छा-शक्ति और अपनी महान नियति की प्रेरणा से सामना

एक स्मारक मूर्ति

हेनरी मूर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करते हुए हेनरी मूर ने अपना रास्ता बनाया है। महान कठिनाइयों पर विजय पाने के पुरस्कार-स्वरूप ही महान कला का सर्जन होता है। और हमें उस आदमी को भाग्यशाली मानना चाहिए, जिसे भाग्य की चुनौती झेलनी पड़ती है। जिस प्रकार श्रेष्ठतम मूर्तियाँ कठिनतम पत्थरों से ही तराशी जाती हैं, उसी प्रकार एक महान कलाकार का समुचित निर्माण प्रतिकूलताओं के बीच ही होता है। प्रथम महायुद्ध के दरमियान ही मूर परिपक्व अवस्था में पहुँचा था। लेकिन इस अनुभव से (वह युद्ध के मोर्चे पर गया था और जख्मी भी हुआ था)

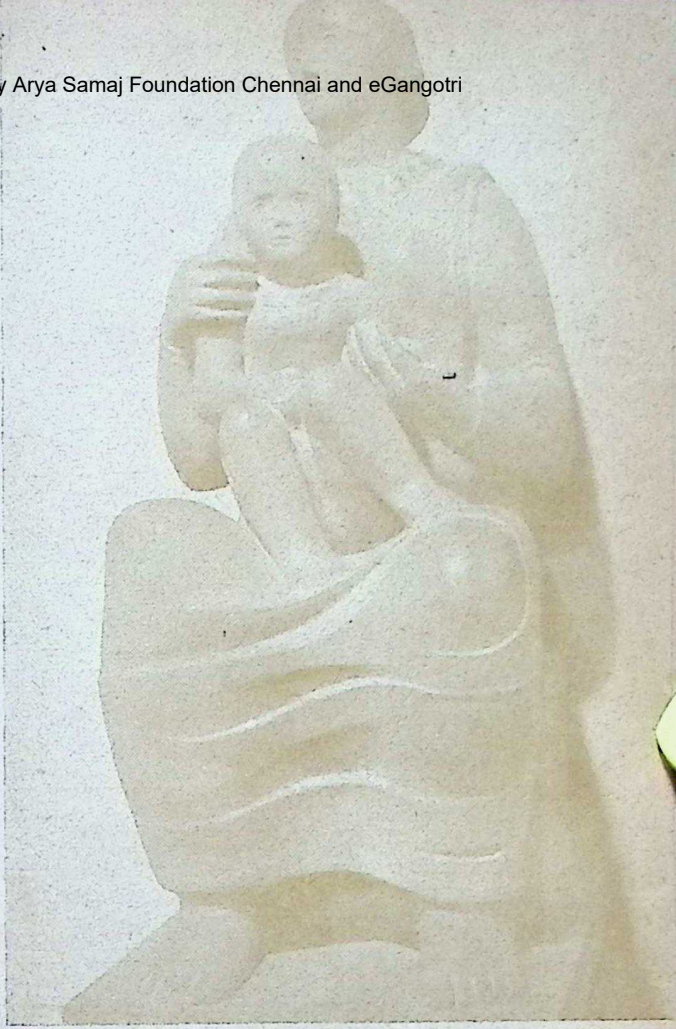

मरियम और शिशु क्राइस्ट : हेनरी मूर

उसने झपट कर एक कला शिक्षणालय में कला का अध्ययन करने का सुयोग प्राप्त कर लिया। एक बार मूर्ति-शिल्प के अध्ययन के लिए संकल्पबद्ध हो जाने पर उसने स्वेच्छापूर्वक उस कला के नियम-विधान के प्रति अपने को समर्पित कर दिया। लम्बे-लम्बे कई वर्षों तक वह हथौड़े-छेनी और पत्थर को साधने का अभ्यास करता रहा। और इस तरह उसने घनत्व और आयतन का बोध प्राप्त कर लिया। अपनी सामग्री के प्रति सच्चे होना सीख लिया और तीन आयामी सत्ता के संयोजन का साक्षा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्कार कर लिया। यही चीज़ें उसकी बाद को सर्जित होनेवाली कृतियों की आधार-भूत कसौटी रही हैं।

शायद मेरे उपरोक्त कथन से एक ऐसे व्यक्ति की धारणा बन सकती है, जो निपट निर्मम है, जो एक स्वकेन्द्रित अहंवादी है, जो बहुत अधीर, असहिष्णु और अभिमानी है। पर ये एक ऐसे महान कलाकार के लक्षण नहीं हो सकते, जिसका बल सज्जनता और विनम्रता में समाया है, जिसका आत्म-सम्मान सदा विनीत और सौम्य है, जिसकी गहिरतम भावना सदा मानवीय होती है। जैसे-जैसे बरस पर बरस गुजरते गये हैं, हमने इस कलाकार के सर्जन को, प्रजनन की किसी नैसर्गिक प्रक्रिया से आग बढ़ते देखा है; और आज उसकी रूपाकृतियों से सारा जगत छा गया है। हेनरी मूर की कल्पना के इन प्राणियों की लाक्षणिक विशेषता को हम कैसे परिभाषित करेंगे? सबसे पहले उनकी आंगिक प्राणशक्ति से उन्हें पहचानेंगे। किसी भी अर्थ में वे निरे बौद्धिक परोक्षीकरण नहीं हैं, वे स्नायविक रक्त के उच्छल आंदोलन में से रचे गये हैं, और गोपन हृदय की स्वतः स्फूर्त लयात्मकता से उच्छ्वसित से लगते हैं। मूर्ति-शिल्प का केवल यही एक प्रकार नहीं है एक और भी शिल्प होता है, जो गणित शास्त्र के नियमों पर अवलम्बित होता है, रेखा-गणितीय अनुपात के आन्तर अनुभूतिगत दर्शन पर निर्भर करता है। और मूर के शिल्प में जब तब उसका भी निदर्शन मिलता है, जिससे पता चलता है कि वह इस प्रकार के शिल्प का भी स्वामी हो सकता है। लेकिन सामान्यतः उसने रस्किन के शब्दों में कहें तो, 'गणित-शास्त्र की हठीली कठोर मर्यादाओं को भावना के कोमलतम मर्मों के साथ संयुक्त करना ही' अधिक पसंद किया है। रस्किन का कहना है कि केवल महान-तम मूर्ति शिल्पी ही ऐसा सम्पूर्ण और निर्दोष सन्तुलन उपलब्ध कर सके हैं।

यद्यपि हेनरी मूर सदा से ही एक प्रयोग-शील कलाकार रहा है, जिसने अपने रूपात्मक आविष्कारों में महान साहस का परिचय दिया है, फिर भी उसके इन सारे साहसिक प्रयोगों के पीछे वैज्ञानिक ज्ञान का पथ-प्रदर्शन रहा है। वह तथ्य की आधारभूमि पर ही अपने आविष्कार प्रस्तुत करता है। वह पदार्थों की वृद्धि और रूप के नियमों से सुपरिचित है, और उसके अनुपातों में भी जो विचित्रता दिखायी पड़ती है, वह प्रकृति के गोपन रहस्यों के उद्‌घाटन के कारण ही होती है। वह एक रूप का दूसरे रूप में अन्तर्भाव कर सकता है, वह एक हड्डी में पर्वत देख सकता है। वह मानव की छाती में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक गहरी गुफ़ा का दर्शन कर सकता हैं; पर उसकी मुद्रा अंग-विन्यास से सम्बद्ध होती है और प्रकृति के प्रदेश में उसका आधारभूत सन्दर्भ मिल सकता है। लेकिन कई समकालीन कलाकारों की तरह, वैज्ञानिक यंत्रों द्वारा अन्वीक्षित सूक्ष्म जगत का आकलन वह नहीं करता। वह मानवीय दर्शन के प्रति सच्चे रहना ही पसन्द करता है, इसी कारण उसकी कृतियों में एक ऐसी ऐन्द्रिकता बनी रहती है, जो अपरिचित आकृतियों में नहीं पायी जाती। मूर की सभी आकृतियाँ जीवन्त होती हैं, और एक दुर्दाम प्राण-चैतन्य से स्पन्दित होती हैं। उनका आंतरिक चैतन्य कभी-कभी बन्दी या पीड़ित हो सकता है, पर वह सदा ही मानवीय वाचा

हेनरी मूर

दो परिवार

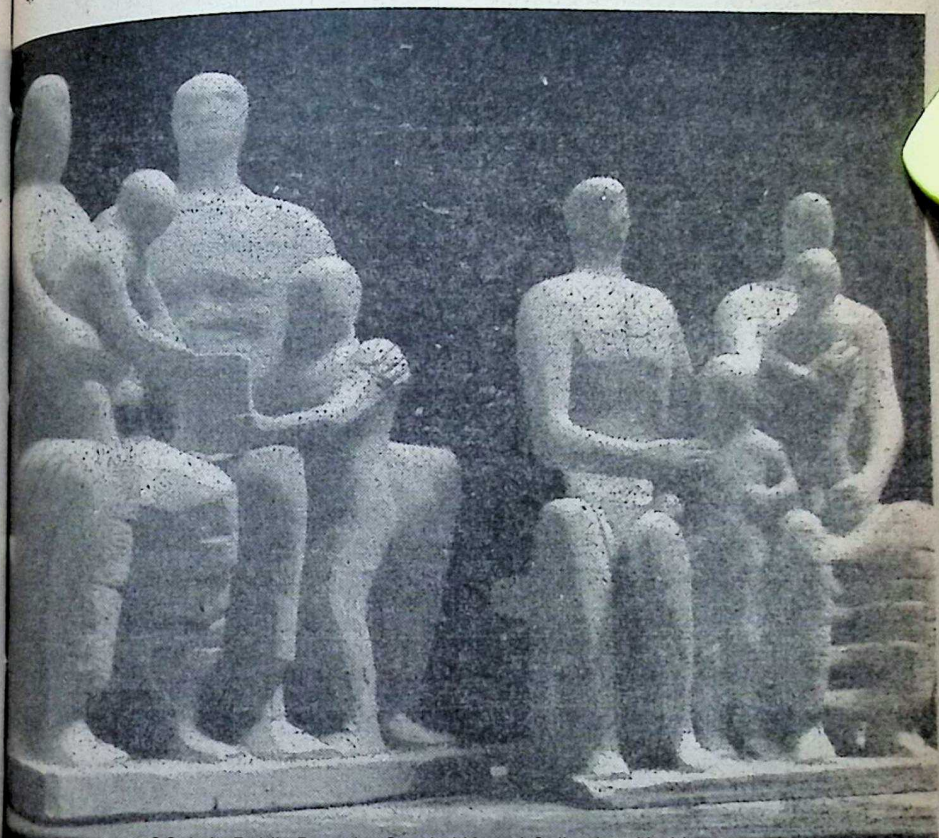

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में फूट उठता है।

रस्किन के एक दूसरे कथन को दुहराते हुए हम कह सकते हैं कि मूर 'ठीक माइकल एंजिलो की तरह ही मानव देहगत संतुलन और वजन के नियमों का स्वामी है'। पूर्ण ज्ञान एक अनायासिक संतुलन के बारे में आश्वस्त करता है। मूर की किसी भी अधलेटी आकृति को गौर से देखिए। स्वयं जीवन में भी एक शोभन ढंग से अधलेटे होना मानवों के लिए एक कठिन कला है, लेकिन मूर की मूर्तियों में चारों अंगों का विन्यास, धड़का ढलाव, उभरते सीने और गोल मस्तक, सभी मिल कर एक ऐसी लयात्मक गतिमत्ता उत्पन्न करते हैं, जो किसी कल्पित फिर भी सच्चे गुरुत्वाकर्षण केन्द्र के आस-पास चक्कर खाती रहती है।

हेनरी मूर के शिल्प की एक और भी विशेषता उल्लेखनीय है। स्वयं मूर को भी इसका भान नहीं है। और वह विशेषता है मूर की अचेतन शक्ति। वह उसकी कला की ऊर्जस्वलता का ही एक दूसरा पक्ष है। अपनी निविड़ता, तीव्रता और प्राणवत्ता के कारण, इस प्रकार की कला में एक सामर्थ्य होती है। जिसके बारे में वर्क ने अपने 'एनक्वायरी' नामक ग्रंथ में कहा है कि 'ऐसी कला हमारी प्रकृति के अगम्य दिखायी पड़नेवाले अन्तरतम प्रदेश तक में प्रवेश करती है।' मूर द्वारा सर्जित बिम्बों की आदिम आकृति मूलकला के बारे में बहुत-कुछ कहा गया है: कहा जाता है कि उसकी रूपाकृतियाँ तथा पृथ्वी-माता, प्रकृति-माता या जीवनी-माता की पुरातन प्रतिभाओं से मिलती-जुलती होती हैं। निश्चय ही इस प्रकार के आदिम प्रतीकों को कलाकार ने इरादेपूर्वक अपनी कला में संदर्भित नहीं किया है। लेकिन यह सच है कि मूर का कृतित्व बारम्बार लौट कर दो-तीन स्त्री मूलक विषयों की ओर जाता दिखायी पड़ता है: जैसे माँ और बालक तथा अधलेटी नारी आकृति। पर निःसन्देह ही इस आग्रह में एक आध्यात्मिक अभिप्राय है, और यह अनुरोध मूर की अपनी अन्तः प्रकृति के अगम्य प्रदेशों से ही आता है। ये वे ही अचेतन प्रदेश हैं, जो समस्त मानव जाति के आतंकों और रहस्यों के साथ मिल जाते हैं।

मैंने इस कलाकार को बहुत अच्छी तरह जाना है, और उसके व्यक्तित्व के साथ मैंने एक आन्तरिक सहानुभूति सदा महसूस की है। उसके इस व्यक्ति-तत्त्व को मैंने एक गहरे संमवेदन के साथ अनुभव किया है, जिसका उद्गम हमारे समसामान्य जीवनों में ही रहा है, जिसकी अभीप्साएँ सामान्य जीवन के धरातल पर ही उगी हैं। जब उसकी प्रतिभा को स्वीकृति नहीं मिली थी, जब करने को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

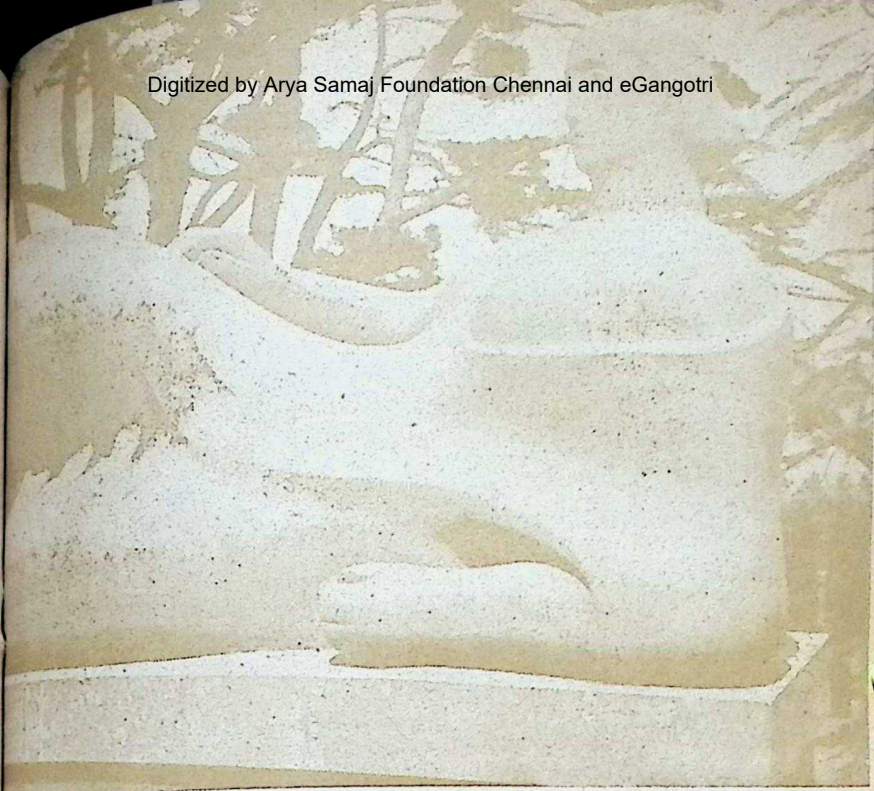

अवलेटी आकृति

हेनरी मूर

काम ही काम था और बदले में पाने को कुछ नहीं था, जब ग़लतफहमी, कटु विरोध और उग्र तिरस्कार ही समान रूप से हम दोनों का भाग्य था, उन दिनों की कठिनाइयों में मैंने मूर के साथ हिस्सा बंटाया है। अब से सत्ताइस वर्ष पहले जब मूर के कृतित्व पर मेरी प्रथम समीक्षा प्रकाशित हुई थी, तभी मैंने लिखा था कि सभी महान कलाकारों की तरह मूर भी एक अंतहीन जिज्ञासा में घुलता रहता है: अपनी साधन सामग्री की सम्भावनाओं के बारे में जिज्ञासा, जीवन के आंतरिक स्वरूप के बारे में जिज्ञासा। तब यह कलाकार केवल पैंतीस वर्ष का था। और मैंने इसकी रचना-प्रक्रिया की सुसंगति, संचयन-शक्ति और संकल्प की बढ़ती हुई स्पष्टता के प्रति आश्चर्य प्रकट किया था। किसी भी मौलिक कलाकार का जीवन फिर चाहे वह

[शेष पृष्ठ १२५ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तक प्रेमियों के लिए प्रमुख आकर्षण !

ये पुस्तकें प्रेरणात्मक, शिक्षाप्रद एवं मनोरंजक हैं

		मूल्य
● भारतीय संस्कृति और इतिहास	डा० बैजनाथपुरी	५–००
● भारतीय संविधान के सिद्धान्त	चन्द्रभान अग्रवाल	१०–००
● कालिदास और उनका युग	भगवतशरण उपाध्याय	३–००
● प्राचीन भारतीय मनोरंजन	मन्मथराय	५–२५
● रवीन्द्र रत्नाकर–अनुवादक	रघुवंशलाल गुप्त	५–००
● साहित्य शास्त्र ...	डा० रामकुमार वर्मा	४–००
● विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर	इलाचन्द्र जोशी	४–००

कृपया अपना आर्डर आज ही भेजें ।

सेल्स मैनेजर,

पुस्तक–विक्री–विभाग

भारतीय विद्या भवन

चौपाटी, बम्बई–७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्योहारों के समय उषा उपहार में दीजिये

सुन्दर उपहार के लिये यही सबसे बढ़िया अवसर है। क्यों न उषा सिलाई मशीन ही दीजिये! अपने बजट के अनुसार पाँच विभिन्न मॉडेल में से एक छाँट लीजिये। हर एक उषा सिलाई मशीन उच्च कारिगरी और क्वालिटी में सर्वोत्तम है तथा सिलाई की सुविधा के लिये उनमें विभिन्न व्यवस्थाएँ की गई हैं। उषा से सिलाई उनके खाली समयों को और भी आनन्दपूर्ण बना देगी।

आराम से
सिलाई कीजिये

उषा

से सिलाई कीजिये

जय इंजिनियरिंग वर्क्स लिमिटेड
कलकत्ता-३१

JESM/G/49B

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुक्ति ?

● जैनेन्द्रकुमार

प्रश्न था कि क्या स्त्री को मुक्ति मिल सकती है ?

चर्चा में तीन व्यक्ति थे। श्री शांडिल्य, उनकी पत्नी मनोरमा और आगत अतिथि श्री आर. नारायण।

शांडिल्य व्यस्त वकील थे, अब उससे अधिक चिंतक हैं। मनोरमा ने घर को सम्पन्न और सुव्यस्थित पाकर अपने समय को खाली बैठे लिखने में लगाया और देखते-देखते साहित्य में अपना स्थान बना लिया है। आर. नारायण आरम्भ में मुवक्किल के तौर पर मिले, पर धीरे-धीरे वह परिवार के मित्र बन गये हैं। ऊँचा उनका व्यवसाय है और बौद्धिक विषयों में बुद्धि द्वारा रस लेने का उन्हें चाव है।

आर. नारायण का दृढ़ मत है कि स्त्री को वह सब प्राप्त हो सकता है, जो पुरुष को। उसकी क्षमता कम नहीं है। किसी अर्थ में, हाँ, अधिक अवश्य मानी जा सकती है।

शांडिल्य सहमत होने को तैयार हैं। लेकिन प्रश्न को व्यर्थ मानते हैं। क्योंकि, वह मुक्ति को मानकर भी समझ नहीं पाते हैं।

मनोरमा का विश्वास है कि स्त्री मुक्ति नहीं पा सकती। पा सकती होती तो उसके लिए माता बनने का विधान न होता। शरीर से वह ऐसी बनी है कि मुक्त होने की नहीं सोच सकती है। कारण, उसे सफल होना है। क्योंकि, सृष्टि को चलते रहना है।

नारायण ने कहा—"भाभी जी, आपकी उक्ति में कटूक्ति तो नहीं है ? मुझे उसमें व्यंग्य की ध्वनि मालूम होती है।"

मनोरमा ने कहा—"व्यंग्य ! नहीं तो।"

शांडिल्य मौन रहे। मानो उन्हें कुछ कहना नहीं था। नारायण ने उनकी ओर देखा और देखा कि वह किसी ओर नहीं देख रहे हैं, खोये से हैं। उसने कहा—"स्त्री को परवश रहना होता है, क्या यही आप कहना चाहती हैं ? लेकिन भाई साहब तो किसी को वश में रख नहीं सकते। उस तरह की कल्पना ही इनमें नहीं है और फिर यह तो समाज की प्रथा की बात है। विवाह परवशता नहीं है।"

मनोरमा ने देखा कि चर्चा अब तत्त्व की नहीं रह गयी है, एकदम पास आती जा रही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। उसको कुछ संकोच हुआ। फिर भी उसने कहा— "परवशता की बात मैं नहीं कहती। विवाह में भी कोई परवशता नहीं है। पर स्वतंत्रता स्त्री को पूरी तरह प्रिय ही नहीं होती। आप उठा दीजिए विवाह का बन्धन, या परिवार का दायित्व। सारे समाज को ही चाहे तो आप उजाड़ दीजिए। परस्पर कर्त्तव्य का प्रश्न ही मिटा डालिए। फिर भी स्त्री अपने रागतन्तुओं से अपने लिए बन्धन पैदा किये बिना न रखेगी। इसलिए मुक्ति की सम्भवता उसके लिए नहीं है। मैं तो कहूँगी कि संगतता ही नहीं है।"

शांडिल्य अब भी कुछ नहीं बोले। उनकी दृष्टि दूर थी और मानो वह अन्यमनस्क थे। नारायण ने देखा और पूछा— "और पुरुष ?"

"पुरुष !" कहते-कहते जैसे मनोरमा रुकी। और बोली— "वह रह सकता है स्वप्न में, या महत्त्वाकांक्षा में। रागात्मकता हम स्त्रियों की प्रकृति होती है। पुरुष के लिए वह परिग्रह है। लगता है, उससे वह घिरता है और उसकी सारी

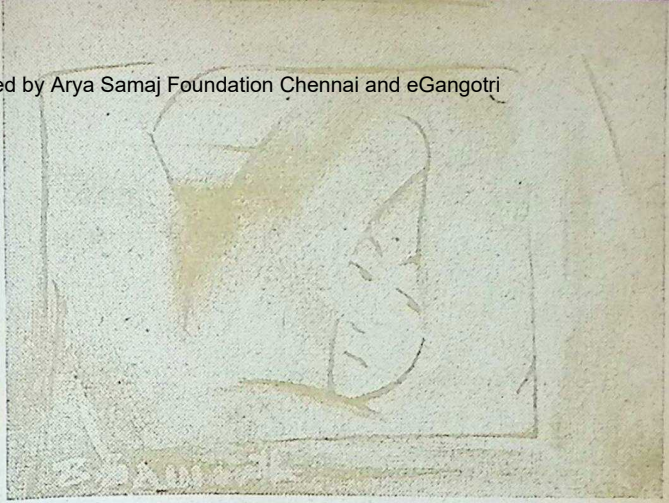

चित्र : भाऊ समर्थ

कोशिश छूटने की हो रहती है। इस तरह मुक्ति की धारणा वह पैदा करता है और उसको अपनी साधना बना लेता है। कहते हैं स्त्री और पुरुष परस्पर योग और सहयोग के लिए हैं। लेकिन यह साबित सच नहीं है। पुरुष को वियोग उससे अधिक आवश्यक मालूम हो सकता है। योग-सहयोग जैसे शब्द उसे यहाँ रोकते लगते हैं। असल में वह वियोग ढूँढ़ता है। वियोग शब्द तक को उसने इसलिए इतना ऊँचा उठाया है कि उसका अर्थ संसार से वियुक्त होना बन गया है। युक्त बस किसी परमेश्वर से। जिसका आवश्यक अर्थ होना चाहिए, वियुक्त इस जगत से और सब हम-तुम से। नहीं तो पूछ देखिए अपने भाई साहब से।"

नारायण ने कहा— "सुना, भाई साहब ?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाई साहब ने सुना। मानो कहीं से टूटकर वह वर्तमान में उपस्थित हुए और बोले– "तुम्हारी भाभी जी को नारायण तुम पा नहीं सकोगे। बात तक में यह अगम हो जाती हैं।"

नारायण को कुछ अच्छा मालूम हुआ। जैसे बात में अब स्पंदन पड़ रहा हो। अब तक जैसे वह दूर और बायव्य थी। अब वह घनिष्ठ और वास्तव हो। उसमें जिये जाते हुए जीवन का सन्दर्भ हो और वस्तु-स्थिति से दूर कटी निरी सैद्धांतिक ही न हो। बल्कि दर्द की तरह चसकती और रक्त की तरह धमनी में धड़कती भी हो।

"मैं अगम!" मनोरमा ने कहा। "अगम है तुम्हारा मोक्ष। नहीं तो बताओ वह क्या है? छूटना चाहते हो तो किससे? मुक्ति क्या और कहाँ और क्यों? तुम लोग जीवन भर संसार रचते हो, कमाने के लिए लड़ते हो, लड़ने के लिए कमाते हो। और किताबों में लिखते हो कि जीवन का आदर्श मुक्ति है। मतलब कि सृष्टि के सब पदार्थों से और हम सब जीवों से खेल खाल कर भर जाओ, तो कहाँ यह सब माया है, सब प्रपंच था, और असल में जीवन की यात्रा जिस तीर्थ के हेतु से थी, वह तो मोक्ष है। राह के पड़ावों पर कुछ हम टिके रह गये तो यह विश्राम था केवल अगली यात्रा के लिए सक्षम होने का अर्थ। नहीं तो संसार बाधा है और विघ्न है!"

शांडिल्य ने सुनते-सुनते भवों में बल डाला और पूछा– "तुम क्या चाहती हो?"

मनोरमा सावचेत हुई। बोली—"क्या मतलब?"

मैंने तुम्हें क्या कह नहीं दिया है कि तुम स्वतन्त्र हो?"

"कह दिया है। लेकिन क्या मैं भी नहीं कह चुकी हूँ, एक बार नहीं दस बार, कि मैं स्वतन्त्र हो नहीं सकती हूँ, सोच नहीं सकती हूँ। उस शब्द का ही मेरे लिए कुछ अर्थ नहीं है। तुम्हारे नजदीक अर्थ हो तो मेरी चिन्ता तुम्हारा काम नहीं है। न किसी दूसरी चिन्ता को तुम्हें ओढ़ना चाहिए। वह सब मैं समेट लूँगी। तुम मन को रोको मत, जिधर अभिष्ट हो, बढ़ जाओ।"

"सुनते हो, नारायण", शांडिल्य ने कहा। "तुम्हारी भाभी क्या कह रही हैं? कह रही है, मैं संन्यासी हो जाऊँ।"

"हाँ, नारायण, मैं इनसे कह रही हूँ कि तुम कभी-कभी विकल और व्याकुल क्यों दिखायी दे आते हो? जैसे खाली हो और सब वृथा हो। हम लोग जग-जाल के अंग हैं। तुम्हें आवश्यकता परमेश्वर की मालूम होती है। छूटना चाहते हो तुम जग से और पाना चाहते हो परमात्मा को। छूटना चाहते हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized By Aryaman Foundation Chennai and eGangotri

हम सबसे और पानी जिसे चाहते हो, उसे बस मुक्ति यानी पूरी तरह छूटने का ही नाम देते हो। तो कहती हूँ, अटको मत। सब पर एक क्षण के लिए मत रुको। नहीं कहती संन्यास, पर मुक्ति का जो भी बाना होता हो तय कर लो। शास्त्रों में उस बाने को ही संन्यास का नाम दिया है। कपड़े भगवे हो जाते हैं, और घर, घर नहीं रहता। ठीक है, वह सही। लेकिन, नारायण, मैं इन्हें अगर अकेला और आकुल नहीं देख सकती तो कहती तो हूँ कि मैं बेबस हूँ। अपनी इस बेकली पर नाराज़ भी नहीं हूँ। मुझे वह प्रिय है। मेरा वह स्वधर्म है। हो मुक्ति तो हो। स्त्री होकर मुझे उसे छूना भी नहीं है। जब तक यह घर में हैं, मैं इन्हें अपने राग-अनुराग के सूत्रों की लपेट से मुक्त नहीं कर सकती हूँ। यह यही कहते रहते हैं कि मेरी चिन्ता मत किया करो। लेकिन निश्चिन्त रहना हम स्त्रियों को मिला नहीं है। इसलिए मेरा राग, मेरी चिन्ता ही इनके लिए बोझ बन गयी हो तो अब तुम्हारे सामने कह रही हूँ कि यह आजाद हैं। . . . तुम्हें मालूम है, नारायण? इन्होंने सब जगह से अपना नाम हटा लिया है, मेरा डाल दिया है। वकालत छोड़ दी है। कविता करने लगे हैं। भक्ति की और रहस्य की कविता। अच्छी तो बात है। लेकिन भक्ति और रहस्य की उस कविता को करके भी यह प्रसन्न क्यों नहीं दीखते हैं। कारण मैं समझती हूँ कि शायद हम हैं। हम यानी परिवार के लोग। उनमें भी प्रमुख मैं। मैं किसी की मुक्ति में विघ्न नहीं बनना चाहती। कहती हूँ मुझे छोड़ो, मुझ पर परिवार को छोड़ दो। सम्पत्ति अपने पास कम नहीं है। और उस सबको सम्भालने की क्षमता भी मुझमें ये कम नहीं मानते हैं। फिर चिन्ता क्या है, और वह क्या है, जो इनमें के आनन्द के उत्स को खिलने नहीं देता है? देख लें छोड़कर सब कुछ। इससे अधिक खुशी मुझे क्या होगी कि यह प्रसन्न और प्रफुल्ल दिखायी दें।"

नारायण आमन्त्रित होकर आये थे। उन्हें अनुमान न था कि रोज़ की तरह बात हल्की फुल्की न होगी, गहरी उतरती जायगी। वह असमंजस में हो आये और चुपचाप स्थिति का साक्षी बने रहने में ही उन्हें कुशल दिखायी दी।

शांडिल्य ने कहा– "नारायण, पूछो इनसे कि अगर कविता में मुझे शांति मिलती हो तो इनको उसमें आपत्ति क्यों है? बार-बार लौटाकर वक़ालत की तरफ ही मेरा मुँह यह क्यों करना चाहती हैं?"

कहकर शांडिल्य मानो प्रतीक्षा में हुए और मनोरमा भी चुप रह गयी।

[शेष पृष्ठ ८० पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

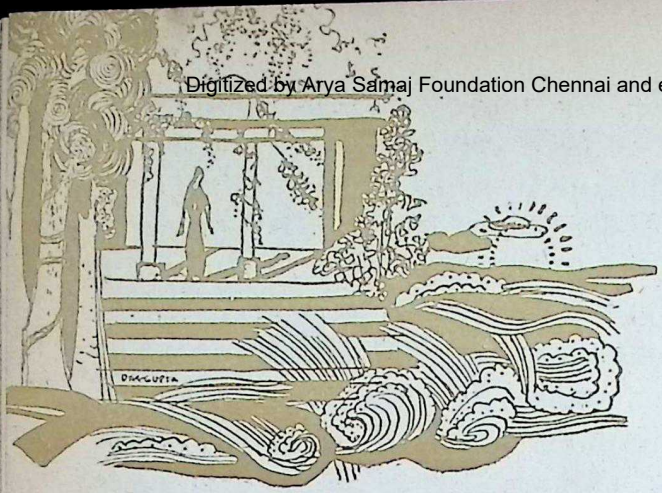

हमारा कल का मकान

•

वीरेन्द्रकुमार जैन

हमारा कल का मकान
निरा सपना नहीं है:
उसकी नीवें
जाने किन अचीन्हे समुद्रों की
चट्टानों में पड़ चुकी हैं:
उसकी दीवारें
जाने किन पत्थर, मिट्टी,
धातुओं की खदानों में
उठ चुकी हैं:
उसके द्वार, खिड़कियाँ, वरण्डे,
जाने किन अनपहुँचे जंगलों के
अनजान वृक्षों के तनों में
खुल चुके हैं:
उसका फर्नीचर नीलगिरि के
जाने किन चन्दन शीशम-वनों
में डोलती हवाओं ने
गढ़ दिया है:

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसकी शैया, परदे, टेपेस्ट्री,
मिस्र की नील नदी के कछारों में
लहलहाते कपास-खेतों की
बन्द फलियों में बुने जा चुके हैं:

उसकी छतें और वातायन,
सागरान्तों के जलों
और दिशान्तों के आकाशों की
बहती नीलिमाओं में तराश कर,
दिग्वधुएँ अपने पारदर्शी नखों से
उनमें पच्चीकारी कर रही हैं:

उसके रौशनी के बल्ब, ग्लोब,
टेबल-लेम्प, फ़ानूस, नीयॉन लेम्प,
दिशा के छोर पर
कब से लेकर खड़ी है
एक जापानी लड़की:
उसके एक हाथ में है
पूर्व का सूर्यायित ग्लोब:
उसके दूसरे हाथ में है
पश्चिम का समुद्र-नील ग्लोब:

निरा सपना नहीं है
हमारा कल का मकान:
वह कभी का बन चुका है वहाँ,
जहाँ हमारी हर अन्तिम चाह का
आख़िरी उत्तर
अविच्छिन्न सघनता में है
सनातन विद्यमान...।

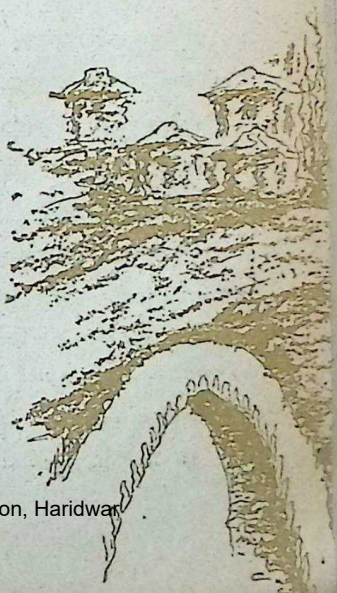

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[मुक्ति.....पृष्ठ ७७ का शेष]

नारायण ने दुविधापूर्वक पूछा—क्यों, भाभी ?"

मनोरमा ने कहा — "नारायण, मैं आपत्ति नहीं करती हूँ। खुद लिखती हूँ, यद्यपि गद्य अधिक लिखती हूँ। यह भी जानती हूँ कि लौकिक कोई उपलब्धि टिकती नहीं है। बस यह अपनी अन्तरंगता को सृजन के माध्यम से पा लेना भर ही एक पाना है। लेकिन इनसे पूछो कि यह फिर उन वक़ीलों के नाम क्यों याद करते हैं, जो इस वक्त सबसे चोटी पर हैं और विख्यात हैं ? रह-रह कर इनको सन्तोष की आवश्यकता होती है कि देखो, मैं इनसे बढ़कर हो सकता था। लेकिन मैं हूँ कि उस सारी ख्याति और सफलता को काट चुका हूँ ! उस त्याग की याद जो इनसे छूट नहीं पाती है तो मैं कहती हूँ, त्याग का ही त्याग कर दो, और उनसे भी ऊँचे चोटी पर चढ़कर दिखा दो अपने को और दुनिया को कि तुम कम नहीं हो। त्याग के सहारे अपने को अधिक मानने की आवश्यकता तुम्हारे लिए अगर होती है तो इसीलिए कि मन में कहीं तुम्हारे भीतर है कि दूसरे लोग तुम्हारे बड़प्पन को अन्यथा मानते नहीं हैं।"

"छोड़ो मन्नो !" एकाएक शांडिल्य ने कहा ! "तुम नहीं समझोगी। नारायण, शायद तुम भी नहीं समझोगे। इस संसार में मालूम होता है कोई नहीं समझेगा। हम क्यों एक दूसरे को समझ नहीं पाते हैं ? क्यों अपने-अपने पिंजरे में हैं कि चाहे एक दूसरे से बात कर लें, और भी तरह-तरह के सम्बन्ध पैदा कर लें, लेकिन पिंजरे के भीतर सिर्फ़ और खुद ही बने रहें। नारायण, यह पत्नी है। चालीस वर्षों से हम साथ हैं। हमारे प्यार की कथाएँ बनी हैं, और सचमुच उससे उन्नत प्रेम का भोग किसी ने पाया नहीं होगा। तुम मित्र हो और जानता हूँ मेरे लिए क्या कुछ तुम भुगत नहीं सकते हो। लेकिन यह क्यों है कि मैं अकेला हूँ और मनोरमा तक मुझे ग़लत समझ सकती है !"

नारायण का अन्तरंग असमंजस मानो बढ़ता गया। उसने हँसकर कहा—"भाभी मनोरमा जी, भाई साहब को आप क्यों ग़लत समझती हैं ? कविता करते हैं तो करने दीजिये। वकालत नहीं करते, मत करने दीजिए। भाई साहब, आइए आप ही छोड़िए। कहाँ की हम लोग खुराफ़ात ले बैठे। लेकिन मैं जाऊँगा। जाने से पहले वचन दीजिए कि मुक्ति कम्बख्त को आप लोग मुक्त ही रखेंगे और अपनी बातों में उसको, या आपस में किसी को, घेरना बँधना नहीं चाहेंगे। कहिए भाई साहब, कहिए भाभी जी।...मुझे अब इजाजत दें।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नारायण उपस्थिति से चला गया तो मानो उनके बीच से वह सेतु उठ गया, जो दोनों के तटों को तो भी किसी तरह मिलाये हुए था। पति और पत्नी पास थे, लेकिन दोनों की निगाहों में इस समय मानो परिचय जितनी भी अभिज्ञता नहीं रह गयी थी। जैसे अजनबी हों और सम्बोधन का भी वास्ता एक दूसरे के बीच न हो। दो एक क्षण कोई कुछ नहीं बोला। शांडिल्य खड़े थे, मनोरमा बैठी थी। दोनों ने एक दूसरे को देखा और देख कर वे अनदेखे हो गये। कुछ करने के लिए शांडिल्य के हाथों ने मेज पर से ट्रे को और गिलासों को उठाया और बराबर में कोनिश पर रख दिया। जैसे कुछ करें तभीं अपना होना सहा जा सकता है। लौट कर उन्होंने मेज़पोश के कोने को ठीक किया। ज़रा इधर उधर उपेक्षा की निगाह से देखा और फिर सोफ़ा के पीछे आलमारी के सामने जा कर वहाँ से किताब निकाली और बैठ कर पढ़ने लगे।

मनोरमा अपनी जगह पर ज्यों-की त्यों बैठी रह गयी। गिलास उठाने, मेज़पोश ठीक करने और फिर जाकर अलमारी में से किताब खींचने और बैठकर पढ़ने लग जाने की पति की सारी विधि को मनोरमा बिना देखे देखती रह गयी। जानती थी कुछ नहीं है, केवल क्रिया है। जिसमें आत्मता नहीं है, केवल व्यस्तत है। व्यस्तता बस बचाव है। किताब और क्रियमाणता प्रतीक है कि जिनकी ओट वह मुझसे बचें और अपने को झेलें। मनोरमा का मन इस अनुभूति पर भीतर भीतर ऐंठ सा आया। लेकिन वह अपनी जगह से हिली न डुली। मानो दुर्लंघ्य व्यवधान बीच में हो और दोनों ओर निरुपायता हो।

शांडिल्य दूर उस कोने में पढ़ते रहे। मनोरमा अलग इस तरफ बैठी रही। शांडिल्य की आयु तिरसठ वर्ष है। मनोरमा अट्ठावन है। चालीस वर्ष के लगभग दोनों साथ रहे हैं। पर शांडिल्य पढ़ पर पढ़ रहे हैं। मनोरमा बैठी की बैठी है। समय सरक रहा है। और मालूम होता है, बीच में निपट अन्तराल है। सम्बद्धता के सूत्र वहाँ से लुप्त हो गये हैं। शुद्ध आकाश रह गया है अथवा काल। अन्यथा दो निजताओं और अहंताओं से नितांतता है और बीच में मात्र शून्य। जैसे सागरों से अलग हुए दो द्वीप के मध्य घोर परिचय और अनभिज्ञता ही संभव हो।

किताब सामने है और अनुभव होता है कि दुनिया है और नहीं है। क्या है सब? है, और व्यर्थ है। पढ़ रहे हैं, शब्द और वाक्य पढ़े भी जा रहे हैं। पर कुछ नहीं है और सब थोथा है। बेकार

[शेष पृष्ठ ९७ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राग मेघ मल्हार

भारतीय संगीत में प्रणय की रस-भीनी रागिनियाँ

●

जीतभाई प्र. मेहता

[गुजराती लेख]

अलग को संलग्न करता है, आलिंगन। जब प्रणय की ऊर्मि उछलती है, तो एक पक्षी दूसरे पक्षी की चोंच में अपनी चोंच मिलाता है, एक हृदय दूसरे हृदय में अपने को उड़ेलता है, क्षोभ का दुर्ग टूट पड़ता है, और मोक्ष का किवाड़ खुल जाता है। स्वर और भावना का आलिंगन राग को रोके रखता है। भारतीय संगीत में प्रणय को जो सम्मान मिला है, वह सम्मान प्रदान करनेवाले थे, भारत के ऋषि-मुनि। काया के द्वारा ही प्रणय का उत्सव होता है, इसी से हमारी राग-रागिनियों को काया प्रदान की गयी है। यह काया की कस्तूरी जैसी सुरावली श्रृंगार की महक को वातावरण में व्याप्त कर देती है।

प्रभात की रागिनियों में भैरवी सबकी जानी-मानी है। ग्रंथों में उसका वर्णन इस प्रकार मिलता है: भैरवी गोरी भी नहीं है और श्याम भी नहीं है। उसकी ओढ़नी श्वेत है, और उसके कुचों पर लाल रंग की कंचुकी कसी हुई है। गले में वह चम्पे के फूलों की माला धारण किये है। हाथ से वह ताल बजाती है। सरोवर के पास वह बैठी है। सामने कमल का वन है, और कमल मरन्द की मादकता वातावरण में छायी है। भैरवी सम्पूर्ण राग है। इस राग का यदि सम्पूर्ण आकलन किया जाये तो कल्पना ग्रंथों के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गंधार से आगे जाती है। कोमल रिखभ पर वह अधिक रुकती नहीं है। ऐसा यदि हो जाये तो प्रणय की मस्ती के बदले वह शंकर की भक्त बन जाये, उसमें धैर्य का वजन आ जाये। इसी से रिखभ पर से वह कोमल गान्धार पर जाती है। उसके बाद धैवत और निषाद भी कोमल होते हैं। वह प्रणय को सात स्वरों के शूल चढ़ाती है। प्रीत के झांझर पहन कर वह नाचती है। वह चंचल हो उठती है। प्रौढ़ होना उसे बहुत पसंद नहीं। वह प्रेमी से नहीं पूछती, कि प्रेम किस-लिए? वह प्रेम में बहती है। केवल इतना ही भान उसे रहता है। "रस के भरे तोरे नैन" भैरवी तो बस इतना ही इकरार करती है, ऐसा ही गीत गाती है। यदि कोई उसे ताना मारे या ऐसी सीख दे कि प्रेम मात्र क्षणिक आवेश है, तो वह उसकी परवाह नहीं करती। वह तो मानों कहती सुनायी पड़ती है कि क्षण अनन्तता पर तैरने की नौका है: क्षण अनुभव की यात्रा है। जो यात्रा करने में झिझकता है, उसे भला जीवन क्या सिखाये?

राधा-कृष्ण का रस-जीवन भैरवी की अनेक चीजों में से प्रवाहित होता रहता है। तीव्र स्वर अर्थात् नर और कोमल स्वर अर्थात् नारी: दोनों एक-दूसरे में मिल जायें तो संवाद उत्पन्न होता है। चंचल चटकीली, नित नवेली नार...यही है भैरवी का स्वरूप।

राग हिंडोल को ग्रंथों ने पुरुष के रूप में प्रकट किया है। उसका चित्र इस प्रकार है:

कांचन वर्णी उसकी काया है। कामदेव जैसा वह रूपवान है। उसने पीली वेश-भूषा धारण की है। हेम के हिंडोले पर झूलता हुआ, वह धीमे-धीमे गान गाता है। मुग्धा उसे झुला रही है, प्रेम की डोर खींच रही है। प्रहर सांझ का या

राग हिण्डोल

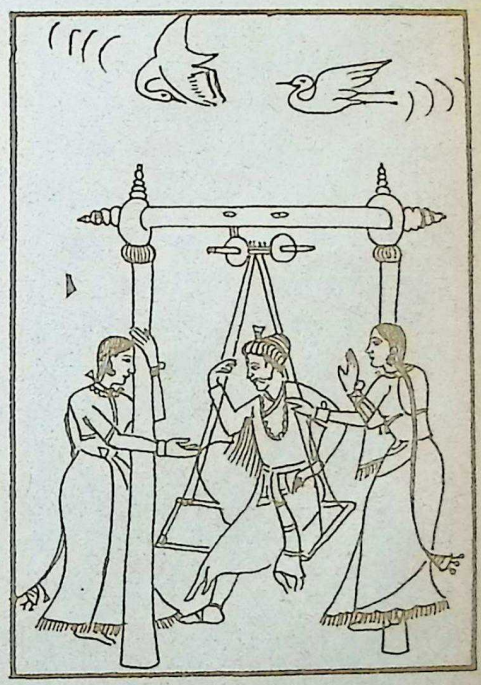

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर सबेर का है। जाति ओडव है। यानी पाँच स्वर का यह राग है। फागुन और चैत्र महीनों का यह अपना प्यारा राग है। राग किसी क़दर रुक्ष है।

ज़रा कल्पना के महलों में इस राग का दर्शन करें। नर को अधिक श्रृंगार की आवश्यकता नहीं होती। उसका पौरुष ही उसकी कलगी है। उसका मन कैसा है? झूले जैसा है उसका मन, पर आपोआप ही वह झूलता नहीं है। प्रियतमा अपने हृदय के ताल पर उसे झुलाये, तो ही वह हिलता-डोलता है। तन के सहयोग से वह मन को खोजता है। वसन्त की पागल हवा जब बहती है, प्रकृति जब मानव की स्फूर्ति के लिए रस-रंग और सुगंध का उत्सव करती है, तब यह सारी सामग्री उसके चित्त पर चन्दन का लेप करती है। तब फागुन-चैत्र की धूप की वह अवज्ञा कर देता है। प्राण-सखी कलाई पर कंकण धारण किये, झनकार के साथ उसे झुलाती है। गति के नशे से वह पागल हो जाता है। पाँच स्वर से वह उसके प्रेम का अभिषेक करता है।

एक होती है रागिनी गुनकली। उसका दर्शन ऐसा है: विरहाग्नि से उसकी काया झुलस गयी है। जैसे-तैसे वस्त्र धारण किये हैं। कहीं भी श्रृंगार का जतन नहीं है। आहें भरते वह थकती नहीं है। कभी-कभी आहों के साथ आँसू भी टपकते हैं। कंचुकी आँसुओं को समेट लेती है। केश अस्त-व्यस्त आलुलायित हैं, माथे में फुलेल-तेल का संस्कार नहीं हुआ है। आम के वृक्ष-तले वह बैठी है, धड़ से सिर टिकाये। दिन के प्रथम प्रहर की यह रागिनी है। रिखभ और धैवत वर्ज्य हैं। गुनकली अनेक रूपों में व्यक्त होती है। कई स्वरों का उसमें समावेश होता है।

आइए कल्पना की आल्पना रचें। मिलन की माला उसने स्मृति में संजोयी है। पर जैसे-जैसे दिन बीतने लगे, वैसे-वैसे यादों के फूल कुम्हलाने लगे। कब तक सूक्ष्म की आरती उतारी जाये? काया की अनुपस्थिति को कब तक दुहराया जाये? आँसू तो टपक कर पलायन की युक्ति आज़माते हैं। निःश्वास नाभि से निकल कर ऊँचे जाकर ढलक जाते हैं। मन में जड़ी है तन की याद, और तन की तंगी। सूरज उगा नहीं कि गुनकली अपने प्रीतम की गुणमाला याद करती है। फिर भी उसे सूरज उगाने से चैन नहीं पड़ता है। दिन के धौले उजाले में वह कैसे तो अपनी नज़रों को छुपाये? इसी से कोमल रिखभ की करुणा को वह पास लेती है। इसके बाद के स्वर सूरज को मीठा उपालम्भ देते हैं। अरे ओरे सूरज, तू उगा और 'वह' अस्त हो गया?

वसन्त रागिनी, यानी अंगों का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वरोच्चार। खुमारी ही है, उसकी खुमारी। संगीताचार्य वर्णन करते हैं:

अंगों पर केशर का लेप किये है। माथे पर मोर-पंख शोभित है। एक हाथ में आम्र-मंजरी के गुच्छ हैं, दूसरे हाथ में नागर-बेल के पान का बीड़ा है। चारों ओर भ्रमर गुंजन कर रहे हैं। विलास के दर्पण में वह अपने मुखड़े को टोहती है। नहीं है कोई रोक-टोंक। नहीं है—भावना का व्यवस्थित सयाना संकलन। नहीं है अपने प्यार का ज्ञान-भान। नहीं है लोक-लाज...। षडज पर स्वर रुकते हैं और तुरन्त ही कोमल-माध्यम आ जाता है। फिर धैवत-कोमल, वह हृदय का उत्सव करती है। प्रेम यदि ऊँघ रहा हो, तो वसन्त रागनी उसे झकझोरती है, उसे जागृत करती है। 'सा' के बाद 'म...' उसे जगाने के लिए ही एक मधुर साद है। फिर कोमल 'द...', अर्थात् बिनती और साथ ही अपनी विवशता का निवेदन, अपनी जागृति के लिए झुंझलाहट। ऊपर के 'सा' पर से नीचे के स्वरों पर जब मींड की तान उतरती है, तो लगता है कि समूचा वाग इस बोली में, इस आकुल-व्याकुल निवेदन में समा गया है।

अरे, प्रकृति मुझे प्रणय के कक्ष में ढकेल रही है। फूल—फूटकर पागल-विकल हो उठे हैं। कोकिला अपना कण्ठ उड़ेल रही है। मदन के स्पर्श से पत्ते-पत्ते में नूतन श्री भर उठी है। तब तू भला, सुस्त! तब तू अपने जीवन का हिसाब गिनने बैठा है? फेंक दे अपनी यह गिनती.... यह प्रणय का बेफ़ाम प्रसंग है। पूछ फूलों से कि वे क्यों फूट उठे हैं? पूछ इस हरियाली से कि वह क्यों रंग का जूआ खेल रही है? पूछ डाली से कि वह क्यों कोयल को झुला रही है? ढक्कन खुल कर दूर जा पड़े हैं। शिलातल का झरना पत्थरों को उलट कर कलनाद कर उठा है, शराबोर होने का यह मौसम है। उपदेशक छुप गये हैं। पंखी-मिथुनों का प्रेम देख कर उन्होंने आँखों आड़े कान कर लिये हैं। आत्मा को नाचना है, प्रणय के पैरों से। अध्यात्मिक रंग को समा जाना है स्त्री और पुँ-केसर में। शुद्ध देह की यह शुद्ध लगन है। नाशवन्त शरीर को जीवन-पर्यन्त का नशा कराने का यह पल है। यह दिल-चोरी का मौसम नहीं है। बंसी बजती है फूंक से, मृदंग बजता है हाथ की थाप से। इसमें भावना की लयकारी है। चोरी, छुपाव-दुराव, आँख-मिचौनी और डर-पोक प्रेम की वाणी यह नहीं है। तन और मन पर करवत रखकर, उन दोनों को अलग करने का आदेश इसमें नहीं है। तन मन में खो जाये, और मन तन में खो जाये, ऐसी यह सुरावली है। पाण्डु

[शेष पृष्ठ १२५ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देवांशिनी का आत्म-निवेदन

●

अमृता भारती

[उपन्यास का अंश]

●

पत्रों और डायरी के पृष्ठों के रूप में लिखा हुआ अमृता भारती का सद्य प्रकाश्य उपन्यास 'देवांशिनी का आत्म-निवेदन' 'कनफेशन' के अग्नि-स्नान की पावनता से दीप्त है। लेखिका को संयोगवशात् एक नारी की अन्तिम पीड़ा के गोपनतम अन्तःप्रदेश में प्रवेश करने का अवसर मिलता है, और वह उस आत्मवेदना को पत्रों और डायरियों के आत्म-निवेदनात्मक रूप में कला-देह प्रदान कर देती है। देह, प्राण, मन की सूक्ष्मतम परतों को खोलते हुए, आत्मा के निःसीम प्रदेश तक जाने की यह सर्जनात्मक मुक्ति-यात्रा, एक आध्यात्मिक गरिमा और मर्म-स्पर्शिता से ज्वलन्त हो उठी है।

●

मेरे समुद्र, जब भी मैं किसी समुद्र-तट पर जाती हूँ, मुझे तुम्हारी याद आ जाती है और साथ वाली सखी मुझसे कहने लगती है कि 'प्रेम' के स्वरूप को जानने के लिए यदि 'समुद्र' को उसके पर्याय में रख दिया जाये तो फ़िर ज़्यादा कहने के लिए कुछ नहीं रह जाता। प्रेम की अनेकरूपता में मैं भी गयी हूँ। यह सच है कि किसी खोज की दृष्टि से मैंने इन अनेकरूपताओं में प्रवेश नहीं किया, वह सहज ही हो गया है, और अनायास ही मुझे उनका ज्ञान भी हो गया है। मैंने प्रेम और उसकी सीमाओं को देखा है, मैंने प्रेम और उसकी असीमाओं को भी देखा है। यह सच है कि सीमाएँ ज़्यादा जानी हैं असीमाएँ कम। फिर भी दोनों स्थितियों को मैंने जिया है। मैं सीमाओं में बहुत भटकी हूँ, और असीमाओं में कुछ क्षणों के लिए रही हूँ। कितने अचरज की बात है कि जहाँ प्रेम एक परिधि-में मिला है, वहाँ मैं रास्ता भूल गयी हूँ, और जहाँ प्रेम असीम होकर मिला है वहाँ निश्चित और आश्वस्त हो गयी हूँ। प्रेम की संकीर्णता में मुझे पथ नहीं मिला और प्रेम के अनन्त विस्तार में भूले-भटके पथ भी खुलते चले गये हैं। मेरा पिछला समय प्रेम की संकुलताओं में बीता है, उसकी संकुल साँकलों से मैं बंधी रही हूँ और जब छूटकर भागी हूँ तब देखा है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरे तन-बदन पर लौह-शृंखलाओं के गहरे काले निशान हैं।—

तुम्हारे साथ मैंने प्रेम की असीमा को जाना है। तुम्हारा मेरा कुछ ही समय का साथ सही, पर वे क्षण अनन्त होकर मुझे मिले हैं। हम दिन, महीने, बरस के बरस और पूरी ज़िन्दगी किसी के साथ बिता देते हैं और बाद में सोचते हैं ज़िन्दगी क्षणिक होकर बीत गयी; पर किसी अनन्त के साथ बिताया एक क्षण जब अनन्त होकर मिल जाता है, तब वह काल के फलक पर अमर बनकर लिख जाता है और अपने उस अमर क्षण के सहारे हम पूरी ज़िन्दगी को अमर कहकर जी लेते हैं। मैंने तुम्हारे साथ केवल क्षण ही नहीं ऐसे अमर घंटे जिये हैं। अब सोचती हूँ मनुष्य एक क्षण के सहारे पूरा जीवन बिता देता है, मुझे क्या हुआ था कि उन सहस्रों क्षणों को मैंने मिथ्या कर दिया और एक लम्बा समय उसी मिथ्या में रहकर बिता दिया ?—

तन-मन कहते हैं "अमर क्षणों की बात आत्मा की बात है, हमारी नहीं।"— पर मैं इसे कैसे मानूँ, क्योंकि मैं जानती हूँ जब मैंने उन अमर क्षणों को जिया था, तब तन और मन अनुपस्थित नहीं हो गये थे, यह ज़रूर है कि वे सर्वोपरि नहीं थे और मेरी आत्मा ने उन्हें अपनी गहरायी में उतार सहज आश्वस्त कर दिया था। पर शायद अब वे सोचते हैं कि तब वे अनुपस्थित

चित्र : भाऊ समर्थ

थे और उन अमर क्षणों के सहभागी नहीं थे। वे ऐसा सोचते हैं और मुझसे शिकायत करते हैं: "अमर क्षणों की बात आत्मा की बात है, हमारी नहीं।" — लेकिन अब यह शिकायत भी पुरानी हो चुकी है, क्योंकि आत्मा को अलग करके अपने धरातल पर ही जो सुख और तृप्ति उन्होंने पानी चाही, वह उन्हें नहीं मिली। उन्होंने मृग-जल पिया, फिर प्यास कैसे बुझती ?—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिन पर दिन बीतते चले गये, तन और मन का जो स्वाभाविक जल था, अन्तः-स्रोतों का जल, बाहरी पानी पीने से वह भी सूख चला। तब मैं क्यों न समझूँ कि भोग की सामर्थ्य तन और मन की नहीं है– यह आत्मा की सामर्थ्य है, जिसके आश्रयी-भूत होकर वे अपना धर्म पूरा कर सकते हैं और तृप्ति पा सकते हैं। आत्मा को अलग कर पायी जानेवाली कोई भी प्राप्ति (जो सदा अप्राप्ति ही रहती है) या कोई भी भोग केवल व्यभिचार है- तन और मन का विलास है, ऐश्वर्य नहीं। मैंने इस व्यभिचार और इस विलास को बहुत पास से जाना है, और आज तुम देख ही रहे हो कि मैं कितनी खाली होकर तुम्हारे सामने प्रस्तुत हूँ। तन और प्राण तथा मन की सतह पर पायी जानेवाली हर प्राप्ति की परिणति अन्ततः 'अप्राप्ति' में हो गयी। आत्मा से अलग इनका अस्तित्व बना, मैंने स्वतंत्र जीवन जीना चाहा, तो परिणाम सामने है– आज ये तृषित– सन्तप्त उसी ओर दौड़े जा रहे हैं, जहाँ की गहराइयों में इन्होंने आश्वासन् पाया था।–

मैंने तुम्हें पुकारा है 'मेरे समुद्र'। मेरी आत्मा जानती है तुम प्रेम हो यानी समुद्र हो। प्रेम और समुद्र को मेरी सखी ने इतना घुला–मिला दिया है कि मैं भी इन्हें अलग नहीं कर पाती– और जब भी कोई सागर-तट देखती हूँ, तुम्हें याद कर लेती हूँ। मैं जानती हूँ तुम मेरे समुद्र हो, अनन्त और अथाह हो, पर तुम्हें बताओ, कभी-कभी ऐसा क्यों होता है कि समुद्र एक नीला धब्बा बनकर मेरे सामने आ जाता है– रोशनाई की एक बड़ी बूँद। क्षितिज की गोलाई में बंधी यह नीली बूँद मेरे लिए किसी इंकपॉट से ज़्यादा महत्त्व नहीं रखती। मैं समझना चाहती हूँ कि इस बूँद से हम जन्म-जन्मान्तरों तक अपनी कथा लिखते चले जायें, तब भी यह ख़त्म नहीं होगी। मैं यह समझना ही नहीं चाहती, जानती भी हूँ; पर फिर भी मैं इस नीली बूँद का आकार भूला क्यों नहीं पाती? मैं जो समुद्र को क्षितिज की गोलाई में बंधा देखती हूँ, क्या वह मेरा ही दोष नहीं है, मेरी दृष्टि का दोष?

मेरी खुली आँखें क्षितिज के पार नहीं देख पातीं, तब क्या इन्हें मूँद लूँ?– केवल आँखें बन्द करके ही मैं समुद्र के अनन्त और अथाह रूप का दर्शन कर सकती हूँ।– जहाँ से टकराकर मेरी दृष्टि लौट आती है– वह क्षितिज तुम्हारा घर है, तुम्हारा संसार है, तुम्हारी वह सीमा है, जिससे परे मैं तब तक नहीं जा सकती, जब तक मेरी आँखें खुली रहती हैं। उस क्षितिज से बंधा तुम्हारा असीम रूप मेरे लिए नीली बूँद बन रह जाता है। मैं जानती हूँ क्षितिज कुछ नहीं है, वह केवल मेरी पलकों की परछाँई मात्र है, वह मेरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दृष्टि का छल है ; पर वह छल तो है ही जो मुझे नित छलता है और तुम्हें नीली बूंद कह कर मुझसे बिछुड़वा देता है। यह कौन-सा उपाय है कि मैं इस छल को छल मानकर छोड़ सकूँ ?

मैंने तुमसे एकबार कहा था, "तुम इस क्षितिज को तोड़ दो, क्योंकि इसके बग़ैर मैं तुम्हारे अनन्त रूप का दर्शन नहीं कर सकती, तुम्हें पा नहीं सकती और प्रेम की सम्पूर्ण प्राप्ति मेरी विवशता है।" तुमने कहा था (तुमने कहा नहीं था तुम्हारी ओर से मैं कह रही हूँ।)– "मुझे क्षितिज नहीं दिखायी देता, फिर मैं क्या तोड़ूँ ? तुम भी देख सको तो देखो, क्षितिज कहीं नहीं है, यह केवल दृष्टि का धोखा है, और यदि तुम इस धोखे को न तोड़ सको, तो भी मुझे पाओ ; क्योंकि मुझे इस क्षितिज ने बांधा नहीं है, बाँटा नहीं है। मैं इसके होते हुए भी मुक्त हूँ, अविभाज्य प्रसारित हूँ।"– मैं जानती हूँ क्षितिज तुम्हें नहीं दिखायी देगा, क्योंकि तुम उसके परे भी अनन्त और नित्य हो। वह तुम्हारी विषवत् रेखा नहीं है, जो तुम्हारा विभाजन कर दे, तुम तो उसमें भी हो, उसके इस पार और उस पार भी हो।

जब मैंने तुम्हें ज़्यादा पाना चाहा है और चाहा है कि मेरी खुली आँखें क्षितिज को भेदकर उसके पार देख सकें, तब क्षितिज की दीवार और भी बड़ी होकर मेरे सामने मेरे निकट आ गयी है। मेरी आँखें फैलती चली गयी हैं और दीवार भी फैलती चली गयी है। यह तभी हुआ है, जब तुम्हारी सम्पूर्ण प्राप्ति के लिए मेरी विकलता भट्टी बन सुलग उठी है– और ऐसे समय में तुमने कहा है, क्षितिज है और तुम उसे तोड़ नहीं सकते। क्षितिज नहीं है, अब यह बात मेरी हो जाती है, क्षितिज है, यह तुम्हारी बात हो जाती है। जब क्षितिज है और रहेगा, तब तुम भी मेरे लिए नीली बूंद ही रहोगे, सागर नहीं।

यह मेरी दृष्टि का संकोच है कि मुझे क्षितिज दिखायी देता है, तुम दिखायी नहीं देते। यह संकोच सदा अभंग रहा है, ऐसा मैं नहीं मानती, क्योंकि तब मैं तुम्हारे साथ वे अमर क्षण कैसे जी पाती, जिनकी बात मैंने कही है। तब तो तुम्हारे प्रेम की भी सीमाएँ हो जातीं और मैं उनमें भटक कर रह जाती। मेरी जिन खुली आँखों ने क्षितिज की दीवार देखी है, उन्हीं खुली आँखों ने क्षितिज-पार लहराती उच्छल तरंगों को भी देखा है। इस पार का समुद्र क्षितिज-बन्दी हो गया हो, उस पार का समुद्र क्षितिजहीन रहा है, और तब मेरी दृष्टि ने जितनी दूर देखना चाहा है, देख लिया है, जहाँ तक पाना चाहा है पा लिया है। और ऐसी स्थिति में क्षितिज की वह दीवार मुझे संगत ही लगी है, क्योंकि

[शेष पृष्ठ ९२ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो कविताएँ

●

ज्योत्स्ना मिलन

मेरा घर

आँखों से बना हुआ है
मेरा घरः
जिसके दरवाजे आँखें,
खिड़कियाँ आँखें,
दीवारें आँखेंः
जल की लहरों सा नाजुक,
मन की परतों सा नाजुक,
जिसे आँखों से छूने में भी डर लगता है।

अमलतास से बना हुआ है
मेरा घर,
जो मेरे बोये हुए सूर्य-बीज से
फूट निकला थाः
जो सदा रोशन
नव-नवीन सूर्य-फूलों में खिलता है।

दीपों की अनेक लौ से
बना हुआ है मेरा घरः

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विराट के सम्मुख
आरती-सा डोल रहा है मेरा घर...।
मैं दूर हूँ...
बहुत दूर हूँ...
लेकिन आँखों की ऊष्मा से,
फूलों की गन्ध से,
आरती की श्रद्धा से
मुझे छू रहा है मेरा घर...!

●

हम मिले

हम मिले,
और काल का यह तना
झुक गया,
पत्तों की हरी घनी घटा के बोझ से
पर आज,
तुम्हारी प्रतीक्षा की
इस वेला में
नये-पुराने,
सभी पत्ते तोड़ चुकी मैं।
अब तो सिर्फ,
खड़ा नज़र आता है
काल का वैसा ही तना,
और पत्तों में ढँपे हुए
चरण उसके...!

●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[देवांशिनी का आत्म-निवेदन–पृष्ठ ८९ का शेषांश]

मुझे प्रतीति हुई है कि दीवार से टकराकर लहरें और भी उद्दाम और वेगवती हो गयी है, उनमें और भी गतिमयता आ गयी है, प्रेम की धार और भी तीक्ष्ण हो गयी है। तब मैंने जाना है कि क्षितिज की काली गोलाई केवल दुर्ग की दीवार नहीं है, वह शाणयंत्र है, जिसने सागर में धार पैदा की है। उस समय मुझे पूरी प्रतीति हो जाती है कि यदि यह दीवार न होती –जिससे टकराकर समुद्र हर पल तीक्ष्ण और तीव्र हो उठता है तो उसकी मोटी नोक मेरे अन्तर को भेद न पाती। हर पल तराशनेवाला प्रेम ही अमर और अनन्त क्षणों की सृष्टि कर सकता है। जिसमें आश्वासन है तो विकलन भी, प्राप्ति है तो अतृप्ति भी। ऐसे प्रेम में आश्वासन और तृप्ति होकर भी 'अभी और' का आग्रह कभी कम नहीं होता।

जब मैं तुम्हारे प्रति अपने को खोलती चली जाती हूँ, तब कहीं मेरा अहम् मुझे टोंक देता है। मैं अपने पाप-पुण्यों की कथा तुमसे निर्द्वन्द कहती चली जाती हूँ, लेकिन तुम्हारे प्रति मेरा विगलन जब अपनी पराकाष्ठा पर जाने लगता है, तब मेरा अहम् या मेरा अभिमान मुझसे कहता है–इतनी भी विवशता क्या कि कहीं अपना 'स्वत्व' रहने ही न दे। फिर भी देखती हूँ कि पहले के पत्रों में अपने को निवेदन करने में, आत्म-स्वीकरण में जितनी बाधा थी, अब उतनी नहीं है। अब तो ऐसा लगता है कि रात छँटती जा रही है, और दूर कहीं सूरज किरणों की वल्गा थामे झुरमुटों को पार करता चला आ रहा है। सरोवर की आँखें खुलने लगी हैं। मुझे विश्वास है जिस दिन मेरे 'कन्फेशन्स' पूरे हो जायेंगे, सरोवर अपनी सहस्र-सहस्र आँखों से अपने को देख लेगा। जब तक संगोपन शेष है, जब तक सूरज और सरोवर के बीच झुरमुटों की परतें हैं, तब तक मेरा अहम् भी कभी न कभी टोंकता ही रहेगा।

मेरा अहम् आज मुझसे कह रहा है कि मैं तुमसे यह न कहूँ कि तुम्हारे अभाव में मुझे हर पल मत्यु का साक्षात्कार होता है। यह ठीक है कि मैंने तुम्हारे साथ अमर पलों को जीकर देखा है, लेकिन यह भी झूठ नहीं है कि तुम्हारे साथ मैंने मृत्यु को भी भोग कर देखा है। तुम ही एक हो जो जीवन और मृत्यु दोनों ही मुझे दे सके हो। मैंने तुम्हारे पास रहकर एक साथ जीवन और मरण का साक्षात्कार किया है। फिर भी यह सच है कि मैंने तुम्हारे साथ इन दोनों के सौन्दर्य-पक्ष का दर्शन किया है। मेरा पिछला समय भी मृत्यु की विभीषिकाओं में गुज़रा है, लेकिन वह मृत्यु बहुत वृद्धा और कुरूपा थी। वह वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मृत्यु नहीं थी जो स्वयं भी शाश्वत है और जिसमें जीवन भी शाश्वत रहता है। वह वह मृत्यु थी, जो स्वयं भी अपंग थी और जिसने जीवन को भी अपाहिज़ बना मरण दे रखी थी। न वह जीवन को ही मुक्त करती थी और न स्वयं को ही छुटकारा देती थी।

इन विभीषिकाओं का संगी प्रमोद था, उसकी सीमाएँ थीं। मैं जानती हूँ जो अमृत न दे पाया, वह मरण भी कैसे देता? उसने सीमाओं से बंधा दरिद्र जीवन दिया। उसने सीमाओं से बंधी कुरूप मौत दी। पर जैसे वह जीवन मैं नहीं अपना पायी, वैसे ही उस मौत को भी अंगीकार न कर सकी। सीमित जीवन, सीमित मृत्यु दोनों ही तो मुझे स्वीकार नहीं थे। सोचती हूँ यदि तुम्हारे निकट मुझे असीम जीवन और असीम मृत्यु का सुख और वैभव न मिला होता तो शायद मैं प्रमोद के दिये जीवन और मौत के शृंखलित झूले में झूलती रहती और थोड़ा बहुत सुख भी पा लेती, पर तुमने ऐसा नहीं करने दिया। मेरे अनजाने ही तुम मुझे उस जीवन और उस मृत्यु से खींच लाये। सच, मैं नहीं जान सकी थी कि यह तुम हो जो मुझे खींच रहे हो। पर आज लगता है वह दैव या दुर्दैव नहीं था, वह तुम ही थे। उस खिंचाव की पीड़ा को मैंने तुम्हारी दी पीड़ा जानकर सहन नहीं किया है। उसे मैंने अपने ही अनजाने सहा है, लेकिन आज लगता है वह अकारण नहीं थी, अकारथ नहीं थी।

मुझे वे दिन याद आते हैं, जब हैदराबाद के बड़े-बड़े जलकुण्डों के किनारे कभी कुछ लम्हों के लिए मैं तुमसे मिल लेती थी। मुझे वे दिन याद आते हैं, जब मैं अपनी खिड़की पर बैठी तुम्हारी राह देखा करती थी और फिर तुम कुछ देर के लिए आकर मेरे पास से चले जाते थे। मैंने उन क्षणों में जाना था जीवन क्या होता है और मृत्यु क्या होती है। मिलन क्या होता है और विरह किस चीज़ का नाम है। तुम मेरे पास रहते थे और मुझे तुम्हारी याद आती थी। मैं तुम्हारे मिलन में बँधी होती थी और मुझमें अनन्त विरह खुल जाता था। मैं तुम्हारे जीवन के अमृत क्षण जी रही होती थी और मृत्यु की प्रतीति करती रहती थी। उन अमृत-पलों में मुझे इच्छा होती थी कि मैं मर जाऊँ, क्योंकि वह मरण-सुख मुझे दुर्लभ हो जायेगा। मृत्यु की वह रूपभरी सुखद गोद मुझे अन्य कहीं, कभी न मिल सकेगी। मैंने तुम्हारे साथ मिलन और विरह, अमरत्व और मरण दोनों को एक साथ एकाकी क्षण में जाना था। और मुझे लगा था, इनमें कहीं कोई भेद नहीं है। ये अविभाजित हैं, अविभाज्य हैं और इनका सुख और आनन्द भी अविभाज्य है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने तुम्हारे साथ जीवन और मृत्यु को, मिलन और विरह को, एक पल में एक साथ अनुभव किया है जरूर–पर इन दोनों के अलग-अलग रूपों की प्रतीति भी की है। कभी जब तुम्हारी हथेलियाँ मेरी हथेलियों को अपनी मुट्ठी में कैद कर लेती थीं, तब मुझे लगता है, यह मिलन का स्पर्श नहीं है, यह केवल वियोग है। यह जीवन का जीवन को बाँधना नहीं है, केवल मृत्यु है। मुझे महसूस होता था कि वह मेरी हथेली नहीं है, जिसे तुम्हारी हथेली न बन्द कर लिया है-वह मिलन है, जिसे तुमने अपनी हथेली से ढँक दिया है और ऊपर उछाल दिया है केवल विरह। मुझे लगता था तुम जो मेरे सामने अभी बैठे हो–अभी नहीं रहोगे–चले जाओगे, और तुम्हारे प्रत्यक्ष में भी मुझे उस परोक्ष मृत्यु के दर्शन हो जाते थे, जो तब तक नहीं आयी थी। उस समय काल मुझमें बहुत जागरूक हो गया था। उस समय, समय मुझमें नहीं रहता था, मैं समय म रहती थी, तुम समय में रहते थे और वह समय जीवनरहित विशुद्ध मृत्यु का बिम्ब बन मेरे और तुम्हारे बीच खड़ा रहता था।

यह मृत्यु अनन्त नहीं थी, सुखकारक नहीं थी, यह वही मृत्यु थी, जो समुद्र में क्षितिज का छल उत्पन्न करती है और अथाह अनन्त सागर को नीली बूँद में परिवर्तित कर देती है। यह वह मृत्यु नहीं थी, जिसमें जीवन समाया रहता है, यह वह मृत्यु थी, जो जीवन का अन्त होती है। यह जीवनविहीन मृत्यु थी।

प्रमोद के साथ मैंने इस मृत्यु को भी नहीं जाना। प्रमोद के साथ मैंने जीवन को भी वीभत्स रूप में जाना और मृत्यु को भी। वहाँ ऐसी कोई मृत्यु नहीं थी, जो सागर में क्षितिज का छल उत्पन्न करे, क्योंकि वहाँ सागर नहीं था। प्रमोद में मैंने वह समुद्र नहीं पाया था, जो क्षितिज पार भी बहता है और जिसकी उत्ताल विराटता को पकड़ पाने के लिए मेरी दृष्टि क्षितिज बींधने का प्रयत्न करती है। वहाँ जो कुछ था इस पार था और प्राप्त था, सहजसुलभ था। वहाँ जो कुछ था गोल था, कोमल था, तीक्ष्ण नहीं था, तीव्र नहीं था, जो चाकू की धार-सी अपनी विदग्धता से चिरकाल के लिए मेरा हृदय बींध देता। मेरा हृदय बिंधा नहीं, बँध गया था। जितने भ्रामक-हलके रूप से उसकी जल-लहरियों ने मुझे बाँधा था, वैसे ही खोल भी दिया है। शरीर पर पानी गुजर जाने का निशान पड़ गया है। मुझे लगता है यह वही नीला धब्बा है, जिसे मेरी दृष्टि की संकुलता ने देखा था। तुम्हारे अनन्त और अथाह को जो मैं नीली बूँद समझ आगे बढ़ गयी थी, मानो उसी का किंचित् परिणाम यह निशान है, जो जितना सिकुड़ता है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ना ही गहरा होता जाता है।
यह निशान पूरा मिट सकता है तभी-
ब तुम्हारा क्षितिज मेरी दृष्टि को
क्त कर दे। तुम्हारी इस नीली बूंद
ो (जिसकी सत्ता मेरा अज्ञान है) जिस
दिन सारी दीवारें भेद कर अनन्त और
थाह रूप में देख पाऊँगी, और मेरा
यह देख पाना सदा के लिए अविकल
हो जायेगा, उस दिन तुम सच जानो,
प्रमोद के दिये इस दाग की मलिनता कहीं
नहीं रहेगी। तुम या मैं या कोई भी
कभी यह नहीं मानना चाहेगा कि कभी
मेरे शरीर पर से कोई पानी गुजरा था
और उसने अपना निशान डाला था।
मेरा यह प्रयास इसलिए नहीं है कि मैं
उस निशान को पोंछ कर अचिन्हित हो
रहना चाहती हूँ। मेरा यह प्रयास इस-
लिए है कि वह निशान एक और 'इकाई'
बन कर मेरे पास न रहे, तुम्हारे अनन्त
जल-समुद्र में एक बूंद बन प्रविष्ट हो
जाये तो उस अपरम्पार नीलिमा में वह
नीला धब्बा मुझे अस्वीकार्य न होगा।
उस धब्बे की कथा को तुम आत्मसात्
कर लोगे, अन्तरित कर लोगे, इसीलिए
तुम्हारे प्रति है मेरा यह पाप-स्वीकरण,
मेरा यह आत्मनिवेदन।

★

बेंगाल केमिकल का
सुगंधित ब्राह्मी केश तैल

बड़ी कारीगरी के साथ सुगंधित यह आयुर्वेदिक केश तैल मस्तिष्क को शीतल और शान्त रखता है। ब्राह्मी केश तैल के नियमित व्यवहार से मानसिक क्रान्ति दूर होती है और आराम की नींद आती है। केशों की स्वस्थ वृद्धि में भी यह सहायता करता है।

बेंगाल केमिकल

कलकत्ता • बम्बई • कानपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

याद रखिए

छोटा परिवार
सुखी परिवार

बच्चों को अच्छी शिक्षा, अच्छा भोजन और एक स्वस्थ जीवन मिलना चाहिए। इसलिए, बुद्धिमान माता-पिता उतने ही बच्चे पैदा करने का निश्चय कर लेते हैं, जितनों की वे ठीक से परवरिश कर सकते हैं।

संतति निग्रह के अनेक तरीके प्रचलित हैं लेकिन सबसे नया तरीका 'लूप' है। यह तरीका आसान है और बरसों तक कामयाब रहता है। इसके अलावा यह मुफ्त मिलता है।

'लूप' के बारे में एक प्रशिक्षित डाक्टर से सलाह और जानकारी प्राप्त करने के लिए कृपया अपने निकटतम :

परिवार कल्याण नियोजन केन्द्र

से सम्पर्क कीजिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[मुक्ति.....पृष्ठ ८१ का शेष]

और व्यर्थ है। जीना बोझ है। खाक करना है जीकर। सब जी का जंजाल है, नहीं तो।

और मनोरमा बैठी है सहती हुई विषम एक विथाको, कि जिसको टालने का या निबटाने का उपाय नहीं है।

एक, दो, पाँच, दस मिनट हो गये। नहीं, सहा नहीं जाता है। था अब तक कि होने दो जो हो। मैं क्या करूँ? लेकिन वह सब था अब नहीं चल रहा है। नहीं, कुछ करना होगा। अपने घिर कर बैठना नहीं हो पायगा, नहीं हो पायगा। मनोरमा अपनी जगह से उठी। अट्ठावन वर्ष की मनोरमा।

चलते-चलते सोफों-कुर्सी के पीठ के पीछे वह पहुँच गयी। लेकिन पति पढ़ रहे हैं। उन्हें नहीं मालूम। उसने कन्धों पर हाथ रखा। उन्हें नहीं मालूम। कन्धों को दबाया। उन्हें नहीं मालूम।

ज़ोर से दबाया। नहीं मालूम।

"सुनो।"

"क्या है! मुझे पढ़ने दो।"

पत्नी ने झुक कर किताब उनके हाथों से छुड़ाली और वहीं से ज़ोर से मेज़ पर फेंक दी। और हँस कर कहा, "पढ़ो न!"

"यह क्या बदतमीजी है।"

"अच्छा अच्छा, उठो।"

"किताब लाओ पहले मेरी उठा के।"

"किताब ही पढ़ोगे?"

"नहीं तो पढ़ूं तुम्हारा सिर?"

"सिर क्यों, और कुछ नहीं है? आओ देखो।"

"हटो तुम, हट जाओ यहाँ से।"

मनोरमा सामने आ गयी थी। उसने उठाकर पति का हाथ ऊपर लिया। पति ने झिटक दिया।

वह और निकट आ गयी। बोली—"सुनते हो, मैं भारी बहुत हो गयी हूँ। तुम्हें तकलीफ न हो।"

"बको मत।"

"देखो, कह रही हूँ। फिर जो बुरा मानो।"

"क्या हुआ है तुम्हें! शर्म करो ज़रा?

"तो लो।"

मनोरमा बैठे हुए पति की जानु पर धब्ब से आ बैठी और चिबुक में हाथ देकर पति के चेहरे को ऊपर उठाया और चूम लिया।

पति ने कहना चाहा कि कुछ तो शऊर सीखो। पर उसका समय न था और मालूम हुआ कि अब उसके लिए कहीं कुछ नहीं रह गया है। न कविता, न सभ्यता, न मुक्तता।

स्वयं जो मिट गया है तो क्या इसी में सब मिल गया है!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

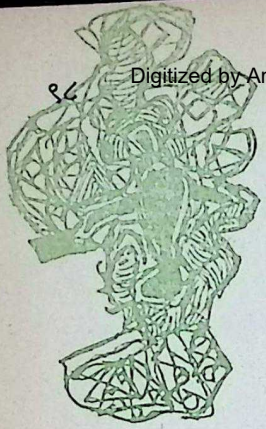

चित्र : वन्दना जैन

विश्व-व्यापी आधुनिक काव्य-आन्दोलन के गिने-चुने दो-चार आद्य उन्नायकों में जर्मनी के महाकवि रेनर मेरिया रिल्के भी थे। बीसवीं शती के कवियों में, किसी भी एक कवि की उतनी चर्चा नहीं हुई, जितनी रिल्के की हुई। रिल्के जन्मजात योगी थे। पारदर्शी अन्तःप्रज्ञा का तृतीय नेत्र अपने ललाट में उन्मुक्त लेकर ही मानों उनका जन्म हुआ था। अपने काव्य में उन्होंने द्रश्य-जगत और द्रष्टा अन्तःपुरुष का सर्जनात्मक साक्षात्कार किया है। धर्म, दर्शन, अध्यात्म की रूढ़ मान्यताओं से परे उन्होंने आधुनिक मानवता के लिए, अपने दर्शन-अनुभव के वातायन पर, मुक्त भगवान और मुक्त अध्यात्म के द्वार खोले हैं।

धार्मिक कविता और आन्तरिक अध्यात्मः महाकवि रिल्के

रमेशचन्द्र शाह

"...मैं जो झंझा के वेग की तरह तुम्हारे अस्तित्त्व में पैठ चुका हूँ—कीमियागर की जादुई परसलीला-सा तुम्हारे सम्पूर्ण में रच चुका हूँ....ओ प्रिय! बोलो तुम्हारे अन्तर में मेरी उपस्थिति का इससे जीता-जागता प्रमाण और क्या हो सकता है? मर्लिन! काश कि तुम हमारी मन-आत्मा के इस सच्चे ऐश्वर्य को, हमारे हृदयों की इस अपरूप विस्तार-लीला को मेरी ही तरह समूचा-समूचा पा सको, अनुदिन-अहर्निश इस रहस्य में रम सको तो तुम कदाचित् इतनी तल्लीन, इतनी निरपेक्ष हो जाओ कि मेरे तुम्हारे मिलन की—कायिक नैकट्य की स्वाभाविक प्रतीक्षा तक स्वयमेव, स्वेच्छापूर्वक स्थगित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होती चली जायगी.... ताकि तुम आत्मा के इस नूतन ब्रह्माण्ड से, असीम चैतन्य के इस आप्लावी आलोक से अधिकाधिक घनिष्ठ परिचय प्राप्त करती रह सको....यही हमारी जिजीविषा है—रचना.....नित-नूतन रचना....और हमारा सम्बन्ध एक उन्मोचन है; .... रचना के इस विशाल ब्रह्माण्ड में ही हमारा सायुज्य है। आओ इस नूतन पावनतम धर्म की मेरे साथ दीक्षा लो और भावना के इस विराट् विश्व के सारे नियमों का धैर्यपूर्वक अनुसन्धान करने के लिए तत्पर हो जाओ। मेरी कामना है मर्लिन, कि यह संकल्प तुम्हारे लिए इस क्रिस्मस की अनुभूति को और अधिक पारदर्शी, उज्ज्वल और समृद्ध बनाये..."

[मर्लिन को लिखा पत्र]

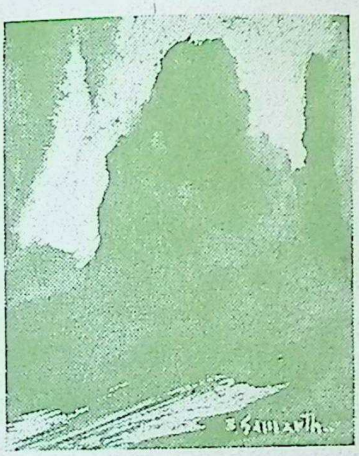

●

जब कभी मैं आधुनिक विश्व-काव्य के विकास के दो छोरों की कल्पना करता हूँ, एक छोर पर इलियट और दूसरे छोर पर रिल्के को पाता हूँ। आधुनिक संवेदना की जटिलता का इससे बड़ा दिग्दर्शन क्या हो सकता है कि इसके दो चोटी के प्रतिनिधि कवियों की भावभूमियों और जीवन-दर्शन में इतना वैपरीत्य हो; जबकि दोनों की काव्य-साधना एक धार्मिक गम्भीरता का वैशिष्ट्य लिये हुए है: दोनों ही ने अपने-अपने ढंग से युग-यथार्थ के हार्द में पैठ कर, काल-प्रवाह में मानव-नियति का पूर्ण साक्षात्कार करने की कोशिश की है और समान दायित्व चेतना के साथ वर्तमान की मूल्य मूढ़ता में से मनुष्य को उबारने, और उसके भविष्य के लिए स्थायी आन्तरिक मूल्यों की सर्जना करने की दिशा में इस युग के कवियों का नेतृत्व किया है। अपने युग की मूलोच्छिन्न मानवता के लिए एक ठोस आधार—प्रामाणिक आस्था—की तलाश इन दोनों के रचना-क्रम की आधारभूत प्रेरणा है और यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि इस अनिवार्य, प्रामाणिक आस्था को अर्जित करने के लिए जितनी तपस्या इन दो कवियों ने की है, उतनी इस युग के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी भी अन्य कवि ने नहीं की होगी। साधना की यह एकाग्रता, आस्था का यह प्रामाणिक स्वर ही इनके कृतित्व को उच्च कवित्व के साथ-साथ एक प्रकार की पैगम्बरी गरिमा भी प्रदान करता प्रतीत होता है। विशिष्ट आध्यात्मिक चेतना से सम्पन्न इन दोनों कवियों की रचनाओं में बहुत-कुछ ऐसा है, जिसका प्रभाव अन्ततः धार्मिक कविता सरीखा प्रभाव है। फिर भी दोनों की 'धार्मिकता को किसी एक सामान्य परिभाषा में बाँधना असम्भव जान पड़ता है। ऐसा क्यों है?

साहित्य के इतिहास में हम पाते हैं कि परस्पर बिलकुल विभिन्न संस्कृतियों के सन्दर्भ में रची गयी काव्यकृतियों में भी, जो एक आयाम समानरूप से, समान महत्व के साथ सक्रिय रहा है, वह आयाम धार्मिकता का—या, दूसरे शब्दों में—आध्यात्मिकता का आयाम है। हम यह भी पाते हैं कि इस काव्यगत धार्मिकता का जो असर हमारी संवेदना पर पड़ता है, वह हमारी अपनी जाति-धर्म-गत मान्यताओं से ऊपर और निरपेक्ष सा होता है। यह एक विचित्र विरोधाभास है कि धार्मिकता का असर धर्म निरपेक्ष हो: पर हमारा अनुभव स्वयं इस सत्य का साक्ष्य प्रस्तुत करता है: अन्यथा क्या कारण है कि विलियम ब्लेक का रहस्य-काव्य और ब्राउनिंग का 'राबी बेन एज्रा' और कबीर की अटपटी बानी—तीन एकदम अलग-थलग मान्यताओं—यहाँ तक कि बिलकुल विपरीत परम्पराओं में उत्पन्न कवि एक संस्कारी हिन्दू पाठक के चित्त को—उसमें अन्तर्हित धार्मिक पुरुष को—समान शक्ति से उद्वेलित कर सकते हैं? क्या मनुष्य की चेतना के तल में कोई तत्त्व—धार्मिक तत्त्व—ऐसा भी है, जो उसके परम्परागत धर्म से, याने कि उसकी देशकाल-सापेक्ष, विशिष्ट धार्मिकता से स्वतंत्र अपनी सत्ता रखता है—उससे, केवल उसी से सीमित और संचालित नहीं होता? अगर हाँ—तो हम यह मानने के लिए विवश हो जाते हैं कि उच्च कोटि के धार्मिक-आध्यात्मिक काव्य से संवेदित होने—मूलतः संवेदित होने—का अर्थ इसी धर्मनिरक्षेप, मात्र मानवीय धर्म चेतना के धरातल पर संवेदित होता है। इसी से यह भी निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि स्वयं कवि के दृष्टिकोण से भी, उसकी विशिष्ट काव्यगत धार्मिकता (याकि धार्मिक काव्यात्मकता—मेरी दृष्टि में यह परस्परावलंबन यह अविच्छेद्यता मूलभूत महत्त्व रखती है: धार्मिक काव्य के काव्य-रस को केवल काव्य की कोटि में ग्रहण करने वाले संस्कृति के चार्वाक् मुझे क्षमा करें) का उत्स उसकी विशिष्ट जातिगत धार्मिक मान्यताओं और परम्पराओं में ही नहीं, अपितु उस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देश-जाति-निरक्षेप धर्मचेतना में भी निहित होना चाहिए, जो उसे एक गहरे आन्तरिक धरातल पर मनुष्य-मात्र से—समष्टि-चेतना से संयुक्त और समरस करती है। महान् धार्मिक कविता में इन दोनों उत्सों का सम्मिलित योगदान होता है—उसमें ये दोनों अन्तःसलिलाएँ एक दूसरे को पहचानती—स्वीकारती हुई सार्थक प्रवाहित होती हैं: चाहे स्वयं कवि इस प्रक्रिया के प्रति पूर्णतः चेतन हो या न हो। किन्हीं कवियों में परम्परा अपेक्षाकृत अचेतन स्तरों पर क्रियाशील होती है और किन्हीं में परम्परा (मात्र साहित्यिक ही नहीं—अपितु धार्मिक-आध्यात्मिक-कुल परम्परा) का बोध परिश्रमपूर्वक अर्जित किया जाने के कारण पूर्णतः चेतन हो जाता है: हम पाते हैं कि धार्मिककाव्यात्मकता दोनों ही प्रकार के कवियों में मिल सकती है। दार्शनिक और धार्मिक कल्पना की शक्ति ज्ञानयोग के अन्दर भी उतनी ही संभव है, जितनी भाव योग में। कुछ लोग शुरू से ही निर्वैयक्तिक ज्ञान के स्रोतों में निमज्जित होकर—धर्म और दर्शन की दीर्घ परम्पराओं के निरन्तर अध्ययन और मनन द्वारा अपनी धार्मिकता का साक्षात्कार करते हैं; तो दूसरी ओर ऐसे भी लोग होते हैं, जो प्रारम्भ से ही अपने ही अन्तःकरण की प्रवृत्ति को अन्तिम प्रमाण मानकर चलते हैं और अपनी ही व्यक्तिगत आन्तरिकता को गहराते हुए उसी के अन्दर अपनी कलात्मक और अन्ततः धार्मिक जिजीविषा की परिपूर्ति खोजते हैं: व्यक्तित्व का विलयन नहीं, बल्कि व्यक्तित्व का उत्तरोत्तर सान्द्रीकरण इनकी जीवन-प्रक्रिया और रचना-प्रक्रिया को निर्धारित करता प्रतीत होता है। ऐसा नहीं कि ये दोनों प्रवृत्तियाँ एक ही व्यक्ति के अन्दर मौजूद नहीं हो सकतीं, पर इतना अवश्य कहा जा सकता है कि कुछ व्यक्तियों में पहली का प्राधान्य होता है और कुछ में दूसरी का। हाँ समय के साथ—विकास की अनिवार्य प्रक्रिया—में गौण का प्रधान में तिरोभाव हो जाना स्वाभाविक है।

इस दृष्टि से आधुनिक काव्य-चेतना के एक छोर पर यदि हम टी. एस. इलियट को पाते हैं तो दूसरे छोर पर रिल्के को। इलियट ने कविता को "व्यक्तित्व से पलायन" कहा था और उसका यह सूत्र उसके कृतित्व के लिए मौलिक महत्त्व का सूत्र है—उतने ही मौलिक महत्त्व का, जितना कि रिल्के का 'आन्तरिकता का दर्शन' स्वयं रिल्के की कविता के लिए। हम देखते हैं कि यह आन्तरिकता का दर्शन—यह आन्तरिक अध्यात्म रिल्के की रचनात्मक (और मानवीय) आस्था का प्रस्थान बिंदु ही नहीं, बल्कि मूल-आधार है। दोनों कवियों के साथ एक समस्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थी: आधुनिक युग में मनुष्य का भयानक अकेलापन और खोखलापन। इस समस्या को दोनों एक दूसरे से बिलकुल भिन्न समाधान देते हैं।

इलियट के लिए इस संसार में मानवात्मा की यात्रा 'मेजाई की यात्रा' के समान होनी चाहिए—इसी में उसकी सार्थकता और परिपूर्ति है। आध्यात्मिक आत्म-साक्षात्कार—'ईश्वरीय कृपा' (Grace) को प्राप्त करने की राह व्यक्ति के निरन्तर आत्मदान और आत्मोत्सर्ग से ही फूट सकती है। मनुष्य अधूरा और दुर्बल है। मूलपाप के अभिशाप का ज्ञान ही उसे सही आत्म-ज्ञान दे सकता है। वह स्वतः सम्पूर्ण नहीं है— स्वतःसम्पूर्णता का अभिमान उसे पतन की ओर ले जाता है। अस्तित्त्व का और सृष्टि का मूल पैटर्न सत्-असत् के चिरन्तन द्वन्द्व का पैटर्न ही है और सत्-असत् का विवेक ही मनुष्य को मुक्ति की दिशा में प्रेरित करता है। इस विवेक के अभ्युदय के साथ ईसाई नम्रता का अटूट सम्बन्ध है। इतिहास को अपनी योजना के मुताबिक मनोवांछित मोड़ देने का अहंकार तब इस विवेक के सामने हास्यास्पद प्रतीत होता है। क्योंकि पूर्ण परमात्मशक्ति का विधान मनुष्य के अधकचरे विधान की अपेक्षाओं से निर्धारित नहीं होता। साथ ही चूंकि किसी भी धार्मिक अनुशासन से रहित इस अराजक युग में मनुष्य की भावनाएँ विकेन्द्रित और उच्छृंखल हो गयी हैं, अतएव मात्र भावना की गहराई व्यक्ति या समाज के लिए पर्याप्त नहीं है, अतीत की पारमार्थिक उपलब्धियों का श्रमपूर्वक अर्जित ज्ञान ही वह कसौटी है, जिस पर व्यक्तिगत भावना की मूल्यवत्ता परखी जा सकती है। अन्यथा, ऐसे किसी निर्वैयक्तिक मानदण्ड के अभाव में गहरी से गहरी भावना को भी मनुष्य के अराजक व्यक्तिवाद से ग्रस्त होने का खतरा बना रहता है, जोकि आधुनिक युग की सबसे बड़ी विडम्बना है।

दूसरी ओर रिल्के का आग्रह प्रथम और अन्तिम रूप से अनुभूति पर है: व्यक्ति की अपनी आन्तरिकता की क्रमशः गहराती हुई अनुभूति पर। इस आंतरिकता के पूर्ण प्रस्फुटन में ही मानव भविष्य के प्रति कवि की अपराजेय आस्था निहित है। यह 'आन्तरिकता' रहस्यमय और दिव्य है—इसी के साक्षात्कार में व्यक्ति का विराट से साक्षात्कार सिद्ध हो जाता है। इस आंतरिकता की परिकल्पना रिल्के के लिए जीवन-जगत् की किसी भी धार्मिक परिकल्पना से कम धार्मिक या कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। उसने इस 'आंतरिकता' को एक स्वतःसम्पूर्ण दार्शनिक व्यवस्था भी प्रदान कर दी है। इस सारी परम्परागत आस्थाओं से वंचित इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आश्वासनहीन युग में, अन्य अनेक कवियों की तरह अपनी निरीह निरपेक्ष वैयक्तिक संवेदना के बल पर ही कवि कर्म को समर्पित रिल्के इस निष्कर्ष पर पहुँचने को विवश हुआ कि अनुभूति--भावनात्मक आन्तरिक अनुभूति—ही समस्त अस्तित्व और समस्त ज्ञान का—संक्षेप में 'वास्तविकता' का एक मात्र मानदण्ड है। उसके लिए वास्तविकता–सत्य—वहीं है, जहाँ व्यक्ति की इस भावनात्मक आंतरिकता को मुक्त उल्लास की—स्वतः-सम्पूर्ण आत्मवत्ता की प्रतीति होती है। अपने इस भावनात्मक, आंतरिक व्यक्तित्व का विकास और इसके पूर्णत्व की उपलब्धि में ही वह कवित्व की सार्थकता देखता है। जैसा कि आलोचक हॉल्थूसन ने लिखा है—"रिल्के की कविता का मूलाधार एक प्रकार का अद्वैतवाद है—भावना का अद्वैत–यह भावनात्मक अद्वैतवाद ही उसके सन्देश को अनोखा आकर्षण प्रदान करता है—यही उसे वह रहस्यात्मक व्यक्तित्त्व देता है, जिसने एक बारगी विश्व भर के कवियों का ध्यान आकृष्ट कर लिया है। किन्तु यह अद्वैतवाद उसकी शक्ति ही नहीं, प्रत्युत सीमा भी है। इसी के एकान्त आग्रह के फलस्वरूप उसके जीवन-दर्शन, और सृष्टि-चेतना में कई त्रुटियाँ भी उत्पन्न हो गयी हैं।"

ये त्रुटियाँ क्या हो सकती हैं? यहाँ रिल्के के जीवन-दर्शन का विस्तृत विश्लेषण अभीष्ट नहीं है। उसकी कविता के विचारपक्ष की विवेचना के लिए अलग विश्लेषण आवश्यक होगा। सम्प्रति इतना ही संकेत काफी होगा कि जहाँ तक धार्मिक कविता का सम्बन्ध है, वर्तमान योरोपीय मनीषा ईसाई ज्ञान-परम्पराओं से अधिक प्रभावित है—इसमें इलियट के कृतित्व का भी हाथ है—और धार्मिक कविता का वह आयाम जो इस परम्परा से बाहर पड़ता प्रतीत होता है, वह वैचारिक दृष्टि से आलोच्य हो जाता है। यों कवि-आलोचकों का भी एक सशक्त वर्ग ऐसा है, जो धार्मिक रहस्यात्मक काव्य के प्रति बिना किसी धार्मिक पूर्व-ग्रह के काफी संवेदनशील और स्वीकारी भाव रखता है और इस वर्ग के लिए रिल्के की कविता का महत्त्व दिनोंदिन बढ़ता ही गया है। इस सन्दर्भ में स्टीफेन स्पेण्डर का दृष्टान्त हमारे सामने है। स्पेण्डर पूर्व इलियट के प्रमुख अनुयायियों में थे। पर बाद में इलियट के रोमन कैथोलिक धर्म में दीक्षित हो जाने के बाद वे कुछ उपराम हो गये। उनका बहुचर्चित लेख "द मॉडर्निस्ट मूवमेण्ट इज़ डेड" उत्तर-इलियट के काव्य में बढ़ते हुए ईसाई प्रभाव की भर्त्सना करते हुए आधुनिकता-आन्दोलन की नेतृत्वहीन समाप्ति की घोषणा करता है। किन्तु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रिल्के के कृतित्व के प्रति स्पेण्डर की दृष्टिकोण शुरू से आखिर तक आस्थावान रहा है। इलियट की ईसाईयत ने उन्हें इलियट की धार्मिक कविता से उपराम कर दिया, किन्तु रिल्के के आन्तर-अध्यात्म के—उसकी रहस्यवादी कविता के—प्रति उनका उत्साह हमेशा कायम रहा है: रिल्के के कृतित्व पर कुछ बहुत ही संवेदनशील समीक्षा-भी उन्होंने लिखी है।

असल बात यह है कि रिल्के प्रमुख रूप से रहस्यानुभूतियों का कवि है—इस नाते वह बॉदलेयर, बलेरी या इलियट की अपेक्षा ब्लेक, रवीन्द्रनाथ ठाकुर और कहीं-कहीं वर्डस्वर्थ के भी अधिक समीप पड़ता है: हालांकि उसके काव्य की युगीन परिस्थितियाँ इनसे एकदम भिन्न थीं और जटिलतर भी;—इस कारण आधुनिक लेखन में ही उसकी सहधर्मी संवेदना की खोज अधिक सार्थक होगी। इस दृष्टि से हम पाते हैं कि आधुनिक युग में डी. एच. लारेन्स एक ऐसा कलाकार है, जिसके साथ रिल्के को सहानुभूति हो सकती थी, क्योंकि दोनों की रचनात्मक धार्मिकता काफी दूर तक समानधर्मी प्रतीत होती है। जैसा कि स्पेण्डर ने संकेत किया है—रिल्के की रहस्यानुभूति बहुत-कुछ उस कोटि की थी, जिसे लॉरेन्स ने 'अदरनेस' की संज्ञा दी है—अनुभूति की वह आत्यन्तिक अवस्था—जहाँ व्यक्ति स्वयं अपनी आत्मसत्ता से पृथक होकर एक अन्य अज्ञात में रूपान्तरित हो जाता है;—परात्मप्रविष्ट होकर स्वयं से अस्वयं हो जाता है। रिल्के की कविता ऐसी ही विरल आन्तरिक अनुभूतियों के साक्षात्कार का माध्यम है—उन्हें पुनर्जीवित करने या कि तीव्रतर और सघनतर करने का अनिवार्य साधन।

उसके काव्यलोक में सभी कुछ इसी आन्तरिक अध्यात्म से अनुप्राणित है—एक स्वतःसम्पूर्ण सृष्टि जो आप अपना प्रमाण है; जिसे किसी परमतत्त्व के आश्वासन की ज़रूरत नहीं (जहाँ आत्मा ही परमात्मा है। हाँ, रिल्के का भावायोग जिस ईश्वर (Deity) पर केन्द्रित है, वह न तो ईसाइयों का सुदूर, सर्वशक्तिमान पिता परमेश्वर है, न शुद्ध, परात्पर ब्रह्म ही। रिल्के का ईश्वर मानवीय भावनाओं की पहुँच से बाहर कोई अगोचर अगम, अदृश्य सत्ता नहीं है। वह तो उसके (मनुष्य के) हृदय की यात्रा की अनिवार्य दिशा, उसका गंतव्य है: दूसरे शब्दों में वह मानव-हृदय की महत्तम, गहनतम सर्जना है।

स्वभावतः ईश्वर की यह परिकल्पना ईसाई मान्यता के विपरीत पड़ जाती है। यहाँ पर यह भी स्मरणीय है कि डी. एच. लारेन्स पर इसी तरह 'एण्टी क्राइस्ट'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होने का आरोप उसके प्रमुख आलोचकों (यथा मिडिलटन मरे) द्वारा लगाया गया था। उन्नीसवीं शताब्दी में दार्शनिक नीत्शे को भी एण्टीक्राइस्ट--उचित ही--कहा गया: हालांकि यह भी सच है कि नीत्शे क्रिश्चियन संवेदना की ही उपज है--बिना क्रिश्चिएनिटी की पार्श्वभूमि के नीत्शे के अस्तित्व की कल्पना एकाएक होती नहीं। बहरहाल ईसाई मान्याताओं के परिप्रेक्ष में रिल्के का काव्य-धर्म चाहे कुछ भी ठहराया जाय, हमारी भारतीय दर्शन-परम्परा के दृष्टिकोण से--जिसमें ईश्वर की परिकल्पना एक साथ आन्तरिक (immanent) भी है और परात्पर (transcendental) भी--रिल्के की धार्मिक संवेदना शायद अधिक मुक्त महानुभूति से ग्रहण की जा सकती है: कदाचित यही कारण है कि अनेक भारतीय कवि--कम से कम हिन्दी कवि--रिल्के को जितना अपने समीप पाते हैं, उतना इलियट को नहीं। उसका सन्देश--भावात्मक सत्ता के अद्वैत के प्रति एकान्त समर्पण भाव और आन्तरिकता में ही सृष्टिमात्र के अन्तर्भूत और वास्तविक होने की कल्पना--हम भारतीयों को विशेष आकर्षित करता है। और वास्तव में देखा जाय तो वैदिक काल के प्रारंभ से ही भारतीय मनीषा ने जिस 'अद्वैत आनन्द' का साक्षात्कार किया है, वह रिल्के की धार्मिकता से, उसकी पूर्वोक्त 'अद्वैत भावना' के दर्शन से कहीं न कहीं कुछ साम्य अवश्य रखता प्रतीत होता है। हमारे समय में भारतीय चिन्ताधारा की इस प्रवृत्ति का पुनराविर्भाव टैगोर की कविता में हुआ था। "आनन्द आत्मा"--तैत्तिरीय उपनिषद् का वचन है। और भारतीय रहस्यवादी परम्परा में व्यक्ति की इस रचनात्मक आन्तरिकता को काफी महत्त्व प्रदान किया गया है। वहाँ व्यक्ति विशुद्ध 'आनन्दात्मा' है और सृष्टि परब्रह्म की लीला और इस आनन्दात्मा की स्वतःस्फूर्त ऊर्जा आत्मा से ही आत्मा की नित-नूतन सर्जना करती रहती है--स्वयं में अपनी अन्तिम सार्थकता और परिपूर्ति पा लेती है--"आनन्दोच्छलिता शक्तिः सृजत्यात्मानमात्मना।" यही कारण है कि रिल्के की आवाज़ हमें अजनबी नहीं लगती--

मैं हूँ--हाँ मैं
ओ अधीर प्राण।
क्या तुम्हें सुनायी नहीं देतीं
ये पगध्वनियाँ
तुम्हें पा जाने को आतुर पर्युत्सुक
ये अनुधावित इन्द्रियाँ.....
मेरी भावनाओं को पंख लग गये हैं
और वे उजले फ़रिश्तों की तरह
तुम्हारे देदीप्यमान चेहरे की

[शेष पृष्ठ १२८ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एन्थॉनी ब्रूक

सन् १९६७ में परमाणविक विस्फोट द्वारा विश्व-व्यापी आध्यात्मिक क्रान्ति होगी ?

हाल ही में इंग्लैण्ड में और अन्य कई देशों में समानान्तर रूप से कई लोगों को एक ठोस रूपोमय व्यक्तिमत्ता का साक्षात् दर्शन हुआ है, जिसका उद्गम सत्ता के किसी दूसरे ही आयाम से होता जान पड़ता है। इस रहस्य-पुरुष ने बारम्बार घोषित किया है कि 'सन् १९६७ के अन्त में परमाणविक विकास के माध्यम से मैं अपने आपको विश्व के सम्मुख प्रकट कर दूंगा। तब सत्य का अवगुण्ठन हट जायेगा, और समस्त जगत में एक अपूर्व रूपान्तरकारी महान क्रान्ति घटित होगी?'

आज का भौतिक विज्ञान
बनने जा रहा है कल ज्योतिर्विज्ञान:
क्योंकि कल आदमी बदल देगा
भौतिक को आत्मिक में,
अचेतन को चेतन में :
क्योंकि कल मनुज को
सत्ता का भेद मिल जायेगा।

सन् १९५२] —वीरेन्द्र कुमार जैन

सारे सन्देहों से परे मुझे इस बात की निश्चय प्रतीति हो रही है कि आज दुनिया में चारों ओर दिखायी पड़नेवाली अराजकता, छिन्न-भिन्नता और पीड़ना के बावजूद, हमारे ग्रह पृथ्वी के इतिहास की आगामी पराकाष्ठा का परिणाम कोई विश्व-व्यापी संकट या सर्वान्तकारी प्रलय नहीं होगा। इससे ठीक उल्टे, उस पराकाष्ठा पर, अकस्मात् नाटकीय रूप से ऐसे नूतन आध्यात्मिक मूल्यों का आविर्भाव होगा, जो पृथ्वी के सारे देशों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

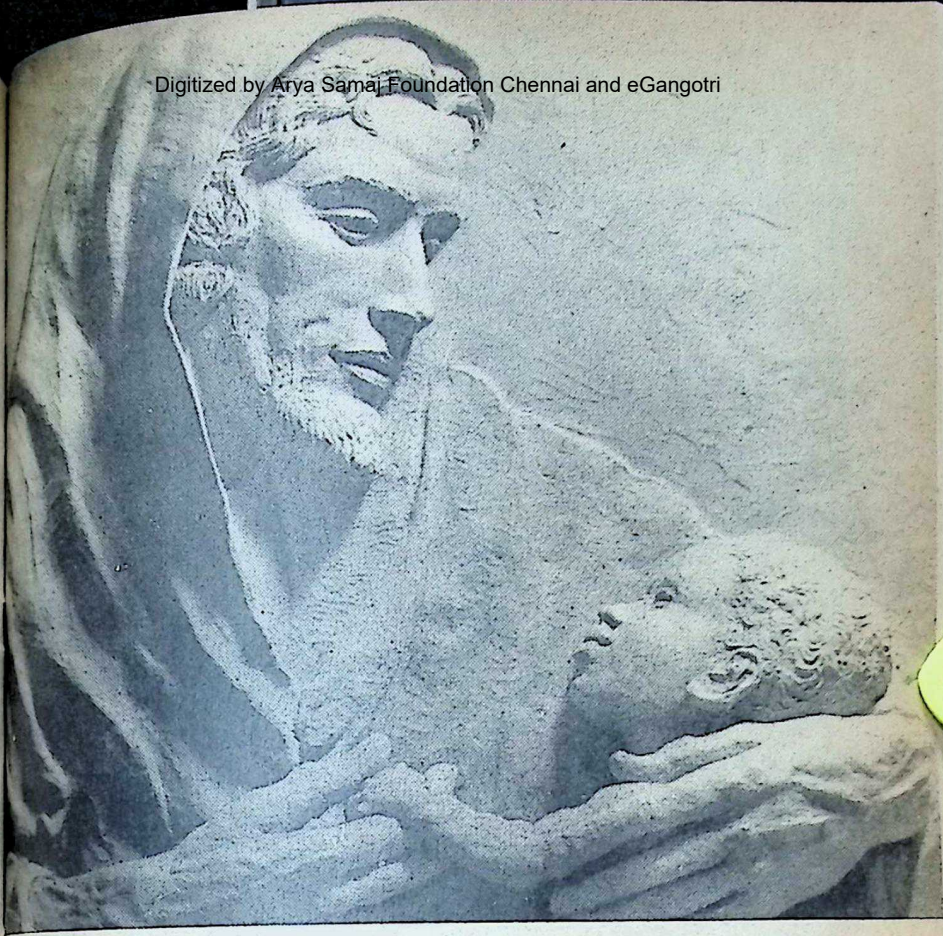

हाल ही में कई देशों में समानान्तर रूप से कई लोगों को दर्शन देनेवाला वह रहस्य-पुरुष, जो अपने आपको सत्य कहता है, और १९६७ में अपने प्रकट होने की घोषणा करता है।

को संयुक्त करके हम सब को एक विश्व-व्यापी सहकारी समाज के रूप में संगठित कर देगें। मनुष्य की भीतरी चेतना ही एकाएक बदल जायेगी, और उसी के माध्यम से ये नये मूल्य जगत पर शासन करेंगे। अब से हम अपने आप को एक कल्पनातीत रफ्तार के साथ, अनेक अनुभवों के एक अटूट सिलसिले के भीतर से गुज़रते पायेंगे। और एक नवीन सृष्टि की प्रसव-पीड़ा को भोगते हुए अन्ततः हम मनुष्य की एक अपूर्व नूतन सभ्यता के भीतर अवतरित होंगे। उस आगामी नये युग का शासन-विधान न तो पूँजीवादी होगा और न तथाकथित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साम्यवादी ही होगा। वर्तमान में जिन विभिन्न प्रणालियों द्वारा हम शासित हैं। सब के सारभूत और श्रेष्ठ तत्त्व उस आगामी शासन विधान में समन्वित होंगे। साथ ही, मनुष्य के भीतर क्रमशः उदय हो रही, एक नवीन आध्यात्मिक समझ भी उसमें जागृत होगी। जो उस सारी स्वार्थपरता, लोभ, असहिष्णुता, औद्धत्य और अंहकार का स्थान ले लेगी, जिनमें हम में से अनेक आज भी वैयक्तिक और सामुदायिक स्तरों पर बुरी तरह जकड़े हुए हैं, और मानवीय सम्बन्धों को विकृत करने में जिनका गहरा हाथ है। अपने अस्तित्व के अर्थ और प्रयोजन के बारे में, मानवों के हृदयों में होने-वाली नयी प्रतीति या नवीन साक्षात्कार द्वारा ही यह सब सम्भव हो सकेगा। साथ ही इस नवीन प्रतीति को कार्यान्वित करने की क्षमता और शक्ति का मनुष्यों के भीतर अविर्भाव भी आवश्यक होगा। और हमारे अस्तित्व के अर्थ और प्रयोजन के नवीन साक्षात्कार की वह घड़ी अब बहुत निकट आ गयी है।

रूपान्तर

संसार के अनेक अग्रणी चिंतक, अपने-अपने तरीकों से मनुष्य के मूलगत स्वभाव के ही इस परिवर्तन या रूपान्तर का अग्रगामी संदेश दे रहे हैं। पृथ्वी पर नूतन व्यवस्था लाने के लिए मानव स्वभाव का ऐसा आमूल परिवर्तन अनिवार्य है। हमारे युग के महान इतिहासकार, प्रोफ़ेसर एर्नाल्ड टॉयनबी इक्कीस सभ्यताओं के उत्थान और पतन का लेखा जोखा–तैयार किया है, और यह बताया है, कि किस प्रकार इनमें से हर सभ्यता अपनी-अपनी बारी में एक भीतरी आध्यात्मिकता दुर्बलता के कारण, प्रचुर भौतिक समृद्धि और शक्ति के अनुपात में आवश्यक उच्चतर मूल्यों के अभाव के कारण विनष्ट हो गयी। इससे प्रोफेसर टॉयनबी ने यही निष्कर्ष निकाला हैं, कि मानवीय स्वभाव में एक मूलगत आध्यात्मिक परिवर्तन ही, हमारी वर्तमान आवश्यकता को पूरा कर सकेगा। हमारे युग के उतने ही प्रख्यात दूसरे चिन्ता-स्वामी, महान प्राणी शास्त्री और वैज्ञानिक, प्रोफ़ेसर जूलियन हक्सले का कथन है कि यदि मनुष्य हिंसा से अपने को नष्ट नहीं कर लेता, तो अपने विकास की अगली भूमिका में वह एक ऐसी सर्वथा नवीन जाति के रूप में प्रकट होगा, जो उसे उसकी सारी प्राणिक और पाशविक वृत्तियों से ऊपर उठा देगी। आप में से कई लोगों ने धार्मिक निष्ठा के फ़्रांसीसी वैज्ञानिक पियरे तेल-हार्ड डि चार्डिन का नाम सुना होगा, जिन्होंने जगत के आगामी 'दिव्यीकरण' और मनुष्य के 'ख्रिस्तीकरण' के बारे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में बहुत कुछ लिखा है। और भारतीय ऋषि श्री अरविन्द ने हमें अति मानसिक शक्ति के अवतरण का "विज़न" दिया है, जो आगामी काल में मानव की चेतना को बदल देगा और जो मनुष्य को जगत के पूर्णतर प्राकट्य की ओर ले जायेगा। आज से पचास वर्ष पहले, गंभीर आध्यात्मिक अनुभवों के एक क्रम से गुज़र कर उन्होंने यह घोषित किया था कि अतिमानस ने मनुष्य की चेतना को प्रभावित करना आरंभ कर दिया है, और सन् १९६७ में मनुष्य उस शक्ति के साक्षात्कार के अपूर्व आयाम में प्रवेश करेगा। मेरा अनुरोध है कि आप इस तारीख़ को याद रखें, क्योंकि आगे भी अनेक सन्दर्भों में इसका उल्लेख हो सकता है।

अपनी मृत्यु से पहले भारत के भूतपूर्व प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने एक अजीब लेकिन सार्थक बात कही थी। उन्होंने कहा था: "हम धर्म और राजनीति के युग को पीछे छोड़ रहे हैं और अब हम विज्ञान और अध्यात्म के युग में प्रवेश कर रहे हैं।" और यह सच भी है कि जहाँ धर्म और राजनीति मानवों को विभाजन की ओर ले जाते हैं, वहाँ विज्ञान दिन-प्रति-दिन अधिक-अधिक जीवन के एकत्व की ओर संकेत कर रहा है, और यह सिद्ध करता जा रहा है कि वैज्ञानिक विश्लेषण के अन्तर्गत ठोस भौतिक तत्व नितान्त गायब होता जा रहा है, और हम एक प्रवाही अभौतिक विश्व में जी रहे हैं। कई वैज्ञानिक तो इस बारे में इतना अधिक स्पष्ट कथन कर रहे हैं कि भौतिक विश्ववादियों की सारी दलीलें उनके सामने हथियार डाल देती हैं। पारमाणविक अनुसन्धान में संलग्न एक भारतीय संसद् सदस्य के इस सबंध में प्रश्न उठाने पर, हमारे युग के सर्वोपरि वैज्ञानिक आइन्सटाइन ने उत्तर दिया था: 'यथार्थ में मैं एक आध्यात्मिक कार्य में लगा हुआ हूँ: मैं उस सीमान्त के दर्शन में संलग्न हूँ, जहाँ भौतिक तत्व का अन्त हो जाता है, और चैतन्य का आरम्भ होता है।' तब यह कथन तार्किक रूप से असंगत नहीं होगा कि निकट भविष्य में ही शायद पारमाणविक विस्फोट, एक अपूर्व नूतन आध्यात्मिक क्रांति को घटित कर देगा। आदि वैज्ञानिकों में से एक कोपर्निकस ने हमें बहुत पहले ही विज्ञान के क्षेत्र में ऐसा क्रांतिकारी दर्शन दिया था, जिसने अत्यन्त नाटकीय आकस्मिकता से, जैसे एक बिजली की कौंध के साथ हमें ज्ञान करा दिया था कि मानव इतिहास के सारे भूतकाल में, वस्तुओं के यथार्थ स्वरूप के बारे में, और आस-पास के जगत् के साथ के अपने सम्बन्धों के बारे में हम एक भारी भ्रांति में रहे हैं। आज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो विज्ञान के क्षेत्र में बहुत तेज़ी के साथ हमें एक ऐसे विकास की प्रत्यक्ष सूचनाएँ मिल रही हैं, जो आनेवाले कल जगत, मनुष्य और जीवन के बारे में हमारे सारे दृष्टिकोण को विपल मात्र में बदल देगा। कोर्पनिर्कस के संदेश के कई गुनी अधिक शक्ति के साथ आज हमें इस सत्य का प्रत्यक्ष साक्षात्कार हो रहा है कि, अन्ततः विज्ञान सफलता पूर्वक हमें यह प्रतीति कराने में समर्थ हो गया है कि हम न तो कभी ठोस पदार्थ थे और न हैं; और निकट भविष्य में ही हमारा निर्माण करनेवाले संयोजन तत्वों का विस्फोट शायद हमें प्रत्यक्ष साक्षात्कार करा देगा कि हम सब अन्ततः प्रकाश की अभिव्यक्ति हैं, प्रकाश-कणों के संयोजन से ही हमारा निर्माण हुआ है, फिर चाहे इस क्षण हमारी सत्ता का आलोक कितना ही मन्द और धुंधला क्यों न हो।

शक्तिशाली संकेत

वर्तमान में पृथ्वी पर, जगत के विभिन्न भागों में, प्रत्यक्ष मानवी रूप में प्रकाश के शक्तिशाली संकेत-पुरुष प्रकट हो रहे हैं। और चूंकि इस आगामी ज्योति के आने का समय हो गया है, उपरोक्त महान आत्माओं में से ही एक, जिसने सन् १९२० में कोरिया में पार्थिव रूप धारण किया था, आज समूचे विश्व की यात्रा कर रहा है। उसका प्रभाव मुख्यतया नवयुवकों पर है, और आप को यह बात शायद बहुत दिलचस्प लगेगी, कि पांच सौ कोरियन नवयुवकों के उस समुदाय की औसत उम्र केवल तेईस वर्ष है, जिन्हें गत वर्ष मैं कोरिया में मिला था और जो उपरोक्त कोरियन महापुरुष के संदेश को स्वीकार कर एक नवीन परिवर्तित जीवन जी रहे हैं। कोरिया और जापान की सरकारें भी खुले रूप से यह स्वीकार करती हैं कि कट्टर साम्यवादियों पर भी उक्त महापुरुष का अटल प्रभाव है। वे महापुरुष उन सारे सत्यों का समर्थन करते हैं, जिनका उल्लेख मैंने किया है, और उनका कथन है कि अब हम ऐसी असाधारण घटनाओं के काल में प्रवेश कर चुके हैं जो १९६५ और १९६७ के बीच घटित होंगी। तब तक दीर्घकालीन मानव-इतिहास के चरम संघर्ष घटित हो चुके होंगे। और हम उसकी पराकाष्ठा पर पहुँच जायेंगे और उसके फलस्वरूप एक नवीन विश्व-व्यवस्था का सूत्रपात हो जायेगा। वे अब शीघ्र ही उदय में आनेवाले प्रेम और सत्य के युग की सूचना हमें देते हैं और यह घोषित करना ही उनका 'मिशन' है कि जिस जगत को अब तक हमने जाना है, उसका अंत निकट है। उनका यह भी कहना है कि आज सारे जगत में मानवों के हृदयों में जो भयानक संघर्ष

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चल रहा है, वह वही चरम युद्ध है, जिसे कुछ लोग 'आरमेगेडॉन' (Armagedon) कहते हैं और इस युद्ध में हम पुराने तरीक़ों और पुराने मूल्यों का मरणान्तक संघर्ष देख रहे हैं। हम जहाँ कहीं भी हों, हममें से प्रत्येक जन इस युद्ध में लड़ने में हिस्सा ले रहा है। इससे हम बच नहीं सकते, यह वह चरम-परम देवासुर संग्राम है, जिसके चलते मनुष्य को अपार कष्ट-यातना झेलनी पड़ेगी। क्योंकि, वर्तमान में परम सत्य और उच्चतर मूल्यों की जो अदम्य महाशक्तियाँ उदय में आ रही हैं, इस युद्ध में उन्हीं को प्रतिरोध देने के लिए लोभ, स्वार्थ, अज्ञान और शासन-लालसा की प्रमत्त आसुरी शक्तियाँ जूझ रही हैं। परम सत्य की यही शक्तियाँ नूतन युग की स्थापना करेंगी, और पुरातन व्यवस्था को सदा के लिए समाप्त कर देंगी। सनातन सत्यों का फिर से अभ्युदय होगा, और सृष्टा तथा सृष्टि को जोड़नेवाले सीधे सम्बन्ध सूत्र की पुनर्स्थापना होगी।

जो अपेक्षाकृत अधिक वैज्ञानिक रुझान के लोग हैं, वे शायद अपने से ही यह प्रश्न पूछ सकते हैं, कि क्या यह सम्भव नहीं है कि भौतिक परमाणु के विभाजन और उसमें समाहित प्रचण्ड शक्तियों की मुक्ति द्वारा शायद सत्ता का अध्यात्मिक उत्तरार्ध प्रकट हो जाये। आइन्स-टाइन ने भी संकेत दिया ही था कि परमाणविक शक्ति का विस्फूर्जन ही शायद एक दिन अभौतिक परिणामों को सामने ले आये। व्यक्ति मानवों के भीतर जो शक्तियाँ बंद है, उन्हीं में मानव-जाति के जीवन्त परमाणु सहित हैं, और परमाणु के विस्फोट द्वारा सम्भवतः व्यक्तिगत परमाणुशक्ति वैश्विक परमाणु-शक्ति के साथ संयुक्त होकर एक नूतन आध्यात्मिक व्यवस्था को अस्तित्त्व में ले आये। इस सन्दर्भ में व्यक्ति की सार्थकता की टोह लेते हुए हमें यह प्रतीति पाना है, कि भौतिक रूप से अपने आसपास के जगत के साथ हमारा कोई सार्थक सम्बन्ध न भी हो, पर आध्यात्मिक दृष्टि से हम सब-कुछ हैं, और हमारी आध्यात्मिक प्रकृति ही हम सबको हमारी सच्ची और समान सार्थकता प्रदान करती है। हममें से प्रत्येक जन के भीतर वैश्विक शक्ति तथा भागवदीय शक्ति और प्रकृति अन्तर्निहित है, ठीक वैसे ही जैसे ओक वृक्ष के फल के भीतर समूचे ओक वृक्ष की गुणवत्ता और समग्रता समाहित है। आगामी परमाणु-विस्फूर्जन मानव-जाति और विश्व को समानान्तर रूप से प्रभावित करेगा। प्रत्येक वस्तु पर शासन करने-वाले आध्यात्मिक नियम-विधान के अन्तर्गत, वह मनुष्य को अपनी सच्ची

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकृति और नियति के बारे में स्थायी रूप से सचेतन कर देगा। इस तरह वह एक पूर्णतर विश्व समाज के निर्माण में अपना योगदान करने के लिए मनुष्य को शक्तिशाली और समर्थ बना देगा। हमें इस बात का मान हो भी या न भी हो, पर इस पृथ्वी पर हमारे अस्तित्व का प्रयोजन यही है कि अपने वैयक्तिक जीवनों में और सामुदायिक सम्बन्धों में, परम चैतन्य और उच्चतर मूल्यों की परिपूर्ण आत्माभिव्यक्ति हो सके। संयोजन और एकत्व की दिशा में अब तक उठाये गये मानव जाति के क़दमों ने विश्व व्यवस्था के वाह्य रूप निर्माण का ही काम किया है। इस प्रगति की समग्र प्रक्रिया पर दृष्टिपात करते हुए क्या हम यह नहीं कह सकते हैं, कि साम्यवाद भी उसी परम चैतन्य की एक प्राथमिक परंतु अपूर्ण अभिव्यक्ति थी। एक विश्वव्यापी मानवीय एकत्व के अभियान की दिशा में वह मात्र एक आदिम अनगढ़ प्रयास मात्र था, जो एक प्रगतिशील आध्यात्मिक चेतन-तत्व के अभाव में एक विकृत और हाहाकारी निष्फलता होकर रह गया। जब यह आध्यात्मिक चैतन्य जागृत होकर इन प्रयासों के साथ संयुक्त हो जायेगा, तो इनके द्वारा उत्पन्न क्षमताएँ, शक्तियाँ और सम्भावनाएँ, एक पूर्णतर विश्व के निर्माण की दिशा में अचूक रूप से कार्यकारी और सार्थक हो उठेंगी। कॉमनवेल्थ और इसी प्रकार के अन्य राजनीतिक संघ और संगठन, क्या वैश्विक एकता की दिशा में उसी परम चैतन्य की बेबूझ और अपूर्ण अभिव्यक्तियाँ ही नहीं हैं? इन रूपों को, मानवता के शरीर की तरह ही अपनी अन्तर्वासी जीवित आत्मा के प्रति अधिक सचेत और संगठित होना है। कवि के शब्दों में: 'सभी वस्तुएँ उसी एक विराट समग्र की अंग हैं, जिसका शरीर है प्रकृति, जिसकी आत्मा है भगवान।" जिन कोरियन महापुरुष का मैंने उल्लेख किया है, उकना नाम है 'सन म्याँग मून': यह नाम उन्हें उनके जन्म के समय ही दिया गया था। 'म्याँग' का अर्थ होता है-प्रकाश और उनके अन्य दो नाम भी योगायोग से उनके मिशन के ही वैश्विक प्रतीक हैं। वर्तमान में 'श्री सन म्याँग मून' अमेरिका में हैं, उसके बाद योरोप की यात्रा करके वे वापस कोरिया लौट आयेंगे। मलाया और सिंगापुर से भी उन्हें निमंत्रण मिले हैं।

ठोस प्रत्यक्ष रूप में अवतरण

श्री सन म्यांग मून का मिशन और प्रवृत्तियाँ अनायास ही विश्वव्यापी रूप से इंग्लैंड तथा अन्य देशों में घटित हो रही हैं। अद्भुत घटनाओं के साथ कड़ी-बद्ध हो जाती हैं। हाल ही इंग्लैंड में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और अन्य देशों में समानान्तर रूप से कई लोगों को ऐसी एक ठोस रूपोमय व्यक्तिमत्ता का साक्षात् दर्शन हुआ है, जिसका उद्गम सत्ता के किसी दूसरे ही आयाम से होता जान पड़ता है। यह व्यक्तिमत्ता अपने को 'सत्य' के नाम से घोषित करती है, और यह घोषणा करती है कि इस समय मानव जाति को एक महत्वपूर्ण संदेश देने के लिए उसका प्राकट्य हुआ है। यह रहस्यमय प्राकट्य-पुरुष कहता है कि वह प्रकाश है, सत्य है और संपूर्ण विश्व में व्याप्त 'सर्व' वही है। वह कहता है: 'मैं अपने गृह पृथ्वी को, मनुष्य को सहज ही सुलभ व्यावहारिक साधनों द्वारा, अपनी उपस्थिति का ज्वलंत बोध कराने को संकल्पबद्ध हूँ।" उसने बारम्बार घोषित किया है कि: "पारमाणविक विकास के माध्यम से सन् १९६७ के अंत तक मैं अपने आप को अपने विश्व (वह सदा 'मेरा विश्व' ही कहता है) के सम्मुख प्रकाशित कर दूंगा। इस विषय में वह कोई क्रमबद्ध तफ़सील नहीं देता, पर केवल इतना ही कहता है कि—अब वह समय आ गया है, जब हमारे सामने से वह अवगुण्ठन हट जायेगा, जो वर्तमान में सत्य के प्रत्यक्ष प्रकाश को हमसे छिपाये हुए है; और कोई विशेष प्रकार की पारमाणविक प्रक्रिया इस प्राकट्य को घटित करने का माध्यम बनेगी। वह कहता है कि कोई भी मनुष्य उस दिन और उस घड़ी को नहीं जान सकता है, जब यह वैश्विक प्राकट्य घटित होगा: उसका यह भी कथन है कि नितान्त आकस्मिक रूप से ही यह महान घटना घटित होगी। वह कहता है कि उसकी योजना सम्पूर्ण है; कि उसका वैश्विक प्रत्यक्ष सम्बन्ध-सूत्र अब आविर्भूत हो रहा है; कि कई लोगों को उस आगामी भवितव्य का अपने-अपने तरीके से समर्थन मिलेगा; और उस वैश्विक प्राकट्य को घटित होने से पहले बाहरी दुनिया में भी कई घटनाएँ घटेंगी। हाल ही में जब मैं भारत में था तो मैंने भारत के राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन् से ये सारी बातें कहीं थीं। मैंने उन्हें उपरोक्त 'सत्य' की प्रतिनिधि व्यक्तिमत्ता के एक रूप विशेष की किसी मूर्तिकार द्वारा बनायी प्रामाणिक मूर्ति की तस्वीर भी दिखायी थी। बहुत ही गौर से उक्त तस्वीर को देखते हुए भारत के राष्ट्रपति खामोश हो गये थे। उसके बाद अचानक ही उनके मुंह से निकला था: 'अब हम ऐसी चीज़ों के घटित होने की प्रत्याशा कर ही सकते हैं:।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मोमबत्ती का प्रकाश

[अमरीकी कहानी]

एडवर्ड एलन

मेरे पतिदेव, कितने लाचार हैं बेचारे!

उनकी काया जर्जरित और व्याधि-ग्रस्त है। बाहर के कमरे में वे शान्ति से सोये हैं। बिलकुल साधारण-सी चहल पहल भी उनसे सहन नहीं होती। ज़रा सा शोर होते ही वे चौंक उठते हैं—भयभीत हो जाते हैं। उनको किसी भी प्रकार का कष्ट न हो, इसलिए मैं बहुत शांति और सावधानी के साथ गृह-कार्य करती हूँ।

अब थोड़ी ही देर में भोजन तैयार हो जायगा और उनकी थाली लेकर मैं उनके पलंग के पास जाऊँगी, हलके क़दम, बिलकुल आवाज़ न हो, इस बात का ख़याल रखते हुए। बीमारी से मुरझाया हुआ उनका चेहरा मुझे देखते ही प्रफुल्लित हो उठेगा। मोमबत्ती के हलके प्रकाश में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनका हँसता चेहरा देखकर मुझे कितना दुःख होता है! लेकिन हाँ, ठीक याद आ गया। दियासलाई ख़त्म हो गयी है। भोजन ले जाने से पहले दियासलाई लाना आवश्यक है।

लेकिन ठहरिए, कहीं आप ऐसा न सोच लें कि उनको धूम्रपान की आदत है। नहीं, वे कभी भी सिगरेट आदि नहीं पीते। और मेरे बारे में तो प्रश्न ही नहीं उठता, क्योंकि स्त्रियाँ धूम्रपान करें यह मुझे क़तई पसन्द नहीं है।

जब से उनका स्वास्थ्य बिगड़ा है, तब से उनसे तेज़ रोशनी सही नहीं जाती। इसके अलावा बीमारी की वजह से फ़ीका पड़ गया उनका चेहरा ज़्यादा रोशनी में डरावना लगता है। और इसी से मन्द प्रकाश के लिए मैंने मोमबत्ती को पसन्द किया है। उसके अनेक लाभ हैं: एक तो आँखों को नुक़सान नहीं होता, दूसरे इन पचास वर्षों में काल के भयानक पंजे ने हमारे दोनों के चेहरों पर जो टेढ़ी-मेढ़ी झुर्रियाँ डालीं हैं, वे इस हलकी रोशनी में ज़्यादा नज़र नहीं आतीं। मोमबत्ती सुलगाने के लिए दियासलाई लाना सबसे महत्त्व का काम है। उस दियासलाई के द्वारा मैं एक दूसरा कार्य भी करती हूँ: वह यह है कि सलाई के ऊपर लगा हुआ गंधक निकालकर मैं नियमित-रूप से उनकी दवाई में डाल देती हूँ।

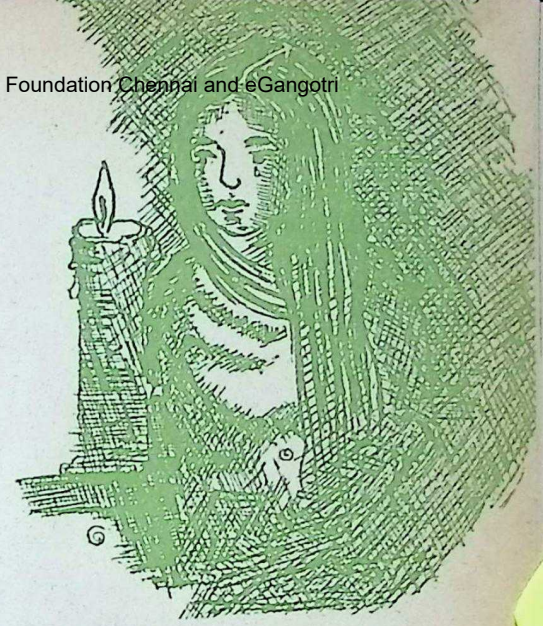

यह जानकर आप को आश्चर्य हुआ होगा? स्वाभाविक ही है। कोई भी शीलवती स्त्री अपने पति की दवा में गंधक जैसी ज़हरीली चीज़ नहीं डाल सकती। मेरे इस दुष्कृत्य से शायद आप को यह लगा होगा कि मैं पागल हो गयी हूँ, या मुझे अपने पति के प्रति नफ़रत है। नहीं, वैसा बिलकुल नहीं है। अगर वैसा ही हो तो फिर आप ही सोचिए कि दवा में गंधक मिलाते समय मेरी आँखों से आँसू क्यों बह आते हैं? नहीं, मैं पागल नहीं हूँ, अपने पति के प्रति मुझे नफ़रत भी नहीं है। मैं मनस्वी, दंभी या कठोर भी नहीं हूँ। डॉक्टरों की तरह मैं भी दयाजनक क्रूरता का आचरण कर रही हूँ। अब मुझसे उनकी वेदना देखी नहीं जाती,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और सहन भी नहीं होती। इस वेदना से उन्हें हो सके उतनी जल्दी मुक्ति दिलाने के लिए मैं ऐसा हीन कार्य कर रही हूँ और उनकी मृत्यु तक नियमितरूप से करती रहूँगी। मेरा यह अटल निश्चय है।

लेकिन मैं इन आँसूओं को रोकने में असमर्थ हूँ। मुझे सदा भय रहता है कि कहीं मेरे ये आँसू मेरे निश्चय को डगमगा न दें। चाहे कुछ हो, मुझे इस अश्रु-प्रवाह पर बांध बाँधना ही पड़ेगा।

मैंने अपने इस दुष्कृत्य पर पूर्णरूप से सोचा है, और अंत में मैं इस निर्णय पर पहुँची हूँ कि जो कार्य कुछ समय बाद विवाना करने ही वाले हैं, वह अगर मैं ही कर डालूं तो उसमें किसी प्रकार का अनिष्ट नहीं है। उनकी उम्र भी कोई कम नहीं है। सूखे पान जैसी हालत है। कौन जाने कब गिर पड़े। तिस पर यह जानलेवा बीमारी, जिसका इलाज किसी डॉक्टर के पास नहीं। आज नहीं तो कल मृत्यु निश्चित है। पर मुझसे उनकी यह वेदना देखी नहीं जाती।

हर रोज़ की तरह आज भी मैं अपने

अपनी आवश्यकता के लिए खरीदिए

Hind FLOORING TILES

हाइड्रालिक इटालियन मशीनों से

निर्मित : प्रीफ़ब (पूर्वनिर्मित) आर. सी. सी. गृह, सीमेण्ट पाइप, टैंक, रंगाई की नाँदें व बाग़ीचों के सामान का निर्माण करते हैं। सरकार, रेलवे, म्युनिसिपैलिटी, पी. डब्ल्यू. डी. के कंट्राक्टर हैं और सामान मुहैया करते हैं।

हिन्दुस्तान सीमेन्ट पाइप्स एण्ड कंक्रीट कन्स्ट्रक्शन कं०

मुख्य कार्यालय : ओछवलाल गोरधनदास शाह

टाइल, पाइप्स एण्ड सेनीटरी मरचेण्ट्स

खाडीआ, चार रस्ता, अहमदाबाद

फैक्टरी : सुएज फार्म रोड, अहमदाबाद

कार्यालय तथा निवास फोन : ५२२९२ फैक्टरी फोन : ५१६३६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अश्रुबिन्दुओं को रोक कर, हँसते हुए उनके खंड में प्रवेश करूँगी, ताकि उनको मेरी ओर से कोई दुःख न पहुँचे। रोते हुए चेहरे से उनके पास जाने की मेरी हिम्मत ही नहीं होती। नाटक की यह दुहरी भूमिका करना मेरे लिए बहुत कठिन है, लेकिन मैं इतना जानती हूँ कि यह भूमिका कुशलता से अदा करना मेरा फर्ज़ है।

भोजन की थाली लेकर मैं हँसती हुई उनके कमरे में प्रवेश कर रही हूँ.....

●●●

ओह! कितने दबे पाँव वह मेरे कमरे में आ रही है, जैसे ज़मीन पर पाँव ही न रखती हो। प्रत्येक क्षण नज़दीक आते हुए उसके चेहरे की ओर मेरी नज़र टिकी हुई है। ओह! क्रूर काल ने इसको भी नहीं छोड़ा। कितनी झुर्रियाँ पड़ गयीं हैं इसके चेहरे पर। लेकिन पहले कितनी सुन्दर थी यह।

यह जीवन भी कितना विचित्र है। किसके लिए ऐसा जीवन जीना चाहिए। मौत के पंजे में फँसने के लिए ही तो। लेकिन यह मृत्यु है क्या? एक जीवन-वस्त्र को उतार कर दूसरा जीवन-वस्त्र धारण करना,.....वही तो?

यह स्त्री मेरा कितना ख़याल रखती है। मेरी इस असहाय हालत में भी एक सती साध्वी की तरह दिन-रात खड़े-पाँव मेरी सेवा-सुश्रुषा करती रहती है। पहले मुझे इसका यह प्रेमभरा व्यवहार शंकास्पद और कृत्रिम लगता था। पर कुछ विचार-मंथन के बाद मैं जान पाया हूँ कि यह मुझ पर सच्चा प्रेम बरसाती है। मैं जानता हूँ कि इसे कुछ बातें पसन्द नहीं हैं, लेकिन मेरी ख़ातिर यह चुपचाप सब काम करती रहती है।

मैं इसकी मानसिक उलझन को भी समझ पाया हूँ। हालाँकि सदा ही यह अपने आंतरिक भावों को अत्यन्त सावधानीपूर्वक छुपाने का प्रयत्न करती रहती है, लेकिन मेरी आँखें ऐसी असहाय हालत में भी इसके ऐसे भावों की थाह पा जाती हैं।

प्रत्येक मनुष्य जानता है— समझता है कि मृत्यु निश्चित है, तब भी वह मौत से बचने के अनेक प्रयत्न करता है। लेकिन मैं जितनी जल्दी सम्भव हो मर जाने के निर्णय पर पहुँच चुका हूँ। यथासम्भव जल्दी से जल्दी मैं अपने जीवन का और उसकी आंतरिक उलझन का अन्त लाना चाहता हूँ। मेरे इस निर्णय का मुख्य हेतु इसे सुखी करने का है। यह मेरी सेवा-सुश्रुषा करने में इतनी तन्मय रहती है कि इसे खुद का भी ख़याल नहीं रहता। मैं इस स्थिति को बदलना चाहता हूँ।

इस निर्णय से मैं एक अजीब शक्ति अनुभव करने लगा हूँ। अब मैं निडरता से मौत का आलिंगन कर सकता हूँ।

[शेष पृष्ठ १२१ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कमलहस्त : अजन्ता

भारतीय कला का समृद्ध प्रतीक : कमल

●

लेखक-आलेखक—दिनेशचन्द्र

भारतीय कला एवं साहित्य में जिन मुख्य प्रतीकों की गणना की जाती है, उनमें कमल का प्रमुख स्थान है। कमल को हम अपने वाह्य व्यवहार में भी कितने ही उपमानों से सम्बोधित करते हैं। जैसे . . . नेत्रकमल, चरणकमल, हस्तकमल, हृदयकमल . . .। कवियों ने तो अमूर्त भाव को भी कमल का उपमान दे दिया है . . .

एक ग्रामीण माता बालक के नेत्रों में काजल आंजते हुए यह कहने से भी नहीं चूकती. . . 'मेरे लाल की आँखों की पंखुड़ियाँ सहीसलामत रखना'. . . . और उस समय वह बालक के नेत्र को कमल के रूप में ही देखती है . . .

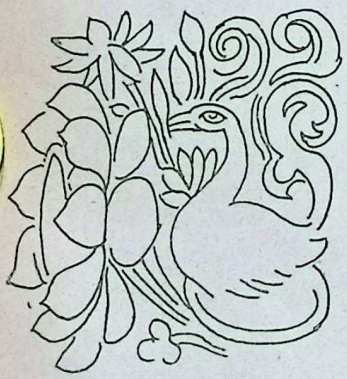

हंस और कमल : अजन्ता

बुद्धचरण : अमरावती-शिल्प

कमल : बसोलीशैली १८ वीं सदी→

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कमल की उपमा केवल शृंगार से ही दी गयी हो, ऐसी बात नहीं है। आध्यात्मिक गहराइयों के अर्थ में भी कमल की उपमा देखने को मिलती है। इस प्रकार हम पाते हैं कि कमल हमारे साहित्य एवं कला का एक समृद्ध प्रतीक बन गया है।

भारतीय कला में कमल सर्वप्रथम कब आया?

मोहनजोदड़ो की खुदाई में मिली एक देवी की मूर्ति के हस्त में कमल रखा हुआ देखा गया। लक्ष्मी का तो आसन ही कमल है।....हमारे यहाँ जितने प्रसिद्ध आसन हैं उनमें पद्मासन का स्थान अग्रगण्य है। भारतीय देव-देवियों के अलंकारों में भी कमल का स्थान सर्वोपरि है। बौद्ध-कला में भी कमल की बहुलता है। पद्मपाणि अथवा अवलोकितेश्वर की मूर्ति का आसन कमल से ही बना हुआ है। बौद्धों की महायान शाखा में पद्मपाणि बोधिसत्व का ही एक

[शेष पृष्ठ १२२ पर]

पद्मपाणि →
बाघ गुफा

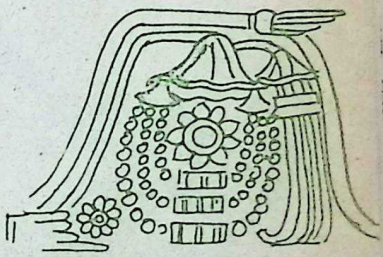

शिल्प
भरहुत

कांगड़ा शैली
१८ वीं सदी

रूठी हुई राधा :
← मेवाड़ शैली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

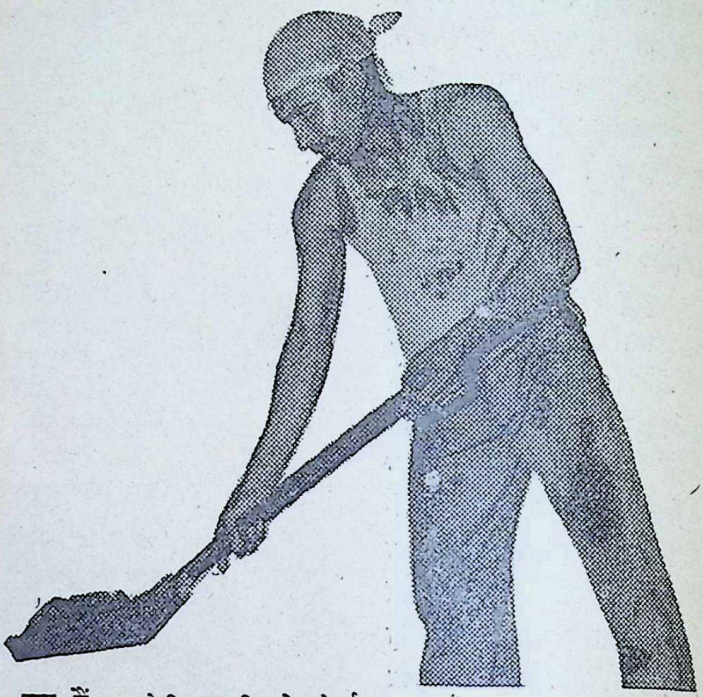

क्या मैं दुश्मन ने फिर हमला किया तो अपने कर्तव्य पर डटा रहूँगा ? हर भारतीय के मन में यही सवाल उठता है। यही आज का सबसे बड़ा सवाल है। पश्चिम रेलवे का हर कर्मचारी चाहे वह फ़ायरमैन हो या सेक्शन कंट्रोलर, गैंगमैन हो या गार्ड, अपने कर्तव्य के प्रति सजग हैं। वह जानता है कि राष्ट्र की धमनियों को निरंतर प्रवाहित रखकर वह मातृभूमि की रक्षा में अपना सबसे बड़ा योगदान देता है। उसकी यही लगन सीमा पर जवानों की ताकत बढ़ाती है। वह अपना योगदान हँसते हँसते देता है।

पश्चिम रेलवे

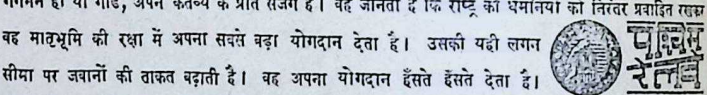

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[मोमबत्ती का प्रकाश ...पृष्ठ ११७ का शेष]

मैं देख रहा हूँ कि मेरी वजह से यह अन्दर ही अन्दर पिघल रही है– इस मोमबत्ती की तरह जो मंद-मंद जलकर वातावरण को प्रकाशमय बना रही है। मेरे दिल में इसके लिए श्रद्धा है, प्रेम है। मेरी वजह से इसे दुःख हो ऐसा मैं नहीं चाहता। और इसी कारण मैं अपने जीवन का अन्त लाना चाहता हूँ। मेरा यह अटल निश्चय है।

दबे पाँव यह मेरी तरफ बढ़ रही है। इसकी मुस्कान का उत्तर मुझे मुस्कान से ही देना चाहिए। मैं इतना-सा सुख तो इसे ज़रूर ही दे सकता हूँ।

लेकिन एक मुख्य बात तो कहनी ही रह गयी। मुझे इस व्याधि से जल्दी छुटकारा मिले, इसके लिए यह मुझे नियमित रूप से दवा पिलाती है। लेकिन मैं इसकी नज़र बचाकर पास पड़े इस गमले में वह दवा उड़ेल देता हूँ। हर रोज़ गमले में दवाई का प्याला उड़ेल देने से उसके पुष्प आधे मुरझा गये हैं, लेकिन मैं निरुपाय हूँ।

अनु० ज्योतीन्द्र जैन

★

अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के भारत के सर्वोच्च तांत्रिक, हस्तरेखाविद् तथा ज्योतिष सम्राट

पं. श्री रमेशचन्द्र भट्टाचार्य, ज्योतिषार्णव, एम. आर. ए. एस. (लन्दन)

पंडित रमेशचन्द्रजी कठिन समस्याओं को सुलझाने के लिए भविष्य देखने, हस्तरेखा और जन्म-कुण्डली पढ़ने तथा तांत्रिक अनुष्ठानों के लिए भारत में अप्रतिम हैं। विदेशों में भी आपकी प्रखर ख्याति है। निराश व्यक्तियों को पंडितजी की शक्तियों का अवश्य लाभ उठाना चाहिए।

विश्व में लाखों व्यक्तियों द्वारा परीक्षित चमत्कारपूर्ण यन्त्र।

[ज्योतिष-सम्राट]

धनदा यन्त्र (सम्पदा के लिए) पूजाखर्च–साधारण ७. ६२ रु., विशेष २९.१९रु., अतिविशेष १२९.६९ रु.

बगलमुखी यन्त्र (शत्रु-विजय व मुकदमा के लिए) पूजाखर्च–साधारण ९.१२ रु., विशेष ३४.१२ रु., अति विशेष १८४.२५ रु.

मोहिनी यन्त्र (मित्रता के लिए) पूजाखर्च–साधारण ११.५० रु. विशेष ३४.१२ रु. और अतिविशेष ३८७.८७ रु.

सरस्वती यन्त्र (परीक्षा में पास होने के लिए) पूजाखर्च–साधारण ९.५६ रु., विशेष ३८.५६ रु.

प्रमाण-पत्रोंसहित विस्तृत सूचि-पत्र मुफ्त [पत्र-व्यवहार सदैव अंग्रेजी में ही करें]

प्रधान कार्यालय :–50/2, (BH) धरमतल्ला स्ट्रीट (८८-२ वेलेस्ली स्ट्रीट द्वारा प्रवेश) ज्योतिष सम्राट भवन कलकत्ता १३, फोन २४-४०६५, समय-सायं ५ से ७ बजे।

शाखा–१०५ ग्रे स्ट्रीट, वसन्त निवास, कलकत्ता ५। समय–सुबह ९ से ११ बजे। फोन५५-३६८५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चित्र :
अजन्ता

[पृष्ठ ११९ का शेष]

अवतार है। बोधिसत्त्व की ऋजुता, दयार्द्रता एवं शान्ति वृत्ति का प्रतीक क्या कमल से नहीं उद्भासित है?

कमल का सबसे समृद्ध उपयोग अजंता के कलाकारों द्वारा किया गया है। अजंता की छतों में रेखांकित विशाल वर्तुलों के मध्य कमल की रचना तो देखते ही बनती है। अजंता की कला में कमल की जो बहुलता हम देखते हैं, वह प्रतीक के सम्बन्ध में कलाकार के तीव्र अनुराग का ही सूचक है।

अति प्राचीन काल से अभिव्यक्ति के एक समृद्ध प्रतीक के रूप में मान्यता प्राप्त कमल की महिमा को अजंता ने और भी अधिक गौरवान्वित किया है।

टेराकोटा :
वीरभूमि

भीत्ति चित्र : सितन्नवासल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विष्णु की नाभि–कमल में से प्रकट हुए सहस्रदल कमल पर चतुर्मुखी ब्रह्मा और उसमें से समस्त सृष्टि का विकास परम सर्जन शक्ति के रूप में कमल की विभावना भी हमारे आदिपुरुषों ने की है।

कमल का प्रतीक रूप में समृद्धि वाली उपयोग हमारे कलाकारों ने सितन्नवासल के जैन मंदिर की गुफाओं में भी किया है। वहाँ की अग्रिम खण्ड की छत में संविसरण अथवा स्वर्ग के कमल सरोवर का बड़े ही कलात्मक ढंग से चित्रांकन किया गया है।

यहाँ पर सदियों पुरानी भारतीय कला परम्परा में कमल का जो विविध आकार मिलता है, उनमें से कुछ को प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

★

अजन्ता का एक चित्र

भीत्तिचित्र : सितन्नवासल

पद्मासन पर बुद्ध : टेराकोटा : वर्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

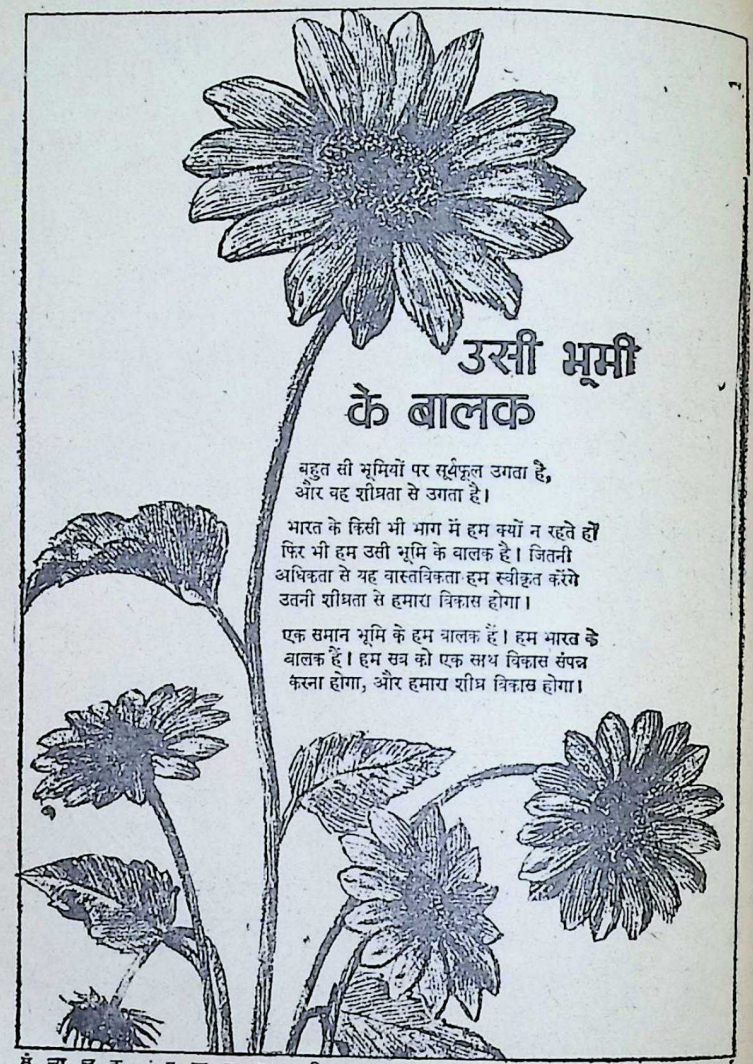

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[भारतीय संगीत में... : पृष्ठ ८५ का शेषांश]

शाप झेल कर भी माद्री को बाहुओं में भर लिया था, ऐसी है यह अनिर्वार प्रेम-धारा।

भारतीय संगीत ने प्रणय को फूल बहाने में कुछ भी बाकी नहीं रक्खा है। और राग में जो चीज़ें गायी जाती हैं, उन गीतों के शब्द प्रणय के रंग में रंगे हुए हैं। प्रकृति के बदलते मिजाज़ के साथ ही साथ इश्क भी करवट बदलता चला जाता है। सारा गगन कृष्णवर्ण हो उठता है, और रस के अगोचर स्रोत में से वृष्टि-धाराएँ बरसती हैं, तब राग मल्हार में पुराना गीत क्या गुनगुनाता है:

मैं तो बदरा देख डरी डरी,
एक जु घटा मोरी छतियन उमगी
पीछे जी दुःखरी खरी।
अपने-अपने मंदिर तें निकसी
कोई गोरी, कोई लाल, हरी।
मैं चंचल प्रिय बाट देखत हूँ,
आँगन बीच खरी खरी।

राग में तो स्वर के स्रोत बहते ही हैं, पर राग के गीत या तराने में जो ताल आकर मिलती है, वह ताल भी प्रणय का झांझर बाँधे हुए है। अभिसार के लिए जोखिम उठा कर निकल पड़ी किसी बावरी की चाल भी हमारे ताल में उतर आयी है। माथे पर गागर धर कर जो पनिहारिनियां जल भरने जाती हैं, और उनकी पदचाप से घूँघुर की जो तालबद्ध ध्वनि जागती है, उसे भी हमारे ताल-शास्त्र में स्थान मिला है।

कला संचयित प्यास है। यह प्यास प्यार को धार प्रदान करती रहती है।

✱

[भीतरी मनुष्य का... पृष्ठ ७१ का शेष]

चित्रकार हो, मूर्तिकार हो कवि हो या संगीतकार हो, सदा ही कठिन होता है; अपने प्रयोजन के प्रति अचूक निष्ठा ही ऐसे कलाकार को आर्थिक विफलता, सार्वजनिक अवज्ञा और उपहास के उन कठिन वर्षों में से अविचल पग पार ले जा सकती है। और ऐसे संवर्षों से गुज़रना हर मौलिक कलाकार का अनिवार्य भाग्य होता है। कुछ अपवादों को छोड़कर सभीको इन कठिनाइयों में समझौता करने को बाध्य होना पड़ता है, पर तब मैंने कहा था और आज भी उस कथन को दुहरा सकता हूँ कि हेनरी मूर ने अपने जीवन में कोई समझौता नहीं किया है। और तब की तरह आज भी अपनी शक्तियों के सम्पूर्ण उत्कर्ष पर पहुँच कर हेनरी मूर हमें अपनी प्रतिभा की परिपूर्ण सृष्टियाँ प्रदान कर रहे हैं।

—अनु. वि. के. गुप्ता

✱

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

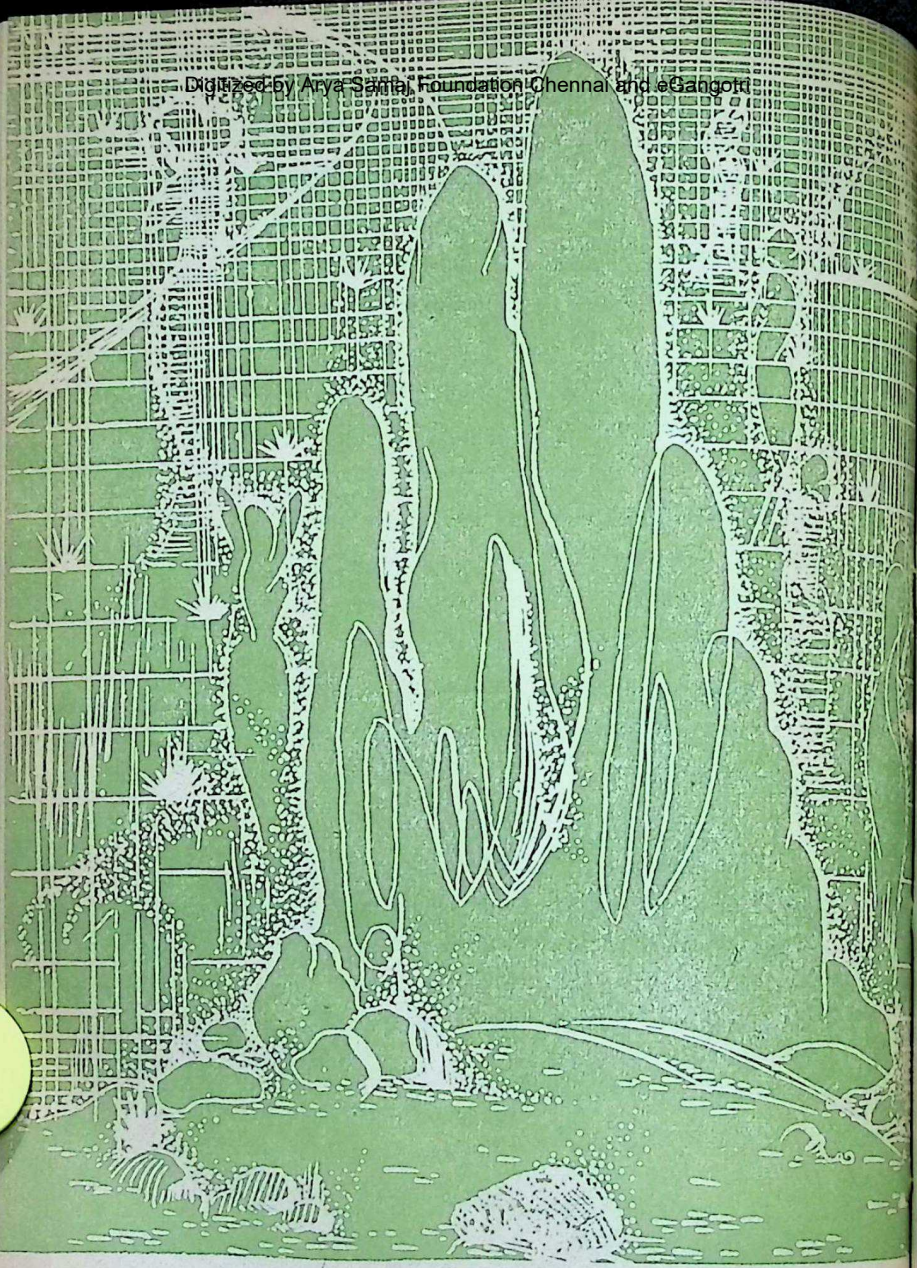

अस्तित्व का आनन्द

चित्र : जयकान्त पटनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अस्तित्व का आनन्द

जयकान्त पटनी

वह उदासी नहीं है, जो तुम मेरी
आँखों में देखते होः
वह गहराई है, जो स्वयम् देख रही है।
वह सुख है, एक आनन्द है भीतर काः
मैं आकाश के साथ एकाकार हो गया हूँः
मैं प्रसन्न हूँ वसन्त की वायु-लहरी मेंः
मैं साँझिया प्रकाश में पतिंगे की तरह तैरता हूँ।
वह विषाद नहीं है, जो मुद्रित है मेरे ओठों में,
वह महाशान्ति है जो स्वयम् सुन रही है;
क्योंकि गहराई बोल रही है।
वह जीवन की लय है, जिसे मैं सुनता हूँ।
वह एक आन्तर सुख है, एक आन्तर आनन्द।
मैं सौ-सौ गोरैयों को चहकते सुन रहा हूँ,
मैं प्रसन्न हूँ, अति प्रसन्न।
मैं सुन रहा हूँ, कौवों की कोमल पुकारें
दूर से आती हुई।
और बहुत नीचे कहीं बच्चों के खेलने का शोर
मुझे सुनाई पड़ रहा है।
मैं प्रसन्न हूँ, इन सब को लेकर अति प्रसन्न हूँ।
वह नहीं है मौत की ठण्डी दूरी
जिसे तुम मेरे आसपास महेसूस करते होः
वह युगान्तरों की दूरी है,
वह गराई है जीवन्त।
वह अनोखी उपस्थिति है बेउम्र जीवन की;

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह सम्वादिता है जीवन की, आत्माओं की, ग्रह-नक्षत्रों की।
वह मेरे लिए अनिवर्चनीय सुख-उल्लास है।
मैं शान्ति अनुभव करता हूँ।
मैं महान के साथ एकाकार हूँ,
मैं लघु को समझता हूँ;
हर छोटी और बड़ी चीज का
अपना एक स्थान है।
मैं प्रसन्न हूँ, मैं बेहद प्रसन्न हूँ,
मैं अस्तित्व को अनुभव करता हूँ—
—मैं अस्तित्वमान हूँ।
और यह समूचा अस्तित्व होने लायक है,
रहने लायक है, जीने लायक है।

★

[धार्मिक कविता और.....पृष्ठ १०५ का शेष]

परिक्रमा कर रही हैं।
लो—मेरी आत्मा
खड़ी है तुम्हारे सम्मुख
निश्चल। प्रशान्त।
क्या तुम अब भी मुझे नहीं देखते?"

रिल्के का काव्य एक अनिवार्य, अवश्यम्भावी देवत्व को समर्पित है। उसका 'देवता' ईसाइयों का सुदूर परम पिता नहीं है, अपितु वह वास्तविकता है, जो मनुष्य की अन्तरात्मा में आविर्भूत होने को है—जो मानवात्मा के समग्र विकास की दिशा है—जो सामूहिक अवचेतन के महासागर में सदैव वर्तमान, सदैव विकसनशील, सदैव देदीप्यमान रत्न है—जिसका मंथन अभी होने को है। वह देवता —रिल्के का ईश्वर—मानव-जाति की सर्वोच्च, सर्वोत्कृष्ट सर्जना है। वही हमारी आन्तरिकता का अनिवार्य प्रस्फुटन है। उसका सान्निध्य हमारे निकटतम पड़ौसी से भी निकटतर सान्निध्य है।

"बिटवीन अस देयर इज़ बट ए नैरो वॉल
ऐण्ड बाइ शीयर चांस, फार इट वुड टेक
मियरली ए काल फ्राम योर लिप्स आर
फ्राम माइन
टु ब्रैक इट डाउन
एण्ट दैट आल नॉइज़लैसली
द वॉल इज़ बिल्डेड आव योर इमेजेज़।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

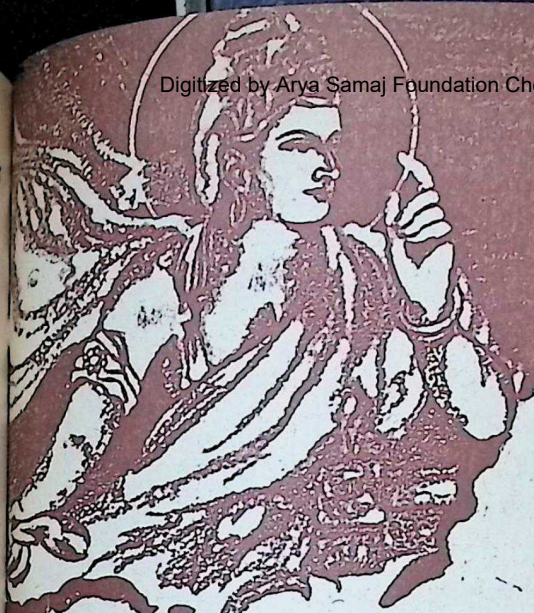

कृष्णावतार

• श्री कन्हैयालाल मुन्शी

पाक्षिक पूर्ण-पुरुष लीला

द्वितीय भाग

[३१ क]

विजयकूच

कृष्ण और दामघोष वर्षा के कारण जहाँ-तहाँ रुकते हुए धीरे धीरे मथुरा आ पहुँचे। राजा वसुदेव और उनके नेतृत्व में सारी मथुरा नगरी कृष्ण के स्वागत में उमड़ पड़ी। स्त्री-बालक-वृद्ध, जिस किसी के पैरों में चलने की शक्ति थी, वे सब अपार उत्साह के साथ कृष्ण को मनाने आये। पत्तों के बीच श्रीफल रखे हुए थे। ऐसे जलकुंभ सिर पर धरे स्त्रियाँ सबसे आगे चल रही थीं और मंगल गीत गा रहीं थीं। गर्गाचार्य और अन्य ब्राह्मण कृष्ण और राजा दामघोष को प्रभु का आशीर्वाद प्राप्त हो, इस आशय की प्रार्थना वाले मंत्रों का उच्चार कर रहे थे।

मथुरा ने ऐसा विजयोल्लास कभी नहीं देखा था। मथुरा के तारणहार अब विजेता बन कर लौटेथे—चक्रवर्ती जरासंध को पराजितकर। रानी पद्मावती ने भेंट में जो रथ, अश्व, स्वर्ण से लदी गाड़ियाँ इत्यादि दी थीं, उन्हें देखकर तो लोग जयघोष के नारों से गगन गुंजाने लगे। कृष्ण ने पीला पीतांबर पहन रखा था। गले में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रेशमी दुपट्टा और सिर पर मोरपंख से सज्जित मुकुट सुशोभित था। उनके रथ पर गरुड़ के चिह्नवाली ध्वजा फहरा रही थी।

राजा उग्रसेन, पिता वसुदेव, गर्गाचार्य, अक्रूर तथा अन्य बड़े-बूढ़ों के कृष्ण ने चरण छुये। फिर अपनी माता तथा अपर माताओं के पैर पड़े। त्रिवक्रा आगे बढ़ कर कृष्ण के चरणों में गिर पड़ी। और भी कई स्त्री-बालकों ने उन्हें प्रणाम किया। स्त्री-पुरुष उन पर पुष्पों की वर्षा कर रहे थे। कृष्ण उनके लिए ईश्वर का आशीर्वाद जो लेकर आये थे।

कृष्ण के साथ-साथ ही गुरु सांदीपनि भी आ गये। उन्होंने कृष्ण को आशीर्वाद दिया। चेदिराज दामघोष का भी भव्य स्वागत हुआ। उग्रसेन और वसुदेव उनसे गले मिले।

जब दामघोष के रथ में से शैब्या उतरी, तब सभी आश्चर्य से चकित हो गये कि यह अनुपम रूपसुन्दरी कौन है। उसकी सुंदर आँखें, गर्वोन्मत्त भंगिमा, अद्भुत पोषाक तथा मात्र रुद्राक्ष की माला के अलंकार सभी की दृष्टि अपनी ओर आकृष्ट कर रहे थे। जब दामघोष ने उग्रसेन और वसुदेव से शैब्या की चर्चा की तभी सभी का कौतुहल कम हुआ। शैब्या को देवकी के सिपुर्द कर दिया गया। कृष्ण ने माता से प्रणाम कर कहा, 'माँ तेरे लिए एक बेटी ले आया हूँ।' इन शब्दों को सुन कर देवकी की आशंकाएँ शमित हुईं।

त्रिवक्रा से मिलते समय भी कृष्ण शैब्या को नहीं भूले। 'त्रिवक्रा, तुम शैब्या का सदा ध्यान रखना। यह राजकुमारी है, परन्तु बहुत दुखी है। इसकी संभाल ऐसी रखना मानो यह माँ देवकी की ही पुत्री हो,' उन्होंने कहा। त्रिवक्रा के लिए तो कृष्ण की हर इच्छा का पालन करना ही परमकर्त्तव्य था। उसने शैब्या की देखभाल का काम अपने ऊपर ले लिया।

कृष्ण बड़े-बूढ़ों से हाथ जोड़ कर और बालकों से मुस्कुरा कर मिले। वे सभी से एक समान स्नेह के साथ बात कर रहे थे। सभी को ऐसा प्रतीत हुआ मानो कृष्ण उन्हें विशेषरूप से याद रखते हों। कंसा और उसके पुत्र वृहद का विचित्र और अप्रसन्नतासूचक व्यवहार भी उनसे छिपा नहीं रहा; परन्तु अपने सहज उत्साह में उन्होंने कोई फर्क नहीं आने दिया।

सभी पैदल चल कर नगर में वापस आये। सबके आगे मंत्रोच्चार करते हुए ब्राह्मण थे। पीछे मंगल गान करती हुई स्त्रियाँ चल रही थीं। अश्व झूम रहे थे, हाथी आनन्दोन्मत्त हो सूँड उछालते थे। सभी मार्गों पर तोरण सजे हुए थे। लोग भांति-भांति की क्रीड़ाएँ-खेल करते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चल रहे थे। कविगण विजय के गीत गा रहे थे और यादवों की कीर्तिगाथा का स्मरण कर रहे थे।

विजयोत्सव पूर्ण होने के बाद राजा दामघोष ने अपने राज्य में जाने के लिए विदा ली। कलह में कब से फँसी मथुरा नगरी ने अंततः चैन की सांस ली। सभी लोग कृष्ण की बातें करते थे, उनसे मिलने के लिए अधीर रहते थे। कृष्ण ने क्या किया, आगे वे क्या करेंगे, यही जानने के लिए सब आतुर थे। और सब कोई-कंसा, बृहद और उसके साथी भी—कृष्ण से कैसे मेल किया जाय, इसी द्विधा में थे।

कृष्ण ने आते ही नगर के विषय में रुचि लेना प्रारंभ कर दिया। इससे बृहद और उसके साथी चिंतातुर हो गये। राजा ने सभी युवकों को सैनिक शिक्षा लेने की आज्ञा दी। यमुना तट पर स्थित आम्रकुंज में गुरु सांदीपनि ने इसके लिए एक आश्रम की स्थापना की। अब तक अश्वपालन का कार्य वृद्ध गड की देखरेख में होता था अब इसका भार यादव सेना के सेनापति शंकु को सौंपा गया।

अश्वों को पालने और शिक्षित करने तथा युद्ध के रथ तैयार करने के लिए आज्ञा दी गयी। रानी पद्मावती द्वारा दिये गये स्वर्ण से उत्तम अश्व खरीदने के लिए अन्य देशों में लोग भेजे गये।

यह नयी आज्ञा सुन कर लोग दंग रह गये। प्रत्येक यादव सरदार के पास युद्ध के रथ होने ही चाहिए। कार्तिक मास की पूर्णिमा को रथ-स्पर्धा की योजना होगी। कंस ने वर्षों पहले यादव सरदारों की सत्ता का नाश करने के लिए इस स्पर्धा को बन्द कर दिया था। अब यादव सरदार मात्र अतीत के गौरव का स्मरण कर निरुद्देश्य एकत्रित होने के बदले एक नयी चेतना का स्पन्दन अनुभव कर रहे थे। कृष्ण और बलराम के पराक्रमों ने उनमें एक नयी आशा का संचार किया। सभी सोच रहे थे कि अब जरासंध मथुरा पर अपने पराजय का बदला लेने का प्रयत्न करेगा। परन्तु अब सभी को एक नया ध्येय मिल चुका था - कृष्ण धर्म की रक्षा के प्रतीक बन गये थे।

कृष्ण के जीवन की महान घटनाओं की चर्चा हर एक की जबान पर थी। गोमान्तक और करवीरपुर की पराक्रम गाथा बार-बार सुनने से कोई अघाता नहीं था। बलराम और उद्धव ने जिस नये अभियान के लिए प्रस्थान किया था, वह भी सभी की चर्चा का विषय था। मथुरा को अजेय बनाने और जरासंध की दुर्जेयता को भंग करने की यह नयी योजनाएँ सभी के हृदय में बस गयी थीं।

कृष्ण की आज्ञाओं का पालन यादवगण सहर्ष करने लगे। उन्हें प्रतीति हो गयी कि मस्तक पर जब तक मगध का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भय झूलता रहेगा, तब तक स्वतंत्रता और सत्ता को कभी स्थायी नही माना जा सकता। वसुदेव ने मथुरा के दुर्ग को अधिक दृढ़ बनाने और उसके आसपास की खाइयों को अधिक चौड़ी और गहरी बनाने की आज्ञा दी। कृष्ण ने कहा, "अब वीर विक्रदु को कभी यह नहीं कहना पड़ेगा कि यादव शत्रु का सामना नहीं कर सकते।"

बृहद के लिए तो यह परिस्थिति बड़ी विषम थी। उत्साह के इस नये वेग में उसे तथा उसके मित्रों को कोई याद भी नहीं करता था। यह स्थिति हो गयी थी कि उन्हें या तो इस नये प्रवाह में सम्मिलित हो जाना चाहिए, अथवा अलग रह कर उपेक्षणीय बन जाना होगा। बृहद को सबसे अधिक क्रोध तो कृष्ण पर था। वे जहाँ भी जाते वहीं लोगों की भीड़ उमड़ पड़ती। प्रातःकाल स्नान करने जाते तो नदी तट पर अनेक लोग उनके दर्शनार्थ एकत्र हो जाते। शिवमंदिर में दर्शन करने जाते तो वहाँ भी लोगों की भीड़ उमड़ पड़ती। देवकी को प्रणाम करने जब वे पहुँचते तो उस समय नगर की अधिकांश नारियां देवकी से मिलने चली आतीं। कृष्ण जब व्यायाम शाला में होते तो नगर के युवाओं का दल वहाँ उपस्थित रहता। जब कृष्ण गोशाला में जाते, तब जस प्रकार प्राणी उनके वश में हो जाते, यह देख कर तो सभी दंग रह जाते। स्पर्धा के मैदान में जब कृष्ण अपना रथ चलाते तब लोग मन्त्रमुग्ध होकर उनकी चपलता और स्फूर्ति को देखा करते।

बृहद बिलकुल शान्त हो गया था। युवा वृष्णी, नायक सात्यकी भी अपना आत्म-विश्वास खो बैठे थे। उन्हें अब स्वच्छन्द विहार में रुचि नहीं रही। वे जानते थे कि कृष्ण को वे अब अच्छे नहीं लगते और कृष्ण के मन चाहे वैसा आचरण करना उनके लिए सुखद नहीं था। बृहद युवराज बनने के सपने देखता था; परन्तु अब यह सम्भव नहीं था। वह जरासंध का साथी बनने की कल्पना करता था; परन्तु कृष्ण ने जरासंध को पराजित कर दिया था। अब मथुरा सम्राट की हँसी उड़ाता था और वृहद भी भयभीत था कि शायद कृष्ण को यह खबर न लग जाय कि उसने जरासंध को कृष्ण के बारे में सब खबर दे दी थी।

बृहद की माता कंसा ईर्ष्या से पागल बन गयी थी। बृहद को युवराज बनाने की बात तो मानो किसी को याद ही नहीं रही। मथुरा को शक्तिशाली बनाने की महत्वाकांक्षा ही सबके मन में बसी थी। इसमें युवराज पद की बात का कोई महत्त्व ही न रहा। कंसा किसी ऐसे कुकृत्य की कल्पना कर रही थी, जो देखने में तो अकस्मात ही जान पड़े, परन्तु उसका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिन्तित कार्य जिससे सम्पन्न हो जाय।

इस नयी परिस्थिति के साथ अनुसंधान साधने में सात्यकी सर्वप्रथम था। उसने अपने मित्रों से चुपचाप इस नये उत्साह में सम्मिलित होने के लिए कहा। बृहद भी सात्यकी की सलाह मान कर मल्लयुद्ध, रथ-संचालन तथा शस्त्रविद्या की शिक्षा प्राप्त करने में लग गया।

शैब्या अभी इस नये वातावरण के अनुकूल नहीं हो पायी थी। वह अब भी अपने चाचा की मृत्यु पर विलाप करती। देवकी और त्रिवक्रा ने उसके मन को स्वस्थ करने के अनेक उपाय किये; परन्तु वे सब निष्फल रहे। मात्र देवकी की बाल-कृष्ण-पूजा को वह दिलचस्पी से देखती। स्वयं अपने चाचा के स्वर्ण-काल में उसकी नित्य पूजा किया करती थी, उसका स्मरण इस पूजा से हो जाता था। शैब्या का मिजाज़ जितना तेज था-उतनी ही तेज उसकी ज़बान थी। परन्तु देवकी के साथ तो झगड़ा करना असम्भव ही था। शैब्या कई बार देवकी को अविवेकी प्रश्नों से असमंजस में डालने का प्रयास करती; परन्तु देवकी सदा शान्त और स्नेहिल स्वर में उसके सभी प्रश्नों का उत्तर देती।

त्रिवक्रा कुछ और ढंग की थी। वह बहुत ममतामयी और उदार थी। कभी-कभी जब शैब्या का दिल रुदन करने का होता तो उसे जी भर कर रो लेने देती। शैब्या जब रुष्ट होती, तब वह चुप रहती, परन्तु यदि शैब्या कृष्ण के विषय में कुछ अपमान सूचक शब्द कहती,। तब उससे विरोध किये बिना नहीं रहा जाता। वह कृष्ण की उदारता की प्रशंसा करती, कृष्ण के चमत्कारों की बात कहती, और कृष्ण ने किस चमत्कारिक रूप से उसे सुन्दर बना दिया था, उसका स्मरण कृतज्ञतापूर्वक करती। वह शैब्या से कहती, "तुम अकृतज्ञ हो, ऐसे पुरुष के गुण भी तुम स्वीकार नहीं करती?" दोनों देर तक विवाद करती रहतीं; परन्तु अन्त में शैब्या थक जाती और असहाय होकर आंसू बहाने लगती। तब त्रिवक्रा उसके पास बैठ कर उसे सान्तवना देती।

[क्रमशः]

अनु० ओंकारनाथ शर्मा

★

बहुत से लोग, जिनमें देश के चोटी के शिक्षा शास्त्री भी शामिल हैं यह समझते हैं कि अंग्रेजी के माध्यम से ही विज्ञान सीखा जा सकता है। अंग्रेजी और विज्ञान एक ही बात के दो पर्यायवाची हैं, यह भारी भ्रम जितनी जल्दी दूर हो जाय, उतना ही शीघ्र देश का कल्याण होगा। —आचार्य विनोबा भावे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

★

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

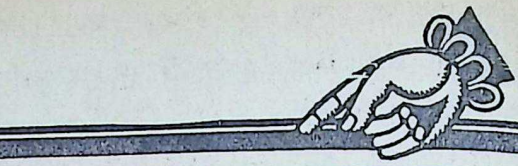

एन्टल

सबसे
भरोसा योग्य

बीजाणु नाशक

एन्टल संक्रमण का प्रतिरोध करता है। कटने, छिलने व कीट पतंगों के काटने पर एन्टल का इस्तेमाल कीजिए निश्चित रूप से लाभ होगा।
बीजाणु संक्रमण को रोकने के लिए एन्टल से नियमपूर्वक मुंह धोने और कुल्ला करने से विशेष गुणकारी है।
एन्टल से धोने और मांजने से दीवार और सतह बीजाणु मुक्त रहते हैं। संक्रमण का कोई डर नहीं रहता।

एन्टल को बराबर साथ रखिये

सबसे भरोसा योग्य बीजाणु नाशक

बंगाल इम्युनिटी का एक उत्पादन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[आगामी मनुष्य मृत्यु पर विजय प्राप्त करेगा...पृष्ठ १५ का शेष]

कि कोई ऐसा भौतिक साधन खोज निकालना संभव है, जिससे कि मृत्यु जीती जा सके, किन्तु इसका अर्थ होगा वर्तमान चेतना को वर्तमान शरीर में बनाये रखना। जब तक चेतना का और उसकी क्रियाओं का परिवर्तन नहीं हो जाता, तब तक यह एक बहुत तुच्छ प्राप्ति होगी।

अधिकांश व्यक्तियों के लिए यह यथार्थतः सत्य है कि जीवन का सुख, स्वयं अस्तित्व में होने का सुख जीवन के दुःख-कष्टों से बहुत अधिक होता है, अन्यथा अधिकांश लोग मरना ही चाहते, जबकि यह सत्य है कि प्रत्येक व्यक्ति जीना चाहता है। यह भी सच है कि इसके मूल में है अस्तित्व का, बने रहने का आनन्द। यह आनन्द प्रत्येक चीज़ के पीछे विद्यमान है और अस्तित्व के सुख की सहज भावना के रूप में प्रतिबिम्बित होता है। अवश्य ही यह मूलगत सहज सुख ही वह आनन्द नहीं है, वरन् निम्नतर प्राण-चेतना में उसकी एक फीकी और धुंधली छाया मात्र है, किंतु अपने कार्य के लिए वह यथेष्ट है। मैंने स्वयं वह चीज़ कहीं पर कही है, और इस युक्ति में मैं कोई असंगत या अतिशयोक्तिपूर्ण बात नहीं देखता।

अतिमानसिक पूर्णता उसे कहते हैं जब शरीर सचेतन हो जाता है, चेतना से भर जाता है और चूंकि यह चेतना सत्य-चेतना होती है, उसकी क्रियाएँ, चेष्टाएँ आदि अन्तर की चेतना की शक्ति से सामंजस्यपूर्ण, प्रकाशपूर्ण, यथार्थ और सच्ची बन जाती हैं, उनमें अज्ञान या अव्यवस्था नहीं रहती।

हठयोग की पद्धति है शरीर के अन्दर प्रबल प्राण-शक्ति उतार लाना, फिर उसके द्वारा तथा कुछ अन्य प्रक्रियाओं के द्वारा शरीर को सबल और स्वस्थ बनाकर एक सुयोग्य यंत्र बनाये रखना।

वेद में उच्चतर लोकों की सत्ताओं के ज्योतिर्मय शरीर की बात कही गयी है। पूर्व और पश्चिम के कुछ यौगिक सिद्धान्तों में यह माना गया है कि अन्तिम रूपान्तर की स्थिति आने पर इस पृथ्वी पर भी मनुष्य उन्हीं गुणों से युक्त एक शरीर का विकास करेगा। श्रीमाँ के प्रथम आध्यात्मिक शिक्षक ने इसे 'तेजोमय शरीर' (Body of Glory) का नाम दिया था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान और हिन्दू धर्म

[लेखांक : १ :]

● शचीन्द्रनाथ सान्याल

●

अपने साथियों के बीच शचीन दा'के नाम से प्यारे, स्वर्गीय शचीन्द्रनाथ सान्याल, केवल क्रान्तिकारी विप्लव-पुरुष ही नहीं, गंभीर विचार-पुरुष भी थे। भारतीय क्रान्तिकारी आन्दोलन के जहाँ वे एक वह्निमान मशालची थे, वहाँ अपने कठोर कारावास की बन्दिनी घड़ियों में बैठ कर, उन्होंने वर्तमान जीवन-जगत की सर्वतोमुखी समस्याओं पर अतलगामी मौलिक चिन्तन भी किया था। उनका प्रस्तुत लेख, हमें विश्वास है, हमारे देश की प्रबुद्ध आधुनिक पीढ़ी को सही मार्ग-दर्शन करने में एक अमूल्य योगदान सावित होगा।

●

आजकल कम्युनिज्म् के प्रचार के कारण हमारे देश के बहुत से लोग ऐसा समझने लगे हैं कि धर्म एक कुसंस्कार मात्र है। संसार की प्रगति के पथ में धर्म एक रोड़ा मात्र है। ऐसे पुरुषों की धारणा है कि विज्ञान की उन्नति के साथ-साथ यह धर्मभाव विलुप्त होने लगा है। उनकी यह भी धारणा है कि यूरोप और अमेरिका में धर्मविरोधी प्रगति बड़े ज़ोरों से हो रही है, भारत इन सब देशों से इस मामले में कहीं पिछड़ा हुआ है।

जो लोग विज्ञान और प्रगति के नाम पर धर्म की निन्दा करते हैं, उनमें से अधिकांश विज्ञान की आधुनिक गति से नितान्त अपरिचित हैं। कुछ लोग तो ऐसे भी हैं, जो अपने को बहुत बड़ा युक्तिवादी मानते हैं और इसी अभिमान में आधुनिक विज्ञान से कुछ परिचित होने पर भी ऐसी बातें करने लगते हैं, मानों परम और चरम तत्त्व को उन्होंने पूर्ण-रूप से पा लिया है। ऐसे लोगों से बात

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करना बहुत कठिन हो जाता है; क्योंकि वे किसी की कुछ सुनना ही नहीं चाहते।

आधुनिक संसार के चिन्तनशील व्यक्तियों में श्री बर्ट्रेण्ड रसल का नाम प्रमुखरूप से लिया जा सकता है। पाश्चात्य विज्ञान एवं पाश्चात्य दर्शनशास्त्र के आप बहुत बड़े पंडित हैं, यद्यपि वैज्ञानिक खोज के विषय में आपकी प्रायः कुछ भी देन नहीं है। संसार भर में कोई भूमिका, पृष्ठ ५)। रसल महोदय का कहना है कि अमेरिका और रूस में कट्टर पादरियों की अन्धाधुन्धी बहुत बढ़ गयी थी, उसी की प्रतिक्रिया के रूप में उन देशों में जड़वाद ने इतने उग्र रूप में आत्मप्रकाश किया है।

प्रसिद्ध जीववैज्ञानिक श्री जे. एस. हॉल्डेन महोदय ने तो यहाँ तक कह दिया है कि यदि व्यक्तिगत रूप से जड़वाद

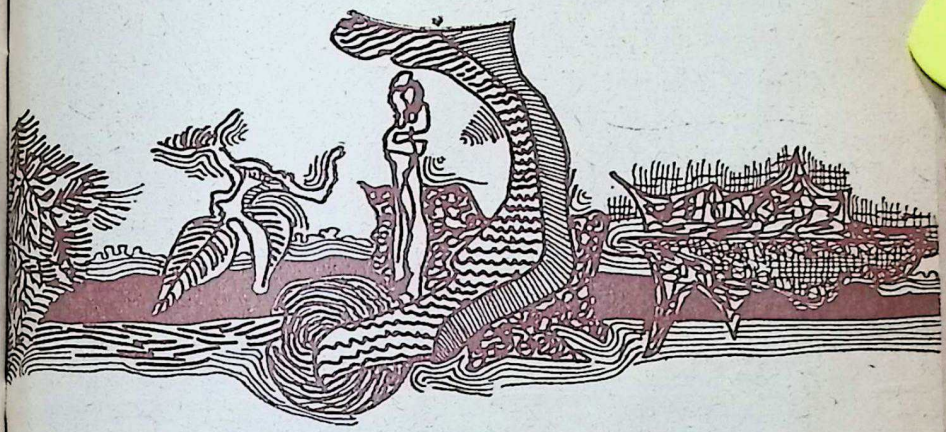

भी ऐसा नहीं है, जोकि रसल साहब को प्रगति विरोधी कह सकता है। ये रसल साहब कहते हैं कि आधुनिक संसार में अमेरिका के कुछ वैज्ञानिकों को छोड़ कर एवं 'सोवियत रूस' के राजनीतिज्ञों को छोड़ कर और कोई भी प्रमुख दार्शनिक अथवा वैज्ञानिक नहीं है, जो जड़वाद को स्वीकार करता हो, (देखिए —लैंगकृत जड़-वाद के इतिहास में 'बर्ट्रेण्ड रसल' की के माननेवाले वैज्ञानिकों के प्रति मेरी असीम श्रद्धा नहीं होती, तो जड़वाद के मानने के कारण उन्हें मैं घृणा की दृष्टि से देखता। [देखिए–Materialism, by J. S: Haldane C.H., P. 39]

डॉ. अलेक्सिस कैरेल नामक एक और जगत्प्रसिद्ध जीव-वैज्ञानिक हैं। आपने नोबल पुरस्कार प्राप्त किया है। अमेरिका के प्रसिद्ध 'राकफेलर इन्स्टिट्यूट' में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप एक विशिष्ट अनुसंधान करने वाले है। आपका यह स्थिर सिद्धान्त है कि विज्ञान की आधुनिक गति ने जड़-वाद के मूल को मिटा देने में बहुत कुछ सफलता प्राप्त की है। (देखिए—कैरेल साहब लिखित–['Man the Unknown']

न्यूयार्क युनिवर्सिटी के श्री कार्लट्रू ब्लड चेज महोदय अपने ग्रन्थ 'फ्रन्टियर्स आफ़ सायन्स (Frontiers of Science) के आठवें पृष्ठ पर लिखते हैं: 'Those moderns who insist that god and Science are mutually exclusive are fully as prejudiced as were the early religious dogmatisto' अर्थात् अपने को नवीन विचारधारा के पक्षपाती कहनेवाले, आधुनिक प्रगति के पुजारी व्यक्तियों में से जो लोग इस बात पर ज़िद करते हैं कि ईश्वर और विज्ञान दोनों का एक साथ अवस्थान असम्भव है, वे वैसे ही अंधविश्वासी और कुसंस्कारसम्पन्न हैं, जैसे अतीतकाल में धर्म के अनुरागियों में अन्धविश्वासी होते थे।

इसी प्रकार इंग्लैण्ड के एक और प्रसिद्ध पंडित श्री ब्रोड महोदय भी कहते हैं कि विज्ञान के नाम पर जड़वाद का समर्थन करना एक अन्धविश्वास मात्र है।

इंग्लैण्ड के एक और प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ. इ. एस. रसल साहब भी जड़वाद के विरोधी हैं। आपने दो-तीन ग्रन्थ लिख कर जीव-विज्ञान में हलचल मचा दी है। (देखिए-उनकी लिखित—The study of living things, Interpretation of development and Heredity) एक दूसरे जगद्विख्यात अंग्रेज जीव वैज्ञानिक जे. आर्थर टाम्सन (J. Arthur

प्रत्येक शहर के लिए हम एकही व्यापारी को अपना स्टाकिस्ट नियुक्त करते हैं।

सोल एजेन्ट्स:
दी युनायटेड कम्पनी
५४, बन्दर स्ट्रीट,
मद्रास–१

बम्बई–शाखा–२७७ विश्वास भवन, घेवदार रोड़, माटुंगा, बम्बई १९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Thomson) भी जड़वादी नहीं है।

हाइडलवर्ग-युनिवर्सिटी के पदार्थ-विज्ञान के प्रसिद्ध अध्यापक फिलिप्स लेनार्ड, जिन्होंने नोबल पुरस्कार भी प्राप्त किया है, एवं लण्डन और फिलेडेल-फिया के प्रसिद्ध वैज्ञानिक संस्थाओं से, अपने खोज के पुरस्कार स्वरूप, कई एक पदक प्राप्त किये हैं, सरीखे विचक्षण पदार्थ विज्ञान के विशेषज्ञ भी जड़वाद के विरोधी हैं।

आधुनिक संसार के प्रसिद्ध वैज्ञानिक, अज्ञात लोक से आनेवाले अदृश्य रश्मियों में विचक्षण अनुसन्धानवादी, अमेरिका के श्री मिलिकन महोदय भी जड़वाद के घोर विरोधी हैं। आधुनिक संसार के सबसे प्रसिद्ध वैज्ञानिक, जिनके नवीनतम सिद्धान्त ने वैज्ञानिक जगत में विप्लव मचा दिया है, स्वनामधन्य आइन्स्टीन महोदय भी चैतन्यवादी हैं। जगत्प्रसिद्ध वैज्ञानिक श्री एडिंग्टन (Eddington) एवं श्री जीन्स (Jeaes) के बारे में तो आज घर-घर चर्चा हो रही है। इन दोनों वैज्ञानिकों ने जड़वाद के विरुद्ध युद्ध-घोषणा कर दी है। अपेक्षाकृत अल्पपरिचित वैज्ञानिकों का उल्लेख मैंने इस स्थान पर नहीं किया है। आधुनिक युग को छोड़ कर ऐतिहासिक क्रम से भी प्रसिद्ध वैज्ञानिकों के मतों से इस स्थान पर मैंने उद्धृत नहीं किया है। नहीं तो मैं यह दिखला सकता था, कि सौ में नब्बे वैज्ञानिक जड़वाद में विश्वास नहीं रखते। अर्थात वैज्ञानिक अनुसंधान के कार्य में कृतित्व के साथ लगे रहने पर भी वे जड़वादी नहीं बने। क्योंकि विज्ञान की आलोचना से जड़वाद की प्रेरणा का अनुभव करना स्वाभाविक नहीं है। उल्टे आजकल के बड़े-बड़े बहुत से ऐसे भी वैज्ञानिक हैं, जो मुक्त कण्ठ से ऐसा कहते हैं कि जितनी ही वैज्ञानिक खोज की जा रही है, उतने ही महान विस्मय में हृदय और मन डूबे जा रहे हैं। इन सभी दृष्टान्तों को देकर मैं केवल यही बतलाना चाहता हूँ कि आधुनिक विज्ञान का यह सन्देश नहीं है कि जड़वाद सत्य है और आत्मवाद मिथ्या है। लोगों की यह धारणा निन्तात भ्रमात्मक है कि विज्ञान की चर्चा करने पर मनुष्य अनिवार्यरूप से जड़वादी बन जायगा। परन्तु जब न्यूटन, फाण्डे, और आइन्स्टीन इत्यादि के दृष्टान्त देकर यह कहा जाता है कि आधुनिक विज्ञान के प्रधान आचार्यगण जड़वादी नहीं हैं और वे ईश्वर अथवा चेतन को किसी न किसी रूप में विश्व-संसार के मूल में प्राण स्वरूप से मानते हैं, तो जड़वादीगण, जिनमें वैज्ञानिक बहुत कम हैं,—कहने लगते हैं कि ये तो उनके व्यक्तिगत मत हैं, इनके साथ विज्ञान का कोई सम्बन्ध नहीं है। ठीक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शुभ कामनाओं के साथ :

प्रोसेस इन्ग्रेविङ्ग ब्लाक्स तथा
आफसेट प्रिन्टिङ्ग प्लेट्स

के लिए प्रख्यात

धारगलकर प्रोसेस प्रा. लि.

कार्यालय : **विक्टोरिया मिल्स कम्पाउण्ड**
पहली मंजिल
गामदेवी, बम्बई ७
टेलीफोन : ७६१८०

☆

कारखाना : **"इलार" बिल्डिङ्ग**
५२४-तुलसी पाइप रोड
दादर, बम्बई २८-डी.डी.

मैनेजिङ्ग डायरेक्टर : **एच. एस. धारगलकर**
आवास-स्थान फोन : ५३५०२०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं, परन्तु इसी प्रकार तो जड़वादी बनते हैं, उनके जड़वाद के साथ भी विज्ञान का कोई सम्बन्ध नहीं है। जड़वादी इस बात को भूल जाते हैं, और अज्ञान के कारण विज्ञान के नाम पर भ्रमात्मक धारणाएँ फैलाते हैं।

अब यदि युक्ति के मार्ग पर विज्ञान के सिद्धान्तों की पर्यालोचना करें, तो यथार्थ रूप में हम यह हृदयंगम कर सकेंगे कि विज्ञान के साथ धर्म का क्या सम्बन्ध है। विज्ञान की उन्नति के कारण आज संसार की प्रत्येक दिशा में शोर मचा हुआ है। एक ओर विज्ञान के कारण सुःख-समृद्धि बढ़ रही है, दूसरी ओर उसी विज्ञान के कारण अनर्थकारी मरण—दुंदुभी भी बज रही हैं। एक ओर तपस्वियों की तरह कुछ वैज्ञानिक महानुभाव सत्य की खोज में लगे हुए हैं, दूसरी ओर हज़ारों-लाखों की संख्या में, प्रतिभाशाली, अनुसंधानकारी, वैज्ञानिक अर्थ के दास बन कर, अनीति के मार्ग में, दुष्ट एवं प्रजापीड़नकारी साम्राज्यशाही के अनुचर बन रहे हैं। विज्ञान की उन्नति के साथ जिस तरह से हम, क्षण भर में, किसी एक संवाद को पृथ्वी के एक कोने से दूसरे कोने तक पहुँचा सकते हैं, एवं फोटो खीचने के साथ-साथ वैद्युतिक अनुसंधान के परिणाम-स्वरूप रेडियो एवं सिनेमा के द्वारा प्रजा में आनन्द एवं विनोद का प्रसार कर रहे हैं, उसको देखते हुए यह कहना पड़ता है कि ये सब अद्भुत वैज्ञानिक आविष्कार आज नितान्त तुच्छ प्रयोजन में लगाये जा रहे हैं। विनोद के स्थान पर असदाचार या दुर्नीति फैल रही है। आकाश में वैद्युतिक लहरों के आविष्कार, देश-देशान्तर के बैण्ड, कन्सर्ट, नाच घर के गायक-गायिकाओं के संगीत सुनने के काम में ही लाये जा रहे हैं। एक ओर जैसे विज्ञान की उन्नति के कारण रोगियों की चिकित्सा के लिए नये-नये विस्मय-कर साधन एवं औषधियों का आविष्कार हो रहा है, उसी के साथ-साथ दूसरी ओर इसी विज्ञान की सहायता से नय-नये प्रकार के विष एवं विषैले धुओं के आविष्कार भी अपेक्षाकृत अधिक द्रुतगति से एवं अधिक व्यापक रूप में हो रहे हैं, मनुष्य समाज में शान्ति फैलाने के लिए नहीं, प्रत्युत क्षिप्रगति से मनुष्य संहार के कार्य को सरल एवं अव्यर्थ बनाने के लिए। रेडियो पर एक ओर जैसे कुछ चुने हुए खास-खास व्यक्तियों के छोटे-छोटे भाषण होते हैं, दूसरी ओर वैसे उसी रेडियो के द्वारा, कहीं अधिक व्यापक रूप में नर्तकियों के बाज़ारू गाने और उनके घुंघु-रुओं के झन्कार के शब्द दिग्दिगन्त में फैलाये जाते हैं, एक ओर विज्ञान की सहायता से भूमि की उपज अधिक से अधिक बढ़ायी जाती है, तो दूसरी ओर उसी विज्ञान से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१८ बहुमूल्य जड़ीबूटियोंके योगसे निर्मित सर्वप्रथम

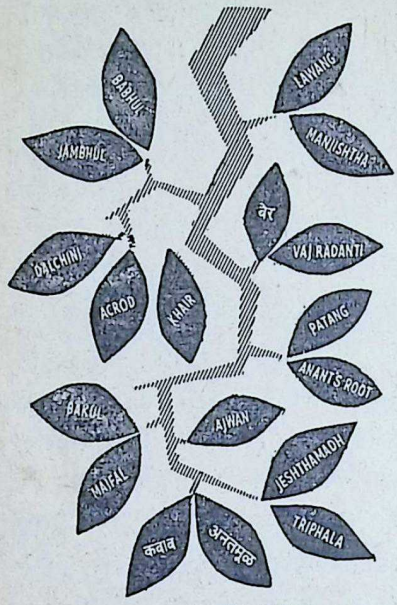

आयुर्वेदिक
पेस्ट और पाउडर

दांत साफ करनेका काम दुनियाकी कोई भी टूथपेस्ट या पाउडर कर सकता है लेकिन सोचनेकी बात यह है कि मसूढ़ों को सुदृढ बनाने के लिए उसमें कौनसे तत्व हैं, सर्वप्रथम आयुर्वेदिक विको वज्रदन्ती (पेस्ट और पाउडर) जो १८ जड़ीबूटियों से बनी है मसूढ़ों को मजबूत रखती है और इस प्रकार दांत ढीला नहीं हो पाते। एकबार आजमाइये और संतोष प्राप्त कीजिये।

विको वज्रदंती
पेस्ट व पाउडर

VICCO LABORATORIES DADAR T.T., BOMBAY 14

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वार्थ पर व्यापारी अपने लाभ के प्रति दृष्टि रख कर समाज की आवश्यकताओं के प्रति लज्जाहीन एवं सर्वथा उदासीन होकर अपने पदार्थों का मूल्य-भाव बढ़ाने के उद्देश्य से उस उपज को नष्ट करने में भी नहीं हिचकते। विज्ञान की उन्नति के कारण सौ आदमियों का काम एक यन्त्र कर रहा है, और इस प्रकार यद्यपि पहले की अपेक्षा, आजकल पैदावर हज़ारों-लाखों गुना बढ़ गयी है, तथापि उस समय की अपेक्षा आजकल नग्न दरिद्रता एवं अनादर के मारे हाहाकार कहीं अधिक बढ़ गया है। विज्ञान की उन्नति की तुलना में, समाज में सुख-शान्ति अपेक्षाकृत बहुत ही कम बढ़ी है। अमेरिका एवं यूरोप के समाज में, पारिवारिक दृष्टि से अथवा सामाजिक दृष्टि से आज घोर अशान्ति फैली हुई है। विज्ञान की अद्भुत उन्नति होने पर भी समाज की यह मर्म वेदना इतनी हृदय-विदारक क्यों हो रही है? यह सब इसलिए हो रहा है कि जगत् विज्ञान के नाम पर धर्म और नीति का त्याग करने लगा है।

बड़े से बड़े वैज्ञानिक भी इस बात को स्वीकार करते हैं कि धर्म, नीति अथवा दर्शन के स्थान को विज्ञान कभी ग्रहण नहीं कर सकता। विज्ञान एक साधन मात्र है। विज्ञान से कल्याण होगा या अकल्याण, यह उसे काम में लानेवाले की नीयत, नीति और प्रणाली पर निर्भर करता है। किसमें कल्याण है और किसमें अकल्याण, इस बात का निर्णय किस मापदण्ड से होगा? किस आदर्श से प्रेरित होकर मनुष्य काम करेगा, जिससे उसका अपना भी लाभ हो और समाज का भी। इस आदर्श का निर्णय कैसे होगा? इन प्रश्नों की मीमांसा करते समय विज्ञान और धर्म के पारस्परिक अनिवार्य सम्बन्ध को हम जान सकते हैं। एक बात तो निश्चय है कि केवल मात्र विज्ञान की सहायता से ही हम नीति के प्रश्न की मीमांसा कभी नहीं कर सकते। प्रत्येक चिन्तनशील व्यक्ति को यह बात माननी ही पड़ेगी कि समाज के नियन्त्रण के लिए और समाज के हित के लिए विज्ञान के अतिरिक्त और भी किसी चीज़ की आवश्यकता अवश्य है। वह कौन सी चीज है? वह चीज़ है धर्म या नीति। अवश्य ही जीवन का आदर्श क्या होना, चाहिए, इसका निर्णय करते समय विज्ञान से भी सहायता लेने की आवश्यकता होगी, क्योंकि विज्ञान के बिना हम धर्म या नीति को कार्यकारी नहीं बना सकते। भारतीय सभ्यता के दृष्टिकोण से, विज्ञान, धर्म, नीति, दर्शन इत्यादि के सम्बन्ध इतने घनिष्ट हैं कि एक को छोड़ कर दूसरे का मनन करना अज्ञता का परिचय देना होता है। यह बात पाश्चात्य समाज को अभी सीखनी है, और हमारे देश में जो व्यक्ति पाश्चात्य का अन्ध अनुकरण करने में ही अपना कृतित्व समझते हैं, उन्हें भी यह बात अवश्य सीखनी है।

[क्रमशः]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विलियम ब्लैक

महाकवि विलियम ब्लैक : जो शताब्दियों पूर्व गुज़री आत्माओं से भेंट किया करते थे

जोनाथन मार्टिन

महाकवि विलियम ब्लैक, विश्व-साहित्य में, अमर जीवन के अप्रतिम सन्देश-वाहक कवि और विज़नरी माने जाते हैं। आन्तरिक आत्मिक शुद्धि के वे मूर्तिमान अवतार थे। वे माइकेल ऐंजिलो और मोज़ेज़ तक से बातचीत किया करते थे: सपनों में नहीं, पर रात की शान्त स्तब्ध घड़ियों में, अपनी एकान्त शैया में अकेले जागते हुए इन शताब्दियों पहले गुज़रे व्यक्तित्वों से उनकी सदेह भेंट होती थी। सेमिरामिस प्रायः ही सदेह उनके सामने प्रत्यक्ष होता था; क्लीओ-पेट्रा से उनकी बातचीत होती थी और 'ब्लैक प्रिंस' उनके सामने बैठ कर अपनी तस्वीर खिंचवाता था। वे निर्बाध रूप से भूतकाल में विचरण करते थे; आत्माओं के अगोचर विश्वों के द्वार उनकी पुकार पर खुल जाते थे, और विगत कालों के कई महापुरुष, रक्त-माँस की उसी देह में उनके 'स्टूडियो' में आ उपस्थित होते थे, जिसे पृथ्वी पर उन्होंने धारण किया था। नाना कोणोंवाले बिल्लौरी शीशों के भीतर से वे अगोचर विश्वों का दर्शन और चित्रण करते थे। मैंने ऐसे कई चित्र उनके देखे हैं, जो शताब्दियों पहले मर चुके व्यक्तित्वों के थे, और जिन्हें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्होंने उन मृतात्माओं के भूतों से साक्षात् करके अंकित किया था।

अब तक प्रेतात्माओं के दर्शन की जो घटनाएँ सुनायी पड़ती हैं, उन सब से ब्लैक का प्रेत-दर्शन बहुत ही असाधारण और निराला था। क्या यह सम्भव है कि 'डैमनॉलॉजी एण्ड विचक्रेफ्ट' के लेखक वाल्टर स्कॉट ने और 'नेचरल मेजिक' के लेखक डेविड ब्रूस्टर ने विलियम ब्लैक का नाम कभी न सुना हो? यदि मैं कोई भारी भूल नहीं करता हूँ तो एलन कनिंघाम ने उपरोक्त पुस्तकों के प्रकाश में आने से पहले ही, जनता के सामने प्रेत-दर्शन का परिचय प्रकट कर दिया था; उसकी किस पुस्तक में उसने यह विवरण दिया है, मुझ ठीक-ठीक याद नहीं आता।

विलियम ब्लैक निरे दृष्टि-भ्रमों के शिकार नहीं थे। जो कुछ भी वे देखा करते थे, उस पर उनका दृढ़ विश्वास था। इसमें उन्हें रंच भी सन्देह नहीं था कि एडवर्ड तृतीय अपने सूक्ष्म शरीर में अनेक बार उनके पास आया करते थे। उन्होंने तीन बैठकों में राजा एडवर्ड का तैल-चित्र बनाया था। ब्रूस की प्रेतात्मा प्रायः ही उनसे बातचीत करने आया करती थी। किसी भी महान् व्यक्तित्व का प्रेत अपने सामने प्रकट होते ही ब्लैक दृष्टि उठाने मात्र में पहचान लेते थे। उस व्यक्तित्व के 'वही' होने में उन्हें कोई सन्देह नहीं होता था। उनके मित्र मार्क एण्टोनी ने अपना कार्ड नहीं भेजा था। न किसी ने उनके आगमन की पूर्व सूचना दी थी। फिर भी सामने आते ही उस रोमन को ब्लैक ने पहचान लिया, और तुरन्त नाम से पुकार कर सम्बोधन किया।

मध्य-रात्रि के पहरों में ही प्रसिद्ध महापुरुषों की प्रेतात्माएँ ब्लैक के पास आया करती थीं। कभी-कभी उनकी मुलाक़ात बहुत संक्षिप्त होती थी, लेकिन अक्सर ब्लैक जितनी देर चाहते, उतनी

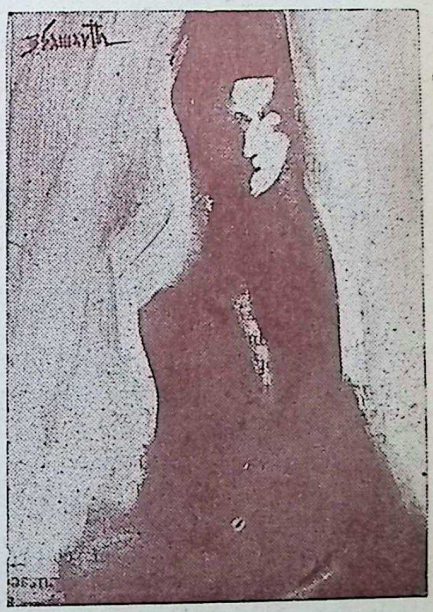

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देर उन्हें अपने साथ रख सकते थे। ऐसे कई अवसरों पर मैं उपस्थित रहा हूँ। एक रात की बात है, ब्लैक की 'बुक ऑफ जॉब,' के उन्हीं द्वारा उकेरे चित्रों पर हम चर्चा कर रहे थे, तभी एकाएक कवि चिल्ला उठे: "ओ भगवान, लो ये एडवर्ड तृतीय आ गये।" मैंने पूछा "कहाँ?" कवि बोले: "टेबल के उस ओर खड़े हैं, तुम नहीं देख सकते; लेकिन मैं देख सकता हूँ, यह उनका प्रथम आगमन है।" मैंने पूछा: "आप उन्हें कैसे जान गये?" ब्लैक बोले: "मेरी आत्मा उन्हें पहचानती है; कैसे?—सो मुझे नहीं मालूम।" मैंने पूछा: "एडवर्ड कैसे दिखायी पड़ रहे हैं।" कवि ने उत्तर दिया: "कठोर, शान्त, अविचल; फिर भी सुखी। अब तक मैं उनका बाजू का चेहरा ही देख रहा था, लेकिन अब उन्होंने अपना पीला चेहरा मेरी ओर घुमा दिया है। कैसी उद्दण्ड भव्यता है, उनकी उन मुख-रेखाओं में।"

मैंने फिर कवि से अनुरोध किया: "क्या आप उनसे एक प्रश्न पूछ सकते हैं?" "हाँ, ज़रूर ही पूछ सकता हूँ; हम अभी तक बराबर ही बात कर रहे थे-लेकिन ज़बान से नहीं, बल्कि ज़बान से कहीं बहुत सूक्ष्मतर, अवर्णनीय, एक टेलिग्राफिक सूक्ष्म इंद्रिय के द्वारा हम

हाफ-टोन, लाइन तथा कलर (रंगीन) ब्लाक के लिए मिलिए

डी. डी. नेरॉय

[ब्लाक-मेकर]

५३४, सॅण्डहर्स्ट ब्रिज, बम्बई ७

टेलिफोन : ७५०४७

यहाँ पर अति शीघ्रता से तथा अच्छी किस्म का काम होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बात कर रहे थे; एक-दूसरे के सामने देखते ही हम एक-दूसरे की बात समझ जाते हैं। भाषा आत्माओं के लिए निरर्थक होती है।" मैंने ब्लैक से विनती की कि: "आप एडवर्ड से पूछिए कि जब वे रक्त-माँस के शरीर में थे, तब उन्होंने जो हत्याएँ की थीं, उनके बारे में वे क्या सोचते हैं?" कवि तपाक से बोले: "आप बोल रहे हैं, तभी यह प्रश्न मैंने पूछ लिया है।" मैंने कहा: "सम्राट क्या कहते हैं?" ब्लैक ने कहा: "संक्षेप में वे यह कहते हैं: आप और हम जिसे महान हत्याकाण्ड कहते हैं; वह यथार्थ में एक नगण्य घटना होती है: पाँच हज़ार आदमियों को नष्ट कर देना ही ज़रूरी तौर पर उन्हें वास्तविक आघात पहुँचाना नहीं है; चूंकि उनका महत्वपूर्ण अंश अमर है, इसी से ऐसे विनाश से हम केवल उन्हें एक अस्तित्व से दूसरे अस्तित्व में स्थानान्तरित मात्र करते हैं; कि मर्त्यता एक बड़ी ही दुर्बल स्थिति है, जिससे मनुष्यों को जितना ही जल्दी छुड़ाया जाय, उतना ही उनका उपकार होता है; और उन्हें उस मर्त्यता में से निकालने में जो मदद करता है, उसके प्रति उन्हें कृतज्ञ होना चाहिए। एक कमज़ोर, लीचड़ विनाशीक शरीर से मुक्ति पाने की ख़ुशी के मुक़ाबिले में टुकड़े-टुकड़े काट दिये जाने की पीड़ा का क्या अर्थ रह जाता है?" मैंने कहा: "सम्राट का यह सिद्धान्त अत्यन्त क्रूर और स्वार्थपूर्ण है और मैं इससे घृणा करता हूँ।" एकाएक ब्लैक बोले: "एडवर्ड अपनी भौहों की कोरें तुम पर झुका रहे हैं, और अगला शब्द यदि तुमने बोला, तो वे तुरन्त अन्तर्धान हो जायेंगे। चुप रहो, तब तक मैं सम्राट का एक रेखा-चित्र खींच लेना चाहता हूँ।"

ब्लैक की विधवा पत्नी कैथराइन अत्यन्त सत्य-निष्ठ और विश्वास-पात्र महिला थीं। उनका कहना था, कि अपनी मृत्यु के बाद ब्लैक प्रायः ही उनके पास आया करते थे। हर दिन मध्यरात्रि की निस्तब्धता में कवि उनके पास आया करते, और दो-तीन घंटे बैठा करते थे। ये मुलाक़ातें ही कैथराइन के जीवन का सबसे बड़ा आधार थीं, आनन्द थीं। जीवनकाल में जैसे किया करते थे, ठीक वैसे ही वे आते ही कुर्सी लेकर बैठ जाया करते, और कैथराइन से बातचीत करते रहते। उन्होंने अपनी पत्नी को इस दौरान यह सुझाव भी दिया था, कि उनके उकेरे चित्रों को बेहतरीन तरीके से कैसे बेचा जा सकता है। कैथरिन जानती थी कि ब्लैक अब समाधिस्थ हैं, लेकिन उन्हें इस बात से परम सन्तोष था कि उनके पति की आत्मा उनके पास आती थी। उन्हें आश्वासन देती थी, उनका पथ-निर्देश करती थी। ब्लैक को मरे बारह महीने पूरे हो चुके थे, मगर कैथरिन ब्लैक की सलाह के बिना कोई काम नहीं करती थी, और हर समय ब्लैक की मुलाकात की प्रतीक्षा में रहती थीं।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नेहरू स्मृति सुलेखा निबन्ध प्रतियोगिता

[हिन्दुस्तान भर के सभी महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों के छात्रों के लिए सुलभ]

विषय

अंग्रेजी : द प्लेस आफ नेहरू इन इण्डियन हिस्ट्री।
बंगाली : भारतेर इतिहाशे नेहरूर स्थान।
हिन्दी : भारतीय इतिहास में नेहरू का स्थान।

निर्णायक मण्डल के चेयरमन :

अंग्रेजी : प्रो. निर्मलचन्द्र भट्टाचार्या, एम. एल. सी.
बंगाली : डॉ. श्रीकुमार बनर्जी
हिन्दी : श्री. के. पी. खेतान, बार-एट-लॉ.

प्रतियोगिता के लिए निबन्ध के दाखिल करने की अन्तिम तिथि १४ नवम्बर १९६५ या उससे पूर्व भी है। कमेटी का निर्णय अन्तिम होगा।

पुरस्कार

प्रथम पुरस्कार – प्रत्येक भाषा के लिए : एक स्वर्ण पदक तथा १२ माह तक लगातार प्रतिमाह १६) और ५०) की पुस्तकें।

द्वितीय पुरस्कार – प्रत्येक भाषा के लिए : एक स्वर्ण अंकित पदक, तथा १२ माह तक लगातार प्रति माह १२) तथा ३०) की पुस्तकें।

तृतीय पुरस्कार – प्रत्येक भाषा के लिए : एक रजत-पदक तथा १२ माह तक लगातार प्रति माह ८) तथा २०) की पुस्तकें।

उपरोक्त पुरस्कारों के अलावा प्रत्येक विभाग में प्रतियोगियों को १० योग्यता प्रमाण-पत्र भी, २५) नकद के साथ दिये जायंगे।

कृपया दाखिला–फार्म के लिए लिखिए–

मानद्–मन्त्री,
नहरू स्मृति सुलेखा निबन्ध प्रतियोगिता समिति
सुलेखा पार्क, जादवपुर, कलकत्ता–३२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[कुलपति का पत्र : पृष्ठ ११ का शेष]

गान्धीजी उसी पर इन कार्यों के लिए निर्भर थे। जनता में भी उसका बहुत सम्मान था। उसका प्रेम–सम्बन्ध एक अविवाहित युवती से हो गया, जिसे वह पढ़ाता था। जब गान्धीजी को इसकी खबर मिली तो उन्होंने 'क' को सच-सच बताने को कहा। उसने इस सम्बंध को साफ अस्वीकार कर दिया।

जब गान्धीजी ने इस मामले में छान-बीन की तो उन्हें 'क' की अस्वीकारोक्ति असत्य मालूम हुई और उन्होंने 'क' के दोष की खुलेआम चर्चा की। अंत में 'क' ने अपना दोष स्वीकार किया। उसे अपने कार्य क्षेत्र से हटा दिया गया, जहाँ उसके साथी उसके आचरण से आश्चर्य-चकित हो गये थे। उसे गान्धीजी सेवा-ग्राम अपने व्यक्तिगत परिचारक के रूप में ले आये। इस घटना की चर्चा करते हुए गान्धीजी ने मुझसे कहा, 'केवल इसी एक तरीके से मैं उसे बचा सकता था। लड़की गर्भवती थी, उसे मैंने 'ज' दूर एक स्थान पर भेज दिया, जहाँ उसकी देखभाल की जा रही है और प्रसूति का प्रबंध भी हो जायेगा।" फिर वे मुस्कराये और बोले, "वह प्रेम की ग्रंथि थी। उसे मैं तलवार लेकर दो टुकड़ों में नहीं विभक्त कर सकता था।" इस घटना से मुझे स्मरण हो आया कि जीजस ने मेरी मैग्डेलेन के साथ कैसा व्यवहार किया था।

गान्धीजी ने अपने व्यक्तिगत जीवन में अस्तेय और अपरिग्रह की भी सिद्धि प्राप्त की थी। आश्रम में जो भी धन आता, उसके बारे में वे बहुत सावधानी बरतते थे और पाई-पाई का हिसाब रखने पर जोर देते थे। रकम चाहे जितनी मामूली हो और व्यक्ति चांहे जितना बड़ा हो, पर इस मामले में वे जरा भी त्रुटि या दोष सहन नहीं कर सकते थे।

अपनी प्रतिष्ठा की परवाह किये बिना भी उन्होंने अपनी 'हिमालय के समान बड़ी-बड़ी भूलें' स्वीकार की थीं। उन्होंने सर्वश्रेष्ठ गुण, अभय, का स्वयं में विकास किया, जो मात्र शारीरिक साहस ही नहीं था, बल्कि ईश्वर में श्रद्धा और उनकी इच्छा के आगे समर्पण के फलस्वरूप प्राप्त मन में किसी भी प्रकार के भय का सर्वथा अभाव था।

उन्होंने अपने विभिन्न कार्यों द्वारा प्रभु की सेवा की:

"मेरे भगवान के अनेक रूप हैं। मैं उन्हें साम्प्रदायिक एकता में देखता हूँ, अस्पृश्यता-निवारण में उनके दर्शन करता हूँ; और इसी प्रकार अपनी आत्मा की आवाज सुन कर उनके साथ सम्पर्क साधता हूँ।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो कुछ उन्होंने किया, उसे उन्होंने आध्यात्मिक रंग दिया। उनका प्रत्येक कार्य आत्मोत्सर्ग का कार्य था। कुछ समय तक लेखन-कार्य करने के पश्चात् उन्हें अनुभव हुआ कि लेखन-कार्य उनके लिए एक आध्यात्मिक और शारीरिक आवश्यकता थी।

सत्यवाक् अथवा सत्य-प्रतिज्ञा का अर्थ केवल सत्य बोलना अथवा सत्य बोलने की प्रतिज्ञा करना ही नहीं होता। इसका अर्थ तो वह वाक्य अथवा प्रतिज्ञा है, जिसका एक बार उच्चारण करने पर प्राण देकर भी पालन करना पड़ता है।

सत्य की इस दृष्टि का अर्थ हुआ:

प्रथम, व्यक्तिगत जीवन में सत्य की साधना शाश्वत रचनात्मक प्रवृत्ति का मूल आधार है।

द्वितीय, जो भी सत्य का पूर्ण आचरण करता है, उसे अपने प्राण देकर भी उसका समर्थन करना चाहिए।

ऐसे सत्य के गाधीजी उद्घोषक थे।

सत्य को इस दृष्टि से देखने पर वह मानवीय गौरव की सृष्टि जान पड़ता है। जीवन को किसी तंग दायरे में क़ैद करने; सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक या अन्य किसी प्रकार की हठधर्मी के आगे नतमस्तक होने; संसार के कुछ देशों में पाये जानेवाले राज्य के अनुचित अनुशासन के विरुद्ध यह एक विद्रोह है। साथ ही, गान्धीजी यह मानते थे कि यदि अहिंसा का पालन न किया जाय तो अपने सत्य पर डटे रहना अनैतिक हो सकता है। सत्य के साथ अहिंसा के इस मेल से ही उन्हें सत्याग्रह का अस्त्र प्राप्त हुआ। सत्याग्रह में "शारीरिक शक्ति, घृणा, विपक्षी को तंग करने की भावना का सर्वथा अभाव रहता है, किसी भी प्रकार के कष्ट-सहन करने के लिए तैयार रहना पड़ता है और स्वयं अपनी शक्ति में विश्वास रखना पड़ता है... निष्क्रमण-कारी कष्ट-सहन की हद तक आत्मशुद्धि करनी पड़ती है।"

बुराई का प्रतिकार करने के अस्त्र के रूप में सत्याग्रह का प्रयोग करने में कई प्रकार की पेचीदारियाँ भी हैं। सत्याग्रह करनेवाले को इस अस्त्र का प्रयोग बुराई के विरुद्ध करना चाहिए, न कि बुराई करनेवाले के विरुद्ध। यह कार्य अत्यंत कठिन है और तब तक संभव नहीं, जबतक कि सत्याग्रही आत्मशुद्धि करने का पूर्ण अभ्यस्त न हो। साथ ही स्वेच्छा से कष्ट-सहन करके भी उसे प्रसन्न रहना चाहिए और विपक्षियों पर किसी प्रकार की हिंसा करने से बचना चाहिए। जान-बूझ कर कष्ट को आमंत्रित करने और अपने अनुसार सत्य के लिए युक्तिदायक कष्ट-सहन करने से सत्याग्रही के मन में घृणा बढ़ने की भावना स्वतः ही निकल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाती है और विपक्षी के प्रति कोई कटुता भी नहीं रहती।

सत्याग्रह का प्रभाव इस बात पर निर्भर है कि बुराई का प्रतिकार बल-प्रयोग के बिना, सभी खतरों का प्रसन्नता-पूर्वक सामना करते हुए किया जाय। इस प्रकार, बल-प्रदर्शन के स्थान पर आत्मा की शक्ति से प्रतिकार करने पर जोर दिया जाता है। जब इन सभी आवश्यक नियमों का पालन पूर्णतः हो, तभी अहिंसात्मक सत्याग्रह स्वतंत्रता की लड़ाई और आत्म-साक्षात्कार के लिए भी, बुराई के खिलाफ एक महान अस्त्र सिद्ध होता है। यह सही है कि इसके परिणाम धीरे-धीरे सामने आते हैं, परन्तु संघर्षजनित कटुता अधिक नहीं टिकती।

सामाजिक शक्ति के रूप में सत्याग्रह शांतिवादियों का एक निषेधात्मक विश्वास, एक खामखयाली, भावनारहित धर्म नहीं है। यह एक ऐसी प्रवृत्ति है, जो नैतिक व्यवस्था की सर्वोच्चता सिद्ध करने की दृढ़ इच्छा का परिणाम है। संकट की घड़ी में, आत्मनियंत्रण के रूप में सर्वोच्च साहस और वीरता की इसमें जरूरत पड़ती है।

सत्याग्रह की शक्ति सत्याग्रही के इस दृढ़ निश्चय में निहित है कि वह विनम्रता की भावना के साथ, अपने प्राण देकर भी सत्य की रक्षा करेगा। यह शक्ति सत्याग्रही को तभी प्राप्त होती है, जबकि वह इस श्रद्धा से अभिभूत होता है कि जिस लक्ष्य के लिए वह लड़ रहा है, वह ईश्वरप्रदत्त है। गान्धीजी ने इसकी व्याख्या यों की :

सत्याग्रह प्रेम है। प्रेम का नियम ही संसार को चलाता है, उसे आकर्षण कहो, स्नेह कहो, बंधन कहो या और कुछ। मृत्यु के मुख में रहते हुए भी जीवन अमर है। अविराम विनाश के बावजूद सृष्टि रहती है। असत्य पर सत्य की जीत होती है। प्रेम से घृणा को जीता जा सकता है। भगवान सदा शैतान पर विजयी होते हैं। एक सत्याग्रही के पास अपनी कहने लायक कोई शक्ति नहीं होती। जो भी बल उसके पास दिखायी पड़ता है, वह ईश्वर-प्रदत्त ही होता है।"

गान्धीजी कहते हैं: "सत्याग्रही को भगवान में जीवन्त श्रद्धा होनी चाहिए। इसका कारण यह है कि उसके पास भगवान में अटल श्रद्धा के सिवाय और कोई शक्ति नहीं होती।"

"मैं कौन होता हूँ?" गान्धीजी ने कहा, "भगवान की दी हुई शक्ति के सिवा मेरे पास कोई बल नहीं । अपने देशवासियों पर नैतिक के अतिरिक्त मेरे पास अधिकार नहीं। यदि हिंसारत इस संसार में प्रभु अहिंसा का प्रचार करने का अचूक माध्यम मुझे बताते हैं, तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वही मुझे शक्ति देंगे और वही मेरा मार्ग प्रदर्शन भी करेंगे। मेरा सबसे प्रबल अस्त्र मूक प्रार्थना है। इसलिए शांति का पक्ष प्रभु के वरदहस्तों में है। उनके सनातन, अपरिवर्तनशील नियम, जो कि वे स्वयं ही हैं, द्वारा अभिव्यक्त उनकी इच्छा के अतिरिक्त और कुछ नहीं हो सकता।"

इतिहास में, भिन्न-भिन्न समय पर विभिन्न जाति के लोगों ने अहिंसा पर प्रतिकार का प्रयोग किया था। डा. अशोक मजूमदार नें अपनी पुस्तक 'एडवेंट आफ इन्डिपेंडेंस' में प्रारंभिक ब्रिटिश शासनकाल में हमारे देशवासियों द्वारा अहिंसात्मक प्रतिकार करने के कई उदाहरण दिये हैं। परन्तु गान्धीजी ने ही इस प्रणाली को पूर्णता दी, जिससे किसी भी प्रकार की कटुता छोड़े बिना जन-सत्याग्रह स्थायी फल प्राप्त करने में सफल हो सकता था।

अपने अगले पत्र म, मैं गांधीजी के पैगम्बर रूप की चर्चा करूँगा।

—आपका

कन्हैयालाल मुन्शी

★

पैसा आता है...जाता है

लेकिन स्टेट बैंक में पैसा आता है बढ़ता भी ह

स्टेट बैंक ऑफ इंडिया में पैसा जमा करने का अर्थ है भविष्य को सम्हालना! आप पढ़ रहे हों या कमा रहे हों, आप की बचत पर भी पैसा आता है। इसलिए चेक की सुविधा के साथ सेविंग्स अकाउंट खोलिये। कर कम होने से आप के पास ज्यादा पैसा बचता है। इसलिए स्टेट बैंक ऑफ इंडिया में ज्यादा पैसा जमा करके उस पर अधिकतम ब्याज पाइये। पहले कभी इतना ज्यादा ब्याज नहीं मिलता था।

फिक्स्ड डिपाजिट आप की आय का दूसरा साधन है

अपनी बचत फिक्स्ड डिपाजिट के रूप में रखिये इस तरह आप आय का दूसरा साधन जुटा लेगें। ७% तक ब्याज मिलेगा। हमें पूछिये.....

आप का पैसा पैसे को खींचेगा।

सेविंग्स अकाउंट्स : ४% तक **फिक्स्ड डिपाजिट्स : ७%**

व्याज-दर की पूर्ण जानकारी के लिए लिखें :

सेवा के लिए स्टेट बैंक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
[श्री गुरु-कृपा.....पृष्ठ ३२ का शेष]

चारों तरफ सब कुछ जल रहा है, सब वस्तु में अग्नि लग गयी है, ऐसी अनुभूति ध्यान में होती है। ऐसे समय् कोई-कोई साधक आसन छोड़कर उठकर भागने को तैयार हो जाते हैं। लेकिन आँखें खोलकर देखता है तो कहीं कुछ नहीं है। यह और ऐसे अनुभव भ्रमात्मक नहीं हैं, परन्तु एक सच्ची आध्यात्मिक अनुभूति हैं। इसके बाद अग्नि एक केशर या सुवर्ण रंग की दिव्य ज्योति जैसी बन जाती है और वह ज्योति बहुत काल तक याने साधन पूर्ण होने तक दिखती ही रहती है। इसी ज्योति के अन्दर अनेकानेक सिद्ध–महात्माओं के दर्शन होते रहते हैं और किसी–किसी को ध्यानावस्था में अन्तराकाश के दिव्य ज्योतिर्मय प्रकाश में कोई ऋषि आकर मंत्र, औषधि, या फल दे जाते हैं। इस मंत्र से वह योगी किसी की भी आंतर-शक्ति जागृत कर सकता है, औषधि से असाध्य रोग मिटा सकता है। ऐसे योगी संसार में बड़े उपकारीजन बन जाते हैं। लेकिन यह सभी साधक को नहीं मिलता। तदनंतर साधक को अनेक तरह के दिव्य संगीत सुनायी पड़ते हैं और संगीत सुनते-सुनते ही लय-भाव का अभ्यास हो जाता है। नाद के लय होते ही साधक को परमानन्द की अनुभूति होती है। वह नादानुसंधान श्रवण करते-करते योगी आपरहित, पररहित, एकरहित, अनेकरहित बन जाता है। उसकी साधारण अवस्थाएँ–जागृति, स्वप्न, सुषुप्ति–कम हो जाती हैं और वह तुर्यावस्था में परम तारुण्य को प्राप्त हो जाता है, और तुर्यानन्द में मस्त बन जाता है। **'जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तभेदे तुर्याभोगसंभवः।'** (शिवसूत्रविमर्शिनी) यह है गुरुकृपाजन्य योग का फल।

इस योग को सिद्धयोग भी कहते हैं, क्योंकि यह सिद्धजन द्वारा ही प्राप्त है। बिना सिद्धजन की कृपा के यह महादुर्लभ है। इसको महायोग भी कहते हैं, कारण इसमें सब योग के भाव आ जाते हैं और इसी से महायोग, सिद्धयोग, पूर्णयोग या परशिवयोग भी इसे कहते हैं। **'विस्मयो योगभूमिकाः'**। (शिवसूत्रविमर्शिनी)–गुरु-कृपा से निरतिशय परमानन्दमय वस्तुदर्शन सहज में होता है। यह अनुभव योगीजनों को अतिशय विस्मयजनक भासमान होता है। इस योग की पूर्णानुभूति में **'शिवतुल्यो जायते'**। (शिवसूत्रविमर्शिनी)-साधक शिव के समान बन जाते हैं। जैसे भृङ्गी के संग से कीट भृंग बन जाता है, पारस के स्पर्श से लोहा सुवर्ण बन जाता है, पानी दूध में मिलकर दूध के समान बन जाता है, वैसे ही गुरुकृपा से, शिव-शक्ति योग से, जीव शिव बन जाता है। तब उस मानव के जाति, कुल, वर्ण आदि की स्मृति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

झन्डू
बालामृत

बढ़ते हुए
बच्चों के लिए अत्यन्त स्वादिष्ट
टॉनिक

झन्डू
सतावरेक्स

गर्भावस्था तथा दूध आते समय
स्त्रियों के लिए एक खास टॉनिक

पाचक तथा स्वास्थ्यवर्धक टॉनिक
जो भूख बढ़ाती है तथा
मानसिक अशान्ति को
दूर करती है

पंचारिष्ट

भोजनोपरान्त इसको
खाने की
आदत डालिए।

A ZANDU PRODUCT

झन्डू फार्मास्यूटिकल वर्क्स लि. बम्बई-२८

A ZANDU PRODUCT

खायें या न खायें?

अवश्य खाइये और
जी भर कर खाइये
झन्डू की

अभयासन

टॅब्लेट

आपकी रक्षा करेगी

वायु, अपचन, अजीर्ण, अमलत्व तथा पेट के
अन्य रोगों के लिए।

अपने घर में
हर समय
एक ट्यूब तैयार रखिये

ओवोयुटोलिन
गर्भाशय के रोगों के लिए टॉनिक

स्केबिजन
खाज व खुजली के लिए तुरन्त आराम पहुचाने वाली दवा

झन्डू फार्मास्यूटिकल वर्क्स लि. बम्बई-२८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और देहभाव नष्ट हो जाते हैं, उसे स्वभावतः ही 'शिवोऽहम्' भाव स्फुरने लग जाता है।

गुरु से दीक्षित शिष्य साधन करते-करते ठीक ३, ६, ९ या १२ वर्ष में अपने में दिव्यता का अनुभव करता है, दिव्यानुभूतियुक्त बनता है। महाशक्ति कुंडलिनी हृदय में रहकर योगी को अनन्त प्रकार के भावों की अनुभूति कराती हुई किसी को कवि बना देती है, किसी को विद्वान बनाकर अप्रमेय अद्वितीय शास्त्रों की रचना कराती है, किसी को मदोन्मत्त प्रेम में नहलाती है। ऐसे योगी के सान्निध्य में सभी सहज सुख की अनुभूति करते हैं। वे जहाँ रहते हैं, वहाँ के वृक्ष-लताएँ भी बहुत फलते हैं, फूल भी बहुत खिलते हैं, खेती भी बहुत उपजती है। वहाँ का बन भी नंदनवन के सदृश सुन्दर, सदैव हरा-भरा बन जाता है। विश्व को विकसित करनेवाली श्रीपरशिव की शक्ति जहाँ पर भी क्रियाशील बनती है, वहाँ के झाड़-पान, फल-फूल सब सहज स्वभाव से ही खिल उठते हैं। महाराष्ट्र की संत जनाबाई का एक अभंग मुझे याद आया: **"विट्ठल रुकमिणी तुम्हीं अखण्ड आणा ध्यानी, मग सुखा काय ऊणी। जाहले सोयरे त्रिभुवनी, मग सुखा काय ऊणी। रिद्धि-सिद्धि वाहे पाणी, मग सुखा काय ऊणी॥"** पूज्य जनाबाई ने अपने अभंग में जो गाया है, वह सर्वथा सत्य है कि उस योगी के आसपास का सारा वातावरण योगमय, आनन्दमय, प्रेममय बन जाता है। प्रेम से, भक्ति से, वहाँ जो कोई भी जाता है, वह उस शक्ति से परिचित हो जाता है और शांतभाव का अनुभव करता है। यह सब महायोग का औदार्य है।

महाशक्ति कुंडलिनी जिनमें प्रवेश करके अपना परिचय देती है, वे साधक दिन-दिन बड़े ही उत्साह से, आनन्द से, महापुरुषार्थ से साधन करते हैं। क्योंकि, नये-नये चमत्कारजन्य अनुभवों से प्रेरित साधक अभ्यास भी नित्य-नियम से करने को लग जाता है। उसके हृदय में एक स्वतंत्र प्रेम का परिचय प्रकट हो जाता है। जैसे व्यसनी अपने व्यसन को कभी छोड़ नहीं सकता, नशा पाने पर ही स्थिर होता है, उसी तरह वे सिद्ध योग के साधक बिना साधना किये रह नहीं सकते। साधन करते-करते मूलाधार में स्थित कुंडलिनी शक्ति, चक्रों को भेदते-भेदते ललाट से ऊपर सहस्रार में जाकर किंचित् कार्य-रूप नृत्य करते-करते शिव में मिलकर **शिवा परशिव बन जाती है।** जब कुंडलिनी-शक्ति सहस्रार में शिव में शांत हो जाती है, तब साधक का साधन पूर्ण हो जाता है। पूर्ण ही साधन—पूर्ण है। और इस रीति से जब सहस्रार में समान-भाव में शक्ति पूर्ण स्थिर हो जाती है, तब शुद्ध विद्या का उदय हो जाता है।—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शुद्धविद्योदयाच्चक्रेशत्वसिद्धिः'। (शिव-सूत्रविमर्शिनी) शुद्ध विद्या का उदय होते ही ईशानुभूति हो जाती है। तदनंतर साधक अपने साधन-काल को भूल जाता है और साध्य परमेशानुभूति में मस्त रहता है। जैसे अज्ञान दशा में साधक अपने को दुखी, दरिद्री, अपूर्ण, भोक्ता, आदि शक्ति-हीनता का अनुभव करता है, वैसे ही शक्ति जागृति के बाद अपने को पूर्ण, शिव, संपन्न, अभोक्ता, शक्तिशाली, प्रेममय, ईशरूप बना हुआ समझकर आनन्दोहम् करके नित्य नयी-नयी आनन्द-मस्ती में मस्त रहता है। उसे फिर जन्म-मरण के द्वन्द्व-रोग दर्शन नहीं देते। जिनकी कुंडलिनी जागृत हो गयी है, वे साधक स्वभावतः ही अन्दर से स्फूर्त हुई मस्ती में मस्त होकर मस्त बन जाते हैं। सिंधु में पड़ा हुआ बिन्दु अपने चारोंओर पानी ही पानी देखकर पूर्णसिंधु बनकर शांतभाव को प्राप्त हो जाता है, वैसे ही साधक आनन्द की स्फूर्ति में सब जगत् को विश्वात्मामय देखता है।

'सर्वो ममायं विभव इत्येवं परिजानतः।
विश्वात्मनो विकल्पानां प्रसरेऽपि महेशता ॥'' (ईश्वर प्रत्यभिज्ञ।)

अर्थात्, यह प्रत्यक्ष भासनेवाला विश्वाडंबर मेरा ही याने परमेश्वर का ही वैभव-विलास है, परशिव का ही रूप है, ऐसा देखते-देखते वह साधक विकल्प दशा में भी सन्देहरहित रहता है। सर्व वस्तु में परशिव की स्फूर्णा को स्फुरित रूप में देखता है। आगे–पीछे, नीचे-ऊपर, चारों तरफ वह शिव को देखता है; शिव विना कुछ नहीं जानता, वह शिव ही बन जाता है।

शिवो दाता शिवो भोक्ता, शिवं सर्वं इदं जगत्।
शिवो यजति यज्ञश्च य शिव सोऽहं एव हि॥

इति श्रीगुरु नित्यानन्दार्पणमस्तु।

★

शुद्ध घी की सात्विक और मसालेदार मनमोहक मिठाइयों के लिए :-

विशेषज्ञ : **माहिम हलवा–इंग्लिश हलवा**

जोशी बुढ़ाकाका माहिम हलवावाला

H.O. **माहिम :** कपड़ा बाजार, **बम्बई–१६, फोन :** 454007

दादर : खोरदाद सर्कल, **बम्बई–१४, फोन :** 60506

तारदेव टी. टी. बम्बई–७, फोन : 40365

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिवभक्त उपमन्यु

लावण्यप्रभा राय

पुराण-कथा

उपमन्यु मुनिश्रेष्ठ व्याघ्रपाद के पुत्र थे। पूर्वजन्म में वह सिद्ध थे, परन्तु किसी कारणवश पदच्युत होकर भी पुण्य के फल से मुनिकुमार होकर जन्म-ग्रहण किया। शैशव में एक दिन शिशु उपमन्यु ने माता से दूध मांगा। घर में दूध नहीं था, इसीलिए माता ने जल में आटा घोलकर बालक को पीने दिया। उसको देखकर उपमन्यु ने माता से कहा—

"माँ, यह कैसा दूध है? यह तो दूध नहीं है।" माता ने दुःखी होकर कहा—"वत्स, तुम सत्य कहते हो। यह दूध नहीं है। हम दरिद्र मुनिपरिवार हैं: हमें दूध कहाँ से मिलेगा! मामा के घर में तुमने दूध पिया था, इसीलिए तुम उसके मधुर स्वाद को जानते हो। देवदेव महादेव के अनुग्रह विना वैसा दूध मिलना संभव नहीं है। शिवशम्भु के पदपंकज में भक्ति रहने से सब प्रकार का ऐश्वर्य मिल सकता है। हमने कभी धन-लाभ के लिए शिवजी की पूजा नहीं की। इसीलिए हम दरिद्र हैं और हमारे पास स्वादिष्ट दूध भी नहीं है।"

माता के वचन सुनकर उपमन्यु अनुतप्त हो गये। उन्होंने माता को आश्वस्त करके कहा—

"माँ, तुम दुःख न करो। महादेव की कृपा से मैं अक्षय दुग्धसमुद्र लाभ करूँगा। परन्तु तुम मुझे बताओ कि मैं कैसे उनको तुष्ट करूँ?"

माता ने कहा—"वत्स, वह बहुत ही दयामय हैं। वह हम सब के प्रभु के प्रभु हैं। 'नमः शिवाय' इस मन्त्र के उच्चारण से देवादिदेव, मंगलदाता महादेव सन्तुष्ट होकर दर्शन देते हैं। तुम इस पंचाक्षर मंत्र का जप करो। इसी से तुम्हारी मनोकामना सिद्ध होगी।"

तब ऋषि बालक उपमन्यु ने माता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को प्रणाम करके कहा—"मैं आप ही की आज्ञानुसार कार्य करूँगा।" माता ने भी आशीर्वाद दिया—"भगवान तुम्हारा कल्याण करें।"

माता से विदा लेकर उपमन्यु हिमालय पर्वत में जाकर कठोर तपस्या करने लगे। उस समय वह केवल वायु भक्षण करके जीवित थे। वह सदा देवी अम्बिका के साथ अव्यय महादेव की पूजार्चना करते थे और साथ ही पंचाक्षर उस पवित्र मन्त्र का जप करते थे। इस प्रकार कठिन तपश्चरण से बालक उपमन्यु अत्यन्त कृश हो गये। तब मरीचि मुनि से अभिशप्त कई मुनि पिशाच व राक्षस रूप में उसकी तपस्या में विघ्न उत्पन्न करने लगे। भयभीत बालक अत्यन्त पीड़ित होकर 'नमः शिवाय' इस मन्त्र का उच्च स्वर से जप करते थे। मन्त्र के उच्चारण के साथ ही विघ्नकारी वे मुनि राक्षस व पिशाच रूप छोड़ कर बालक उपमन्यु की सेवा करने लगे। उसकी तपस्या के प्रभाव से सारा संसार उद्भासित हो गया।

तब भक्तवत्सल भगवान शम्भु का भी आसन विचलित हुआ। उन्होंने उस बालक की भक्ति व निष्ठा की परीक्षा लेने का निश्चय किया। देवदेव पिनाकी देवराज इन्द्र के रूप में, ऐरावत पर चढ़ कर वहाँ आये। बालक उपमन्यु ने उनकी तेजोदीप्त मूर्ति देख कर उनको प्रणाम करके कहा—"देवेश्वर, आपके आगमन से मेरा आश्रम पवित्र हो गया है।" इन्द्ररूपधारी महादेव ने उपमन्यु से कहा—"सुव्रत, तुम्हारी तपस्या से मैं सन्तुष्ट हूँ। वर प्रार्थना करो। जो तुम चाहोगे, मैं दूँगा।"

उपमन्यु ने कहा—"मेरी और कोई प्रार्थना नहीं है। मैं केवल देवादिदेव शंकर पर अटूट भक्ति माँगता हूँ और जब तक महादेव मुझपर प्रसन्न नहीं होंगे, मैं तपस्या से निवृत्त नहीं होऊँगा।" ऐसा कह कर उपमन्यु तपस्या में लीन हो गये। तब शक्ररूपधारी महादेव उसके पास जाकर शिवनिन्दा करने लगे। शिवभक्त बालक के लिए यह असहनीय था। शिवनिन्दा सुनने के प्रायश्चित-स्वरूप उन्होंने प्राणत्याग करने का निश्चय किया। उसका यह निश्चय जानकर और उसके हाथ में भीषण आग्नेयी देख कर महादेव पार्वती व गणों के साथ प्रकट हो गये। स्वरूप में देव शंकर को देखकर उपमन्यु के आनन्द की सीमा नहीं रही। अन्तरिक्ष से पुष्पवृष्टि होने लगी। देवदुन्दुभी की ध्वनि से त्रिलोक गूंज उठा। भगवान शंकर ने कृतांजलि उस बालक को अपने पास बुलाकर देवी पार्वती को समर्पित किया। कुमार कार्तिक के सदृश उस सुदर्शन बालक का परमस्नेह से आलिंगन करके, उसके मस्तक पर करकमल रखकर देवी ने उसको आशीर्वाद दिया। तब क्षीरसमुद्र ने मूर्तिमान होकर उपमन्यु को स्वादिष्ट, मधुर क्षीर दिया। धनपति कुबेर ने भी उनको अनश्वर धन दान किया। उपमन्यु का आश्रम धन व धान्य से समृद्ध हो गया। भगवान चन्द्रशेखर भी अपने भक्त को पाशुपत व्रत, ज्ञान व सर्वज्ञत्व का आशीर्वाद देकर अन्तर्हित हो गये।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भवन-समाचार

भारतीय विद्या भवन में स्वतन्त्रता-दिवस पर आयोजित एक समारोह में राष्ट्रपति श्री मुन्शी जी तथा श्रीमती लीलावती मुन्शी द्वारा भारतीय विद्या भवन के मुम्बादेवी संस्कृत महाविद्यालय के प्राचार्य पंडितराज शास्त्ररत्नाकर आचार्य टी. ए. वैंकटेश्वर दीक्षितार का सम्मान किया गया। स्मरण रहे इस वर्ष स्वतन्त्रता दिवस के अवसर पर राष्ट्रपति द्वारा श्री दीक्षितार को 'सम्मान-पत्र' से विभूषित किया गया है। श्री दीक्षितार शास्त्रों एवं वेदों के मर्मज्ञ पंडित हैं। संस्कृत भाषा पर अपने पूर्ण अधिकार के लिए प्रख्यात सर्वोत्तम पंडित आचार्य दीक्षितार की प्रसिद्धि संस्कृत के अनन्य असाधारण धाराप्रवाही वक्ता के रूप में भी है।

आचार्य टी. ए. वी. दीक्षितार

स्मरण रहे राष्ट्रपति द्वारा सम्मानित किये जाने के पूर्व आचार्य दीक्षितार अनेक पुरस्कारों एवं विशिष्ट आदर-सम्मानों से प्राप्त कर चुके हैं। कांची के श्री जगद्गुरु शंकराचार्य ने आपको 'उभय मीमांसाप्रवीण' और 'शास्त्र-रत्नाकर' की उपाधियाँ दी हैं। द्वारका के श्री जगद्गुरु शंकराचार्य से आपको 'विद्या वाचस्पति' और कांची के महाराजा से 'पंडितराज' की पदवियाँ प्राप्त हो चुकी हैं।

आचार्य दीक्षितार ने 'प्रभाकर शाखा' के मीमांसा ग्रन्थ 'अर्थवाद विचार' का सम्पादन किया है और इन दिनों आप वेदान्त के एक दुर्लभ ग्रन्थ 'तत्वलोक' का सम्पादन करने में संलग्न हैं। भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित संस्कृत की त्रैमासिक पत्रिका 'संविद्' के संयुक्त सम्पादक भी आप हैं।

२० वर्ष से भी अधिक काल तक आप तिरुपति के श्री वैंकटेश्वर संस्कृत कालेज के पहले प्राध्यापक और बाद में प्राचार्य रह चुके हैं। आप आठ विश्व विद्यालयों में संस्कृत के परीक्षक और संस्कृत विश्व परिषद् के संयुक्त सचिव भी हैं। शंकर मठ माटुंगा (बम्बई) के अध्यक्ष आचार्य दीक्षितार के मार्गदर्शन में अनेक नागरिकों और अधिकारियों ने वेदों का अध्ययन किया है।

१९४६ से ही आचार्य दीक्षितार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय विद्या भवन के मुम्बादेवी संस्कृत महाविद्यालय के प्राचार्य हैं।

× × ×

गत २२ अगस्त को भारतीय विद्या भवन के सुगम संगित युनिट द्वारा मनाये जानेवाले 'टागोर-सप्ताह समारोह' का उद्घाटन श्री गगन विहारी एल. मेहता ने किया। इस समारोह की अध्यक्षा श्रीमती लीलावती मुन्शी ने की। गुरुदेव टागोर के कृतित्व एवं व्यक्तित्व की प्रसंशा करते हुए श्री मेहता ने कहा कि श्री टैगोर की तुलना दांते और शेक्सपीयर से की जा सकती है। उन्होंने कला केन्द्र को भी धन्यवाद दिया। इस अवसर पर फिल्म जगत के लोकप्रिय संगीत निर्देशक श्री सलील चौधरी ने 'फिल्म-संगीत पर टैगोर का प्रभाव' विषय पर विद्वता-पूर्ण पेपर भी पढ़ा।

कला केन्द्र के सचिव श्री नवीन टी. खाण्डवाला ने अतिथियों का स्वागत किया और सुगम संगीत युनिट के संयुक्त सचिव श्री अजित सेठ ने आभार प्रदर्शित किया। इस अवसर पर सांस्कृतिक कार्यक्रम भी प्रस्तुत किया गया।

× × ×

गत २० अगस्त की रात्रि में भारतीय विद्या भवन द्वारा जन्माष्टमी महोत्सव मनाया गया। इस अवसर पर भक्ति पूर्ण गीत, भजन तथा पूजा के कार्यक्रम के साथ बच्चों का नृत्य भी प्रस्तुत किया गया। महाराष्ट्र विधान सभा के अध्यक्ष श्री टी. एस. भारदे का हिन्दी में प्रवचन भी हुआ।

× × ×

भवन के गीता मंदिर में भारतीय विद्या भवन ने बड़े उत्साह के साथ स्वतन्त्रता-दिवस-समारोह मनाया। कुलपति श्री मुन्शी जी ने झंडोत्तोलन किया। इस अवसर पर बोलते हुए मुन्शी जी ने कहा कि इस समय सभी को जाति, भाषा या और मतभेदों को भुला कर पाकिस्तान एवं चीन का मुकाबला करने के लिए सुदृढ़ता के साथ संगठित हो जाना चाहिए। भवन की प्रगति पर प्रसन्नता व्यक्त करते हुए मुन्शी जी ने कहा कि प्रभु की कृपा एवं मित्रों के सहयोग से भवन प्रगति के पथ पर ही बढ़ता जायगा, ऐसा मेरा विश्वास है। भवन के संगीत शिक्षा पीठ के छात्रों ने राष्ट्रीय गीत भी प्रस्तुत किये।

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन के लिए बम्बई से प्रकाशित व मुद्रित तथा एसोसिएटेड एडवर्टाइजर्स एण्ड प्रिन्टर्स, तारदेव, बम्बई ३४ में मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"सुन्दर वस्तु सदैव आनन्दमयी होती है"

किसी नये स्थान पर जाने का आकर्षण तो सदा ही बना रहता है और फिर अगर आप हकोबा एम्ब्रॉइडर्ड वस्त्रों से सुसज्जित हैं तो बस कहना ही क्या! आपके व्यक्तित्व का आकर्षण और भी बढ़ जाता है — सुन्दरताका एक सुन्दर वातावर्ण में होना ही उसकी सबसे बड़ी प्रशंसा है।

हकोबा
एम्ब्रॉइडर्ड कपड़े

फ़न्सी कॉर्पोरेशन लिमिटेड
(हकोबा चिकन व एम्ब्रॉइडर्ड कपड़ों के निर्माता) १६, अपोलो स्ट्रीट, बम्बई — १.

RB/FC/H/116

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

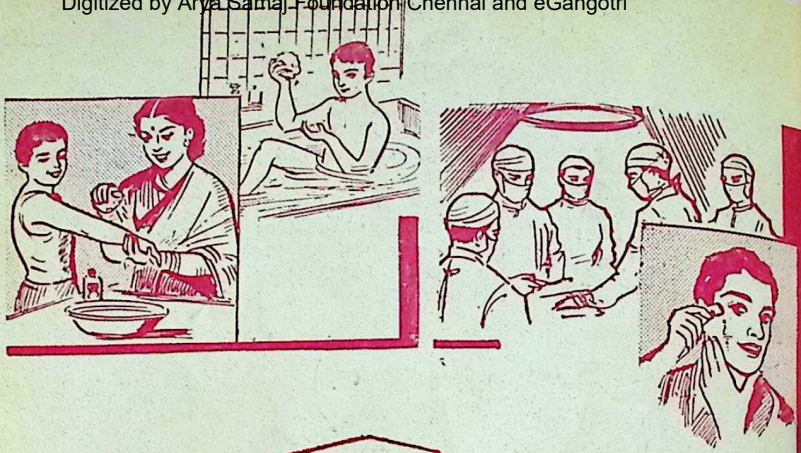

शेब्रॉल

यह हॉस्पिटल तथा घर में कृमिनाश के लिए अत्यन्त प्रभावकारी है।

निर्माता : एस. एच. शेलत एण्ड सन्स

शेलत ब्रदर्स–मद्रास तथा उसकी अन्य शाखाओं के मालिक

एजन्टों की नियुक्ति करना है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारती

भवन की पत्रिका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

मूल्य ६० पैसा

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतमें सब जगह प्रसिध्द

चँपियन

(रजिस्टर्ड)

सबकी पसंदगी

गुजरात इंडस्ट्रीज प्रायव्हेट लि., बंबई २

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रत्नकी तरह

चमकदार

आँखोके

लिये

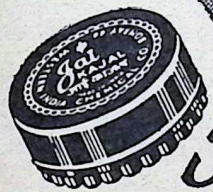

जाई काजल

आँखों को ठंडक पहुँचाकर सौंदर्य बढ़ाता है।

वेस्टर्न इन्डिया केमिकल कंपनी.
बोरिवली, बम्बई-६६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष ९ : अंक २५]

भारती

[८ अगस्त १९६५

संस्थापक :
कन्हैयालाल मुन्शी

प्रबन्ध सम्पादक :
जयन्तकृष्ण ह. दवे

प्रकाशक :
सु. रामकृष्णन्

सम्पादक :
धीरेन्द्रकुमार जैन

सहयोगी :
श्रीराम मिश्र
ओंकारनाथ शर्मा
रामलाल शुक्ल

कार्यालय :
भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड,
बम्बई ७

प्रति अंक : ३० पै.
वार्षिक : ६.५० पै.
अर्धवार्षिक: ३.५० पै.

ऋग्वेद : प्रार्थना ३
कन्हैयालाल मुन्शी : कुलपति का पत्र ५
जवाहरलाल नेहरू : १५ अगस्त १९४७ : भारत का वह नियति दिवस १०
डॉ. कन्हैयालाल मुन्शी : पाश्चात्यवाद को चुनौती १४
महेन्द्र भटनागर : सुलक्षण १७
रमेश खुराना : श्रीकृष्ण का अवतार-काल १८
नलिन रावल : दो शराबी : पवन जैन का एक चित्र २३
डॉ. एच. डी. सांकलिया : क्लाइव युग की एक आकर्षक पाण्डु-लिपि २६
रामनारायण उपाध्याय : लोक-गीतों में भगवान कृष्ण की मधुर लीलाएँ ३०
डॉ. कैलाशनाथ मिश्र : स्वरोदय की साधना और सिद्धियाँ ३३
अम्बुभाई पुराणी : पारसमणि ४४
ग्रेस जेम्स : युराशिमा ४६
रामेश्वर प्रसाद सिंह : श्रीकृष्ण : राधा के प्रति ५०
श्रीराम गोयल : कृष्ण-वल्लभा, श्रीराधा का आविर्भाव ५५
कन्हैयालाल मुन्शी : कृष्णावतार ५९
रामकृष्ण परमहंस : साँप और उसका गुरु ६३

आवरण चित्र : माखनचोर
छायाकार : देवदत्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः ।

[प्रत्येक दिशा से शुभ एवं सुन्दर विचार हमें प्राप्त हों]

भारती

[भवन की पत्रिका]

आगामी विश्व विकास का सूचक :

जीवन, साहित्य और संस्कृति का पाक्षिक

प्रार्थना

यास्ते प्रजा अमृतस्य परास्मिन् धामन्वृतस्य ।
मूर्धा नाभा सोम वेन आभूषन्तीः सोम वेदः ।।

हे सोम, उच्च स्थान पर रहनेवाली, सत्या-
मृतयुक्त, तुम्हारी पूजा करनेवाली यह प्रजा
निज-निज गृह में उच्च स्थान पर विराजे !

ऋग्वेद १, ४३, ९

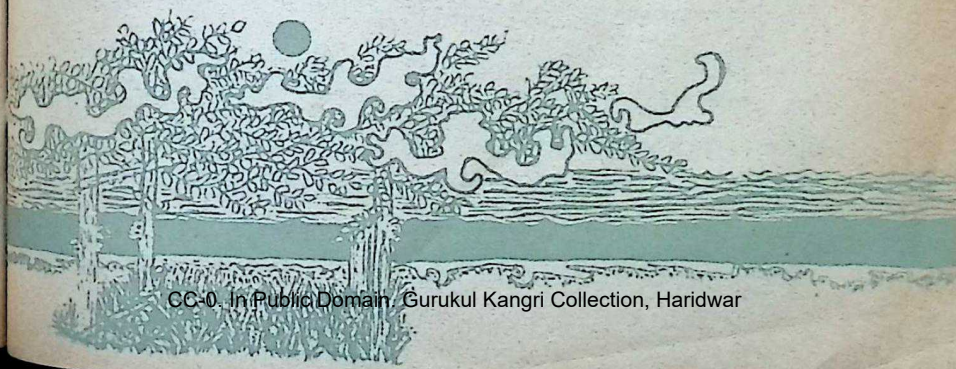

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुलपति का पत्र

जीवन साहित्य तथा संस्कृति से संबंधित

• प्रेस की स्वतन्त्रता

भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड, बम्बई ७
८ अगस्त, १९६५

मेरे युवा मित्र,

"प्रेस की स्वतन्त्रता—सिद्धान्त और व्यवहार" पर जो परिसम्वाद गोष्ठी शुक्रवार २० नवम्बर १९६४ को बम्बई में युनाइटेड स्टेट्स इन्फर्मेशन सर्विस के सहयोग से प्रेस गिल्ड आफ इण्डिया ने आयोजित की थी, उसके उद्घाटन भाषण में मैंने जो विचार प्रकट किये, वे मैं आप तक भी पहुँचाना चाहता हूँ।

प्रजातन्त्र जनचर्चा, विचारविमर्ष तथा जन-स्वीकृति के द्वारा स्थापित प्रशासन को कहा जाता है। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय ने प्रेस की स्वतन्त्रता का वर्णन करते हुए ठीक ही कहा है कि यह 'स्वतन्त्र लोगों द्वारा स्थापित स्वतन्त्र सरकार की आधारशिला है, जिसे एक ऐसा प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है, जो उन स्वतन्त्रताओं को एक पवित्रता और स्वीकृति प्रदान करता है और किसी प्रकार की बाधाओं को बीच में नहीं आने देता।'

एक स्वतन्त्र प्रेस के बिना जनतन्त्रीय समाज हो ही नहीं सकता, यह इस तथ्य से प्रकट है कि साम्यवादी, फासिस्ट, सैनिक अथवा किसी भी प्रकार की तानाशाही सरकार अधिकार प्राप्त करते ही सबसे पहले प्रेस पर नियन्त्रण करने का प्रयास करती है। डेढ़ सौ वर्ष पूर्व नेपोलियन ने इन सबका प्रतिनिधित्व करते हुए कहा था कि एक स्वतन्त्र प्रेस हजार संगीनों से भी अधिक भयप्रद है।

संविधान की १९ (१) वीं धारा के अनुसार विचार और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता को मौलिक स्वतन्त्रताओं में प्रथम स्थान प्राप्त है। परन्तु धारा १९(२) विधान सभाओं को कुछ विशेष मामलों में इन अधिकारों पर नियन्त्रण रखने की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुमति भी देती है। इस धारा के अनुसार जिन जिन मामलों में प्रेस पर प्रतिबन्ध लगाया जा सकता है, उनको देखकर यही सिद्ध होता है कि हमारे देश में संविधान के अन्तर्गत प्रेस को कितनी अधिक आजादी मिली हुई है।

जब प्रेस पर राज्य का अधिकार हो जाता है, तब उसकी स्वतन्त्रता उससे छिन जाती है। कुछ देशों में हम देखते हैं कि अवमानित नेताओं का जिक्र पत्रों में नहीं किया जाता। भारत और अन्य देशों में, जिन्हें कुछ दिन पहले आजादी मिली है और जहाँ नियन्त्रित अर्थव्यवस्था तथा केन्द्रीय योजनाएँ कार्यरत हैं, वहाँ धीरे-धीरे उन देशों की नकल की जा रही है, जहाँ समाचारपत्रों पर राज्य का नियन्त्रण है।

धारा १९ (१) में वर्णित प्रत्येक अधिकार का अपना महत्त्व है। ये सभी अधिकार एक दूसरे से सम्बन्धित हैं और एक दूसरे पर निर्भर भी हैं। इसी प्रकार मौलिक स्वतन्त्रताओं को दृढ़ करने के लिए वे सामूहिकरूप से सक्रिय होते हैं। यदि नागरिकों को व्यवसाय और वाणिज्य की, उद्योग स्थापित करने और चलाने की, तथा सम्पत्ति का क्रय-विक्रय करने की स्वतन्त्रता प्रचुर रूप में नहीं प्राप्त होती, तो प्रभावशाली और सुगठित जनसम्मति का कभी अस्तित्व नहीं हो सकता। इन अधिकारों के अभाव में, स्वतन्त्र जनसम्मति के लिए गैर सरकारी स्रोतों से आर्थिक समर्थन कभी प्राप्त नहीं हो सकता।

दुर्भाग्य से हमारे न्यायशास्त्री कभी-कभी 'समाजवाद', 'समाजवादी समाज' इत्यादि ऐसे नारे विदेशों से आयात करते हैं जिनका आधार विविध आर्थिक सिद्धान्तों पर होता है। इन शब्दावलियों का ठीक-ठीक अर्थ निश्चितरूप से करना कठिन है।

सर्वोच्च न्यायालय ने कभी-कभी ऐसे फैसले किये हैं, जिनसे मौलिक अधिकारों की सुदृढ़ नीव के स्थान पर इन दिनों प्रचलित और विधान सभाओं द्वारा अनुमोदित ऐसे सिद्धान्तों को बल मिलता है जिनका अर्थ लोग भिन्न-भिन्न लगाते हैं। न्यायाधीश होम्स के शब्दों में संविधान किसी विशेष आर्थिक सिद्धान्त का प्रतिपादन नहीं करता। बहुधा राजनीतिज्ञ यह कहते हुए कि हम आजादी की रक्षा कर रहे हैं, आज़ादी को पंगु बनाते हैं।

कुछ राजनीतिज्ञों के अनुसार छोटे पत्र ही स्वतन्त्र प्रेस की आधारशिला हैं, न कि बड़े पत्र। इन छोटे पत्रों को कई बातों के लिए सरकार पर निर्भर रहना पड़ता है, जैसे प्रिन्टिग प्रेस, न्यूज प्रिन्ट, टेलिफोन और टेलिप्रिन्टर की सुविधाएँ तथा मशीनों के कल-पुर्जे इत्यादि।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय विभाग के कार्य में मालिकों का अनुचित हस्तक्षेप भी सरकारी नियन्त्रण के लिए एक कारण बताया जाता है। यह सही है कि मालिकों का ऐसा नियन्त्रण, कहीं कहीं पाये जाने पर भी, प्रेस की आजादी को सीमित करता है। परन्तु हमें यह भी नहीं भूलना चाहिए कि मालिक का हस्तक्षेप यदि बुरा है तो सरकारी नियन्त्रण उससे भी अधिक खराब है।

विज्ञापनदाताओं को भी प्रेस की आजादी के लिए ख़तरा कहा जाता है। यह केवल झूठा प्रचार है। विज्ञापनदाता किसी पत्र की नीति पर कभी नियन्त्रण नहीं रखते, न उसमें उन्हें कोई रुचि होती है। वे तो केवल अपने माल को उपभोक्ताओं तक पहुँचाने के लिए पत्रों को आर्थिक सहायता देते हैं। यदि विज्ञापनदाता प्रेस की आजादी के लिए खतरा हैं तो सरकारी विज्ञापन, जो भारत सरकार के विज्ञापन और दृश्य प्रचार के निर्देशालय जैसे अकेले माध्यम के हाथ में रहता है, प्रेस की आजादी के लिए और भी अधिक खतरनाक है।

बार बार यह ही कहा जाता है कि समाचार पत्रों पर स्वामित्व का एकाधिकार होने से प्रेस की आजादी घट जाती है। यदि हम इस आरोप पर विचार करें तो मालूम होगा कि ये आलोचक स्वामित्व के एकाधिकार को नहीं बल्कि पत्रों की नीति और सम्पादकीय विचार के एकाधिकार अर्थात् अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता के एकाधिकार को बुरा बताते हैं। प्रजातन्त्र में छोटे और बड़े सभी पत्रों को जीने का अधिकार है। इसमें कुछ दुरुपयोग भी हो सकते हैं; परन्तु सरकार द्वारा संचालित प्रेस से तो यह अच्छा ही है।

हमारे जैसे देश में जहाँ कि पिछले १७ वर्षों से एक ही पार्टी का शासन केन्द्र और राज्यों में है, वहाँ विरोधी दलों के पास सत्तारूढ़ दल की तुलना में कम साधन होने के कारण वे प्रभावशाली नहीं सिद्ध हुए। भारत में प्रेस को जो प्रचुर स्वतन्त्रता प्राप्त है, उसीके फलस्वरूप विधानसभाओं के बाहर एक अच्छे विरोधी पक्ष का कार्य पत्र करते हैं। भारतीय पत्रों, विशेषकर पत्रकारों का साहस और लोकभावना ही के कारण देश में प्रजातन्त्रीय भावना की रक्षा हुई है।

सरकारी अफसरों और सरकार द्वारा नियुक्त लोगों के नेतृत्व में प्रेस काउन्सिल स्थापित करने का सरकारी प्रयास प्रेस की आजादी के लिए खतरा है। यह सोचना इस समय अनावश्यक होगा कि यदि ऐसा प्रस्ताव पारित हो गया तो क्या वह संविधान की १९ (१) वीं धारा के विरुद्ध होगा। परन्तु इतना तो स्पष्ट है कि इसका उद्देश्य अपरोक्षरूप से प्रेस का नियन्त्रण सरकार के हाथ में देना है। संबंधित मन्त्री महोदय ने आशा व्यक्त की कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तु काउन्सिल गलती करनेवाले सम्पादकों और पत्रकारों को गलती करने से रोकने में अपने प्रभाव का उपयोग करेगी; परन्तु गलती कौन कर रहा है, इसका निश्चय कौन करेगा ?

प्रेस काउन्सिल प्रशासन का ही एक अंग है। परन्तु उसे एक निष्पक्ष संस्था का रूप देने के लिए भारत के मुख्य न्यायाधीश को इसका चेयरमैन नियुक्त करने का अधिकार दिया गया है। मुख्य न्यायाधीश निश्चय ही इससे असमंजस में पड़ जायेंगे। यदि वे चेयरमैन की नियुक्ति का प्रशासकीय कार्य करते हैं तो न्यायिक स्तर पर उन्हें, सर्वोच्च न्यायालय में मामला ले जाये जाने पर, काउन्सिल के कार्यों पर विचार भी करना होगा।

काउन्सिल को अर्धन्यायिक अधिकार भी दिये गये हैं। सबसे विकट बात तो यह है कि काउन्सिल के निर्णयों पर किसी न्यायालय में भी विचार नहीं किया जा सकता। यदि यह प्रेस की आजादी को कम करना नहीं है तो क्या है? यदि यह प्रस्ताव पारित हो गया तो वह आवश्यक औपचारिकताओं के बिना भी संविधान में संशोधन करने के बराबर होगा। इससे काउन्सिल को स्वतन्त्र प्रेस के मामलों में, संविधान की १९ (१) धारा के बाहर, हस्तक्षेप करने का अपरोक्षरूप से अधिकार मिल जायगा।

यदि जनता अपने हितों के प्रति सचेत है और पत्रकार भ्रष्ट नहीं हैं तथा अपना कर्तव्य पूरा करने के योग्य हैं, जैसा कि वे अधिकांशतः हैं, तो वे अपने हितों की रक्षा स्वयं ही भली प्रकार कर सकते हैं। उन्हें नौकरशाही और पेशेवर राजनीतिज्ञों द्वारा नियन्त्रित किसी काउन्सिल की दया पर जीने की आवश्यकता नहीं। प्रजातन्त्र की सुरक्षा तभी हो सकेगी।

आपका

कन्हैयालाल मुन्शी

एक प्रजातंत्र को हम अपने तरुणों को शिक्षित करने से बढ़ कर और कौन-सा उपहार दे सकते हैं।

—सिसरो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन्द्र की ऋचाएँ

●

शक्ति की चाह रख, लाओ एक ऋचा स्तुति की सत्य-ऋचा इन्द्र के लिए, यदि सत्य ही वह कहीं है; "इन्द्र नहीं है" किसी-किसी ने कहा, "किसने उसे देखा है? किसका हम स्तवन करें?"

"मैं हूँ, ओ उद्गाता। ऊपर की ओर देखो मेरी ओर; जो कुछ भी है अस्तित्व में, मेरा तेज सबसे परे है। ऋत (शाश्वत नियम) के आदेश मुझे शक्तिशाली बनाते हैं, जब मैं करता हूँ तो भुवनों को खण्ड-खण्ड कर देता हूँ।"

"मैं मनु बना और सूर्य भी; मैं पवित्र उद्गाता ऋषि कक्षिवान् हूँ; मैं अर्जुनि के पुत्र कुत्स का शासन करता हूँ; मैं कवि उशना हूँ। मुझे देखो।"

द्यावा और पृथिवी उसके सम्मुख नमते हैं, उसकी शक्ति के सामने पर्वत भय खाते हैं, वह वज्रबाहु, जिसे हमने सोमया (सोम ग्रहण करनेवाला) स्वीकारा है, जिसके हाथ में वज्र है—हे मनुष्यों, वह इन्द्र है।

हर रूप-आकार के लिए जो प्रतिरूप हो गया, उसका वह रूप सर्वत्र दर्शनीय एक रूप है; इन्द्र अपनी माया (सृजनकारी माया) से पुरुरूप (अनेक रूप) हो संचरण करता है; उसके लाल घोड़े सहस्रवीं बार जुते हैं।

प्रकाशमान वह, अप्रकाशित वस्तुओं को प्रकाशित करता है। विधि से उसने पूर्वियों को ज्योतित किया है। ऋत द्वारा जोते गये अश्वों से, और ज्योति को प्राप्त करनेवाली रथ-नाभि से वह मनुष्यों को आनन्दित करता हुआ संचरण करता है।

वर्ष उसे जीर्ण नहीं करते हैं; और न मास और न दिवस ही उसमें जरा लाते हैं, उस शक्तिशाली की देह प्रार्थना की ऋचाओं और स्तवन-गीतों से महिमान्वित हो वृद्धि को प्राप्त करे।

हे इन्द्र, यदि सैकड़ों द्यु-लोक तेरे हो जायें, और सैकड़ों पृथ्वियाँ भी,—हे वज्रबाहु, नहीं, सहस्रों सूर्य भी, और दोनों लोक भी तेरे समान नहीं हो सकते।

मैं तुझे यज्ञियों में यज्ञिय (पवित्रतम) मानता हूँ, मैं तुझे अच्युतों को डिगाने वाला स्वीकार करता हूँ; मैं तुझे, हे इन्द्र, वीर्यवानों की पताका-रूप समझता हूँ, मैं तुझे प्रजाओं का अधीश्वर मानता हूँ।

प्रस्तुति : अ. भा.

—ऋग्वेद

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपनिषद्-प्रवचन

ईश्वर विश्व को धारण करता है, विश्व जो व्यक्त और अव्यक्त का संयोजन है, जो नाशवान और अनाशवान का संयुक्त रूप है।

इन्द्रिय-विषयों के भोक्ता-भाव से बंधकर आत्मा ईश्वरत्व की चेतना खो देता है; जब वह अपने ईश-भाव को प्राप्त कर लेता है, तो वह सारे पाशों से मुक्त हो जाता है।

अजर-अमर आत्मा के समान ही ईश्वर क्षयात्मक प्रकृति का भी समान शास्ता है। मनुष्य ध्यान, और इन तीनों तत्त्वों, ईश्वर, माया और आत्मा, के ज्ञान से समस्त सांसारिक अज्ञानों से मुक्त हो जाता है।

जैसे तिल में से तैल, दही बने दूध में से घृत, स्रोत में से जल और अरणी में से अग्नि की प्राप्ति होती है, वैसे ही वह आत्मा से, सत्य से और तप से ग्रहण किया जाता है।

यह विश्वकर्मा महात्मा देव मनुष्यों के हृदयों में सदा वास करता है। वह ध्यान द्वारा मन के संयम से, हृदय और बुद्धि से जाना जाता है। जो उसे इस प्रकार अनावरित देखते हैं वे अमृतत्व प्राप्त करते हैं।

मनुष्य के हृदय में निवास करने वाला यह ईश और इसका रूप चक्षु से नहीं हृदय से ग्रहण किया जा सकता है। और जो हृदयस्थ इस देव का इस प्रकार हृदय के द्वारा दर्शन करता है, वह अमरत्व प्राप्त करता है। कुछ विद्वान ब्रह्म-चक्र को वस्तुओं के स्वभाव से संचालित कहते हैं, अन्य अज्ञानी व्यक्ति उसका कारण काल को कहते हैं, लेकिन यह केवल ईश्वर की महिमा है जिससे यह चक्र घूमता है और संसार गतिमान होता है।

सब प्राणियों में निहित ईश्वर एक है। वह सर्वव्यापी है और सब प्राणियों के भीतर वर्तमान अन्तरात्मा है। वह कर्माध्यक्ष है और जीवन के सब रूपों में उसका वास है। वह साक्षी है, चैतन्य है, वह केवल रूप है, और निर्गुण है।

वह निष्कल है, निष्क्रिय है, शान्त है, निरवद्य और निरंजन है, वह परम सेतु है जो अमृत की ओर ले जाता है, अग्नि के समान सबको आत्मसात् करता हुआ।

प्रस्तुति : अ. भा.

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१५ अगस्त १९४७ : भारत का वह नियति-दिवस

● जवाहरलाल नेहरू

वह नियति दिवस आ चुका है, और भारतवर्ष एक दीर्घ निद्रा और संघर्ष के बाद, फिर से जागृत, प्राणवान और स्वतन्त्र हो गया है। कुछ अंशों में अब भी हमारा अतीत हम पर हावी है; हमें अभी बहुत कुछ करना है, ताकि जो प्रतिज्ञाएँ हमने बहुधा की हैं, उन्हें पूर्ण किया जा सके। फिर भी हम मोड़ ले चुके हैं, इतिहास हमारे लिए नये सिरे से आरम्भ होता है, वह इतिहास जिसे हम जियेंगे और दूसरे उसके बारे में लिखेंगे।

हम भारतीयों के लिए तथा समस्त एशिया और संसार के लिए भी, यह एक भाग्यनिर्णायक घड़ी है। एक नया सितारा उदय हुआ है, पूर्व में आजादी का सितारा। एक नयी आशा जागी है। वह सपना जिसे हम दीर्घकाल से संजोते आये हैं, अब पूरा हो रहा है। भगवान करे, यह सितारा कभी अस्त न हो और यह आशा सदा फलवती रहे।

इस स्वतन्त्रता का हमें हर्ष है; यद्यपि हमारे चारों ओर काले बादल छाये हुए हैं, हमारे बहुत से लोग कष्ट में हैं तथा कठिन समस्याओं से हम घिरे हुए हैं। आजादी अपने साथ जिम्मेदारियाँ और बोझ भी लाती है और हमको उनका सामना एक स्वतन्त्र और अनुशासित राष्ट्र की तरह करना है।

इस दिन सबसे पहले हमें हमारी स्वतन्त्रता के निर्माता, राष्ट्र के पिता, की याद आती है, जिन्होंने भारत की प्राचीन आत्मा को आत्मसात करते हुए स्वतन्त्रता की मशाल को ऊँचा रखा और हमारे चारों ओर छाये हुए अंधकार में प्रकाश की किरण चमकायी। बहुधा हम उनके अयोग्य अनुगामी रहे हैं और उनके सन्देश पर दृढ़ नहीं रह पाये; परन्तु केवल हम ही नहीं, बल्कि आनेवाली पीढ़ियाँ भी उनके अमर सन्देश को याद रखेंगी और भारत के इस महान सपूत की छाप उनके हृदय पर अमिट रहेगी। वे अपनी श्रद्धा में तथा बल, साहस और विनम्रता में भी महान थे। आजादी की इस मशाल को हम कभी नहीं बुझने देंगे, चाहे कितना ही भीषण तूफ़ान आये या और कुछ।

इसके बाद हमें उन अज्ञात स्वयंसेवकों और आजादी के सिपाहियों की याद आये बिना नहीं रहती, जिन्होंने किसी प्रशंसा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुरस्कार के बिना मृत्यु पर्यन्त भारत की सेवा की।

इस अवसर पर हमें उन भाई-बहनों का भी ख्याल आता है, जो राजनीतिक सीमाओं द्वारा हमसे अलग हो गये हैं और जो इस नवप्राप्त स्वतन्त्रता में इस समय हमारे साथ नहीं हैं। वे हमारे ही हैं और, चाहे कुछ भी हो, फिर भी हमारे ही रहेंगे। और हम उनके सौभाग्य एवं दुर्भाग्य में सदा साथ देंगे।

भविष्य हमें पुकार रहा है। हम कहाँ जायेंगे और हमारे प्रयास कैसे होंगे? सामान्य जन के लिए, भारत के किसान और मजदूरों के लिए, आजादी तथा अवसर की प्राप्ति कराना; गरीबी, अज्ञान तथा रोगों से संघर्ष कर उन्हें खत्म करना; एक समृद्ध, जनतन्त्रीय और प्रगतिशील राष्ट्र की स्थापना करना और ऐसी सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक संस्थाओं का निर्माण करना, जो प्रत्येक स्त्री-पुरुष के लिए न्याय तथा संपूर्ण जीवन की मांग को पूरा करने की कोशिश करेंगी।

हमें कठोर परिश्रम करना है। हममें से कोई तब तक चैन से नहीं बैठ सकता, जब तक कि हम अपनी प्रतिज्ञाओं को पूरा नहीं कर लेते और भारत के तमाम लोगों को उनकी भावी के अनुरूप नहीं बना देते। हम एक ऐसे महान देश के नागरिक हैं, जो महान प्रगति के द्वार पर

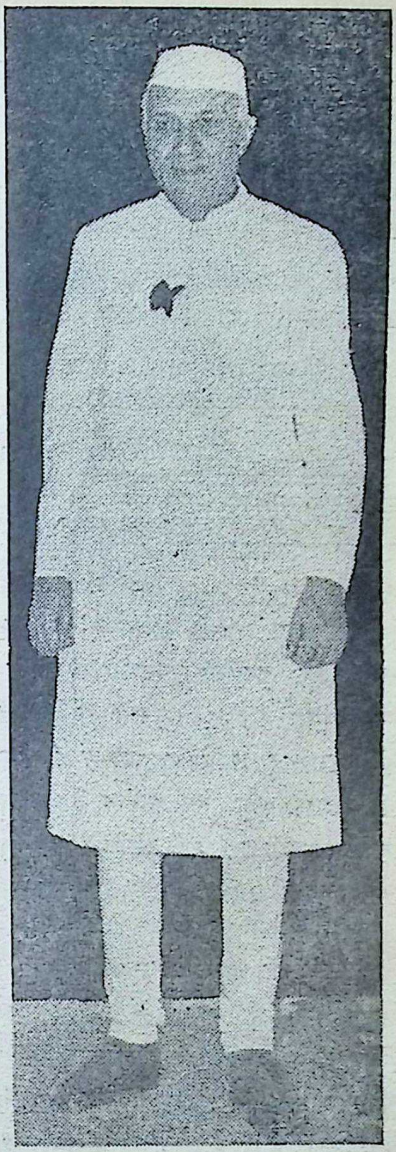

खड़ा है, और हमें इस उच्चस्तर को प्राप्त करना है। हम चाहे किसी भी धर्म के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुयायी हों, फिर भी हम सभी समान रूप से भारतमाता की संतान हैं, और हम सब के समान अधिकार, समान सुविधाएँ, तथा समान कर्त्तव्य हैं। जातिवाद अथवा संकीर्णता को हम प्रोत्साहन नहीं दे सकते, क्योंकि कोई भी राष्ट्र महान नहीं हो सकता, यदि उसके लोग विचार अथवा कार्यों में संकीर्ण हों।

संसार के सभी राष्ट्रों और लोगों को हम अपनी शुभेच्छाएं भेजते हैं, और शान्ति, स्वतन्त्रता तथा प्रजातन्त्र के विकास में उनका साथ देने की प्रतिज्ञा करते हैं।

हमारी प्रिय मातृ-भूमि को, जो पुरातन एवं सनातन होने के साथ-साथ नित नवीन है, हम अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं, और उसकी निरंतर सेवा करने की फिर से प्रतिज्ञा करते हैं। जय हिन्द।

तुम्हीं अपने विधाता हो!

तुम्हारी सभी यातनाएं इसलिए आती हैं कि तुम दो विरोधी इच्छायें करते हो, तुम्हारी इच्छाओं में सामञ्जस्य नहीं होता बल्कि एक दूसरे में युद्ध होता है। तुम जानते हो कि विभाजित किया हुआ मकान स्वयं गिरता है। इसलिए अपने अन्तःकरण और मस्तिष्क का निरीक्षण करो और यह देखो कि उसमें कहाँ तक शान्ति है। यदि तुम्हारा एक ही लक्ष्य है और उद्देश्य में एकता है तो तुम्हें कोई कठिनाई न होगी, तुम यातना नहीं भोगोगे; लेकिन यदि समें संघर्ष और असामञ्जस्य होगा तो मकान अवश्य गिरेगा, तुम्हें अवश्य यातना सहन करनी पड़ेगी।

यही तुम्हारी यातनाओं का कारण है जो कि तुम्हारे द्वारा ही लाया गया है। तुम अपने भाग्य के स्वयं विधाता हो। मनुष्य में निम्न और उच्च दोनों ही इच्छाएं होती हैं। दोनों में संघर्ष होता है, लेकिन विकासवाद के सिद्धान्तानुसार इस संघर्ष में उसी की विजय होती है जो योग्यतय होता है। योग्यतम की सत्ता होना ही प्रकृति का विधान है।

—स्वामी रामतीर्थ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

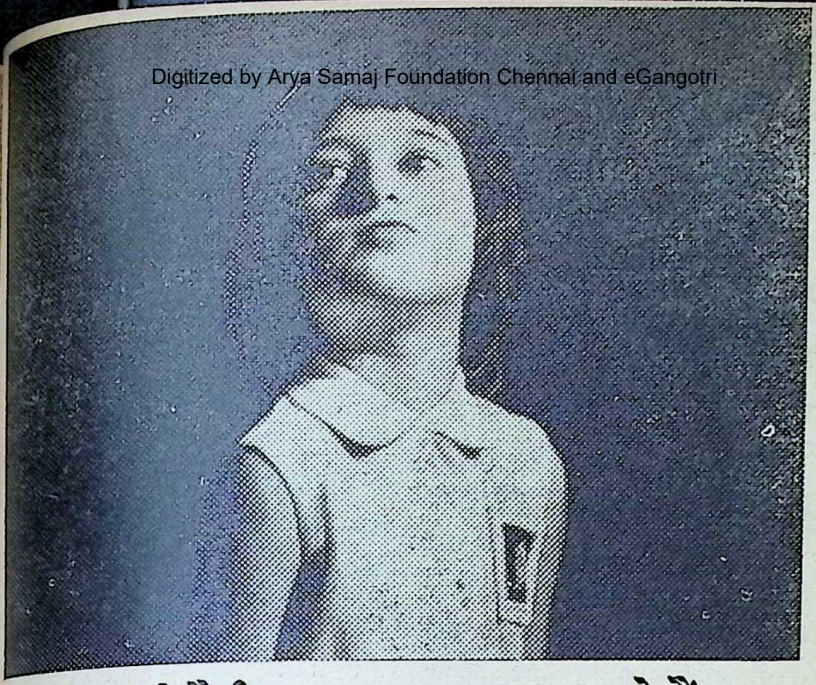

"मम्मी-डैडी अक्सर ग़लत काम करते हैं, लेकिन..."

"...इस बार उन्होंने जो किया सो बिल्कुल ठीक किया। दोनों ने बैंक ऑफ़ बरोडा में अपना-अपना खाता खुलवाया है। इतना ही नहीं, मुझे भी कहा है कि जब मैं १४ साल की हो जाऊँगी तो मेरे नाम का भी 'नाबालिगों का खाता' खुलवा देंगे! यह खाता मैं खुद चलाऊँगी और इसमें मुझे ४% के हिसाब से ब्याज भी मिलेगा। तब तक मैं अपने पैसे अपनी छोटी-सी डिबिया में भरती रहूँगी..."

"आजकल, जीवन के हर क्षेत्र के लोग बैंक ऑफ़ बरोडा में अपना खाता खोलते हैं क्योंकि इस बैंक का हर काम बढ़िया होता है। यहाँ लोग बड़े मिलनसार हैं; जो सलाह और मदद माँगिए, बड़ी खुशी से देते हैं। वे तो मुझ जैसी मामूली खातेदार की भी बड़ी क़द्र करते हैं!"

नाबालिग़ों का खाता

दि
बैंक ऑफ़ बरोडा लिमिटेड
(संस्थापित: सन् १९०८)
प्रधान कार्यालय: बड़ौदा

हमारी सभी सेवाओं की पूरी जानकारी देनेवाली पुस्तिका 'आइए, हम आपकी मदद करें...' मुफ़्त मिलती है। आज ही मँगवाइए।

IWT-BB-3602

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

पाश्चात्यवाद को चुनौती

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

● डॉ. कन्हैयालाल मुन्शी

भारत की सर्जनात्मकता को पाश्चात्य-वाद की चुनौती स्वीकार करनी होगी।

पाश्चात्य वाद की आधार-भूमि है भौतिकवाद। जीवन का वह तरीका भारतीय संस्कृति से, हमारे जीवन के तरीके से सर्वथा भिन्न है। वह वैयक्तिक आत्म-लिप्तता, सामुदायिक लोभ, भय और घृणा पर आधारित है। वह इसी केन्द्रीय विचार के आस-पास चक्कर काटता है कि मनुष्य अपनी आवश्यकताओं और वासनाओं से अधिक और कुछ नहीं है, और उनको तृप्त करने का एक संगठित प्रयत्न ही जीवन का चरम-परम उद्देश्य है। उसने तानाशाहियों, वर्ग-युद्धों और सर्वसत्ताधीश वादों को जन्म दिया है। उसने भौतिक वाद को एक प्रकार के युद्धशील धर्म-संस्थान के रूप में संगठित किया है। उसने प्रकाण्डरूप से क्रान्तिकारी युद्धों, तथा मानवता के शारीरिक और मनोवैज्ञानिक बलात्कारों को पोषित किया है। मानवीय विकास के एक बुनियादी तथ्य के रूप में उसने आत्मानुशासन का तरस्कार किया है और नैतिक जीवन-व्यवस्था की सर्वोपरिता से उसने इनकार किया है। उसने विवाह और गार्हस्थ्य जीवन की पावनता को नष्ट किया है। उसने मनुष्य की घृणा करने की क्षमता को बढ़ावा दिया है और गार्हस्थिक वैषम्य, राष्ट्रीय नफ़रतों और विश्व-व्यापी शोषण को जन्म दिया है। प्राणिक भूखों की संगठित तृप्ति के क्षेत्र के सिवाय, जगत-जीवन का उसके लिए और कोई अर्थ नहीं है।

एक पाश्चात्यवादी—पाश्चात्यता में डूबा हुआ एक व्यक्ति—ऐन्द्रिक दर्शन की सीमाओं के आगे और किसी चीज पर विश्वास नहीं करता, और उसीको वह ज्ञान कहता है। वह केवल बाहरी परि-वर्तन में विश्वास करता है। उसकी एक-मात्र मान्यता यह है कि हर बुराई बाहरी क्रान्ति से सुधर सकती है और सुधर जायेगी। वह मानता है कि यदि वह प्रगतिशील रूप से और तेजी से परिवेशों को पुनर्संगठित कर सके और उत्पादन तथा वितरण की प्रणाली को बदल दे तो दुनियाँ रातोरात में परिणत हो जायेगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धीर-गभीर रूप से जिसकी साधना की जाये, आत्म-संस्कार की ऐसी किसी सृजनात्मक कला की आवश्यकता नहीं है। दुनिया को उलट कर रख दो, और हमारा मनचाहा सब अपने आप ही सामने आजायेगा।

पाश्चात्यवाद इसी लक्ष्य की सिद्धि के लिए प्रयत्नशील है। उसके समर्थक मानते हैं कि इस साध्य की सिद्धि के लिए, हिंसा, अधमता, धोखेबाजी, जहर, तथा वैयक्तिक जीवन, गार्हस्थिक पावनता और राष्ट्रीय स्वाधीनता का दमन आदि सारे ही अनिष्ट साधन न्यायसंगत हैं। उनकी यह अटल प्रतीति है कि कभी न कभी बलात्कार तथा फरेब पर आधारित उनके तौर-तरीके, अहंकार, पाशविकता, हिंसा और असत्य आदि मानवीय विकारों को परिवर्तित कर देंगे।

एक मात्र स्थायी मूल्य, जिन्हें वे मानते हैं, वे हैं—परिवर्तन में उनकी आस्था, और उनकी यह निश्चय प्रतीति कि जो भी कोई इससे भिन्न किसी चीज में विश्वास करता हैं, वह पलायनवादी है, प्रतिक्रियावादी है, या क्रान्ति-विरोधी है, और उसे हर सम्भव उपाय से निकाल फेंकना चाहिये।

पाश्चात्य के प्रभाव-तले, स्वाभाविक रूप से ही शिक्षा निर्माणशील या सर्जन-

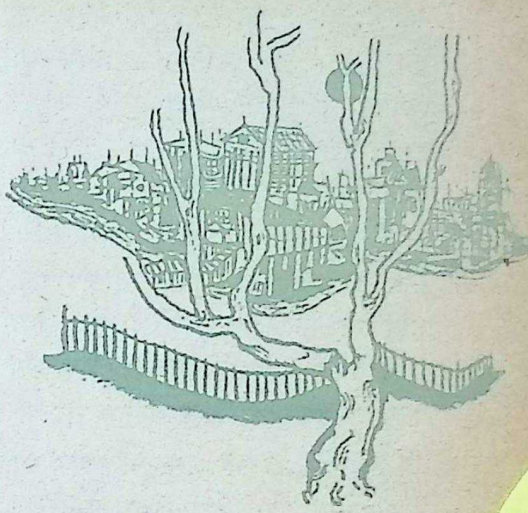

शील नहीं है, केवल सूचक और आरोपक है। वैयक्तिक विकास प्रगति जैसी कोई-वस्तु नहीं है, केवल एक विशेष ढाँचे में सबको ढाल देना है। शिक्षक और शिक्षार्थी के बीच का नाता—एक कवायद-मास्टर और फौजी रंगरूट के बीच का या एक पुलिसमैन और मुजरिम के बीच का नाता है। और ढाँचे का निर्माण वे लोग करते हैं, जिनके हाथ में राजनीतिक सत्ता है, और शासन के बलात्कारी जोर से वे उस ढाँचे को सबमें आरोपित करते हैं। विद्यार्थी की वैयक्तिकता को कूट-पीट कर एक आकार में ढाल दिया जाता है। आत्म-शिल्पीकरण की कला जैसी कोई वस्तु है ही नहीं; अपने स्वभाव के अनुसार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपना विकास करने की किसीको स्वतंत्रता नहीं है; अपने प्रति सच्चे होने जैसा कोई कर्त्तव्य नहीं है, अनिवार्य स्वधर्म या स्वभाव जैसी कोई वस्तु है ही नहीं। उसका केवल एक ही स्वभाव है करो या मर जाओ; उसका स्वधर्म यही है कि हवाई जहाज पर उड़ा जाये, किसी मारक विष का आविष्कार किया जाये, किसी और भी घातक मृत्यु-किरण को खोजा जाये ताकि उसके जो स्वामी हैं वे शेष मानवता को अपना दास बना लें।

भारतीय संस्कृति पाश्चात्यवाद को एक चुनौती है। वह तीन आधारभूत और अनिवार्य स्थितियों को स्वीकारती है, (१) प्रत्येक मनुष्य का अपना वैयक्तिक स्वभाव होता है, (२) अपने स्वधर्म का अनुकरण करके ही मनुष्य अपनी आत्म-सिद्धि पा सकता है, (३) उसके लिए आत्म-सिद्धि का अर्थ होता है अपने स्वधर्म के आग्रहशील अनुरोध पर आत्मानुशासन द्वारा अपनी वृत्तियों को संगठित करना और इस प्रकार अपनी शक्तियों का संयोजन सिद्ध करना, जिसे हम व्यक्तित्व कहते हैं।

भारतीय संस्कृति की मान्यता स्पष्ट है। मनुष्य का अन्तिम लक्ष्य यही है कि वैयक्तिक विकास-प्रगति द्वारा वह पूर्णत्व-लाभ करे। बाहरी परिवर्तन उसी हद तक उपयोगी हैं जहाँ तक वे हमें ऐसी स्थितियाँ प्राप्त कराने में सहायक होते हैं जिनमें ऐसी विकास-प्रगति सुगम हो जाती है। साध्य, साधनों का समर्थन नहीं कर सकते। साध्य और साधन अन्ततः एक हैं, और उन्हें अलग नहीं किया जा सकता; सत्य को जैसा हम देखते हैं ठीक उसी रूप में उसकी साधना करनी होगी। केवल यही साधना मानव-प्राणी को गौरव-गरिमा और स्वतंत्रता प्रदान करती है। लोभ, मद, मत्सर, भय और घृणा द्वारा प्रेरित तथा छल, प्रपंच और बलात्कार द्वारा उपलब्ध परिवर्तन आत्मविनाशक होते हैं।

यह आस्था ही सर्जनात्मक शिक्षा के क्षेत्र का निर्णय करती है। सबसे पहला काम है शिक्षार्थी के स्वभाव का पता लगाना और फिर उसका विकास और शुद्धिकरण करना। बिना किसी समानान्तर आन्तरिक परिवर्तन के शिक्षार्थी के केवल बाह्य चारित्र्य म परिवर्तन हमें कहीं नहीं ले जाता। इसीलिए उसकी शक्तियों और क्षमताओं को इस प्रकार प्रोत्साहित किया जाना चाहिये ताकि भारतीय तरीके से वह अपनी जीवनी ऊर्जा को शक्ति और सौन्दर्य के साथ अभिव्यक्त कर सकें। इस परिणाम को प्राप्त करने के लिए शिक्षार्थी को सांस्कृतिक

[शेष पृष्ठ ६९ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

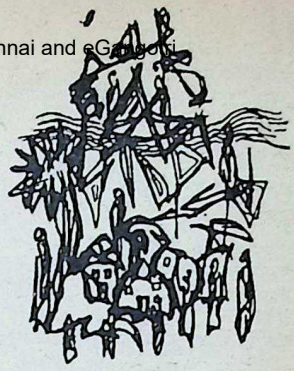

सुलक्षण

सुबह से आज
किस अव्यक्त से
उर उल्लसित।
सहसा
सुभाषित राग,
दायीं आँख
रह-रह कर
विवश स्पंदित!
दूर कलगी पर
बिखरती
अजनबी गहरी सुनहरी आब,
पहली बार
गमले में खिला है
एक लाल गुलाब!

न जाने किस
अजाने आत्म शुभ संभाव्य की
यह भूमिका,
रोमांच-पुष्पों से
लदी तन-यूथिका!
शायद.....
आज तुमसे भेंट हो।

—महेन्द्र भटनागर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'कृष्ण-जन्म'
जॉर्ज कीट के चित्र की रेखानुकृति

श्रीकृष्ण का अवतार-काल

●

रमेश खुराना

भाद्रे बुधे कृष्ण पक्षे धात्रर्क्षे हर्षणे वृषे।
कर्णोऽष्टम्यामर्धरात्रे नक्षत्रेशमहोदये॥
अंधकारावृतेकाले देवक्यां शोरिमन्दिरे।
आविरासीद्धरिः साक्षादरण्यामध्व-
रेऽग्निवत्। (गर्ग० १।११।२३,२४)

[भाद्रपद मास, कृष्ण पक्ष, बुधवार, रोहिणी नक्षत्र, हर्षण योग, अष्टमी तिथि और वृष लग्न में अंधकारपूर्ण अर्धरात्रि के समय वसुदेव के घर देवकी के गर्भ से श्रीकृष्ण अरणि से अग्नि के समान प्रकट हुए।]

श्रीकृष्ण का समय भारतीय धर्म ग्रन्थों के अनुसार ५००० वर्ष से भी पूर्व का निश्चित होता है, जब कि पुरातत्व विभाग की खोजों के अनुसार श्रीकृष्ण का समय लगभग साढ़े तीन हजार वर्ष पूर्व का निश्चित होता है। विद्वान पार्जीटर के मतानुसार महाभारत का युद्ध ईसा से १००० वर्ष पूर्व और वंकिमचन्द्र के विचारानुसार कुरुक्षेत्र का युद्ध आज से (१९६५ से) १२८१ वर्ष पूर्व हुआ था।

विज्ञान की कसौटी पर

पुराणों के लेखक एवं रेडियम के अविष्कारक के मतानुसार पृथ्वी का जन्म लगभग २ अरब वर्ष पूर्व हुआ था। वैज्ञानिकों के विचारानुसार लगभग ५००० वर्ष पूर्व चतुर्थ हिमयुग था, जिसे प्रलय भी कहते हैं। महाभारत भी इसका समर्थन करता है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'माखन-चोर': मधुरान्तकम्, मद्रास के मन्दिर की एक मूर्ति का रेखांकन

प्रतिस्रोतो महानद्यः सरितः शोणीतोदकाः।
फेनायमाजाः कूपाश्च कूर्दन्ति वृषभा इव॥
पतन्त्युल्का सनिर्घाताः शक्रा शनिसमप्रभाः।
कैलाशमन्दशभ्यान्तु तदा हिमवता विभो॥
सहस्रशो महाशब्दा शिखराणि पतन्ति च।
महाभूता भूमिकम्पे चत्वारो सागराः पृथक्॥
वेलामुद्धतयन्तीव क्षोमयन्तीवसुन्धराम्।
वृक्षानुन्मूल्य वात्युग्राः वाताः शर्कर-वर्षिणः॥

[नदियां उल्टी बहने लगीं। सारा जल मानव के रक्त से मिल जाने के कारण लाल हो गया। कुओं का जल उफ़नने लगा और उसमें से बैल के हिम्बाने की सी ध्वनि होने लगी। उल्कापात होने लगा। हिमालय से बड़े-बड़े हिमखण्ड टूट-टूट कर गिरने लगे। समुद्र, पृथ्वी

'केशी-वध': पहाड़पुर, बंगाल की खुदाई से प्राप्त-मूर्ति का रेखांकन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर कूदने लगा। आँधियों से टूट-टूटकर वृक्ष गिरने लगे।]

यह भूकम्प हस्तिनापुर में आया था। द्वारका में आनेवाले भूकम्प के विषय में श्रीकृष्ण ने उद्धव से बतला दिया था- समुद्रः सप्तयेऽहयेता पुरीश्च प्लावसिष्यति--भागवत ११।६।३ (हे उद्धवः आज से सातवें दिन समुद्र इस द्वारका को डुबा देगा)। इस भूकम्प के प्रथम दिवस श्रीकृष्ण ने द्वारकावासियों से कहा था--एते वै महोत्पाता ह्युत्तिष्ठन्तीह सर्वतः [आज द्वारका में चारों ओर से महाउत्पात और आंधियां उठ रही हैं।]

यह भूकम्प अनेक स्थानों पर एक साथ आया था। उर नगर के शिलालेखों के अध्ययन के पश्चात् शोधकर्ता इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि वहाँ भी भूकम्प आया था। यह नगर ईराक में बसरा से लगभग १०० मील की दूरी पर पश्चिम दिशा में यूफ्रीटीस नदी के किनारे वसा हुआ है। बाइबिल में भी इस नगर का वर्णन मिलता है। उर नगर के भूकम्प के समय (जनवरी १९३० के अमेरिका के एक मुख्य पत्र नेशनल ज्योग्राफिकल मैगजीन के एक लेख के अनुसार) ६ दिन और ६रातों तक मूसलाधार वर्षा, आंधी, तूफ़ान आदि के साथ होती रही। सातवें दिन आंधी कुछ कम हुई। नगर जलमग्न था। ईराक और हस्तिनापुर एक ही अक्षांश पर हैं। एक आक्षांस पर बसे नगरों में भूकम्प का एक साथ आना विज्ञान सिद्ध है। (अगस्त १९३९ के उसी अमेरिकन पत्र के अनुसार) मय प्रदेश (मैक्सिको) में भी ५००० वर्ष पूर्व भूकम्प आया था। यह प्रदेश द्वारका के अक्षांस पर है।

इस प्रकार यह सिद्ध हो जाता है कि विज्ञान के मतानुसार जब भूकम्प आया था, तब भी श्रीकृष्ण जीवित थे।

जिस प्रकार वर्तमान समय में हम हिन्दी वर्ष का आरम्भ चैत्र मास से और अंग्रेजी वर्ष का आरम्भ जनवरी मास में मानते हैं, ठीक इसी प्रकार कृष्ण-काल में वर्ष का आरम्भ मार्गषीर्ष से माना जाता था। अमर कोषकार के मतानुसार- मार्गशीर्ष सहामार्ग आग्रहायणिश्चस। (मार्गशीर्ष प्रथम मास है। वर्ष का आरम्भ इसी मास से होता है।) काल माध्वकार के विचारानुसार-मार्गमासदिकैस्मिऋतुभि कल्पित: काल षणमासात्मकमुत्तरायणाम्। (मार्गशीर्ष से लेकर तीन ऋतुओंवाला ६ मास का समय उत्तरायण होता है।) सूर्य पंडित के मतानुसार- मार्गशीर्ष मृगशिरः पूर्णिया सम्बन्धे वर्षादिरभिहितः तस्मिन्नेवाऽगृहायणीभिधानात्। आग्रहायणं यस्यां सा आग्रहायणी, अत आग्रहायणक इति मार्गशीर्ष नाम। उत्तोऽस्य मासस्त्र मुख्यत्वाद विभूतिमत्वम्। (मृगशिर नक्षत्रयुक्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्णिमा के सम्बन्ध से मार्गशीर्ष नाम है, यह आरम्भिक मास है, अतएव इसका नाम आग्रहायणिक भी है। सब मासों में मुख्य होने के कारण इसे विभूति कहा जाता है।)

भारतीय ज्योतिषशास्त्र (शंकर बाल कृष्ण दीक्षित के मतानुसार-मार्गशीर्ष वसन्त सम्पात शक पूर्व सुमारे ४००० वर्ष याकांली होता) मार्गशीर्ष में वसन्त का सम्पात शक संवत के आरम्भ के लगभग ४००० वर्ष पूर्व माना जाता है।

शक संवत् से ३००० वर्ष पहले कृत्तिका नक्षत्रों की गणना होती थी। तब भी मार्गशीर्ष से वर्ष का आरम्भ माना जाता था। इस प्रकार ३०००+१८८७=४८८७ वर्ष आते हैं, अर्थात् श्रीकृष्ण का समय ४८८७ वर्ष पूर्व निकलता है। (श्री कृष्ण-काल से ही कृत्तिका नक्षत्र की गणना आरम्भ हुई थी।)

भारतीय ज्योतिष शास्त्री काल की गणना आकाश स्थित सप्तऋषियों—, मरीची, वशिष्ठ, अंगिरा, अत्रि, पुलस्त्य पुलह और क्रतु से भी करते हैं—ते त्वदीपे द्विजः काल अधुनाचाश्रित मघाः।

सप्तऋषियों को एक नक्षत्र पर सौ वर्ष लगते हैं। नक्षत्र २७ हैं। अतः सम्पूर्ण नक्षत्रों का समय हुआ १००×२७=२७०० वर्ष। आज कल कृत्तिका नक्षत्र पर सप्तऋषि पाये जाते हैं। कृत्तिका इक्कीसवां नक्षत्र है और मघा प्रथम। अतः मघा से कृत्तिका तक आने का समय हुआ १००×२१=२१०० वर्ष। श्रीकृष्ण के काल के पश्चात् यह दूसरा चक्कर है। अतः समय हुआ २७००+२१००=४८०० वर्ष। यह समय परीक्षित का है। श्रीकृष्ण का समय इससे कुछ पूर्व का है।

मेगस्थनीज का मत

यूनान के प्रसिद्ध यात्री मेगस्थनीज के विचारानुसार मथुरा के शौरसेनी जाति के लोग हरक्युलिस के उपासक थे। श्रीकृष्ण का ही दूसरा नाम हरक्युलिस है। हरक्युलिस डायोनियस से १५ पीढ़ी पीछे हुआ था। चन्द्रगुप्त और डायोनियस में १५३ पीढ़ियों का अन्तर है। वैज्ञानिकों एवं इतिहासकारों के मतानुसार ही अगर हम प्रत्येक पीढ़ी का अन्तर २० वर्ष मान लें, तो १३८×२०=२७६० वर्ष हुए।

चन्द्रगुप्त का समय ईसा पूर्व ३२६ वर्ष है। अतः श्रीकृष्ण का समय हुआ ३२६+२७६०+१९६५=५०५१ वर्ष पूर्व।

नारायण शास्त्री का मत

नारायण शास्त्री की पुस्तक 'दि एज आफ शंकर' के अनुसार भीम की मृत्यु माघ मास, उत्तरायण सूर्य, शुक्ल पक्ष, अष्टमी तिथि, रोहिणी नक्षत्र में हुई थी। गणना के पश्चात् प्रमाणित हुआ कि यह समय ईसा से ३१३९ वर्ष पूर्व का है।

[शेष पृष्ठ २४ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

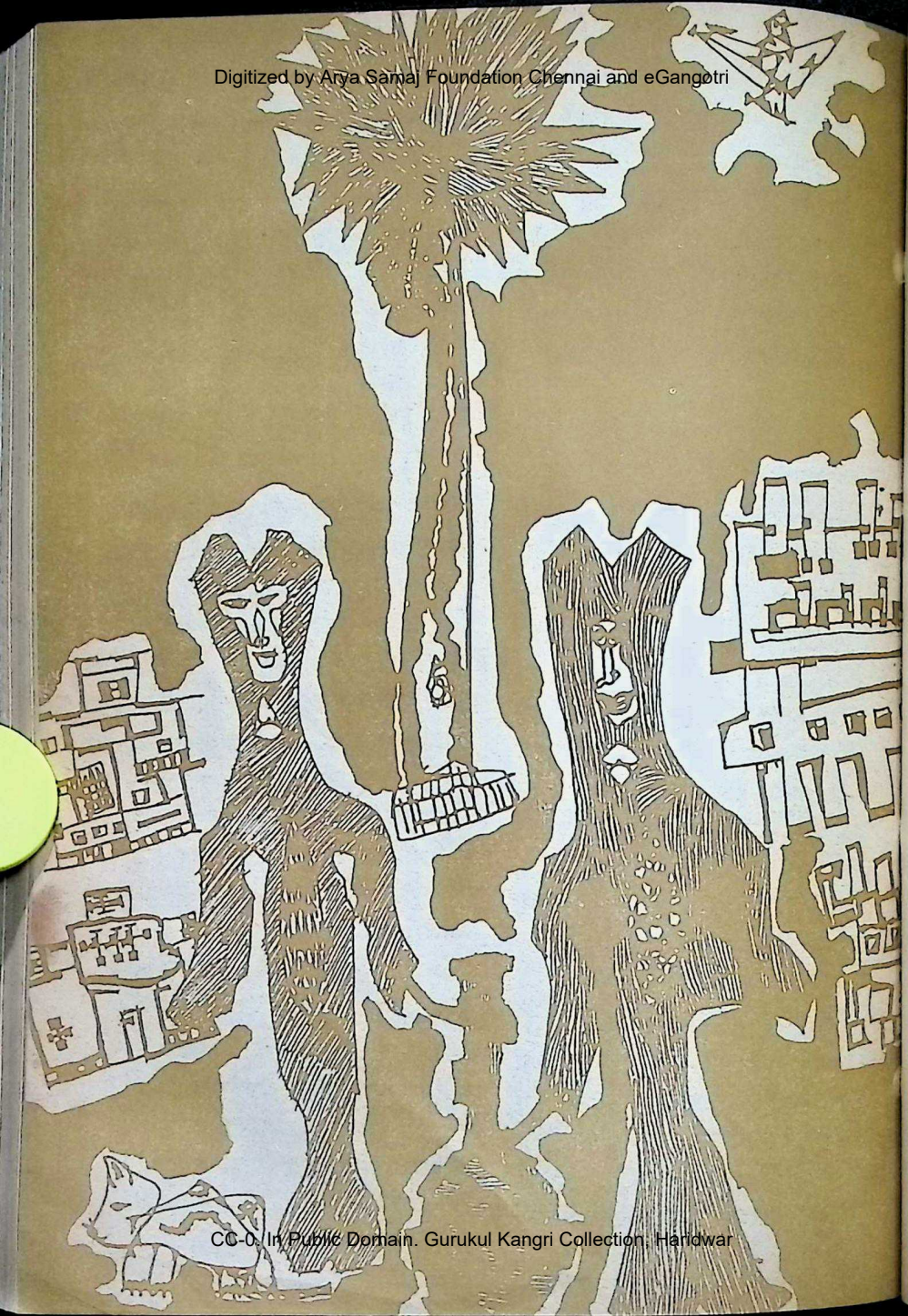

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो शराबी : पवन जैन का एक चित्र

●

नलिन रावल

[गुजराती कविता]

आकाशी काग़ज का कोरा टुकड़ा :
उस पर
पवन-पींछी ने आंका।
ईवा की छाती के भीतर के
सेव-वन जैसा मोहक
झूलता अँधियारा।

उस अँधियारे में उछलता है
रात-रानी का कुंतल-समन्दर :
समन्दर में तूफ़ानी वड़वानल :
उगे हैं वड़वानल में तीखे चमकते
विस्तृत काले झाड़ :

झाड़ दो
हाथ में दो हाथ डालकर डोलते हैं :
वे दोनों
एक दूसरे के कान में कुछ बोलते है।
दो बेबूझ बावरे नयन डुला कर दौड़ते हैं,
गिरते-पड़ते, भटकते हैं,
क्षितिज पर जाकर टकराते है :
उछल कर तारक-जूमखे तोड़ लेते हैं,
पीते हैं,
चन्द्रमा नशे में धंसता ही जाता है,
गरजता गीत गाकर वह
किसके मन में स्वप्न बन सो जाता है।

← दो शराबी :
चित्रकार :
पवन कुमार जैन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[श्रीकृष्ण का अवतारकाल : पृष्ठ २१ का शेषांश]

अतः ३१३९+१९६५=५१०४ वर्ष पूर्व महाभारत का युद्ध हुआ था।

लोकमान्य तिलक का मत

लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक की पुस्तक 'गीता रहस्य' के 'भागवत धर्म का उदय और गीता' शीर्षक लेख के अनुसार मैत्र्युपनिषद् ३८४५ वर्ष पूर्व का है।

छान्दोग्यादि के कुछ अवतरण मैत्र्युपनिषद में आये हैं, जबकि छान्दोग्यादि में में श्रीकृष्ण का घोर आङ्गिरस से शिक्षा ग्रहण करने का स्पष्ट उल्लेख है।

यह सिद्ध हो चुका है कि शतपथ ब्राह्मण और छान्दोग्यादि समकालीन ग्रन्थ हैं। शतपथ ब्राह्मण में उस समय की आकाश स्थिति का स्पष्ट उल्लेख है—'कृत्तिका स्वादधीत। एता ह वै प्राच्यै न च्यवन्ते सर्वाणि ह वा अन्यानि नक्षत्राणि प्राच्यै दिशश्च्यवन्ते। (कृत्तिका नक्षत्र अन्य नक्षत्रों की भांति पूर्व दिशा में च्युत नहीं होता। अतः इसमें अग्नि का आधान करें।) ज्योतिषशास्त्र के अध्ययन से यह प्रमाणित हो चुका है कि यह स्थिति ईसा से ३००० वर्ष पूर्व की थी। (यह स्थिति श्रीकृष्ण-काल की है।) इस प्रकार श्रीकृष्ण का समय हुआ ३०००+१९६५=४५६५ वर्ष पूर्व।

इस प्रकार श्रीकृष्ण का अवतार-काल हुआ, आज से लगभग ५००० वर्ष पूर्व। अभी इस विषय पर खोज जारी है। ●

अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के भारत के सर्वोच्च तांत्रिक, हस्तरेखाविद् तथा ज्योतिष सम्राट

पं. श्री रमेशचन्द्र भट्टाचार्य, ज्योतिषार्णव, एम. आर. ए. एस. (लन्दन)

पंडित रमेशचन्द्रजी कठिन समस्याओं को सुलझाने के लिए भविष्य देखने, हस्तरेखा और जन्म-कुण्डली पढ़ने तथा तांत्रिक अनुष्ठानों के लिए भारत में अप्रतिम हैं। विदेशों में भी आपकी प्रखर प्रख्याति है। निराश व्यक्तियों को पंडितजी की शक्तियों का अवश्य लाभ उठाना चाहिए।

विश्व में लाखों व्यक्तियों द्वारा परीक्षित चमत्कारपूर्ण यन्त्र।

धनदा यन्त्र (सम्पदा के लिए) पूजाखर्च–साधारण ७. ६२ रु., विशेष २९.६९रु., अतिविशेष १२९.६९ रु.

[ज्योतिष-सम्राट]

बगलमुखी यन्त्र (शत्रु-विजय व मुकदमा के लिए) पूजाखर्च–साधारण ९.१२ रु., विशेष २४.१२ रु., अति विशेष १८४.२५ रु.

मोहिनी यन्त्र (मित्रता के लिए) पूजाखर्च–साधारण ११.५० रु. विशेष ३४.१२ रु. और अतिविशेष ३८७.८७ रु.

सरस्वती यन्त्र (परीक्षा में पास होने के लिए) पूजाखर्च–साधारण ९.५६ रु., विशेष ३८.५६ रु.

प्रमाण-पत्रोंसहित विस्तृत सूचि-पत्र मुफ्त [पत्र-व्यवहार सदैव अंग्रेजी में ही करें]

प्रधान कार्यालय :–50/2, (BH) धरमतल्ला स्ट्रीट (८८-२ वेलेस्ली स्ट्रीट द्वारा प्रवेश) ज्योतिष सम्राट भवन कलकत्ता १३, फोन २४-४०६५, समय-सायं ५ से ७ बजे।

शाखा–१०५ ये स्ट्रीट, बसन्त निवास, कलकत्ता ५। समय–सुबह ९ से ११ बजे। फोन५५-३१८५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भवन की पांचवीं सांस्कृतिक विकास यात्रा

बद्रीनाथ और केदारनाथ के पुण्यधामों की यात्रा

हमें यह सूचित करते हुए अत्यन्त हर्ष होता है कि १९६५ के सितम्बर माह की २० ता. को बद्री-केदार की यात्रा का आयोजन भवन कर रहा है। भारतवर्ष के ये दो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पुण्यतीर्थ हैं और प्रत्येक भारतवासी इनकी यात्रा करना, जीवन के लिए सार्थक समझता है। समुद्र-सतह से ११,७३५ फुट ऊँचा हिमालय में स्थित बारह ज्योतिर्लिङ्गों में से एक भगवान केदारनाथ का मंदिर अत्यन्त आकर्षक और पुनीत है। बद्रीनाथ की यात्रा के लिए प्रथम यहाँ जाना आवश्यक समझा जाता है। बद्रीनाथ का मंदिर समुद्र-सतह से १०,२८४ फुट ऊँचा है और वहाँ भगवान बद्रीनारायण के दर्शन एवं पूजा के अतिरिक्त तप्तकुण्ड में स्नान तथा ब्रह्म कपाल में श्राद्ध-विधि का लाभ भी यात्रीगण उठाते हैं।

इस यात्रा में निम्नलिखित दर्शनीय स्थानों को भी देखने का आनन्द यात्रीगण उठायेंगे:—

आगरा, मथुरा, नयी दिल्ली, हरद्वार, ऋषिकेश, केदारनाथ, बद्रीनाथ, अयोध्या, इलाहाबाद, वाराणसी, गया।

यह यात्रा ३० दिनों में पूरी होगी। बम्बई से २० सितम्बर १९६५ को यात्रीगण यात्रा के लिए प्रस्थान करेंगे और २१ अक्टूबर १९६५ को बम्बई वापस आ जायेंगे।

सम्पूर्ण यात्रा का व्यय, भोजन, घूमने-फिरने, आवास तथा परिवहन एवं बद्री-केदार यात्रा के समय कुली-खर्च सहित प्रति व्यक्ति १२००] होगा।

आप आपने परिवार व मित्रों के साथ इस यात्रा में भाग लेने के लिए सादर आमन्त्रित हैं। विशेष जानकारी के लिए लिखिए या मिलिए:

सांस्कृतिक विकास यात्रा, भारतीय विद्या भवन, चौपाटी, बम्बई ७

(टेलीफोन नं. ७७४५१ व ७८७०२) से सम्पर्क करें अथवा पत्र लिखें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्लाइव-युग की एक आकर्षक पाण्डु-लिपि

● डॉ. एच. डी. साँकलिया

पाण्डुलिपि सजाने की कला का भारत में बहुत विकास हुआ। कागज़ या कपड़े पर लिखी पाण्डुलिपि को मनोरम्य चित्रों और आकृतियों द्वारा सजाने की यह कला १९वीं शताब्दी तक अत्यन्त प्रचलित थी। १९वीं शताब्दी में यंत्रों का आगमन हुआ। तेज़ी से लिखनेवाले कई साधन निकले; और कम कीमत में ज्यादा प्रतियाँ निकल सकें, ऐसी व्यवस्थाएँ अन्वेशित हुईं। इस से १०वीं शताब्दी से प्रचलित पाण्डुलिपि सजाने की कला का अन्त आ गया।

इस कला के कुछ उत्तम उदाहरण नेपाल और तिब्बत के मठों और पाटन व जेसलमेर के जैन भांडारों से प्राप्त तालपत्र पर लिखी पाण्डुलिपि में देखने को मिलते हैं। मुझे १८ वीं शताब्दी की एक सुन्दर पाण्डुलिपि देखने का मौका मिला था। यह पाण्डुलिपि अभी एक कला–संग्राहक के पास है। यह एक बहुत ही छोटे कद की यान ४"×५ ½" की है। और उसके ४८ पन्ने हैं। इस पाण्डुलिपि मे तीन जैनस्तोत्र– भक्तामर भंडारकाव्य, भक्तामर स्तोत्र और कल्याणमंदिर स्तोत्र दिये गये हैं। एक स्तोत्र के अनुसार यह सब स्तोत्र जगत्पति जगत्सेठ साहब के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नित्यपाठ के लिए लिखे गये थे।

भक्तामर स्तोत्र जैनों के दिगंबर और श्वेतांबर दोनों पंथों में बहुत प्रचलित है। इसकी रचना तीसरी शताब्दी में मानतुंग नामक जैन आचार्य ने की थी। यह स्तोत्र नित्यपाठ तथा चमत्कार के प्रयोजन के लिए उपयोग में आता है। आलंकारिक शैली में लिखे इस स्तोत्र में जैनों के आदि तीर्थंकर ऋषभदेव को संबोधन किया गया है। सभी आपत्तियों में रक्षण करने के लिए उन्हें इन शब्दों में प्रार्थना की गयी है:

"जिनके हृदय में तुम्हारा नागदमनी नाम बसा हुआ है, वह किसी भी प्रकार के भय से मुक्त, क्रोध से उद्धत, लाल आँखों वाले और कोयल के कंठ जैसे नील फणिधर के ऊपर से गुज़र सकते ह।

"तुम्हारे चरण-कमल में जो आश्रय पाते हैं, वे शस्त्र से बींधे गये हाथियों के देह से छूटते रक्त प्रवाह को पार करने में प्रयत्नशील योद्धाओं की वजह से भयंकर जगते युद्ध में दुर्जेय शत्रुओं पर भी विजय प्राप्त करते हैं।

"जो तुम्हे याद करते ह, वे लोग अनेक भयंकर जलचरों से भरे सागर के उछलते तरंगों पर डोलते जहाज में यात्रा करते हों, तब भी निर्भयता से किनारे लग जाते हैं।"

स्तोत्र में रही इन भावनाओं के कारण ही इसे 'भक्तामर स्तोत्र' (भक्त को अमर बनानेवाले स्तोत्र) ऐसा नाम दिया गया है।

कल्याण मंदिर स्तोत्र की रचना विख्यात जैन आचार्य सिद्धसेन दिवाकर ने की थी। इसका रचनाकाल चतुर्थ शताब्दी माना जाता है। यह स्तोत्र २३ वें तीर्थंकर पार्श्वनाथ को संबोधित है।

तमाम अनिष्ठों के निवारण के लिए जैन लोग इस स्तोत्र का नित्यपाठ करते हैं। इसी कारण से जगतसेठ न भी नित्यपाठ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के इस स्तोत्र की अलंकृत नकल करवाना पसन्द किया होगा।

१८ वीं शताब्दी के बंगाल के इतिहास में जगतसेठ का स्थान महत्वपूर्ण है। जगतसेठ ओसवाल जैन थे। १५वीं शदाब्दी में उनके पूर्वज राजपूताना से विहार और बंगाल की ओर आये थे और बाद में पटना और मुर्शिदाबाद में शराफ के रूप में स्थिर हुए थे।

उनको यह स्थल बहुत ही अनुकूल पड़ गया, और उन्होंने इतनी संपत्ति इकट्ठा कर ली कि यह सारा घराना 'जगतसेठ का घराना' के नाम से पहचाना जाने लगा। समकालीन अंग्रेज़ तथा मुस्लिम दस्तावेज के अनुसार बंगाल के नवाब सिराज-उद्-दौला ने गुस्से में आकर जगतसेठ पर प्रहार किया था और 'उनकी सुन्नत करवा देंगे' ऐसा एलान किया था।

इस अपमान का बदला लेने के लिए जगतसेठ न सिराज-उद्-दौला को पदभ्रष्ट करवा कर मीरजाफर को नवाब बनवाने के सिलसिले में अमीचन्द और क्लाइव

अपनी आवश्यकता के लिए खरीदिए

Hind FLOORING TILES

हाइड्रालिक इटालियन मशीनों से

निर्मित : प्रीफ़ब (पूर्वनिर्मित) आर. सी. सी. गृह, सीमेण्ट पाइप, टैंक, रंगाई की नाँदें व बाग़ीचों के सामान का निर्माण करते हैं। सरकार, रेलवे, म्युनिसिपैलिटी, पी. डब्ल्यू. डी. के कंट्राक्टर हैं और सामान मुहैया करते हैं।

हिन्दुस्तान सीमेन्ट पाइप्स एण्ड कंक्रीट कन्स्ट्रक्शन कं०

मुख्य कार्यालय : ओछवलाल गोरधनदास शाह

टाइल, पाइप्स एण्ड सेनीटरी मरचेण्ट्स

खाडीआ, चार रस्ता, अहमदाबाद

फैक्टरी : सुएज फार्म रोड, अहमदाबाद

कार्यालय तथा निवास फोन : ५२२९२

फैक्टरी फोन : ५१६३६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के साथ दोस्ती की थी। बाद में क्लाईव तथा मीरज़ाफर के शराफ का काम भी जगतसेठ न किया था। और कहा जाता है कि जगतसेठ की सलाह मान कर क्लाइव ने अमीचन्द से धोखा किया था।

अपनी इस पाण्डुलिपि से भी जगतसेठ की विपुल संपत्ति का ख़याल आता ह। सर्वप्रथम शुद्ध सुवर्ण से अलंकृत कागज़ पर कबूतरी रंग में आकर्षक सुशोभन किये गये थे – और बाद में उन पर स्तोत्र लिख गये थे।

इन पाण्डुलिपियों में चार चित्र हैं। प्रथम चित्र लक्ष्मीदेवी का है। वह तालाब में खिले हुए कमल पर विराजमान हैं। दूसरे चित्र में जैनों के आदितीर्थंकर ऋषभदेव उपदेश देते दिखायी पड़ते हैं। तीसरे चित्र में २३ वे तीर्थंकर पार्श्वनाथ को मेरुपर्वत पर भगवान इन्द्र स्नान करवा रहे हैं। चौथे में २४ वें तीर्थंकर भगवान महावीर ध्यानस्थ मुद्रा में दिखते हैं।

शास्त्र में कहा है उसके अलावा भी इस प्रति का मुगल कालीन होना उसमें अंकित चित्रों की शैली पर से भी ज्ञात हो जाता है। जैसे कि लक्ष्मी के चित्र में जो उद्यान और सरोवर अंकित हैं, उनकी रचना दिल्ली और आगरा के मुगल-उद्यानों के अंकन जैसी ही है। उसी प्रकार पोशाक आदि में भी मुगल युग की छाप स्पष्ट दिखती है।

इसके अलावा पाण्डुलिपि के चारों ओर अंकित बॉर्डर प्रत्यक पन्न पर भिन्न प्रकार के हैं और इस प्रकार बॉर्डर के कुल मिला कर २४ नये डिजाइन हमें मिलते हैं। कलाकार ने पश्चाद् भू के सुवर्ण में उठाव पा सकें, वैसे ही रंगों को पसन्द किया है।

कलाकार ने फूलों के रंगों में छाया-प्रकाश की लीला को मनोरम ढंग से चित्रित किया है। ताज़महल तथा अन्य मुगल स्थापत्य में व्यक्त बारीक और नाजुक कारीगरी का स्मरण हमें यहाँ भी होता है।

संक्षिप्त में कहा जाय तो यहाँ हमें मुगल 'मीनीयेचर' चित्र कला का एक उत्कृष्ट नमूना देखने को मिलता है। जिस युग में सुख चैन और समृद्धि विपुल थे, तब श्रीमंतों न कला को जो आश्रय दिया था, उसका भी स्पष्टचित्र हमें मिल जाता है।

अनु० ज्योतीन्द्र जैन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोक-गीतों में भगवान कृष्ण की मधुर लीलाएँ

रामनारायण उपाध्याय

लोक-गीतों में भगवान कृष्ण को लेकर अत्यन्त ही मधुर विनोद संजोया हुआ है। भगवान कृष्ण भले ही अवतारी पुरुष रहे हों, लेकिन ब्रजबालाओं के लिए तो वे प्रियतर सखा थे। एक कवि के शब्दों में कहें तो—

जाही अनादि अनन्त अखण्ड अछेद सुवेद बतावें,
ताही अहीर की छोहरियां छछिया भर छाछ पै नाच नचायें।

यानी जिसे वेदों ने अनादि, अनन्त, अखण्ड और अभेद बताया उसे ही अहीर की छोकरियों ने लोटे भर छांछ पर नाच नचाया है।

लेकिन भगवान कृष्ण भी कम शरारती नहीं थे। उनके कारण ग्वाल बालाओं के लिए राह चलना मुश्किल हो गया था। देखिए एक ग्वालन कह रही है—

अरे कोई दौड़ौ रे, कन्हैया मोहे लुटे।
हार हपक लिनू, चीर छुपक लिनू, मोतियन की लड़ टूटे,
अरे कोई दौड़ों रे, कन्हैया मोहे लूटे॥

अर्थ है—अरे कोई दौड़िए, कन्हैया मुझे लूट रहा है। उसने मेरा हार छुड़ा लिया, चीर खींच लिया और मोतियों की माला तोड़ डाली है।

दूसरी ग्वालन कह रही है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जल जमुना का तीर, कन्हैया न पकड्यो चीर रे,
हूँ तो गई थी नीर भरण को, वो तो बड़ो बेपीर रे।।
कन्हैया न पकड्यों चीर रे।।

अर्थ है—यमुना किनारे कन्हैया ने मेरा चीर पकड़ लिया है। मैं तो पानी भरने गयी थी, लेकिन वह बड़ा बेदर्दी है।

ग्वाल बालाएँ भी कम शरारती नहीं थीं। एक बार उन्होंने मिल कर कृष्ण को छकाने की सोची। इस पर उन पर क्या बीती, इसका भी वर्णन सुनिए।

वृन्दा वन की कुंज गलिन मऽ, गऊआ चरावे नन्दलाला।
छत्तीस कला की अदल बांसुरी, बजावता मन मोहन।
सासु बरजे बहू हमारी, दही बेचन को नहीं जाना।
नन्द को कान्हों बड़ो रसीलो, पल मऽ हुरमत ले डार।
उलट समझ बहू लाई हो दिल मऽ डर लागत तो रहणा घर।।
बरोबरी का किया मनसुबा, सबन कियो सोलई सिंगार।
मिरगा नयनी चतुर कामणी, एक से एक बणी अमोल।।
कजरा की लगी कोर, सखी री नैन बणया दो खंजर।
मारे कोकिला बाण, जसी रण मऽ चली रही तलवार।
बिंदी शोभादार नार वोका, झाला को मची रह्यो घनघोर।
नथनी शोभादार नार वोका, चन्द्र चमकतो मुख पर।
भरी दूध दही की माट ग्वालन मथुरा की, लगी ऊभी बाट
चाल चले गजराज, नार वोका, बिछुआ को हुयी रहूयो झनकारऽ
राह रोक कर खड्या कन्हैया खड़ी रही सब ग्वालन।
कई द् मोल मटकी को थारो, खरीद करूँ सब माखन।
सिर की मटकी भूई म ऽ पटकी, गौरस बिखर्यो काई कर्ना।
बड़ा दुःख म ऽ पड़ी सखी री, दिल को दर्द दिल जाण ऽ।
कृष्ण रहयो वनमाय, ग्वालन जाई दौड़ी जशोदा पास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जसी बदन पर बीत्ती वसी जाई न कहो
सारी बात।
थारो किसन छे, उत्तनपाती, मख ऽ लुट्यो
विन्दावनम ऽ
बहुत करी अरदास, मगर ऊ लिपट रहयों
मारा तनम ऽ।
बड़ी हो जात बेगम ग्वालन, खड़ी खड़ी
लड़नअ आई,
म्हारों कन्हैया सोयो पालणऽ, अभीऽ
कहो तो देऊं जगाय
सुणी न सखी सब रही अनमनी, कयण
लगी अबनी जाणुं गोकुल गांव।

अर्थ है—

वृन्दावन की कुंज गलियों में नंद के लाला गायें चराते थे। वे छब्बीस कलाओं से युक्त बांसुरी बजाते थे और सबका मन मोहते थे। एक दिन सास ने कहा कि हे बहू, तुम दही बेचने के लिए उधर मत जाया करो।

नंद का लड़का रसीला है, वह क्षण में इज्जत ले डालता है। बहू को बात उलटी लगी, और उसने सोचा कि घर में रहना तो डरना है।

अतएव बराबरी की सहेलियों ने सलाह की और सब सोलह शृंगारों से सज उठीं।

उन मृगनयनी चतुर स्त्रियों ने एक से एक बढ़ कर गहनें पहनें।

उन्होंने आँखों में काजल आँजा, और उनकी आँखें खँजर लगने लगीं, वे जिस ओर भी आँखें उठा कर देखतीं, ऐसा लगता मानों रण क्षेत्र में तलवारें चल रहीं हो।

उन्होंने माथे पर चमकदार बिंदी लगायी और उनके सिर पर झुमर लटक रही थी।

उन्होंने नाक में नथिनी पहनी और उनका मुख ऐसे लग रहा था, मानों चन्द्रमा उदय हुआ हो।

उन्होंने अपने सिर पर दूध-दही की मटकियाँ ली और वे मथुरा के रास्ते लग गयीं।

वे मदमस्त हाथी की तरह चल रही थीं और उनके बिछुओं की झनकार से सारा जंगल गूंज रहा था।

इतने में उन्होंने देखा-कृष्ण रास्ता रोक कर खड़े थे और कह रहे थे कि हे ग्वाल बालाओं, ठहरो और अपनी मटकियों का मोल बताओ, मैं आज सारा माखन खरीद लूँगा।

इतना कह कर उन्होंने सारी मटकियों को सिर पर से जमीन पर गिरा दिया।

यह देख कर ग्लाल बालाएँ सोचने लगीं कि अब क्या करना चाहिए? दूध-दही तो बिखर गया, लेकिन दिल का दर्द दिल ही जानता है। इधर कृष्ण तो वन में रहे, और उनमें से एक सखी दौड़ कर जसोदा के पास पहुँची और जैसी उस पर बीती थी, वैसी सब बातें कह दी। उसने कहा कि हे जसोदा, तुम्हारा कृष्ण बड़ा शरारती है, उसने मुझे वृन्दावन की राह में लूट लिया।

मैंने बहुत विनति की, लेकिन उसने मेरे शरीर से झूम कर सारा गोरस बिखेर दिया।

इस पर जशोदा ने कहा-हे ग्वालन! तुम बड़ी ढीठ हो और बिना कारण मुझसे लड़ने आयी हो।

देखो, मेरा कन्हैया तो झूले पर सोया है। कहो तो उसे जगा दूँ: इतना सुन कर सब सहेलियाँ सन्न रह गयीं। और उन्होंने निश्चय किया कि अब कभी गोकुल गाँव नहीं जाना चाहिए।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वरोदय की साधना और सिद्धियाँ

•

डॉ. कैलाशनाथ मिश्र

हमारे देश के ऋषि-महर्षियों ने मानव कल्याण के लिए अनेक प्रकार के ज्ञान विज्ञान और अनेक प्रकार की साधनाओं की खोज की। सभी साधनाएं सभी लोगों के लिए उपयुक्त नहीं होतीं। व्यक्ति विशेष के अनुसार ही साधना विशेष भी होती है, जिसका निर्माण गुरु करता है; पर इनमें से भी कुछ साधनाएं ऐसी हैं जिन पर किसी प्रकार का प्रतिबन्ध नहीं और इसी प्रकार की साधनाओं में एक है स्वरोदय की साधना।

स्वरोदय की साधना या स्वरोदय विज्ञान का आधार मनुष्य के श्वास-प्रश्वास की गति है। देखने में यह अत्यन्त आश्चर्यजनक, कौतूहलपूर्ण और अविश्वसनीय-सा लगेगा कि हमारी साँसों में भी क्या कोई विलक्षण और अलौकिक शक्ति हो सकती है? पर हाँ! जब इनकी सहायता से साधारणतया कठिन तथा असंभव कार्यों को आप मंत्र शक्ति के द्वारा हुआ-सा देखेंगे, तब इसकी अलौकिक शक्ति का पता चलेगा। संत चरनदास अपने "ज्ञान स्वरोदय" में लिखते हैं—

चार वेद का भेद है, गीता का है जीव।
चरनदास लखु आपको, तो मैं तेरा पीव॥
सब योगन को योग है, सब ज्ञानन को ज्ञान।
सबै सिद्धि को सिद्धि है, तत्त्व सुख को ध्यान॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह तो हुआ स्वरोदय की श्रेष्ठता का वर्णन। आगे परिचय है—

इंगला पिंगला सुखमणा, नाड़ी तीन विचार।
दहिने बायें स्वर चलैं, लखै धारना धार॥
पिंगला दहिने अंग है, इड़ा सु बायें होय।
सुषुमण इनके बीच है, जब स्वर चालैं दोय।
जब स्वर चालै पिंगला, मध्य सूर्य तँह बास।
इड़ा सु बायें अंग है, चन्द्र करत परकास॥

इस प्रकार हम देखते हैं कि ये श्वास-प्रश्वास केवल वायु का आना जाना मात्र नहीं, इनका सम्बन्ध इड़ा, पिंगला और सुषुम्णा नामक नाड़ियों से है। इड़ा (चन्द्र नाड़ी), पिंगला (सूर्य नाड़ी) और सुषुम्णा का वर्णन तमाम योगशास्त्र में आया है और वस्तुत : हठयोग और चक्र भेदन का आधार भी ये नाड़ियाँ ही हैं। संत चरनदास ने ऊपर वेद, योग इत्यादि से भी महत्वपूर्ण इन नाड़ियों को माना है। माहेश्वरी तंत्रार्गत् "आयोद्धारक स्तोत्र" में आद्या माँ भगवती की जो स्तुति की गयी है उसमें भी आया है—

"इड़ा पिंगला त्वं सुषुम्णा च नाड़ी"

अर्थात् हे भगवती, आद्या माँ! तुम्हीं इड़ा, पिंगला और सुषम्णा नाड़ियाँ हो।

इससे भी इन नाड़ियों का तथा इनसे सम्बन्धित स्वर का महत्व प्रकट होता है।

यह बात ध्यान देने की है और संभवत: बहुत से लोगों ने इसे लक्ष्य भी किया होगा कि अव्याहत गति से चलनेवाला यह श्वास-प्रश्वास एक साथ ही दोनों नथुनों से नहीं चला करता। कभी यह बायें नथुने से प्रवाहित होता है तो कभी दाहिने से। इसका क्रम और समय निश्चित है। यह भी स्मरणीय है कि प्रति मिनट श्वास की एक निश्चित संख्या ही हमारे नथुनों से प्रवाहित होती है। प्रत्येक मनुष्य में यह संख्या भिन्न-भिन्न हो सकती है और रोगकाल में इस संख्या में अन्तर पड़ जाता है। वस्तुत: हमारे जीवन के सारे सुख-दुख, रोग, दुर्भाग्य तथा आयु इत्यादि सभी इनसे प्रभावित होते हैं और श्वास-प्रश्वास की इस गति पर नियंत्रण करके रोग, दुर्भाग्य और आयु पर विजय प्राप्त की जा सकती है। श्वास-प्रश्वास की इसी गति का नाम 'स्वर' है, तथा इसी श्वास की गति का एक नथुने से दूसरे में चला जाना उसका 'उदय' कहलाता है। श्वास-प्रश्वास के इस सारे विज्ञान को इसलिए स्वरोदय विज्ञान और इसकी साधना अर्थात् स्वर-नियंत्रण को स्वरोदय की साधना कहते हैं।

स्वरोदय की साधना में आगे बढ़ने के पहले यह अति आवश्यक है कि हमें पंचतत्त्वों की उपस्थिति को पहचानने का ज्ञान हो जाय। तत्त्वों के उदय को पहचानने की कई रीतियाँ हैं। तत्त्वाभ्यासी तो अनायास ही उनकी उपस्थिति जान जाता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं पर साधरण मनुष्य के लिए निम्नलिखित पहचानने की रीतियाँ उपादेय होंगी।

१. श्वास-प्रश्वास की गति द्वारा तत्त्वों की पहिचान–

प्रत्येक तत्त्व के उदय होने पर चलते हुये श्वास की गति बदल जाती है। जैसे–

मध्ये पृथ्वी ह्यदश्चापश्चोर्ध्वं वहति चानलः।
तिर्यग्वायुप्रचारश्च नमो वहति संक्रमे॥

अर्थात् नथुने के मध्य में श्वास चले तो पृथ्वी तत्त्व की, नीचे की ओर से जलतत्त्व की, ऊपर की ओर से अग्नि तत्त्व की, तिरछे वायु तत्त्व की तथा घूम-घूम कर चले तो आकाश तत्त्व की उपस्थिति समझनी चाहिए।

२. श्वास की लम्बाई द्वारा तत्त्वों की पहिचान–

जिस प्रकार प्रत्येक तत्त्व के उदय होने पर श्वास की गति में अन्तर आ जाता है उसी प्रकार श्वास की लम्बाई में भी अन्तर आ जाता है। यथा––

अष्टाङ्गुलं वहेद्वायुरनलं चतुरङ्गुलम्।
द्वादशाङ्गुलमाहेयं षोडशाङ्गुलं वारुणम्॥

अर्थात् श्वास की लम्बाई यदि आठ अंगुल हो तो वायु तत्त्व की, चार अंगुल हो तो अग्नितत्त्व की, बारह अंगुल हो तो पृथ्वी तत्त्व की, सोलह अंगुल हो तो जल तत्त्व की, तथा बीस अंगुल हो तो आकाश तत्त्व की उपस्थिति समझनी चाहिए।

नोट:–– किसी कागज के टकड़े पर महीन धूल लेकर या रूई को श्वास की राह में धीरे-धीरे लावें। जहाँ आकर धूल-कण या रूई के रेशे हिलने लगें वहीं हाथ रोक लें और उस दूरी को नाप लें तथा उसी के अनुसार तत्वोदय का निर्णय कर लें।

३. स्वाद द्वारा तत्त्वों की पहिचान–

जिस प्रकार प्रत्येक तत्त्व का अपना-अपना एक निश्चित रंग, स्थान, गति, लम्बाई इत्यादि है उसी प्रकार उनका एक निश्चित स्वाद भी है। तत्त्व विशेष की उपस्थिति में मुंह का स्वाद भी तदनुरूप बदल जाया करता है पर यह बिना अभ्यास के जल्दी अनुभव में नहीं आता। तत्त्वों का स्वाद इस प्रकार है––

माहेयं मधुरं स्वादु कषायं जल मेव च।
तिक्तं तेजो वायुरम्ल आकाशः कटुकस्तथा॥

अर्थात् यदि मुंह का स्वाद मीठा हो तो पृथ्वी तत्व की, कसैला हो तो जलतत्त्व भी, तीता हो तो अग्नितत्व की, खट्टा हो तो वायु तत्त्व की और कटु या कड़वा हो तो आकाश तत्त्व भी उपस्थिति जाननी चाहिए।

४. रंग द्वारा तत्त्वों की पहिचान–

हम अपने लेख "पंच महाभूतों की साधना और सिद्धियाँ" में लिख चुके हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि प्रत्येक तत्त्व का एक निश्चित रंग होता है और यदि किसी प्रकार उन रंगों को जान लिया जाय तो तत्त्व विशेष की उपस्थिति जानी जा सकती है। हम इसे जानने की संक्षिप्त विधि दे रहे हैं—

साधक पहले सुखासन या पद्मासन में स्थिर होकर बैठ जाय और फिर योनिमुद्रा धारण करे अर्थात् दोनों अंगूठों से दोनों कर्ण छिद्र, तर्जनियों से दोनों आँखें, मध्यमाओं से दोनों नासिका छिद्र तथा दोनों अनामिकाओं एवं कनिष्ठाओं से मुख बंद कर ले। इस प्रकार करने पर तत्त्व-रंग का इस प्रकार दर्शन होगा—

आपः श्वेताः क्षितिः पीता रक्तवर्णो हुताशनः
मारुतो नीलजीभूत आकाशो भूरिवर्णकः ॥

अर्थात् यदि उपर्युक्त मुद्रा की स्थिति में पीला रंग दिखायी दे तो पृथ्वी तत्त्व की, श्वेत रंग हो तो जल तत्त्व की, लाल रंग हो तो अग्नितत्त्व की, श्याम रंग हो तो वायु तत्त्व की और रंग-बिरंगा दिखायी दे तो आकाश तत्त्व की उपस्थिति समझनी चाहिए।

५. आकार द्वारा तत्त्वों की पहिचान—

मेरे तत्त्व सम्बन्धी लेख में पाठकों ने लक्ष्य किया होगा कि जिस प्रकार विभिन्न तत्त्वों का एक निश्चित रंग तथा स्थान आदि होता है उसी प्रकार उनका एक निश्चित् आकार भी होता है और यदि उस आकार को जान जाया जाय तो तत्त्व की उपस्थिति का पता लग सकता है। तत्त्वों का आकार हम फिर दे रहे हैं जो इस प्रकार है—

चतुरस्रं चार्द्धचन्द्रं त्रिकोणं वर्तुलं स्मृतम्।
बिन्दुभिस्तु नमो ज्ञेयमाकारैस्तत्त्व लक्षणम् ॥

अर्थात् पृथ्वी तत्त्व का आकार चतुष्कोण या चौकोर, जलतत्त्व का अर्धचंद्राकार, अग्नितत्त्व का त्रिकोण, वायुतत्व का गोल या अण्डाकार तथा आकाश तत्त्व का बिन्दु दिखायी देता है।

देखने की विधि—

एक स्वच्छ निर्मल दर्पण लेकर उस पर जोर से श्वास छोड़े और उससे जो आकार बने उसीसे तत्त्वों की पहिचान कर लेना चाहिये।

हम ऊपर कह चुके हैं कि किसी भी स्वर के उदय होने पर पाँचों तत्त्व क्रम से एक निश्चित अवधि तक विद्यमान रहते हैं। कोई भी स्वर अपने उदय होने के समय से १ घंटे तक विद्यमान रहता है और उसी एक घंटे में पाँचों तत्त्व क्रमशः उदय और अस्त होते हैं। प्रत्येक तत्व उदय होकर कितनी देर तक विद्यमान रहता है उसका विवरण इस प्रकार है—

पृथ्वी तत्त्व—बीस मिनट; जल तत्त्व—सोलह मिनट; अग्नि तत्त्व—बारह मिनट; वायु तत्त्व—आठ मिनट और आकाश तत्त्व—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चार मिनट तक उदय होने पर विद्यमान रहता है, अर्थात् पृथ्वी तत्त्व के बाद हर तत्त्व की उपस्थिति का समय क्रमशः चार मिनट कम होता जाता है। इस प्रकार सभी तत्वों का समय हम जोड़ें तो साठ मिनिट या एक घंटा होता है जो कि एक स्वर की अवधि है। इसी प्रकार यदि हम सभी तत्त्वों की उपस्थिति की श्वास की लम्बाई आपस में जोड़ें तो वह भी साठ ही अंगुल होगी।

स्वरोदय द्वारा इच्छा सिद्धि–

स्वरोदय विज्ञान का मत है कि यदि कोई कार्य एक निश्चित स्वर और निश्चित तत्त्व की उपस्थिति में किया जाय तो उस कार्य मे मनोवांछित फल मिलता है और ऐसा न होने पर बनाबनाया कार्य भी चौपट हो जाता है या सफलता कठिनता से मिलती है। हमारे अनजाने में सफलता-असफलता की यह रहस्यमयी लीला निरन्तर ही चलती रहती है। यदि हम इस रहस्य को जान जायँ तो हम अपनी असफलता, रोग, दारिद्रय, अपमृत्यु तथा अनेकानेक कठिन परिस्थितियों को सफलता से मात दे सकते हैं और स्वरोदय विज्ञान इसी की ग्रन्थि खोलता है।

हम यह जान ही गये हैं कि हमारा स्वर मुख्यतः वाम या दक्षिण (इड़ा और पिंगला या चन्द्र और सूर्य) नासिका छिद्र से ही चला करता है और कभी-कभी सुषुम्णा से। इसी के अनुसार हमारे सारे कार्यों का तीन भाग में विभाजन कर दिया गया है। यह भी हम जान ही गये हैं कि इन स्वरों से पंच तत्त्वों का प्रगाढ़ सम्बन्ध है और कार्य विशेष की सिद्धि के लिए जहाँ स्वरविशेष का उदय होना आवश्यक होता है उसी प्रकार तत्त्व-विशेष की भी अन्यथा कार्यसिद्धि नहीं होती। इसमें सामान्य नियम यह है कि प्रत्येक स्थिर व अच्छे कार्य पृथ्वी और जल तत्त्व की उपस्थिति में ही करनी चाहिए।

किस तत्त्व की उपस्थिति में, किस स्वर में तथा किस दिन कैसा कार्य करना चाहिए इस सम्बन्ध का विस्तृत विवरण अन्यत्र मिल जायेगा, फिर भी संक्षेप में हम उसे पाठकों के लाभार्थ लिख देते हैं।

निम्नलिखित सभी कर्म पृथ्वी या जल तत्त्व की उपस्थिति में, बायें स्वर में तथा सोम, बुध, गुरु, या शुक्र के दिन करने चाहिए––

शांति कर्म, मैत्रीकरण, योगाभ्यास, औषधि सेवन, आभूषण और नवीन वस्त्र-धारण, विवाह, दान, यज्ञ, आश्रम-प्रवेश गृह या जलाशय निर्माण, उद्यान लगाना, पौष्टिक और रसायन कर्म, मूत्र त्याग और जल पीना (केवल स्वर में) दक्षिण-पश्चिम दिशा में परदेश गमन, पुस्तक लेखन, दीक्षा, मंत्र या अनाज बोना आदि।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निम्नलिखित कर्म पृथ्वी या जल तत्त्व की उपस्थिति में, दाहिने स्वर में, तथा मंगल, रवि या शनिवार को करने चाहिए।

शस्त्राभ्यास, भोजन-स्नान-मैथुन (सभी में केवल स्वर), बही लिखना, मंत्रसिद्धि, ध्यान, नवीन विद्या ग्रहण, ऋण देना, शत्रु के घर जाना, विष या भूत उतारना, नौकारोहण, संगीत, क्रय-विक्रय, विवाद इत्यादि।

सुषुम्णा की उपस्थिति में सिवाय परमात्मचिन्तन के सभी कर्म त्याज्य हैं। सुषुम्णा और अग्नितत्व की उपस्थिति में गर्भाधान करने से बन्ध्या भी पुत्रवती होती है। सुषुम्णा की जगह सूर्य स्वर होने से भी उपर्युक्त कार्य सिद्ध होते हैं।

स्वर और यात्रा–

दिशा गमन के विषय में चरनदास का मत है कि यदि सुषुम्णा की उपस्थिति में कहीं गमन करे तो क्लेश और पीड़ा होती है। बायें स्वर में पूर्व और उत्तर दिशा में गमन करने से महाअनार्थ और प्राणभय रहता है, इसी प्रकार दाहिने स्वर में दक्षिण और पश्चिम की यात्रा नहीं करनी चाहिए। दाहिने स्वर में पूर्व, उत्तर दिशा में जाने से सुख, संपत्ति और आनन्द मिलता है, इसी प्रकार बायें स्वर की दक्षिण, पश्चिम यात्रा भी आनन्द कारक होती है।

स्वरोदय प्रश्नोत्तरी–

स्वर की सहायता से किसी प्रश्न के शुभाशुभ उत्तर सरलता से बताये जा सकते हैं, फिर भी इसमें कुछ अभ्यास की आवश्यकता है। प्रश्नोत्तर इस प्रकार हैं—

दहिने सेती आय कर, बायें पूछे कोय।
जो बायें स्वर बन्द है, सफल काज नहीं होय॥
बायें सेती आय कर, दहिने पूछे धाय।
जो दहिने स्वर बन्द है, कारज अफल बताय॥
जब स्वर भीतर को चलै, कारज पूछे कोय।
पैज बाँध वासों कहो, मनसा पूरण होय॥
जब स्वर बाहिर को चलै, तब कोई पूछे सोर।
वाको ऐसे भाषिये, नहिं कारज विधि कोर॥

साधारण रीति से ऐसे समझ लेना चाहिए कि जिस ओर का स्वर चल रहा हो, प्रश्नकर्त्ता उसी ओर आकर खड़ा होकर प्रश्न करे तो कार्यसिद्धि तथा विपरित रूप में कार्यनाश होता है। जल या पृथ्वी तत्त्व की उपस्थिति में कार्यसिद्धि तथा अन्य तीनों तत्त्वों के उदय रहने पर प्रश्नकर्त्ता का कार्य नाश समझना चाहिए।

मनोवांछित कार्य सिद्ध करना–

यदि कोई कार्य अपने मन के अनुकूल किसी से कराना हो तो पृथ्वी या जल तत्त्व की उपस्थिति में जिस ओर का स्वर चल रहा हो वही पैर पहले उठा कर घर से बाहर निकले और इच्छित व्यक्ति के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पास पहुँच कर उस समय जिस ओर का स्वर चल रहा हो उसी ओर उस व्यक्ति को करके बातचीत प्रारम्भ करे। आप को यह देख कर आश्चर्य होगा कि वह व्यक्ति सारा कार्य आपकी इच्छा के अनुकूल ही करेगा। यह स्वरोदय-वशीकरण है।

स्वरोदय की सहायता से इच्छित सन्तान भी उत्पन्न की जा सकती है पर स्थानाभाव से उसका विवरण यहाँ नहीं दिया जायगा।

भाग्योदय–

सूर्योदय से पूर्व ही उठे और जिस ओर का स्वर चल रहा हो उसी हाथ को मुंह पर फेर कर तत्पश्चात चारपाई से उठते हुए उसी ओर के पैर को प्रथम पृथ्वी पर रक्खे। ऐसा नित्य प्रति करने से दुर्दिन समाप्त हो जाता है। प्रातःकाल कर-दर्शन भी किया जाता है जिसके विषय में यह श्लोक प्रसिद्ध है––

कराग्रे वसते लक्ष्मी करमध्ये सरस्वती।
करमूले स्थिते गौरी प्रभाते करदर्शनम्॥

रोग, आपत्ति तथा मृत्यु का पूर्व ज्ञान–

हम ऊपर कह चुके हैं कि स्वरों का एक निश्चित समय तथा क्रम होता है और इसका सम्बन्ध चंद्रमा से होता है और जब रोग या कोई विपत्ति आने को होती है तो इस नियम और क्रम में अन्तर आ जाता है। नियम में अन्तर इस प्रकार आता है कि जिस दिन जो स्वर चलना चाहिए वह न चल कर उसका उलटा चलता है और क्रम में यह कि जितने समय तक जो स्वर स्थिर चलना चाहिए उससे कम या अधिक काल तक वह चलता रहता है।

१. नियम में परिवर्तन और उसका फल–

यदि शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा को दक्षिण स्वर चले तो पूर्णिमा तक गर्मी से कोई रोग या हानि होगी।

यदि कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा को वाम स्वर चले तो अमावस्या तक शीत का कोई रोग होगा या हानि होगी।

यदि तीन दिन तक उल्टे स्वर चलें तो कलह या रोग की संभावना होती है।

यदि एक महीने तक चंद्र स्वर विपरीत चले तो महारोग होगा।

इसी प्रकार यदि एक महीने उल्टे स्वर चलते रहे तो या तो स्वयं पर कोई भारी विपत्ति आयेगी या प्रियजनों पर। मृत्यु तक की संभावना है।

यदि यही क्रम निरन्तर डेढ़ मास तक हो तो अपनी मृत्यु निकट जानना चाहिए।

यह सारा नियम विभिन्न तिथियों को चलनेवाले स्वर से सम्बन्धित है जिसका विवरण विस्तारभय से नहीं दिया जा रहा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. क्रम या समय में परिवर्तन–

यदि चन्द्र स्वर निरन्तर ४, ८, १४ या २४ घड़ी तक चलता रहे तो प्रेम, मैत्री, वैभव तथा सुखादि की प्राप्ति होती है।

आधे-आधे पहर दो दिवस तक यदि दोनों स्वर चलते रहें तो सौभाग्य और यश मिलता है।

दिन में चन्द्र और रात्रि में सूर्य स्वर निरन्तर चलते रहें तो १२० वर्ष की आयु होती है।

यदि ४, ८, १२ या २० दिन तक निरन्तर वाम स्वर चलता रहे तो ऐश्वर्य तथा लम्बी आयु की प्राप्ति होती है।

यदि वाम स्वर १० या १२ घड़ी निरन्तर चलता रहे तो शरीर कष्ट और शत्रु से कष्ट होता है।

यदि वाम स्वर १, २ या ३ दिन निरन्तर चलता रहे तो रोग उत्पन्न होते हैं। यही यदि ५ दिन चले तो चित्त में उद्विग्नता तथा एक मास चले तो धन नाश होता है।

यदि दक्षिण स्वर २ घड़ी निरन्तर चले तो सज्जनों से द्वेष, ४ घड़ी चले तो वस्तुहानि, २१ घड़ी चले तो किसी प्रिय का विनाश और रात-दिन चले तो आयु क्षीण होकर मृत्यु होती है।

मृत्यु का पूर्व ज्ञान–

स्वर की सहायता से जिस प्रकार रोग और भाग्य-सुभाग्य का ज्ञान होता है उसी प्रकार इससे मृत्यु का भी पूर्व ज्ञान होता है। चरनदास की वानी में—

आठ पहर दहिनो चलै, बदलै नहिं जो पौन।
तीन वर्ष काया रहै, जीव करै फिर गौन॥
दिन को तो चन्दा चलै, चलै रात को सूर।
यह निश्चय करि जानिये प्राण गमन बहु दूर॥
राति चले स्वर चन्द्र में, दिन को सूरज बाल।
एक महिना यों चलै, छठें महीना काल॥

इसी प्रकार यदि १६ प्रहर तक दक्षिण स्वर निरन्तर चलता रहे तो दो वर्ष में, तीन दिन-रात चले तो एक वर्ष में, २० रात-दिन चले तो ३ मास में मृत्यु होती है।

पाँच घड़ी सुषुम्णा चल कर न बदले तो तत्क्षण मृत्यु हो जाती है।

भोरहिं जो सुषुमण चले, राज होय उत्पात।
देखनवालो बिनसिहैं, और काल पर नात॥

रोग का प्रतिकार–

सामान्य रोगों में जो स्वर रोगावस्था में चल रहा हो उसे बदल देना चाहिए।

अजीर्ण और बदहजमी के लिए–

बाईं करवट सोइये, जल बायें स्वर पीव।
दहिने स्वर भोजन करै, तो सुख पावै जीव।

स्वरोदय साधना की सिद्धियाँ–

स्वरोदय की सहायता से अनेक प्रकार के कार्यों की सिद्धि हम ऊपर दिखला चुके हैं। लेख का कलेवर बढ़ जाने के भय से इसकी कुछ अद्भुत सिद्धियों का ही वर्णन हम लेख में कर पाये हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्षमा

काशिराज कलाबू। भोग विलास और अनाचार की प्रतिमूर्ति। एक दिन वह मदिरापान कर राजउद्यान में वेश्याओं के निकट पड़ा था। उद्यान के एक कोने में तपस्वी उपदेश कर रहा था। वेश्याओं ने कलाबू को सोते देखा तो वे कुछ देर साधु का उपदेश सुनने के लिए उसके पास चली गयीं।

कलाबू की नींद टूटी। वेश्याएँ वहाँ न थीं। प्रधान नर्तकी ने साधु की बात कही। कलाबू खड्ग लिये क्रोध से काँपता उस ओर गया।

'ओ श्रमण तेरा सिद्धान्त क्या है?' क्रोध से काँपते राजा ने तपस्वी से पूछा।

'मेरा सिद्धान्त क्षमा है महाराज!' साधु ने निर्भीक स्वर में उतर दिया।

'यह क्षमा क्या है?'

'अपशब्द, निन्दा और प्रहार सहाकर भी उसका उतर न देना और प्रसन्न रहना --इसी की संज्ञा क्षमा है।'

कुद्ध कलाबू ने वधिक को बुला कर कहा: 'इस धूर्त श्रमण को कटीली झाड़ियों में घसीट कर दो सहस्र कोड़े लगा।'

पीले वस्त्र और लाल माला पहने वधिक ने तपस्वी को झाड़ियों में घसीटा और कटीले कोड़ों से मार-मार कर लहूलुहान कर दिया। साधु के शरीर से पवित्र रक्त-गंगा बह चली।

राजा ने निर्दय स्वर में पूछा, 'अब बोल श्रमण, तेरा शास्त्र क्या है।'

'मेरा शास्त्र क्षमा है महाराज!' साधु हँस पड़ा, 'आपने मेरी त्वचा उघाड़ दी; किन्तु मेरी क्षमा इससे प्रभावित नहीं। वह तो अन्तर की गहराइयों में सुरक्षित है।'

मदमत्त राजा ने साधु के हाथ पैर कटवा डाले और पूछा, 'बोल श्रमण तेरा वाद क्या है।''

'मैं क्षमावादी हूँ महाराज।' साधु के चेहरे पर दिव्य आभा चमक उठी, "मेरी क्षमा हाथ पैर में नहीं, वह तो अब भी अंतर की गहनता में सुरक्षित है।

कुंठित कलाबू ने साधु के हृदय पर लात मारी और चला गया। उसके जाते ही दयालु सेनापति आया। उसने साधु का उपचार किया और विनम्र स्वर में बोला,

'भगवान आपका अपमान राजा ने किया है। कृपा कर काशी जनपद पर कुद्ध न हों, अन्यथा हमारा विनाश हो जायगा।'

साधु की सांस टूट रही थी; किन्तु वह शरीर का सारा बल संजो कर मुस्करा उठा, 'मेरी क्षमा को क्रोध शोभा नहीं देता। जिस सम्राट ने मेरा अंगभंग किया है वह दीर्घजीवी हो। मेरी क्षमा अंतिम श्वास तक उसकी कल्याण-कामना करेगी।'

—नरेशचन्द्र मिश्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जन्म : २३ जुलाई १८५६] **लोकमान्य तिलक** [मृत्यु : १ अगस्त १९२०

शिक्षित वर्ग यदि वह मान बैठे कि भारत की जनता से वह पृथक है, तो इससे बड़ी मूर्खता और नहीं होगी। उन्हें प्रतीति होनी चाहिए कि समग्र भारत की प्रजा का वे एक अंश हैं और उनका उद्धार समग्र भारत की प्रजा के उद्धार के साथ ही संभव है। –तिलक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

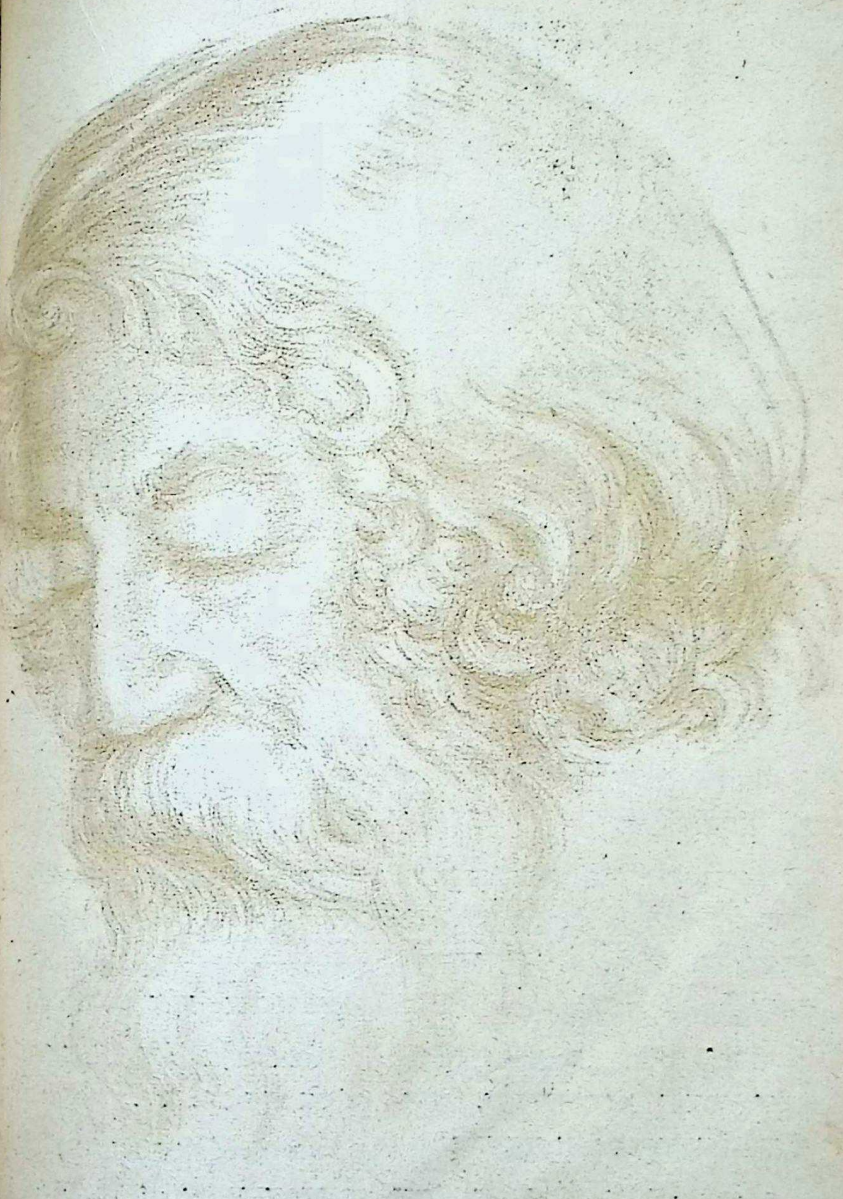

जन्म : ६ मई १८६१] विश्वकवि रवीन्द्रनाथ [मृत्यु : ७ अगस्त १९४१

कह, क्षमा जहाँ क्षीण दुर्बलता मानी जाय वहाँ मैं तुम्हारे आदेश से निष्ठुर बन सकूं।

तुम्हारे इशारे पर मेरी जिह्वा पर सत्यवाक्य तीक्ष्ण खड्ग की भांति चमक उठे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पारस-मणि

[एक दृष्टांत कथा]

अम्बुभाई पुराणी

अनु० श्रीमती आशा तोलाट

श्री कृष्ण के परम भक्त सनातन गोसांई गोकुल के पास के वृंदावन में ध्यान से भगवान के नाम का जप जपते बैठे थे। कुछ देर बाद एक गरीब सा ब्राह्मण आया, और उसने सनातन गोसांई को नमस्कार किया।

गोसांई ने पूछा : कहाँ से आ रहे हो भाई ? तुम्हारा नाम क्या है ?

आगन्तुक ने कहा : आया तो बहुत दूर से हूँ, वह भी आपके दर्शन के लिए। मेरा नाम 'जीवन' है, और मैं वर्धमान जिल्ले के गाँव का निवासी हूँ।

गोसांई : कुछ महत्व के कार्य के लिए मुझे मिलने आये हो ?

जीवन : स्वामीजी, मुझ सा निर्धन और कोई न होगा। मुझे गरीबी का बड़ा भारी रंज है। जैसे तैसे गुजारा करता हूँ।

गोसांई : गरीबी कुछ पाप नहीं है। गरीब आदमी भी सत्यवादी, शील-संपन्न और प्रभुभक्त हो सकता है।

जीवन : वैसे तो मैं भगवान शंकर की भक्ति करता हूँ। उनसे मैं अपनी गरीबी दूर करने की सच्चे दिल से प्रार्थना भी करता हूँ। इसी से तो मैं आपके पास आ सका।

गोसांई : वह कैसे ?

जीवन : एक दिन भगवान शंकर ने सपने में मुझ से कहा, 'जीवन, मैं तेरी इच्छा पूर्ण करूँगा। यमुना के तट पर सनातन गोसांई नाम एक साधु आदमी रहते हैं, उनके पास जाओ। उन्हें अपने पितातुल्य मानकर प्रणाम करना। तेरी गरीबी निवारने का उपचार उनके पास है।' यों कहकर भगवान शंकर अंतर्हित हो गये। इसीसे तो मैं आपके पास आया हूँ।

गोसांवी : यह कैसी विडंबना है ? मेरे पास है ही क्या ? जो कुछ था, छोड़ कर यहाँ चला आया और अब याचक बनकर निर्वाह कर रहा हूँ।

जीवन : ऐसा कैसे हो सकता है ? आपके पास तो .....

गोसांई : (बीच ही में) हाँ, हाँ, है, एक तरीका है। नदी के तट पर घमते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

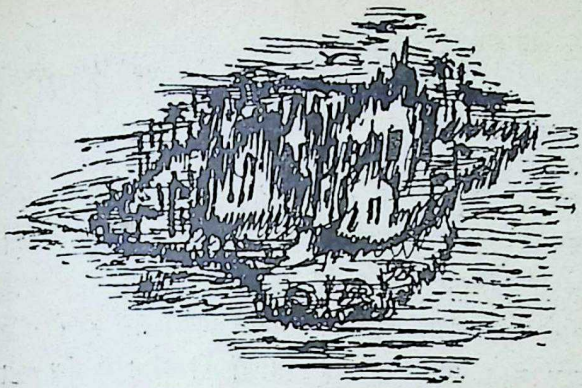

घूमते एक दफा मुझे पारसमणि मिल गयी थी। कभी किसीको देने के काम में आयेगी, यह सोचकर मैंने उसे रेत के नीचे गाड़ दिया है। वह तुम ले जाओ। सिर्फ उसका स्पर्श करने से तुम्हारा कष्ट दूर हो जायगा।

सनातन गोसांई के दिखाये हुए स्थान पर जीवन शीघ्र ही पहुँच गया। रेत को हटाने से वहाँ से पारसमणि निकल आयी। जीवन उल्लसित हो उठा। अपने हाथ में बँधे हुए दो तावीज जो लोहे के पतरे के थे, छूते ही चमकीले तावीज (सोने के) हो गये।

जीवन आश्चर्यचकित हो अत्यंत विचारमग्न हो गया।

यमुना नदी आनंदविभोर हो कर बह ही रही थी, जीवन को प्राप्य पारसमणि का कुछ भी ध्यान नहीं रहा। जीवन ने सामने के तट पर दृष्टि घुमायी तो वहाँ सोने की लाल गेंद सा सूर्य डूब रहा था।

जीवन गहन विचार में लीन हो गया। उठ कर सनातन गोसांई के पास वापस आया और कहा, 'स्वामीजी! जो पूंजी पाकर इस पारसमणि को भी आप दूर कर सके हो, उस पूंजी में से कुछ हिस्सा मुझे भी दो।' यों कहकर उसने सनातन गोसांई की वंदना की और पारसमणि को नदी के तट पर फेंक दिया।

★

देश के प्रति वफादारी अन्य वफादारियों से अधिक है। इसे इस रूप में देखा नहीं जा सकता कि इसके बदले हमें कितना मिलता है।

—लालबहादुर शास्त्री

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युराशिमा

● ग्रेस जेम्स

[जापानी परी-कथा]

युराशिमा अन्तरीय समुद्र का एक मछुआ था। हर रात वह मछली पकड़ने जाता था। रात के अँधियारे के लम्बे पहरों में वह छोटी-बड़ी सभी तरह की मछलियाँ पकड़ता था। इस तरह वह अपनी जीविका चलाता था।

एक रात चाँद अपनी जगमगाती चाँदनी से समुद्र के पन्थों को उजाल रहा था। युराशिमा ने अपनी नाव में घुटने टेके और अपने दायें हाथ को उसने समुद्र के हरियाले पानी में गहरे तक डुबा दिया। लो वह तो डूबता ही चला गया, डूबता ही चला गया, केवल उसके बाल लहरों पर छाय रह गये, अपनी नाव और फैले जाल का भान भी उसे भूल गया। उसने अपनी नाव को थोड़ा-सा मोड़ दिया, और एकाएक वह एक ऐसे स्थान पर पहुँच गया, जहाँ पारलौकिक आत्माओं का आवास था। न तो वह सो रहा था, न वह जाग रहा था, क्योंकि चाँद ने उसे पागल बना दिया था।

तभी गहन समुद्र की बेटी उठकर ऊपर आयी, उसने मछुए को अपनी बाहुओं में भर लिया, और उसे लेकर डुबकी लगाती हुई वह अपनी ठण्डी समुद्री गुफा तक पहुँच गयी। उसने उसे बालू की शैया पर लिटा दिया, और बड़ी देर तक उसे देखती रही। उसने अपने सामुद्रिक मोहन-मन्त्र से उसे अवश कर दिया, उसे अपने समुद्री गीत सुनाने लगी और उसकी आँखों को अपनी आँखों की दृष्टि से गूँथ रही।

मछुए न कहा: 'ओ सुन्दरी, तुम कौन हो!'

सागर कन्या ने कहा: "मैं गहन समुद्र की बेटी हूँ।"

"मुझे अपने घर जाने दो," मछुए ने कहा:, "मेरे नन्हें बच्चे मेरी प्रतीक्षा करते-करते थक गये होंगे।"

"नहीं, तुम्हें मेरे ही साथ रहना होगा!" वह कन्या बोली और गीत–गान करती हुई कहने लगी

"युराशिमा,
ओ रे अन्तरीप समुद्र के मछिहारे,
तुम बहुत सुन्दर हो,
तुम्हारे लम्बे-लम्बे बालों ने
मेरे हृदय को लपेट लिया है;
मुझे छोड़ कर मत जाओ,
अपने घर को भूल जाओ...।"

"आह री सागर–कन्या, देवताओं के नाम पर मुझ छोड़ दो, मुझे अपन घर जाने दो....!"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन सागर–कन्या ने फिर कहा :

युराशिमा,
ओ रे अन्तरीप समुद्र के मछिहारे,
मैं तेरी शैया को मोतियों से जड़ दूंगी;
मैं तेरी शैया को समुद्री घास
और समुद्री फूलों से छा दूंगी;
तू गहन समुद्र का राजा हो जायेगा,
और हम दोनों मिलकर उस पर राज करेंगे . . .।"

"मुझे अपने घर जाने दो," युराशिमा ने कहा,
मेरे नन्हें बच्चे मेरी प्रतीक्षा करते करते थक गये हैं . . .।"

लेकिन कन्या ने फिर कहा :

युराशिमा,
ओ रे अन्तरीप समुद्र के मछियारे,
गहन समुद्र के तूफान से कभी भयभीत मत होना;
हम अपने गुहावासों के द्वार पर चट्टाने भिड़ा देंगे;
डूबे हुए मृतकों से भी भयभीत मत होना;
तू मरेगा नहीं . . .।"

"सो कैसे", 'मछिहारे ने कहा, "देवताओं की खातिर मुझे छोड़ दो, मैं अपने घर जाना चाहता हूँ"

"इस एक रात के लिए मेरे साथ ठहर जाओ !"

"नहीं, मैं एक रात भी नहीं ठहरूँगा।"

तब गहन समुद्र की कन्या रोने लगी, और युराशिमा ने उसके आँसू देखे।

"अच्छा, यह एक रात मैं तुम्हारे साथ ठहर जाऊँगा," मछुए ने कहा।

रात गुजर जाने के बाद वह उसे समुद्र-तट की बालुका पर ले आयी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"क्या, हम तुम्हारे घर के निकट आ गये हैं ?" कन्या ने पूछा।

मछुए ने कहा : "हाँ, मेरा घर यहाँ से एक पत्थर फेंकने की दूरी पर है।"

"यह लो," सागर–कन्या बोली, "यह मेरी यादगार है।" और कन्या ने उसे सीपों की बनी एक मंजूषा भेंट की, वह इन्द्र-धनुष के रंगों से जगमगा रही थी और उसके साँकल–नकूचे प्रवाल और जेड रत्नों के बने थे।

"इसे कभी मत खोलना," कन्या बोली, "ओरे मछिहारे, इसे कभी मत खोलना !" इतना कह कर वह डुबकी लगा गयी, और गहन समुद्र की वह कन्या फिर न दिखायी पड़ी।

तब युराशिमा, अपने प्यारे घर को लौट जाने के लिए, दौड़ कर पाइन वृक्षों के नीचे चला गया। और वह आनन्द से पागल होकर हँसन लगा। उसने उस मंजूषा को धूप में सूखने के लिए धरती पर डाल दिया।

"आह !" वह बोला, "कितनी मधुर है पाइन की सुगंध !" और तब वह अपने बच्चों को पुकार कर आवाज़ देने लगा। सागर–पंछी के स्वर जैसी यह पुकार उसने बच्चों को सिखा रक्खी थी। जब कोई उत्तर न मिला तो वह मन ही मन बोला : "क्या मेरे बच्चे अभी तक सोये हैं ? अजीब बात है कि वे मेरी पुकार का उत्तर नहीं देते !"

बेंगाल केमिकल का
सुगंधित ब्राह्मी केश तैल

बड़ी कारीगरी के साथ सुगंधित यह आयुर्वेदिक केश तैल मस्तिष्क को शीतल और शान्त रखता है। ब्राह्मी केश तैल के नियमित व्यवहार से मानसिक क्लान्ति दूर होती है और आराम की नींद आती है। केशों की स्वस्थ वृद्धि में भी यह सहायता करता है।

बेंगाल केमिकल

कलकत्ता • बम्बई • कानपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आखिर हार कर जब वह खुद ही अपने घर पहुँचा तो उसने पाया कि वहाँ केवल काई-जमी चार दीवारें खड़ी हैं। दहलीज पर 'रात्रि छाया।' की बेलें छा गयी थीं, चूल्हे पर 'मृत्यु-लिली' के फूल उग आये थे, डायन्थस और लेडी फर्न फूल रही थी। कोई भी जीवित आत्मा नहीं थी।

"अरे यह क्या?" युराशिमा चिल्ला उठा। "क्या मेरी अक़्ल गुम हो गयी है? क्या मैं अपनी आँखें गहन समुद्र में छोड़ आया हूँ?"

वह घास उगे फर्श पर बैठ गया और फिर बड़ी देर तक विचार करता रहा: प्यारे देवताओं, मेरी मदद करो। कहाँ है मेरी पत्नी और कहाँ है मेरे नन्हें बच्चे?..."

वह गाँव में गया, जहाँ के राह के पत्थर उसके परिचित थे, जहाँ के हर घर की अकेलू छायी छाजन और सायबान उसके खूब परिचित थे। वहाँ उसने लोगों को इधर से उधर अपने काम-काज से आते-जाते देखा। पर वे सारे ही लोग उसे बहुत अनपहचाने और अजनबी लगे।

उन लोगों ने उससे कहा: "स्वागत है तुम्हारा, ओ राहगीर बन्धु, क्या इस गाँव में तुम रात को रहना चाहते हो..?"

उसने इधर-उधर खेलते हुए बच्चों को देखा, और बारम्बार वह उनकी चिबुक पकड़ कर उनके चेहरों को ऊपर उठाकर देखने लगा। मगर हाय, उसकी ये सारी कोशिशें व्यर्थ हो गयीं।

"कहाँ गये मेरे बच्चे?" मछुआ मन ही मन आक्रान्द कर उठा: "ओ री दयावन्ती देवी क्वानॉन? साहस–यात्राओं के देवता-गण इस सब का अर्थ जानते हैं। हाय, यह सब सहना मेरे लिए बहुत भारी पड़ गया है।"

जब सूर्यास्त की बेला आ पहुँची, तो उसका हृदय पत्थर की तरह भारी हो गया, और वह नगर के बाहर के चौराहे पर जाकर खड़ा हो गया। वहाँ से गुज़रते लोगों की बांह खींच-खींच कर वह पूछने लगा:

"मित्र, क्षमा करना, क्या तुम इस गाँव के युराशिमा नाम के मछुए को जानते हो?"

और वहाँ से गुजरते उन लोगों ने एक स्वर में यही उत्तर दिया: "हमने एसे किसी आदमी के बारे में कभी नहीं सुना।"

वहाँ से पहाड़ों के वासी किसान गुज़रे। उनमें से कुछ पैदल चल रहे थे, और कुछ धैर्यवान टट्टू पर सवार थे। वे अपने देहाती गीत गाते जा रहे थे, उनके पास जंगली 'स्ट्रॉबेरियों' के टोकने थे, और अपनी पीठ पर वे लिली के फूल-झाड़ों की झारियाँ ढो रहे थे। और जैसे-जैसे

[शेष पृष्ठ ५२ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीकृष्ण : राधा के प्रति

रामेश्वर प्रसाद सिंह

तो प्राण।
तुमने मुझे अस्वीकारा
मानवती बन गयी
न एक संवाद भेजा
न एक पत्र.....
और जैसे भटकते बादल को
वायु उड़ा ले जाय
और तिनके को धारा
मुझे विस्तृत भूमिका में...
ले जानेवाली नारियां
खींच ले गयीं
तुम्हारे बाहुपाश से--
गति के लिए,
उद्धार के लिए,
संधान और
योग-क्षेम के लिए।
...और दिग्भ्रमित बादल की तरह
मैं व्याप गया
गगन के अनन्त विस्तार को,
स्थिति-स्थिति को,
कर्म-कर्म को।
भीतर एक आग धुंधुआती रही
रह-रह कर सुलगती हुई
और मैं,
सूखे शाल्मली वृक्ष की तरह
जलता रहा।
तुमने यह सब होने दिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर क्यों ओ मानिनी ?
कनु की हर जिद्द तू मानती थी
किन्तु,
इस बार स्वयं जिद्द कर बैठी
क्यों इस जिद्दी मित्र के लिए
तुम वैसी ही नारी नहीं बन गयी ?
    सारे योग-क्षेम को,
    धर्म-अधर्म को,
कृष्ण पर छोड़कर
निश्चित क्यों नहीं बन गयी ?
तो यह दर्द मुझे हमेशा सालता है प्राण।
शायद तब तुम,
आगे के सारे
कर्म-अकर्म को भी रोक सकती।
या कि तुमने सोचा
    कि कोई सालता हुआ अभाव नहीं हो
    तब तक,
तुम्हारा कनु विश्व पर छायेगा कैसे ?
उसका प्रकाश कहीं
    गोकुल के आंचल तक ही
    न टिक जाये
और सो तुम नहीं आयी—
    नहीं आयी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
[युराशिमा.....पृष्ठ ४९ का शेष]

वे लोग चलते जाते थे, लिली फूल गर्दन डुलाते रहते थे। वहाँ से ऐसे तीर्थ-यात्री भी गुज़रे, जो ऊपर से नीचे तक सफेद वस्त्र धारण किये थ, घास और चावल के तिनकों के बुने 'हैट' वे पहने हुए थे, उनके पैरों में, कस कर बँधे सैंडिल थे, और वे पानी के भरे तूम्ब ढो रहे थे। कोमल पदचापों के साथ, वे फुर्ती से बढ़ते चले जा रहे थे, और मन ही मन पवित्र बातें सोचते जा रहे थे। बहुमूल्य वस्त्र-भूषणों में सजे अभिजात वंशीय गृह-स्वामी और उनकी स्वामिनियाँ भी अपनें जगमगाती पालकियों में गुज़र गये और तब रात पड़ गयी।

"मेरी मधुर आशा खो गयी !....." युराशिमा ने कहा। लेकिन तभी वहाँ से एक बहुत-बहुत बूढ़ा आदमी गुज़रा।

"ओ अति पुरातन, बूढ़े-बूढ़े बुजुर्ग," मछुआ चिल्ला उठा : "तुमने बहुत दिन देखे हैं इस धरती पर। युराशिमा के बारे में तो तुम जानते ही होगे ? इसी स्थान पर वह जन्मा और बड़ा हुआ था....."

तब उस बहुत बूढ़े आदमी ने कहा; "हाँ भाई, इस नाम का एक आदमी था

विवेकानन्द साहित्य

जन्मशती हिन्दी संस्करण

कुल १० खंड—डबल डिमाई १६ पेजी साइज में; अनुक्रमणिका समेत पृष्ठ संख्या प्रति खंड लगभग ४५०; मजबूत और आकर्षक सजिल्द प्रति खंड का मूल्य ६ रु.। पूरे सेट रेल द्वारा मँगाने से रेल-खर्च नहीं लगेगा। पुस्तक विक्रेताओं के लिए विशेष कमीशन दिया जाता है।

स्वामी विवेकानन्द की समग्र ग्रन्थावली **'विवेकानन्द साहित्य'** उनके ओजपूर्ण व्याख्यानों तथा गम्भीर लेखों का पूर्ण संकलन है। अनुवादकों में पं. सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', पं. सुमित्रानंदन पंत, डा. प्रभाकर माचवे, श्री फनीश्वरनाथ रेणु, डा. नर्मदेश्वर प्रसाद आदि ख्यातिलब्ध साहित्यकारों के नाम उल्लेखनीय हैं।

"निस्सन्देह किसी से स्वामी विवेकानन्द के लेखों के लिए भूमिका की अपेक्षा नहीं है। वे स्वयं ही अप्रतिहत आकर्षण हैं।"—महात्मा गाँधी

व्यवस्थापक, अद्वैत आश्रम,

५, डिही एंटाली रोड, कलकत्ता—१४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ूर, लेकिन महाशय, वह तो कई कई
ों पहले समुद्र में डूब गया था। मुश्किल
मेरे दादा को उसकी याद होगी, मैं
ी तब बहुत छोटा सा लड़का था। भले
जनबी भाई, यह तो कई कई बरसों पहले
ी बात है।"

युराशिमा ने कहा, "क्या वह मर
ुका?"

"उससे ज्यादा तो कोई आदमी क्या
रा हुआ होगा। उसके बेटे मर चुके,
ौर उनके बेटे भी मर चुके। अच्छा
जनबी भाई, मैं तुमसे बिदा लूं...!"
ौर वह वृद्ध चला गया।

तब युराशिमा भयभीत हो उठा।
लेकिन उसने कहा : "मुझे उस हरियाली
ाटी में जाना चाहिए, जहाँ मृतक सोते
ें।" उसने घाटी की राह पकड़ी।

उसने कहा : "घास में से होकर,
ैसी तीर-सी ठंडी यह रात की हवा वह
ही है। वृक्ष काँप रहे हैं, पत्तियों ने अपने
ीले चेहरे मेरी तरफ मोड़ दिये हैं।"

उसने कहा : "ये हैं मेरे बेटों की कब्रें
ौर उनके भी बेटों की कब्रें! बेचारा
ुराशिमा, उससे ज्यादा मृत इस संसार में
ोई नहीं है.... फिर भी मैं भूतों के बीच
केला हूँ..... !"

"हाय मुझे कौन तसल्ली देगा?"
ुराशिमा ने कहा। रात की हवा आहें
भर रही थी, और सब कुछ ख़ामोश था।
तब वह फिर लौट कर समुद्र-तट पर चला
गया। "मुझे कौन तसल्ली देगा...?"
युराशिमा चिल्ला उठा। लेकिन आकाश
अविकम्प था, और समुद्र की पर्वताकार
लहरें बहती ही चली जा रही थी।

युराशिमा ने कहा : "अरे यह मंजूषा
जो है।" उसने अपनी बाँह में से उसे निकाला
और खोल दिया। उसमें से एक हल्का
श्वेत धुंआ उठा जो तैरता हुआ दूर-दूर
क्षितिजों तक व्याप गया। "म बहुत
थका जा रहा हूँ!" युराशिमा ने कहा!
पलमात्र में ही उसके बाल बर्फ की तरह
सफद हो गये। वह काँपने लगा, उसका
शरीर सिकुड़ गया, उसकी आँखों की
जोत मन्द पड़ गयी। वह युराशिमा, जो
अभी इस पल तक इतना युवा और लालसा-
वासना से ओतप्रोत था, जहाँ खड़ा था।
वहीं झोले खान लगा, लड़खड़ाने लगा।

"मैं बूढ़ा हो गया....!" युराशिमा
ने कहा।

उसने मंजूषा के ढकने को बन्द कर
देना चाहा, लेकिन फिर उसे जहाँ का
तहाँ नीचे गिरा दिया और बोला : "नहीं,
धुएँ का वह बाष्प सदा के लिए उड़ गया।
अब मंजूषा को बन्द करने से क्या फ़ायदा
है?"

वह लम्बा होकर बालू पर लेट गया,
और मर गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

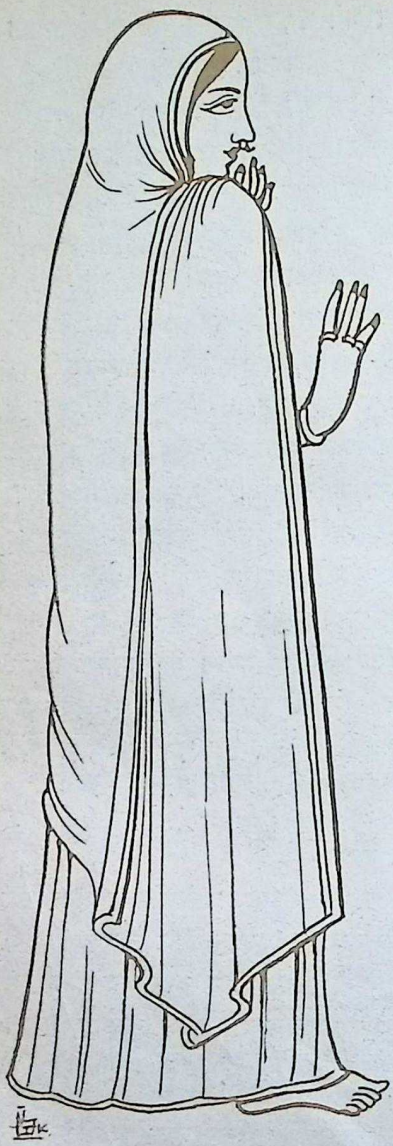

वैष्णव धर्म में शक्तितत्त्व की प्रतिष्ठा अति प्राचीनकाल से मिलती है। इसका मूल साधारणतः ऋग्वेद के 'श्री सूक्त' में खोजा जाता है। 'श्री सूक्त' से लेकर बारहवीं शताब्दी ई. में 'गीतगोविन्द' के रचयिता जयदेव के आविर्भाव तक वैष्णव धर्म में श्री या लक्ष्मी की विष्णुशक्ति के रूप में विशेष महिमा रही। इस बीच में उनके स्थान पर कृष्णप्रिया प्रेमरूपिणी श्रीराधा की प्रतिष्ठा क्रमशः बढ़ती गयी। जयदेव के बाद तो वैष्णव धर्म में उनका सर्वोच्च पद निर्विवाद सा हो गया। उनके आविर्भाव से वैष्णव धर्म को नयी दिशा मिली और इसका शक्तितत्त्व प्राचीनतर लक्ष्मीतत्त्व तथा तन्त्रादि में वर्णित शक्तितत्व से सर्वथा भिन्न हो गया। लक्ष्मीतत्त्व में सौन्दर्य और माधुर्य का यत्रतत्र आभास होने पर भी तन्त्रादि में वर्णित शक्तितत्त्व के समान क्रियात्मत्व को ही अधिक प्रतिष्ठा मिली हुई थी, जबकि जयदेव के समय से वैष्णव धर्म में इसका सौंदर्य-माधुर्य पक्ष सबलतर हो गया—इतना कि परवर्ती युग की प्रेम-रूपिणी आह्लादिनी श्री राधारानी को एक शक्ति रूप में पहचाना भी दुष्कर-सा है।

प्राचीनतम उल्लेख

कृष्णवल्लभा श्रीराधा का वैष्णव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृष्ण-वल्लभा : श्रीराधा का आविर्भाव

श्रीराम गोयल

र्म में आविर्भाव कब हुआ, इस प्रश्न का उत्तर देना सहज नहीं है। निष्ठावान वैष्णवों के लिए राधारानी परमतत्त्व, लीलामय भगवान् श्रीकृष्ण की नित्य-संगिनी, 'नित्या-ठकुरानी, है। परन्तु वह जीव द्वारा ग्राह्य होने के हेतु मृत्युलोक में अभिव्यक्ति पाती है, इसलिए जनमानस में उनकी अभिव्यक्ति के क्रमिक इतिहास का विवेचन दुष्कर होते हुए भी अकल्पनीय नहीं कहा जा सकता। उनके नाम का सर्वप्रथम उल्लेख सातवाहन नरेश हाल के प्राकृत 'ग्रन्थ' गाहा सत्तसई में हुआ है। इसलिए बहुत से विद्वान् राधावाद को कम से कम इस ग्रन्थ के बराबर प्राचीन मानते हैं। हाल ने अपने समय में प्रचलित प्राकृत भाषा की प्रेम कविताओं को इस ग्रन्थ में संकलित किया था। इनमें कई ऐसी है, जिनमें कृष्ण की वृजलीला और गोपियों का वर्णन हुआ है। लेकिन एक में, और केवल एक में, राधा का उल्लेख मिलता है:

मुहमारुएण तं कहण गोरअं राहि आएँ अवणेन्तो।
एताणं बलवीणं अण्णाणं वि गोरअं हरसि ॥१।८९।

"हे कृष्ण तुम अपनी मुखमारुत द्वारा राधिका के मुख पर लगी धूलि को दूर करके दूसरी सभी नारियों का गर्व खर्व कर रहे हो"। हाल का समय सुनिश्चित न होते हुए भी प्रायः प्रथम शती ई. माना जाता है, लेकिन 'गाहासत्तसई' के आज-कल उपलब्ध संस्करण में प्रदत्त सब कविताएँ प्रथम शती ई. तक लिखी जा चुकी थीं, यह कहने के लिए पर्याप्त साहस अपेक्षित है। इनकी भाषा को देखते हुए बहुत से विद्वान् इन्हें पाँचवीं अथवा छठीं शती ई. में रचित मानने को भी प्रस्तुत है। इसके अतिरिक्त जैसा कि हम अभी देखेंगे, राधा के नाम का किसी अन्य स्रोत में उल्लेख लगभग ७०० ई. के पूर्व नहीं मिलता। इसलिए 'गाहासत्तसई' में प्रदत्त इस श्लोक को प्रशिक्षित मानना ही उचित जान पड़ता है। गाहा सत्तसई के एक श्लोक में 'विक्रमादित्य' का उल्लेख, जो छठीं शती ई. पूर्व किसी भी अन्य ग्रन्थ में अनुपलब्ध है, इस निष्कर्ष को अति-रक्ति आधार प्रदान करता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्य प्राचीन साहित्यिक कृतियों में उल्लेख

राधावाद के आविर्भाव की तिथि के विषय में अन्य कई मत आजकल प्रचलित हैं। उदाहरणार्थ, डॉ. विजयेन्द्र स्नातक राधाकृष्ण की भक्ति के प्रचलन का आरम्भ पाँचवीं शती ई. के आस-पास मानते हैं और डॉ. शशिभूषण दासगुप्त छठीं शती ई. में अथवा उसके भी कुछ पहले। इन्हीं विद्वानों के सुझावों के साथ हम श्री अशोककुमार मजुमदार के इस मत का उल्लेख कर सकते हैं कि राधा की उपासना यद्यपि बारहवीं शती ई. तक अज्ञात थी, तथापि हाल के (जिन्हें वह दूसरी शती ई. में रखते हैं) उपरान्त उनका साहित्य में बराबर उल्लेख होता रहा। लेकिन इन विद्वानों ने राधा का उल्लेख करने वाले ऐसे किसी ग्रन्थ को उद्धृत नहीं किया है, जिसे आठवीं शती ई. से पूर्व रखा जा सके। 'गौड़वहो' में वाक्पति ने एक श्लोक लिखा है, जिसमें राधा के नखों और वलयों से कृष्ण के वक्ष के चिह्नित हो जाने की चर्चा है, परन्तु वाक्पति का समय आठवीं शती ई. का मध्य है। भट्टनारायण कृत 'वेणी संहार' में कालिन्दी के तट पर कृष्ण से कुपित अश्रुकलुषा राधिका के केलि त्याग करके जाने पर कृष्ण द्वारा अनुनयपूर्वक अनुगमन करने का उल्लेख है, लेकिन भट्टनारायण को भी आठवीं शती ई. के पूर्व नहीं रखा जा सकता। इसी प्रकार काश्मीरी लेखक आनन्दवर्धन के 'ध्वन्यालोक' (नवीं शती ई.), श्रीधरदास की 'सद्भक्तिकर्णामृत' (१२ वीं शती ई०) में उद्धृत अभिनन्द (नवीं शती ई.?) के एक श्लोक, त्रिविक्रमभट्ट के 'नलचम्पू' (१० वीं शती ई.) और गुजराती लेखक हेमचन्द्र (१२ वीं शती ई.) की प्राकृत व्याकरण में उद्धृत दो श्लोकों आदि में राधा का उल्लेख जिस प्रकार हुआ है, उससे भी यह सिद्ध नहीं होता कि राधाकृष्ण की भक्ति पाँचवीं शती ई. के आसपास अथवा उसके पूर्व प्रचलित हो चुकी थी, अथवा इस समय से साहित्य में राधा का नाम बराबर उल्लिखित होता रहा। उल्टे, इन श्लोकों के लेखकों की तिथियों से यह संकेत मिलता है कि सम्भवतः राधा का नाम भी लगभग ७०० ई. के बहुत पहले ज्ञात नहीं था। इनके आधार पर श्री राधा के आविर्भाव की तिथि अधिक से अधिक ७०० ई. के लगभग मानी जा सकती है। इस तथ्य के प्रकाश में हाल के ऊपर दिये गये श्लोक की प्रक्षिप्तता और श्री चिन्तामणि विनायक वैद्य के इस मत की निष्प्राणता कि राधावाद का आरम्भ दसवीं शती ई. तक नहीं हुआ था, स्वतः सिद्ध है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पौराणिक साक्ष्य

श्री राधा के ऐतिहासिक आविर्भाव की आपेक्षिक अर्वाचीनता कुछ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों में उनके सर्वथा अनुल्लेख से भी सिद्ध है। उदाहरणार्थ महाभारत के पात्रों में कृष्ण की महत्ता निर्विवाद है, परन्तु उनके साथ राधा पूर्णतः अनुल्लिखित हैं। यह महाकाव्य अपने वर्तमान रूप में चौथी शती ई. तक अवश्य ही अस्तित्व में आ गया था। इसी प्रकार हरिवंश, विष्णु, ब्रह्मा, भागवत तथा बृहद्धर्म पुराणों में श्रीकृष्ण की गोपियों के साथ रासक्रीड़ा का वर्णन होते हुए भी राधा का नाम तक नहीं दिया गया है। जो निष्ठावान वैष्णव सातवाहन नरेश हाल के साक्ष्य के आधार पर राधा की प्राचीनता सिद्ध करने का प्रयास करते हैं, उन्हें भी इन ग्रन्थों में राधा के अनुल्लेख का स्पष्टीकरण देना दुष्कर हो जाता है। शेष पुराणों में भी राधा विषयक जितनी सामग्री आजकल मिलती है, वह प्रायः (वायु; मत्स्य वराह; तथा नारदीय आदि में) एकार्थ श्लोक तक सीमित है और अगर विस्तृत रूप में मिलती भी है (जैसे पद्म. तथा ब्रह्मवैवर्त. आदि में) तो उसके राधावाद के लोकप्रिय हो जाने के बाद जोड़ दिये जाने के प्रमाण भी उपलब्ध हैं। स्मरणीय है कि गौड़ीय वैष्णवों ने केवल भागवत; मत्स्य; और पद्म पुराण में राधा का उल्लेख माना है। स्पष्टतः उनके समय तक दूसरे पुराणों में राधावाद का प्रवेश नहीं हुआ था। इसीलिए उन्होंने राधावादकी प्राचीनता सिद्ध करने के लिए स्मृतियों, तन्त्रों तथा उपपुराणों का आश्रय लिया है। इनमें मत्स्य-पुराण में राधा का उल्लेख केवल एक श्लोक में हुआ है, जिसमें कहा गया है कि रुक्मिणी द्वारावती में है और राधा वृन्दावन के वन में। पद्म पुराण से गौड़ीय वैष्णवों ने केवल एकाध श्लोक उद्धृत किये हैं लेकिन आज कल यह पुराण राधा सम्बन्धी प्रसंगों से भरा पड़ा है। इसके अतिरिक्त इस ग्रन्थ के इन राधा विषयक स्थलों पर परवर्तित्व की स्पष्ट छाप है, इसलिए आधुनिक विद्वान् मत्स्य और पद्मम पुराणों के आधार पर राधावाद की प्राचीनता मानने के लिए प्रस्तुत नहीं हैं।

राधावाद की प्राचीनता का विवेचन करते समय भागवत पुराण एक विशेष समस्या प्रस्तुत करता है। इस पुराण की रचना तिथि लगभग ८०० ई. है, इसलिए इसमें राधा का उल्लेख होने से भी यह सिद्ध नहीं होता कि उनका नाम लग. ७०० ई. के पूर्व ज्ञात था। लेकिन इसमें राधा के नाम के अनुल्लिखित अथवा कम उल्लिखित होने से यह अवश्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिद्ध होता है कि लग. ८०० ई. तक राधावाद विशेष लोकप्रिय नहीं हो पाया था। इस पुराण में श्री कृष्ण की व्रजलीला का मधुरतम और सर्वाधिक विस्तृत वर्णन मिलता है और गौड़ीय भक्तों ने इसे राधावाद का प्रधान आलम्ब बनाया है। लेकिन इसमें केवल एक श्लोक ऐसा है, जिसमें खींचतान करके राधा का अप्रत्यक्ष उल्लेख माना जा सकता है। इस पुराण के दशम स्कन्ध में जहाँ कृष्ण की गोपियों के साथ रासलीला का वर्णन है, एक स्थल पर कृष्ण अपनी एक प्रियतमा गोपी के साथ अदृश्य हो जाते हैं और अन्य गोपियों की आड़ में उसके साथ विविध प्रकार की क्रीड़ाएँ करते हैं। बाद में वह गोपी के गर्विता हो जाने के कारण उसके सामने से भी गायब हो जाते हैं। उस समय उनकी खोज करते-करते विरह व्याकुल गोपियाँ उनके पदचिह्नों के साथ उस गोपी के पदचिह्न लक्षित करके कहती हैं :

अनयाराधितो नूनं भगवान् हरिरीश्वरः।
यन्नो विहाय गोविन्दः प्रीतो यामनयद्रहः॥

भाग० १०।३०।२४

"इस (गोपी) के द्वारा भगवान ईश्वर हरि निश्चयतः आराधित हुए हैं, अतः गोविन्द हमें छोड़ कर उसे प्रसन्नतावश इस निराली जगह ले आये हैं"। इस श्लोक में 'अनया राधित': और 'अनया आराधित': दोनों पाठ स्वीकार्य हैं। इनका अर्थ एक ही होता है। वैष्णव भक्त इसमें राधा के नाम का अप्रत्यक्ष आभास पाते हैं, लेकिन इस प्रसंग में राधा के नाम का स्पष्टतः उल्लेख क्यों नहीं है और शेष सम्पूर्ण भागवत में राधा क्यों अज्ञात है, इन शंकाओं का समुचित उत्तर नहीं दे पाते। दूसरे, भागवत की श्रीधरस्वामी कृत प्रामाणिक टीका में इस श्लोक में राधा नाम का उल्लेख नहीं माना गया है और इस ग्रन्थ के १५ वीं शती ई. में उड़िया भाषा में किये जगन्नाथ-दास कृत अनुवाद में इस कृष्णप्रिया गोपी का नाम वृन्दावनी बताया गया है। इससे स्पष्ट है कि १५ वीं शती तक इस कृष्ण प्रिया गोपी की राधा से अभिन्नता निर्विवाद नहीं हो पायी थी। इसके अतिरिक्त यह भी स्मरणीय है कि प्राचीन पुराणों में परिगणित होनेवाले विष्णु पुराण में (५।१३) भी रासलीला का वर्णन ठीक भागवत के अनुरूप है। इसमें भी कृष्ण के विलुप्त हो जाने पर गोपियाँ उनके ध्वज, बज्र, अंकुश तथा कमल आदि रेखाओं से युक्त पदचिह्नों के साथ किसी पुण्यवती मदमाती (कृत-पुण्यमदालसा) गोपी के छोटे-छोटे पतले चरणचिह्न देखकर कहती हैं:

[शेष पृष्ठ ६८ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

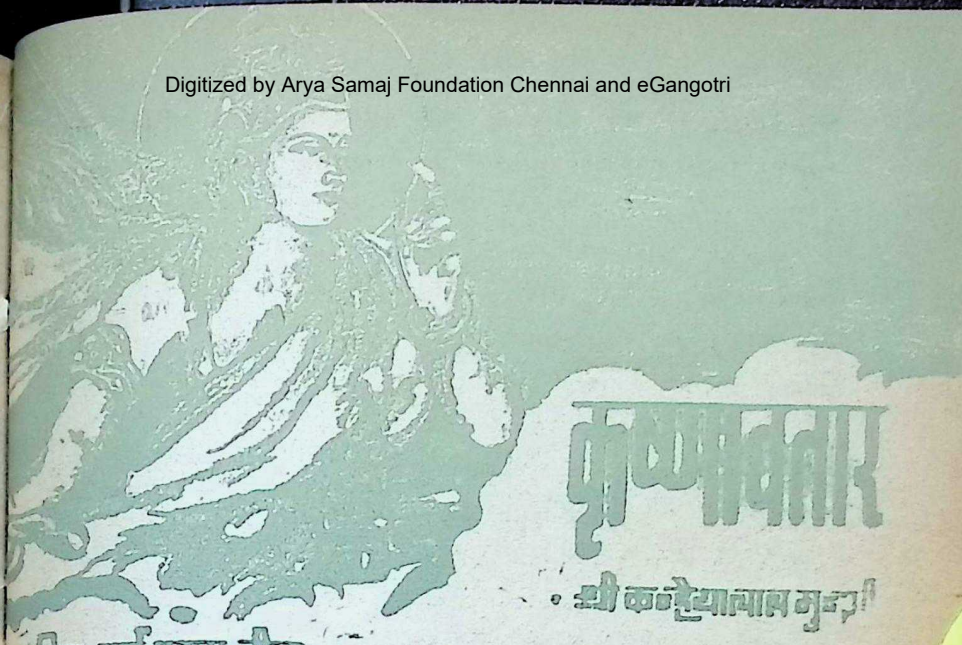

आधुनिक पूर्ण-पुरुष गीता

द्वितीय भाग

[३० क]

वे आ रहे हैं

कृष्ण और बलराम जब गोमान्तक में थे, तब मथुरा में अनेक प्रकार के षड्यन्त्र और छलकपट चल रहे थे। यादवगण उन्मुक्त प्रवृत्ति के थे। कंस के वध के बाद जो यादव सरदार मथुरा लौटे उन्होंने तो न्याय अपने हाथ में ही ले लिया था और मनमानी करने लगे थे। इस परिस्थिति को नियन्त्रित रखने की सामर्थ्य राजा उग्रसेन में न थी। वसुदेव प्रभावशाली नायक थे; परन्तु वे आवश्यकता से अधिक सज्जन थे। अक्रूर को सभी का आदर प्राप्त था; किन्तु वे साधु पुरुष थे। इन बिगड़े दिमाग यादवों को अंकुश में रखना उनके बस की बात नहीं थी।

उग्रसेन के महल में भी अनेक प्रकार के षड्यन्त्र चल रहे थे। किसी भी समय उनके विरुद्ध विद्रोह भड़क सकता था। कंस की मृत्यु पर जो लड़ाई हुई उसमें उग्रसेन के सभी नौ पुत्र मारे गये थे। उनकी पांच पुत्रियों का विवाह वसुदेव के पांच भाईयों के साथ हुआ था। ये पांचों पुत्रियाँ अपनी-अपनी महत्त्वाकांक्षा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिद्ध करने के लिए अब मैदान में कूद पड़ी थीं। सबसे बड़ी पुत्री कंसा वसुदेव के भाई देवभाग से व्याही थी। वह अपने पिता की लाड़ली थी। पिता की सेवा भी वह दत्तचित्त हो करती। जब उग्रसेन राजमहल में बन्दी थे, तब भी वह उनकी सेवा में रत रहती थी। कंस की मृत्यु के बाद तो वह अपने वृद्ध पिता की सेवा में दिन-रात रहती और केवल तीज-त्योहार पर ही पति से मिलने जाती।

कंसा के तीन पुत्र थे। जेष्ठ पुत्र चित्रकेतु को शूर होने का गर्व था और वह कुलनायक वसुदेव के प्रति अगाध भक्तिभाव रखता था। कंसा को अपने पुत्र की पितृकुल के प्रति इतनी अधिक भक्ति अच्छी नहीं लगती; इसलिए चित्रकेतु से वह स्वतः दूर हटती गयी। छोटा पुत्र उद्धव तो उसे फूटी आँखों नहीं भाता था। जब वह बहुत छोटा था, तब कंसा की मर्ज़ी के खिलाफ उसे कृष्ण के साथ रहने के लिए वृन्दावन भेज दिया गया था। तभी से वह बुरा मान गयी थी। उद्धव जब मथुरा लौटा, तब वह पूरा कृष्णभक्त बन गया था। यह देख कर कंसा और भी क्षुब्ध हो गयी। शूर कुटुम्ब का एक लड़का गुलाम हो कर रहे और ऐसा पुत्र उसकी कोख से पैदा हो, इसके लिए वह अत्यन्त लज्जा का अनुभव करती।

इसीलिए उसका सारा मातृ प्रेम अपने बीच के पुत्र बृहदबाल पर उभड़ पड़ा था। वह सुन्दर था, और माँ का लाड़ला भी। कंसा अपने पिता के पास सब समय रहती थी और बृहद कंसा के पास; इसलिए उग्रसेन को भी बृहद से मोह हो गया। जब कंसा के सभी भाई मौत के घाट उतार दिए गये, तब उसे लगा कि युवराजपद उसके पुत्र बृहद को ही मिलना चाहिए। परन्तु वृद्ध राजा के मन में अब भी न्याय-भावना निःशेष नहीं हुई थी। वह तो यही मानते थे कि मात्र कृष्ण ही मथुरा का शासन करने योग्य है। उन्होंने कृष्ण को राजा बनाने की घोषणा भी की। यह 'अन्याय' कंसा से नहीं देखा गया। इसीलिए जब कृष्ण और बलराम मथुरा छोड़कर चले गये, तब कंसा के मन से भारी बोझ हट गया। अवसर पाते ही वह कृष्ण और बलराम की कायरता पर व्यंग वाक्य कसे बिना नहीं रहती। उसके पुत्र बृहद ने विलक्षण कूटनीति दिखा कर मथुरा को सम्राट के क्रोध से बचा लिया था, यह सुन कर तो उसके हर्ष की सीमा नहीं रहती।

बृहद ने राजा उग्रसेन और यादव सरदारों के सम्मुख नम्रतापूर्वक, फिर भी अतिशयोक्तिपूर्ण, जरासंध के साथ हुई अपनी मन्त्रणा का वर्णन किया। सभी के मन में यह बैठ गया कि बृहद ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ुरा का रक्षक है। अक्रूर और गड ने इस मान्यता का खण्डन नहीं किया, ापि उन्हें दृढ़ आशंका थी कि बृहद रासंध के जाल में फंस गया है और ष्ण के बारे में सभी सूचना सम्राट को चुका है।

कंसा को अपनी बहनों पर भी विश्वास हीं रहा। उसने अपनी बहनों से कहा कि वे अपने-अपने पति को राजा र दबाव डालने के लिए मजबूर रें। परन्तु किसी ने कंसा की बात हीं मानी। बहनें और बहनोई तो ही मानते थे कि कृष्ण और बलराम श्वर के अवतार हैं और वे अवश्य वापस ायेंगे। परन्तु कंस-वध के पश्चात् मथुरा ीटे हुए महत्वाकांक्षी यादव सरदारों ने हद को अपना समर्थन दिया। वे कंस ो धिक्कारते थे और उससे छुटकारा ाने पर प्रसन्न थे। फिर भी कृष्ण और लराम के बल में हो रही वृद्धि से वे सन्न नहीं थे। इन यादव सरदारों के ुखी थे सत्रजित और सात्यकी युयुधन।

कृष्ण और बलराम जब मथुरा छोड़ र चले गये तब बृहद और उसके साथियों ो स्वर्णिम अवसर मिला। उन्होंने यह हना शुरू कर दिया कि कृष्ण और बलराम ी कायरता यादवकुल के लिए कलंक । बृहद का युवराज बनना इन लोगों के ए सुविधाजनक था, क्योंकि निर्बल राजा के शासन में ही वे अपनी लाभ देखते थे।

कंसा ने अपने पति देवभाग को बहुत समझाया कि तुम उग्रसेन से मिलकर बृहद को ही युवराजपद देने के लिए प्रार्थना करो। पर देवभाग तो इस चर्चा से ही चिढ़ जाते थे। वह कुल के अग्रणी वसुदेव की इच्छा के विरुद्ध कुछ करना नहीं चाहते थे। आर्यकुल परंपरा में परिवार के बड़ों की इच्छा ही सर्वोपरि मानी जाती और इस इच्छा को न मानने के लिए देवभाग तैयार नहीं थे।

कंसा इससे दुखी हो गयी थी, परन्तु उसने अपने कष्ट को चेहरे पर प्रकट नहीं होने दिया। न जाने क्यों, उसके मन में यह श्रद्धा गहरी पैठ गयी थी कि मेरा पुत्र बृहद् ही मथुरा की राजगद्दी पर बैठेगा। उसका युवराज के रूप में अभिषेक क्यों नहीं होगा? कृष्ण ने तो राजगद्दी स्वीकार नहीं की। बृहद राजा उग्रसेन का ही पौत्र है, उसने मथुरा को जरासंध के क्रोध से बचाया है, यादवों की कृपा प्राप्त की है, और बृहद यदि युवराज बनता है तो कंस की नीति के कारण विलग हुए अंधकों और शूरों के कुल फिर से एक हो सकते हैं।

अपने पुत्र के हित की कामना करती हुई कंसा अब उसके समर्थकों को एकत्र करने लगी। इनमें सात्यकी सबसे अधिक चपल और चतुर था। वह दिग्विजय के सपने देखा करता था। बृहद राजा हो, वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वयं उसका दाहिना हाथ बन और विश्व-विजय के लिए निकले, यह चित्र उसकी कल्पना को झकझोर डालता था। कंसा सात्यकी को प्रशंसा के फूल चढ़ा कर उसकी अधीरता को बढ़ाती रहती।

राजा उग्रसेन जरा भी राजकाज से फुर्सत पाते कि कंसा तत्काल अपने पुत्र की बात छेड़ देती। परन्तु राजा उग्रसेन का यह दृढ़ विश्वास था कि कृष्ण ही यादवों की रक्षा कर सकता है, और कृष्ण की सम्मति विना बृहद का युवराज के रूप में अभिषेक करना उनकी दृष्टि में किसी प्रकार संभव नहीं था।

महीनों तक कृष्ण की कोई खबर नहीं मिली। वर्षा प्रारम्भ हो गयी। राजा बीमार पड़े। इस परिस्थिति का लाभ उठा कर कंसा ने फिर अपने पुत्र को युवराज बनाने के लिए उनसे विनती की। 'बृहद बड़ा अच्छा लड़का है। वह आपकी सेवा कितनी लगन से करता है! उसने जरासंध के क्रोध से मथुरा की रक्षा की। सभी का वह प्रिय पात्र भी है। कृष्ण और बलराम की तो कोई खबर ही नहीं—साल भर पूरा हो गया फिर भी....स्वयं वासुदेव को भी बृहद के युवराज बनने में कोई आपत्ति नहीं। उन्होंने मुझसे कहा था कि यदि राजा उग्रसेन इसे युवराज नियुक्त करें तो मैं अपनी स्वीकृति दे दूँगा।'

[क्रमशः]

अनु. ओंकारनाथ शर्मा

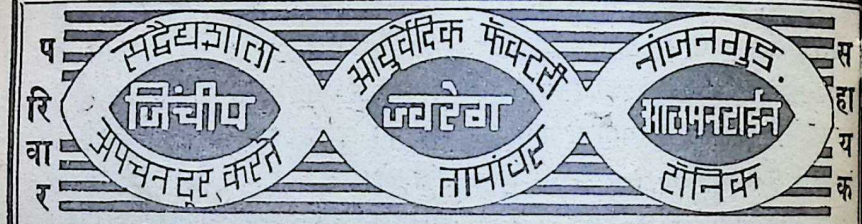

प्रत्येक शहर के लिए हम एकही व्यापारी को अपना स्टाकिस्ट नियुक्त करते हैं।

सोल एजेन्ट्स:
दी युनायटेड कन्सर्न
५४, बन्दर स्ट्रीट,
मद्रास-१

बम्बई-शाखा-२७७ विश्वास भवन, घेवदार रोड़, माटुंगा, बम्बई १९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक
दृष्टान्त-कथा

साँप और उसका गुरु

भगवान रामकृष्ण परमहंस

संसार में रहते हुए तुम्हें सब प्रकार के लोगों के सम्पर्क में आना पड़ता हैं। आत्मरक्षा के लिए तुम्हें कभी प्रतिरोध भी करना पड़ सकता है। किन्तु बुराई का प्रतिरोध बुराई से कभी मत करो। इस संबंध में एक कथा सुनाता हूँ—

एक चरागाह में, जहाँ पर चरवाहे अपने पशुओं को ले जाते और उनकी देखभाल करते, एक बहुत विषैला साँप रहता था। उससे प्रत्येक डरता और सावधान रहता। एक दिन एक संत उस चरागाह से होकर जा रहा था। यह देखकर कुछ चरवाहे लड़के दौड़कर उसके पास गये और बोले, "साधु महाराज, कृपया इस रास्ते से न जाइये, इधर एक बहुत जहरीला साँप रहता है।"

संत ने उन्हें उत्तर दिया, "मेरे बच्चों, यदि वह इधर रहता है तो रहने दो। मुझे उसका कोई डर नहीं है, क्योंकि मुझे एक मंत्र आता है. जो उसे वशीभूत कर लेगा।" और ऐसा क कर संत आगे बढ़ गया, किन्तु एक भी चरवा बच्चे की हिम्मत संत के पीछे जाने की न हुई। अब अपने फन को फैलाये साँप निकला और संत की तरफ तेजी से रेंगने लगा। लेकिन जैसेही वह निकट पहुँचा, साधु महाराज ने अपना मंत्र पढ़ा, जिसके वशीभूत होकर सांप उनके पैरों पर केंचुये की तरह असहाय होकर गिर पड़ा।

साधु तब साँप से बोले, "तुम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरों को कष्ट पहुँचाने की कोशिश क्यों करते हो? मैं तुम्हें एक मंत्र-बताता हूँ। जब तुम ईश्वर का पवित्र नाम दोहराओगे तो तुम दूसरों को हानि पहुँचाने की इच्छा से मुक्त हो जाओगे। तुममें ईश्वर के प्रति भक्ति आ जायेगी और तुम अपने अंत समय उसके दर्शन पा सकोगे।"

इतना कहकर साधु ने साँप को धीरे से फुसफुसा कर वह पवित्र नाम बता दिया। साँप ने इस प्रकार दीक्षित होकर गुरु के सामने सिर झुकाया और पूछा, "गुरुदेव, मुझे अब किन बातों का अभ्यास करना है?"

साधु बोले, "पवित्र नाम का जाप करो और किसी को भी कष्ट न पहुँचाओ," और इतना कह कर जाते जाते साधु ने कहा, 'मैं यहाँ फिर दुबारा आऊँगा।'

इसके बाद ज्यों-ज्यों दिन बीतते गये चरवाहों को यह स्पष्ट हो गया कि वह सांप अब किसी को नहीं काटेगा। अब बच्चे उसपर पत्थर फेंकते और उसे सताते, किन्तु सांप बिलकुल शांत रहता। वह एक केंचुये की तरह पड़ा रहता।

एक दिन एक लड़के ने सांप को उसकी पूंछ की तरफ से पकड़ कर उठा लिया और चारों ओर तेजी से घुमा कर जोर से जमीन पर दे मारा। सांप के मुंह से खून बहने लगा और वह अचेत हो गया। जब जीवन के उसमें कोई चिह्न नजर नहीं आये, तो लड़के उसे मरा जान वहाँ से चले गये।

किन्तु मध्यरात्रि में सांप में पुनः चेतना आयी और वह बहुत तकलीफ के साथ धीरे धीरे अपने बिल की ओर सरकने लगा। उसका शरीर बुरी तरह कुचल गया था और बहुत कठिनता से ही वह हिलडुल सकता था।

बहुत दिन गुजर गये। सांप बहुत कमजोर हो गया था और उसके अस्थि-पंजर निकल आये थे। भोजन के वास्ते वह रात को केवल एक बार बाहर निकलता। दिन में वह लड़कों के डर से बाहर नहीं आता। जब से उसने दीक्षा ली थी और ईश्वर का पवित्र नाम पाया था, उसने किसी को कष्ट नहीं पहुँचाया था। जमीन पर पड़ी पत्तियों और फलों को खाकर वह अपना जीवन चला रहा था।

लगभग एक वर्ष बाद संत वहाँ फिर आये। आते ही उन्होंने तुरन्त सांप के बारे में पूछा। चरवाह बच्चों ने उन्हें बताया कि सांप तो मर गया, लेकिन साधु को इस पर विश्वास न हुआ। वे जानते थे कि जब तक उनके द्वारा दिये पवित्र मन्त्र के फल स्वरूप सांप को ईश्वर का साक्षात्कार नहीं हो जाता, तब तक वह नहीं मर सकता। अतः अपने दिये हुये मंत्र को बोलकर सांप को पुकारने लगे।

अपने गुरु का स्वर सुनकर सांप अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ल से बाहर आया और उसने उन्हें क्तिभाव से प्रणाम किया। "कहो ने हो?' साधु ने पूछा। "मैं ठीक हूँ देव।" सांप बोला। "पर तुम इतने मजोर क्यों दिख रहे हो?" साधु ने ा।

सांप ने जवाब दिया. "स्वामी, आपने सी भी प्राणी को हानि न पहुँचाने का देश दिया था, अतः मैं केवल पत्तियों र फलों को खाकर रह रहा हूँ। शायद ीलिए मैं कमजोर मालूम हो रहा हूँ।"

सांप का हृदय इतना पवित्र हो का था कि उसमें किसी तरह के द्वेष ा बुराई का स्थान नहीं रह गया था और ीलिए वह उन चरवाह लड़कों की म बात को बिलकुल भूल गया था कि स तरह उन्होंने उसे अधमरा कर िया था।

"केवल भोजन के कारण तुम्हारी ऐसी दशा नहीं हुई है। कुछ और भी कारण होना चाहिए। जरा याद करो और मुझे बताओ।"

सांप को अब याद आया कि किस तरह लड़कों ने उसे ज़मीन से दे मारा था। वह बोला, "हाँ, स्वामी, मुझे अब याद आता है। एक दिन लड़कों ने मुझे जोर से धरती पर पटक दिया था। यह केवल उनका अज्ञान था, क्योंकि उन्हें क्या पता था कि मेरा हृदय-परिवर्तन हो चुका है। उन्हें क्या पता था कि अब मैं किसी को नहीं काटूँगा और हानि नहीं पहुँचाऊँगा।"

"लज्जा की बात है।' साधु बोले। "तुम इतने बड़े मूर्ख हो कि ये भी नहीं जानते कि आत्मरक्षा कैसे करनी चाहिए। मैंने तुम्हें काटने से मना किया था, फुफकारने से नहीं। तुमने उन्हें अपनी फुफकार से दूर क्यों नहीं भगा दिया?"

अनु. प्रभातकुमार मित्तल

शुद्ध घी की सात्विक और मसालेदार मनमोहक मिठाइयों के लिए :–

विशेषज्ञ : माहिम हलवा–इंग्लिश हलवा

जोशी बुढ़ाकाका माहिम हलवावाला

H.O. माहिम : कपड़ा बाजार, बम्बई–१६, फोन : 454007

दादर : खोरदाद सर्कल, बम्बई–१४, फोन : 60506

तारदेव टी. टी. बम्बई–७, फोन : 40365

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'भारती' का ५ सितम्बर १९६५ का अंक

वार्षिक विशेषांक होगा

'भारती' के विशेषांकों की गौरवशाली परम्परा के अनुरूप ही प्रस्तुत अंक भी, हमारे पाठकों के लिए अपूर्व नूतन उपहार होगा।

धर्म, अध्यात्म, दर्शन, संस्कृति, साहित्य, कला के नवयुगीन मूल्यों के विवेचक, पुरातन और अधुनातन ज्ञान-विज्ञानों पर गम्भीर प्रकाश डालनेवाले, भारत और विश्व के आज के मूर्धन्य योगियों, चिन्तास्वामियों, साहित्यकारों, कलाकारों के लेखों से ओतप्रोत, यह विशेषांक, एक स्थायी मूल्य और महत्व के ग्रंथ की तरह संग्रहणीय होगा।

इस अंक के कुछ महत्त्वपूर्ण लेख इस प्रकार होंगे :

- आगामी मनुष्य मृत्यु पर विजय प्राप्त करेगा : श्री अरविन्द
- श्रीगुरुकृपा और सुलभ साधन : स्वामी मुक्तानन्द
- नर-नारी का प्रेम और भागवत प्रेम :
  स्वामी श्री प्रभुलाल गणपतराम जोशी
- योग-शक्ति द्वारा आसन का उत्थान और आकाश-गमन :
  महामहोपाध्याय डॉ. गोपीनाथ कविराज
- मनुष्य के पूर्णत्व और अमरत्व का प्रतीक : पूर्ण कुम्भ :
  डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल
- आर्य संस्कृति का आद्य केन्द्र, नैमिषारण्य : डॉ. कन्हैयालाल मुन्शी
- हुतात्मा महासती, जोन ऑफ आर्क : श्रीमती लीलावती मुन्शी
- विज्ञान और हिन्दू धर्म : शचीन्द्रनाथ सान्याल
- योगिक शक्तियों पर वैज्ञानिक प्रयोग : विष्णु महादेव भट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

- श्री जैनेंद्र कुमार तथा अन्य शीर्षस्तम्भ भारतीय कहानीकारों की कहानियाँ
- सन १९६७ में परमाणविक विस्फोट द्वारा आध्यात्मिक क्रान्ति होगी ? : एन्थनी ब्रूक
- भारतीय संगीत में प्रणय की रसभीनी रागिनियाँ : जीतूभाई प्र. मेहता
- भगवती चेतना का आधुनिक कवि-पैग़म्बर, टी. एस. ईलियट : रमेशचन्द्र शाह
- देवांशिनी का आत्म-निवेदन (उपन्यास का एक अंश) डॉ. अमृता भारती
- भीतरी मनुष्य का महानतम अधुनातन शिल्पी : हेनरी मूर : सर हर्बर्ट रीड
- महाकवि विलियम ब्लैक, जो शताब्दियों पूर्व की मृतात्माओं से भेंट करता था : जोनाथन मार्टिन
- भारतीय कला का एक सशक्त प्रतीक : कमल : लेखक तथा चित्रकार दिनेशचन्द्र

साथ ही उत्कृष्ट कलात्मक आवरण-चित्र के अतिरिक्त, कुछ और भी रंगीन चित्रों और अनेक रेखा-चित्रों से सुशोभित १६० पृष्ठों के इस दलदार विशेषांक का मूल्य केवल ७५ पै. होगा।

शीघ्र ही अपने स्थानीय एजेण्ट के यहाँ अपनी प्रति सुरक्षित कराकर, 'भारती' के इस अप्रतिम वार्षिक उपहार का लाभ उठाने से न चूकें।

या लिखें :

वितरण-व्यवस्थापक, 'भारती', भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड बम्बई-७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[कृष्ण वल्लभा.....पृष्ठ ५८ का शेष]

अत्रोपविश्य वे तेन काचित्पुष्पैरलङ्कृता। अन्यजन्मनि सर्वात्मा विष्णु रम्यर्चितस्तया ॥

'यहाँ बैठकर कोई रमणीं निश्चय ही उनके द्वारा पुष्पालङ्कृता हुई है, उसके द्वारा दूसरे जन्म में सर्वात्मा विष्णु अभ्यर्चित हुए हैं।

यह श्लोक निश्चयतः भागवत के उपर्युक्त श्लोक का स्मरण दिलाने वाला है। अन्तर केवल इतना है कि इसमें 'आराधितः' के स्थान पर 'अभ्यर्चितः' शब्द आया है। इतना ही नहीं, भागवत के समान इसमें भी यह संकेत दिया गया है कि बाद में कृष्ण इस 'कृतपुण्या' गोपी के सामने से भी गायब हो गये थे। क्योंकि अन्य किसी प्राचीन पुराण में रास का इस प्रकार वर्णन अथवा कृष्ण का किसी विशेष गोपी का उल्लेख नहीं मिलता, इसलिए यह निष्कर्ष निकालना अनुचित न होगा कि भागवत और विष्णु-पुराणों में इस स्थल पर उसी समान कथा का वर्णन है। अतः भागवत के 'अनयाराधितः' शब्द में राधा नाम का आभास ढूंढ़ने के स्थान पर इसका सीधा अर्थ 'अनया आराधितः' मानना चाहिए। दूसरे शब्दों में भागवत का लेखक राधा नाम की किसी विशेष गोपी से परिचित था, यह मानने की कोई आवश्यकता नहीं है। हमारा सुझाव है कि विष्णु और भागवत, इन दोनों पुराणों के ये स्थल श्रीराधा के विकास-क्रम की उस स्थिति का संकेत देते हैं, जब कृष्ण की गोपियों के साथ प्रेमलीला की कथाएँ पुराणों में स्थान पाने लगी थीं और एक विशेष गोपी की कल्पना जन्म लेने लगी थी, परन्तु उस गोपी का नामकरण संस्कार या तो नहीं हो पाया था, अथवा केवल ऐसी कृतियों तक सीमित था जिनसे इन पुराणों के रचयिता अपरिचित थे और आधुनिक विद्वान् अभी तक अपरिचित हैं। यह भी असम्भव नहीं है कि स्वयं भागवत के 'अनयाराधितः' शब्द ने इस कल्पना को जन्म दिया हो कि कृष्ण की विशेष रूप से प्रिय गोपी का नाम राधा था।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि अभी तक ऐसा कोई साक्ष्य उपलब्ध नहीं हो पाया है, जिसके आधार श्रीराधा के ऐतिहासिक आविर्भाव की प्राचीनता आठवीं शतीं ई. के पूर्व मानी जा सके। इसलिए यह सुझाव कि उनका श्रीकृष्ण के साथ उल्लेख ७०० ई. के लगभग आरम्भ हुआ, सत्य के निकटतम माना जाना चाहिए।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[पाश्चात्यवाद को चुनौती...
पृष्ठ १६ का शेष]

पुनर्संघटन का सक्रिय केन्द्र होना चाहिये। सांस्कृतिक पुनर्संघटन की प्रक्रिया पोषण की प्रक्रिया की तरह है, जो दिन प्रति दिन जीवित देहांशों का नव-सृजन करती है। संस्कृति का विद्यार्थी पहले उसका अध्ययन करता है और फिर स्वयं ग्रहण का केन्द्र बन जाता है। और यदि संस्कृति विदेशीय नहीं है तो वह उसके सृष्टतम तत्वों को आत्मसात् कर लेता है। यह चीज उसे अपने प्रति, अपने देश के प्रति और अपनी संस्कृति के प्रति सच्चा बनाती है। अगली भूमिका में अपने युग की विशिष्ट परिस्थितियों के अन्तर्गत वह उन सृष्ट तत्त्वों को अपने भीतर उतारने का यत्न करता है। ज्यों ही वह ऐसा करता है, वह पुनर्संघटन का एक सक्रिय केन्द्र बन जाता है। वह अपनी संस्कृति के स्थायी मूल्यों को अपने भीतर से प्रकाशित करता है; अपने परिवेशों को प्रभावित करता है; और विदेशी प्रभावों के साथ सम्पर्क स्थापित करके एक स्वस्थ पुनर्जागरण घटित करता है।

—अनु. वि. के. गुप्ता

★

आदर्श स्वच्छता के लिए
रोगाणुनाशक—दुर्गन्धहारी—शोधक

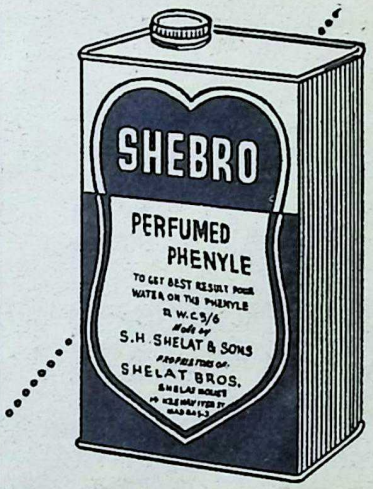

GP

उत्पादक :
एस. एच. शेलत एण्ड सन्स
शेलत ब्रदर्स, मद्रास
और उसकी अन्य शाखाओं के मालिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रपति डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् ने गत ८ जुलाई को भारतीय विद्या भवन के आन्ध्र प्रदेश केन्द्र का उद्घाटन किया। प्रस्तुत चित्र उसी शुभ अवसर का है।

गत ८ जुलाई को हैदराबाद में भारतीय विद्या भवन के आन्ध्र प्रदेश केन्द्र की उद्घाटन-विधि राष्ट्रपति डॉ. सर्वपल्ली श्री राधाकृष्णन् ने एक विशिष्ट समारोह के मध्य सम्पन्न की। इस अवसर पर भवन द्वारा प्रकाशित तीन ग्रन्थों का उद्घाटन भी राष्ट्रपति महोदय ने किया।

अपने भाषण में कुलपति श्री मुन्शी जी के कृतित्व एवं व्यक्तित्व की प्रशंसा करते हुए राष्ट्रपति महोदय ने कहा कि श्री मुन्शी जी ने विभिन्न रूपों में देश की महान सेवाएँ की हैं। बम्बई में मन्त्री के रूप में, दिल्ली में केन्द्रीय मन्त्री के रूप में, उत्तर प्रदेश में राज्यपाल के रूप में, साथ ही प्रख्यात धारा-शास्त्री के रूप में आपकी सेवाएँ उल्लेखनीय हैं; किन्तु इन सबसे ऊपर भारतीय विद्या भवन की स्थापना कर इन्होंने देश की ऐसी सेवा की है, जो कभी भुलायी नहीं जा सकती।

भारतीय विद्या भवन के उद्देश्यों एवं सिद्धान्तों की चर्चा करते हुए उन्होंने श्रद्धा, संयम एवं समर्पण की विस्तृतरूप से व्याख्या की और बताया कि इनके पीछे क्या रहस्य छिपा हुआ है। प्रत्येक मानव के भीतर श्रद्धा, संयम एवं समर्पण की भावना का जागरण होना ही चाहिए। भवन इस दिशा में प्रयत्नशील है, इससे मुझे बड़ी प्रसन्नता है।

कुलपति श्री मुन्शी जी ने राष्ट्रपति जी का आभार मानते हुए अपने भाषण में कहा कि भारतीय विद्या भवन को आपका जो सहयोग मिला है, उसे कदापि भी भुलाया नहीं जा सकता। राष्ट्रपति जी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वयं भवन के सम्मानीय सदस्य हैं। १९४१ में उन्होंने भारतीय विद्या भवन के थम भवन का उद्घाटन किया था। न् १९५७ में भवन के द्वि-दशम् समारोह मिति के चैयरमैन के रूप में तथा सन् १९६२ में भवन के रजत जयन्ती समारोह अध्यक्ष के रूप में उपस्थित रह कर पने भवन को एक अक्षुण्ण प्रेरणा दी है। ापके आशीर्वाद से भवन को सदैव नयी क्ति एवं प्रोत्साहन मिला है।

मैंने सदैव कहा है कि भवन का कार्य मु का कार्य है। जब कभी भी आवश्यकता ड़ी है, कार्यकर्ता, धन, अन्य सुविधाएँ ासानी से सुलभ हुए हैं। गत १२ माह वन के इतिहास में अत्यन्त महत्त्व के द्ध हुए हैं। गत अक्टूबर माह में स्वयं ाष्ट्रपति जी ने मद्रास केन्द्र के नये भवन ा शिलान्यास किया था। जनवरी में धान मन्त्री श्री लाल बहादुर शास्त्री ने ंगलोर केन्द्र के भवन का शिलान्यास किया। भवन ने बम्बई तथा अहमदाबाद दो आर्ट्स एण्ड सायन्स कालेज भी इस में खोले। जम्मू तथा काश्मीर एवं ारिशस में भी भवन के केन्द्र खोले गये। सी प्रकार अन्य क्षेत्रों में भी भवन ने ति की। मैंने यह भी सदा कहा है कि वन की शक्ति उसकी अनेकों विशाल ल्डिंगों, संस्थाओं, सम्पत्ति या यहाँ क कहें कि उसकी शैक्षणिक प्रवृत्तियों में निहित नहीं है, अपितु उसके कार्य-कर्ताओं के चरित्र एवं कार्य में निहित है।

इस समय हमें चतुर्दिक देखना है। हमारी सीमाओं पर शत्रुओं ने विकट संकट उपस्थित कर दिये हैं और हम उन संकटों के निवारण की बात न सोच कर मद्यनिषेध, भाषा, राज्य सीमा आदि जैसी निजी समस्याओं को लेकर आपस में लड़ रहे हैं।

मैं आंध्र प्रदेश के राज्यपाल श्री पद्म-थानू पिल्लई, नवाब मेहदी नवाज जंग, डॉ. आर. आर. दिवाकर, श्री के. बाला-सुब्रमनिया अय्यर तथा उन मित्रों का भी हृदय से आभारी हूँ, जो सदैव भवन की

श्रीमती लीलावती मुन्शी राष्ट्रपति जी को गुलदस्ता भेंट कर रही हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सहायता करने के लिए तत्पर रहते हैं और इस समारोह में उपस्थित रह कर हमारे उत्साह को बढ़ाया है।

आंध्र प्रदेश के कानून मन्त्री तथा भवन के आंध्र प्रदेश केन्द्र के उप चेयरमैन श्री पी. वी. नरसिंहराव ने अपने स्वागत भाषण में आंध्र प्रदेश के भवन केन्द्र की स्थापना पर विस्तृतरूप से प्रकाश डाला। श्रीमती लीलावती मुन्शी ने राष्ट्रपति को एक सुन्दर फूलों का गुलदस्ता भेंट किया। साथ ही और लोगों ने भी पुष्पहार आदि भेंट किये। आंध्र प्रदेश के विधान परिषद के उप चेयरमैन श्री एम. आनन्दन् ने शुभसन्देश पढ़ कर सुनाये जिनमें से प्रमुख इस प्रकार हैं—जगद्गुरु श्री शंकराचार्य कांची, माताजी, अरविन्दाश्रम, उप राष्ट्रपति डॉ. जाकिर हुसेन, प्रधान मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री, डॉ. सी. पी. रामास्वामी अय्यर, मैसूर के महाराजा आदि। अन्त में आंध्र प्रदेश केन्द्र की प्रबन्धक समिति के संयोजक श्री वी. पी. राघवाचारी, एम. एल. सी. ने आभार प्रदर्शित किया। ●●●

आगामी १०, ११ तथा १२ सितम्बर को बंगलोर में संस्कृत विश्व परिषद का आठवाँ अधिवेशन सम्पन्न होगा। इस अधिवेशन का उद्घाटन राष्ट्रपति डॉ. राधाकृष्णन् करेंगे। मैसूर के मुख्य मन्त्री श्री एस. निजलिंगप्पा स्वागत समिति के चेयरमैन हैं। संस्कृत विश्व परिषद की स्थापना ११ मई १९५१ में डॉ. राजेन्द्रप्रसाद की अध्यक्षता में हुई थी, उस समय जो इसके आजीवन अध्यक्ष निर्वाचित किये गये थे। डॉ. कन्हैयालाल मुन्शी संस्कृत विश्व परिषद के चेयरमैन हैं। गत सात अधिवेशन सोमनाथ, वाराणसी, नागपुर, तिरुपति, कुरुक्षेत्र, पुरी तथा बम्बई में सम्पन्न हुए थे।

इस अधिवेशन में जो सज्जन प्रतिनिधि के रूप में भाग लेना चाहते हैं, वे मानद् मन्त्री, संस्कृत विश्व परिषद, भारतीय विद्या भवन, चौपाटी रोड, बम्बई ७ के पते पर छपे हुए फार्म पर ५) के प्रतिनिधि शुल्क के साथ आवेदन कर सकते हैं। प्रतिनिधि अंकन करने की अंतिम तिथि २० अगस्त १९६५ है। प्रतिनिधियों को रेलवे किराये में छूट भी मिलेगी। ●●●

गत १८ जुलाई को बम्बई उपनगर सरल संस्कृत परीक्षाओं में उत्तीर्ण विद्यार्थियों को प्रमाण-पत्र देने के लिए एक समारोह का आयोजन किया गया था। इस समारोह की अध्यक्षता कुलपति श्री मुन्शी जी ने की थी। उन्होंने अपने भाषण में संस्कृत के महत्त्व को समझाते हुए कहा कि इस देववाणी को सभी को जानना चाहिए। श्रीमती लीलावती मुन्शी ने उत्तीर्ण छात्रों को प्रमाणपत्र वितरित किये। परीक्षामन्त्री श्री महेशचन्द्र शास्त्री ने आभार प्रदर्शित किया। स्मरण रहे सरल संस्कृत परीक्षाओं का संचालन भारतीय विद्या भवन करता है।

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन के लिए बम्बई से प्रकाशित व मुद्रित तथा एसोसिएटेड एडवर्टाइजर्स एण्ड प्रिन्टर्स, तारदेव, बम्बई ३४ में मुद्रित।
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब खरीदिये या नकद किस्तों में लीजिये

आपका Jaykay

पोर्टेबिल टाइप-राइटर

- ☐ शानदार
- ☐ हल्का
- ☐ सुडौल

सब प्रकार की लिखाई का सर्वोत्तम साधन

- ☐ सुदृढ़
- ☐ सुदक्ष

जे० के० बिजिनैस मैशीन्स लिमिटेड

२ मैंगो लेन, कलकत्ता-१

KALPANA J.K.B.M./-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतुल

• रंग

• रसायन

• और औषधि

अतुल ... ATUL ... अतुल

रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क

अतुल प्रॉडक्ट्स लि.

अतुल, (वाया वलसार)

पश्चिम रेलवे.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

428

अक्तूबर
१९६५

भारती

[भवन की पत्रिका]

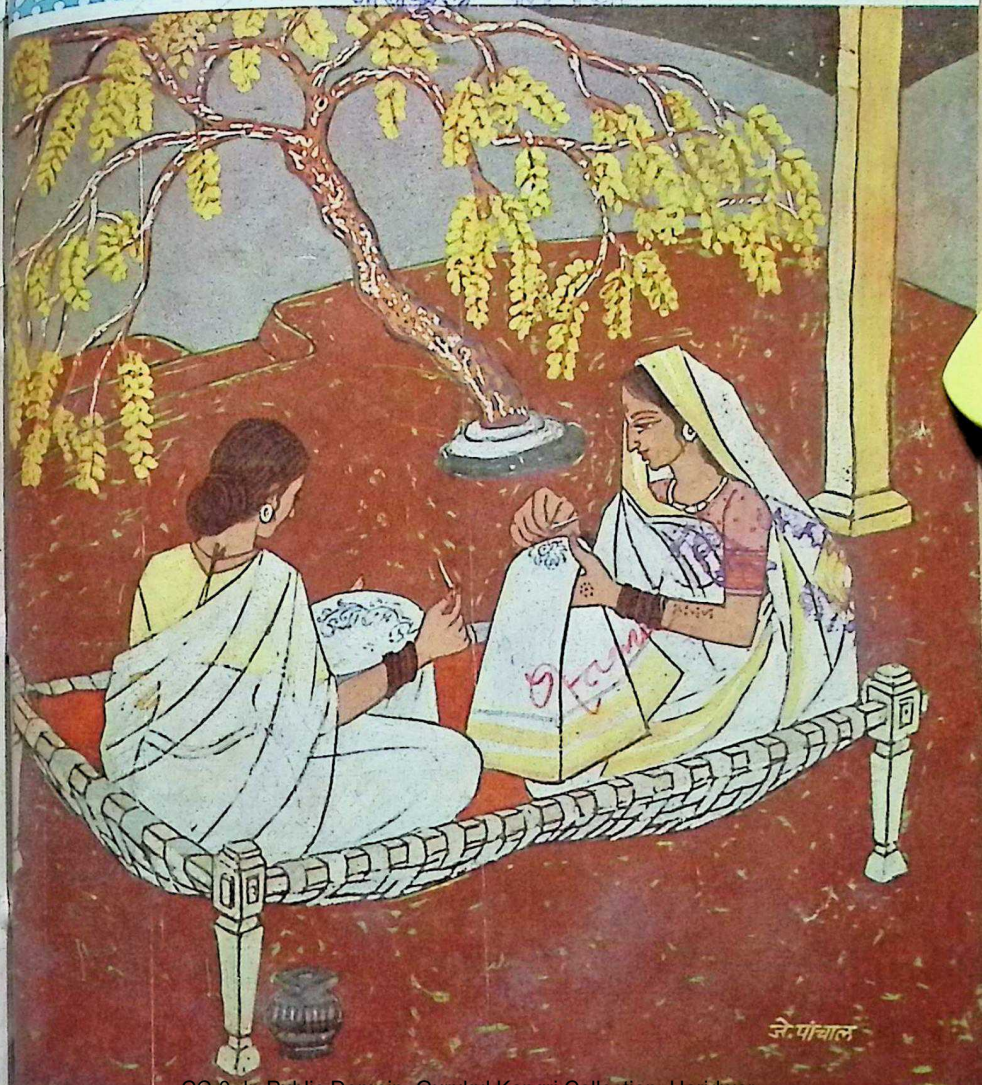

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतमें सब जगह प्रसिध्द

चँपियन

(रजिस्टर्ड)

सबकी पसंदगी

गुजरात इंडस्ट्रीज प्रायव्हेट लि., बंबई २

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

maa.IOC.5227 C HIN

समृद्धि का मूल उपकरण तेल

पैट्रोल द्वारा प्राप्त शक्ति से चलने वाले ट्रेक्टर, लोडर, यांत्रिक हल और तरह तरह के औजार व मशीनों के उपयोग ने मनुष्य की अन्न उत्पादन क्षमता को कई गुना बढ़ा दिया है। पैट्रोल के अन्य उत्पादनो से जमीन को उपजाऊ बनाया जाता है और फसलों को कीड़े-मकोड़े, फफूंदी तथा घासपात नाशक रोगों से संरक्षण मिलता है।

देश के सामने आज सबसे महत्त्वपूर्ण समस्या ज्यादा से ज्यादा अनाज उत्पादन की है। इण्डियनऑयल किसानो को अनाज की पैदावार बढ़ाने में सहायता करता है।

इण्डियनऑयल सभी तरह के पैट्रोल-उत्पादनों का शुद्धीकरण, नलो के बिछे जाल द्वारा वितरण तथा उनका विक्रय करता है। इस बात की पूरी कोशिश की जाती है कि खेती-बाड़ी, उद्योग-धन्दो, यातायात और दूसरे राष्ट्रीय निर्माण योजनाओ में तेल और पैट्रोल के उत्पादनो की बढ़ती हुई मांग की पूर्ति होती रहे।

INDIANOIL — राष्ट्र की आर्थिक समृद्धि का प्रतिक

इण्डियन ऑयल कार्पोरेशन लिमिटेड

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष १० : अंक ५] [३१ अक्तूबर १९६५

भारती

संस्थापक :
कन्हैयालाल मुन्शी

प्रबन्ध सम्पादक :
जयन्तकृष्ण ह. दवे

प्रकाशक :
सु. रामकृष्णन्

सम्पादक :
वीरेन्द्रकुमार जैन

सहयोगी :
श्रीराम मिश्र
ओंकारनाथ शर्मा
रामलाल शुक्ल

कार्यालय :
भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड,
बम्बई ७

प्रति अंक : ३० पै.
वार्षिक : ६.५० पै.
अर्धवार्षिक: ३.५० पै.

यजुर्वेद	: प्रार्थना	३
कन्हैयालाल मुन्शी	: कुलपति का पत्र	४
श्री माँ	: योग और कला	१०
रवीन्द्रनाथ ठाकुर	: पाँच भक्तिगीत	१४
शचीन्द्रनाथ सान्याल	: आधुनिक विज्ञान और हिन्दू धर्म	१८
रंगनाथ राकेश	: आधुनिक बंगला के एक आस्थाशील कवि : सुभाष मुखोपाध्याय	२४
अनिलकुमार	: गंगा मिली दो बार	२९
शान्तिलाल तोलाट	: क्रान्तिवीर तात्या टोपे	३०
प्रदीप खांडवाला	: भारत के दो रूप	३५
अनुराधा	: पुरानी कहानी, नयी कविता	३८
डॉ. शिवगोपाल मिश्र	: क्या पृथ्वी के बाहर प्राणियों का अस्तित्व है ?	४६
कन्हैयालाल मुन्शी	: कृष्णावतार	५०
डॉ. महेन्द्र पण्ड्या	: और धीरे बहती है डॉन : एक दृष्टिपात	५४
कु. मधुच्छन्दा बागची	: मैके चली शिव की घरनी	५८

आवरण-चित्र : **विश्रान्ति**
चित्रकार : **जयकिशन पांचाल**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः ।

[प्रत्येक दिशा से शुभ एवं सुन्दर विचार हमें प्राप्त हों]

भारती

[भवन की पत्रिका]

आगामी विश्व विकास का सूत्रकः
जीवन, साहित्य और
संस्कृति का पाक्षिक

प्रार्थना

ओऽम् यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते ।
तया मामद्य मेधयाऽग्ने मेधाविनं कुरु ॥

हे अग्ने, जिस मेधा बुद्धि को देवता और पितर चाहते हैं, वही मेधा हमें आज प्रदान कर।

यजु. ३२–१४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

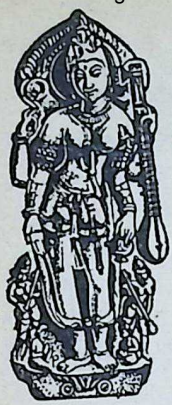

कुलपति का पत्र

जीवन साहित्य तथा संस्कृति से संबंधित

● संकट की घड़ी : 'अमैत्रीपूर्ण' इंग्लैण्ड

भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड, बम्बई ७
३१ अक्तूबर, १९६५

मेरे युवा मित्र,

संकट की इस घड़ी में जो भी राष्ट्र हमारे मित्र होने का दावा कर सकते हैं, उनमें ब्रिटेन का रुख सर्वाधिक अमैत्रीपूर्ण रहा है। 'अमैत्रीपूर्ण' ही क्यों ,शायद 'शत्रुत्वपूर्ण' कहना अधिक उचित होगा। वहाँ का रेडियो, बी. बी. सी. जहर उगलता रहा है, समाचारपत्र गलत समाचार देते रहे हैं और प्रधानमंत्री ने सत्य पर पर्दा डालने की कोशिश की है। यह कोई आश्चर्यजनक बात नहीं है। ब्रिटेनवासी सदा ही राष्ट्रवादी भारत से विरोध की भावना रखते आये हैं और हमारे शत्रु को वे अपना मित्र समझते हैं।

ब्रिटिश अधिकारियों ने भारत में सदा ही साम्प्रदायिक संघर्ष को प्रोत्साहित किया और कट्टर, उग्रवादी मुसलमानों का समर्थन किया। १८५७ के गदर में हिन्दू और मुसलमान सेना में एक साथ थे। सदियों के संघर्ष के बाद उन्होंने एक-दूसरे के साथ रहना सीख लिया था, और दोनों ने ही मिल कर अंग्रेजों का कड़ा विरोध किया था। इस विप्लव को दबाने में लार्ड लारेंस ने महत्वपूर्ण भाग लिया और यह सबसे पहले उन्हीं की दिमाग की उपज थी कि ब्रिटिश शासन को संभावी खतरे से बचाने के लिए मुसलमानों को हिंदुओं से पृथक कर दिया जाय।

"गदर के पहले, फौज में जो सबसे बड़ी और हमारे लिए निश्चित ही सबसे अधिक खतरनाक खामी थी, वह थी बंगाल सेना में भाईचारे और एकता की भावना; और इसके उपाय के रूप में प्रतिसंतुलन करना अति आवश्यक है, सबसे पहले यूरोपियनों का प्रतिसंतुलन और बाद में देशी जातियों का प्रतिसंतुलन।'[1]

---

१. (गदर में हिन्दू में वीर चौधरी द्वारा उद्धृत)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक विशुद्ध मुस्लिम संगठन, मोहम्डन एंग्लो-ओरिएंटल डिफेंस असोशिएशन के सेक्रटरी और अलीगढ़ कालेज के प्रिंसिपल, मि. बैक ने दिसम्बर १८९३ में घोषणा की:

"विद्रोहियों का मुकाबिला करने और जनतंत्रीय शासन को रोकने के लिए, जो इस देश की आवश्यकताओं और प्रतिभा के योग्य नहीं है, मुसलमानों और अंग्रेजों को एक होना चाहिए। इसीलिए हम सरकार के प्रति वफादारी और आंग्ल-मुस्लिम सहयोग की सिफारिश करते हैं।'[२]

१९०९ में भारत सरकार की ओर से सर हैरोल्ड स्टुअर्ट द्वारा प्रतिपादित 'देशी लोगों के विरुद्ध देशी लोगों के प्रति-संतुलन' की नीति को मिंटो-मोरली रिफार्म ने एक स्थायी रूप दिया। राष्ट्र की बढ़ती हुई एकता को रोकने के लिए भारतीयों को विभिन्न जातियों के घेरे में राजनीतिक रूप से विभाजित कर दिया गया।

१९३२ में प्राइम मिनिस्टर, रामसे मैक्डोनाल्ड तो हमारे देशवासियों को तीन अलहिदा हिस्सों में बांटने और अनुसूचित जातियों को एक स्वतंत्र दर्जा दे देने पर तुले थे; पर गांधीजी ने उपवास करके उन्हें इस फूट-कार्य से रोका।

द्वितीय विश्व युद्ध के दिनों में अंग्रेजों ने ही गांधीजी और राष्ट्रीय आन्दोलन के खिलाफ जिन्ना और मुस्लिम लीग को खड़ा किया।

जब दो अधिराज्यों को शक्ति स्थानान्तरित करना अनिवार्य हो गया तो उन्होंने एक मुख्यतः हिन्दू प्रदेश और दो मुख्यतः मुस्लिम प्रदेशों के संघ का सुझाव दिया। केन्द्र सरकार कम से कम सत्ता का प्रयोग करती, पर स्वेज से सिंगापुर तक के ब्रिटिश नौसैनिक साम्राज्य की रक्षा के लिए भारत का उपयोग करने के पूर्ण अधिकार उसके पास रहते।

१६ मई (१९४६) की योजना में यह कार्रवाई शामिल थी;

(२२) "सत्ता स्थानान्तरित करने के फलस्वरूप कुछ मामलों को निपटाने के लिए युनियन संविधान सभा और युनाइटेड किंगडम के बीच एक संधि-वार्ता करना आवश्यक होगा।"

अब हम जानते हैं कि इन 'कुछ मामलों' का अर्थ स्वेज से सिंगापुर तक, दक्षिण-पूर्व एशिया की सुरक्षा था।

सेक्रेटरी ऑफ स्टेट फॉर इन्डिया के सैनिक सचिव ,जनरल मायन ने भारत के कमांडर-इन-चीफ, फील्ड मार्शल सर क्लाड ऑचिन्लेक को लिखा:

"इसका अर्थ यही होता है कि प्रधान मंत्री (अब लार्ड एटली) चाहते हैं कि भारत

---

२ मुसलमानों का राशान मुस्तक्वी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को आजादी या डोमिनियन स्टेट्स देने से पहले यह शर्त लगा दी जाय कि भारत को इतनी सेना रखने का वचन देना होगा, जिससे कि वह अपनी सुरक्षा तो कर ही सके, पर साथ-साथ राष्ट्रमंडल अथवा राष्ट्र संघ के हितों के लिए दक्षिण-पूर्व एशिया क्षेत्र की सुरक्षा में भी सहायता कर सके।"

उनकी यह आशा जिन्ना ने पूरी नहीं होने दी। जिन्ना अपनी फौज रखने पर अड़ गये। फिर भी अंग्रेजों को एक साथी की जरूरत थी और वह साथी पाकिस्तान ही था।

संविधान सभा में पहले दिन पंडित नेहरू ने जो भाषण दिया, वह आज भी मुझे याद है:

"...हम सारे संसार के प्रति मित्रता का हाथ बढ़ाते हैं...पिछले दीर्घ संघर्ष के इतिहास के बावजूद, हम इंग्लैंड से भी दोस्ती रखना चाहते हैं...मैं वहाँ (इंग्लैंड) गया और सभी ने विनयपूर्वक व्यवहार भी किया। परन्तु भारतीय इतिहास की इस मनोवैज्ञानिक घड़ी में जब हम सारे संसार से सद्भाव, मैत्री और सहयोग के लिए लालायित हैं, विशेषतः इंग्लैंड से, क्योंकि हमारा उससे पुराना सम्पर्क और संघर्ष रहा है, तब दुर्भाग्यवश मैं वहाँ से कोई प्रसन्नता का संदेश लेकर नहीं आ सका, बल्कि मुझे अधिकांशतः निराशा ही मिली है।..."

मजदूर सरकार के रुख में इस आकस्मिक परिवर्तन से हम सभी को आश्चर्य हुआ। बाद में हमें पता चला कि उन्होंने पाकिस्तान का समर्थन करने का पहले ही फैसला कर लिया था।

२३ अक्तूबर १९४७ को पाकिस्तान ने काश्मीर पर हमला किया। २६ अक्तूबर को, काश्मीर के भारतीय संघ में मिलने के बाद, हमारी फौजें हवाई जहाजों द्वारा वहाँ पहुँची और पाकिस्तानी फौजों की लूट और हत्या को रोका।

भारत ने प्रधान मंत्री एटली को मध्यस्थ बन कर व्यक्तिगत रूप से बीच-बचाव करने की प्रार्थना की, ताकि काश्मीर को लेकर भारत-पाकिस्तान का विवाद खत्म हो जाय। उन्होंने मध्यस्थ बनने से इनकार कर दिया और भारत को राष्ट्र संघ में फरियाद करने को कहा। उनकी सलाह मान कर हमने राष्ट्र संघ में पाकिस्तान की शिकायत की, परन्तु इस आक्रमण पर वहाँ उतना ही ध्यान दिया गया, जितना कि ब्रिटिश शासक अपने शासनकाल में साम्प्रदायिक दंगों पर देते थे। अज्ञात रह कर ही, ब्रिटेन के प्रतिनिधि ने वह प्रस्ताव तैयार किया, जिसमें भारत की शिकायत की अवहेलना की गयी और आक्रमक और आक्रमण के शिकार दोनों को ही समान दर्जा दिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया। वहाँ, राष्ट्रमंडल के मिनिस्टर, मिस्टर नोएल बेकर ने खुले आम पाकिस्तान का समर्थन किया।

ब्रिटेन ने इस आक्रमण के सीधेसादे सवाल को एक ऐसे अवसर में परिवर्तित करने के लिए षड्यंत्र किया, जिससे उसकी योजना के अनुसार, काश्मीर पाकिस्तान को मिल जाय; हालांकि वह कानूनन भारतीय संघ में मिल चुका था।

१९४६-४७ में जब लार्ड माउंटबैटन भारत के एकीकरण की प्रक्रिया में सहायता दे रहे थे, तब एक उच्च ब्रिटिश अधिकारी कुछ भारतीय राजाओं को भारतीय संघ में विलय से बचने के लिए अपनी सेवाएँ अर्पित कर रहा था।

एक और उच्च अधिकारी निजाम को 'तीसरे अधिराज्य 'की प्रेरणा दे रहा था। अधिकांश ब्रिटिश पत्र निजाम के पक्ष में और भारतविरोधी थे। भारत के बीचोंबीच वे अपने प्रभाव का एक केन्द्र बनाये रखना चाहते थे।

उन दिनों अंग्रेजों ने बड़ी ऊँची उड़ान यह कर रखी थी कि हिंदू कभी भारत पर शासन नहीं कर सकेंगे और अवश्य ही वे बिखर जायेंगे।

एक और उच्च अधिकारी ने भारत छोड़ते समय अपने श्रोताओं को आश्वासन दिया कि वह शीघ्र ही वापस आयेगा क्योंकि आज़ादी मिलते ही भारत टूक-टूक हो जायेगा।

कुछ हफ्तों पहले बी. बी. सी. ने भारत पर यह कह कर कीचड़ उछालने की कोशिश की कि यह लड़ाई शास्त्रीजी के हिंदू होने की वजह से हुई। अभी तक वे यह नहीं जान पाये हैं कि शास्त्रीजी एक राष्ट्रीय नेता हैं जिन्हें सारे भारत का समर्थन प्राप्त है, जिसमें पांच करोड़ मुसलमान भी शामिल हैं।

पूरी लड़ाई के दौरान ब्रिटेन ने मध्य-कालीन प्रकार की एक ऐसी धर्मांध तानाशाही का पक्ष लिया, जो एक आधुनिक जनतांत्रिक राज्य, भारत पर धर्म के नाम युद्ध कर रहा है।

पर, ऐसा क्यों ?

उत्तर स्पष्ट है। अंग्रेज अभी भी इस भ्रान्ति में हैं कि स्वेज से सिंगापुर तक, भारतीय महासागर एक ब्रिटिश झील है, जिस पर वे सदा के लिए अपने नौ-सैनिक साम्राज्य के अड्डे के रूप में अधिकार रख सकते हैं।

यह भ्रान्ति स्वाभाविक है। किसी समय भारत और पाकिस्तान, बर्मा सहित, इस नौ सैनिक साम्राज्य के केन्द्रीय दुर्ग के रूप में थे। यहीं से अंग्रेज तेल से समृद्ध मध्यपूर्व पर नियन्त्रण रखने की आशा करते थे तथा पूर्वी अफ्रीकन देशों पर अपना प्रभुत्व और दक्षिण-पूर्वी एशिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को भी अपने प्रभाव में बनाये रखने की आशा रखते थे।

भारत और पाकिस्तान को सत्ता स्थानान्तरित कर देने पर भी, यह समझा जाता रहा कि लार्ड माउँटबैटन भारत और पाकिस्तान दोनों के गवर्नर-जनरल होंगे, दोनों देशों की एक ही सेना होगी और वे इस साम्राज्य को बनाये रखने में सहायक होंगे। दुर्भाग्यवश, जिन्ना लार्ड माउँटबैटन को पाकिस्तान का गवर्नर जनरल बनाने के अपने वादे से ऐन वक्त पर मुकर गये।

बटवारे के बाद भी यह भ्रान्ति बनी रही। अंग्रेजों को यह आशा थी कि पाकिस्तान को वे अपने नौसैनिक साम्राज्य का केन्द्र बनाये रखने में सफल होंगे।

पर, हुआ क्या?

स्वेज पर बलपूर्वक वे अपना अधिकार रखने में असफल रहे।

अदन में खुली बगावत हो रही है।

नासिर की शक्ति बढ़ रही है, और वे मध्य-पूर्व से ब्रिटिश प्रभाव को खत्म करने को तैयार हैं।

बर्मा ब्रिटिश प्रभाव से निकल गया है, और थाईलैंड तथा कम्बोदिया भी उससे अलग हो गये हैं। सिंगापुर ने ब्रिटिश मित्रता को अस्वीकार कर दिया है। हाल ही में मलेशिया ने भी ब्रिटिश अधिकारियों के प्रति अविश्वास व्यक्त किया है।

ब्रिटेन के प्रति हमारा रुख सदा मैत्री का रहा है। वास्तव में अन्य किसी राष्ट्र से अधिक उसीके साथ हमने दोस्ती रखनी चाही। देश के प्रति लार्ड एटली, स्टैफोर्ड क्रिप्स और लार्ड माउँटबैटन की सेवाओं को हम नहीं भुला सकते।

ब्रिटिश पूँजी का हमने स्वागत किया। ब्रिटिश विशेषज्ञों और ब्रिटिश व्यवसाय को भी हमने बढ़ावा दिया। आज भारत में ब्रिटिश नागरिकों की संख्या उस समय से भी अधिक है जब उनका शासन हम पर था। भारत में सहयोग-योजना के अन्तर्गत ६४२ करोड़ रुपये व्यवसाय में लगे हैं।

अंग्रेज यह भूल गये हैं कि भारतीय महासागर में शांति तभी बनी रह सकती है जब कि भारत स्वतंत्र और शक्तिशाली हो। वे इस सत्य की ओर से विमुख हुए जान पड़ते हैं, कि हम पर लादे गये इस युद्ध के परिणामस्वरूप, भारत अपना महत्व खोनेवाला नहीं है, न पाकिस्तान आर्थिक और सैनिक दृष्टि से बर्बाद हुए बिना और संभवतः चीन का पिछलग्गू बने बिना रह सकता है।

वे यह भी भूल जाते हैं कि संकट की इस घड़ी में उनके द्वारा पीठ में छुरी भोंके जाने के बाद हमारा रुख उनके प्रति अब पहले जैसा नहीं रह सकेगा।

[शेष पृष्ठ १३ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरदार वल्लभभाई पटेल

[जन्म : ३१ अक्तूबर १८७५ निधन : १५ दिसम्बर १९५०]

वे साहसी, कुशाग्रबुद्धि और अत्यंत यथार्थवादी थे तथा हर समस्या का समाधान ढूंढ़ निकालने में समर्थ थे। देश की पुनर्रचना उन्होंने शक्ति और स्थायित्व की एक-एक ईंट जोड़ कर की... फिर भी, इस अत्यंत शक्तिशाली और तेजस्वी व्यक्तित्व के पीछे एक किसान की भी सादगी थी जिसे कभी दूषित नहीं किया जा सकता। जिन्हें वे प्यार करते थे, उनके प्रति वे सदा वफादार रहे। वे एक ऐसी अनमनीय आत्मा के धनी थे जिसने उन्हें मातृभूमि के चरणों में अपना सर्वस्व अर्पित करने को प्रेरित किया। इतिहास उन्हें भारतमाता के एक महानतम सपूत के रूप में सदा स्मरण रखेगा। —कन्हैयालाल मुन्शी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

योग और कला

श्री माँ

सच्ची कला अविकल है और वह समग्रता से सम्बन्धित है। कला एक है और जीवन से संयुक्त है। प्राचीन यूनान और मिस्र में इस तरह की प्रगाढ़ अविकलता के कुछ उदाहरण तुम्हें प्राप्त हैं; क्योंकि उनके चित्र, मूर्तियाँ तथा कला की अन्य और बहुत सी विधाएँ, स्थापत्य-कलाविषयक योजना के अंग रूप में ही बनायी और सजायी गयी हैं, वहाँ की हर बारीकी और विविधता इस अविकलता का ही एक अंग है। जापान में, उपयोगितावादी तथा व्यवहारिक आधुनिकवाद आने से पहले, कला का यही स्वरूप था। जापानी घर कला की इस अविकलता के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। उनमें सदा ही औचित्य का ध्यान रखा जाता है, कोई भी वस्तु वहाँ गलत तरीके से नहीं सजायी जाती, और न तो किसी वस्तु की अतिशयता होती है और न तो न्यूनता। हर चीज़ आवश्यकतानुसार होती है और वह घर स्वयं भी प्रकृति से अलग न पड़ कर उसके साथ विलक्षणरूप से तदाकार हुआ रहता है। भारतवर्ष में भी चित्र-कला, मूर्तिकला, कौर स्थापत्यकला सर्वांग सौन्दर्य में संयुक्त थी, भगवद्-भक्ति की ओर इसका एक ही सम्वादी प्रवाह था।

इसके पश्चात् संसार में कला की इस स्थिति में बड़ा भारी पतन हुआ। कला की यह अधोगत स्थिति विक्टोरिया काल में और फ़्रांस में दूसरे साम्राज्य के युग से आरम्भ हुई। उसके बाद से कक्षों में ऐसे चित्र लगने लगे हैं, जिनका निकट की वस्तुओं के लिए कोई महत्व नहीं होता; अब तो कलाविषयक कोई भी वस्तु कहीं भी रख दी जा सकती है और इससे उस कमरे की समग्रता में कोई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खास अन्तर आया हो, ऐसा नहीं समझा जाता। कला को आजकल कौशल, बाजुरी और निपुणता माना जाने लगा है, जब कि कला है घर के अन्दर सामंजस्य और सौन्दर्य की किसी सांगोपांग व्यंजना को साकार करना।

कला को उसके तात्त्विक सत्य में देखें तो निश्चय प्रतीति हो जायेगी कि यह भागवत अभिव्यक्ति और सौन्दर्य का अंग है। इस दृष्टि से देखने पर सच्चे कलाकार बहुत कम नज़र आयेंगे, लेकिन जो हैं, उन्हें हम योगी कह सकते हैं। योगी की भाँति कलाकार भी अपनी प्रेरणा को पाने के लिए हृदय की गहरायी में उतर कर चिंतन करता है। किसी वास्तव सुन्दर वस्तु का सृजन करने के लिए पहले कलाकार को उस वस्तु के भीतर देखना पड़ता है, अपनी आन्तरिक चेतना में उसे एक अखण्ड वस्तु के रूप में सिद्ध करना पड़ता है। इस प्रकार कलाकार जब किसी वस्तु की प्राप्ति और उसका दर्शन कर लेता है, वह वस्तु उसके हृदय में अंकित हो जाती है, उसके बाद ही वह उस वस्तु के बाहर अभिव्यक्त कर सकता है। वह अपना सृजन इस महत्तर आन्तर दर्शन के अनुरूप ही करता है। लियोनार्दो-द-विंचि जैसे कलाकार योगी के अलावा और कुछ भी नहीं थे।

संगीत भी मूलभूत रूप से आध्यात्मिक कला ही है और सदा ही इसका धार्मिक भाव और आंतरिक जीवन से साहचर्य रहा है। लेकिन इसे भी हमने एक स्वच्छन्द और स्वनिर्भर कला में, एक क्षणजीवी कला में परिणत कर दिया है—नाटक का संगीत इसी तरह का है। मेरा अभिप्राय यह नहीं है कि नाटक के संगीत को भी उच्चतर कला-व्यंजना का माध्यम नहीं बनाया जा सकता; कारण आकार

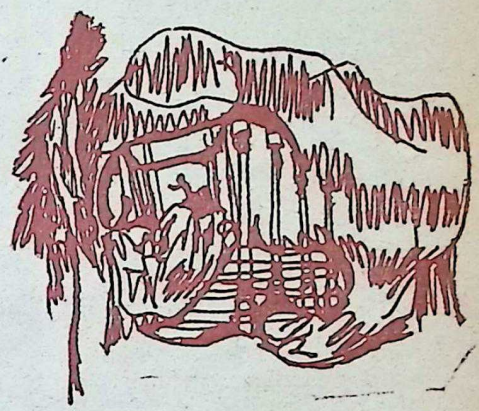

चाहे जो कुछ भी क्यों न हो, लेकिन वह गंभीरतर हेतु के लिए काम में लाया जा सकता है। वस्तु, उसके उपयोग और उसके अन्तर्निहित भाव पर सब कुछ निर्भर करता है। कोई भी वस्तु ऐसी नहीं है, जो भगवान के हेतु को सिद्ध करने के उपयोग में न लायी जा सके।

आधुनिक काल के महान संगीतज्ञों में ऐसे बहुतेरे ह, जिनकी चितना अपनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कला-रचना की अवधि में किसी उच्चतर चेतना के संस्पर्श में आ जाती थी। बेलजियम के प्रख्यात संगीतज्ञ सीजर फ्रेंक एक प्रेरित व्यक्ति की तरह ऑरगन बजाते थे; वे अन्तरात्मा के जीवन के प्रति खुले हुए थे और उनको इस बात का सचेतन ज्ञान था और वे बहुत अंश तक इस जीवन को अपने वादन द्वारा अभिव्यक्त करते थे। विथोवेन ने जब नौवीं सिम्फनी की रचना की थी, तब उनको किसी ऊर्ध्व लोक की ओर अपना उद्घाटन होने और इस पार्थिव भूमिका पर किसी ऊर्ध्व लोक के उतर आने का दर्शन हुआ था; प्रख्यात जर्मन संगीतज्ञ वाग्नर को सूक्ष्म लोकों से बलवान और शक्तिशाली सूचनाएँ मिलती थीं। उनको सूक्ष्म गुह्य विद्या का सहज ज्ञान था और सूक्ष्म जगत का उन्हें भान होता था और इसके द्वारा ही उनको महत्तम प्रेरणाएँ प्राप्त हुई थीं। किन्तु उनकी रचनाएँ ज्यादातर प्राणमय भूमिका पर से ही होती थीं और उनका मन उनकी प्रेरणाओं में लगातर हस्तक्षेप करता रहता था तथा उनको यांत्रिक कर डालता था। उनकी रचना का अधिकांश भाग शक्तिशाली होते हुए भी बहुत अधिक क्लिष्ट, अस्पष्ट और मिश्रित हुआ करता था। लेकिन जब कभी वे प्राणमय और मनोमय भूमिका को अतिक्रान्त कर किसी उच्चतर लोक में पहुँच सके थे, तब उन्हें जो थोडी-सी झलक मिली थीं, उनमें असाधारण सौंदर्य था। यह सौन्दर्य उनके 'पार्सिफाल' नाटक के संगीत में, उनकी 'टीस्टन' और 'हस्युस्टी' नामक प्रेमकथाओं के संगीतांशों में और 'लास्ट ग्रेट एक्ट' में अभिव्यक्त हुआ है।

मन के बहुत ऊपर एक लोक है, जिसे हम सामंजस्य का लोक कह सकते हैं। यदि तुम वहाँ पहुँच सको तो आज तक जितना भी सामजंस्य किसी भी रूप में पृथिवी पर प्रकट हुआ है, उसका मूल तुम्हें वहाँ मिलेगा। उदाहरण के लिए बाकी की गतों और विथोवन की गतों को ले लो, ये दो संगीतज्ञ इस जगत में आगे पीछे आये और उन्होंने जो कुछ रचनाएँ कीं, उसके पीछे संगीत की एक ही धारा, जिसमें कि कतिपय सर्वोत्तम स्वरों का प्रयोग हुआ है, पायी जाती है। इन दोनों गुणियों की स्वरलिपि एक नहीं है, और इनकी गतें बाहरी कानों को भी अलग-अलग सुन पड़ती हैं, किन्तु सार रूप से ये हैं एक ही। चेतना के बिलकुल एक ही प्रकार के कंपन ने, अर्थपूर्ण सामंजस्य की एक ही लहर ने इन दोनों कलाकारों को स्पर्श किया था। इस कंपन और लहर को विथोवन बाक की अपेक्षा कुछ अधिक पकड़ सके थे,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किंतु उनके अंदर ये उनके अपने मन की कल्पनाओं और क्षेपकों द्वारा अधिक मिश्रित हुए; बाक कुछ कम पकड़ सके, किंतु जो कुछ भी उनकी पकड़ में आया, उसको उन्होंने अधिक शुद्ध रखा। जिस कंपन को इन लोगों ने ग्रहण किया, वह चेतना के विजयात्मक निष्क्रमण का कंपन था, चेतना अचेतना के गर्भ को फाड़ कर विजयात्मक रूप में ऊपर उठ रही थी, जन्म ले रही थी।

योग के द्वारा यदि तुम इस लोक में जहाँ से सभी कलाएं जन्म लेती हैं, पहुँच सको तो तुम सभी कलाओं के स्वामी बन सकते हों, यदि तुम वैसी इच्छा करो। पहले जो लोग वहाँ गये होंगे, उन्होंने वहाँ जो कुछ दिव्य सौन्दर्य और दिव्य आनंद है उसको वहीं रह कर संभवतः अधिक सुखकर, अधिक प्रिय अथवा एक आनंदमय चैन से भरा हुआ पाया हो और उन्होंने वहाँ की वस्तु को यहाँ प्रकट करने, इस पार्थिव भूमिका पर मूर्त्तिमान करने की परवाह न की हो। परतु यह उदासीनता ही समस्त सत्य नहीं है, न यह योग का ही वास्तविक सत्य है; यह तो सन्यास के अधिक नकारात्मक भाव से पैदा हुई योग की गतिशील स्वतन्त्रता की विकृति है, उसका ह्रास है। भगवान का संकल्प प्रकट होने का है न कि सर्वथा अक्रियता और पूर्ण निश्चल-नीरवता में एकांतवास करने का; यदि भागवत चेतना वास्तव में कोई ऐसी चीज होती, जो अप्रकट रहनेवाले आनंद की अक्रियता ही हो, तब तो किसी प्रकार की कोई सृष्टि ही न हुई होती।

★

[कुलपति का पत्र : पृष्ठ ८ का शेष]

अंग्रेजों को यह स्मरण नहीं रहा कि संसार में उनके प्रभाव को बनाये रखने में राष्ट्रमंडल ही सबसे अधिक सहायक है और भारत ही उसका सबसे धनी आबादीवाला और सर्वाधिक शक्तिशाली सदस्य है।

हम इतने अपरिपक्व नहीं है कि क्रोधावेश में राष्ट्रमंडल से अलग हो जायँ; परन्तु जो कुछ हुआ है, उसके बाद हम राष्ट्रमंडल संगठन का भारत के विरुद्ध अनुचित लाभ उठाये जाने के प्रति सदा सावधान रहेंगे।

हमारा राष्ट्र परिपक्व है; हम कुछ भी सोचेविचारे बिना नहीं करेंगे; परन्तु जो कांटा हमारे दिल में गड़ गया है, उससे भारत और ब्रिटेन के सम्बंध पहले जैसे तो अब कभी नहीं रह पायेंगे।

—आपका

के० एम० मुन्शी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

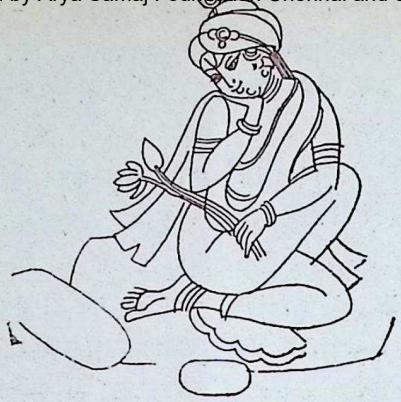

पाँच भक्ति-गीत

रवीन्द्रनाथ ठाकुर

[१]

वैराग्य साधन की मुक्ति नहीं मुक्ति मेरी।
असंख्य बंधनों में महानन्द पाऊँगा
मुक्ति का स्वाद मैं। इसी वसुधा का
मृत्तिका का पात्र यहाँ भरकर बारम्बार
तेरा यह अमृत बहायेगा अविरत
नाना वर्ण गन्धमय। प्रदीप के समान
समस्त संसार मेरी लक्ष वर्तिका में
प्रकट कर देगा ज्योति तेरी सौ शिखाओं में
तेरे इस मन्दिर में
बन्द कर द्वार इन्द्रियों के
बैठूं योगासन साध? नहीं नहीं यह न होगा।
जो कुछ आनन्द है दृश्य में, गन्ध में, गान में
तेरा ही आनन्द मानूं उस सबमें सर्वदा।
मोह मेरा होगा मुक्ति रूप में प्रज्वलित
प्रेम मेरा होगा भक्तिरूप में विकसित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२]

मेरे अंग अंग में तेरा ही शुभ स्पर्श
अंकित हो रहा है दिवा रात्रि,
प्राणेश्वर, इस बात को करके सदा स्मरण
रखूंगा पवित्र मैं सदा अपने अंगों को
हे परमज्ञान मन में तुही है विराजमान,
इस बात को न भूल कभी अपने सर्वध्यान
चिन्तन से मैं मन्थन, प्रयत्न करके
सर्व मिथ्या का कर दूंगा परिहार
हृदय में रहा है सदा तेरा अचल आसन
इस बात को करके स्मरण सदा
मैं निकाल बाहर करूँगा मन से
सकल कुटिल द्वेष, सर्व अमंगल;
प्रेम को रक्खूंगा करके प्रस्फुट निर्मल
सर्व कर्म में विराजमान तेरी ही अपार शक्ति
जानकर यह सर्व कर्म में करूँगा तेरा ही प्रचार।

[३]

मेरे इस शरीर की शिरा शिरा में
जो प्राण तरंग माला रात दिन संचारित
यही प्राण दौड़ जाता विश्व दिग्विजय को
यही प्राण अपरूप छंद ताल लय में
नाच रहा जीवन में, यही प्राण चुपचाप
वसुधा की मृत्तिका के प्रति रोम-कूप में
लक्ष लक्ष तृण-तृण में संचारित हर्ष से
विकसित पर्ण, पुष्पों में, बरस रहा अनिर्वार
विश्वव्यापी जन्म मृत्यु समुद्र हिंगेले पर
झूला करता अंतहीन ज्वार और भाटे में
करता हूँ मैं अनुभव, वह अनन्त प्राण
अंग अंग में मानों मुझे कर देता है महान्।
यही युगयुगान्तर का विराट स्पन्दन
मेरी इस नाड़ी में कर रहा है आज नर्तन।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[४]

हे अनन्त, जहाँ हो तुम धारणा अतीत
वहाँ से सदा आनन्द का अव्यक्त संगीत
झरकर बहता है यहाँ अदृश्य अगम
हिमाद्रिशिखर से जाह्नवी के समान।
वह ध्यानाभ मेरी श्रृंग जहाँ स्वर्णलेखा
अंकित हुई थी जगत के प्रातःकाल में प्रगाढ़
आदि अंधकार में, जहाँ रक्त छवि
अस्त पाता है जगत का भ्रान्त सन्ध्यारवि
नव नव भुवनों की ज्योतिर्वाष्प राशि
पुंज पुंज नाहारिका जिसका वक्ष परसकर
घूमती हैं सर्जन-वेग से मेघखंड के समान
युग-युगान्तर में, चित्त-वातायन अपना
वह अगम्य और अचिन्त्य प्रतिदिन रात्रि,
रखूंगा उन्मुक्त कर, हे अन्तविहीन।

[५]

हे दूर से दूर, हे निकटतम
जहाँ तू है निकट, वहाँ तुझे मानूंगा अपना
जहाँ तू है सुदूर वहाँ मानूंगा अपने को तेरा।
पास है तू है रे, नाना भाव से नित्य नव नव
सुख दुःख में, जन्ममरण में, तेरा गान
जल स्थल शून्य से करता है आव्हान मेरा
सर्व कर्म में, बजता है गूढ़ स्वर में
पहर पहर में चित्त के कुलील अन्तराल में
तेरा यह मंगल मंत्र।
तू है दूर जहाँ आत्मा लुप्त करके
सर्व तर भूमि वहाँ, तेरे इस निःसीम में
पूर्णानन्द भरा कर देता अपनाही निःशेष अर्पण
पास आत्मा तटिनी का तू है कर्म तट
दूर तू है शान्ति-सिन्धु अनन्त गभीर।

अनु. ऐन्द्रिला

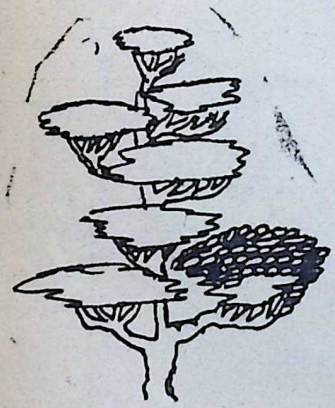

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवीनतम प्रकाशन

(स्वामी विवेकानन्दकृत)

: सचित्र : ● : आकर्षक रंगीन जैकेटसहित :

वेदान्त : रु. २.००

वेदान्त का स्वरूप, उसमें निहित महान् जीवनदायी तत्त्वसमूह, व्यक्ति एवं समाज के सर्वांगीण विकास में उसकी उपादेयता, मानव की संस्कृति और सभ्यता पर उसका महत्त्वपूर्ण प्रभाव आदि विषयों पर स्वामीजी के स्फूर्तिदायक भाषणों का संग्रह।

धर्मतत्त्व : रु. १.७०

इस पुस्तक में स्वामीजी ने धर्मतत्त्व की सम्पूर्ण वैज्ञानिक, युक्तियुक्त व्याख्या की है, साथ ही धर्म का अन्तिम लक्ष्य, उस लक्ष्य तक पहुँचने के प्रधान साधन आदि का भी स्पष्ट दिग्दर्शन कराया है।

भगवान श्रीकृष्ण और भगवद्गीता : रु. १.७०

आत्मतत्त्व : रु. १.३०

इस पुस्तक में स्वामीजी ने आत्मा के स्वरूप, उसके बन्धन और मुक्ति का विवेचन किया है और दर्शा दिया है कि द्वैत, विशिष्टाद्वैत और अद्वैत मत परस्पर-विरोधी नहीं, अपितु परस्पर पूरक हैं।

भारत का ऐतिहासिक क्रमविकास एवं अन्य प्रबन्ध : रु. १.३०

नारदभक्तिसूत्र एवं भक्तिविषयक प्रवचन और आख्यान रु. १.००

ज्ञानयोग पर प्रवचन : ९० पैसे

उपनिषद् तथा भगवद्गीता के आधार पर ज्ञानयोग का विवेचन।

सूक्तियाँ एवं सुभाषित (पाकेट साइज) : रु. १.००

स्वामीजी के दिव्य व्यक्तित्व और बहुमुखी प्रतिभा के कारण उनकी प्रत्येक सूक्ति और सुभाषित मौलिक विचारपूर्ण और जीवनदायी हैं।

भगवान बुद्ध का संसार को सन्देश एवं अन्य व्याख्यान और प्रवचन (छप रहा है)

श्रीरामकृष्ण आश्रम (भा), धन्तोली, नागपुर--१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने साथियों के बीच शचीन दा' के नाम से प्यारे, स्वर्गीय शचीन्द्रनाथ सान्याल, केवल क्रान्तिकारी विप्लव-पुरुष ही नहीं, गंभीर विचार-पुरुष भी थे। भारतीय क्रान्तिकारी आन्दोलन के जहाँ वे एक वह्निमान मशालची थे, वहाँ अपने कठोर कारावास की बन्दिनी घड़ियों में बैठ कर, उन्होंने वर्तमान जीवन-जगत की सर्वतोमुखी समस्याओं पर अतलगामी मौलिक चिन्तन भी किया था। उनका प्रस्तुत लेख, हमें विश्वास है, हमारे देश की प्रबुद्ध आधुनिक पीढ़ी को सही मार्गदर्शन कराने में एक अमूल्य योगदान साबित होगा।

आधुनिक विज्ञान और हिन्दू धर्म

शचीन्द्रनाथ सान्याल

[लेखांक : ४ :]

विश्व की अन्तिम अवस्था के बारे में भी वैज्ञानिकों में मतभेद है। सब वैज्ञानिक इस बात को स्वीकार नहीं करते हैं कि ऐसा दिन भी आयेगा, जिस दिन से विश्व संसार अणु-परमाणु के रूप में प्रायः स्पन्दनहीन अवस्था में एकरस होकर अत्यन्त शीतल अवस्था में अनन्त काल के लिए पड़ा रहेगा। वर्तमान अवस्था को देखकर हमें अनिवार्य-रूप में यही कहना पड़ता है कि विश्व संसार में एक ओर प्रचण्ड तेज घनीभूत अवस्था में विद्यमान है; और दूसरी ओर अनन्त दिशा में अल्प तेज एवं अत्यधिक हिम दिगन्त तक परिव्याप्त है। तो सर्व-प्रथम साम्य अवस्था से वैषम्य की उत्पत्ति कैसे हुई, एवं यदि साम्य अवस्था से वैषम्य की उत्पत्ति हो सकती है तो पुनः वैषम्य से साम्य अवस्था को प्राप्त होने के बाद विश्व का फिर पूर्ववत् विकास होना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

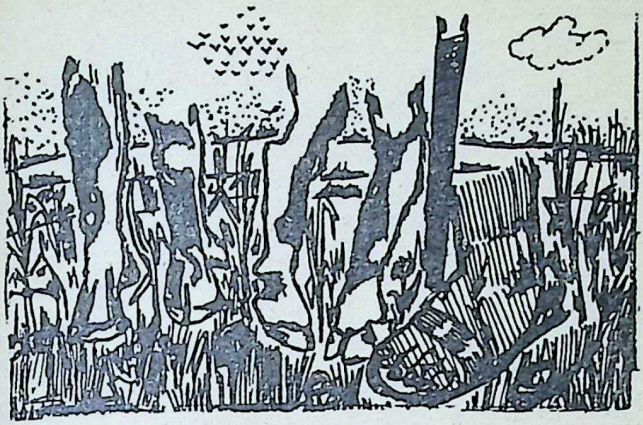

क्या सम्भव नहीं है? कुछ वैज्ञानिक ऐसा भी कहते हैं कि विश्व का एकान्त रूप में लय होना कभी सम्भव नहीं है; कारण, एक ओर प्रलय की जैसी सूचना जान पड़ती है, उसी प्रकार दूसरी ओर नवीन सृष्टि का भी परिचय मिलता है। 'जीन्स' मिलकिन' आदि के ग्रन्थ पढ़ने से इस बात का पता मिल सकेगा।

आधुनिक विज्ञान भी अपना मत समय-समय पर परिवर्तन करता रहता है। अभी कुछ दिन पहले भी विज्ञान का कहना था कि चन्द्रलोक में वायु अथवा जलीय बाष्प का अस्तित्व नहीं है। लेकिन आधुनिक खोज से यह मालूम पड़ता है कि सम्भव है चन्द्रलोक में भी बाष्प का अस्तित्व हो; कारण हूबहू एक ही अवस्था में एवं सम्वत्सर के एक ही समय में, चन्द्रलोक में स्थित कुछ नाले और खाईं के चिह्न कभी दिखायी देते हैं और कभी नहीं भी दिखायी देते। डाक्टर 'पिकरिंग' ने ऐसा अनुभव किया है कि चन्द्रलोक में कहीं-कहीं पर ऐसी चीज़ की उत्पत्ति होती है, जिसे वैज्ञानिकों ने आज भी यथार्थरूप में समझ नहीं पाया है। सम्भव है यह चीज़ उद्भिज्ज की तरह हो। चन्द्रमा में ताप अत्यन्त कम है। और उस हिम की अवस्था में भी उद्भिज्ज की उत्पत्ति होनी सम्भव-सी जान पड़ती है।

आज कल यह पता चला है कि 'हीलियम नामक बाष्प की द्रवीभूत अवस्था में भी जैविक पदार्थ जीवित रह सकता है एवं वंशवृद्धि कर सकता है। 'हीलियम' की द्रवीभूत अवस्था बर्फीली ठण्डक से से भी अधिक ठण्डी है। इससे यह भी अनुमान करना असंगत न होगा कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चन्द्रलोक में भी उद्भिज्ज अथवा जैविक अणुओं का अस्तित्व है।

विज्ञान अभी उन्नति के मार्ग पर द्रुत गति से बढ़ रहा है। विज्ञान की अधूरी बातों को लेकर अन्तिम दिन के प्रलय का चित्र खींचना कहाँ तक युक्तिसंगत है? इसी बात को ले लीजिए, हम सबों ने किसी न किसी समय में यह देखा होगा कि आग के ऊपर पानी चढ़ाने से, आग की गर्मी पानी में आ जाती है, न कि पानी में जो कुछ थोड़ी सी भी गर्मी रही हो, वह भी आग की गर्मी में चली जाय और पानी अधिक ठण्डा हो जाय। और इस प्रकार से पानी बर्फ़ हो जाय, अर्थात् जब दो पदार्थ पास-पास हों, जिनमें एक पदार्थ दूसरे पदार्थ से अधिक गर्म हो, तो यही देखा गया है कि अधिक गर्म वस्तु अपनी गर्मी को छोड़ देती है, और अपेक्षाकृत अल्प गर्म वस्तु उस गर्मी को पाकर अधिक गर्म हो जाती है। यही साधारण नियम है। इसी नियम के अनुसार विश्व में, जहाँ एक ओर तेज़, घनीभूत अवस्था में उपस्थित है, और दूसरी ओर अनन्त दिशा में 'हिम' प्रसारित है। घनीभूत तेज़ क्रमशः अपने ताप को अनन्त दिशा में विकीर्ण करते-करते अन्त में ऐसी अवस्था को उत्पन्न करेगा, जिस समय समस्त विश्व एकदम शीतल हो जायेगा। कुछ वैज्ञानिक गण ऐसा अनुमान करते हैं, लेकिन आश्चर्य की बात है कि इस नियम का भी व्यतिक्रम होता है। जगत् प्रसिद्ध जर्मन वैज्ञानिक श्री 'मेक्स प्लांक' ने 'विज्ञान किस ओर' नामक पुस्तक में ऐसा लिखा है कि यदि दो पदार्थ पास-पास लगे हुए हों, जिनमें एक पदार्थ दूसरे पदार्थ से अधिक गर्म हो, तो अधिक गर्म पदार्थ से गर्मी निकल कर अल्प गर्म पदार्थ में जाती रहेगी, एवं एक समय दोनों पदार्थ समानरूप से गर्म हो जायेंगे; और बाद को जो पदार्थ पहले अल्प गर्म था, वह अधिक गर्म हो जायेगा। अर्थात् ऐसा भी सम्भव है कि अधिक गर्म पदार्थ अपेक्षाकृत अल्प गर्म पदार्थ को अपनी गर्मी न देकर, उससे गर्मी को अपनी ओर खींच ले। लेकिन 'प्लांक' साहब कहते हैं कि यह आख़िरी नियम उसी समय लागू है, जब कि गर्मी का परिमाण अल्प हो।

बहुत से वैज्ञानिक ऐसा भी समझते हैं कि विश्व एक दफ़े लय को प्राप्त होगा, और फिर उसका विकास होगा एवं पुनः वह लय प्राप्त होगा। इस प्रकार अनादि काल से लेकर अनन्त काल तक विश्व का विकास और लय, लय और विकास होता रहेगा। इस सिद्धान्त के साथ हिन्दू सिद्धान्त का एकदम मेल है। और ऊपर इसके बारे में जितनी आलोचनाएँ की गयी हैं, उनसे यही परिणाम निकालना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युक्तिसंगत एवं स्वाभाविक है।

(देखिए–The Frontiers of Science by Chase p. 333—the human embryo—exists during the first few hours of its life in the entire absence of available oxiygen')

आधुनिक जीव विज्ञान से यह भी पता चला है कि भ्रूण के विकास के समय आदि में आक्सिजन के अभाव में भी प्राण का विकास होना सम्भव है। यदि दो–तीन घण्टे के समय तक भी आक्सिजन के अभाव में जीव का जीवित रहना सम्भव है तो अवस्था विशेष में क्या यह समय और अधिक बढ़ नहीं सकता?

अब हमें यह भी देखना है कि वैज्ञानिक प्रणाली किसे कहते हैं, एवं वैज्ञानिक प्रणाली को छोड़ कर और भी कोई प्रणाली है या नहीं, जिसकी सहायता से विश्व के ज्ञान को हम अव्यर्थ एवं अभ्रान्त रूप से प्राप्त कर सकें। वैज्ञानिक खोज की सफलता के कारण आज मनुष्य के हाथ में अद्भुत एवं प्रचण्ड शक्ति आ गयी है। उस शक्ति के मोह में पड़ कर हम विज्ञान के कुछ पहलू के प्रति ही आकृष्ट हो रहे हैं। बहुत से लोग ऐसा समझते हैं कि ऐकान्तिक युक्ति के मार्ग पर चल कर ही आधुनिक विज्ञान ने यह अद्भुत सफलता प्राप्त की है। लेकिन यह बात सत्य नहीं है। यदि युक्ति के मार्ग का अवलम्बन करने पर ही अभिनव वैज्ञानिक आविष्कार सम्भव हो सकता, तो आज तक विज्ञान अन्तिम अवस्था को प्राप्त कर चुका होता। कारण यह कि यदि युक्तिपरम्परा की सहायता से ही हम चलते तो हमें किसी भी स्थान पर रुकना नहीं पड़ता। लाखों वैज्ञानिक आविष्कार नित्य प्रति होते रहते। लेकिन ऐसा नहीं होता। इसका कारण यह है कि वैज्ञानिक खोज युक्ति पर ही निर्भर नहीं करता। हमें युक्ति से सहायता अवश्य मिलती है। सहायता लेने वाला, अपने अभीष्ट साधन के लिए युक्ति को काम में लाने वाला व्यक्ति, 'युक्ति' से अधिक महत्व रखता है। युक्ति तो व्यक्ति का यंत्र मात्र है। परीक्षा करने की रीति भी, वैज्ञानिक प्रणाली का एक उपयोगी अंश होते हुए भी, श्रेष्ठ अंश नहीं है। परीक्षा करने की रीति को छोड़ कर तो विज्ञान की उन्नति होती ही नहीं। इस बात में कोई सन्देह नहीं है। तथापि यदि हम थोड़ा सा भी ध्यान दें, तो समझ सकते हैं कि परीक्षागार में खड़े होकर हमें यह निर्णय करना पड़ता है कि किस बात की परीक्षा करें। परीक्षा करने के पहले तो विषय निर्वाचन करना पड़ेगा। यह विषय निर्वाचन हम किस प्रणाली से एवं कैसे करेंगे? जिस प्रश्न को लेकर हम अनुसन्धान करने को प्रवृत्त होंगे, परीक्षा के फल में उसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्न के प्रत्युत्तर की आशा हम कर सकते हैं, क्या इस बात की परीक्षा वैज्ञानिकों ने की है कि जड़ के अन्दर चेतन वस्तु भी है? श्री जगदीश बोस', अध्यापक 'क्रुक्स' इत्यादि दो-चार वैज्ञानिकों को छोड़ कर इस बात की खोज करने की चेष्टा किसी ने भी नहीं की। मैं इस स्थान पर मनोविज्ञान अथवा जीव विज्ञान के बारे में कुछ नहीं कह रहा हूँ। अभी कुछ थोड़े ही दिनों से मनोवैज्ञानिक एवं जीववैज्ञानिक गण उपरोक्त बात की परीक्षा भी करने लगे हैं।

दूसरी बात यह है कि परीक्षा की विषय-वस्तुएँ अनन्त हैं। उनमें से कुछ विषयों को लेकर ही वैज्ञानिकगण परीक्षा करते हैं। जिस विषय की खोज करनी है, उसके बारे में एक धुंधली-सी धारणा परीक्षक के मन में अवश्य रहती है। परीक्षा की सहायता से वैज्ञानिक यह देखना चाहता है कि उसकी धुंधली-सी धारणा कहाँ तक सत्य है और कहाँ तक नहीं। परीक्षक के मन में यह धुंधली-सी धारणा सर्वप्रथम कैसे आती है? कुछ प्रचलित धारणाएँ अवश्य पहले से ही मनुष्य के मन में रहती हैं, चाहे वह कितनी ही भ्रमात्मक क्यों न हो। अर्थात् कुछ भ्रमात्मक धारणा को लेकर ही परीक्षा प्रारम्भ होती है। लेकिन स्मरण

झंडा ऊँचा रहे हमारा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहे कि कोई भी धारणा एकदम भ्रमात्मक नहीं होती। प्रत्येक धारणा में कुछ सत्य का अंश भी रहता है। यदि कोई वैज्ञानिक प्रचलित धारणा के विपरीत नवीन कल्पना नहीं कर पाता, तो उसको सफलता प्राप्त नहीं हो सकती। नवीन से नवीन कल्पना करने की शक्ति वैज्ञानिकों की सफलता का मूल कारण है। किन्तु केवल कल्पनाशक्ति रहने से ही काम नहीं चलता। कल्पना को परीक्षागार में जाँच करके, स्थूलरूप में, पार्थिवरूप में, अथवा सूक्ष्मरूप में, इन्द्रिय ग्राह्य रूप में, उसे अनुभव कर लेना वैज्ञानिक का काम है। बिना परीक्षा किये किसी बात को मान लेना विज्ञान विरुद्ध बात है। केवल युक्ति के मार्ग से कोई बात सिद्ध नहीं हो सकती। इसलिए परीक्षा की आवश्यकता है। किसी बात की परीक्षा का अर्थ है, उसे साक्षात् रूप में अनुभव कर लेना। लेकिन परीक्षा के पूर्व, परीक्षक के मन में कुछ धारणा अवश्य होनी चाहिए। उस धारणा की पुष्टि के लिए ही परीक्षा की जाती है। परीक्षा के परिणाम में उस धारणा को हम ग्रहण भी कर सकते हैं, त्याग भी कर सकते हैं। किसी विशेष धारणा के अभाव में कोई परीक्षा सम्भव नहीं है। यह कल्पना, यह धारणा, परीक्षक के मन में कैसे उत्पन्न होती है? वैज्ञानिक खोज की मर्मकथा यहीं पर है। प्रथम तो किसी विशेष विषय में आज तक जितनी परीक्षाएँ हुई हैं, परीक्षक को उनसे परिचित होना आवश्यक है। लेकिन इससे भी काम नहीं चल सकता। नयी खोज तभी हो सकती है, जब नूतन के प्रति हम ध्यान दें। नूतन कल्पना की सृष्टि करना, नूतन सिद्धान्त को ध्यान में ले आना, यही प्रतिभा का काम है।

पर्यवेक्षण के फलस्वरूप, केवल-मात्र घटना के संग्रह करने से ही, विज्ञान की उन्नति नहीं होती है। प्रत्येक घटना को एक संयोग सूत्र से ग्रथित करके, उन घटनाओं को एक-एक रीति के, एक पद्धति के अन्तर्गत कर लेना, वैज्ञानिक उन्नति के मूल में प्रधान बात है। 'टाइको ब्राही' ने अद्भुत अध्यवसाय के साथ अनेक घटनाओं का संग्रह किया था। लेकिन जिस समय 'केपर' ने उन्ही घटनाओं के आधार पर एक नवीन सिद्धान्त की स्थापना की, तभी वैज्ञानिक जगत में युगान्तर उपस्थित हुआ। 'केपलर' के सिद्धान्त को लेकर ही 'न्यूटन' ने अपनी प्रतीभा के बल से वैज्ञानिक जगत में विप्लव मचा दिया। अवश्य यह भी सत्य है कि टोइको ब्राही' की संगृहीत घटनाओं के न मिलने पर 'केपलर' के लिए किसी नूतन सिद्धान्त की स्थापना

[शेष पृष्ठ २८ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक बंगला के एक आस्थाशील कविः सुभाष मुखोपाध्याय

●

रंगनाथ राकेश

नारिकेल वृक्षों, रतनारी-बड़री- कजरारी आंखों, बासमती धन-खेतों का शस्य श्यामल बंगाल—यह 'गौड देश' बड़ा ही विचित्र रहा है। जब मैं ये पंक्तियाँ लिख रहा हूँः यहाँ आकाश पनियारा हो उठा है।

वृद्ध वनिता के प्रलम्ब पयोधरों की भाँति बारिश लरज रही है—१५ वीं शती के संस्कृत कवि ने कहा थाः

अपगतरजोविकारा घनपटलाक्रान्ततारकालोका।
लम्बपयोधरभारा प्रावृडियम् वृद्धवनितेव॥

'तारावलियों का प्रकाश गर्द-ग़ुबार सने कजरारे बादरों ने ढंक लिया है यह बरसात बूढ़ी औरत के लटके स्तनों सी लगती है।' कितना जीवन सापेक्ष और रागात्मक अथच स्वस्थ काव्य है यह। प्रयोग भी अनूठा है। अश्लील नहीं, श्लील। श्री-युक्त।

बंगाल में आज जिस 'बुभुक्षित या भूखी पीढ़ी को समग्र ऐतिह्य इतिहास-बोध और परम्परा के रिक्थ के विरोध में बार-बार कदर्यतर धक्कामार भाषा में कॉफी हाउसों की टिनटिनाहटों और चार मीनार सिगरेट की दमघोंट खाँसी में उपस्थित किया जा रहा है, वह शायद एक 'क्रेज' है, वहशीपन है, आत्मरतिमूलक कुंठा (आटोयूरोटिक पर्वर्शन) है, अपने मानवीय अस्तित्व को गुबरैला समझ कर उस पर थूकना है। पर यह स्थिति पूरे बंगाल की नहीं, पांच छः तरुणों के सिरफिरेपन से प्रभावित सौ-डेढ़ सौ 'व्यक्ति-जन्तुओं, की हैं—जो माँ-बहन-पत्नी सबको औरत समझते हैं, जो रवींद्रनाथ की 'गीतांजलि' तीन रुपये में खरीद कर तीन आने में बेचते हुए यह चीख़ते हैः 'यह तो चवन्नी की भी चीज़ नहीं है—यारों, तुम लोग भी अहमक़ हो!' जो असंयम, निषेध, वर्जना, कुत्सा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और कदर्यता को ही अपना जीवन-दर्शन समझते हैं, पर इनके पास 'जीवन-दर्शन' है ही नहीं—काश, इन्होंने अल्बेयर कैम्यूं की तरह भला 'व्यर्थता' को ही तो समझा होता, काश, ये मसीहा समझ पाते 'एकांत स्वाधीनता के सदृश्य महत्तर दासत्व और कुछ नहीं है ।

'1, affreux esclavage que d'etre a soi'

सोरेन किर्केगार्ड, फ्रांज काफ्का, अल्बेयर कैम्यूं अथवा जीन पाल सार्त्रे में एक सुचिन्तित दार्शनिक इकाई है। कैम्यूं और सार्त्रे की रचनाओं में भोगा हुआ दो विश्वयुद्धों का संत्रास (हॉरर) है वह ओढ़ा हुआ दर्शन नहीं हैं। यहाँ की हालत अज़ीबोगरीब है, यार लोग 'प्रतिबद्धता' की ऊँची बातें करते हैं, शोर-शराबा मचाते हैं, जमीन आसमान का कुलाबा एक करने की कोशिश करते हैं—पर अर्थहीन छूँछे शब्दों की भूसी उड़ाने से क्या होगा? निषेध, वर्जना, व्यभिचार, कदर्यता, सडांध और गजालत कभी भी जिन्दगी के मूल्य नहीं बन सकते, न कभी बने थे, और न कभी बनेंगे।

मैं यह जानता हूँ कि विशिष्ट तापक्रम और दबाव के पड़ने पर कार्बन कोयला भी बनता है और हीरा भी। प्रकृति में खालीपन या शून्य की स्थिति कभी भी नहीं रहती, शून्य हुआ कि एक तूफान हहर उठता है। बंगाल की आस्थाशील चेतना पज़्मुर्दा नहीं हुई है, उसका काया-कल्प हुआ है सुभाष मुखोपाध्याय में। रवीन्द्रनाथ ने 'कल्पना' संग्रह की प्रथम कविता 'दुःसमय' में प्रबलतम आस्था से 'चरैवेति' के मूल-स्वर का विजय-घोष किया था:

'ओरे भय नाइ, नाइ स्नेहमोहबन्धन,
ओरे आशा नाइ, आशा शुधु मिछे छलना।
ओरे भाषा नाइ नाइ वृथा ब'से क्रन्दन;
ओरे गृह नाइ, नाइ फूल-शेज रचना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आछे शुधु पाखा, आछे महानभ-अंगन
उषा–दिशाहारा–निबिड़ तिमिर आंका
ओरे विहंग, ओरे विहंग मोर
एखनि, अंध, बंध कोरो ना पारवा

मानवीय जिजीविषा और संघर्षशीलता ही रवीन्द्रनाथ का विहंग है। १८९७ की लिखी यह कविता आज ६८ वर्षों बाद भी आस्था की दृष्टि से कितनी ताजी है!! 'ओ मेरे पंखी! तेरे डैने हैं, यह महाकाश प्रांगण है, क्लान्त-विलन्न मत हो, अंधे, अभी अपन डैने मारता चल, मारता चल।' चरैवेति! चरैवेति!! चरैवेति!!! हेमिंग्वे के बूढ़े मछेरे की याद आती है मुझे। आस्था की रोशनी का एक कतरा करोड़ों टन अंधकार को चीर सकता है, जीवन सदैव मृत्यु से बड़ा है।

१९६४ में सुभाष मुखोपाध्याय को साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला है 'जतो दूरेइ जाइ' उनके काव्य ग्रंथ पर, पुरस्कार मिला है इसलिए नहीं, बल्कि सुभाष सम्पूर्ण बंगीय काव्य-चेतना के नाभिकेन्द्र का प्रतिनिधित्व करता है, इसलिए लिख रहा हूँ। मुगालता न हो इसीलिए साफ-साफ कहा दिया।

शस्यश्यामल 'सोनार बाङ्गला' का प्यारा कलकत्ता! जुलूसों का शहर कलकत्ता, विरोधाभासोंका शहर कलकत्ता-डलहौजी-पार्क स्ट्रीट-चौरंगी का कलकत्ता और बिलबिलाती बस्तियों का कलकत्ता–एशिया का विराटतम, बृहत्तम नगर कलकत्ता। जहाँ फास्फोरस की तरह भक्-भक् जल रहा है पाप-बोध, उसी कलकत्ते में एक आस्था-शील चेतना का जनवादी स्वर उभरता है:

आमि जतो दूरेइ जाइ
आमार संगे जाय
ढेउएर माला गाँथा
एक नदीर नाम––
आमि जतो दूरेइ जाइ।

('जतो दूरेई जाइ' ,पृ. १६)

जन-चेतना की यह नदी सुभाष के साथ सदैव सम्पृक्त रही है। सामाजिक यथार्थ-वाद (शोसलिस्ट रियलिज्म) का वह हिमायती शुरू से ही था। १९४० में प्रकाशित 'पदातिक' काव्य संग्रह की एक कविता में-'दिनेर कविता' के पंक्त्यांश दे रहा हूँ:

प्रिय, फूल खेल बार दिन नय अद्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्वंसेर मुखोमुखि आमरा,
चोखे आर स्वप्नेर नेइ नील मद्य
काठफाटा रोद सेंके चामड़ा।
चिमनीर मुखे शोनो साइरेन-शंख,
गान गाय हातुड़ि ओ कास्ते,
तिल-तिल मरने ओ जीवन असंख्य
जीवन के चाय भालोबासते।.....

—'प्रिय, आज फूलों से खेलने का दिन नहीं, हम लोग ध्वंस के सम्मुख हैं, आँखों में स्वप्न की वह नीलवारुणी अब नहीं, काठ-चीरनेवाली धूप-सिंका यह चमड़ा।

'चिमनी के मुख से साइरन-शंख-नाद सुनो, हथौड़े हँसिए गीत गा रहे हैं। तिल-तिल मौत में भी जीवन असंख्य जीवन को प्यार करता है।'

आखिर विश्वास भी एक प्रत्यय है, जीवन्त प्रत्यय (लिविंग कॅन्सेप्ट) जिस पर जिया जाता है, जिस आस्था पर हम प्राणों की बाजी लगा दें वह आस्था स्वयं में ऐशी है, ईश्वर है।

'मुखुज्येर संगे आलाप' कविता में मुखर्जी महाशय को कवि संदेश दे रहा है:

....ध्वंसेर चेये सृष्टिर,
अन्धकारेर चेये आलोर दिकेइ
पाल्ला भारी हॅच्छे।
—'जतो दूरेइ जाइ,' पृ. ५५

—ध्वंस की तुलना में सृष्टि का और अन्धकार की तुलना में प्रकाश का ही पलड़ा भारी पड़ता है। इसमें किसे सन्देह हो सकता है? तथाकथित 'भूखी पीढ़ी' के फूटपाथी-पैगंबरों को! सूर्य को अगर उलूक नहीं देख पाए तो क्या दिन को अंधेरा ही मान लिया जाएगा उलूकोतर प्राणियों द्वारा? हाय रे! अत्याधुनिकता और अति-नावीन्य की सनक!!

काल-चेतना का बड़ा ही उदात्त, भव्यतर भाव-बोध है सुभाष में—

तार पर जे-ते जे-ते जे-ते
एक नदीर संगे देखा।
पाये तार घुङुर बाँधा
परने
उङ-उङ ढेउयेर
नील घागरा।
से नदीर दुदिके टुटो मुख।
एक मुखे से आमाके आसछि बोले
दाँड़ करिए रेखे
अन्य मुखे
छुटते-छुटते चले एलो।.....
बुझिए दिलो
आमि थेके ओ नेइ
ना थेके ओ आछि।
आमार काँधेर ओपर हात राखलों
—'जेते जेते' ('जतो दूरेइ जाइ" संग्रहे)

यह काल-स्रोत का रूपक है। इस नदी का वस्त्राभरण उड़ता-उड़ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सा यह आकाशी घाघरा है, पांवों में अगर कोरे अंगूठे आङ्गुल रुनझुन-रुनझुन घुंघरु। दो-तरफा मुंह है इस समय नद का। एक मुंह से मुझे खड़ा करवा कर यह कहता है— 'आ रहा हूँ'—दूसरी ओर यह सरसराता चल देता है।.....मुझे समझा दिया कि मैं हो कर भी नहीं हूँ, नहीं हो कर भी हूँ। मेरे कँधे के ऊपर समय ने हाथ रख दिया।

मैंने प्रारम्भ में ही सम्पूर्ण बंगीय काव्य-चेतना के नाभि-केन्द्र के प्रतिनिधिरूप में सुभाष मुखोपाध्याय को लिया था और उसी सामग्रिक आस्थाशील चेतना की इकाई के रूप में सुभाष का विश्लेषणात्मक संश्लेषण भी मैं यहाँ कर रहा हूँ।

सुभाष की काव्यात्मक पकड़ आधुनिकतम है: यह भी द्रष्टव्य है:

आमि आमार भावनागुलो के
चामचे करे नाड़ाते थाकबो--
अन्य कोनो टेबिल थेके तुमि शुनो।
सामने दाँड़ करानो थाक्‌बे काँप
कुरुश काठिर मतो बुनबे
स्मृतिर जाल--
तुमि अन्य कोनो टेबिल थेके देखो।

—'मैं अपनी भावनाओं को चम्मच से हिलाता रहूँगा।
तुम दूसरी किसी मेज़ से सुनना (प्रिये),
मेरे सामने चाय-प्याली होगी, मेरी गोद
केऊपर दो उंगलियां कुरुश की तरह
यादों के फन्दे बुनेंगी, तुम दूसरी किसी
मेज़ से देखना।'

भीड़ के एक मुख की याद आती है—

मिछिले देखोछिलाम एकटि मुख
मुष्टिबद्ध एकटि शोनित हात
आकाशेर दिके निक्षिप्त!
विस्रस्त कएकटि केशाग्र
आगुनेर शिखर मतो हाउवाय कंपमान....

मैं जानता हूँ, आप भी जानते हैं—
यह मुष्टिबद्ध लहुलुहान हाथ आस्था का है, अनास्था का नहीं, नहीं, नहीं नहीं।...

★

[आधुनिक विज्ञान.....पृष्ठ २३ का शेष]

करना सम्भव न होता। तथापि यह और भी सत्य है कि किसी नूतन सिद्धान्त की परिकल्पना की सहायता न लेते हुए विज्ञान की उन्नति कभी भी नहीं हो सकती। घटनाओं के समावेश से ही सिद्धान्त की उत्पत्ति नहीं होती। एवं समय-समय पर किसी विशेष घटना के प्रति ध्यान न रखते हुए भी, अति नवीन, युगान्तरकारी वैज्ञानिक सिद्धान्त का उद्‌भव हुआ है। [समाप्त]

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गंगा मिली दो बार

अनिल कुमार

घाट की संगमर्मरी सीढ़ियों पर संध्याकाल
उसको देखा
जीवन में प्रथम बार
चौंक गया।
लावण्य का चटखारा,
यौवन की प्रखर धार
जीवन के पार का किनारा,
अँगों की चारुता, गोराई,
माँसलता अभिराम।
देखता ही रह गया थका-हारा।
—ग्लेशियर हूँ, हिमनदी।
बोली वह :
मुझको क्या घूर रहा बावले ?
भटकन का शिखर-जाल बर्फ़ीला
ऊपर रख,
धरती पर आयी हूँ।
आगे हैं बहुत काम, चलती हूँ।
चली गयी तेजी से
अविराम–अविश्रान्त।
सूरज का उदय-काल,
एकाएक नजर वहाँ ठहर गयी।
मैलभरे कपड़ों में
उछल पड़ा रूपाकार।
रूपवती इतनी पर गंदी क्यों रहती हो ?
—बोला मैं।
यह सब
थोड़े ही मेरा है ?
कहा उसनेः
कलुष यह सारा तुम्हारा है !
अंगों में भर लपेट
आँचल में सब समेट
जाती हूँ।
कूड़ाखाने में सागर के
छोड़-बहा आती हूँ।
चली वह—
बाँह धरी मैंने और टोक दिया,
रोका भी।
चलते ही बोली वह : नहीं, नहीं।
बहुत दूर सागर है।
आगे भी कई लोग
मैला मन, गंदा तन
तीर्थों में जोह रहे,
मुझको आराम कहाँ ?
नारी नहीं, नद थी गंगा
मुझे मिली दो बार—
एक बार शाम को रूपवती,
दुबारा सबेरे ही झाड़ू देती,
लेकिन यह मन देखो—
पूरा का पूरा वैसा ही लफंगा।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रान्तिवीर तात्या टोपे

शान्तिलाल तोलाट

१८५७ के स्वतंत्रता संग्राम में जो छुपे हुए नररत्न प्रकाश में आये, उनमें तात्या टोपे का नाम मुख्य है। भारत में अंगरेजी शासन का प्रतिकार करने में इस नरवीर ने जिस अनुपम संकल्प, बल और निर्भीकता का परिचय दिया, उससे विदेशी इतिहासकार भी प्रभावित हुए बिना नहीं रह सके, यद्यपि उसे 'बलवाखोर' का खिताब दिया गया। सन् सत्तावन के इस मुक्ति युद्ध में अनेक अज्ञात 'सिपाहियों' और प्रख्यात वीरों ने मातृभूमि की मुक्ति के लिए अपने जीवन की आहुति दी। इनमें तात्या टोपे का स्थान प्रमुख है, मात्र इसलिए कि स्वदेशभक्ति के सिवा और कोई स्वार्थ उनका नहीं था। 'सिपाही' तो सेना के भाग थे और अन्य नेताओं का कोई न कोई राजनीतिक अथवा व्यक्तिगत वैर-भाव अंगरेजों से था। फिर भी जब अन्य क्रान्तिकारी पराभूत हुए अथवा अंगरेजों से मिल गये, तब मात्र तात्या टोपे ही अंगरेजी शासन के विरुद्ध अकेले जूझते रहे।

इनका मूल नाम रघुनाथराव था और जन्म सन् १८१४ में हुआ था। महाराष्ट्र के इस देशस्थ ब्राह्मण का लालन-पालन पदच्युत पेशवा दूसरे बाजीराव की कचहरी में ब्रह्मावर्त में हुआ। इनके पिता पांडुरंग टोपे दूसरे बाजीराव के धर्मादा विभाग के वरिष्ठ अधिकारी थे। जिस वातावरण में इनका पोषण हुआ, उसकी प्रगाढ़ छाप इनके भविष्य पर पड़ी। दूसरा बाजीराव अर्थात् अंतिम पेशवा निर्माल्य व्यक्ति थे और उनकी मूर्खताओं के कारण ही मराठों को युद्ध में शिकस्त मिली तथा मराठा साम्राज्य का अंत हुआ। पिछले पेशवाओं का एक भी गुण इनमें न था, फिर भी अंतिम प्रतिभाशाली राजकर्ताओं में इनका स्थान अवश्य गणनीय था। स्वोपार्जित प्रतिभा के अभाव में पिछले पेशवाओं के पराक्रम के कारण अपने जीवनकाल में वे मराठा साम्राज्य के शेष प्रतिनिधि माने जाते थे। संवेदन-शील प्रकृत्ति के बालक रघुनाथ-तात्या टोपे-के लिए भव्य भूतकाल की स्मृतियों को भूल जाना सहज नहीं था। पदच्युत हुए पेशवापरिवार के अन्य बालकों—जिनमें से कइयों ने क्रान्ति में महत्वपूर्ण भाग लिया—के साथ लालन-पालन होने से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तात्या बचपन से ही विप्लवादि के रंग में रंग गये थे। बाजीराव के दत्तक पुत्र, नाना साहेब और उनके भाई बचपन से ही तात्या के मित्र थे और वे साथ-साथ ही खेले-कूदे थे। इनमें भविष्य में झांसी की रानी बननेवाली तेजस्वी कन्या 'छबीली' भी थी। ये सब समवयस्क मित्र समान स्वप्न देखने लगे।

बाजीराव का १८५१ में अवसान हुआ। उनके लिए शोक करने वालों की संख्या तो अधिक नहीं थी, इसके परिणामस्वरूप चौंकाने वाली घटनाएँ अवश्य घटीं। पिछले पेशवा ने अपार व्यक्तिगत संपत्ति एकत्र की थी, इससे बाजीराव को, जो वार्षिक भत्ता मिलता था, वह उनके दत्तक पुत्र नानासाहब को देना अंगरेजी सरकार ने बंद कर दिया। इससे अंगरेजों और नानासाहब के बीच जो संघर्ष हुआ, उसके उग्र राजनीतिक परिणाम निकले।

तात्या टोपे

आठ लाख रुपये का जो वार्षिक निवृत्ति वेतन उनके पिता को मिलता था, वह जब बंद हो गया, तब भी इसका लेशमात्र रंज नानासाहब को न था। उनकी अपनी स्थिति ठीक थी और उन्हें द्रव्य-लालसा भी न थी। परन्तु जिस बात पर उनका पुण्यप्रकोप प्रज्ज्वलित हो उठा, वह थी देशी राजाओं को कठपुतली के समान समझने वाली विदेशी शासन प्रणाली, जो अपने दिये गये पवित्र वचनों को भंग करने में जरा भी नहीं हिचकिचाती थी। स्वेच्छापूर्वक किये गये इस अन्याय को नानासाहब जैसा स्वाभिमानी व्यक्ति कभी भूल नहीं सकता था। इसके बाद उनके जीवन के सभी कार्य अपने पूर्वजों के गत ऐश्वर्य को पुनःप्राप्त करने के एकमात्र ध्येय से प्रेरित रहे। वे सुयोग्य अवसर की तलाश में थे। और ऐसा अवसर उन्हें १८५७ में क्रान्ति की ज्वालाओं के प्रज्ज्वलित होने पर अनायास ही मिल गया। अपने स्वाभाविक अधिकार से ही उन्होंने क्रान्तिकारी दलों का नेतृत्व संभाला।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विदेशी राज्यसत्ता के विरुद्ध नाना-साहब का जो रोष था, उसमें तात्या टोपे का कुछ भी स्वार्थ नहीं था। यदि वे भीरु होते तो कभी के अपने कुटुंब और अपने को बचाने के लिए नानासाहब का साथ छोड़ देते। परन्तु वे बचपन की दोस्ती के प्रति वफ़ादार रहे, क्योंकि जिन आदर्शों के लिए उनके मित्र युद्ध-रत हुए थे, उसकी सच्चाई में उन्हें पूर्ण श्रद्धा थी। वे स्वयं भी सच्चे दिल से मानते थे कि अंगरेजी शासन के नीचे प्रजा की हिम्मत और इज्जत नष्ट हो रही है। इतना ही नहीं, उनका स्वाभिमान भी कम होता जा रहा है। अपने देशवासियों को इस हीन दशा से उबारने के लिए इन्होंने निष्ठापूर्वक स्वातंत्र्य संग्राम में भाग लिया।

तात्या टोपे को सैनिक शिक्षा कभी नहीं मिली थी, फिर भी सरकारी सेवाओं के सामने जिस प्रकार का युद्ध उन्होंने किया, वह युद्ध कौशल से पूर्ण था। उनके जैसे आजन्म योद्धा को औपचारिक शिक्षा की आवश्यकता ही नहीं थी। क्रान्ति-कारी दलों के नेतृत्व की उनकी सुयोग्यता सर्व प्रकार से सम्पन्न थी। सर ह्यू रोज की प्रचंड सेना से घिरी हुई रानी लक्ष्मीबाई की टुकड़ी को बचाने क्रान्ति-कारियों के जिस महान दल ने झांसी को प्रस्थान किया, उसके सेनानायक तात्या टोपे ही थे। युद्ध में विजय उन्हें नहीं मिली, यह दुर्भाग्य की बात थी, न कि युद्ध-संचालन में उनकी अकुशलता का फल। उनके मातहत सिपाही अंगरेजों के सैनिक शिक्षा-प्राप्त सैनिकों की तुलना में बहुत कमजोर थे। ऐसे अशिक्षित कच्चे काफिले को भी उन्होंने अपने सुयोग्य नेतृत्व से युद्ध के लायक बनाया, यह काम कम महत्व का नहीं था।

अंगरेजों ने इनकी सेना को बार-बार पराजित किया। फिर भी तात्या टोपे को न तो वे पकड़ ही सके और न मार ही सके। प्रत्येक युद्ध के अग्रिम मोर्चे पर ये रहते थे, फिर भी बंदूक की गोली अथवा तलवार का घाव इन्हें धराशायी बनाने में असमर्थ रहा। इनका जीवन मानो दैवरक्षित था। अंगरेजी सेना के बीच से पराक्रमपूर्वक निकल कर रानी लक्ष्मीबाई ने ४ अप्रैल १८५८ की रात को तात्या टोपे से संपर्क साधा। क्रान्तिकारियों ने काल्पी पर अपनी सेनाओं की पुनर्रचना की; रावसाहब पेशवा और अन्य विप्लवी वीर भी यहीं उनसे आ मिले और कुंचगाम में अंगरेजों से लोहा लिया। इन्हें पुनः पराजय मिली, परन्तु तात्या और लक्ष्मीबाई के दृढ़ संकल्पबल और अदम्य उत्साह ने हताश अनुयायियों में अंगरेजों को फिर ललकारने की उमंग भरी। यह और बात है कि विधि के प्रतिकूल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होने से उनकी सभी योजनाएँ निष्फल रहीं। ग्वालियर के निकट प्रतिकूल युद्ध-मोर्चे पर जो जंग हुआ, उसमें अभूत-पूर्व वीरता से लड़ती हुई रानी लक्ष्मीबाई ने अपने जीवन की आहुति दी।

पराजयों की इस परंपरा के फलस्वरूप तात्या यह मानने लगे थे कि भारतवर्ष में सुदृढ़ अंगरेजों के हाथ से उत्साह पूर्ण परंतु सैनिक शिक्षा से वंचित और अनुभव-हीन आक्रमणकारी कभी भी स्वतंत्रता छीन नहीं सकते। फिर भी वे निरुत्साहित नहीं हुए और न निष्क्रिय। जीवन के अंत तक दुश्मन का सतत सामना करने के अपने निश्चय से वे कभी डिगे नहीं और न ये ही कभी भूले कि विदेशियों से मातृभूमि की मुक्ति प्राप्त करने के लिए दृढ़ संकल्प सेना के वे एक अग्र सेनानी हैं। 'करेंगे या मरेंगे' यही उनका जीवन सूत्र था। बारंबार की हार से उन्हें एक महत्वपूर्ण पाठ यह मिला कि नियमित युद्ध में अंगरेजों के विरुद्ध लड़ कर विजय की आशा रखना व्यर्थ है। इसीलिए उन्होंने मराठों की पुरानी गुरिल्ला युद्ध की नीति अपनायी और उसे उपयोग में लाये। दुश्मन को कई प्रकार से सता कर उसे हैरान करना और अंत में थका देना, यही इस युद्ध की रीति है और इसका प्रयोग इन्होंने खूब किया।

इस प्रकार एक अनोखे ढंग के आमरण संग्राम की जो भूमिका तैयार हुई, उसने विश्व के अन्य देशों का ध्यान भी अपनी ओर आकृष्ट किया। इस विषय में प्रखर इतिहासकार मालोवन लिखते हैं: 'जावरा-अलीपुर में सर राबर्ट नेपियर के हाथों भली प्रकार पराजित होकर नौ-नौ महीनों तक अपने को पकड़ने

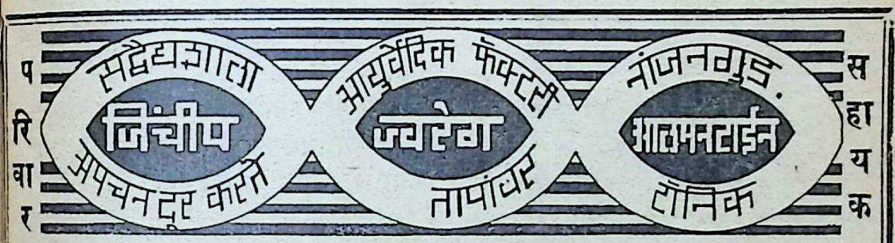

प्रत्येक शहर के लिए हम एकही व्यापारी को अपना स्टाकिस्ट नियुक्त करते हैं।

सद्वैद्यशाला आयुर्वेदिक फेक्टरी नांजनगुड
नांजनगुड
टुथपावडर
सोल एजन्ट्स: दी युनायटेड कन्सर्न मद्रास २४ मण्डा स्ट्रीट माटुंगा मुंबई
सोल एजेन्ट्स:
दी युनायटेड कन्सर्न
५४, बन्दर स्ट्रीट,
मद्रास–१

बम्बई–शाखा–२७७ विश्वास भवन, घेवदार रोड़, माटुंगा, बम्बई १९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के सभी प्रयत्नों को तात्या ने अजीब कौशल से नाकामयाब किया। इस बीच १,६२,००० वर्ग मील के क्षेत्रफल वाले मालवा और राजस्थान के प्रदेशों में वह एक से अधिक बार घुसा, अनेक बार नर्मदा नदी को पार किया और पश्चिम भारत में भी अंगरेजों को युद्ध में चुनौती देने की तैयारी दिखायी...उसकी कूच में गाँव-गाँव और प्रांत-प्रांत के उत्साही पुरुष खुद ही आ मिलते।' इस प्रकार जब तक वह दग़ाबाजी द्वारा पकड़ने में नहीं आया, तब तक तात्या ने देश भर में मुक्ति मंत्र फूकां।

आगे कूच करना, पीछे हटना, छिपना और दुश्मनों को सदा सताते रहना, इत्यादि विविध प्रकार से तात्या टोपे ने अपने जीवन के पिछले महीनों में अंगरेजों से लोहा लिया और इनमें नये-नये पराक्रम दिखा कर बार-बार शहरों पर जो अपना अधिकार जमाया, उससे अंगरेज सेनापति चकित और प्रभावित हुए। अंगरेज इतिहासकारों ने उन्हें हैदर-अली और नेपोलियन का दर्जा दिया।

जिस ध्येय की सिद्धि के लिए अपार कष्ट सहन कर इन्होंने निरन्तर प्रयास जारी रखा, उसे टूटते देख कर इनका मन तो हताश नहीं हुआ, पर अथाह परिश्रम और अनेक कष्ट सहन के फलस्वरूप इनका तन जर्जरित हो गया। विप्लव के अंत में १८५८ में महारानी विक्टोरिया ने जो इतिहासप्रसिद्ध विज्ञप्ति की, उसमें शरणागत होने वाले सभी क्रान्तिकारियों को बिना शर्त माफी देने की सूचना दी गयी थी, फिर भी तात्या ने शरणागत होना स्वीकार नहीं किया। विदेशी सत्ता को मानने से इन्होंने स्पष्ट इनकार कर दिया।

परन्तु स्वातंत्र्य संग्राम के इस अजोड़ सेनानी का अशरणागत जीवन मानो विधि को ही स्वीकार नहीं था और इन्हीं के एक देशबान्धव से इनाम की मोटी रकम के लालच के कारण तात्या का पता अंगरेज अधिकारियों को मिल गया। असावधानी की परिस्थिति वे में फँस गये और गिरफ़्तार हो गये। क्षुद्र द्रव्य के लोभवश एक साधारण भारतीय ने भारत के एक वीरश्रेष्ठ को ७ अप्रैल १८५९ की मध्य रात्रि के समय जो दग़ा दिया, वह हमारे मुक्ति युद्ध का एक कलंक बन कर रह गया है। ग्यारह दिन बाद फौजी अदालत में इनका मुकदमा चला और इन्हें मौत की सजा दी गयी। तात्या ने न तो क्षमा माँगी और न ही मृत्यु को सामने देख कर वे भयभीत या हताश हुए। फौजी अदालत में इन्होंने आत्मनिश्चयता पूर्वक घोषणा की: "न्यायपूर्वक युद्ध करने के अतिरिक्त न तो नानासाहब ने और न मैंने किसी अंगरेज स्त्री, पुरुष अथवा बालक की निर्ममता से हत्या की अथवा किसी को फांसी चढ़ाया।"

तात्या टोपे का जीवन कार्य उनके लिए इस प्रकार अधूरा ही रहा—समय परिपक्व नहीं था, साधन अपूर्ण थे, परिस्थिति प्रतिकूल थी, फिर भी स्वतंत्रता के इस पुजारी का भारतमाता के कीर्ति-मंदिर में निश्चय ही अग्र और उच्च स्थान है। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक अमरीकी को भारत में, शहरी वातावरण में भी, शान्ति के दर्शन हुए, जबकि दूसरे को यहां स्वार्थपरायणता ही अधिक दिखायी पड़ी। तरुण भारत के लिए आवश्यक है कि वह अपने देश की न तो अनुचित प्रशंसा करे और न ख़ामियों के लिए उसे कोसे ही। महत्व की बात तो यह जानने की है कि लोगों के स्वभाव का उपयोग हम हमारी संस्कृति को नवजीवन देने और सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करने में किस प्रकार कर सकते हैं।

भारत के दो रूप

प्रदीप खांडवाला

जान पड़ता है कि संसार भारत को विविध रूपों में देखता है, और यह तथ्य मुझ पर तब प्रकट हुआ, जब मेरे दो अमरीकी मित्रों ने अपने भारत विषयक अनुभव मुझे सुनाये।

इनमें से प्रथम तो एक लम्बे क़द की छरहरी और संवेदनशील अमरीकी लड़की है, जो उत्तर भारत में दो साल रह चुकी है। पेन्सिलवानिया युनिवर्सिटी के स्नातक की डिग्री प्राप्त करने के उद्देश्य से वह भारतीय दर्शन और संस्कृति का अध्ययन करने भारत आयी थी। भारत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में वह लखनऊ के एक कॉलेज में अध्ययन करती रही। उसने न तो भारत की प्रशंसा की और न आलोचना; पर अमरीकी जीवन के तनाव और उसकी दौड़धूप तथा अमरीकियों के आत्मकेन्द्रित होने की तुलना उसने भारतीय जीवन की शांति तथा उसमें सहज प्राप्त होनेवाले आत्मविचार के लिए पर्याप्त अवकाश से की। भारत में वह कई ऐसे काम कर सकी, जिनका सम्पन्न होना अमरीकी ज़िन्दगी में संभव नहीं था—उदाहरण के लिए, सितार बजाना सीखना, गपशप में समय व्यतीत करना, मित्रों से विचार-विमर्श करना, संध्या के समय गोमती के किनारे टहलना और आसपास की गंदगी और शोर को मिटाने का प्रयास किये बिना, सांझ के गहन होते हुए रहस्यमय अंधकार को तथा क्षीण होती ज्योति-किरणों को देखना और वातावरण में गूँजती उन सांध्य-ध्वनियों को सुनना, जो भारत की अपनी विशेषता हैं। वह भारत लौटना चाहती है, क्योंकि भारत में जीवन अधिक कष्टमय भले ही हो, पर वह अधिक शांत भी है। उसने मुझे बताया कि अमरीकी संस्कृति के वातावरण में वह अपना घर बसाना और अपने बच्चों को पालना पसंद नहीं करेगी।

दूसरा अमरीकी विद्यार्थी, जिसने अपने भारत-विषयक अनुभव मुझे सुनाये, २६ वर्ष का है, दक्षिण एशियाई मामलों का विद्यार्थी रहा है और स्वभाव से तनाव पूर्ण, कुछ अधिक वाचाल तथा एक अमरीकी के हिसाब से कद में कुछ छोटा है। यह भी भारत में (पंजाब में) दो साल रहा, पर ठेट देहात में। दिल्ली से लगभग २० मील दूर होने पर भी शहर से बिलकुल अलग-अलग एक गाँव में यह शांति सैनिक के रूप में रहा। न्यूयार्क शहर का निवासी देहातियों को मुर्गी-पालन की शिक्षा देता था, यद्यपि इसका इसे कुछ भी पूर्व अनुभव नहीं था। अपने भारत-प्रवास के बारे में यह अधिक उत्साहित नहीं जान पड़ा। इसके अनुसार शहर और देहात दोनों के ही भारतवासियों की सबसे अधिक चारित्रिक विशेषता यह है कि वे न केवल विदेशियों के प्रति, बल्कि स्वयं एक-दूसरे के प्रति बड़े शंकालु होते हैं और अत्यधिक स्वार्थी भी। यह ख़याल कि भारतीय ग्रामीण बड़े सीधे, उदार, स्नेहशील तथा आतिथ्यप्रेमी होते हैं और अपने साथियों के लिए कुछ भी त्याग करने को तैयार रहते हैं, इसके अनुसार मिथ्या भ्रम है। यह तो यहाँ तक कहता है कि भारतीयों की परम स्वार्थपरायणता और उनका शंकाशील स्वभाव उन्हें संसार के अन्य लोगों से अलग कर देते हैं। जिन लोगों के साथ यह अमरीकी रहा, वे हर संभव तरीके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसका फ़ायदा उठाना चाहते रहे, उसके घर का अनधिकार उपयोग करते थे, इसके द्वारा अमरीका से चीजें मँगवाने के लिए तंग करते थे और तालाबों, कुँओं, नहरों इत्यादि की अपनी माँगों की पूर्ति के लिए इससे ब्लाक डेवलपमेंट अफ़सर पर अपने प्रभाव का उपयोग करने को कहते थे। एक बार इसने देखा कि अत्यधिक कार्य से थका हुआ युवक, जब शहर से लौटा तो उसके माता-पिता ने उसे इस बात के लिए डांटा डपटा कि वह खेतों में कटाई करने के काम में सहायता देने के लिए पहले क्यों नहीं लौटा। पुत्र-वधू को घर के एक कोने में बैठ कर परिवार के अन्य सदस्यों से घटिया ही नहीं, बल्कि कम खाना खाते भी इसने देखा था, तथा और भी ऐसी अप्रिय घटनाएँ देखी थीं।

एक अमरीकी को भारत में शहरी माहौल में भी शांति दिखायी पड़ी, जब कि दूसरे को स्वार्थपरायणता के दर्शन हुए। शायद भारत के ये दोनों ही रूप है, शांत और स्वार्थी तथा परंपरावादी। तरुण भारत के लिए यह आवश्यक है कि देश को, जैसा भी वह है, न तो कोसे और न उसकी प्रशंसा ही करे; भारत में क्या-क्या दोष हैं, यह हम सभी को मालूम हैं। महत्व की बात तो हमारे लिए यह खोजने की है कि लोगों के स्वभाव का हम अपनी संस्कृति को नव जीवन देने और हमारे समाज और आर्थिक स्थिति में नयी शक्ति लाने के लिए किस प्रकार उपयोग कर सकते हैं।

हम ऐसा सोचते जान पड़ते हैं कि पैसा और विदेशी सहायता हमारी समस्याओं को हल कर देंगे। शायद समस्याओं के हल में वे हमारे सहायक भले ही हों, परन्तु हमारी प्रगति तभी अधिक शीघ्र होगी, जब हम अपनी योजनाओं में अपने लोगों के स्वभाव को भी मद्देनज़र रखें और अपनी योजनाओं की रचना करते समय लोगों की आचरण-प्रतिक्रिया का भी खयाल रखें। यदि भारत संसार में सर्वाधिक स्वार्थी राष्ट्र है तो इसमें निराश होने की कोई बात नहीं; इसी स्वार्थपरायणता को हम निस्वार्थ ध्येय की ओर प्रेरित कर सकते हैं। यदि भारतीय किसान, भारतीय मज़दूर और भारतीय उद्योगपति अपना हित प्रति एकड़ पैदावार बढ़ाने, औयोगिक क्षमता में वृद्धि करने और नये उद्योग-धन्धे स्थापित करने में देखने लगे, तो इसी स्वार्थपरायणता को हम उपयोगी कार्य की प्रेरक शक्ति बना सकते हैं।

अब तक हम राष्ट्रीय पुनर्रचना के कार्य में लोगों से सहयोग प्राप्त करने के लिए अधिकांशतः भावना से ही काम लेते रहे हैं: "भारत माँ को अधिक उत्पादन की आवश्यकता है, इसलिए हम सभी को

[शेष पृष्ठ ६४ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुरानी कहानी नयी कविता

अनुराधा

'नीनू, मेरी प्यारी बेटी आजकल तूने कहानियाँ लिखना क्यों बन्द कर दिया ?'

'किसके लिए लिखूं माँ ?'

'पहले जिसके लिए लिखा करती थी, उसके लिए...' मेरी माँ हवा में हाथ फैला कर कुर्सी ढूंढ़ लेती है और उस पर आराम से बैठ जाती है। उसके बाल अभी पूर्णरूप से सफेद नहीं हो पाये हैं, यद्यपि जीवन के ६० वर्ष वह पार कर चुकी है। उसका चेहरा अभी भी भरावदार है और आँखों की रोशनी चली गयी है, फिर भी वह किसी प्रकार की असुविधा का अनुभव नहीं करती।

'मेरी कहानियों का युग चला गया माँ', मैंने धीरे से कहा, 'अब ऐसी कहानियों में लोग कम रस लेते हैं। सिद्धान्तों की, आदर्शों की, वेदनाओं की, प्रेम की कहानियाँ अब कोई नहीं पढ़ता माँ।'

'तो लोग आज कल किस प्रकार की कहानियाँ पसन्द करते हैं बेटी ?'

'किसको मालूम माँ ? मेरी समझ में तो कुछ नहीं आता। मन को किसी विचित्र कुण्ठाओं, टूटे हुए पुल, गिरे हुए मकान, दीवालों में पड़ी बड़ी-बड़ी दरारों और उनमें रह रहे कीड़े-मकोड़ों, सूरज की किरणों से उत्पन्न मकड़ी के जालों और और... सेक्स...' मैं कहने ही जा रही थी कि जैसे किसी ने मुझे रोक दिया। माँ तो यह सब कुछ समझती है। बचपन से ही उसे साहित्य में रुचि थी, और उसने कितनी ही गुजराती तथा अंग्रेजी पुस्तकों का अध्ययन भी किया है। कहानी लिखने के बाद सर्वप्रथम मैं उसको ही पढ़ कर सुनाती थीं। 'सेक्स' शब्द का उच्चारण उसके समक्ष करना मुझे कुछ अच्छा नहीं लगा।

'तो क्या तुझे अब सम्पादकों का कहानी लिखने के लिए आमन्त्रण नहीं मिलता ?'

'कई लोग लिखने के लिए कहते हैं। कुछ तो पुराने सम्पादक और कुछ ऐसे जो मुझे आदर की दृष्टि से देखते हैं,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी लिखने के लिए बार-बार कहते हैं, किन्तु इतना तो वे जानते ही हैं कि उनके पाठकगण मेरी कहानियाँ कम पसन्द करते हैं।'

माँ क्षण भर के लिए शांत रही।

माँ जब शांत रहती है, तो मुझे बहुत अच्छा लगता है। वैसे जब वह बोलती है तब भी अच्छा ही लगता है, किन्तु जब वह शांत रहती है, तो ऐसा प्रतीत होता है, मानों वह सौन्दर्य-सागर में गोते लगा रही हो और मैं नहीं चाहती कि उसे खींच कर तट पर ले आऊँ। मैं भी चुप हो रहती हूँ। किन्तु दोनों के चुप रहने में महान अन्तर सा होता है—तीस वर्ष का अन्तर, एक सन्तोष से पूर्ण एवं चिर व्याकुलता के बीच का अन्तर।

'जमाना क्या बहुत बदल गया है बेटी?'

माँ मुझे सदा नीनू कह कर बुलाती है वैसे तो वह मेरा पूरा नाम ही लेती थीं; किन्तु जब पिता जी गुजर गये और उसकी आँख जाती रही, अचानक एक दिन उसने मुझे इसी नाम से सम्बोधित किया। मेरी माँ का स्वभाव सरल है, उसे साहित्य में, शब्दों में, भाषा में काफी दिलचस्पी रहती है। वह वस्तुओं का नया-नया नाम देती रहती है। चूँकि मैंने अभी तक अपनी शादी की स्वीकृति नहीं दी थी, वह मुझे मीरा कह कर बुलाती और कभी जब मैं विचारों में डूबी रहती तो, 'क्यों राधारानी, किसकी वंशी की धुन में डूबी हुई हो', कहती।

कितनी ही बार मैं सोचती। मेरी माँ अगर मेरी सहेली होती तो क्या ऐसी मित्रता भी हमारे बीच कायम रह सकती थी?

'क्या जमाना बहुत बदल रहा है बेटी?'

'जमाना तो बदल ही रहा है माँ, उसके साथ उसी गति से साहित्य भी

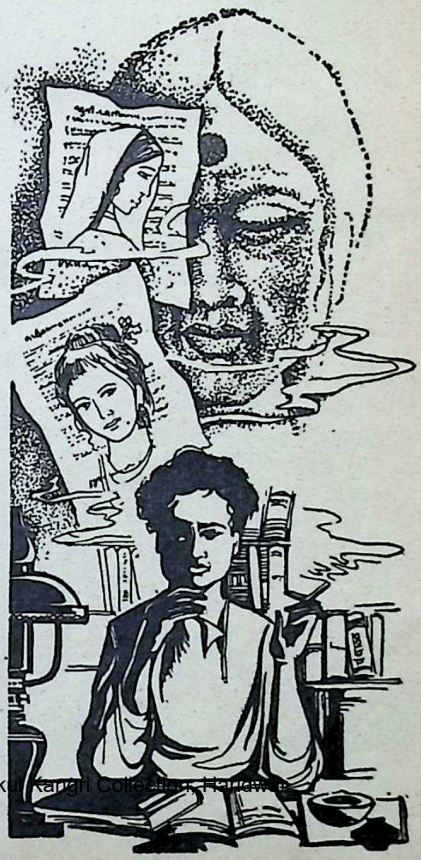

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बदल रहा है और माँ आज की कविताएँ तू अगर पढ़े तो . . .'

'क्या तू भी बदल रही है नीनू ?' माँ ने मेरी ओर देख कर कहा। मैं क्षण भर के लिए स्तम्भित सी हो गयी। मुझे लगा, माँ की आँखें जीवन्त हैं, वह सब कुछ देख सकती है। खिड़की पर खड़ी हो कर नील की प्रतीक्षा मैं करती हूँ, माँ वह भी जानती है। जब नील को मिलना होता है तो मेरे सभी काम कितनी अधीरता से हो पाते हैं, माँ से यह भी छिपा नहीं है और जब मैं उससे मिल कर लौटती हूँ तो धक् धक् करते मेरे हृदय तन्त्री के तारों के स्वर भी जैसे वह सुन लेती है।

माँ नील को पहचानती भी है और नहीं भी। वह तो कवि नील को ही पहचानती है। नील हमेशा अपनी कविता लिख कर माँ को सुना जाता है। किन्तु वह कवि नील के दूसरे रूप प्रेमी नील को नहीं पहचानती। आजकल नील ने कविता लिखना बंद कर दिया है। वह यही कहता है, 'नीनू, जब मैं कविता लिखने बैठता हूँ तो ऐसा लगता है, जैसे कोई गलत काम कर रहा हूँ। सम्भवतः हृदय की रिक्तता भरने का बहाना मात्र है यह।'

माँ की देखादेखी नील भी मुझे नीनू कहने लगा है। और जबसे हम दोनों ने प्यार की चादर ओढ़ ली, वह मुझे केवल नी कहता। कभी कभी जब वह 'नी' कहता तो हंस कर मैं कहती 'कोनी ?' (किसकी)

किन्तु मेरे इस सवाल का जवाब उसने कभी नहीं दिया। क्योंकि वह बहुत ही ज्ञानवान है। अन्दर-बाहर, व्यक्ति-समाज, शब्द–अर्थ सभी के प्रति वह अत्यन्त ज्ञानवान है और सतर्क भी।

माँ ने तीसरी बार मुझसे पूछा, 'क्या जमाना बहुत बदल गया है बेटी ?' और फिर पूछती है, 'क्या तू भी बदल गयी है ?'

मैं बदल रही हूँ। माँ को कह दूँ कि मैं नील को प्यार करती हूँ। प्यार करने से क्या इंसान बदल जाता है ? जाने भी दो–माँ सब कुछ जानती है। माँ देख सकती है; आँखें न होते हुए भी सब कुछ देख सकती हैं, इतना ही नहीं, वह सब कुछ समझ भी सकती है। माँ को प्रश्न पूछने की आदत भी है। वह उत्तर की कभी आशा नहीं करती। किसी दिन अचानक ही वह पूछ बैठती है–'तेरा-सत्य क्या है ? क्या तुझे उसकी खबर है नीनूं ?' और कई बार तो पूछती है, 'पाण्डु को किसका शाप था नीनू ? द्रौपदी के हृदय में सबसे बड़ी पीड़ा क्या थी ? राम की सबसे महान कामना क्या थी ? कृष्ण ने अपनी जीवन-संध्या में किस चीज की वांछना की थी ?'

ये सभी प्रश्न किसी उत्तर के लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं होते थे। इन सबका उत्तर माँ जानती है। या यों कहें, इन सब का उत्तर माँ के पास है। और वह चाहती है कि मैं अपना उत्तर उन्हीं में ढूँढ़ लूँ। वह मुझे शादी करने के लिए कभी भी नहीं कहती। किन्तु कई बार पूछ लेती है, 'लग्न की संस्था इतनी रूढ़ क्यों हैं नीनूं तू जानती है?' उसके बाद वह बगैर लकड़ी के सहारे बराण्डे में आ जाती है और गमलों में रखे पुष्प-वृक्षों पर धीरे-धीरे हाथ फेरने लगती है। वह उनके पुष्पों, उनकी पत्तियों को स्पर्श कर जान लेती है कि आज उन्हें पानी मिला है या नहीं। ...

नील मुझे अच्छा लगता है; किन्तु माँ तो मेरी आत्मीया है। माँ-बेटी के बीच की विशुद्ध मित्रता और सम्पूर्ण कहा जा सके, ऐसे सम्बन्ध की सम्भावना पर क्यों नहीं अभी तक किसी ने विचार किया? माँ के हृदय में मेरे लिए प्रगाढ़ वात्सल्य है और मेरे हृदय में उसके प्रति अगाध श्रद्धा। इससे हम दोनों की समानता में कोई अन्तर नहीं है। माँ एक किनारे पर है और मैं दूसरे किनारे पर। हम दोनों के बीच एक पुल है और हम कितने ही स्थानों पर मिल लिया करते हैं।

...इधर एक अर्से से नील नहीं मिल सका था। मात्र एक बार रास्ते पर दीख गया था और हाथ ऊँचा करके भीड़ में समा गया था। उस समय मुझे अत्यन्त आश्चर्य हुआ। ऐसा तो वह कभी नहीं करता। मैं कभी-कभी कर भी लेती थी। मेरे व्यवहार में कुछ कृत्रिमता भी है, स्वस्थ व सुन्दर दिखूँ, ऐसी उत्सुकता भी है, एक ऊपर की स्थिरता। नील तो पूर्णरूप से खुला हुआ है, वातावरण में वह मशगूल हो जाता है, मन की बात उच्च स्वर में भी बोल देता है, उसका उन्मुक्त हास्य तो कभी भुलाया नहीं जा सकता।

नील किस लिए मुझे देख कर भी न देखने का बहाना कर गया?

शनिवार को मैंने उसे एक टैक्सी में जाते हुए देखा। मैं फुटपाथ पर खड़ी फलवाले की दूकान से सेब खरीद रही थी। मेरा ध्यान तो अचानक ही उस ओर खिंच गया था। उसकी बगल में एक युवती भी बैठी थी। बॉबकट की स्टाइल से कटे बाल वाली उस युवती को मैंने इसके पहले कभी भी नील के साथ नहीं देखा था। मेरा हृदय वेदना की असह्य पीड़ा से बिंध उठा। कौन है यह युवती? नील की सभी मित्रमण्डली को तो मैं जानती हूँ। मेरी आँखों में आँसू उभरने लगे, किन्तु मैंने उन्हें रोक लिया। इसमें क्या? वह कोई भी हो सकती है? उसके पड़ोसी की लड़की, उसके प्रोफेसर मित्र की बहन, उसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चचेरे भाई की पत्नी, कोई भी हो सकती है। शायद उसे वह कहीं पहुँचाने जाता हो...

पाँचवें दिन वह मुझे काफी हाउस के गेट पर मिल गया था। मैं छोटे फोल्डर में सजी हुई पुस्तकों को देख रही थी। मुझे देख कर वह वहीं रुक गया। उसके साथ वही युवती थी, सांवली, सोफीस्टिकेटेड, सुन्दर आँखों एवं अकर्षक व्यक्तित्ववाली युवती। नील ने परिचय कराया, 'नीनू यह मेरी भाभी है।'

लम्बे अर्से के बाद उसने मुझे 'नी' के बदले नीनू कहा था और उसके साथ ही हम दोनों के बीच दूरता की एक रेखा सी खिंच उठी।

दोनों पास-पास ही खड़े थे। क्षण भर के लिए मुझे लगा कि मैं दूर–बहुत दूर फेंकी जा चुकी हूँ वहाँ जहाँ मेरा कोई अपना नहीं है, एक ऐसे अनजान देश में एकाकी तपते सूरज के नीचे मैं खड़ी हूँ और मेरी रक्षा करने वाला कोई नहीं है। मेरे हाथ की मुट्ठियाँ बंध गयीं। प्राचीन काल की नारियों की भाँति मुझे भी संरक्षण की क्या जरूरत है? मैं कमाती हूँ, स्वतन्त्र हूँ और शादय वह नील की भाभी भी हो! नील और मेरे मध्य प्रखर दुपहरिया का विप्लवी समुद्र जैसे गरज पड़ा। मैंने कुछ कहा नहीं। नील ने भी मुझे कुछ कहने का मौका नहीं दिया और बोला, 'नीनू, मुझे जरा जरूरी काम है, जा रहा हूँ, बाद में मिलूंगा।' एक टैक्सी रोक कर उसने पहले युवती से बैठने के लिए कहा और बाद में हाथ हिलाते हुए स्वयं बैठ गया। युवती की ओर देख कर वह मुस्कराया भी और टैक्सी चली गयी। उसकी पीठ पर मेरी दृष्टि दूर-दूर तक टिकी रही।

नील ने जिस दिन नीनू के बदले 'नी' कह कर पुकारा था, वह दिन जिस रूप में मुझे याद है, क्या नील को भी वैसा ही याद होगा? पतझड़ की सुनहरी, रह रह कर फड़क उड़नेवाली चंचल हवा, उल्लास से दीप्त हो उठा चेहरा, दो तरल नेत्रों में अपूर्व माधुर्य, कुछ कहे-अनकहे अर्थपूर्ण शब्द, साथ में उन्मुक्त हास्य, सभी ने मिल कर एक ऐसे भंवर का निर्माण कर दिया था कि मैं शायद उससे कभी उबर न सकूं? क्या नील भी उस भंवर में फँस चुका है?

प्रेम इतना अविश्वासी क्यों बन गया है? अभी तो नील मिला ही नहीं, हम दोनों के बीच कोई लड़ाई झगड़ा भी नहीं हुआ, केवल एक दोपहर को एक आकर्षक युवती के साथ महज टैक्सी में बैठ कर जाते भर तो देखा था ..बस इतनी सी तो बात है, फिर भी दुःख का एक प्रकम्पन जैसे मुझे झकझोर डाल रहा है। नहीं, प्रेम कभी अविश्वासी नहीं हो सकता, वह तो सरल घटनाओं द्वारा भी मर्म की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तह में पहुँच सकता है। भाभी शब्द के पीछे छिपा प्रेयसी का रूप भी वह स्पष्ट ही देख सकता है!

मेरे पग अब बहुत धीमे उठने लगे हैं। घर में चलती हूँ तो जरा भी आवाज नहीं होती। माँ के साथ बात-चीत भी अब कम होती है। माँ कल सुबह ही मुझे अचानक पूछ बैठी थी, 'नीनू क्या तू कहानी लिखने में व्यस्त है?' 'नहीं माँ, एक लिखी थी; किन्तु अच्छी नहीं लगी, फाड़ कर फेंक दिया।'

माँ के चेहरे पर एक मर्मपूर्ण स्मित की रेखा उभर आयी 'नील बहुत दिनों से आया नहीं नीनू?'

मैं हँस पड़ी, 'शायद वह अपनी लिखी कविताओं को फाड़ने में व्यस्त हो!'

माँ भी हँस पड़ी। 'ठीक है तू कहानी फाड़ा कर और वह कविता। बाद में शायद...'

माँ इसके आगे कुछ और न बोल दे, इस भय से मैं झट बोल पड़ी, 'माँ प्लीज... तुम अब कुछ न बोलो माँ।'

माँ चुप हो गयी और किसी विचार में डूब गयी। माँ जानती है, सब कुछ जानती है। माँ हमेशा जानती है।

माँ यह सब कुछ कैसे जान जाती है? बिना आँख के वह यह सब कुछ कैसे देख लेती है? क्या आँखों के न रहने पर लोगों को उसके बदले नयी इन्द्रिय मिल जाती है?

माँ, मेरी प्यारी माँ, तेरी पुत्री दुख की आग में दिन-रात जल रही है। उसका नील उससे दूर चला गया है यह बात उसने तुझे नहीं बतायी, क्या तू उसे माफ़ कर देगी?

नील का कोई समाचार नहीं। एक बार उसके दफ्तर में फोन किया तो पता चला कि छुट्टी लेकर वह बाहर गया हुआ है। उसने मुझसे बताया तक नहीं। पर किसको मालूम क्या, मैं तो सब कुछ स्वीकारती गयी थी, विगत कल तक जो अति निकट था, आज उसके साथ किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं रहा।

एक दिन फोन आया... हेलो! नन्दिनी है? आवाज़ कुछ अनजानी सी लगी। मैंने नाम पूछा तो उत्तर आया, 'मैं पद्मिनी हूँ, नील के साथ उस दिन काफी हाउस के गेट पर मिली थी, वही।' मैं कुछ बोल न सकी।

'नन्दिनी!'

'हूँ।'

'मैं तुमसे मिलना चाहती हूँ, क्या तुम मिलोगी? आज शाम को चार बजे काफी हाउस में आओगी न। जरूर... जरूर?

उस दिन बक्स खोल कर बैठी। अच्छ से अच्छा कपड़ा ढूँढ़ निकाला; किन्तु मैंने अच्छा कपड़ा खरीदा ही कब? माँ तो देख सकती नहीं थी और न मैंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही पूरे शीशे में कभी अपना रूप देखा था। जो हाथ में आता, वही पहन लेती। उस दिन बहुत लज्जा आयी। एक चमकदार युवती के सामने भला मैं सादी, दुबली-पतली, तेजहीन... कैसी लगूँगी? फिर भी जैसे तैसे करके मैं तैयार हो गयी। चार बजे जब काफी हाउस पहुँची तो वह युवती हाजिर थी। बढ़िया बॉब कट के कटे काले बाल, सांवले शरीर पर हल्के पीले रंग की रेशमी साड़ी, चमकता हंसता चेहरा, सुन्दर आँखें...।

मैंने तो अपनी नाव मझधार में छोड़ दी थी, डांड पकड़ रखने की अब कोई आवश्यकता नहीं। पतवार को नियन्त्रण में रखने की जरूरत भी नहीं। हवा अनुकूल बने, अब यही प्रार्थना करनी है।

नहीं, अब इसकी भी आवश्यकता नहीं।

हम बैठे। काफी का आर्डर दे कर वह मेरे सामने देखती रह गयी। मालूम नहीं क्यों, उसकी वह निर्निमेष दृष्टि मुझे किसी उलझनपूर्ण स्थिति में न डाल सकी। अचानक ही मुझे लगा, स्वतः को पकड़ रखने के कारण ही पीड़ाओं का जन्म होता है। एक बार क्या सब छोड़ दूँ। अपना सारा भार, सारी चिन्ता-पीड़ा अदृष्ट के चरणों में समर्पित कर देने के बाद, बाहर-भीतर से एकदम रिक्त हो जाने से कुछ असंगत तो नहीं लगता। इससे तो सुख-दुःख के पार के अपरिचित आनन्द प्रदेश में शायद पहुँचा भी न जा सके। हाँ, एक अन्धकार से पूर्ण शान्ति के प्रदेश में अवश्य प्रवेश पाया जा सकता है। 'तुम तो बड़ी सीधी सादी हो,' अचानक उसने कहा। मैं हंस पड़ी। कम्प्लिकेटेड होनेकी अपेक्षा क्या सरल होना अधिक अच्छा नहीं? मन में मैं सोचने लगी। जाने-अनजाने क्या मैं उससे प्रतिस्पर्धा तो नहीं करने लगी?

वह भी हँस पड़ी। 'और बाद में "तुम कहोगी कि बुद्धिमान होने की अपेक्षा मूर्ख होने से जीवन-व्यवहार अधिक सरल नहीं बनता?' यद्यपि वह मजाक कर रही थी; किन्तु उसके वाक्यों में किया दर्प मुझे टंकार सा मार गया। मुझे लगा कि उसे मैं कठोरतम वचनों से आहत कर सकती हूँ, उसके आकर्षण के सभी आवरणों को चीर-फाड़ कर एक ओर रख सकती हूँ, एक क्षण में ही उसे अपमान के कीचड़ से नहला सकती हूँ।

किन्तु ऐसा सब कुछ करने से मैं रुक गयी और मुझे अपने इस व्यवहार से आनन्द भी हुआ। मैंने बड़े धीमे से कहा, 'बुद्धिमत्ता और मूर्खता दोनों समान अवगुण हैं। किन्तु बुद्धिमत्ता कभी-कभी अधिक हानिकारक सिद्ध हो जाती है।'

वह काफी होशियार थी। उसने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहा, 'हम लोग तो व्यर्थ की बातों में ही उलझ गये। मैं तो तुम्हारे साथ मित्रता करनी चाहती हूँ। नील भी मुझसे कह रहा था कि तुम्हारे लिए उसके हृदय में बहुत मान है।'

'मान?' मुझे लगा, नील क्या सही मान को व्यक्त कर सकता है? मेरे और उसके मध्य तो मात्र प्रेम का सम्बन्ध है।

'तुम उसे अच्छी भी लगती हो,' उसने कहा।

मेरा हृदय जैसे हाहाकार कर उठा। क्या मैं उस पतझड़ की सांझ से लेकर विगत कल तक के वे सभी सुकुमार संस्मरणों को विस्तारपूर्वक, रसपूर्वक, कह दूं, भले शाम हो जाय, रात हो जाय, काफी हाउस का द्वार बन्द हो जाय, किन्तु मैं कहीं भी रुकूं न, कहती ही चली जाऊँ, नील का एक-एक वाक्य, उसकी मुस्कान, उसका मौन, उसका स्पर्श, उसकी कविता की एक-एक कड़ी, बस बोलती ही जाऊँ एक क्षण गवाये बिना...और वे शब्द जल की धाराएँ बन कर उसके आसपास संग्रहित हो जांय, उसे भिगो दें, द्रवित कर दें, डुबो दें, यहाँ तक कि जल का वेग सर के ऊपर तक चला जाय और वह डूब जाय। प्रलय में शनैः शनैः ऊँचे उठते ज्वार की भाँति मेरे संस्मरण भी एक मधुर शीतल बिन्दु से उठ कर प्रलय का रूप धारण कर लें, उसे चारों ओर से घेर लें, उसे सम्पूर्णरूप से डुबों दें, उसके भूत-भविष्य को, उसके सभी स्वप्नों को, यात्राओं को, कामनाओं को अथाह जल में डुबो दें।

कहूँ? एक आकर्षक युवती की हत्या कर डालूं? मैं निन्दिनी, जीवन के सत्यों की जलती मशाल मैं..मैं क्या ईर्ष्या के जाल में फंस कर एक सपने की हत्या कर डालूं?

'तुमको नील ने भेजा है क्या?' एकाएक मैं उससे पूछ बैठी। वह चौंक पड़ी, क्षण भर के लिए उसके चेहरे का रंग स्याह पड़ गया, वह बोली 'नहीं—नहीं, उसको तो खबर भी नहीं कि मैं तुमसे मिलूंगी। वह कुछ गमगीन रहता था। इसीलिए थोड़े दिन के लिए मैंने उसे बाहर घूम आने के लिए कहा था।'

अकस्मात क्रोध की लपट में मैं झुलस उठी। बड़े ही तीखे स्वर में मैंने कहा, "तुम लोगों को इस प्रकार का नाटक करने की क्या आवश्यकता थी? नील सीधे आकर मुझसे सबकुछ कह सकता था। एक दिन जिस प्रकार उसने कहा था, 'मैं तुम्हें प्यार करता हूँ,' उसी प्रकार यह भी तो कह सकता था कि मैं अब तुम्हें प्यार नहीं करता। किसी भी इंसान को यह कहने का अधिकार तो है ही।"

उसने बड़े ही शान्त स्वर में कहा, 'तुम

[शेष पृष्ठ ४९ पर]
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या पृथ्वी के बाहर प्राणियों का अस्तित्व है ?

डॉ. शिवगोपाल मिश्र

अन्तरिक्ष में हमारे अनुसंधान का लक्ष्य क्या है? निश्चय ही, यह लक्ष्य खगोल-गणना नहीं। असीम शून्यता अधिक से अधिक अत्यन्त गौण लक्ष्य हो सकती है। अन्तरिक्ष-यात्राओं से हमें दो अद्वितीय लाभ प्राप्त हुए हैं: हमारे अपने ग्रह के वास्तविक स्वरूप के सम्बन्ध में तथा अन्य ग्रहों के बारे में अधिक जानकारी। अन्तरिक्ष-अनुसंधान की दिशा में सबसे पहले कक्षागत कृत्रिम उपग्रह—जो हमारे वायुमण्डल का विश्लेषण कर सकते हैं, मौसम की जानकारी प्रदान कर सकते हैं, संचार-सुविधाओं में वृद्धि तथा सुधार कर सकते हैं, मार्गदर्शन में योग दे सकते हैं, अथवा समस्त विश्व के लिए उत्पन्न होनेवाले दैवी संकटों की चेतावनी दे सकते हैं—अपना उपयोगी कार्य कर रहे हैं और पृथ्वी-सम्बन्धी वैज्ञानिक जानकारी की वृद्धि कर रहे हैं। अब जबकि हम अधिक शक्तिशाली राकेटों का विकास करने में समर्थ हो गये है, हमें अपने अनुसंधान का क्षेत्र अधिक विस्तृत करना चाहिए तथा अन्य ग्रहों के सम्बन्ध में खोज करनी चाहिए। अनुसंधान के लक्ष्यों में एक प्रमुख लक्ष्य अन्य ग्रहों पर जीवन के अस्तित्व की सम्भावना की खोज करना (एक्सोबायोलोजी) होना चाहिए। इस क्षेत्र में आज अनुसन्धान करने की परमावश्यकता है, क्योंकि यह विज्ञान स्वयं के बारे में जानने पर विशेष बल देता है।

जीव-रसायन विज्ञान की दृष्टि से जीवन विकास की प्रक्रिया का अध्ययन करने की दिशा में जीवाणु-विज्ञान में अत्यन्त विलक्षण प्रगति की है। लेकिन, अभी तक इसके अध्ययन का क्षेत्र केवल हमारे अपने ग्रह के एक सूक्ष्म जीवाणु-कोष के अध्ययन तक ही सीमित रहा है। दूसरे शब्द में, इसने केवल इस सम्बन्ध में अध्ययन किया है कि एक अत्यन्त सूक्ष्म जीवाणु-कोष ने किस प्रकार असीम ब्रह्माण्ड के एक छोटे से बिन्दु में जीवन का प्रादुर्भाव किया है।

स्टैनफर्ड स्थित अनुसंधान-परीक्षणशाला इस समय अपना ध्यान मुख्यतः मंगल ग्रह पर एक यंत्र-पुंज उतार कर और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उससे रेडियो-संकेत प्राप्त कर वहाँ विद्यमान जीवन-सम्बन्धी सम्भावनाओं का अध्ययन करने पर केन्द्रित कर रही है। चूँकि मंगलग्रह के धरातल के बारे में हमें अत्यन्त कम जानकारी प्राप्त है, अतएव प्रश्न यह उठता है कि हम किस प्रकार यह मालूम करें कि वहाँ हमें किस वस्तु की खोज करनी होगी अथवा वहाँ उतारे जानेवाले यंत्र-पुंज में किस प्रकार के प्रयोगों की व्यवस्था करनी होगी। भर धूल प्राप्त कर उसमें सूक्ष्म जीवाणुओं के अस्तित्व की खोज करने तक ही सीमित रखना होगा। यदि मंगल पर किसी प्रकार के जीवन का अस्तित्व है, तो सम्भवतः हम शीघ्र ही इसका पता लगा लेंग। कम से कम पृथ्वी पर सर्वत्र—वायु में, जल में तथा मिट्टी में—सूक्ष्म जीवाणुओं का अस्तित्व विद्यमान है।

हम क्या जानकारी प्राप्त करने का प्रयास करेंगे? हम यह जानना चाहते हैं

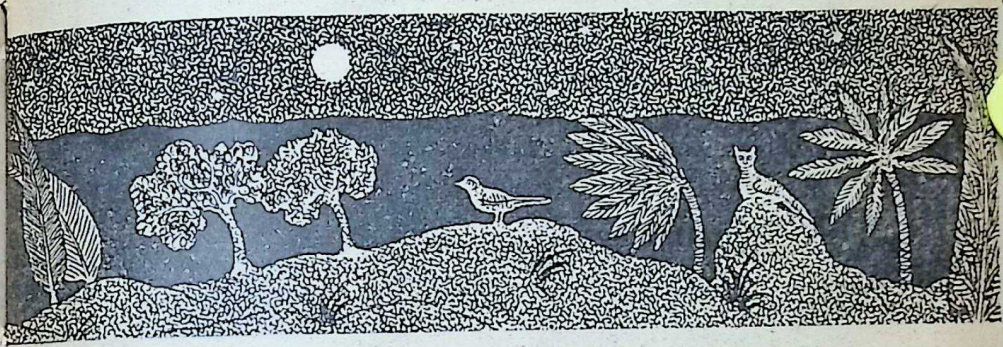

सत्य तो यह है कि इस बारे में हम अभी कुछ नहीं तय कर पाये हैं। लेकिन, इस अनिश्चितता न हमें निष्क्रिय नहीं किया है, केवल विनीत बनाया है। सबसे पहली बात तो यह है कि चूँकि हमारे राकेट-वाहन केवल निर्धारित भार ले जाने में ही समर्थ हैं, अतएव हम उनमें किसी अन्य ग्रह पर पाये जानेवाले किसी बड़े जीव-जन्तु को फँसानेवाले पिंजड़ों की व्यवस्था नहीं कर सकते। हमें अपना अनुसंधान कार्य चुटकी कि यदि मंगल ग्रह पर जीवन का अस्तित्व है, तो क्या वहाँ जीवन का प्रादुर्भाव पृथ्वी के ढंग पर ही हुआ है? विकास की यह गति कितनी तीव्र रही है? विकास के किस चरण में जीवन के प्रादुर्भाव की यह प्रक्रिया पृथ्वी पर जीवन के विकास की प्रक्रिया से भिन्न हो गयी? हम लगभग पूर्ण निश्चय के साथ यह भविष्यवाणी कर सकते हैं कि मंगलग्रह पर जीवन का प्रारम्भिक रूप अवश्य विकसित हुआ है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भौतिकशास्त्र और रसायनशास्त्र के सामान्य सिद्धान्तों के अनुसार मंगल ग्रह पर जिन अणु-समूहों की विद्यमानता का पता चला है, उनसे यह स्पष्ट हो जाता है कि वहाँ कार्बन का अस्तित्व भी अवश्य होना चाहिए। हम स्पेक्ट्रोस्कोपिक निरीक्षण के बिना यह भविष्यवाणी कर सकने की स्थिति में हैं। हम यह नहीं कह सकते कि जीवन-प्रक्रिया के विकास की बायोगेनिक (जीवन-विकास प्रक्रिया की वह अवस्था, जिसमें जीवाणु अपनी संख्या में वृद्धि करने की क्षमता प्राप्त कर लेते हैं) अवस्था अभी वहाँ पहुँची है अथवा नहीं। अभी तक हमें ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति और विकास-प्रक्रिया की इतनी स्पष्ट जानकारी प्राप्त नहीं हो सकी है कि हम यह निर्णय कर सकें कि पृथ्वी ने जीवन-विकास की प्रक्रिया की 'केमोजेनी' (वह अवस्था जिसमें जीवन-प्रक्रिया प्रारम्भ करनेवाले मूल जीवाणुओं का विकास होता है) अवस्था से बायोगेनिक अवस्था (वह अवस्था जब जीवाणुओं में अपनी संख्या बढ़ाने की प्रजनन-क्षमता आ जाती है) में २० अरब वर्ष पूर्व, ५० करोड़ वर्ष पूर्व अथवा इससे भी बाद में प्रवेश किया था। और, हम इस सम्बन्ध में भी निश्चय-पूर्वक कुछ नहीं कह सकते कि मंगल ग्रह पर जीवन-विकास की प्रक्रिया ने 'कोगनोगेनी' (जीवन-विकास की वह अवस्था जिसमें प्रबुद्ध प्राणियों का अस्तित्व होता है) अवस्था को प्राप्त नहीं कर लिया है। पुनः, इस सम्बन्ध में भी भविष्यवाणी करना अत्यन्त कठिन है कि 'बायोगेनिक अवस्था' से 'कोगनोगेनी अवस्था' को प्राप्त होने में कितना समय लगता है। हम इसकी उपेक्षा नहीं कर सकते; अपनी जाँच-पड़ताल में हमें न केवल इस समय मंगल ग्रह पर प्रबुद्ध जीवन के अस्तित्व की सम्भावना की खोज करने, अपितु इस सम्भावना की खोज करने की बात भी शामिल करनी पड़ेगी कि ऐसा तो नहीं कि इसके पूर्व कभी मंगल ग्रह पर प्रबुद्ध जीवन का अस्तित्व रहा हो और इस समय तक उसका अस्तित्व समाप्त हो गया हो।

इस दायरे के अन्दर, हम कई स्पष्ट प्रश्न तैयार कर सकते हैं। हमने आश्चर्य में डालने वाली अनेकानेक सम्भावनाओं को एक ऐसी तर्कसंगत एवं व्यवस्थित प्रश्नावली का रूप प्रदान कर दिया है, जिसके आधार पर हम तर्क-संगत सम्भा-नाओं की खोज करने के लिए प्रयास प्रारम्भ कर सकते हैं।

अपनी प्रयोगशालाओं में, हम उन न्यूक्लियिक अम्लों और प्रोटीनों—वे जटिल कण-समूह, जो पृथ्वी पर पाये जानेवाले सभी प्रकार के जीवों में विद्यमान हैं—का पता लगाने पर विशेष ध्यान केन्द्रित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर रहे हैं। हमारा विश्वास है कि पृथ्वी के अलावा अन्य ग्रहों पर जीवन के अस्तित्व की सम्भावना का अध्ययन करने की दृष्टि से यह मालूम करना अत्यन्त महत्त्व-पूर्ण है कि कितने विभिन्न ढंगों पर जीवन का विकास हो सकता है। इस समय जीवाणु-विज्ञान के समक्ष विद्यमान एक सबसे बड़ी चुनौती इस बात का पता लगाने की है कि क्या न्यूक्लियिक एसिड और प्रोटीन के अलावा अन्य तत्त्व भी हो सकते हैं, जिनसे जीवन का विकास हो सकता है।

अब तक जो परीक्षण किये गये हैं, उनमें अन्य ग्रहों पर अभियान-दल भेजना सबसे अधिक खर्चीला परीक्षण सिद्ध हो सकता है। लेकिन, साहसिक अन्वेषण करने सम्बन्धी स्वाभाविक मानवीय प्रवृत्ति का यह तकाजा है कि इस प्रकार के व्यय को वहन किया जाये। दांते ने लिखा है कि किस प्रकार यूलिसिस ने अपने साथियों को महासागर की यात्रा में अपने साथ शामिल होने के लिए प्रेरित किया था। दांते के अनुसार उसने अपने साथियों से कहा: "उन मौलिक तत्वों का स्मरण करो, जिनसे तुम्हारा निर्माण हुआ है। तुम्हारा जन्म पशुओं की तरह का जीवन व्यतीत करने के लिए नहीं, बल्कि गुणों और ज्ञान को पूर्णता प्रदान करने के लिए हुआ है. . . . ।" पश्चिम की परम्पराओं में पलने वाले इस प्रथम अन्वेषक के प्रेरणा-पूर्ण शब्द आज भी हमारा मार्ग-दर्शन कर रहे हैं।

[विज्ञान-परिषद् प्रयाग के सौजन्य से।]

★

[पुरानी कहानी नयी कविता: पृष्ठ ४५ का शेषांश]

घायल हुई हो, यह मैं देख रही हूँ किन्तु तुम्हीं बताओं, क्या मैं तुमसे अधिक सुन्दर नहीं, तुमसे अधिक आकर्षक नहीं? क्या मेरा यह अपना अपराध है? तुम्हारे लिए नील के हृदय में मान है, किन्तु तुम आवश्यकता से अधिक सीधी-सादी हो, उसके समकक्ष कैसे आ सकती हो? प्रेम में तो तादात्म्य होना आवश्यक ही है और वह तादात्म्य उसे मेरे साथ ही मिल सकता है। क्या तुम इतना भी नहीं समझ सकती?'

एकाएक मुझे हुआ कि हंसूं, इतना हंसूं कि सारा संसार हिल उठे'..सही है, मैं पुरानी कहानी हूँ...सीधी, सरल भावनापूर्ण और तुम...नयी कविता हो—दुर्गम, मानसिक कुण्ठाओं की अनेक जटिलताओं से पूर्ण, बाहर से आकर्षक, अन्दर से अटपटी, एक बिखरे हुए, टूटे हुए व्यक्तित्व की बुद्धि की डोर से जुड़ी रहने का प्रयास करने वाली आधुनिका.....।

माँ मुझसे पूछती है, 'नीनू, नील अब क्यों नहीं आता?' मैं उत्तर दे देती हूँ, 'माँ नील अब नयी कविता लिख रहा है, उसे अब मेरी कहानियों में कोई रस नहीं।'

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृष्णावतार

• श्री कन्हैयालाल मुन्शी

भाषावाहिक पूर्ण-पुरुष चरित्र

द्वितीय भाग — बृहद्बाल की द्विधा

[३३ क]

उस रात यादव सरदारों की बैठक राजा उग्रसेन के महल में हुई। श्वेतकेतु ने जरासंध द्वारा अपनी सत्ता दृढ़ करने के लिए रचे गये व्यूह की बात कही और बताया कि स्वयंवर किस कारण और किस प्रकार नियोजित हो रहा है तथा मथुरा के यादवों को निमन्त्रण न देकर उनका अपमान किया गया है।

जरासंध के इस व्यूह से उत्पन्न परिस्थिति पर सभी सरदारों ने विचार-विमर्श किया। इतना तो स्पष्ट ही था कि मथुरा के यादवों को राजपरिवारों से नीचे का दर्जा देकर उनका अपमान किया गया था। साथ ही यह भी स्पष्ट था कि यदि मथुरा के यादव बलपूर्वक वहाँ गये तो उसका परिणाम भयंकर होगा।

विक्रदु स्वभाव से ही भीरु था; इसलिए उसने तो यह अपमान पी जाने की ही सलाह दी। उसने कहा, 'इस समय तो मथुरा की शक्ति बढ़ाना ही सबसे अधिक महत्व की बात है।' शंकु यहाँ तक सहमत हुआ कि प्रतिकार करने के लिए यादव अभी पूर्णरूप से तैयार नहीं हैं, परन्तु उसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगता था कि यदि इस अपमान को सह लिया गया तो यादवों की हिम्मत टूट जायेगी। बृहद्बाल और सात्यकि के नेतृत्व में जो तरुण थे, वे सभी यादवों की प्रतिष्ठा पर हुए इस आघात का सचोट उत्तर देने के लिए तत्पर थे। आमंत्रण बिना ही कुंडिनपुर जाकर रुक्मिणी को हर लाने के पक्ष में वे थे। उनकी मान्यता थी कि तीन महीनों में तो हम पूर्णरूपेण से सज्ज हो जायेंगे। वसुदेव, अक्रूर और अन्य सरदारों को विक्रदु की सलाह ही ठीक लगी, क्योंकि कोई कड़ी कार्रवाई करना उन्हें पसंद नहीं था।

अन्त में राजा उग्रसेन ने कृष्ण की ओर देखा, कृष्ण ने अब तक इस चर्चा में भाग नहीं लिया था।

'वासुदेव, तुमने कुछ कहा नहीं! तुम्हारा क्या मत है?' उग्रसेन ने पूछा।

'महाराज! अब तक जो कुछ कहा गया है उससे यदि मैं सहमत नहीं होऊँ तो मुझे क्षमा करें। परन्तु मैं समझता हूँ कि राजा भीष्मक ने जो हमें निमत्रण नहीं भेजा, वह उचित ही है,' कृष्ण ने शांति से कहा।

सभी आश्चर्य में पड़ गये। बृहद् के दल ने तो इस कथन के प्रति अपने तिरस्कार को छुपाने का भी प्रयत्न नहीं किया।

'क्या तुम यह कहना चाहते हो कि हम भीष्मक के चरण छुएं?' बृहद् ने कहा।

कृष्ण ने स्वस्थता से उत्तर दिया, 'इसमें हमारा अपमान हुआ ही नहीं। स्वयंवर में सामान्यतः राजाओं और राजकुमारों को ही आमन्त्रित किया जाता है। और महाराज, आपकी वय स्वयंवर में जाने की है नहीं, तथा मथुरा के युवराज के रूप में अभी तक किसी का अभिषेक नहीं हुआ है।'

'क्या मतलब? हममें से कई सरदार अपने-अपने गाँवों के स्वामी हैं,' शंकु ने कहा।

'राजा भीष्मक अपनी पुत्री का विवाह किसी सरदार के साथ नहीं, बल्कि राजा या राजकुमार के साथ करना चाहते हैं। राजन्, हमारे किसी यादव सरदार का स्थान राजा भीष्मक की पुत्री के स्वयंवर में नहीं हो सकता,' कृष्ण ने कहा।

सभागृह में शांति छा गयी। यह बात सच थी कि स्वयंवर में भाग ले सकने लायक कोई युवराज मथुरा में न था।

'कृष्ण, तुम तो युवराज से भी विशेष हो,' राजा ने कहा, 'मैं तो अब भी यह राजगद्दी तुम्हें सौंपने को आतुर हूँ; बस तुम्हारे हाँ भरने की देर है।'

बृहदबाल ने रोष से कृष्ण की ओर देखा। उसे लगा कि कृष्ण फिर एक-बार राजगद्दी हड़पने की चाल चल रहा है।

'राजगद्दी के बारे में मेरे मत में अब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी कोई परिवर्तन नहीं हुआ, महाराज!

कृष्ण ने मुस्कराकर कहा, 'आपकी इस कृपा के लिए मैं कृतज्ञ हूँ, पर मैं गोपाल ही बना रहना चाहता हूँ। मेरी बात मानें तो अपनी पसंद के युवराज को ही आप इस पद पर नियुक्त करें।'

सभी लोग बड़े ध्यान से कृष्ण को सुन रहे थे। उन्होंने आगे कहा:

'राजन्, गोमांतक से हमारे लौटने से पहले जब यह शंकास्पद था कि हम आयेंगे या नहीं, तब आपने बृहद्बाल को युवराज के पद पर नियुक्त करने का विचार किया था। उत्तरायण प्रारंभ होंते ही आप उनका अभिषेक करें।'

बृहद्बाल और उसके मित्र आश्चर्य-चकित हो गये। कई वरिष्ठ लोग भी कृष्ण की इस उदार उक्ति को मुग्ध-प्रशंसा भाव से सुन रहे थे। कृष्ण अपूर्व समझदारी के साथ राज्य में बढ़ रही आंतरिक अशांति को मिटाने का प्रयास कर रहे थे। एकमात्र अक्रूर ही आँखें फाड़े आश्चर्य से देख रहे थे। उनका विचार था कि यदि बृहद् मथुरा का राजा बना तो सब चौपट हो जायगा। परंतु कृष्ण में उन्हें श्रद्धा थी, इसलिए अपनी शंकाओं को प्रकट करना उन्होंने उचित नहीं समझा।

'राजन्, इसके बाद राजा भीष्मक को आप यह संदेश भेज सकेंगे कि हमारे युवराज बृहद्बाल को भी निमन्त्रण भेजा जाना चाहिए। यदि वे निमन्त्रण भेजने से इनकार करें तो यह हमारा अपमान समझा जायेगा और फिर यदि महाराज की आज्ञा होगी तो हम इस अपमान का बदला भी ले सकेंगे,' कृष्ण ने कहा।

'परन्तु इसका अर्थ तो यही हुआ कि कुण्डिनपुर के पास लड़ाई होगी', वसुदेव ने कहा।

'अपमान का बदला यदि लेना हो तो लड़ाई तो होगी ही', सेनापति शंकु बोले।

'लड़ाई तो होगी ही,' सत्राजित ने कहा। वह युद्ध के लिए अधीर हो रहा था। 'और आर्यावर्त के लिए यह कोई नयी बात नहीं है। धर्म के अवतार स्वयं भीष्म पितामह क्या काशीराज की तीन पुत्रियों का हरण नहीं कर लाये थे?'

'परन्तु जरासन्ध की सेना ने हमें हरा दिया तो?' उग्रसेन ने कहा।

बृहद्बाल का चेहरा फीका पड़ गया।

'यह तो निश्चित है कि यदि भाई बृहद्बाल कन्या का अपहरण करेंगे तो जरासंध और भीष्मक की प्रतिष्ठा को गहरा धक्का लगेगा', कृष्ण ने स्वस्थता से कहा।

'मान लो कि बृहद्बाल हार जाये तो?' विक्रदु ने पूछा।

'हम लोग सब यदि इनके पीछे जान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की बाजी लगा दें तो यह नहीं हारेंगे,' कृष्ण ने कहा, 'परन्तु भाई बृहद्बाल और अपने तरुण सरदारों को गुरुदेव सांदीपनि के पास जाकर शस्त्रशिक्षा लेनी होगी। हमारी रथस्पर्धा भी हमारे रथियों को युद्ध के लिए तैयारी करने का मौका देगी।'

'और तुम वहाँ आओगे?' बृहद्बाल ने पूछा।

'उद्धव तो आयेगा ही। मेरे बड़े भैय्या भी आयेंगे। रही मेरी बात, सो मैं राजकुमारी या किसी भी स्त्री को उसकी इच्छा के विरुद्ध ले जाना धर्म के विरुद्ध मानता हूँ। फिर भी जब लड़ाई छिड़ेगी तो भाई बृहद् के एक इशारे पर मैं उनकी मदद को पहुँच जाऊँगा।'

चर्चा समाप्त होने पर, बृहद्बाल अपने समक्ष भावी संभावनाओं को सोच कर कांप उठा। विक्रदु ने जिस पराजय की संभावना पर जोर दिया था, उसे वह सच लगी। 'मैं हारूँ तो क्या? कृष्ण की यह भी एक चाल हीं है,' वह मन ही मन बड़बड़ा उठा।

घर लौटते समय श्वेतकेतु ने कृष्ण से कहा, 'वासुदेव, बृहद्बाल अपहरण कर लाया तो भी राजकुमारी रुक्मिणी उससे विवाह नहीं करेगी।'

'धीरे-धीरे वह भी मान जायेगी', कृष्ण ने हँसी में टालना चाहा, 'कितनी ही राजकुमारियाँ अपहरण किये जाने के बाद अपहरणकर्ता से विवाह कर सुखी हुई हैं।'

'पर, फिर तुम्हारा क्या होगा?'

'मैं किसी कन्या से इस प्रकार विवाह नहीं करना चाहता', कृष्ण ने कहा।

सभा के समाप्त होते ही बृहद् अपनी माता से मिला। कंसा भी यह जानने के लिए अधीर थी कि सभा में क्या हुआ। बृहद् क्रोध से लालपीला होकर गया और बोला, 'माँ, इस ग्वाले ने आखिर हमें अपने फंदे में फांस ही लिया। मुझे तो खत्म ही कर डाला इसने!'

'किस प्रकार?'

'मुझे अपने रास्ते से हटाने का उसने उपाय ढूँढ़ लिया है,' बृहद् ने असहाय भाव से कहा। फिर सभा में जो कुछ हुआ उसका विवरण देते हुए बोला, 'कृष्ण बहुत चतुर है। वह मुझे युवराज-पद पर देखना चाहता है। वाह, भाई, वाह! कितना उदार है तू! जरासंध और उसके साथियों के सम्मुख युद्ध में मुझे धकेल देने की कैसी युक्ति है! वाह रे उदारता! यदि आवश्यकता हुई तो वह मेरी सहायता करने भी आयेगा, और विजय का यश स्वयं ले जायगा... खुदगर्ज, स्वार्थी!'

कंसा सस्मितवदन पुत्र की बात सुन रही थी।

[शेष पृष्ठ ६४ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और धीरे बहती है डॉन : एक दृष्टिपात

डॉ. महेन्द्र पण्ड्या

राजधानी से दूर किसी शान्त, रमणीय स्थान में अपने शौक़ की ख़ातिर, एक वयोवृद्ध मानव मछलियाँ पकड़ने में अपना समय व्यतीत करता था। अपने इस शौक़ के बाहर उसका ध्यान कभी नहीं गया, रुचि भी नहीं थी। तभी उसे समाचार मिला कि वर्षों पूर्व लिखे गये, लगभग चालीस वर्ष पूर्व प्रकाशित और अनेक भाषाओं में अनूदित उसके उपन्यास को, जो एक ऐतिहासिक कृति है, जगत का सर्वोत्तम साहित्यिक पारितोषिक—नोबल प्राइज—से सम्मानित किया गया है। उसके आदर्शवाद के लिए, उसकी गुणवत्ता के परिणामस्वरूप, 'एण्ड क्वाइट फ़्लोज़ द डॉन' की लोकप्रियता और ख्याति अधिकाधिक बढ़ रही है।

आज से सात वर्ष पहले इसी देश के एक अन्य साहित्यकार को उनकी कृति 'डॉ. जीवागो' के लिए यह पारितोषिक अर्पित किया गया था। परन्तु, वे उसे स्वीकार नहीं कर सके। राजनीति ने इसमें प्रवेश किया और साहित्य का पन्थ भी परतन्त्र बन गया। परन्तु, समय के प्रभाव से भद्रवाचन की विजय हुई और मिखेल शोलोखोव और उनकी प्रज्ञा को सिद्धि के शिखर पर पहुँचने का सद्-भाग्य प्राप्त हुआ।

बात पुरानी है: एक प्रकार से देखें तो सदियों पुरानी। मानव भावनाओं, आवेश और त्रुटियों के स्पर्श की, फिर भी इस युग के वास्तविक नूतन रशिया के सर्जन की, वहाँ की जागृति की और शौर्य की गाथा इन पृष्ठों में आलेखित हुई है। १९१३–१८ के पाँच वर्षों में घटनाएँ घटित होती हैं और तातार्स्क उनका केन्द्र है। फिर भी वार्ता या वस्तु में कोई अन्य हेतु नहीं; प्रचार करने या अमुक दृष्टिबिन्दु को फलित करने की चेष्टा भी इसमें नहीं है। कलात्मकता लिये हुए उपन्यास रशिया में भी उच्च कोटि का हो सकता है, यह इस कृति से सिद्ध होता है।

वहाँ का जीवन, रहन-सहन आचार-विचार इतनी स्वाभाविकता से दर्शाया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री मिखेल शोलोखोव दूसरे रूसी लेखक हैं जिन्हें अपने साहित्य के लिए नोबल पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। संसार के शीर्षस्थ लेखकों में उनका स्थान सर्वमान्य है। यहाँ उनकी ऐतिहासिक कृति 'एण्ड क्वाइट फ्लोज़ दि डॉन' का संक्षिप्त परिचय पाठकों के लाभार्थ प्रस्तुत किया गया है।

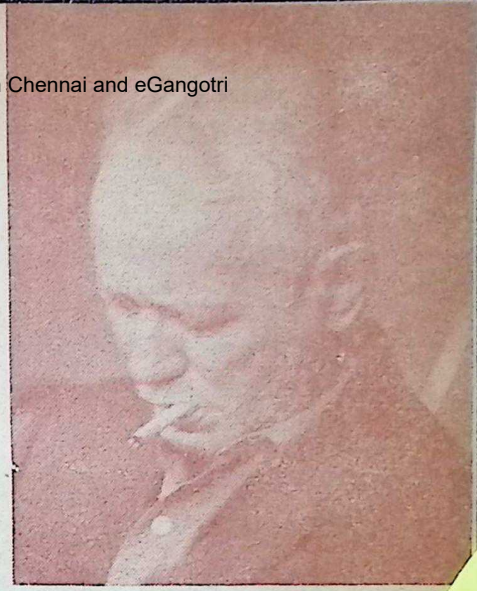

श्री मिखेल शोलोखोव

गया है कि उसमें अतिशयोक्ति नहीं लगती। डॉन नदी की तलहटी में बसे छोटे से तातार्स्क गाँव में मेलेखोव परिवार रहता है। ज्येष्ठ पुत्र ग्रेगर का, उसी गाँव के स्टेपन आस्ताखोव की पत्नी अक्सीनिया के साथ परिचय अधिक घनिष्ठ हो जाये, इससे पहले ही उसके पिता नातालिया के साथ उसकी शादी कर देते हैं; परन्तु इस विवाह से प्रसन्न न होने के कारण वह अपना सम्बन्ध अक्सीनिया से बढ़ाता रहता है और अन्त में गाँव भर में खुले आम उसकी आलोचना होने लगती है।

पिता से यह सहन नहीं होता और थोड़े समय में ग्रेगर और अक्सीनिया दोनों गाँव छोड़ कर लिस्टनीटस्की परिवार में नौकरी कर लेते हैं, जहाँ उनके एक पुत्री का जन्म होता है। दादा मेलेखोव का हृदय इस पर पसीजता है और वे ग्रेगर से मिलने आते हैं। इसके बाद ग्रेगर फौज में भर्त्ती होता है और 'पली'–पुत्री के वियोग में दिन बिता कर वापस आ जाता है। परन्तु, लौटने पर उसे एक गहरा आघात लगता है, क्योंकि उसकी गैरहाजिरी में, जिसके लिए उसने इतना सहन किया था, वह असीनिया अपने मालिक के पुत्र के साथ अनुचित सम्बन्ध स्थापित कर लेती है और उसकी पुत्री मृत्यु की गोद में चली जाती है।

भग्नहृदय और श्रद्धाविहीन ग्रेगर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को तब मालूम होता है कि उसकी पत्नी नातालिया, उसके छोड़ चले जाने के बाद आत्महत्या करने को भी तैयार हो गयी थी और फिर मेलेखोव परिवार के आग्रह पर उनके साथ (भारतीय संस्कृति के अनुरूप) रहना भी अन्त में उसने स्वीकार कर लिया था। अब इतने वर्षों के बाद पति-पत्नी के बीच फिर मेल स्थापित हुआ और सुखी परिणीत जीवन का आरम्भ हुआ।

सेना से वह संबद्ध रहा और शौर्य के लिए उसे 'क्रास आफ सेण्ट जॉर्ज' भी प्रदान किया गया। छोटे से तातार्स्क गाँव में उसका मान बढ़ा, परन्तु जीवन में धूप-छाँव तो आती ही रहती है और ग्रेगर के लिए भी यह प्रसिद्धि और सम्मान क्षणिक ही सिद्ध हुआ। 'सोवियट सोशलिस्ट रिपब्लिक' की स्थापना हुई और पुरानी सरकार के पतन के बाद आन्तर्विग्रह फूट निकला। कोसेक्स डॉन प्रदेश के लिए स्वतत्रता की कामना करने लगे और इसी कारण से उन्होंने लाल सेना का मुकाबला करने का निश्चय किया। ग्रेगर इसी लाल सेना में अफ़सर बना और दोनों सेनाओं के बीच में युद्ध होने पर लाल सेना को पीछे हटना पड़ा। ग्रेगर इस समय शस्त्र-सन्यास लेकर अपने गाँव में रहने के लिए लौटा, उसी समय यह समाचार मिला कि लाल सेना आगे बढ़ रही है और तातार्स्क पर हमला होने ही वाला है। ग्रामवासियों में भय की लहर दौड़ गयी, अफवाहें फैलने लगीं और कई लोग तो गाँव छोड़ने के लिए तैयार हो गये। परन्तु ग्रेगर विचलित नहीं हुआ, उसने दृढ़ता से मुकाबला करने का फैसला किया, परन्तु उसके नेतृत्त्व में अब लोगों को श्रद्धा नहीं थी। उसे 'क्रास' मिला था, उसका सम्मान हुआ था, और लाल सेना में वह अफसर भी रह चुका था। इसीलिए लोगों ने उसके भाई पियोत्रा को अपना नेता चुना और उसके नेतृत्त्व में युद्ध करने को तत्पर हुए।

ग्रेगर भी इस सेना में भर्ती हुआ, परन्तु युद्ध होने से पहले ही लाल सेना की दूसरी बार पराजय हुई और उसके नेता तथा सेनापति क़ैदी बन गये। जब उसने दरयाफ़्त किया तो मालूम हुआ कि सब क़ैदियों को मौत की सजा दी जायगी। उसके भूतपूर्व नेता कोदतिक्लोव ने देशद्रोही और अवसरवादी कह कर उसकी भर्त्सना की, क्योंकि वह लाल सेना में भी रह चुका था और आज विरोधी और विजयी यूथ में शामिल था। यह सुनकर ग्रेगर क्रोधित हुआ और लाल सेना ने भी जो मौत की सजाएँ और अन्य कार्य किये थे, उनकी याद दिलायी; उसने यह भी कहा कि डॉन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तलहटी की प्रजा को उन्होंने धोखा दिया था। मौत की सजा दिये जाने से पहले सजा पानेवालों ने घोषणा की, भविष्य-वाणी भी की, कि उनकी मृत्यु विफल नहीं जायगी। उनकी मृत्यु के बाद भी क्रान्ति जीवित रहेगी। अन्त में ग्रेगर अपने गाँव लौट आया और सामान्य जीवन बिताने लगा।

इस प्रकार इस ऐतिहासिक, सामाजिक, कौटुम्बिक, नैतिक उपन्यास द्वारा लेखक ने रशिया की महत्वपूर्ण घटनाओं पर प्रकाश डालने का प्रयत्न किया है। महाकाव्योचित दर्शन भी इसमें हैं और उर्मिकाव्य के योग्य भावनात्मकता भी इसमें पायी जाती है। जहाँ तक 'डॉन' का सम्बन्ध है, वहाँ तक तो (जिस तरह 'सोहराब और रुस्तम' में आकेसस के लिए है) मानव अपने हाथ उठा कर भले ही वामन से विराट पद प्राप्त करने के प्रयास करे, परन्तु उसके साथ उसका समभाव कितना है? पामर मानव भी हार-थक कर, पश्चात्ताप कर, नीति और शान्ति के मार्ग पर क्या नहीं आता? आख़िर जगत में नातालिया के लिए स्थान है, न कि अक्सीनिया के लिए अथवा उसकी पुत्री के लिए। ग्राम्य जीवन, उसकी कुटुम्बभावना, वात्सल्य, लोक-लाज की गणना, चार दिन की चाँदनी जैसी प्रशंसा और कीर्ति और फिर कटुता तथा जीवन का सच्चा दर्शन-जीवन की संस्कृति और विकृति इन सब का कितनी सहजता से आलेखन हुआ है।

पर्ल बक ने 'दि गुड अर्थ' में चीनी जनता का चित्रण किया और वाङ्ग लुङ्ग द्वारा उस समय के कृषिप्रधान चीन में साम्यवाद किस प्रकार आगे बढ़ा, इसकी ओर ध्यान आकर्षित किया। हेमिंग्वे ने 'दि ओल्ड मैन एण्ड दि सी' में मनुष्य के साहस और धैर्य का वर्णन किया। 'एण्ड क्वाइट' फ्लोज दि डॉन' में एक नये युग के चौखट पर खड़ी प्रजा और उसके लाक्षणिक नेता (ग्रेगर) द्वारा दोनों दृष्टिबिन्दुओं को सिद्ध करने का प्रयास हुआ है। प्रकृति और पुरुष के साथ इस पुस्तक ने न्याय किया है: मानव की निष्ठुरता और प्रकृति की मातृतुल्य ममता—इन दोनों पक्षों को इस महाकाव्य जैसे उपन्यास में पूर्ण स्थान प्राप्त हुआ है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैके चली शिव की घरनी

कु. मधुच्छन्दा बागची

ईश्वर केवल मात्र यम-नियम, योग-याग, व्रत-उपवासादि का समष्टि ही नहीं, कुछ और भी है, जिसे पाने के लिए वैराग्य और ज्ञान का शुष्क पथ सदा ही कष्टदायक रहा है। उसे पाने में तो हृदय और उसकी कोमल भावनाएँ ही सफल हो सकती हैं। भक्ति व भावनाएँ भक्त को अनन्यता की उस सीमा तक सहज ही पहुँचा देती है, जिस तक पहुँचने के लिए संत व वैरागी वर्षों तप कर भी विफल रहते हैं।

प्रेम, हृदय की उदात्त वृत्तियों का सहज प्रकाशन है। उसका जितना सुन्दर-स्वरूप वात्सल्य में है, अन्यत्र कहीं भी नहीं। स्वभावतः संवेदनशील व भावुक बंगाल का जन-जन महिषासुरमर्दिनी दुर्गा को अपनी बेटी और मां मानता है। शारदीय दुर्गापूजा गृहस्थ्य सुख-दुख में वात्सल्य व भावनाओं की वह लहर है, जो इसे सहज ही आध्यात्मिकता की धरातल पर लाकर रखती है। सांसारिक माया को महामाया में लीन करने का यह प्रयास अन्यतम है। दुर्गापूजा बंगाल के जन-जीवन का अभिन्न अंग है। दुर्गा केवल शरत् नवरात्रि में ही नहीं, प्रायः दैनन्दिन ही पूजिता हैं, विपत्तारिणी, मंगलचण्डी, संकटा, निराकुल आदि पूजाओं में दुर्गा ही आराध्या हैं।

महामाया का दैवीमानवी रूप जो बंगाल के जन-जन के हृदय में बसा हुआ है, मंगल गीतों में निखर आया है। आगमती और विजया इन्हीं मंगल गीतों के पूर्वार्द्ध और परार्द्ध हैं।

शरत्-सूर्य की स्वर्णिम आभा से जब दिग्-दिगन्तर उद्भासित हो उठते हैं, कमल कुमुदिनी शेफाली और काश फूलों की सुरभियुक्त चंचल-समीर मादकता से भरपूर हो उठता है, कभी-कभी घन नील आकाश में शुभ्र मेघखण्डों की छोटी बड़ी नौकाएँ अचीन्हें मन के यात्रियों को इधर-उधर तिरती रहती हैं। शुक्ला रजनी की सुनहली गगरी छलक कर जड़-चेतन को मुग्ध कर लेते हैं। ऐसे समय में माँ की ममता पतिगृह गयी हुई नव-परिणीता सुकुमारी कन्या के लिए विकल हो उठती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चंचलचरणी अचल नन्दिनी पार्वती को बंगाली माताएँ वात्सल्यप्रेम से वशीभूत हो अपनी बेटी मानती हैं। माताएँ अपने को हिमराज की पत्नी मेनका मान कर नारद द्वारा बेटी का समाचार सुन चिन्तित हो उठती हैं—

"शूनेछी नारदेर ठांई, गाये माखे भस्म छाई
भूषण भीषण तार गले फणी हार
ए कथा कहित काय सुधा त्यजि विष खाय कह देखि ए कोन विचार।"

नारद से जब उमा का समाचार मिलता है, माँ और भी चिन्तित हो उठती हैं। कहाँ तो उनकी कोमल और कमनीया लाड़ली शैलसुता और कहाँ भस्म अंग सर्पधारी शिव, जो सुधा तज विषपान करते हैं। कितनी विषम मनःस्थिति है मां की? वह अपनी दुश्चिंता और दुःख को किससे बतायें? गिरिराज हिमालय ने बिना सोचे-समझे ही ऐसे व्यक्ति से लाड़ली की शादी कर दी, अब उस बेचारी पर न जाने क्या बीतती होगी? शिव-परिवार में उसके दुःख को समझने वाला भी तो कोई नहीं है।.... शिव के न माँ है और न ही पिता, तिस पर वैरागी पति .....उस दुखिया की व्यथा भला कौन समझ सकता है?

शिवेर नाहिक पिता माता, के बुझि बे भायेर व्यथा।
कारे कबे दुःखेर कथा, आभार स्वर्णलता विधुमुखी।

सुकुमारी कन्या को पति गृह भेज कर माँ के हृदय में सदा ही आनन्दमिश्रित चिंताएँ उठती रहती हैं। स्नेह-शिथिल हो वे बार-बार गिरिराज से कहती हैं:—

"आछे कन्या सन्तान जार, देखते हय आनते हय सदाई भावते हय अन्तरे"

उमा के विषय में चिन्ता करते-करते माँ की पलकें जुड़ जाती हैं। लगता है उमा आ गयी है। अपनी कोकिल काकली से माँ को परितुष्ट कर रही है, पर वैरिन निद्रा के अचानक ही रूठ जाने से स्वप्न-निधि खो जाती हैं:—

"मनेर तिमिर नाशि उदय हईल आसि
वितरे अमृत राशि सुललित बचने
अचेतने पेये निधि चेतने हारालाम गिरि है
धिरज न धरे मम जीवने।"

जल, स्थल, नभ जिधर भी दृष्टि जाती है, पार्वती के सौन्दर्य के अंश दीख पड़ते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

113532
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। गगन के चन्द्र को देख अपनी चन्द्र-मुखी याद आती है। पार्वती का वर्ण लेकर ही मानो शेफाली ने जन्म लिया हो, श्वेत शतदल की पंक्तियाँ शतदलवासिनी के बिना सूनी लगती है, शरत् वायु का स्पर्श उमा के स्पर्श की याद जगा कर विकलता और भी बढ़ा देती है और तब वे बार-बार गिरिराज से उमा को ले जाने की प्रार्थना करती हैं। उमा बिना पल-छिन भी युगों से लगते हैं और प्राण धारण असभंव सा जान पड़ता है :–

"सुनील आकाशे ऐ शशि देखि
कोई गिरि, कोई आमार शशिमुखी
शेफालिका एल उमार वर्णमाखी
बल, बल आमार कोथा वर्णमयी ?
ऐ एल हेसे शांत शतदल,
शतदलवासिनी कोथाय आमार बल ?
शरतेर वायू जखन लाये गाये
उमार स्पर्श पाई, प्राण शखा दाय
आओ, जाओ गिरि आनगे उमाय
उमा छाड़ि आभि केमन करे रई ?

गिरिराज स्वभाव संयत, नीतिनिपुण और धैर्यवान हैं। कन्या संतान के प्रति उनकी ममता उतनी ही है, जितनी मेनका की। किंतु मेनका पड़ोस के लोगों की बातें सुनते-सुनते हार गयी है और उसका हृदय स्वयं भी पार्वती से मिलने को आतुर है, फिर भी गिरिराज शांत ही रहते हैं। पत्नी का अभियोग, अनुरोध, मंत्रणा और विकलता का अपनी युक्तियों द्वारा शमन करते हैं। उनका जामाता यद्यपि फणिहार डाले रहता है, माथे पर भी सर्पों का मुकुट लगाये रहता है, फिर भी उमा उसे प्राणों से अधिक प्रिय हैं। उमा बिना वह पल भर भी नहीं रह सकता, तब भला वह प्रसन्न मन से उमा को यहाँ क्यों आने देगा ?

"बारे बारे कह रानी गौरी आनिबारे
जान् त जामातार रीत अशेष प्रकारे
वरन्च त्यजिये मणि क्षणेक बांचये फनी
तत्तोधिक शूलपानी भाते उमा भारे,
तिले ना देखिले भरे, सदा राखे हृदिपरे
से केन पाठावे तारे सरल अन्तरे ?"

मेनका कहती हैं, यदि शिव पार्वती को छोड़ कर रह ही नहीं सकते, तो क्यों नहीं उन्हें भी ले आया जाय। वे बारम्बार गिरिराज से प्रार्थना करती हैं :–

गिरिराज हे, जामाईये एनोगो मेयेर संगे
मेयेर जेरूप मन, माये बोझे जेमन
पुरुष पाषाण तुमि बोझो ना तेमन।

अंततः गिरिराज को कन्या को लाने जाना ही पड़ा। उनके मन में पुत्री के प्रति स्नेह कोई कम नहीं है। स्नेह विगलित फिर भी संशय-चित्त हो वे कैलाश की ओर जाते हैं। उन्होंने भलीभांति समझ लिया कि शिव को कहने से कोई लाभ न होगा। उमा को ही अपनी मुट्ठी में करना है, माँ की दयनीय दशा सुन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर उसका हृदय अवश्य ही डोल जायगा। गिरिराज की यह युक्ति मन्त्रौषधि की ही भांति फलप्रद हुई और वे उमा को मैके लौटा ले आये। शरद षष्ठी के सन्ध्या समय सुलतित स्वागत संगीत और बोधन द्वारा दुर्गा की आगमनी होती है। पुरवासियों से बेटी के आने का समाचार सुनते ही मेनका "माँ कोई माँ कोई" (माँ कहाँ?) कहते हुए दौड़ कर आती है, एक ओर कन्या-मिलन प्रयासी जननी की व्याकुलता और दूसरी ओर मातृस्नेहपिपासु कन्या का सुतीव्र आग्रह, किन्तु फिर भी वह ठहरी दुलारी राजनन्दिनी, तभी माँ की व्याकुलता और आवेग को देख अभिमान कर रो पड़ती है। तुम मेरी माँ हो, पर तुम लोगों ने पाषाण हृदय पाया है, एक बार भी मेरी ख़बर नहीं ली, इसी कारण मैं स्वयं ही तुमसे मिलने चली आयी।

"अभिमाने काँदि मायेरे बले
कई मेये बाले आनते गियेछिले

अपनी आवश्यकता के लिए खरीदिए

Hind FLOORING TILES

हाइड्रालिक इटालियन मशीनों से

निर्मित : प्रीफ़ब (पूर्वनिर्मित) आर. सी. सी. गृह, सीमेण्ट पाइप, टैंक, रंगाई की नाँदें व बाग़ीचों के सामान का निर्माण करते हैं। सरकार, रेलवे, म्युनिसिपैलिटी, पी. डब्ल्यू. डी. के कंट्राक्टर हैं और सामान मुहैया करते हैं।

हिन्दुस्तान सीमेन्ट पाइप्स एण्ड कंक्रीट कन्स्ट्रक्शन कं०

मुख्य कार्यालय : ओछवलाल गोरधनदास शाह
टाइल, पाइप्स एण्ड सेनीटरी मरचेण्ट्स
खाडीआ, चार रस्ता, अहमदाबाद

फैक्टरी : सुएज फार्म रोड, अहमदाबाद
कार्यालय तथा निवास फोन : ५२२९२ फैक्टरी फोन : ५१६३६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तोमार पाषाण प्राण आमार पिताओ पाषाण जेने, एलाम आपना होते।"

मेनका के पास अपना आग्रह और स्नेह दिखाने के लिए कोई तर्क नहीं हैं, फिर भी अश्रुधारा में पुलक वेदना का पूर्ण प्रकाश है। वे अश्रुधारा से रुकने की प्रार्थना करती हैं, जिससे वे अपनी नयनतारा को निरख सकें।

प्रथम-मिलन-आवेग के समाप्त होते ही प्रश्नों का काफ़िला तैयार होता है। मेनका पूछती है, बैटी शिवालय में कैसी रही ? 'कओ माँ, केमन छिले शिवालये," भारतीय कन्या के लिए पतिगृह, फिर वह कुटिया ही क्यों न हो, राजमहल से भी अधिक सुखकर है। तभी उमा कहती हैं माँ, शिव के घर में ही सूखी थी' छिलाम भाल, जननि गो, हरेरि घरे' पतिगृह की विशेष समृद्धि और वैभव की बातें कह वे माँ की दुश्चिन्ताओं को समाप्त कर देती हैं।

शिव को न बुलाने का क्षोभ पार्वती के मन में कम नहीं है। माँ जब पूछती है "आभार शिव तो आछेन भाल" तब पार्वती "हाँ अच्छे हैं" कहते हुए आंचल से आंखें रगड़ने लगती हैं और कहती हैं आँखों में न जाने क्या पड़ गया।

WIDEST COVERAGE
FOR YOU
IN
MAGAZINES AND BOOKS
* SCIENCE
* ENGINEERING
* MANAGEMENT
* COMMERCE
* ECONOMICS
* AGRICULTURE
* LITERATURE & CULTURE
OUR SPECIAL LOW RATES FOR
UNIVERSITIES * COLLEGES * GOVERNMENT INSTITUTIONS
Write today to :
INTERNATIONAL BOOK HOUSE PRIVATE LIMITED
9 Ash Lane, Mahatma Gandhi Road
FORT BOMBAY–1

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उमा बले, आछेन भाल, खेचो देय आंचलें बले, चोखे की होलो आमार चोखे की होलो।"

"आगमनी" की यह सुन्दर मिलन दृश्य षष्ठी संध्या से लेकर नवमी तक निरंतर आनन्द वृद्धि करती रहती है। मिलन का यह दृश्य जितना मोहक, कोलाहलपूर्ण और आनन्ददायी है, "विजया" की विदायी का दृश्य उतना ही या उससे भी अधिक हृदय द्रावक है। नवमी के दिन भावी विरह की आशंका का रंग और भी गाढ़ा हो जाता हैं। माँ का मन उमा के जाने की बात सोच कर ही कांप उठता हैं। वे हर संभव प्रयत्न द्वारा उमा को रोकना चाहती हैं। विकल-मना मां नवमी–रात्रि से न जाने की प्रार्थना करती है।

"रजनी! जननी! तुमी पौहायो ना धरि पांय, तुमि ना सदय होले उमा मोर छेड़े जाय जेओ ना जेओ ना, नवमी रजनी सन्तापहारिणी लये तारातले

गेले तुमी दयामयी जावे मेनकार प्राण।"

किन्तु हाय रे निष्ठुर रजनी। माँ की प्रार्थना ठुकरा कर चली गयी। प्रभात–शिशिर रूप में माँ के आंसू समस्त जगत का मन गीला करने लगे, प्रभात काकली में माँ का क्रन्दन मुखर हो पड़ा, उषा के आलोक में उनका ही दग्ध हृदय निखर आया। दशमी का प्रभात मानों साक्षात काल हो, जो माँ की स्नेह निधि को छीनने आया।

प्रेम कालजयी और अशेष है। "आगमनी" और "विजया" के प्रत्येक पद में मेनका के वात्सल्य के आवरण में अपराजेय प्रेम की विजय ही अनुगुंजित होती है। जितनी बार यह विश्वास बिखरने को होता है, उतनी ही बार पराजित विद्रोही कंठ में रुद्ध स्वर और प्रबल हो उठता है "आमि भालवासी जारे से की कमू आमा होते दूरे जेते पारे"– हृदय के स्पन्दनों में जिसका स्थान है, वह भला हमसे दूर क्यों कर जा सकता है? फिर भी, इस संसार का सबसे पुरातन, सबसे गंभीर क्रन्दन है–जाने न दूँ...। कगार की मिट्टी बिखर कर भी लहरों को बांध रखना चाहती है..... बार-बार छूट कर मानों लहरों से यही कहती हैं....."जेते आभि देब ना तो माय...।' इस चराचर जगत में एक ही क्रन्दन मुखरित हो रहा है–जेते आमी देब ना तोमाय.....। "फिर भी कौन किसको रोक सका है? किसे नयनों में अश्रु का अर्घ्य छलका कर भी जाने देना पड़ता है....." तबू हाय जेते दिते हय।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[भारत के दो रूप : पृष्ठ ३७ का शेष]

अधिक कार्य करना चाहिए।" इस तरीके से हम बहुत अधिक कामयाब नहीं हुए। पर, यदि हम दुनिया को मजदूर और उद्योग स्थापित करने वालों की दृष्टि से देखें और उन बातों की तलाश करें जो इन्हें अधिक सुयोग्य और सक्षम बना सकती हैं, तो शायद हम आर्थिक और सांस्कृतिक दृष्टि से भी अधिक तरक्की कर सकेंगे। भारत में औद्योगिक मजदूर को सबसे अधिक अपनी नौकरी की सुरक्षा और अधिक वेतन की फिक्र है। क्या हम ऐसी परिस्थितियों का निर्माण कर सकते हैं जिनमें वह अधिक मेहनत और अच्छा काम कर इन्हें हासिल कर सकता है? इसी प्रकार किसान भी अपनी पैदावार बढ़ा कर यदि उत्तरोत्तर अधिक कमाई की आशा रख सके तो वह जरूर मेहनत करेगा, अपने खेती के तरीकों को बेहतर बनायेगा और अधिक उत्पादन करेगा। शायद यही बात उद्योगपति पर भी लागू होती है। यदि वह नये-नये उद्योग स्थापित करने का साहस करे तो क्या हम उसे उचित लाभ का आश्वासन दे सकते हैं? इस प्रकार स्वार्थपरायणता मनुष्य का चरित्रकलंक बनने के बजाय सामाजिक और वैयक्तिक प्रगति का शक्तिशाली शस्त्र बन सकता है—बशर्ते हम उसका सही उपयोग करना जानें।

✶

[कृष्णावतार : पृष्ठ ५३ का शेष]

'फिर महाराज ने क्या कहा?' उसने पूछा।

'महाराज ने युवराजपद पर मुझे नियुक्त करना स्वीकार किया, क्योंकि रुक्मिणी के स्वयंवर में मुझे भेजने के कृष्ण के प्रस्ताव पर उन्होंने सहमति दी।'

'इससे बचना कठिन है', कंसा ने कहा, 'यदि तू युवराजपद पर बैठता है तो तुझे मौत के मुँह में धकेल दिया जायगा। और यदि युवराज बनने से इनकार करता है तो तेरा सब किया-धिया मट्टी में मिल जायगा।'

'और जिंदगी भर कायर कहलाऊँगा यह ऊपर से।' बृहद्बाल बोला, 'सात्यकि तो यह जान कर प्रसन्न हो उठा है कि मैं युवराज बन जाऊँगा। वह तो युद्ध और पराक्रम दिखाने के लिए मचल रहा है। मूर्ख कहीं का! उसे मृत्यु का भी भय नहीं!'

'हम लोग कुछ उपाय सोच ही लेंगे, बेटे! तू चिंता मत कर', कंसा ने आश्वासन दिया। [क्रमशः]

अनु. ओंकारनाथ शर्मा

●●●

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन के लिए बम्बई से प्रकाशित व मुद्रित
एसोसिएटेड एडवर्टाइजर्स एण्ड प्रिन्टर्स, तारदेव, बम्बई ३४ में मुद्रित।
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

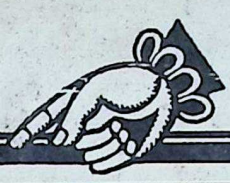

एन्टल

सबसे
भरोसा योग्य

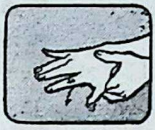

बीजाणु नाशक

एन्टल संक्रमण का प्रतिरोध करता है। कटने, छिलने व कीट पतंगों के काटने पर एन्टल का इस्तेमाल कीजिए निश्चित रूप से लाभ होगा।
बीजाणु संक्रमण को रोकने के लिए एन्टल से नियमपूर्वक मुंह धोने और कुल्ला करने से विशेष गुणकारी है।
एन्टल से धोने और मांजने से दीवार और सतह बीजाणु मुक्त रहते हैं। संक्रमण का कोई डर नहीं रहता।

एन्टल को बराबर साथ रखिये

सबसे भरोसा योग्य बीजाणु नाशक

बंगाल इम्युनिटी का एक उत्पादन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

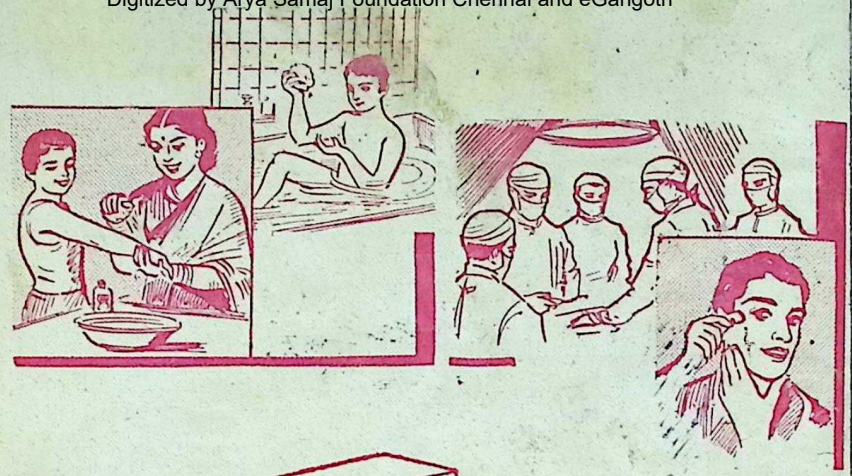

शे ब्रॉ ल

यह हॉस्पिटल तथा घर में कृमिनाश के लिए अत्यन्त प्रभावकारी है।

निर्माता : एस. एच. शेलत एण्ड सन्स

शेलत ब्रदर्स—मद्रास तथा उसकी अन्य शाखाओं के मालिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

एजेन्टों की नियुक्ति करना है

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

October 31, 1965 Regd. No. B 74

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Compiled
1999-2000

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar